वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला पुष्प नं.261

चारित्र चन्द्रिका

''गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी का स्वर्णिम चरित्र''

–: लेखिका :–
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती माताजी

–प्रकाशक–
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280236

प्रथम संस्करण	वैशाख कृ. 2, वी.नि.सं. 2532	मूल्य
2200 प्रति	15 अप्रैल 2006	100/-

गणिनी ज्ञानमती आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशन :–
धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज

–: सम्पादक :–
कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

–कम्पोजिंग–
ज्ञानमती नेटवर्क, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
मुद्रक-एन.एस. इंटरप्राइजेज, दिल्ली, मो.-9810035356

Veer Gyanodaya Granthmala Serial No. 261

CHARITRA CHANDRIKA

"The illuminating character of Ganini Pramukh Aryika Shiromani Shri Gyanmati Mataji"

♦ *Written By* ♦

Pragyashramani Aryika
Chandnamati Mataji

♦ *Publisher* ♦

Digambar Jain Institute of Cosmographic Research
Jamboodweep-Hastinapur (Meerut) U.P.-250404
Ph No.-(01233) 280184, 280236

First Edition	Vaishakh Krishna 2	Price
2200 Copies	Veer Nirvan Samvat 2532	100/-
	15 April 2006	

Ganini Gyanmati Aryika Deeksha Golden Anniversary

VEER GYANODAYA GRANTHMALA

This granthmala is an ambitious project of D.J.I.C.R. in which we are publishing the original and translated works of Digamber Jain sect written in Hindi, English, Sanskrit, Prakrit, Apabhransh, Kannad, Gujarati, Marathi etc. We are also publishing short story type books, booklets etc. in the interest of beginners and children.

—Founder & Inspiration—

Ganini Pramukh Aryika Shiromani SHRI GYANMATI MATAJI

—Guidance—

Pragya Shramni Aryika Shri Chandnamati Mataji

—Direction—

Peethadhish Kshullakratna Shri Moti Sagar Ji Maharaj

—Granthmala Editor—

Karmayogi Br. Shri Ravindra Kumar Jain

All Rights Reserved for the Publisher

—Composing—

Gyanmati Network
Jamboodweep-Hastinapur (Meerut) U.P.
Printer—N.S. Enterprises, Delhi, Mob.-9810035356

मंगल कामना

–आर्यिका अभयमती

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी जैन जगत की महान निधि हैं जिनके बारे में कुछ भी कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है। मैंने बचपन से ही घर में इनके गुणों का बखान बहुत सुना था पुनः इनके पास आकर त्यागमार्ग को स्वीकार करने हेतु मुझे भी अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा किन्तु पूज्य माताजी के आशीर्वाद से आखिर एक दिन नारी जीवन के चरमलक्ष्य को सिद्ध करने में मुझे सफलता प्राप्त हो गई। इस सफलता में मैं अपनी माँ का उपकार भी जन्म-जन्मान्तर तक नहीं भुला सकती हूँ।

सन् 1962 से मैंने इनके पवित्र जीवन को देखा है। अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग के साथ ही इनमें प्रमाद बिल्कुल नहीं है, इसीलिए आज 72 वर्ष की उम्र में भी प्रतिक्षण ये एक युवाशक्ति के समान जिनधर्म की प्रभावना में सजग रहती हैं। भगवन्तों के अभिषेक देखने की इनकी विशेष रुचि, बड़े-बड़े घड़ों से अभिषेक कराने की भावना, पूजा-विधानों के प्रति उत्कट अभिलाषा एवं प्राचीन तीर्थों के जीर्णोद्धार-विकास की प्रेरणा वास्तव में हम सभी के लिए अनुकरणीय है।

इनके विस्तृत कार्यकलापों युक्त व्यक्तित्व को यद्यपि शब्दों में सीमित करना अत्यंत कठिन है, तथापि आर्यिका चन्दनामती माताजी ने परिश्रमपूर्वक इनके सर्वतोमुखी कार्यकलापों को लेखनीबद्ध करके यह ''चारित्रचन्द्रिका'' पुस्तक जो सभी के लिए प्रदान की है, उससे निश्चित ही सभी को नई प्रेरणा प्राप्त होगी। मुझे प्रसन्नता है कि पूज्य ज्ञानमती माताजी गृहस्थावस्था की मेरी सबसे बड़ी बहन है और चन्दनामती मेरी छोटी (16 वर्ष छोटी) बहन हैं। अर्थात् एक माँ मोहिनी (स्व. आर्यिका रत्नमती माताजी) से जन्मीं हम तीन बहनों ने आर्यिका दीक्षा धारण कर मानव जीवन के सार को प्राप्त किया है। मैंने घर में इन्हें गोद में खिलाया है और आज भी इनके प्रति खूब वात्सल्य भाव रहता है।

पूज्य माताजी की आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव के अवसर पर मुझे भी हस्तिनापुर में साक्षात् उपस्थित रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनके चरणों में मेरी कोटि-कोटि विनयांजलि समर्पित है तथा चन्दनामती माताजी के लिए अनेकशः मंगलकामनाएं हैं कि उनके द्वारा लिखित ''चारित्रचन्द्रिका'' पुस्तक सबके लिए प्रेरणादायी हो और वे इसी प्रकार सदैव धर्म एवं गुरु की सेवा में अपने समय को सार्थक करती रहें।

सम्पादकीय

–कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन

इस धरती पर जन्में अनेकानेक महापुरुषों के बारे में समय-समय पर अनेक इतिहासकारों, मनीषियों, शोधकर्ताओं एवं पर्यटकों ने पुस्तकें लिखी हैं, उनके द्वारा ही हम पूर्ववर्ती रहन-सहन-खानपान आदि व्यवस्थाओं एवं सामाजिक रीति-रिवाजों से परिचित हो पाते हैं। वर्तमान में उपलब्ध विभिन्न धर्मों का साहित्य देखने से ज्ञात होता है कि भारत की वसुन्धरा पर हमेशा से महापुरुषों के साथ-साथ महासतियों के रूप में अनेक ऐतिहासिक नारियों ने भी जन्म लेकर रणनीति, राजनीति, धर्मनीति एवं सामाजिक क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किया है।

इसी श्रृँखला में पिछली बीसवीं सदी महान सौभाग्यशाली रही है, जब प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज (दक्षिण) के रूप में उसे दिगम्बर जैन मुनिपरम्परा का पुनरुद्धारक तेजस्वी व्यक्तित्व प्राप्त हुआ तथा बालब्रह्मचारिणी आर्यिका परम्परा की प्रथम आर्यिका के रूप में गणिनी आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी जैसी लौहबाला भी इसी बीसवीं सदी का अमूल्य उपहार हैं। इन दोनों के संघर्षशील व्यक्तित्व का परिचायक है वर्तमान की इक्कीसवीं सदी में फूल-फल रहा दिगम्बर जैन चतुर्विध संघ का विशाल उपवन। उसमें भी निःसंदेह यह मानना पड़ेगा कि अनेक आचार्यों एवं आर्यिकाओं के कर्मठ उपकारों से ही भावी परम्परा की समृद्धि हो रही है, तभी पंचमकाल में सम्राट चन्द्रगुप्त का स्वप्न साकार करने वाली सैकड़ों युवा शक्तियाँ जिनधर्म के रथ को चलाने में अपनी सक्रिय भूमिका निभा रही हैं।

पूज्य आचार्यश्री शांतिसागर महाराज के सर्वोदयी जीवन एवं उनके विभिन्न उपकारों से समाज को परिचित कराने हेतु सन् 1953 में पण्डितप्रवर श्री सुमेरचन्द्र दिवाकर ने ''चारित्र चक्रवर्ती'' ग्रंथ लिखा था, जिसे आज तक सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज में बड़ी रुचि एवं श्रद्धापूर्वक पढ़ा जाता है। उसी प्रकार पूज्य ज्ञानमती माताजी के सर्वतोमुखी जीवन एवं ऐतिहासिक

उपलब्धियों को संक्षेप में लेखनीबद्ध करके प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने प्रस्तुत ''चारित्र चन्द्रिका'' ग्रंथ हम लोगों को प्रदान किया है। यह ग्रंथ भी निश्चितरूप से साधु संघों, सामाजिक संस्थाओं एवं कार्यकर्ता युवा शक्तियों को प्रेरणा प्रदान करने में ''गाइड बुक'' की तरह उपयोगी सिद्ध होगा।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव के अवसर पर दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला से इस ''चारित्र चन्द्रिका'' ग्रंथ का प्रकाशन करते हुए मुझे गौरव का अनुभव हो रहा है। यह जन-जन के लिए प्रेरणास्रोत बने, यही मंगल कामना है।



आभार

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की आर्यिका दीक्षा के 50 वर्षों की सम्पूर्ति पर वैशाख कृ. 2, दिनाँक 15 अप्रैल 2006 को उनकी आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती के त्रिदिवसीय महोत्सव के शुभ अवसर पर प्रकाशित इस ''चारित्र चन्द्रिका'' ग्रंथ के प्रकाशन में शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र. निवासी श्रीमान् दौलतचन्द जैन एवं उनके सुपुत्र श्री संजीव कुमार जैन और पुत्रवधू श्रीमती संगीता जैन 'फिलिप्स इंटर प्राइजेज' ने ज्ञानदानस्वरूप अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया है एतदर्थ संस्थान उनकी आभारी है। भगवान जिनेन्द्र प्रभु से यही कामना है कि आप अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग इसी तरह धर्म के कार्यों में करते रहें और अपने जीवन को सार्थक करें।

—सम्पादक

मेरे उद्‌गार

—पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

नदियों में तैरा जा सकता है किन्तु हर कोई नदी की लम्बाई या गहराई को नाप नहीं सकता। पहाड़ पर कोई व्यक्ति प्रयास करके चढ़ सकता है किन्तु पहाड़ की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई को नापना सबके बस की बात नहीं हो सकती। समुद्र को नापना तो और भी दुरुह है। उसी प्राकार से गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की महानता का नाप करना अति कठिन है। पूज्य माताजी में दीक्षा से पूर्व ही या यूँ कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी कि जन्म सेही विशेषताओं का समोवश प्रारंभ हो गया था। वे विशेषताएँ भी इस जन्म की नहीं प्रत्युत पूर्व जन्मों की देन रहीं।

''होनहार बिखान के होत चीकने पात'' यह सूक्ति पूज्य माताजी में शत-प्रतिशत चरितार्थ होती है। इन्हें गुणों की प्राप्ति के लिए किसी से याचना नहीं करना पड़ी, बल्कि गुण स्वयं इन्हें खोजते हुए इनमें समाविष्ट हो गए। बचपन भी इनका प्रौढ़ताओं से भरा हुआ था। घर का कोई भी काम इनसे अछूता नहीं रहा, जो ये उसे करने में अक्षम रही हों। आलस्य/प्रमाद इनसे सदैव दूर भागता रहा। यही कारण रहा कि इन्होंने थोड़े समय में/अल्प आयु में भी बहुत सारे काम कर डाले। पद्मनंदीपंचविंशतिका जैसे महान ग्रंथ के मर्म को खाने-खेलने वाली उम्र में हृदयंगम कर लिया। सम्यक्त्व-मिथ्यात्व के भेद को न केवल समझ लिया किन्तु उसका व्यवहारिक जीवन में प्रयोग करके अपने दो छोटे भाइयों को काल कवलित होने से बचा लिया।

हीरा तो हीरा होता ही है किन्तु उसका मूल्याकंन हर कोई नहीं कर सकता। ज्ञानमती माताजी यदि हीरा हैं तो चंदनामती माताजी उनकी चमक के समान हैं 12 वर्ष की आयु तक जिन्होंने ज्ञानमती माताजी की चर्चा घर में रहते हुए सुनी किन्तु 13 वर्ष की आयु से तो स्वयं समीप रहकर माताजी के प्रत्येक बीततेहुए क्षण को देखा है। समझा है। तभी से उनकी विशेषताओं को अपनी आँखों से देखा, अपने कानों से सुना तथा अपने ज्ञान में समाविष्ट किया।

पूज्य ज्ञानमती माताजी तो चहुँमुखी प्रतिभा की धनी हैं ही किन्तु उनके समस्त बीते हुए क्षणों को लिपीबद्ध करना भी प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती माताजी के ही बस की बात थी। क्योंकि अन्य कोई भी लिखता या लिखेगा

वह सुनी-सुनाई बात होगी। यहाँ तक कि मेरे जैसा व्यक्ति भी जो चंदनामती माताजी से 4 वर्ष पूर्व से माताजी के निकट में रहा है वह भी पूरा वृत्तांत इसलिए नहीं लिख सकता क्योंकि मैं भी दिन के भी सामायिक प्रतिक्रमण के समय को छोड़कर ही जान पाता रहा हूँ। चंदनामती माताजी ने दीक्षा से पूर्व 17 वर्ष तक ब्रह्मचारिणी अवस्था में तथा सन् 1989 से अब तक प्रातः आँख खुलने से रात्रि में सोने तक तथा रात में सोते हुए भी उन्हीं के साथ बिताया है। उन्हीं के साथ जिया है। उन्हें पल-पल की जानकारी रही है।

फिर उन पलों को लिपीबद्ध करना भी एक असाधारण कार्य था। हीरे की महत्ता तिजोरी में रखने के बजाय आभूषण में जड़कर किसी के गले, मस्तक, कान आदि की शोभा बढ़ाना भी कुशल शिल्पी की ही कुशलता का प्रतिफल होता है। खाद्य पदार्थ तो सबमें समान होते हैं किन्तु सुन्दर सुस्वादु व्यंजन बनाना और उन्हें उनसे भी ज्यादा परोसने में कुशलता का परिचय देना एक से एक दुरुह है।

पूज्य चन्दनामती माताजी ने गणिनी माताजी के विशाल व्यक्तित्व को न केवल उजागर किया है अपितु उसे अत्यंत रोचक एवं प्रभावपूर्ण शब्दों में गुंफित किया है। वैसे तो स्वयं गणिनी ज्ञानमती माताजी ने ''मेरी स्मृतियाँ'' नामक ग्रंथ लिखा है जिसमें उन्होंने 60-70 वर्ष की स्मृतियों को आत्मकथा के रूप में संजोया है। अधिकतम खट्टे-मीठे अनुभवों को बड़े ही रोचक एवं रोमांचक रूप में प्रस्तुत किया है किन्तु कुछ स्थलों को आत्मप्रशंसा के भय से छोड़ दिया है या अति संक्षेप में दे दिया है। आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने उन अनेक छोड़े हुए कतिपय विषयों को इस पुस्तक में संकलित किया है, प्रस्तुत किया है। देखा जावे तो चंदनामती माताजी ने भी शायद यह सोचकर कि यह विशालकाय न हो जावे अतः कम ही विस्तार किया है। फिर उनकी विलक्षण प्रज्ञाशक्ति ने पाठकों के लिए अनेक स्थलों पर पूर्वाचार्यों के श्लोक आदि देकर मार्गदर्शक बना दिया है।

''चारित्रचन्द्रिका'' नाम भी सार्थक ही रखा है। वास्तव में यह भी पुस्तक नहीं ग्रंथ बन गया है। इस ग्रंथ में चारों अनुयोगों का समावेश है। इसे पढ़ने वाले देव-गुरु-शास्त्र के प्रति अप्रतिम भक्ति अपने में उत्पन्न करने का मार्ग प्रशस्त कर सकेंगे। इस ग्रंथ को तैयार करने में बहुत परिश्रम किया गया है। यह 20वीं-21वीं शताब्दी की धरोहर बन गया है। संघ की लम्बी-लम्बी यात्राओं का वर्णन भी बहुत ही रोचक शैली में लिखा गया है। कार्य करने वालों का भी

यथायोग्य मूल्याकंन किया गया है। यह ग्रंथ एक बार नहीं अनेक बार पढ़ने योग्य/मनन-चिंतन करने योग्य बन गया है। इसमें कोई विषय या घटनाएँ अतिशयोक्ति वाली नहीं है बल्कि उनसे अधिकता वाली रही है। क्योंकि मैं स्वयं भी सन् 1967 के बाद से उनका साक्षात साक्षी हूँ।

पूज्य गणिनी माताजी का अदम्य उत्साह, अपूर्वभक्ति, अतिशयपूर्ण मनोबल, सुदूरदृष्टि, अद्भुत प्रेरणा शक्ति सब कुछ अलौकिक है। उनके द्वारा किये गये, कराये गये सभी कार्य अनुपम हैं। जब आज उनके कार्यों का मूल्याकंन करते जनमानस नहीं अघाता तो आगे आने वाली पीढ़ी तो आश्चर्य चकित दृष्टि से इन समस्त कार्यों को देखेगी। यह ग्रंथ ही उनका विश्वास जागृत करने में सहभागी होगा। यह ग्रंथ केवल ज्ञानमती माताजी का ही नहीं अपितु युग का इतिहास है, समाज का दर्पण है। विषम परिस्थितियों में संघ तथा समाज को जोड़े रखने की माताजी में विलक्षण प्रतिभा देखी गई, जो कि वर्णनातीत है।

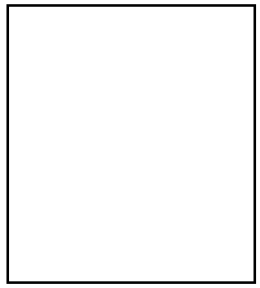
मेरी जन्मभूमि मध्यप्रदेश के सुप्रसिद्ध शहर इंदौर के निकट सनावद है। सन् 1967 में गणिनी माताजी का अपने आर्यिका संघ के साथ सनावद में चातुर्मास हुआ था। तब से अब तक मैं माताजी के संघ के साथ हूँ। मैं अपना सौभाग्य समझता हूँ कि पूज्य माताजी के द्वारा प्रेरित प्रत्येक कार्यों के साथ बेहिचक संलग्न रहा हूँ। चाहे कार्य छोटा रहा हो या बड़ा, किसी भी प्रकार के कार्य को करने/कराने में संकोच नहीं किया। चाहे साहित्य प्रकाशन का कार्य हो या सम्यग्ज्ञान पत्रिका के प्रकाशन का, चाहे निर्माण का कार्य रहा हो या भ्रमण का, भाषण का रहा हो या पूजन-विधान करने/कराने का, चाहे संघ का रहा हो अथवा समाज का, सभी कार्यों को अपना समझकर ही आत्मीयता से किया। दीक्षापूर्व तथा दीक्षा के पश्चात् अपने पद के अनुकूल कार्यों को करने में मैंने गौरव का ही अनुभव किया।

पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी के द्वारा इसी प्रकार के जनोपयोगी साहित्य का सृजन होता रहे, यही मंगल कामना करते हुए उभय माताओं के लिए वंदामि करता हूँ।



गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की
क्षुल्लिका दीक्षा के गुरु

भारत गौरव, विद्यालंकार, आचार्यरत्न 108 श्री देशभूषण जी महाराज का संक्षिप्त परिचय



स्वस्ति श्री मूलसंघ में कुन्दकुन्दाम्नाय, सरस्वती गच्छ, बलात्कारगण में बीसवीं सदी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज हुए हैं। उनके शिष्य श्री पायसागर आचार्य हुए, उनके शिष्य श्री जयकीर्ति आचार्य हुए।

उनके शिष्य भारत गौरव आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज की प्रेरणा एवं सानिध्य में वीर नि. सं. 2492, दिनाँक 13 मई 1965 में यहाँ अनन्तानन्त तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या में रायगंज के प्रांगण में विशालकाय 31 फुट उत्तुंग भगवान श्री ऋषभदेव की प्रतिमा की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई।

जन्म–मार्गशीर्ष शु. 2, सन् 1905
जन्मस्थान–कोथली (जि.-बेलगाँव, कर्नाटक)
मुनि दीक्षा तिथि–फाल्गुन शु. 15, दि. 8-3-1936, कुंथलगिरि
आचार्य पदारोहण–सन् 1948, सूरत (गुजरात)
समाधि तिथि–ज्येष्ठ शु. 1, सन् 1987
समाधि स्थान–कोथली (जि.-बेलगाँव कर्नाटक)

गणिनी आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने सन् 1953 में आचार्यश्री देशभूषण जी से क्षुल्लिका दीक्षा ली। अयोध्या तीर्थ पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से वीर निर्वाण संवत् 2520 (ईसवी सन् 1993), माघ शु. 13 को भगवान ऋषभदेव प्रथम महामस्तकाभिषेक महोत्सव के शुभ अवसर पर आचार्यश्री के श्रीचरणों में कृतज्ञता ज्ञापन हेतु उनकी छतरी का निर्माण कराया गया है।

एक अद्वितीय जैन केन्द्र

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

–कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष)

संक्षिप्त परिचय :

पिछले तीन दशकों में राजधानी दिल्ली की उत्तर दिशा में उत्तरप्रदेश के जिला मेरठ स्थित पौराणिक तीर्थ **हस्तिनापुर** में एक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय आकर्षण का केन्द्र उभर कर आया है। 200 फुट के व्यास में सफेद और रंगीन पत्थरों से निर्मित जैन भूगोल की अद्वितीय वृत्ताकार रचना **'जम्बूद्वीप'** द्वारा अपने आधार पर वेष्टित हल्के गुलाबी संगमरमर से निर्मित 101 फुट ऊँचे **सुमेरु पर्वत** की शोभा आज किसके मन को आकर्षित नहीं करती है?

प्राचीन जैन साहित्य एवं भूगोल के परिचायक, वैज्ञानिकों के लिए शोध केन्द्र, आध्यात्मिक उन्नयन के लिए पवित्र स्थान, मानसिक शांति एवं जिनेन्द्र भगवान की पूजन-भक्ति के सम्पूर्ण साधनों तथा समस्त आधुनिक सुविधाओं की उपलब्धता सहित इस अनुपम तीर्थ की जनक संस्था का नाम है–**दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान (रजि.)**। जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के पावन प्रेरणा से 1972 में इस संस्थान का सूत्रपात किया गया। दिगम्बर जैन इंस्टीट्यूट ऑफ कास्मोग्राफिक रिसर्च **(Digambar Jain Institute of Cosmographic Research)** के नाम से प्रसिद्ध इस संस्थान का आधारभूत लक्ष्य था-जम्बूद्वीप का निर्माण और यह जम्बूद्वीप ही अंततः संस्थान का मुख्य कार्यालय बन गया।

जंबूद्वीप की 30 एकड़ पवित्र भूमि पर संस्थान के द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं/रचनाओं का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है–

1. जंबूद्वीप रचना–जिनेन्द्र भगवान की 207 प्रतिमाओं से पावन भारतीय शिल्प और जैन भूगोल का अद्वितीय उदाहरण, आधुनिक आकर्षणों-बिजली के फौव्वारे, नौका-विहार इत्यादि सहित।

2. कमल मंदिर–भगवान महावीर की अतिशयकारी खड्गासन प्रतिमा इस मंदिर में विराजमान हैं।

3. ध्यान मंदिर–24 तीर्थंकर भगवन्तों की प्रतिमाओं सहित **'ह्रीं'** रचना इस मंदिर में विराजमान हैं, जो कि 'ध्यान' (Meditation) करने हेतु उत्तमोत्तम माध्यम हैं।

4. त्रिमूर्ति मंदिर—भगवान आदिनाथ, भरत एवं बाहुबली की खड्गासन प्रतिमाओं से इस मंदिर का नाम सार्थक है। कमल पर विराजमान भगवान नेमिनाथ एवं पार्श्वनाथ से इस मंदिर की शोभा द्विगुणित हो गयी है।

5. वासुपूज्य मंदिर—इस मंदिर में 12वें तीर्थंकर-वासुपूज्य स्वामी की खड्गासन प्रतिमा विराजमान हैं।

6. शांति-कुंथु-अरहनाथ मंदिर—जिन भगवन्तों के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणकों से हस्तिनापुर की भूमि परम-पावन हुई है, उन शांति-कुंथु और अरहनाथ भगवंतों की खड्गासन प्रतिमाएं इस मंदिर में विराजमान हैं।

7. ॐ मंदिर—अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठियों की प्रतिमाओं सहित **ॐ** (ओम) रचना इस मंदिर में विराजित है।

8. विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर—इस मंदिर में विदेह क्षेत्र के विद्यमान 20 तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ बीस कमलों पर विराजमान हैं।

9. सहस्रकूट मंदिर—जिनेन्द्र भगवान की 1008 प्रतिमाओं सहित।

10. भगवान ऋषभदेव मंदिर—धातु निर्मित भगवान ऋषभदेव की मूलनायक प्रतिमा एवं अन्य जिन प्रतिमाओं सहित।

11. भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ—'भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष' में निर्मित, भगवान के जीवन चरित्र को प्रदर्शित करने वाला, 8 प्रतिमाओं से समन्वित 31 फुट ऊँचा कीर्तिस्तंभ।

12. तेरहद्वीप मंदिर—निर्माणाधीन।

13. कैलाशपर्वत भवन—प्रथम जैन तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत की आकर्षक प्रतिकृति इस भवन में विराजमान है। 4 फरवरी 2000 को लाल किला मैदान, दिल्ली में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा इस प्रतिकृति के समक्ष निर्वाणलाडू चढ़ाकर इसका उद्घाटन किया गया।

14. जम्बूद्वीप पुस्तकालय—प्राचीन हस्तलिखित एवं प्रकाशित लगभग 15000 ग्रंथों एवं पुस्तकों के संग्रह सहित।

15. जम्बूद्वीप औषधालय

16. ज्ञानमती कला मंदिरम्—हस्तिनापुर के पौराणिक इतिहास को प्रदर्शित करने वाली झांकियों सहित।

17. वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला—1972 में संस्थापित इस ग्रंथमाला द्वारा अब तक लाखों की संख्या में 200 से अधिक ग्रंथों एवं पुस्तकों के संस्करणों का

प्रकाशन हो चुका है।

18. सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका—यह पत्रिका सन् 1974 से लगातार प्रकाशित हो रही है, जिसमें जैन शास्त्रों के साररूप लेखों एवं अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रमों का संकलन एक स्थान पर प्राप्त होता है।

19. जम्बूद्वीप भोजनालय—आने वाले दर्शनार्थियों को प्रतिदिन निःशुल्क शुद्ध (जैनचर्या के अनुरूप) भोजन उपलब्ध कराता है।

20. धर्मशालाएं—200 से अधिक फ्लैट, बंगले इत्यादि, जिनमें ठहरने संबंधी सभी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं।

21. मनोरंजन के साधन—तरह-तरह के झूले, बच्चों की रेल, नौका विहार, फौव्वारे, हरे-भरे लॉन, पूरे कैम्पस में घूमने के लिए ऐरावत हाथी (मोटर से चालित), बिजली की आकर्षक व्यवस्था, सुन्दर प्राकृतिक दृश्य इत्यादि बरबस ही दर्शनार्थियों को इस भव्य रचना की तुलना 'स्वर्ग' से करने के लिए प्रेरित करते हैं।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा आयोजित सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रम

अक्टूबर 1981—जम्बूद्वीप (हस्तिनापुर) स्थल पर **'जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति सेमिनार'**।

31 अक्टूबर 1982—फिक्की ऑडिटोरियम-दिल्ली में **'जम्बूद्वीप सेमिनार'** जिसका उद्घाटन श्री राजीव गांधी, तत्कालीन संसद सदस्य द्वारा कियागया।

अप्रैल 1985—जम्बूद्वीप (हस्तिनापुर) स्थल पर **'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान'** विषय पर अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार, जिसका उद्घाटन उ.प्र. के तत्कालीन मंत्री प्रोफेसर वासुदेव सिंह द्वारा किया गया।

जून 1982 से अप्रैल 1985—लालकिला मैदान, दिल्ली से तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरागांधी द्वारा 4 जून, 1982 को पूरे देश में भ्रमण करने हेतु **'जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति'** रथ का उद्घाटन किया गया। जनसाधारण में अहिंसा, चारित्र-निर्माण तथा विश्व बन्धुत्व के संदेश का प्रचार-प्रसार करते हुए 1045 दिन तक देश भर में भ्रमण करने के पश्चात् यह ज्ञान ज्योति तत्कालीन रक्षामंत्री श्री पी.वी. नरसिम्हा राव (भूतपूर्व प्रधानमंत्री) द्वारा जम्बूद्वीप के मुख्य द्वार के समक्ष सदैव के लिए स्थापित कर दी गई।

1992—**'अंतर्राज्यीय चारित्र निर्माण संगोष्ठी'** का जंबूद्वीप स्थल पर श्री नेमीचंद जैन, विधायक (मध्यप्रदेश) की अध्यक्षता में आयोजन किया गया।

'जैन गणित' एवं **'चारित्र निर्माण'** आदि विषयों पर हुई संगोष्ठियाँ

मेरठ विश्वविद्यालय एवं दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित की गईं।

1993—अयोध्या में अवध विश्वविद्यालय-फैजाबाद के संयुक्त तत्वावधान में **'भारतीय संस्कृति के आद्य प्रणेता भगवान ऋषभदेव''** विषय पर संगोष्ठी।

अक्टूबर 1995—मेरठ विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्वावधान में पंचदिवसीय **'गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती साहित्य संगोष्ठी-95'**।

मार्च-अप्रैल 1998—तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा 9 अप्रैल 1998 को तालकटोरा स्टेडियम, दिल्ली से देश भर में भ्रमण करने हेतु **'भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ'** का उद्घाटन। 3 वर्ष तक देशभर में तीर्थंकर भगवन्तों के सर्वोदयी सिद्धांतों एवं जैनधर्म की प्राचीनता का प्रचार-प्रसार करने के पश्चात् यह समवसरण इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश द्वारा तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली-प्रयाग तीर्थ (इलाहाबाद) में स्थापित कर दिया गया।

अक्टूबर 1998—जम्बूद्वीप स्थल पर **'राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन'**, जिसका उद्घाटन किया गया-स्वर्गीय श्री राजेश पायलट (तत्कालीन संसद सदस्य द्वारा)।

फरवरी 2000—तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा 4 फरवरी 2000 को लाल किला मैदान, दिल्ली में एक वर्ष तक चलने वाले **'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष'** का उद्घाटन किया गया।

इस युग में जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव पर 1008 संगोष्ठियों की शृंखला, भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभों का निर्माण तथा अन्य अनेक सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रम राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस वर्ष के अंतर्गत आयोजित किये गये ।

टोरण्टो, कनाडा, न्यूजर्सी आदि विदेश की भूमियों पर भी इन्हीं प्रेरणाओं के माध्यम से 4 फरवरी 2000 को निर्वाण महामहोत्सव मनाया गया।

जून 2000—जम्बूद्वीप स्थल पर 11 जून 2000 को **'जैनधर्म की प्राचीनता'** विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार आयोजित किया गया।

फरवरी 2001—भगवान ऋषभदेव की दीक्षाभूमि-प्रयाग (इलाहाबाद) में **'तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली तीर्थ'** का नवनिर्माण। इस तीर्थ पर भगवान के दीक्षा कल्याणक के प्रतीकस्वरूप धातु के वटवृक्ष के नीचे ध्यान में लीन महायोगी ऋषभदेव की सवा पांच फुट उत्तुंग पिच्छी-कमण्डलु सहित खड्गासन प्रतिमा, केवलज्ञान कल्याणक के प्रतीक स्वरूप भगवान की चतुर्मुखी प्रतिमा सहित दिव्य

समवसरण रचना तथा निर्वाण कल्याणक के प्रतीक स्वरूप 51 फुट उत्तुंग 'कैलाशपर्वत' की भव्य रचना पर भगवान ऋषभदेव की 14 फुट उत्तुंग अत्यंत मनोहारी लालवर्णी पद्मासन प्रतिमा तथा तीन चौबीसी के प्रतीक स्वरूप 72 जिन प्रतिमाएँ विराजमान हैं। 'ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ' भी स्थापित है। 4 से 8 फरवरी 2001 तक 'भगवान ऋषभदेव पंचकल्याणक प्रतिष्ठा' एवं 1008 महाकुंभों से कैलाशपर्वत पर प्रतिष्ठित भगवान ऋषभदेव का 'महाकुंभमस्तकाभिषेक' कार्यक्रम।

सन् 2003-2004—भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में **'नंद्यावर्त महल तीर्थ'** का निर्माण। भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति जिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर और नंद्यावर्त महल (भगवान महावीर का जन्म महल) एवं उसमें स्थापित भगवान शांतिनाथ जिनालय इस तीर्थ के मुख्य आकर्षण हैं। महावीर की जन्मभूमि के प्रचार-प्रसार हेतु **भगवान महावीर ज्योति रथ** सम्पूर्ण भारतवर्ष में प्रवर्तन कर चुका है।

सन् 2005-2006—भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव। 6 जनवरी 2005 को जन्मभूमि वाराणसी से इसका भव्य उद्घाटन होकर पूरे एक वर्ष तक इसे विभिन्न आयोजनों के साथ मनाया गया।

इस संस्थान के द्वारा समय-समय पर विविध पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं एवं धार्मिक कार्यक्रम सम्पन्न होते रहते हैं। संस्थान के अद्भुत कार्यकलाप की श्रेणी में है—**णमोकार महामंत्र बैंक,** जहाँ प्रतिवर्ष श्रद्धालु भक्तों द्वारा लाखों की संख्या में णमोकार मंत्र लिखकर जमा कराए जाते हैं, जो कि विश्वशांति की किरणें प्रसारित करने में अतिशय धरोहर स्वरूप हैं।

संस्थान द्वारा दिये जाने वाले पुरस्कार

गणिनी ज्ञानमती पुरस्कार—सन् 1995 से प्रत्येक पाँच वर्ष में यह पुरस्कार जैन धर्म पर उच्चस्तरीय शोध तथा संस्थान की शैक्षणिक गतिविधियों में सहयोग हेतु किसी भी जैन विद्वान को 1,00,000/- रुपये की नगद राशि, प्रशस्ति-पत्र इत्यादि के रूप में प्रदान किया जाता है।

जम्बूद्वीप पुरस्कार—सन् 2000 में स्थापित 25,000/- रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

आर्यिका रत्नमती पुरस्कार—सन् 1999 में स्थापित 11,000/- रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

कुण्डलपुर पुरस्कार—सन् 2004 में स्थापित 25,000/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

श्री छोटेलाल जैन पुरस्कार–सन् 2003 में स्थापित 11,000/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

नंद्यावर्त पुरस्कार–सन् 2004 से प्रारंभ 25000/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

उपरोक्त पुरस्कारों के अतिरिक्त 'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव वर्ष' के अवसर पर घोषित 2,50,000/- रुपये की नगद राशि का **'भगवान ऋषभदेव नेशनल अवार्ड'** एवं 11,000/-रुपये की नगद राशि का **'ब्राह्मी पुरस्कार'** भी संस्थान द्वारा प्रदान किया गया। भगवान ऋषभदेव नेशनल अवार्ड सन् 2003 में 'कुण्डलपुर महोत्सव' के अवसर पर तत्कालीन सांसद एवं पूर्व वित्त राज्य मंत्री श्री वी.धनंजय कुमार जैन को कुण्डलपुर (नालंदा) में प्रदान किया गया।

इलाहाबाद-उ.प्र. में
तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग दिगम्बर जैन तीर्थ का निर्माण

सन् 2001 में संस्थान के अन्तर्गत इस तीर्थ का निर्माण इलाहाबाद-बनारस हाइवे पर किया गया है। जिसका संचालन संस्थान की उपसमिति तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग प्रबन्ध समिति के द्वारा किया जा रहा है।

कुण्डलपुर तीर्थ का विकास

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) का विकास करने हेतु संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति नाम से एक उपसमिति बनाई गई, जिसके माध्यम से वहाँ ''नंद्यावर्त महल'' तीर्थ परिसर का निर्माण किया गया।

उपरोक्त सभी निर्माण योजनाएं, सामाजिक, धार्मिक तथा शैक्षणिक कार्यक्रम **पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी** की पावन प्रेरणा से उनके ससंघ सानिध्य में इस संस्थान द्वारा आयोजित किये गये हैं। संघस्थ **प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी** का मार्गदर्शन एवं **पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज** का निर्देशन इन समस्त कार्यों में अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है।

इस प्रकार यह संस्थान अपनी विभिन्न समर्पित कार्य योजनाओं द्वारा समाज की सेवा में प्रतिक्षण संलग्न है।

मानसिक शांति, आध्यात्मिक विकास, प्राकृतिक सौन्दर्य एवं अन्य अनेक अवसरों को एक साथ प्राप्त करने हेतु यह संस्थान जंबूद्वीप दर्शन के लिए आपको सादर आमंत्रित करता है।

चारित्रचन्द्रिका की जननी
गृहस्थावस्था की माता मोहिनी देवी

–ब्र. कु.बीना जैन (संघस्थ)

आज के भौतिकवादी युग में अध्यात्म के प्रति रुचि बहुत कम परिलक्षित होती है तथापि इस पंचमकाल में जो कतिपय महान विभूतियाँ आत्मसाधना के साथ-साथ जनकल्याण में रत हैं यह बड़े गौरव एवं सुखद आश्चर्य की बात है। दिगम्बर जैन चतुर्विध संघ में मुनियों के समान आर्यिकाओं का भी महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है, जिसमें बीसवीं शताब्दी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी, चारित्रचन्द्रिका, परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की गृहस्थवस्था की माता मोहिनी देवी भी हुई हैं, जिनका गृहस्थ जीवन एवं दीक्षित जीवन प्रत्येक नारी जाति के लिए अनुकरणीय आदर्श है।

रत्नों की खान आर्यिका माताजी अर्थात् मोहिनी देवी की धर्मपत्नी मत्तोदेवी की पवित्र कुक्षि से हुआ। बचपन से ही तीव्र बुद्धि की धनी कन्या मोहिनी को धार्मिक संस्कार विरासत में ही प्राप्त हो गए थे, कुटुम्बीजनों के साथ-साथ गुरुजनों व नगरवासियों की लाडली मोहिनी ने अल्पकालीन लौकिक अध्ययन व उर्दू भाषा के ज्ञान के साथ विवाह के समय पिता द्वारा दहेज में प्रदत्त ग्रंथ 'पद्मनन्दिपंचविंशतिका'' का गहन स्वाध्याय व चिन्तन-मनन किया। जिसके फलस्वरूप उन्होंने अष्टमी, चतुर्दशी को ब्रह्मचर्य व्रत एवं आजन्म शीलव्रत जिनप्रतिमा के सम्मुख ले लिया था। जब इनका विवाह सन् 1932 में अवध प्रान्त की ही धर्मपरायण नगरी टिकैतनगर (जि.-बाराबंकी-उ.प्र.) के श्रेष्ठी श्री धन्यकुमार के सुपुत्र छोटेलाल जी के साथ हुआ। इन्होंने इस दहेज को सबसे मूल्यवान समझकर प्रतिदिन उसका स्वाध्याय किया और उस ग्रंथ ने मानों युग का एक इतिहास ही रच डाला। धार्मिक संस्कारों से ओतप्रोत उनकी क्रम-क्रम से तेरह संतान हुईं, जिसमें प्रथम पुष्प के रूप में सन् 1934 में शरदपूर्णिमा की पावन तिथि में एक विलक्षण कन्यारत्न को जन्म दिया, जो आज विश्व में गणिनी ज्ञानमती माताजी के रूप में विख्यात हैं, इसके साथ ही उन तेरह सन्तानों में 2 पुत्रियाँ, कु. मनोवती (वर्तमान आर्यिका अभयमती माताजी) एवं कु. माधुरी (वर्तमान आर्यिका चन्दनामती माताजी) तथा 1 पुत्र ब्र. रवीन्द्र जी आज पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की छत्रछाया में

जिनधर्म की विश्वव्यापी विजय पताका फहरा रहे हैं तथा शेष धर्मकार्यों में सदैव अग्रसर रहते हुए गृहस्थ धर्म का कुशलतापूर्ण संचालन कर देव-शास्त्र-गुरुभक्ति में रत हैं।

मोहिनी देवी ने अपने गृहस्थ जीवन में कई तीर्थयात्राएं की, पति के जीवित रहते पंचम प्रतिमा के व्रत ले लिए पुनः सन् 1969 में 25 दिसम्बर को पति की सुन्दर समाधि बनाकर वैराग्य भाव को वृद्धिंगत करते हुए सप्तम प्रतिमा ली, पुनश्च यह वैराग्य भाव जब पूज्य माताजी के दर्शनार्थ जाने पर दृढ़ से दृढ़तम हुए तब 57 वर्ष की उम्र में सन् 1971 में अजमेर (राज.) में मगसिर वदी तीज को आचार्य धर्मसागर महाराज से मोहासक्त परिवार के तीव्र विरोध के बावजूद आर्यिका दीक्षा लेकर ''रत्नमती'' नाम प्राप्त किया। वे सदैव अपने संयम में सजग रहीं। 13 संतानों को जन्म देकर पुनः स्वयं आर्यिका दीक्षा लेकर 13 वर्ष तक निरतिचार व्रत पालन में संलग्न रहते हुए 15 जनवरी सन् 1985, माघ वदी नवमी के दिन पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में उनकी सुन्दर समाधि हुई। वस्तुतः ऐसे महान रत्न इस युग के गौरव हैं, जिनका जीवन चरित्र इतिहास का वह स्वर्णांकित पृष्ठ है, जिसके सम्मुख देश का हर मस्तक स्वयमेव नम्रीभूत हो जाएगा, ऐसी चारित्रचन्द्रिका जैसे रत्नों की प्रसूता माता रत्नमती जी को कोटिशः वंदन।

चारित्रचन्द्रिका के जनक

गृहस्थावस्था के पिता लाला श्री छोटेलाल जी

–ब्र. कु. स्वाति जैन (संघस्थ)

जिस प्रकार किसी वृक्ष के हर-भरे एवं फलदान होने में उसकी जड़ की मुख्यता है, जिस प्रकार किसी भी सुन्दर, आकर्षक एवं सुसज्जित मकान में उसकी नींव की प्रमुखता है, जिस प्रकार सर्वगुण सम्पन्न शिष्य के अद्वितीय व्यक्तित्व एवं कृतित्व के पीछे उसके गुरु की अहम भूमिका है, जिस प्रकार प्रगतिशील राष्ट्र के पीछे वहाँ के नागरिकों का महत्वपूर्ण स्थान है ठीक उसी प्रकार भारत भू पर जन्में प्रत्येक महापुरुषों एवं सन्तों की महानता तथा उनके व्यक्तित्व आदि में उनके माता-पिता की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है, उसी शृँखला में राष्ट्रगौरव, विश्वविभूति, जैन समाज की कीर्ति को आकाश की ऊँचाईयों पर पहुँचाने वाली परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के गृहस्थावस्था के पिता लाला श्री छोटेलाल जी भी एक हैं, जो कि वर्तमान युग में कन्या को भारभूत न समझने वाले पिताओं में एक आदर्श पिता हुए हैं।

श्री छोटेलाल जी का जन्म सन् 1904 में शाश्वत तीर्थ अयोध्या के निकट बाराबंकी जिले के टिकैतनगर नामक ग्राम में प्रतिष्ठित श्रेष्ठी श्री धन्यकुमार जी की धर्मपत्नी श्रीमती फूलमती देवी की पवित्र कुक्षी से हुआ। बचपन से ही धार्मिक वातावरण में पले-बढ़े छोटेलाल जी जिनदर्शन, दान-पूजन, स्वाध्याय इत्यादि समस्त श्रावकोचित्त क्रियाओं के पालन में सदैव तत्पर रहते थे। प्रारंभ से ही शान्त-सरल स्वभावी, छोटेलाल जी बाहर के गाँवों में जाकर व्यापार करते थे और कुशल व्यापारी व प्रतिष्ठित महानुभावों में गिने जाते थे। युवावस्था में इनका विवाह महमूदाबाद के लाला सुखपालदास जी की योग्य सुपुत्री मोहिनी देवी से सम्पन्न हुआ। फिर तो सोने में सुहागे के समान धर्मध्यानपूर्वक गृहस्थोचित्त कर्तव्यों का परिपालन करते हुए इन नवदम्पत्ति की जीवन बगिया में तेरह पुष्प खिले जिनमें से प्रथम सुरभित पुष्प ने मैना से ज्ञानमती बनकर जिनशासन के उपवन को सुसज्जित किया और उसी उपवन की कलिका उनकी और 2 होनहार पुत्रियाँ तथा एक पुत्र भी अपने कार्य कलापों के द्वारा देश को गौरवान्वित कर रहे हैं। धार्मिक गतिविधियों में रुचि रखने वाले एवं देव-शास्त्र-गुरु की सेवा-वैयावृत्ति में दत्तचित्त लालाजी अपनी पुत्री मैना को पुत्र की

भांति मानते थे, शायद यही कारण था कि उनके त्यागमार्ग पर आरूढ़ होने पर वे मोहवश विचलित हो उठे थे और आगे अपने सभी पुत्र-पुत्रियों को उनके पास भेजने से बहुत डरते थे। लालाजी में एक गुण विशेष था कि वह अपनी सभी पुत्रियों को रत्न मानते थे और उन्हें मात्र पुत्रियाँ न मानकर कुल की शोभा मानते थे। शायद यही कारण रहा कि उनकी तीन पुत्रियों ने रत्नत्रय स्वरूपा बन इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ का निर्माण कर उनके यश नाम आदि को चहुँदिश व्यापी कर दिखाया। अपनी पुत्री को जगन्माता मानकर उन पर अगाध श्रद्धा रखने वाले श्री छोटेलाल जी ने अपने जीवन के अंतिम क्षणों में पूज्य माताजी का ध्यान एवं महामंत्र णमोकार का श्रवण करते हुए 25 दिसम्बर सन् 1969 में इस नश्वर तन को छोड़ा, यह उनका पूर्वोपार्जित पुण्य विशेष ही था कि उनकी धर्मपरायण पत्नी एवं सुयोग्य पुत्र-पुत्रियों ने मोह के क्षणों में भी अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए उनका सुन्दर समाधिमरण कराया, जिसकी आकांक्षा प्रत्येक सद्गृहस्थ को रहती है।

वस्तुतः ऐसी महाआत्माएँ कभी-कभी ही जन्म लेती हैं और जब भी जन्मती हैं कुछ विशेष ही कर जाती हैं, धन्य हैं ऐसे पिता, जिन्होंने चारित्र चन्द्रिका जैसी महान विभूति को जन्म दिया, उन्हें मेरा नमन।

चारित्र चन्द्रिका माताजी के जन्म एवं दीक्षा से पवित्र स्थल

–ब्र. कु. आस्था जैन (संघस्थ)

इस संसार में भूमियाँ तो अनेक हैं लेकिन पवित्र वहीं की माटी कही जाती है, जहाँ पर किसी महापुरुष का जन्म अथवा उनके द्वारा कोई विशेष कार्य किए जाते हैं न जाने कितने लोग इस संसार में आते हैं और चले जाते हैं लेकिन जो व्यक्ति अपने जीवन को परहित में लगा देता है, अपने सम्पूर्ण जीवन को आदर्शमयी बना देता है और संसार में कुछ विशेष कर जाता है ''महापुरुष'' वही कहलाता है और ऐसे इन महान व्यक्तित्व के कार्यकलापों से वहाँ की भूमि भी आदर्शमयी, पूज्यनीय और पवित्र बन जाती है।

जन्मभूमि टिकैतनगर–शाश्वत तीर्थ अयोध्या के अंचल में बसी है एक धर्ममयी नगरी 'टिकैतनगर' जो अवध प्रान्त की शान है, जहाँ की पवित्र माटी में लाला श्री छोटेलाल जी की धर्मपत्नी मोहिनी देवी से सन् 1934, आश्विन शु. पूर्णिमा को जन्मीं कु. मैना नामक बाला ने अपने कार्यों के द्वारा ऐतिहासिक साध्वी एवं कालजयी व्यक्तित्व के रूप में इस ग्राम का नाम पूरे विश्व में फैला दिया है। नवाबों की नगरी एवं उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ से लगभग 80 किमी. दूर अवस्थित यह नगरी वस्तुतः रत्नों की खान है, जिसमें से अनेकों रत्न त्यागमार्ग पर निकलकर जिनशासन की धर्मप्रभावना में सहभागी बने हैं और निरन्तर अनेक त्यागी निकल भी रहे हैं। नवाब आसिफुद्दौला के आला वजीर राजा टिकैतराय द्वारा अट्ठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बसाई गई यह नगरी अपने आप में बेजोड़ है यहाँ जैन समाज के लगभग 100 घर हैं, दो मंदिर हैं तथा पूरे नगर की कुल आबादी लगभग 25 हजार हैं और अब यह नगरी चारित्रचन्द्रिका माता के जन्म की प्रसिद्धि से पूरे विश्व में परम वन्दनीय हो चुकी है।

प्रथम त्यागभूमि बाराबंकी जनपद–पूज्य माताजी की जन्मभूमि से लगभग 60 किमी. दूर एवं लखनऊ से 20-40 किमी. दूर स्थित यह बाराबंकी जिला उस समय प्रसिद्धि में आया जब कु. मैना ने बीसवीं शताब्दी में प्रथम बार सन् 1952 में शरदपूर्णिमा की पावन तिथि में आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज से ब्रह्मचर्य व्रत लेकर न सिर्फ अपने त्यागमयी जीवन का प्रारंभीकरण किया अपितु कुमारिकाओं के लिए त्यागमार्ग की परम्परा को प्रादुर्भूत करके उसे विश्व

के क्षितिज पर स्थापित कर दिया। वर्तमान में ज्ञानमती माताजी जैसी दिव्य विभूति के द्वारा उस स्थल से इस सदी में त्यागमार्ग की परम्परा का सूत्रपात करके धर्म की अजस्र धारा प्रवाहमान करने के कारण ही हमें सैकड़ों बाल ब्रह्मचारिणी आर्यिका माताओं के दर्शन सुलभतया हो रहे हैं।

क्षुल्लिका दीक्षास्थली अतिशय क्षेत्र महावीर जी—दिगम्बर जैन संस्कृति की अमूल्य विरासत अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी तीर्थ जैन समाज के लिए सम्पूर्ण भारत का गौरव स्थल है। राजस्थान प्रांत के करौली जिले के हिण्डोन उपखण्ड में गंभीर नदी के पश्चिमी तट पर चांदनगाँव में स्थित यह तीर्थ महावीर स्वामी की अतिशय युक्त प्रतिमा के कारण ''श्री महावीर जी'' के नाम से सुविख्यात है। आध्यात्मिकता एवं मनोकामनापूर्ति के अद्‌भुत समन्वय से संयुक्त इस अतिशयकारी तीर्थ पर आज से 53 वर्ष पूर्व भारत गौरव आचार्यश्री देशभूषण महाराज ने प्रथम बालयोगिनी कु. मैना को सन् 1953 में चैत्र कृष्णा एकम की पवित्र तिथि में क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान कर ''वीरमती'' के रूप में बीसवीं सदी को अमूल्य एवं महानतम देन प्रदान की। वीरप्रभु के अतिशयकारी क्षेत्र पर दीक्षित परम अतिशयकारी वीरमती माताजी ने कुमारिकाओं के लिए दीक्षामार्ग का प्रारंभकरण कर इस तीर्थ की महत्ता को और अधिक वृद्धिंगत कर दिया। पूरे देश की जैनसमाज के श्रद्धालु भक्त इस अतिशय क्षेत्र पर मनोकामना सिद्धि हेतु आते हैं और महावीर बाबा के दर्शन-वंदन से परमशांति का अनुभव करते हैं।

आर्यिका दीक्षा से पवित्र नगरी माधोराजपुरा—गुलाबी नगरी जयपुर एवं पदमपुरा के मध्य बसी माधोराजपुरा नगरी राजस्थान प्रांत की एक धार्मिक नगरी है। यूँ तो प्राचीन मंदिरों एवं वहाँ सुरक्षित कई हस्तलिखित प्राचीन ग्रंथों एवं ऐतिहासिकता की दृष्टि से इस भूमि का अपना अलग ही महत्त्व है, लेकिन इसकी यशगाथा चहुँदिश में तब विश्वव्यापी हो उठी, जब चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर महाराज के प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर महाराज से क्षुल्लिका श्री वीरमती माताजी ने सन् 1956, वैशाख कृ. दूज को आर्यिका दीक्षा लेकर ''ज्ञानमती'' नाम प्राप्त किया और गुरु द्वारा प्रदत्त इस नाम को सार्थक करते हुए ज्ञान के क्षेत्र में अद्वितीय कीर्तिमान स्थापित किया, जिसका लोहा आज बड़े-बड़े आचार्य, मुनि, विद्वान आदि भी मानते हैं।

इस प्रकार मैना को ज्ञानमती माताजी बनाने वाली पवित्र पावन भूमियों को शतशः नमन एवं 54 वर्षीय उनकी चिरसाधना को भावपूर्वक वंदन।

''चारित्रचन्द्रिका'' ग्रंथ की लेखिका
परमपूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी का परिचय

भारतवर्ष की इस ''रत्नगर्भा'' पृथ्वी ने चेतन व अचेतन अनेक रत्नों का समूह पूरे राष्ट्र को ही नहीं वरन् पूरे विश्व को प्रदान किया है, जिसमें अचेतन रत्न सोना, चाँदी, हीरा, पन्ना आदिक हैं तथा चेतन रत्नों में हमारे महापुरुष आते हैं जिनके व्यक्तित्व से भारत का मस्तक सदैव विश्व के सम्मुख गर्व से ऊँचा रहा है। उन सन्त एवं साध्वियों की अविरल प्रवाहमान धारा में जहाँ जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के सम्मुख सम्पूर्ण विश्व नतमस्तक है। वहीं उनके पथचिन्हों का अनुसरण करने वाली उनकी शिष्या प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी का नाम वर्तमान जगत में जनमानस से अछूता नहीं है।

परमपूज्य आर्यिका श्री चंदनामती माताजी का जन्म पूर्वी उत्तरप्रदेश के बाराबंकी जिले के टिकैतनगर ग्राम में 18 मई 1958 को ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या के शुभ दिवस श्रेष्ठी श्री छोटेलाल जी की धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनी देवी कीपवित्र कुक्षि से बारहवीं संतान के रूप में हुआ। हाईस्कूल तक लौकिक शिक्षा प्राप्त करने वाली 'कु. माधुरी' ने सन् 1971 में अजमेर (राज.) में परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के प्रथम दर्शन कर अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से पूज्य माताजी को आकर्षित कर मात्र 13 वर्ष की लघुवय में सुगंधदशमी के शुभ दिन आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया एवं कुटुम्बीजन को अचरज में डाल दिया पुनः शास्त्री, विद्यावाचस्पति आदि उपाधि परीक्षाओं को उत्तीर्ण करके विरासत में प्राप्त संस्कारों के फलस्वरूप आपने अपनी वैराग्य भावना को वृद्धिंगत करते हुए सन् 1982 दिल्ली में 2 प्रतिमा एवं 1987 में सप्तमप्रतिमा के साथ गृहत्याग का नियम ले लिया और 18 वर्षों तक गुरु सेवा, वैयावृत्ति एवं जिनधर्म की महती प्रभावना करते हुए 13 अगस्त 1989, श्रावण शुक्ला ग्यारस तिथि में ऐतिहासिक भूमि हस्तिनापुर के जम्बूद्वीप स्थल पर पूज्य माताजी से आर्यिका दीक्षा प्राप्त की। इसी के साथ आपने 'माधुरी' से 'आर्यिका चंदनामती' बन नारी जीवन का चरम लक्ष्य प्राप्त किया और आप मोक्षपथ की पथिक बन गईं। ''यथा नाम तथा गुण'' की

सूक्ति को चरितार्थ करते हुए जहाँ आपने कु. माधुरी के रूप में जन-जन को अपनी मधुरता का रसास्वादन करवाया वहीं ''आर्यिका चंदनामती'' बनकर अपनी वाणी की चन्दनरूपी सुगंधि से ज्ञानामृतरूप शीतल औषधि सभी को प्रदान किया और वह अजस्र धारा आज भी प्रवाहमान है। आप आशु कवियित्री हैं, क्षण भर में प्रसंगोपात्त, समयोचित, सरस एवं सरल रचना का निर्माण आपका विशेष गुण हैं जिसका उदाहरण आपके द्वारा लिखित अनेकों भजन, पूजन, चालीसा, आरती, विधान आदि रचनाएँ हैं। मितभाषिणी पूज्य आर्यिका श्री वह ओजस्वी वक्ता हैं जिनके प्रवचन दिग्भ्रमित प्राणी को योग्य दिशा की पहचान कराकर जीवन मेंनई स्फूर्ति का संचार करते हैं। साहित्यिक क्षेत्र में जैनधर्म के विपुल एवं कठिन साहित्य को सरल एवं सौष्ठवपूर्ण भाषा शैली में जनमानस के समक्ष प्रस्तुत कर आपने साहित्य की जो सेवा की है उस हेतु हम सभी आपके चिरऋणी रहेंगे। गद्य एवं पद्य में हुई अनेक रचनाओं में समयसार गाथाओं एवं कलशकाव्यों का पद्यानुवाद, ज्ञानज्योति की भारतयात्रा, अवध की अनमोल मणि, भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर, भगवान ऋषभदेव दशावतार आदि अनेक नाटक, नवग्रहशांति विधान, भक्तामर विधान, तीर्थंकर जन्मभूमि विधान आदि विधानों की रचना के साथ-साथ आप वर्तमान में पूज्य गणिनी श्री द्वारा रचित षट्खण्डागम ग्रंथ की सिद्धांतचिंतामणि संस्कृत टीका का हिन्दी अनुवाद कर रही हैं। दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा निकाली जाने वाली 'सम्यग्ज्ञान'' मासिक पत्रिका का लेखन व संयोजन भी कई वर्षों से आपके द्वारा हो रहा है। इन्हीं सब गुणों के कारण आपको आपकी गुरु पूज्य गणिनी माताजी ने सन् 1997 में ''चौबीस कल्पद्रुम विधान'' के विराट आयोजन के समापन अवसर पर ''प्रज्ञाश्रमणी'' की उपाधि से अलंकृत किया। 35 वर्षों से अनवरत गुरु के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित पूज्य आर्यिका श्री गुरुभक्ति का जीवन्त उदाहरण हैं। पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से आयोजित वह प्रत्येक कार्य चाहे वह राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार, सम्मेलन, महोत्सव हो, श्री विहार रथ या ज्योति रथ का भारत भ्रमण हो या तीर्थ विकास हो, प्रत्येक कार्य में आपका अविस्मरणीय योगदान रहता है। प्रस्तुत ''चारित्रचन्द्रिका'' पुस्तक का लेखन आपकी गुरुभक्ति के साथ-साथ दूरदर्शिता का प्रतीक है जिसे पढ़कर जहाँ आर्यिका माताओं को अनेक नई प्रेरणाएँ मिलेंगी, वहीं श्रद्धालु भक्तों को संतों की त्याग-तपस्या का अपूर्व संदेश प्राप्त होगा। इस प्रकार अनेक गुणों से समन्वित पूज्य श्री चंदनामती माताजी के पावन चरणकमलों में कोटिशः नमन।

—ब्र. कु. इन्दू जैन (संघस्थ)

चारित्रचन्द्रिका गणिनी श्री के प्रति विनय के दो पुष्प

—जीवन प्रकाश जैन, हस्तिनापुर

शब्द वर्गणाएँ एक ऐसा आधार है जिसके माध्यम से हम किसी व्यक्ति विशेष के प्रति अपने भावों को और उसके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को अभिव्यक्त करपाते हैं। शब्दों का यह संयोजन ही वर्तमान, भूत एवं भविष्यत्काल के इतिहास को जन-जन से परिचित कराता है। जन सामान्य अथवा आने वाली पीढ़ी के लिए यह कदापि संभव नहीं कि वह किसी महापुरुष के जीवन को प्रत्यक्ष रूप से अनुभव कर सकें या किसी वृत्तांत अथवा घटना के प्रत्यक्ष दर्शी बन सकें। क्योंकि दुनिया का परिमाण बहुत विस्तृत है, समय की गति सदैव परिवर्तनशील है और प्रत्येक मानव अपनी आजीविका चलाने हेतु किये जाने वाले अनेक उपक्रमों में एवं अनेक कर्तव्यों के निर्वहन में बंधा हुआ है, ऐसी स्थिति में साहित्य ही एक ऐसा माध्यम है, जो समाज में दर्पण की भूमिका निभाता है और वर्तमान में ही नहीं अपितु भविष्य में भी हजारों वर्षों तक शिलास्तंभ की तरह कार्य करके जन-जन में महान आदर्शों, सिद्धान्तों एवं उद्देश्यों को सिंचित करता है।

इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए साहित्य सृजन की दिशा में परमपूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने बीसवीं सदी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी साध्वी परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के ऐतिहासिक, बेमिसाल एवं दुर्लभ व्यक्तित्व को अपनी लेखनी से ''चारित्र चन्द्रिका'' नामक इस ग्रंथ में समाविष्ट करने का बहुमूल्य एवं सार्थक प्रयास किया है। पूज्य प्रज्ञाश्रमणी माताजी ने बाल्यकाल से ही संसार के समस्त वैभव का त्यागकर गुरु के प्रति महान समर्पण भावों को हृदयंगम करते हुए प्रत्येक क्षण में उनके द्वारा सम्पादित किये जाने वाले हर कार्यों में प्रत्यक्ष दर्शी बनकर जो अनुभव प्राप्त किए हैं एवं उनकी चर्याओं को देखा है, उन सब महत्वपूर्ण बातों को उन्होंने इस ग्रंथ में अंकित किया है, जिसे पढ़कर जैन-जगत में बीसवीं सदी के महानतम व्यक्तित्व को सदैव पहचाना जा सकेगा। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की आर्यिका दीक्षा के 50 स्वर्णिम वर्षों की सम्पूर्ति पर प्रकाशित इस ग्रंथ की लेखिका के श्रीचरणों में शत-शत नमन करते हुए जिनेन्द्र प्रभु से यही प्रार्थना है कि सदैव आपकी लेखनी से अन्य और भी ज्ञानोपयोगी कृतियों का सृजन होता रहे और जिनेन्द्र देव द्वारा प्रणीत उपदेशों का दिग्दिगन्त विस्तार होवे।

गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी--एक चिरंतन प्रकाश

लगभग तीन साल पहले हम भगवती विन्ध्यवासिनी देवी के दर्शन करने विन्ध्याचल गए। वहाँ दर्शन कर इलाहाबाद आ रहे थे, मार्ग पर देखा एक अत्यन्त रमणीय मंदिर बना हुआ है, उस मंदिर के चारों ओर उपवन एवं हरियाली देखकर मन मोहित हो गया। यह मंदिर प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव जी का था। प्रयाग उनकी दीक्षास्थली रही है और इस स्थान का नाम भी ''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली'' रखा गया है।

प्रांगण में जाने पर ज्ञात हुआ कि इस भव्य मंदिर एवं दीक्षास्थली के निर्माण की प्रेरिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी हैं, जो कुछ समय के लिए पधारी हुई हैं। यह भी ज्ञात हुआ कि उन्होंने लगभग 200 से अधिक ग्रंथों की रचना की है। ऐसी ज्ञानमयी तपस्विनी के दर्शन करने की उत्कण्ठा हुई, उनके दर्शन किए। उस समय उनकी आयु 70 वर्ष की थी। कृश शरीर, मुख पर तेजस्विता, वाणी सरल और उसमें मधुरता थी।

उन्होंने न्याय के सर्वोच्च ग्रंथ 'अष्टसहस्री' का अनुवाद किया था। न्याय के विभिन्न पहलुओं पर उनकी रुचि देखकर न्यायविद्, न्यायाधीशों एवं न्यायशास्त्र के मर्मज्ञों से विचार विनिमय की उत्कण्ठा हुई और उसको सार्थक करने के लिए एक गोष्ठी का आयोजन किया गया। उसमें उच्च न्यायालय के न्यायमूर्तिगण, अधिवक्ता, न्यायविद् एवं अन्य जनों ने भाग लिया। आयोजन सफल रहा। घटना लगभग तीन वर्ष पुरानी है। समय बीतता गया और मेरी श्रद्धा प्रगाढ़ होती गई।

उन्होंने लगभग 200 ग्रंथ लिखे हैं। ग्रंथ विचारों का प्रतिपादन है। पढ़ने वाला उन विचारों से कितना प्रभावित होता है, यह लेखक के विचारों की मौलिकता एवं अनुभूति पर निर्भर करती है। उन्होंने जीवन में जो अनुभव किया है, वही उनके ग्रंथों में गंगा के स्रोत सा बह रहा है। उनको विचार करके लिखने की आवश्यकता नहीं, वरन् वह स्वयं बहता है। जिनके विचार सत्पथ की ओर चलें, वही महान है। एक विचार वह होते हैं, जो बाह्य जगत के पदार्थों की कामना को जागृत करते हैं और दूसरे वह जो अन्तश्चेतना के ह्रद अवस्थित अमृतानन्द में अवगाहना करा देते हैं। एक ओर उनके ग्रंथ जैनधर्म के सिद्धान्तों की व्याख्या हैं और दूसरी ओर अन्य ग्रंथ मूल विचारों का प्रतिपादन हैं।

मुझे यह जानने की भी उत्सुकता हुई कि इतने ग्रंथों का प्रतिपादन कम अवधि में किस प्रकार हुआ? इसका साक्षात् प्रमाण तब मिला, जब कुण्डलपुर में आयोजित समारोह में यह देखा कि माताजी उससे निरत रहकर उनकी लेखनी चल रही थी। कार्यक्रम होते रहे, लेकिन वह लिख रही थीं।

प्रत्येक व्यक्ति स्वयं में पुस्तक है। विचारों को जब लेखन में बद्ध किया, वह ग्रंथ का निर्माण करेगा लेकिन विचार कर्म में प्रेरित होकर प्रतिदिन बिना लिपिबद्ध किए लिपिबद्ध हो रहा है। अपना जीवन कितना निर्मल, कितना कलंकित रहा, संसार के प्रकाश में कोई भी पढ़ सकता है, उसे छिपाया नहीं जा सकता।

ज्ञानमती माताजी का जीवन स्वयं पावन पुस्तक है। 18 वर्ष की आयु में जब कुमारी कन्या संसार के सपनों को संजोती हैं, माताजी ने उस आयु में सपनों के आवरण को मिटाकर, तपस्या की तपती अग्नि में प्रवेश किया। गृहत्याग कर ब्रह्मचर्य का व्रत लिया। धर्म के अनुसार सन्यास की दीक्षा ली। उनका दिन में केवल एक बार भोजन होता है। वह भी हाथ में जो परोसा जाए। पानी भी केवल एक बार। उत्सुकतावश भोजन करने की उस प्रक्रिया को स्वयं देखा। पहनने के लिए दो धोती। धन या अन्य कोई पदार्थ ग्रहण नहीं करतीं। यह अपरिग्रहता की पराकाष्ठा है। भ्रमण केवल पैदल ही होता है। यह सत्य है कि महान विभूतियों के पद एवं हस्त भी उपदेश देते हैं।

मूर्तिकार मृत्तिका से मूर्ति बनाता है और देवमूर्ति की पूजा होने लगती है। ईश्वर ने हर प्राणी को पंचधातु से निर्मित कर मूर्ति बनाया, लेकिन सबमें देवत्व न दिया। मानव कहीं पशु है, कहीं दानव, उसमें देवत्व केवल संत ही दे सकते हैं। माताजी ने संतान नहीं दिए-संत बनाए। लगभग 50 वर्ष से निरन्तर शिष्याओं की अन्तश्चेतना को पराकाष्ठा पर ले जाकर सन्तस्वरूप बनाया। उन्होंने शरीर की जड़ मूर्ति नहीं, धर्मस्वरूप की जागृत चैतन्य मूर्ति बनाई। कृषक भूमि को उर्वरक करके खेती करता है, माताजी मानव-मन को निर्मल कर उसी को प्रज्ञा देती हैं।

भौतिक रूप से माताजी की अनेक जैन तीर्थस्थलों के निर्माण में प्रेरणा रही है। तीर्थ वही जो तार दे। दुःख के सागर में जो डूब रहे हों, उससे उबार कर पार करा दे, वही तीर्थ है। यह दुःख की पीड़ा शारीरिक, मानसिक या आधिभौतिक हो सकती है। जब तीर्थ स्थल पर जाये, मन शांत, चित्त निर्मल होगा। प्रिय की स्मृति मधुरता देता है और उसी के पास चलें, आनन्द विभोर हो जाते हैं। चौबीस तीर्थंकर ज्ञान एवं चेतना के स्वयं सूर्य रहे हैं, जिन्होंने अपनी इन्द्रियों पर विजय पाई, जैन बने, अपने अन्तर शत्रुओं का विनाश किया,अरहन्त हुए। ऐसे तीर्थंकर की जन्मस्थली पावन है, उनकी मूर्तियाँ उच्च साधना की

साकार पराकाष्ठा हैं। ऐसे स्थल पर जाना मन को पावन करता है।

तीर्थस्थलों के निर्माण के लिए माताजी ने किसी से धन न मांगा। उनका मात्र संकल्प ही उनके विचारों को साकार कर देता है। प्रयाग में उन्होंने संकल्प लिया था कि भगवान महावीर के जन्मस्थल कुण्डलपुर में उनका मंदिर बनवायेंगे और लगभग दो साल के अन्तर्गत वह पूर्ण हो गया। हम वहाँ देखने के लिए गए कि किस प्रकार का बना है। देखकर आश्चर्य हुआ कि इतने कम समय में विशाल प्रांगण में अनेक भव्य मंदिरों का निर्माण हुआ।

हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप भी उनकी कल्पना का साकार रूप है। इसकी सुन्दरता एवं वास्तुकला की प्रशंसा सुन चुका था और उसको देखने के लिए गया। जम्बूद्वीप जैनधर्म के भूगोल के सिद्धान्त पर आधारित है। आधुनिक विश्व का भूगोल और जैनधर्म का भूगोल अलग है और उसे जैनधर्मों के सिद्धान्तों के समझे बिना नहीं जाना जा सकता है। यह अद्‌भुत अद्वितीय निर्माण है। उसके चारों ओर सुन्दर उपवन है तथा अनेक मंदिर हैं। इसमें ओम मंदिर विशेष उल्लेखनीय है। ओम शब्द हिन्दू एवं जैन दोनों धर्मों में सामंजस्य उपस्थित करता है। जम्बूद्वीप की संरचना एवं स्थल की रमणीयता देखकर भारत के पर्यटन विभाग ने इसे अपने पर्यटन स्थलों में दर्शाया है।

जैसे सूर्य को अपने स्वरूप को नहीं बताना पड़ता, न सागर को अपनी गहराई, वह स्वयं से स्वयं का वाचक है, वैसे ही धरातल पर महान सन्त, स्वयं ही प्रकाशित होते हैं। पूज्य माताजी के विराट व्यक्तित्व से जनमानस को परिचित कराने हेतु उनकी संघस्थ सुशिष्या प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा प्रस्तुत 'चारित्र चन्द्रिका' पुस्तक का लेखन स्तुत्य प्रयास है। वर्षों से 24 घंटे पूज्य माताजी के सानिध्य में रहने वाली पूज्य चंदनामती माताजी ने जिस सूक्ष्मता, सरसता एवं प्रामाणिकता के साथ पूज्य माताजी के व्यक्तित्व का सजीव चित्रण किया है, वह किसी अन्य के लिए संभव भी नहीं था। मुझे विश्वास है कि इस युगनायिका के चारित्र का यह विशद् वर्णन हम सभी के लिए प्रकाशमान से प्रकाश ग्रहण करने की दिशा में आधारभूत सिद्ध होगा।

ज्ञानमती माताजी का जीवन स्वयं प्रकाश है। वे हमारे बीच में सदैव प्रकाशित रहें, यही कामना है।

मार्च 2006 **-न्यायमूर्ति सुधीर नारायण, इलाहाबाद**

(भूतपूर्व न्यायाधीश-इलाहाबाद उच्च न्यायालय
वर्तमान न्यायाधीश-कावेरी जल विवाद ट्रिब्यूनल)

प्रस्तावना

बीसवीं सदी में जिनशासन के स्वर्णिम पृष्ठ के रूप में जिन्होंने अपने दैदीप्यमान व्यक्तित्व को इस प्रकार अंकित किया है कि आने वाली सुदूरवर्ती पीढ़ियाँ भी उनके नाम से सुपरिचित रहकर उन्हें कलिकाल का आश्चर्य स्वीकार करेंगी, ऐसी **युग प्रवर्तिका राष्ट्रगौरव गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी** के व्यक्तित्व एवं कृतित्व वैशिष्ट्य पर अवलम्बित है यह कृति **'चारित्र चन्द्रिका'**।

वस्तुतः जैनधर्म व्यक्तिपूजक नहीं वरन् गुणपूजक है, इस शासन में व्यक्ति नहीं व्यक्तित्व की आराधना है। सृष्टि के विशाल वक्षस्थल पर अनंतानंत जीव अवस्थित हैं, जो अपनी-अपनी आयु को अपने बांधे हुए कर्मों से उत्पन्न सुख-दुख का अनुभव करते हुए व्यतीत कर रहे हैं, ऐसे इस अनादिकालीन प्रवाह में कतिपय विरले ही महापुरुष ऐसे होते हैं, जो समस्त संघर्षों को झेलकर, बाधाओं के मध्य से अपने पथ का निर्माण करते हुए समय के शिलालेख पर कालजयी होकर अंकित हो जाते हैं, सारे संसार के लिए पथप्रदर्शक बन जाते हैं, जिनके जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर जनमानस अपनी दिशा एवं दशा को निर्धारित करने में सक्षम हो पाता है। ऐसे ही एक महान व्यक्तित्व के बाह्य एवं आंतरिक वैशिष्ट्य को इस पुस्तक में आप सबके समक्ष प्रस्तुत करने का मैंने विनम्र प्रयास किया है ताकि यह स्पष्ट हो सके कि ''नवमार्ग बनाने वाले होते हैं विरले प्राणी, उस पथ पर चलकर फिर तो बन जाते कितने ज्ञानी।''

कई वर्षों से मेरे मन में यह आकांक्षा थी कि चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की परम्परा को जिन महासाध्वी ने विपुल परिमाण में गौरवान्वित किया है, उनकी गौरवगाथा को भी इस प्रकार लेखनीबद्ध किया जाना चाहिए कि जनसाधारण भी उससे शिक्षा प्राप्त कर अपने जीवन को उत्कर्ष करने में तत्पर हो सके। कतिपय विद्वानों से इस संदर्भ में चर्चा हुई परन्तु सभी का एक ही स्वर रहा कि 34-35 वर्षों से छाया की भाँति पूज्य माताजी के सन्निकट रहते हुए उनके प्रत्येक आचार-विचार, चारित्र-व्यवहार इत्यादि से पूर्णतया परिचित आप ही इस विषय पर यदि लेखनी उठायें, तो ही कदाचित् विषय की सम्पूर्ति संभव हो सकती है। अतः सबकी मनोभावनाओं को हृदयंगम करते हुएइस गुरुतर कार्य को करना मैंने प्रारंभ किया परन्तु अक्सर मेरे मन में यही भाव रहते थे कि मेरे जीवन में ये उत्कट सौभाग्य के क्षण हैं कि अपनी गुरु एवं विश्व की अमूल्य निधि पूज्य ज्ञानमती माताजी के विराट व्यक्तित्व को मैं लेखनीबद्ध कसे

का प्रयास कर रही हूँ पर कतिपय पृष्ठों में, कतिपय शब्दों में इस विषय को सीमित करना मेरी अपनी ही लघुता का परिचायक होगा क्योंकि जिनका प्रत्येक क्षण ही उत्कट कार्यक्षमता एवं अमूल्यता से सम्मिश्रित हो उनके अब तक व्यतीत हुए 72 वर्षों के प्रत्येक पल को एक पुस्तक में समेटना किसी लौकिक व्यक्तित्व वे लिए संभव ही नहीं है, अतः मेरी समझ में जितने प्रकरण आ सकें, उन्हें प्रस्तुत करने का प्रयास मैंने किया है। सुधी पाठक यदि निष्पक्षता, श्रद्धा एवं गुणग्राहकता के गुणों से समन्वित होकर इस पर दृष्टिपात करेंगे तो निश्चित रूप से उन्हें चारित्रिक दृढ़ता, सामाजिक कार्यकलापों को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने की क्षमता एवं संघर्षों पर हँसते हुए विजय प्राप्त कर रचनात्मक कार्यों में निरंतर लेग ही रहने की प्रेरणा एवं शक्ति प्राप्त हो सकेगी। इस प्रकार की भावनाओं से ओत-प्रोत हो मैंने दत्तचित्त होकर इस पुस्तक की विषयवस्तु को लेखनीबद्ध किया है। अपनी साधुचर्या, गुरुसेवा, धर्म प्रभावना संबंधी विविध कार्यों को करते हुए भी जब इस पुस्तक का मैं लेखन करती तो इसी में तल्लीन हो जाती, मुझे अत्यंत ही आनंद एवं आंतरिक संतोष की अनुभूति होती। वास्तव में, तभी यह नवनीत आप सबको उपलब्ध कराने का मेरा प्रयास साकार हो पाया है।

इस जीवन चारित्र के लेखन में सर्वप्रथम **''आर्यिका चर्या''** का विस्तृत उल्लेख समाविष्ट किया गया है। पिच्छी-कमण्डलु एवं एक साड़ी को धारण कर 28 मूलगुणों का पालन करने वाली, नारी जीवन की सर्वोत्कृष्ट पदधारी 'आर्यिका' समस्त जगत की माता बन जाती हैं, साड़ी धारण करना एवं बैठकर आहार करना भी उनके मूलगुणों में ही सन्निहित हैं, अतः उपचार से महाव्रती आर्यिका माताएँ नवधाभक्ति की पूर्ण पात्र हैं, यह आगमोक्त शिक्षा इस अध्याय से ग्रहण करते हुए हमें बढ़ना है इस आर्यिका चर्या को वर्तमान कलिकाल में 50 वर्षों से अखण्ड परिपालन करने वाली **'पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के स्वर्णिम व्यक्तित्व'** की ओर। लगभग 60-70 पृष्ठों में पूज्य माताजी के मन में बाल्यकाल से ही वैराग्य अंकुरों का प्रस्फुटन, सदी के प्रथम बालब्रह्मचारिणी पद एवं क्षुल्लिका तथा आर्यिका दीक्षा पदों पर आरोहण, ज्ञानसाधना की अविरल धारा में स्व-अवगाहन के साथ-साथ शिष्य-शिष्याओं का ज्ञान रूपी अमृत से सिंचन, आगम-अमृत रूप साहित्य सृजन, तीर्थ निर्माण की धारा का समागम, विशिष्ट चारित्रिक साधना से प्रसूत चमत्कार इत्यादि समाहित करना यद्यपि कठिन कार्य था, तथापि लेखनी एवं मनोभावों को नियंत्रित करते हुए इस अध्याय की मैंने सम्पूर्ति की, क्योंकि तपस्वी स्वर्णिम जीवन को लिपिबद्ध करने के लिए थोड़े से सीमित पृष्ठ, इस अनुपात से 1 वर्ष के लिए 1 पृष्ठ भी नहीं मिल पाया है। जबकि पूज्य माताजी के 1 दिन में ही 1 वर्ष जैसे कार्य

करने की प्रबल जिजीविषा से सभी समीपवर्ती जन भलीभांति परिचित हैं।

पुनः पूज्य माताजी ने पिछले लगभग 12 वर्षों तक भारतव्यापी पदयात्राएं करके विशेषरूप से तीर्थ निर्माण द्वारा जैनधर्म का जो विशिष्ट शंखनाद किया है, उससे पाठकों को सुपरिचित कराने के क्रम में सर्वप्रथम **'शाश्वत तीर्थ अयोध्या में प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक'** का वर्णन है, वर्षों से लुप्तप्राय इस परम्परा की पुनर्स्थापना उत्तर भारत की जिन अभिषेक संस्कृति की तिलकस्वरूप है, जिसका श्रेय पूज्य माताजी को जाता है। प्रथम तीर्थंकर सहित पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि एवं शाश्वत तीर्थ अयोध्या का बीसवीं सदी में पुनर्विकास भी पूज्य माताजी की देन के रूप में याद किया जायेगा।

तत्पश्चात् **'मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की पर्वतीय यात्रा'** अध्याय में मांगीतुंगी (महाराष्ट्र) की ओर पदविहार का विस्तृत वर्णन, मार्ग में पूज्य माताजी द्वारा दी गई विविध तीर्थ एवं चारित्र निर्माण प्रेरणाएँ तथा मांगीतुंगी में सम्पन्न सहस्रकूट कमल मंदिर का निर्माण एवं पंचकल्याणक प्रतिष्ठा इत्यादि विषय समाहित किये गये हैं। वास्तव में सुदूरवर्ती मांगीतुंगी क्षेत्र में पदविहार करके जाना और अल्प समय में ही अत्यंत अल्प सुविधाओं के मध्य निर्माण एवं पंचकल्याणक कराकर वापस लौट आना किसी आश्चर्य से कम नहीं था।

पुनः **'ऐतिहासिक कार्यकलाप एवं प्राचीन तीर्थ प्रयाग का उद्भव'** अध्याय में पूज्य माताजी के कर्मठ व्यक्तित्व की आलोकित रश्मियों के जनमानस के समक्ष लिपिबद्ध प्रस्तुतीकरण के प्रयास में मैंने मांगीतुंगी यात्रा के पश्चात् पूज्य माताजी की प्रेरणा द्वारा सम्पन्न 'चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान', 'भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती', 'भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन', 'भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार', 'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव' इत्यादि राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय कार्यकलापों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करते हुए अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष की सौगात स्वरूप भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान भूमि प्रयाग में 'तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली' रूप भव्य तीर्थ के निर्माण की गौरवगाथा का आकलन किया है। वस्तुतः जैन-जैनेतर समाज में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव एवं उनके माध्यम से जैनधर्म की प्राचीनता को सुस्थापित करने का पूज्य माताजी का यह दशाब्दि प्रयास मील का पत्थर सिद्ध हुआ है।

तत्पश्चात् **'भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव'** की मंगल बेला में पूज्य माताजी द्वारा विश्वशांति महावीर विधान का लेखन, राजधानी दिल्ली में 26 मण्डलों पर रत्न अर्पित करते हुए इसी विधान का विशाल आयोजन इत्यादि कार्यकलाप अंकित किये गये हैं। 2600वें जन्मकल्याणक

महोत्सव की स्वर्णिम उपलब्धि स्वरूप भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) का मात्र 22 माह के अल्प अंतराल में 'नंद्यावर्त महल तीर्थ' के रूप में सभी को चमत्कृत करने वाला स्वरूप **'महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विश्व के क्षितिज पर'** अध्याय में वर्णित किया गया है। *"वह पथ क्या और पथिकता क्या, बिखरे जिसमें कुछ शूल नहीं, नाविक की धैर्य परीक्षा क्या जब धाराएँ प्रतिकूल नहीं"* सूक्ति को चरितार्थ करने वाली पूज्य माताजी द्वारा कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास उनके व्यक्तित्व के शिखर बिंदु के रूप में शोभायमान हो रहा है।

पूर्व कार्यक्रम के समापन के पहले ही नवीन कार्यक्रम का प्रादुर्भाव पूज्य माताजी की जीवन शैली का अभिन्न अंग रहा है, इसी श्रृँखला में कुण्डलपुर (नालंदा) में ही **'भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव'** का शंखनाद एक ऐतिहासिक देन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। भगवान पार्श्वनाथ की जन्मभूमि वाराणसी, केवलज्ञान भूमि अहिच्छत्र एवं निर्वाणभूमि सम्मेदशिखर जी सहित विविध स्थानों पर विशाल आयोजन इसी सहस्राब्दि महोत्सव के अध्याय में लेखनीबद्ध हैं।

पूज्य माताजी के इन गगनचुम्बी कार्यकलापों के लेखन के पश्चात् मैंने **'दीर्घकालीन तपस्या से अर्जित किया है पुण्य ज्ञानमती माताजी ने'** अध्याय का इसलिए सृजन किया ताकि बीसवीं सदी की इस 'महाआर्यिका' के व्यक्तित्व वैशिष्ट्य का दर्शन सभी को सुलभ हो सके, क्योंकि पूज्य माताजी के निकट सानिध्य में रहकर उनकी चर्या की जिन विशिष्टताओं एवं अन्तर्निहित भावनाओं का मैंने क्षण-क्षण कर अवलोकन किया है, उनका प्रस्तुतीकरण इसलिए भी आवश्यक था ताकि आने वाली पीढ़ियाँ ये विश्वास कर सकें कि पूज्य ज्ञानमती माताजी जैसा व्यक्तित्व आसमान से अवतरित नहीं हो गया है, वरन् बीसवीं सदी में भी तपस्या और साधना के अमृत से आत्मा को प्रतिक्षण सिंचित करते हुए कठोर परिश्रम से उपार्जित पुण्य ने उन्हें इन ऊँचाईयों तक पहुँचाया है, जिनेन्द्र भगवान की अखण्ड-अनन्य भक्ति ने उनके समस्त कार्य सफल किये हैं, किसी जादू की छड़ी ने नहीं।

अंततः अंतिम अध्याय **''गणिनी ज्ञानमती माताजी की कतिपय उपलब्धियाँः एक दृष्टि में''** के अन्तर्गत पूज्य माताजी की उपलब्धियों का सचित्र विवरण सुधी पाठक के पुस्तक-पाठन से उत्पन्न कल्पना चित्रों को साकार धरातल देने के उद्देश्य से प्रस्तुत किया गया है। सचित्र विवरण निश्चित रूप से मानस को अंदर तक स्पर्श कर जाता है, इसी सोच के अन्तर्गत इस अध्याय का सृजन किया गया है।

इस प्रकार इन दश अध्यायों में निहित पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की स्वाध्यायोपयोगी यह सर्वोदयी चारित्र गाथा भव्यों के सम्यग्दर्शन की

निर्मलता में कार्यकारी बनें, ऐसी मेरी प्रबल भावना रही है परन्तु कितने भी प्रयास के पश्चात् इन विषयों को समग्र रूप में प्रस्तुत कर पाना मेरे वश के बाहर की बात रही। मेरा रोम-रोम पूज्य माताजी के उपकार से भीगा है, इसमें किंचित भी संदेह नहीं अतः मेरी लेखनी से उनकी यशोगाथा का प्रवाह किसी को सामान्य बात लग सकती है, तथापि कोई छिद्रान्वेषी व्यक्ति भी यदि उन पर लेखनी उठाए तो भी उनके ज्ञानार्जन, जिनधर्म प्रभावना, तीर्थ संवर्द्धन इत्यादि के प्रति स्वयं को नतमस्तक ही पायेगा, यह तथ्य भी संदेहातीत है।

अंततः इस पुस्तक के लेखन में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्रदान करने वाले संघस्थ क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज, कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन एवं ब्रह्मचारिणी बहनों कु. बीना, कु. आस्था, कु. सारिका, कु. चन्द्रिका, कु. इन्दू, कु. अलका, कु. प्रीति तथा कु. स्वाति के प्रति मैं वात्सल्यमयी आशीर्वाद प्रदान करना अपना प्रमुख कर्तव्य समझती हूँ क्योंकि समस्त संघ की अनुकूल प्रवृत्ति ने ही मुझे वह मानस प्रदान किया , जिसके द्वारा मैं निराकुल होकर इस लेखन को सम्पन्न कर सकी। इस पुस्तक की प्रूफ रीडिंग, सेटिंग इत्यादि में विशेष सहयोग प्रदान करने हेतु कु. सारिका, कु. इन्दू एवं जीवन प्रकाश जैन भी आशीर्वाद के पात्र हैं तथा पूरी पुस्तक कम्पोजिंग का कार्य अंशुल मित्तल ने ज्ञानमती नेटवर्क के माध्यम से पूरे मनोयोगपूर्वक किया है तभी यह ग्रंथ सुंदर रूप में आपके हाथों में उपलब्ध हो पाया है। उसके लिए भी मेरा आशीर्वाद है।

पुनः जिनभक्ति, जिनधर्म प्रभावना, तीर्थों के जीर्णोद्धार एवं विकास, सम्यग्दर्शन की दृढ़ता इत्यादि कालजयी गुणों से समन्वित, परम उपकारी, चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की परम्परा की दृढ़स्तंभ पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के श्रीचरणों में विनम्र विनीत बारम्बार अभिवंदना सहित मैं यही मंगल कामना करती हूँ कि मोक्षप्राप्ति तक इन्हीं गुरु के चरणों की छत्रछाया मुझे प्राप्त होती रहे, ताकि मेरा चतुर्गति परिभ्रमण भी सिद्धशिला पर आरोहण के साथ समाप्त हो सके।

18 फरवरी 2006 **आर्यिका चन्दनामती**
फाल्गुन कृ. पंचमी

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ सं.
मंगलाचरण	1
अध्याय-1 आर्यिका चर्या	2
अध्याय-2 पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का स्वर्णिम व्यक्तित्व	27
अध्याय-3 शाश्वत तीर्थ अयोध्या में प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक	83
अध्याय-4 मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की पर्वतीय यात्रा	143
अध्याय-5 ऐतिहासिक कार्यकलाप एवं प्राचीन तीर्थ प्रयाग का उद्भव	211
अध्याय-6 भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव	251
अध्याय-7 भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विश्व के क्षितिज पर	293
अध्याय-8 भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव	383
अध्याय-9 दीर्घकालीन तपस्या से अर्जित किया है पुण्य ज्ञानमती माताजी ने	415
अध्याय-10 ज्ञानमती माताजी की कतिपय उपलब्धियाँ	441

समर्पण

अनादि जैनशासन में कृतयुग के प्रथम तीर्थंकर
भगवान ऋषभदेव
से महावीर तक की तीर्थंकर परम्परा के पश्चात् उनके
शासनानुवर्ती आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी हुए हैं।
उसी कुन्दकुन्दाम्नाय के सरस्वतीगच्छ
बलात्कारगण की परम्परा में
बीसवीं सदी के प्रथम
दिगम्बर जैनाचार्य चारित्रचक्रवर्ती

श्री शांतिसागर जी मुनि महाराज

के प्रथम पट्टाशिष्य आचार्य

श्री वीरसागर जी मुनि महाराज

के करकमलों से सन् 1956, वैशाख कृ. द्वितीया को
आर्यिका दीक्षा ग्रहण करने वाली प्रथम बालब्रह्मचारिणी
युगप्रवर्तिका, वात्सल्यमूर्ति, वाग्देवी, राष्ट्रगौरव
105 गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

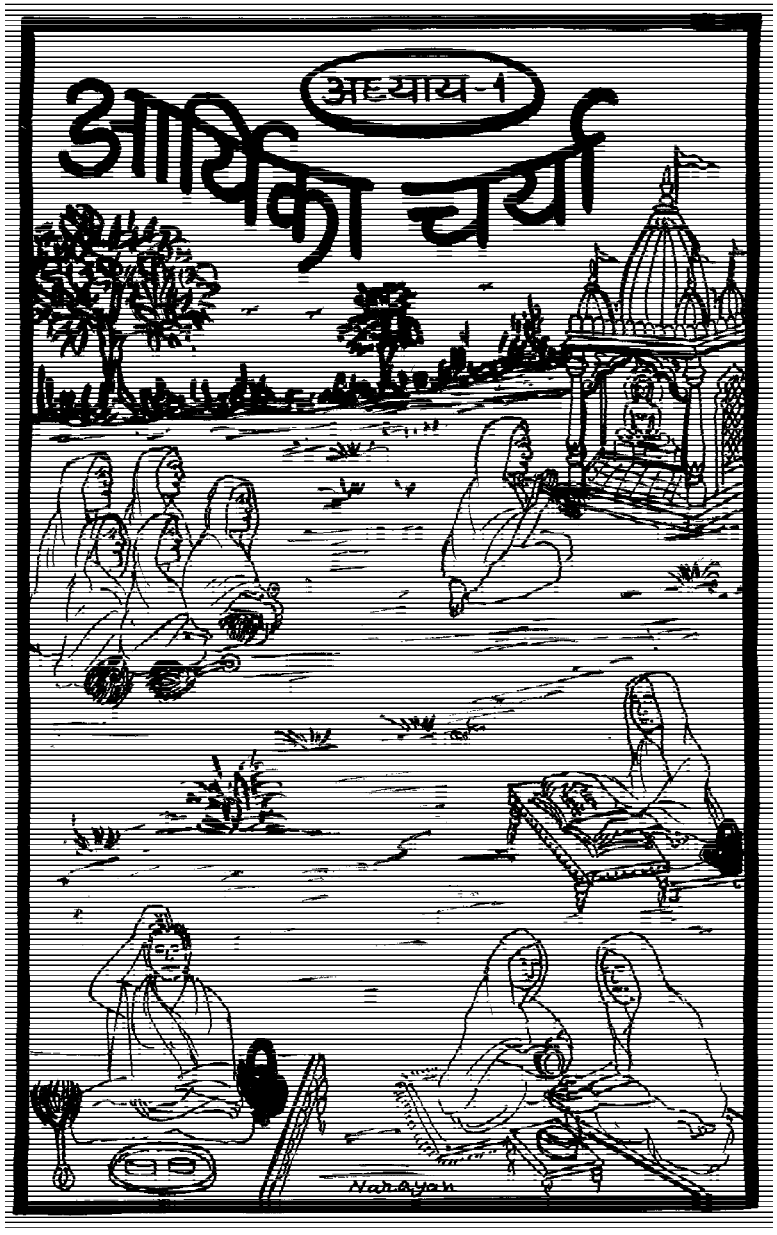
के तपस्वी किरण प्रभायुक्त, ध्वज चिन्ह रेखांकित
पवित्र करकमलों में
आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव के
स्वर्णिम अवसर पर
सिद्ध, श्रुत, आचार्यभक्तिपूर्वक
वन्दामि के साथ सविनय समर्पित

चारित्र-चन्द्रिका

वैशाख कृ. 2 जम्बूद्वीप आर्यिका चन्दनामती
वीर निर्वाण संवत् 2532 हस्तिनापुर
15-4-2006, शनिवार

अध्याय-1

आर्यिका चर्या





चारित्र चन्द्रिका

मंगलाचरण

सिद्धाः जयन्तु त्रैलोक्ये, जीयात् श्रीवृषभेश्वरः।
जीयात् श्रीवीरनाथोऽपि, जीयात् श्री जैनशासनम्॥1॥

कुन्दकुन्दगुरुर्जीयात्, जीयात् श्रीशांतिसागरः।
जीयात् पट्टाधिपस्तस्य, सूरिः श्रीवीरसागरः॥2॥

श्री ब्राह्मी गणिनी जीयात्, जीयादन्तिमचन्दना।
जीयात् ज्ञानमती माता, गणिन्यां प्रमुखा कलौ॥3॥

अर्थ–अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी भगवान तीनों लोकों में जयवन्त होवें, कृतयुग के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव जयशील हों, अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी जयशील हों तथा अनादिनिधन जैनशासन सदैव जयशील रहे।

भगवान महावीर के शासनानुवर्ती आचार्यश्री कुंदकुंद स्वामी जयवन्त रहें, उनकी परम्परा में बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर मुनि महाराज जयवन्त होवें तथा उनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर महाराज भी सदा-सर्वदा जयशील होवें।

भगवान ऋषभदेव के समवसरण की प्रमुख गणिनी आर्यिका श्री ब्राह्मी माता इस धरा पर जयशील होवें, भगवान महावीर के समवसरण की प्रमुख गणिनी आर्यिका श्री चन्दना माता जयशील हों तथा वर्तमान युग में आर्यिकाओं की सिरमौर प्रमुख गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी सदा जयवन्त रहें।

अध्याय-1

आर्यिका चर्या

आधुनिक परिवेश में चाहे श्रावक हो या मुनि, श्राविका हो या आर्यिका, स्पष्ट रूप में उनकी चर्या का ज्ञान होना आवश्यक है। आचार्यश्री यतिवृषभ स्वामी ने कहा है–

पंचमकाल के अंत तक मुनि-आर्यिका, श्रावक-श्राविका का चतुर्विध संघ वर्तन करेगा। अभी तो पंचमकाल के मात्र 2532 वर्ष व्यतीत हुए हैं, शेष 18468 वर्षों तक निरन्तर ऐसी ही अक्षुण्ण परम्परा चलती रहेगी। इसके फलस्वरूप वर्तमान में लगभग ग्यारह सौ की संख्या में दिगम्बर जैन साधु-साध्वियों के दर्शन हो रहे हैं, यह चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर महाराज की कृपाप्रसाद का फल है।

उस चतुर्विध संघ श्रृंखला में महिलाओं के लिए त्याग की चरमसीमा आर्यिका का पद माना जाता है।

वैसे देखा जाए तो धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक आदि समस्त क्षेत्रों में प्राचीन काल से नारियों का योगदान रहा है। जिस प्रकार से पुरुषों को आत्मसाधना करने का एवं जैनेश्वरी दीक्षा लेकर मोक्ष प्राप्त करने का अधिकार है, उसी प्रकार से प्रत्येक महिला को, चाहे वह कुंवारी हो, सौभाग्यवती हो या विधवा हो, सभी को आत्म कल्याण करने का अधिकार सदैव से प्राप्त है।

हाँ! मध्यकाल का एक युग ऐसा आया था, जब नारियों पर अत्याचार होते थे एवं अनेकों प्रकार की प्रताड़नाएं उन्हें प्राप्त होती थीं परन्तु आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नारियों का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय संविधान के अनुसार भी पुत्र और पुत्री दोनों को माता-पिता की संपत्ति में बराबर का अधिकार बताया गया है।

इस कर्मयुग के प्रारंभ में जिस प्रकार से तीर्थंकर आदिनाथ ने दीक्षा लेकर मुनि परम्परा को प्रारंभ किया, उसी प्रकार उनकी पुत्री ब्राह्मी-सुन्दरी ने दीक्षा लेकर आर्यिका परम्परा का शुभारंभ किया है। किंवदन्ती में ऐसा लोग कह देते हैं कि भगवान् आदिनाथ को अपने दामाद के समक्ष मस्तक झुकाना पड़ता

इसीलिए उनकी कन्याओं ने विवाह बंधन ठुकरा कर दीक्षा धारण की थी किन्तु यह बात कुछ युक्तिसंगत नहीं प्रतीत होती है, न ही इतिहास इस तथ्य को स्वीकार करता है। तीर्थंकर की तो प्रत्येक क्रिया ही अद्वितीय होती है। वे शैशव अवस्था से ही अपने माता-पिता एवं दिगम्बर मुनि को भी नमस्कार नहीं करते हैं, इसमें उनका अहंकार नहीं, बल्कि तीर्थंकर पदवी का माहात्म्य प्रगट होता है। माता-पिता या दिगम्बर मुनिराज उनकी इस क्रिया का प्रतिरोध भी नहीं करते हैं प्रत्युत् तीर्थंकर के पुण्य की सराहना करते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि ब्राह्मी-सुन्दरी कन्याओं ने उत्कट वैराग्य भावना से आर्यिका दीक्षा धारण की थी तथा हजारों आर्यिकाओं में ब्राह्मी माता ने प्रधान 'गणिनी' पद को प्राप्त किया था। 'सार्वभौम जैनधर्म प्राणिमात्र का हित करने वाला है' यह सोचकर हृदय में संसार समुद्र से पार होने की भावना को लेकर कोई महिला पहले साधु संघ में प्रवेश करती है पुनः उसके वैराग्य भावों में वृद्धि प्रारंभ होती है। चतुर्विध संघ के नायक आचार्य उसे समुचित शिक्षाएँ प्रदान कर संघ की प्रमुख आर्यिका या गणिनी के सुपुर्द कर देते हैं क्योंकि आर्यिकाएँ ही महिलाओं की सुरक्षा एवं पोषण कर सकती हैं।

जिस प्रकार से बालक माता के प्रति पूर्ण समपित होता है। चाहे माँ उसे डांटे, मारे और कितना भी अपने से दूर भगावे किन्तु बालक रोने-धोने के पश्चात् भी माँ की गोद में ही आकर शांति प्राप्त करता है। माता का हृदय बहुत ही उदार होता है, उसकी ममता के आंचल तले जाकर बड़े से बड़ा दुःख भी सुख रूप में परिवर्तित हो जाता है। इसीलिए माँ की महानता बतलाते हुए नीतिकारों ने शिक्षा दी है–

''भोजन करना माँ से चाहे जहर हो,
रास्ता चलना सीधा चाहे फेर हो।''

उसी प्रकार वैराग्य भावयुक्त महिला भी आर्यिका माता के शिष्यत्व को स्वीकार करके स्वयं को उनके प्रति समर्पित कर देती है और उनसे निवेदन करती है कि हे मातः! मैं अपने अनंत संसार को समाप्त करने हेतु, स्त्रीलिंग के छेदन हेतु दीक्षा ग्रहण करना चाहती हूँ अतः आप मुझे हस्तावलंबन देकर मेरी आत्मा का कल्याण कीजिए।

इन औपचारिकताओं के पश्चात् गणिनी आर्यिका उस नववैराग्यशालिनी महिला को कुछ दिन अपने पास रखती हैं और उसके मन की दृढ़ता को, शारीरिक क्षमता को एवं उसमें आर्यिका दीक्षा की योग्यता देखती हैं तथा

धार्मिक अध्ययन भी कराती हैं। साधु संघ में प्रवेश करते ही वह दीक्षा धारण ही कर लेवे, यह कोई आवश्यक नहीं है। सर्वप्रथम तो उसमें साधुओं की वैयावृत्ति करने की एवं आहारदान की भावना होनी चाहिए तथा भिन्न-भिन्न प्रदेशों की, भिन्न-भिन्न प्रकृति वाली संघस्थ आर्यिकाओं व ब्रह्मचारिणियों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की प्रवृत्ति होनी चाहिए ताकि संघ में किसी प्रकार की अशांति का वातावरण न उपस्थित होने पावे। यह यथानुरूप ढल जाना उस महिला में सबसे बड़ा गुण होना चाहिए।

कुमारी बालिकाएं तथा महिलाएँ ब्रह्मचर्य व्रत लेकर आर्यिकाओं के पास रहती हैं और आहार-दानादिक में भाग लेती हैं, यह बात **''अनंतमती''** के उदाहरण से साक्षात् स्पष्ट होती है। जैसा कि कथानक में आता है–

अंग देश के राजा प्रियदत्त और रानी अंगवती के **''अनंतमती''** नाम की एक कन्या थी। उसने बचपन में कुतूहलवश पिताजी से अष्टान्हिका पर्व में आठ दिनों का ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया था, जिसके फलस्वरूप उसने आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत का पालन किया।

एक बार कोई पूर्व जन्म के वैरी शत्रु विद्याधर ने उसका हरण कर उसे एक घनघोर जंगल में डाल दिया। अनेकों कष्टों को सहन कर जैसे-तैसे उसके शील की रक्षा हुई, तब वह जिनेन्द्र भगवान का स्मरण कर भटकती हुई किसी समय **'अयोध्या'** नगरी पहुँच गई। वहाँ एक जिनमंदिर में **''पद्मश्री''** नाम की आर्यिका के दर्शन हुए, तब वह उन्हें माता समझ कर उनके पास रहने लगी।

अनंतमती के पिता उसे ढूंढते-ढूंढते जब अयोध्या पहुँचे, वहाँ एक श्रावक के घर के आगे सुन्दर चौक पूरा हुआ देखकर रोने लगे। श्रावक के द्वारा पूछने पर उसने बताया– मेरी पुत्री ऐसा चौक पूरा करती थी, अब वह पता नहीं कहाँ है? श्रावक ने आर्यिका के पास रहने वाली उस कन्या का प्रियदत्त से परिचय कराया और कहने लगा कि मेरी पत्नी इसे प्रतिदिन अपने चौके में भोजन करने के लिए बुलाती है और चौक भी यही कन्या बनाती है।

पिता पुत्री का चिरवियोग के पश्चात् मिलन होता है किन्तु अनंतमती के मन में तो संसार के प्रति पूर्ण वैराग्य हो चुका था अतः उसने पिता की आज्ञा लेकर आर्यिकाश्री के पास दीक्षा धारण कर ली और घोरातिघोर तपश्चरण करती हुई सल्लेखनापूर्वक मरण करके सहस्रार स्वर्ग में देवपद को प्राप्त कर लिया।

इसी प्रकार के अनेकों उदाहरण वर्तमान में भी देखे जाते हैं क्योंकि चाहे बालक हो या बालिका, महिलाएँ हों या पुरुष, सभी के लिए दो ही मार्ग प्रशस्त

होते हैं या तो वे साधुओं को नवधाभक्तिपूर्वक आहारदान देते हैं अन्यथा स्वयं साधु परमेष्ठी के पद को धारण कर श्रावकों से आहार लेते हैं। इसके अतिरिक्त आगमानुसार तीसरी श्रेणी कोई नहीं होती। यदि मनगढ़न्त अभिप्रायों से वह श्रेणी बना ली जाती है, तो **'आप डूबे पांड्या ले डूबे जजमान'** वाली नीति ही सार्थक होती है क्योंकि नीचे पद में रहकर यदि उच्च पद की अनधिकृत क्रियाएँ की जाती हैं तो नीच गोत्र का आस्रव होता है एवं समाज भी भ्रमित हो जाती है।

संघ के बीच में एवं गणिनी गुर्वानी के अनुशासन में रहकर विद्याभ्यास करने से ब्रह्मचारिणियों के जीवन में इन अनर्गल क्रियाओं की संभावना प्रायः नहीं रहती है अतः आर्यिकाओं की प्रशस्त परम्परा इन्हीं से चलती है। जब संघ संरक्षण में रहती हुईं वे विद्या-शिक्षा में निपुण हो जाती हैं एवं व्यवहारिक ज्ञान आदि का अनुभव भी प्राप्त कर लेती हैं, तभी वे दीक्षा के योग्य मानी जाती हैं।

संघ के आचार्य अथवा गणिनी आर्यिका जी जब उस वैराग्यशील महिला का पूर्ण रूप से परीक्षण कर लेते हैं, तब उसकी दीक्षा का मंगल मुहूर्त निकालकर घोषणा करते हैं। औपचारिकता के नाते दीक्षार्थी के कुटुम्बियों से भी आज्ञा मंगानी होती है ताकि दीक्षा जैसा पुनीत कार्य निर्विघ्नरूप से सम्पन्न हो सके।

दीक्षार्थी महिला की इच्छानुसार तीर्थयात्राएँ भी उसे करवा दी जाती हैं पुनः जिनधर्म प्रभावना हेतु दीक्षार्थी की शोभायात्राएँ भी सम्पन्न होती हैं। यह कार्य गृहस्थ श्रावकों एवं दीक्षार्थी के परिवार वालों पर निर्भर रहता है।

यह क्रियाएँ वर्तमानकाल में लोक व्यवहार की दृष्टि से और धार्मिक प्रभावना के लक्ष्य से ही की जाती हैं। इसमें आत्मकल्याण का कोई विशेष संबंध नहीं है। पूर्वकाल के उदाहरण भी अपने समक्ष हैं कि वैराग्य होने के बाद पुनः किसी घड़ी की प्रतीक्षा नहीं की जाती क्योंकि असली वैराग्य ही सर्वोत्तम शुभ मुहूर्त माना जाता है।

आदिपुराण के पृष्ठ 592 पर श्री जिनसेन आचार्य ने लिखा है–

भरतस्यानुजा ब्राह्मी दीक्षित्वा गुर्वनुग्रहात्।
गणिनी पदमार्यायां सा भेजे पूजितामरैः।।

हरिवंशपुराण पृष्ठ 183 पर प्रकरण है–

ब्राह्मी च सुन्दरी चोभे कुमार्यौ धैर्य संगते।
प्रव्रज्य बहुनारीभिरार्याणां प्रभुतां गते।

अर्थात् ब्राह्मी-सुन्दरी दोनों कन्याओं ने प्रभु आदिनाथ के समवसरण में

आर्यिका दीक्षा धारण की थी और ब्राह्मी आर्यिका समस्त आर्यिकाओं में i[illegible] स्वामिनी थीं।

इस युग की प्रथम आर्यिका ने भगवान के समवसरण में दीक्षा ली थी उसके पश्चात् महिलाओं के लिए गणिनी से दीक्षा प्राप्त करने के अनेकों उदाहरण देखे जाते हैं– आदिपुराण द्वितीय भाग में पृ. 503 पर आया है–

''भरत के सेनापति जयकुमार की दीक्षा के बाद सुलोचना ने भी ब्राह्मी आर्यिका के पास दीक्षा धारण कर ली।''

अन्यत्र हरिवंश पुराण में भी कहा है–

''दुष्ट संसार के स्वभाव को जानने वाली सुलोचना ने अपनी सपत्नियों के साथ श्वेत साड़ी धारणकर ब्राह्मी तथा सुन्दरी के पास दीक्षा धारण कर ली। इसके साथ हरिवंशपुराण में आर्यिका सुलोचना को ग्यारह अंग की धारिणी भी माना है।

कुबेरमित्र की स्त्री धनवती ने संघ की स्वामिनी आर्यिका अमितमति के पास दीक्षा धारण कर ली और उन यशस्वती तथा गुणवती आर्यिकाओं की माता कुबेरसेना ने भी अपनी पुत्री के समीप दीक्षा ले ली।

पद्मपुराण में भी वर्णन आता है–

''रावण के मरने के बाद मंदोदरी ने शशिकांता आर्यिका के मनोहारी वचनों से प्रबोध को प्राप्त हो उत्कृष्ट संवेग और उत्तम गुणों को प्राप्त होती हुई, गृहस्थ की वेशभूषा को छोड़कर, श्वेत साड़ी से आवृत हुई आर्यिका हो गई। उस समय अड़तालिस हजार स्त्रियों ने संयम धारण किया था, इन्हीं में रावण की बहन, जो कि खरदूषण की पत्नी थी, उस चन्द्रनखा (सूर्पणखा) ने भी दीक्षा ले ली थी।

माता कैकेयी भरत की दीक्षा के बाद विरक्तमना एक सफेद साड़ी से युक्त होकर तीन सौ स्त्रियों के साथ **'पृथ्वीमती'** आर्यिका के पास दीक्षित हो गई थीं।

अग्नि परीक्षा के पश्चात् रामचन्द्र ने सीता से घर चलने को कहा, तब सीता ने कहा कि अब मैं **''जैनेश्वरी आर्यिका दीक्षा धारण करूँगी''**, वहीं केशलोंच करके पुनः शीघ्र जाकर पृथ्वीमती आर्यिका के पास दीक्षित हो गईं।

उनके बारे में लिखा है कि सीताजी वस्त्रमात्र परिग्रहधारिणी महाव्रतों से पवित्र अंग वाली महासंवेग को प्राप्त थीं।

इसी प्रकार से पद्मपुराण में श्री रविषेणाचार्य कहते हैं–

हनुमान जी की दीक्षा के पश्चात् उसी समय शीलरूपी आभूषणों को धारण करने वाली राजस्त्रियों ने **'बंधुमती'** आर्यिका के पास दीक्षा ले ली।

श्री रामचन्द्र के मुनि बनने के बाद सत्ताईस हजार प्रमुख स्त्रियाँ **''श्रीमती''** नामक आर्यिका के पास दीक्षित हुईं।

हरिवंश पुराण में राजुल के विषय में बताया है–

षट्सहस्रनृपस्त्रीभिः सह राजीमती सदा।
प्रव्रज्याग्रेसरी जाता सार्यिकाणां गणस्य तु।।146।।

छह हजार रानियों के साथ राजीमती ने भगवान् नेमिनाथ के समवसरण में आर्यिका दीक्षा लेकर आर्यिकाओं में प्रधान गणिनी हो गईं।

हरिवंशपुराण में ही आगे–

राजा चेटक की पुत्री चंदना कुमारी, एक स्वच्छ वस्त्र धारण कर भगवान महावीर के समवसरण में आर्यिकाओं में प्रमुख हो गईं।

राजा श्रेणिक की मृत्यु के पश्चात् रानी चेलना गणिनी आर्यिका चंदना के पास दीक्षित हो गईं जो कि चंदना की बड़ी बहन थीं। ऐसा उत्तरपुराण में कथन आया है तथा–

गुणरूपी आभूषण को धारण करने वाली कुन्ती, सुभद्रा तथा द्रौपदी ने भी राजीमती गणिनी के पास उत्कृष्ट दीक्षा ले ली थी और भी पुराणों में कितने ही उदाहरण हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि एक प्रमुख गणिनी आर्यिका समवसरण में तीर्थंकर की साक्षीपूर्वक दीक्षित होकर अन्य आर्यिकाओं को दीक्षा प्रदान करती थीं।

आज भी गणिनी आर्यिकाओं के द्वारा आर्यिका, क्षुल्लिका की दीक्षाएँ प्रदान की जाती हैं, यह प्रसन्नता की बात है। इसी शृँखला में वर्तमान की सर्वाधिक प्राचीन दीक्षित परमपूज्य गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजीके करकमलों द्वारा मुझे भी आर्यिका चन्दनामती बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है

वर्तमान युग में आचार्य और गणिनी दोनों के द्वारा महिलाओं की आर्यिका, क्षुल्लिका दीक्षा की परम्परा चली रही है अतः स्वेच्छा से वैराग्यशालिनी महिला जिनके श्रीचरणों में दीक्षा की याचना करती है, वे जिम्मेदारीपूर्वक दीक्षा देकर अनुग्रह आदि करते हुए उसे नवजीवन में प्रवेश कराते हैं।

दीक्षा दिवस से पूर्व तक उसे श्राविका के समस्त कर्तव्य पालन करने होते हैं। जैसे–जिनेन्द्र पूजा-विधान, उत्तम आदि पात्रों को शक्ति अनुसार चतुर्विध दान देकर अपने मन को पवित्र बनाती है।

दीक्षा के शुभ मुहूर्त के अवसर पर दीक्षार्थी बहन की शोभायात्रा निकाली जाती है जिसमें उसके परिवार जनों को अपने अरमान पूरे करने का सौभाग्य

प्राप्त होता है यदि दीक्षार्थिनी कुंआरी या सौभाग्यवती है, तो मेंहदी रचाना आदि भी होता है। यह भी एक मंगल अवसर होता है क्योंकि उसे तो पूर्णरूप से नवजीवन में प्रवेश करना होता है।

दीक्षा का दृश्य अपने आप में एक रोमांचक दृश्य होता है। आपकी पुत्री का विवाह अपने घर के छोटे से मंडप में हो जाता है और दीक्षा का महानकार्य विशाल मंडप में सम्पन्न होता है, जहाँ एक परिवार को छोड़कर **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** अर्थात् सारे संसार को अपना कुटुम्ब समझा जाता है परन्तु वास्तविकता तो यह है कि न एक परिवार अपना है और न ही समस्त संसार अपना हो सकता है, अपना तो केवल आत्मा है, उसे पाने के लिए ही दीक्षा धारण की जाती है। जैसा कि कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा है–

आदहिदं कादव्वं जइ सक्कइ परहिदं च कादव्वं।.....इत्यादि

आत्महित की प्रमुखता से ही दीक्षा लेना सर्वोत्तम कार्य है, परहित उसके साथ हो जावे तो ठीक है किन्तु मात्र परहित का ही लक्ष्य रखना आत्महित में बाधक हो सकता है।

शोभायात्रा के पश्चात् सभामंडप में पूर्वमुख या उत्तरमुख उसे बैठाकर गणिनी आर्यिका सर्वप्रथम केशलोंच प्रतिष्ठापन में सिद्ध भक्ति, योगभक्ति पढ़कर दीक्षार्थी बहन का केशलोंच प्रारंभ कर देती हैं।

देखते ही देखते सभामंडप में असीम वैराग्य का दृश्य उपस्थित हो जाता है। कई बार देखने में आता है कि वह बहन स्वयं भी वीरतापूर्वक अपना केशलोंच करती है।

वह ममता, जिसने बालिका को दुग्धपान के साथ अपने आंचल की छांव दी थी, वे कलाइयाँ, जिन्होंने सदा बहन के रक्षासूत्र को अंगीकार किया था, वह गोद, जिसने कन्या रत्न को झूले की भांति झुलाया था, वह स्नेहिल परिवार, जिसने सदैव उसके सुख-दुख में हाथ बंटाया था, सभी उस क्षण वैराग्य की मोहिनी मुद्रा के प्रति नतमस्तक हो जाते हैं तथा कोई-कोई चिरकालीन मोहवश अश्रुधारा से अपना मलिन हृदय भी निर्मल करते हैं।

दुल्हन को लिए बारात चली, बारात न वापस आती है।
जो प्रात गई सो प्रात गई, वह प्रात न वापस आती है।।

मानव जीवन का प्रत्येक क्षण अत्यन्त अमूल्य होता है अतः उन क्षणों का सदुपयोग करना उसका कर्तव्य है। देखते ही देखते बाल्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था तीनों समयों को बिताकर व्यक्ति कालकवलित हो जाता है

और आत्मा की ओर उसकी दृष्टि ही नहीं जाती है।

आपने सुना होगा गजकुमार मुनिराज के बारे में।वे भी अपने यौवन को राग की ओर ले जा रहे थे। फलस्वरूप बारात लेकर दूल्हा बनकर चल पड़े थे। विवाह भी हो गया किन्तु बारात घर तक वापस नहीं आ पाती है, रास्ते में ही उनको एव दिगम्बर मुनिराज के दर्शन हो जाते हैं। वे मुनिराज अवधिज्ञानी थे अतः गजकुमर की अल्पायु जानकर उसे सम्बोधित किया, आत्मकल्याण हेतु प्रेरणा प्रदान की।

आत्मार्थी को तो इतना संबोधन ही काफी था। गजकुमार अपनी नई-नवेली दुल्हन को रास्ते में ही छोड़कर तपोवन में जाकर गुरुदेव से मुनि दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं । बाराती अपने घर चले जाते हैं और दुल्हन की डोली अपने पिता के घर।

उस कन्या के पिता का क्रोध सातवें आसमान पर चढ़ जाता है। ओह! मेरी बेटी के साथ इतना बड़ा अन्याय! वे क्रोधावेश में ध्यानस्थ मुनिराज गजकुमार के पास पहुँचते हैं और कहते हैं–अरे ढोंगी! यदि तुझे यही करना था, तो एक कन्या के साथ शादी का नाटक क्यों रचा था? अब तो तुझे घर चलना ही पड़ेगा। जब मुनिराज कुछ न बोले तो ससुर जी को और भी गुस्सा आया अतः उन्होंने गजकुमार मुनि के मस्तक पर अंगीठी जला दी।

भयंकर अग्नि का उपसर्ग जानकर वे मुनिराज संसार-शरीर-भोगों की असारता का चिंतवन करने लगे और शरीर से आत्मा को पृथक् करने के उपाय में एकाग्रचित्त हो गए। इधर मस्तक पर अंगीठी जल रही थी और उधर आत्मा के कर्म जल रहे थे। अन्त में उपसर्ग पर विजय प्राप्त कर वे अंतकृत केवली हो गये।

देखो! संसार की स्थिति, जहाँ एक व्यक्ति त्याग की चरम सीमा पर स्थित था, वहीं दूसरा राग-द्वेष की चरमसीमा पर खड़ा हिताहित का विवेक भी खो बैठा था। जीवन के अमूल्य क्षणों का सदुपयोग किया था-गजकुमार ने। जो घड़ी हाथ से निकल जाती है, वह लाख प्रयास के बावजूद भी वापस नहीं आती। जैसे हाथ से निकला बाण और मुंह से निकली बात वापस नहीं आती है, उसी प्रकार बीती हुई प्रात भी वापस नहीं लाई जा सकती है।

मानव जीवन की दुर्लभता का चिंतन करने पर ही संसार से वैराग्य होता है और दीक्षा के शुभ परिणाम उत्पन्न होते हैं। महान पुण्योदय से जब कोई महिला दीक्षा के लिए अग्रसर होती है, तब उसकी सर्वप्रथम परीक्षा केशलोंच की क्रिया से प्रारंभ होती है।

जब पांडाल में गणिनी आर्यिका एवं अन्य आर्यिकाओं के द्वारा केशलुंचन सम्पन्न कर दिया जाता है, तभी उसके आगे दीक्षा की क्रिया प्रारंभ होती है।

केशलोंच के पश्चात् उस श्राविका को सौभाग्यवती महिलाएँ मंगल स्नान के लिए ले जाती हैं जहाँ तेल, उबटन आदि लगाकर मंगल स्नान कराकर मात्र एक साड़ी, जैसा कि उन्हें अब जीवन भर एक साड़ी ही धारण करनी है, उसे पहनाकर पुनः मंगल गीत गाती हुईं महिलाएँ उस श्राविका को पुनः स्टेज पर लाती हैं।

चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज की संघ परम्परानुसार दीक्षा से पूर्व मंच पर वह श्राविका जिनेन्द्र भगवान का पंचामृत अभिषेक पूजन करती है पुनः श्रीफल लेकर गुरु चरणों में समस्त जनता की साक्षीपूर्वक दीक्षाके लिए निवेदन करती है। जिन्हें भाषण देने का अभ्यास होता है, वे मंच पर खड़ी होकर दीक्षा की प्रार्थना हेतु वैराग्य भावों से युक्त कुछ भाषण भी करती हैं और अपने परिवारजनों एवं प्राणिमात्र से क्षमायाचना करती हुई सभी के प्रति स्वयंका क्षमाभाव भी प्रगट करती हैं।

गुरु की पुनः पुनः स्वीकृति प्राप्त होने के पश्चात् वे आचार्य अथवा गणिनी सौभाग्यवती महिलाओं के द्वारा पूरे गए मंगल चौक पर दीक्षार्थी महिला को पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठा देते हैं। दीक्षा प्रदान करने वाली गणिनी आर्यिका अथवा आचार्य पहले उस दीक्षार्थी से कहते हैं कि तुम्हें हमारे संघ की मर्यादा और अनुशासन में रहना होगा, एकाकी विहार नहीं करना एवं ख्याति, लाभ, पूजा में पड़कर अपनी गुरु परम्परा को नहीं तोड़ना इत्यादि बातें मजूर कराकर दीक्षा के संस्कार प्रारंभ कर दिये जाते हैं।

जब वह दीक्षार्थी महिला गुरु की सभी बातों को स्वीकार कर लेती है, तब गुरुवर्य अपने संघस्थ सभी साधुओं से, दीक्षार्थी के कुटुम्बियों से एवं वहाँ पर उपस्थित समस्त जनसमूह से पूछते हैं कि क्या इसे दीक्षा दी जावे? तब सभी साधुवर्ग भी धर्मवृद्धि से हर्षितमना होते हुए सहर्ष स्वीकृति देते हैं और श्राविकाश्राण व दीक्षार्थी के कुटुम्बीवर्ग भी दुःखमिश्रित हर्षपूर्वक जय-जयकार की ध्वनि से सभा को गुंजायमान करते हुए स्वीकृति देते हैं।

बस फिर क्या है, शास्त्रों में वर्णित दीक्षा विधि के अनुसार गणिनी माताजी के द्वारा दीक्षार्थी का मस्तक गरम प्रासुक जल से प्रक्षालित किया जाता है पुनः मस्तक पर बीजाक्षर लिखकर पीले तंदुल और लवंग से मंत्रों का आरोपण किया जाता है। उसके हाथ में बीजाक्षर लिखकर तथा दोनों हाथों की अंजुलि में तंदुल भरकर उसमें श्रीफल आदि मंगल द्रव्य रखकर पुनः उन्हें अट्ठाईस मूलगुण प्रदान किये जाते हैं।

कहीं-कहीं व्यवस्थापकगण नवीन दीक्षिता को प्रदान करने हेतु पिच्छी,

कमण्डलु, शास्त्र आदि की बोलियाँ करते हैं पुनः अपनी गुरु परम्परानुसार गुर्वावली को पढ़कर मंत्रों द्वारा गणिनी स्वयं संयम का उपकरण मयूर पंख की पिच्छिका, शौच के लिए उपकरण स्वरूप नारियल का कमंडलु और ज्ञान का उपकरण शास्त्र प्रदान करती हैं। शिष्या भी विनयपूर्वक दोनों हाथों से पिच्छिका को प्राप्त करती है, बाएँ हाथ से कमंडलु को और दोनों हाथों से शास्त्र को ग्रहण करती है।

इन्हीं संस्कारों के साथ ही गुरुद्वारा उस नवदीक्षिता का नवीन नामकरण भी किया जाता है, तभी नये नाम वाली आर्यिका माताजी की जयकारों से पंडाल गूंजने लगता है। सारी वेशभूषा और क्रियाओं के परिवर्तन के साथ ही नाम भी परिवर्तित हो जाने से अब वह पूर्ण रूप से नवजीवन में प्रवेश कर जाती है।

पुनः नवदीक्षिता आर्यिका सर्वप्रथम भक्तिपूर्वक दीक्षागुरु को नमोऽस्तु-वंदामि करके अन्य साधु-साध्वियों को नमोऽस्तु-वंदामि करके साधु श्रेणी में ही बैठ जाती है।

उस नवदीक्षिता आर्यिका को सर्वप्रथम कुछ दम्पत्ति श्रीफल आदि चढ़ाकर ''वंदामि'' कहकर नमस्कार करते हैं।

यह विशेष ज्ञातव्य है कि दीक्षा के दिन उस दीक्षार्थी महिला का उपवास रहता है। द्वितीय दिवस पारणा के लिए गणिनी आर्यिका के पीछे श्रावकों के घर में आहार हेतु जाती हैं। वहाँ पर श्रावक विधिवत् पड़गाहन करके नवधाभक्ति से आहारदान देकर अपना जन्म सफल समझते हैं।

जिस प्रकार से मूल – जड़ के बिना वृक्ष नहीं ठहरता, मूल – नींव के बिना मकान नहीं बनता, उसी प्रकार मूल – प्रधान आचरण के बिना श्रावक और साधु दोनों की सार्थकता नहीं होती है। यहाँ पर आर्यिकाओं की चर्या का प्रकरण चल रहा है अतः उनके मूलगुणों का ही कथन किया जा रहा है।

मुख्यरूप से मुनियों के मूलगुण 28 होते हैं। जैसा कि प्रतिक्रमण पाठ में स्थान-स्थान पर कथन आता है –

वदसमिदिंदिय रोधो, लोचो आवासयमचेलमण्हाणं।
खिदिसयणमदंतवणं, ठिदिभोयणमेगभत्तं च।।1।।
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमादकदादो, अइचारादो णियत्तो हं।।2।।

पाँच महाव्रत, पाँच समिति, पाँच इन्द्रियनिरोध, षट् आवश्यक- क्रिया, लोच, आचेलक्य, अस्नान, क्षितिशयन, अदन्तधावन, स्थितिभोजन और एकभक्त ये 28 मूलगुणों के नाम हैं। इन्हें तीर्थंकर आदि महापुरुष भी मुनि अवस्था में

पालन करते हैं एवं ये स्वयं महान हैं अतः इन व्रतों को महाव्रत भी कहते हैं।

इन 28 मूलगुणों के अलग-अलग नाम और लक्षण यहाँ पर प्रस्तुत हैं।

1. अहिंसा महाव्रत – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति और त्रस ये छह काय हैं, इन छहकायिक जीवों की हिंसा का मन-वचन-काय से पूर्णतया त्याग कर देना अहिंसा महाव्रत है। इस महाव्रत वाले सम्पूर्ण आरंभ और परिग्रह से रहित दिगम्बर मुनि होते हैं और एक साड़ी मात्र परिग्रह वाली आर्यिकाएँ होती हैं।

2. सत्य महाव्रत – रागद्वेष, मोह, क्रोध आदि दोषों से भरे हुए वचनों का त्याग करना और ऐसा सत्य भी नहीं बोलना कि जिससे प्राणियों का घात होता है, सो सत्य महाव्रत है।

3. अचौर्य महाव्रत – ग्राम, शहर आदि में किसी की भूली, रखी या गिरी हुई वस्तु को स्वयं नहीं लेना, दूसरों के द्वारा संग्रहीत शिष्य, पुस्तक आदि को भीन लेना तथा दूसरों के दिए बिना योग्य वस्तु को भी नहीं लेना अचौर्य महाव्रत है।

4. ब्रह्मचर्य महाव्रत – रागभाव को छोड़कर पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहना, बालिका, युवती और वृद्धा में पुत्री, बहन और माता के समान भाव रखना त्रैलोक्यपूज्य ब्रह्मचर्य व्रत है।

5. परिग्रह त्याग महाव्रत – धन, धान्य आदि दश प्रकार के बहिरंग तथा मिथ्यात्व आदि चौदह प्रकार के अंतरंग परिग्रह का त्याग करना, वस्त्राभूषण, अलंकार आदि का पूर्णतया त्याग कर देना, यहाँ तक कि लंगोटमात्र भी नहीं रखना अपरिग्रह महाव्रत है। आर्यिकाओं के लिए दो साड़ी रखने का विधान ही उनका मूलगुण होता है।

आगम में कहे अनुसार गमनागमन, भाषण आदि में सम्यक् प्रवृत्ति करना समिति है। इसके भी पाँच भेद हैं – ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेपण और उत्सर्ग।

6. ईर्यासमिति – निर्जंतुक मार्ग से सूर्योदय होने पर चार हाथ आगे जमीन देखकर एकाग्रचित्त करके तीर्थयात्रा, गुरुवंदना आदि धर्मकार्यों के लिए गमन करना ईर्यासमिति है।

7. भाषा समिति – चुगली, हँसी, कर्कश, परनिंदा आदि से रहित, हित, मित और असंदिग्ध वचन बोलना भाषा समिति है।

8. एषणा समिति – छ्यालिस दोष और बत्तीस अंतराय से रहित, नवकोटि से शुद्ध श्रावक के द्वारा तैयार किया गया ऐसा प्रासुक निर्दोष पवित्र आहार लेना एषणा समिति है।

9. आदान निक्षेपण समिति–पुस्तक, कमण्डलु आदि को रखते-उठाते समय कोमल मयूर पिच्छिका से परिमार्जन करके रखना, उठाना, तृण-घास, चटाई, पाटे आदि को भी सावधानी से देखकर पिच्छिका से परिमार्जन करके ग्रहण करना या रखना, आदान निक्षेपण समिति है।

10. उत्सर्ग समिति–हरी घास, चिंवटी आदि जीवजन्तु से रहित प्रासुक, ऐसे एकांत स्थान में मलमूत्रादि विसर्जन करना यह उत्सर्ग या प्रतिष्ठापन समिति है।

स्पर्शन, रसना आदि पाँचों इन्द्रियों को वश में रखना, इनको शुभध्यान में लगा देना पंचेन्द्रिय निरोध होता है। इसके भी पाँच इन्द्रियों की अपेक्षा से पाँच भेद होते हैं।

11. स्पर्शन इन्द्रिय निरोध–सुखदायक, कोमल स्पर्शादि में या कठोर कंकरीली भूमि आदि के स्पर्श में आनन्द या खेद नहीं करना।

12. रसनेंद्रिय निरोध–सरस, मधुर, भोजन में या नीरस, शुष्क भोजन में हर्ष-विषाद नहीं करना।

13. घ्राणेंद्रिय निरोध–सुगंधित पदार्थ में या दुर्गन्धित वस्तु में रागद्वेष नहीं करना।

14. चक्षुइंद्रिय निरोध–स्त्रियों के सुन्दर रूप या विकृतवेष आदि में रागभाव और द्वेष भाव नहीं करना।

15. कर्णेन्द्रिय निरोध–सुन्दर-सुन्दर गीत, वाद्य तथा असुन्दर-निन्दा, गाली आदि के वचनों में हर्ष-विषाद नहीं करना। यदि कोई मधुर गीतों से गान करता हो, तो उसे रागभाव से नहीं सुनना।

जो अवश–जितेन्द्रिय मुनि का कर्तव्य है, वह आवश्यक कहलाता है। उसके छः भेद हैं–समता, स्तुति, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और कायोत्सर्ग।

16. समता–जीवन-मरण, लाभ-अलाभ, सुख-दुःख आदि में हर्ष- विषाद नहीं करना, समान भाव रखना समता है। इसी का नाम सामायिक है। त्रिकाल में देववंदना करना यही सामायिक व्रत है। प्रातः, मध्यान्ह और सायंकाल में विधिवत् कम से कम एक मुहूर्त–48 मिनट तक सामायिक करना होता है।

17. स्तुति–वृषभ आदि चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति करना स्तुति नाम का आवश्यक है।

18. वंदना–अरिहंतों को, सिद्धों को, उनकी प्रतिमा को, जिनवाणी को और गुरुओं को कृतिकर्म पूर्वक नमस्कार करना वंदना है।

19. प्रतिक्रमण–अहिंसादि व्रतों में जो अतिचार आदि दोष उत्पन्न होते हैं, उनको निंदा-गर्हापूर्वक शोधन करना–दूर करना प्रतिक्रमण है। इसके भी सात भेद हैं–ऐर्यापथिक, दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक और उत्तमार्थ।

गमनागमन से हुए दोषों को दूर करने के लिए 'पडिक्कमामि भंते! इरियावहियाए विराहणाए' इत्यादि दण्डकों का उच्चारण करके कायोत्सर्ग करना ऐर्यापथिक है। दिवस संबंधी दोषों को दूर करने के लिए सायंकाल में 'जीवे प्रमाद जनिता' इत्यादि पाठ करना दैवसिक, रात्रि संबंधी दोषों के निराकरण हेतु रात्री के अंत में प्रतिक्रमण करना रात्रिक, प्रत्येक मास की चतुर्दशी या पूर्णिमा या अमावस्या को करना पाक्षिक, कार्तिक और फाल्गुन मास के अंत में करना चातुर्मासिक, आषाढ़ की अंतिम चतुर्दशी या पूर्णिमा को करना सांवत्सरिक तथा मरणकाल में करना उत्तमार्थ प्रतिक्रमण है।

20. प्रत्याख्यान–मन-वचन-काय से भविष्य के दोषों का त्याग करना प्रत्याख्यान है। आहार ग्रहण करने के अनन्तर गुरु के पास अगले दिन आहार ग्रहण करने तक के लिए जो चतुराहार का त्याग किया जाता है, वह प्रत्याख्यान कहलाता है।

21. कायोत्सर्ग–दैवसिक, रात्रिक आदि क्रियाओं में पच्चीस या सत्ताईस उच्छ्वास प्रमाण से तथा चौवन, एक सौ आठ आदि श्वासोच्छ्वास पूर्वक णमोकार मंत्र का स्मरण करना। काय–शरीर से उत्सर्ग–ममत्व का त्याग करना कायोत्सर्ग है।

यहाँ तक इक्कीस मूलगुण हुए हैं, अब शेष सात गुण को भी स्पष्ट करते हैं।

22. (1) लोंच–अपने हाथ से अपने सिर, दाढ़ी और मूंछ के बाल उखाड़ना केशलोंच मूलगुण है। केश में जूँ आदि जीव पड़ जाने से हिंसा होगी या उन्हें संस्कारित करने के लिए तेल, साबुन आदि की जरूरत होगी, जो कि साधु पद के विरुद्ध होगा अतः दीनता, याचना, परिग्रह, अपमान आदि दोषों से बचने के लिए यह क्रिया है। लोंच के दिन उपवास करना होता है और लोंच करते या कराते समय मौन रखना होता है।

इसके उत्तम, मध्यम और जघन्य ऐसे तीन भेद हैं–दो महीने पूर्ण होने पर उत्तम, तीन महीने में मध्यम और चार महीने पूर्ण होने पर जघन्य केशलोंच कहलाता है । चार महीने के ऊपर हो जाने पर साधु प्रायश्चित्त का भागी होता है।

23. (2) अचेलकत्व–सूती, रेशमी आदि वस्त्र, पत्र, वल्कल आदि का

त्याग कर देना, नग्न वेश धारण करना अचेलकत्व है। यह महापुरुषों द्वारा ही स्वीकार किया जाता है, तीनों जगत में वंदनीय महान पद है। वस्त्रों के ग्रहण करने से परिग्रह, आरंभ, धोना, सुखाना और याचना करना आदि दोष होते हैं, अतः निष्परिग्रही साधु के यह व्रत होता है।

24. (3) अस्नानव्रत—स्नान, उबटन आदि रूप शरीर के संस्कारों का त्याग करना, अस्नान व्रत है। धूलि से धूसरित, मलिन शरीरधारी मुनि कर्ममल को धो डालते हैं। चांडालादि अस्पृश्यजन, हड्डी, चर्म, विष्ठा आदि का स्पर्श हो जाने से वे मुनि दंडस्नान करके गुरु से प्रायश्चित्त ग्रहण करते हैं।

25. (4) भूमिशयन—निर्जंतुक भूमि में घास या पाटा अथवा चटाई पर शयन करना भूमिशयन व्रत है। ध्यान, स्वाध्याय आदि से या गमनागमन सेआई शारीरिक थकान को दूर करने हेतु स्वल्प निद्रा का विधान है।

26. (5) अदंतधावन—नीम की लकड़ी, ब्रुश आदि से दातौन नहीं करना। दाँतों को नहीं घिसने से इंद्रियसंयम होता है, शरीर से विरागता प्रगट होती है और सर्वज्ञ देव की आज्ञा का पालन होता है।

27. (6) स्थिति भोजन—खड़े होकर अपने दोनों हाथों की अंजुलि बनाकर श्रावक के द्वारा दिया हुआ आहार ग्रहण करना स्थिति भोजन है। आर्यिकाएँ बैठकर करपात्र में आहार ग्रहण करती हैं।

28. (7) एक भक्त—सूर्योदय के अनंतर तीन घड़ी के बाद और सूर्यास्त के तीन घड़ी पहले तक दिन में सामायिक काल के सिवाय कभी भी एक बार आहार ग्रहण करना एकभक्त है। आजकल प्रायः नौ बजे से ग्यारह बजे तक साधु जन आहार को जाते हैं। कदाचित् एक बजे से भी जा सकते हैं। दिन में एक बार ही आहार को निकलना चाहिए। कदाचित् लाभ न मिलने पर उस दिन पुनः आहारार्थ नहीं जाना चाहिए।

आर्यिकाओं के ये 28 मूलगुण कैसे होते हैं? इस बात का खुलासा परमपूज्य गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित 'आर्यिका' नामक पुस्तक में है। यथा—

प्रायश्चित्त ग्रंथ में आर्यिकाओं के लिए आज्ञा प्रदान की है कि "आर्यिकाओं को अपने पहनने के लिए दो साड़ी रखना चाहिए। इन दो वस्त्रों के सिवाय तीसरा वस्त्र रखने पर उसके लिए प्रायश्चित्त होता है।"

इन दो वस्त्रों का ऐसा मतलब है कि दो साड़ी लगभग 16-16 हाथ की रहती हैं। एक बार में एक ही पहनना होता है, दूसरी धोकर सुखा देती हैं

जो कि द्वितीय दिवस बदली जाती है। सोलह हाथ की साड़ी के विषय में आगम में कहीं वर्णन नहीं आता है, मात्र गुरु परम्परा से यह व्यवस्था चली आ रही है, आगम में तो केवल दो साड़ी मात्र का उपदेश है।

चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज के प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर महाराज (ज्ञानमती माताजी के दीक्षा गुरु) कहते थे कि दो साड़ी रखने से आर्यिका का **'आचेलक्य'** नामक मूलगुण कम नहीं होता है किन्तु उनके लिए आगम की आज्ञा होने से यही मूलगुण है। हाँ! तृतीय साड़ी यदि कोई आर्यिका रखती है, तो उसके मूलगुण में दोष अवश्य आता है। इसी प्रकार से **'स्थितिभोजन'** मूलगुण में मुनिराज खड़े होकर आहार करते हैं और आर्यिकाओं को बैठकर आहार लेना होता है, यह भी शास्त्र की आज्ञा होने से उनका मूलगुण ही है। यदि कोई आर्यिका आगमाज्ञा उलंघन कर खड़ी होकर आहार ले लेवे तो अवश्य उसका मूलगुण भंग होता है। इसीलिए उनके भी अट्ठाईस मूलगुण मानने में कोई बाधा नहीं है। यही कारण है कि आर्यिकाओं को उपचार से महाव्रती संज्ञा दी गई है।

आर्यिकाएँ साड़ीमात्र परिग्रह धारण करते हुए भी लंगोटी मात्र अल्पपरिग्रह धारक ऐलक के द्वारा पूज्य हैं। जैसा कि सागारधर्मामृत में पृष्ठ 518 पर प्रकरण आया है—

कौपीनेऽपि समूर्च्छत्वान्नार्हत्यार्यो महाव्रतं।
अपिभाक्तममूर्च्छत्वात् साटिकेऽप्यार्यिकार्हति।।36।।

पण्डित श्री आशाधर जी कहते हैं कि अहो! आश्चर्य है कि ऐलक लंगोटी में ममत्व परिणाम होने से उपचार से भी महाव्रती नहीं हो सकता है किन्तु आर्यिका साड़ी धारण करने पर भी ममत्व परिणाम रहित होने के कारण उपचार से महाव्रती कहलाती है क्योंकि ऐलक तो लंगोटी का त्याग कर सकता है फिर भी ममत्व आदि कारणों से धारण किए है किन्तु आर्यिका तो साड़ी त्याग करने में असमर्थ है। उनकी यह साड़ी बिना सिली हुई होनी चाहिए अर्थात् सिले हुए वस्त्र पहनने का उनके लिए निषेध है।

आचारसार ग्रंथ में भी वर्णन आया है—

देशव्रतान्वितैस्तासामारोप्यैते बुधैस्ततः।
महाव्रतानि सज्जातिज्ञप्त्यर्थमुपचारतः।।89।।

अर्थात् गणधर आदि देवों ने उन आर्यिकाओं की सज्जाति आदि को सूचित करने के लिए उनमें उपचार से महाव्रत का आरोपण करना बतलाया है।

साड़ी धारण करने से आर्यिकाओं में देशव्रत ही होते हैं परन्तु सज्जाति आदि कारणों से गणधर आदि देवों ने उनके देशव्रतों में उपचार से महाव्रतों का आरोपण किया है।

प्रायश्चित्त ग्रंथ में भी आर्यिकाओं को मुनियों के बराबर प्रायश्चित्त का विधान है तथा क्षुल्लक आदि को उनसे आधा इत्यादि रूप से है–

साधूनां यद्वदुद्दिष्टमेवमार्यागणस्य च।
दिनस्थान त्रिकालोनं प्रायश्चित्तं समुच्यते।।114।।

जैसा प्रायश्चित्त साधुओं के लिए कहा गया है, वैसा ही आर्यिकाओं के लिए कहा गया है। विशेष इतना है कि दिन, प्रतिमा, त्रिकालयोग चकार शब्द से अथवा अन्य ग्रंथों के अनुसार पर्यायच्छेद (दीक्षा छेद) मूलस्थान तथा परिहार ये प्रायश्चित्त भी आर्यिकाओं के लिए नहीं हैं।

आर्यिकाओं के लिए दीक्षाविधि भी अलग से नहीं है। मुनिदीक्षा विधि से ही उन्हें दीक्षा दी जाती है।

इन सभी कारणों से स्पष्ट है कि आर्यिकाओं के व्रत, चर्या आदि मुनियों के सदृश हैं। कहा भी है–

धागों को बुनने से परिधान बन जाता है।
ईंटों को चुनने से मकान बन जाता है।।
गुणों को गुनने से गुणवान बन जाता है।
रत्नत्रय में रमने से मानव भगवान बन जाता है।।

कुल मिलाकर निष्कर्ष यह निकलता है कि एक-एक मूलगुण को अतिचार रहित पालन करने वाली आर्यिका मुक्तिपथ की अनुगामिनी होती है। यही व्यवस्था अनादिकाल से चली आ रही है। वर्तमान में भी यही व्यवस्था देखने में आती है कि ये आर्यिकाएँ एक साड़ी पहनती हैं, जिससे उनका सम्पूर्ण शरीर ढका रहता है, हाथ में मयूर पंख की पिच्छी रखती हैं तथा शौच का उपकरण काठ या नारियल का कमंडलु रखती हैं।

आर्यिकाओं के 28 कायोत्सर्ग– मुनि-आर्यिकाओं के दैनिक 28 कायोत्सर्ग होते हैं जो कि प्रातःकाल से रात्रिविश्राम के पूर्व तक किये जाते हैं। उन्हीं का स्पष्टीकरण किया जाता है–

सर्वप्रथम प्रातःकाल से इन कायोत्सर्गों का शुभारंभ होता है। यूँ तो साधु जीवन में प्रतिक्षण स्वाध्याय, अध्ययन आदि की प्रमुखता होने से शुभोपयोग ही रहता है तथापि आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने कृतिकर्म विधिपूर्वक उन्हींक्रियाओं

को करने का आदेश दिया है, जिनमें कायोत्सर्गों की गणना हो जाती है। यहाँएक कायोत्सर्ग का अभिप्राय 27 स्वासोच्छ्वास में 9 बार णमोकार मंत्र जपना है।

रात्रि एक बजे के पश्चात् से लेकर सूर्योदय से 2 घड़ी पूर्व तक यथाशक्ति स्वाध्याय करना चाहिए, इसे अपररात्रिक स्वाध्याय कहते हैं। स्वाध्याय प्रारंभ करने से पूर्व स्वाध्याय प्रतिष्ठापन हेतु लघु श्रुतभक्ति और आचार्यभक्ति संबंधी दो कायोत्सर्ग होते हैं पुनः स्वाध्याय के पश्चात् स्वाध्याय निष्ठापन हेतु श्रुतभक्ति संबंधी एक कायोत्सर्ग होता है, ऐसे एक स्वाध्याय करने में 3 कायोत्सर्ग करने होते हैं। यद्यपि यह विधि अधिक प्रचलन में नहीं है, प्रायः 9 बार णमोकार मंत्र मात्र पढ़कर लोग स्वाध्याय प्रारंभ कर देते हैं और अन्त में भी 9 बार णमोकार मंत्र पढ़कर स्वाध्याय समापन कर देते हैं किन्तु आगमानुसार उपर्युक्त विधि आवश्यक होती है। पुनः रात्रि संबंधी दोषों का शोधन करने हेतु गणिनी माताजी के पास रात्रिक प्रतिक्रमण करना होता है, जिसमें सिद्धभक्ति, प्रतिक्रमणभक्ति, वीरभक्ति और चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति इन चार भक्तिसंबंधी 4 कायोत्सर्ग होते हैं पुनः रात्रियोग निष्ठापन करने हेतु योगभक्ति संबंधी एक कायोत्सर्ग होता है।

इसके अनंतर सूर्योदय से दो घड़ी पूर्व और दो घड़ी पश्चात् तक के संधिकाल में पौर्वाण्हिक सामायिक की जाती है। इस सामायिक में चैत्यभक्ति और पंचगुरुभक्ति संबंधी दो कायोत्सर्ग होते हैं। अनंतर पौर्वाण्हिक स्वाध्याय सूर्योदय के दो घड़ी बाद होता है, उसमें भी पूर्वोक्त 3 कायोत्सर्ग होते हैं।

पुनः आहारचर्या सम्पन्न होती है। उसके पश्चात् आर्यिकाएँ मध्यान्ह की सामायिक करती हैं जिसमें 2 कायोत्सर्ग होते हैं। सामायिक का जघन्य काल 2 घड़ी अर्थात् 48 मिनट होता है। इससे अधिक घंटे,दो घंटे भी सामायिक की जा सकती है। अनंतर मध्यान्ह की चार घड़ी बीत जाने पर अपराण्हिक स्वाध्याय किया जाता है जिसमें 3 कायोत्सर्ग होते हैं। इसके पश्चात् दिवस संबंधी दोषों के क्षालन हेतु सभी आर्यिकाएँ सामूहिक रूप से दैवसिक प्रतिक्रमण करती हैं, जिसमें 4 कायोत्सर्ग होते हैं पुनः अपनी वसतिका में आकर सामायिक से पूर्व रात्रियोग प्रतिष्ठापन के लिए योगभक्ति करती हैं जिसका एक कायोत्सर्ग होता है। रात्रियोग का मतलब यह है कि 'मैं आज रात्रि में इस वसतिका में ही निवास करूँगी' क्योंकि साधुजन रात्रि में यत्र-तत्र विचरण नहीं करते हैं। मल-मूत्रादि विसर्जन के लिए भी दिन में ही स्थान देख लेते हैं जो कि वसतिका के आसपास ही होता है।

अनंतर आर्यिकाएँ सायंकालिक सामायिक (देववंदना) करती हैं उसमें उपर्युक्त दो कायोत्सर्ग होते हैं, पुनः पूर्वरात्रिक स्वाध्याय के तीन कायोत्सर्ग करती हुई अपने अहोरात्रि के 28 कायोत्सर्ग प्रतिदिन पूर्ण सावधानी पूर्वक करती हैं पुनः महामंत्र का स्मरण करते हुए रात्रि विश्राम करती हैं।

यही चर्या मुनि-आर्यिकाओं की प्राचीनकाल से चली आ रही है अतः समस्त आर्यिकाओं को इन्हीं क्रियाओं का पालन करना चाहिए। यदि कोई आर्यिका विदुषी हैं तो दैनिक कर्तव्यों का पालन करते हुए उसमें से समय निकालकर भव्य प्राणियों को धर्म प्रवचन सुनाकर लाभान्वित भी करती हैं।

इस प्रकार संक्षेप में दिगम्बर जैन सम्प्रदाय में दीक्षित आर्यिकाओं के 28 कायोत्सर्ग का वर्णन मैंने किया है।

आर्यिकाओं के लिए न करने योग्य कार्य कौन से हैं–आर्यिकाओं को मुनियों की वंदना करने के लिए अकेले नहीं जाना चाहिए। गणिनी आर्यिका के साथ अथवा दो-चार आर्यिकाएं मिलकर जाना चाहिए। अकेले बैठकर दिगम्बर मुनियों से वार्तालाप नहीं करना चाहिए तथा मुनियों की सेवा, वैयावृत्ति कदापि नहीं करना चाहिए।

मुख्यरूप से स्त्रीलिंग का छेद करने हेतु ही आर्यिका दीक्षा धारण की जाती है अतः इस पवित्र दीक्षा को प्राप्त करके सदैव जीवन को वैराग्यमयी बनाना चाहिए। गृहस्थियों की किन्हीं रागजनित बातों में उन्हें रुचि नहीं लेनी चाहिए क्योंकि गृहसंबंधी समस्त कार्य उनके लिए त्याज्य हो जाते हैं। बीमार होने पर स्वयं अपने हाथ से किसी प्रकार की औषधि भी वे नहीं बनाती हैं। अपनी गणिनी गुरु से ही अपना दुःख बालकवत् बताना चाहिए, तब वे स्वयं उसके योग्य औषधि श्रावकों के द्वारा बनवाकर आहार में दिलवाती हैं।

मुनियों के समान ही ये आर्यिकाएं श्रावक के घर में करपात्र में आहार ग्रहण करती हैं उसके पश्चात् श्रावक इनके कमण्डलु में गरम जल भर देते हैं। बिना गरम किया हुआ कच्चा जल वे नहीं छूती हैं। श्राविकाएँ या तो छने जल से इनकी साड़ी धोकर सुखा देती हैं अथवा ये स्वयं कमण्डलु के जल से साड़ी धोकर सुखा सकती हैं। आर्यिकाएं साबुन आदि का प्रयोग नहीं कर सकती हैं। वे दो, तीन या चार महीने में अपने सिर के बालों का लोंच करती हैं। मुनियों की वसतिका में आर्यिकाओं का रहना, लेटना, बैठना आदि वर्जित है।

मासिक धर्म की अवस्था में आर्यिकाएं तीन दिन तक मौन से रहती हैं तथा जिनमंदिर से अलग वसतिका में रहकर मानसिक रूप से महामंत्र का एवं

बारह भावनाओं का चिंतन करती हैं। सामायिक, प्रतिक्रमण आदि भी केवल मन में चिन्तवन रूप से करती हैं। ओष्ठ, जिह्वा आदि न हिलने पाए, ऐसा मंत्र-स्तोत्रादि का चिंतन भी चलता है। वे इस अवस्था में किसी का स्पर्श भी नहीं करती हैं।

आचारसार ग्रंथ में वर्णन आया है–

ऋतौ स्नात्वा तु तुर्येन्हि, शुद्धंत्यरसभुक्तयः।
कृत्वा त्रिरात्रमेकांतरं वा सज्जपसंयुताः।।90।।

अर्थात् रजस्वला अवस्था में तीन दिनों तक यदि उपवास की शक्ति नहीं है तो छहों रस का त्याग कर नीरस आहार करती हैं तथा चौथे दिन कोई श्राविका इन्हें गरम जल से स्नान करा देती है, तब वह आर्यिका शुद्ध होकर अपनी गणिनी के पास जाकर प्रायश्चित्त ग्रहण करती हैं।

यह तो पहले बताया ही जा चुका है कि आर्यिकाएं बैठकर करपात्र में भोजन ग्रहण करती हैं। आर्यिकाएं उपचार से महाव्रती होती हैं और वे पंचम गुणस्थान से ऊपर नहीं जा सकती हैं तथापि चतुर्विध संघ में मुनियों के बाद आर्यिका की पदवी मानी जाती है। ऐलक और क्षुल्लक दीक्षा में उनसे प्राचीन भी क्यों न हों, फिर भी वे आर्यिकाओं को **''वंदामि''** कहकर नमस्कार करते हैं और आर्यिकाएँ उन्हें ''समाधिरस्तु'' आशीर्वाद प्रदान करती हैं। गुणस्थान व्यवस्था तीनों की एक सदृश है, फिर भी कर्मनिर्जरा क्षुल्लक-ऐलक की अपेक्षा आर्यिका की अधिक होती है चूँकि वे एक साड़ी धारण करती हुई भी मुनियों के समान अट्ठाईस मूलगुणों का पालन करती हैं।

आहार विधि–चतुर्विध संघ की क्रम परम्परा में आहारचर्या के लिए आर्यिकाएँ मुनियों के पश्चात् जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करती हुई क्रमपूर्वक निकलती हैं। श्रावक-श्राविकाएँ अपने-अपने चौके के सामने उनका पड़गाहन करते हैं।

हे माताजी! वंदामि-वंदामि, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ, आहार जल शुद्ध है। इतना बोलने पर जब एक-दो आदि आर्यिकाएँ वहाँ खड़ी हो जाती हैं, तब दातार उनकी प्रदक्षिणा लगाकर उन्हें चौके में ले जाते हैं और स्वच्छ पाटे पर बैठने के लिए निवेदन करते हैं कि माताजी! उच्चासन पर विराजिए। पुनः आसन ग्रहण कर लेने पर उनके चरण प्रक्षालन करके गंधोदक मस्तक पर चढ़ाते हैं और अष्टद्रव्य से पूजा करके नमस्कार करते हैं।

इसके पश्चात् थाली में भोजन परोसकर और जल, दूध आदि सामने लाकर दिखाती हैं। आर्यिका माताजी का जो कुछ त्याग होता है, वे उसे निकलवा देती हैं, तब दातार शुद्धि बोलकर आहार शुरू करवाते हैं।

यह नवधाभक्ति की प्रक्रिया है। जैसा कि आचार्यों ने कहा भी है–

पडिगहमुच्चट्ठाणं पादोदयमच्चणं च पणमं च।
मणवयणकाय सुद्धी एसणसुद्धी य णवविहं पुण्णं।।

आहार के काल में श्रावकों के द्वारा यह नवधाभक्ति करनी आवश्यक होती है। जैसा कि चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज की संघ परम्परा में चला आ रहा है। यदि यह पूरी नवधाभक्ति चौके में नहीं होती है तो आर्यिकाएँ बिना आहार किए ही चौके से वापस आ जाती हैं। इस प्रकार से नवधाभक्ति होने के बाद, आहार शुरू करने से पूर्व, आर्यिका माताजी हाथ धोकर प्रत्याख्यान निष्ठापन क्रियापूर्वक सिद्धभक्ति करती हैं। जैसे–'नमोस्तु आहार प्रत्याख्यान निष्ठापन क्रियायां सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं'' बोलकर 9 बार णमोकार मंत्र पढ़कर लघु सिद्धभक्ति और अंचलिका पढ़कर हाथ की अंजुलि बनाती हैं, जिसमें दातार सर्वप्रथम गरम प्रासुक जल देते हैं पुनः भोजन, दूध आदि क्रमपूर्वक देते हैं। यदि किसी रोग के निमित्त से औषधि आदि की आवश्यकता होती है तो श्रावक उसी समय शुद्ध प्रासुक दवा भी दे देते हैं। आहार पूरा होने के बाद हाथ धोकर, कुल्ला करके वहीं पर लघु सिद्धभक्तिपूर्वक प्रत्याख्यान ग्रहण कर लेती हैं और कमण्डलु में जल भराकर वहाँ से आ जाती हैं। साथ में श्रावक-श्राविका उनके स्थान तक पहुँचाने के लिए उनके साथ भी आते हैं।

वे आर्यिका जी आहार से वापस आकर अपनी गणिनी के पास पुनः प्रत्याख्यान–अगले दिन आहार ग्रहण करने तक चतुराहार का त्याग कर देती हैं।

चौके में पहुँचकर प्रत्याख्यान निष्ठापन करने तथा आहार के बाद चौके में प्रत्याख्यान प्रतिष्ठापन एवं उसके पश्चात् गुरु के पास आकर प्रत्याख्यान ग्रहण करने की यह समस्त विधि आचारसार, अनगारधर्मामृत आदि ग्रंथों में वर्णित है। कोई-कोई साधु और आर्यिकाएँ आहारचर्या से पूर्व मंदिर में या गुरु के पासही सिद्धभक्तिपूर्वक प्रत्याख्यान निष्ठापन कर लेते हैं पुनः आहार को जाते हैं, सेा ठीक नहीं है क्योंकि अनगारधर्मामृत और आचारसार में स्पष्ट कहा है–

1.''हेयं-त्याज्यं साधुना। निष्ठाप्यमित्यर्थः। किं तत्? प्रत्याख्यानादि-प्रत्याख्यानमुपोषितं वा। क्व? अशनादौ-भोजनारंभे। कया? सिद्धभक्त्या। किं विशिष्ट्या? लघ्व्या।''

(अनगारधर्मामृत मूलप्रति पृ. 649)

2. आत्मोचितासनासीनो दातृप्रक्षालितक्रमः।
ऊर्ध्वाधःपार्श्वदिक्कोणनिक्षेपानिरीक्षणः।।118।।

वर्णी पूर्णप्रतिज्ञोऽथ सिद्धभक्तिं विधाय तत्।
प्रत्याख्यानं विनिष्ठाप्य प्रेरितो भक्तदातृभिः।।119।।

(आचारसार पृ. 134)

इसी प्रकार से इन ग्रंथों में मुनियों के लिए आहार के पश्चात् चौके में और पुनः गुरु के पास आकर प्रत्याख्यान ग्रहण करने का भी खुलासा है। वही सम्पूर्ण विधि आर्यिकाओं को भी सावधानीपूर्वक पालन करनी होती है। यथा–

''आदेयं च-लघ्व्या सिद्धभक्त्या प्रतिष्ठाप्यं साधुना। किं तत्? प्रत्याख्यानादि। क्व? अंते प्रक्रमाद् भोजनस्यैव प्रान्ते। कथं? आशु-शीघ्रं भोजनांतरमेव। आचार्यासन्निधावेतद्विधेयं।''

सूरौ-आचार्यसमीपे पुनर्ग्राह्यं प्रतिष्ठाप्यं साधुना। किं तत्? प्रत्याख्यानादि। कया? लघ्व्या सिद्धभक्त्या.....लघुयोगिभक्त्यधिकया। तथा वंद्यः साधुना। कौऽसौ? स सूरिः। कया? सूरिभक्त्या। किंविशिष्ट्या? लघ्व्या।

(अनगार मूल प्रति पृ. 649)

अर्थात् इसका अभिप्राय यह है कि भोजन के अनंतर शीघ्र ही लघु सिद्धभक्तिपूर्वक साधु या आर्यिका प्रत्याख्यान अथवा उपवास ग्रहण कर लेते हैं। यह विधि वहीं चौके में की जाती है पुनः आचार्य के पास आकर लघु सिद्धभक्ति और लघुयोगिभक्ति बोलकर पुनरपि गुरु के पास प्रत्याख्यान या उपवास ग्रहण करके लघु आचार्यभक्ति द्वारा आचार्य की वंदना की जाती है।

शंका–जब गुरु के पास प्रत्याख्यान आवश्यक है तो चौके में साधु प्रत्याख्यान क्यों ग्रहण कर लेते हैं?

समाधान–यदि चौके से अपनी वसतिका में गुरु के पास आते हुए मार्ग में मरण भी हो जाये तो वह प्रत्याख्यानपूर्वक होगा, इसलिए चौके में भी प्रत्याख्यान ग्रहण किया जाता है।

इसी प्रकार से चौके में नवधाभक्ति के बाद ही सिद्धभक्तिपूर्वक प्रत्याख्यान निष्ठापना करने का हेतु भी अनगारधर्मामृत में दिया है कि–

"आहार के लिए साधु यदि निकल चुके हैं और किसी कारणवश किसी ने पड़गाहन नहीं किया या कुछ अन्य कारण से वे वापस अपनी वसतिका में आ जाते हैं तो पुनः उस दिन आहार के लिए नहीं जाते हैं–उपवास करते हैं। अतः तात्पर्य यह निकलता है कि आर्यिकाओं को भी प्रत्याख्यान की निष्ठापना चौके में नवधाभक्ति के बाद ही करनी चाहिए।

आहार के 46 दोष–श्रावक और साधु दोनों के निमित्त से आहार में कुछ

दोषों की संभावना होती है। उन दोषों को टालकर आहार करना आहारशुद्धि कहलाती है। उद्गम दोष, उत्पादन दोष, एषणा दोष, संयोजना दोष, प्रमाण दोष, इंगाल दोष, धूम दोष और कारण दोष इन आठ दोषों से रहित आहार शुद्धि होती है। दातार के निमित्त से हुए दोष उद्गम दोष हैं। साधु के द्वारा आहार में हुए दोष उत्पादन संज्ञक हैं। भोजन संबंधी दोष एषणा दोष हैं। संयोग से होने वाला संयोजना दोष है। प्रमाण से अधिक आहार लेना प्रमाण दोष है। लंपटतापूर्वक आहार लेना इंगाल दोष है। दातार की या भोजन की निंदा करके आहार लेना धूम दोष है और विरुद्ध कारणों से बना हुआ आहार लेना कारण दोष है।

इनमें से उद्गम के 16, उत्पादन के 16, एषणा के 10 तथा संयोजना, प्रमाण, इंगाल और धूम ये 46 दोष होते हैं, जिनका विशेष वर्णन चरणानुयोग के ग्रंथ मूलाचार आदि से जानना चाहिए।

इन सबसे अतिरिक्त एक अधःकर्म दोष है, जो महादोष कहलाता है। इसमें कूटना, पीसना, रसोई करना, पानी भरना और झाड़ू लगाना ऐसे पंचसूना नाम के आरंभ से षट्कायिक जीवों की विराधना होने से यह दोष गृहस्थाश्रित है। इसको करने वाली आर्यिका वास्तव में आर्यिका नहीं मानी जाती है। यह बात निश्चित है कि गणिनी आर्यिका के संघ में या चतुर्विध संघ में रहने वाली आर्यिकाओं में इस दोष की संभावना कथमपि नहीं रहती है। हाँ! एकाकी विचरण करने वाली आर्यिका या साधु में यह दोष कदाचित् संभव हो सकते हैं। इसीलिए कुंदकुंद स्वामी ने आज्ञा दी है–

''मा भूद मे सत्तु एगागी'' अर्थात् इस पंचमकाल में मेरा कोई शत्रु साधु भी एकाकी विचरण न करे क्योंकि एकलविहार में और भी कई दोष लगने का भय रहता है। स्त्रीपर्याय होने के नाते आर्यिकाओं को हमेशा समूह बनाकर ही रहना चाहिए ताकि समस्तचर्या का निर्बाध रूप से पालन हो सके।

आर्यिकाओं की 13 क्रियाएं कौन-कौन सी हैं? छह आवश्यक क्रियाएँ, पंचपरमगुरु की वंदना तथा असही-निसही ये तेरह क्रियाएँ आर्यिकाएँ प्रतिदिन करती हैं। इनमें से आवश्यक क्रियाओं का वर्णन तो पहले किया जा चुका है, ऐसे ही पृथक्-पृथक् या एक साथ पंचपरमेष्ठी की वंदना भी की जाती है। असही और निसही का मतलब यह है कि वसतिका से बाहर जाते समय आर्यिकाएं नौ बार 'असही' शब्द का उच्चारण करती हैं तथा वसतिका में प्रवेश करते समय नौ बार 'निसही' शब्द का उच्चारण करती हैं।

आर्यिकाएँ अपनी आवश्यक क्रियाओं का पालन करते हुए शेष समय निरन्तर शास्त्र स्वाध्याय, अध्ययन-अध्यापन में लगाती हैं। वे सूत्र ग्रंथों का भी अध्ययन कर सकती हैं। जैसा कि आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने मूलाचार ग्रंथ में स्पष्ट किया है–

'अस्वाध्याय काल में मुनि और आर्यिकाओं को सूत्रग्रंथों का अध्ययन नहीं करना चाहिए किन्तु साधारण अन्य ग्रंथ अस्वाध्याय काल में भी पढ़ सकते हैं।' इससे यह बात सिद्ध हो जाती है कि आर्यिकाएँ भी स्वाध्यायकाल में सिद्धांत ग्रंथों को पढ़ सकती हैं।

दूसरी बात यह है कि आर्यिकाएँ द्वादशांग श्रुत के अन्तर्गत ग्यारह अंगों को भी धारण कर सकती हैं, जैसा कि हरिवंशपुराण में कथन आया है–

द्वादशांगधरो जातः क्षिप्रं मेघेश्वरो गणी।
एकादशांगभृज्जाता सार्यिकापि सुलोचना।।

अर्थात् मेघेश्वर जयकुमार शीघ्र ही द्वादशांग के पाठी होकर भगवान के गणधर हो गये और आर्यिका सुलोचना भी ग्यारह अंगों की धारक हो गईं।

वर्तमान में दिगम्बर सम्प्रदाय में ग्यारह अंग और चौदह पूर्व की उपलब्धि नहीं है, उनका अंश मात्र उपलब्ध है अतः उन्हीं का अध्ययन करना चाहिए।

दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के अनुसार साध्वियों के दो भेद हैं– आर्यिका और क्षुल्लिका। अभी तक संक्षेप में आर्यिका का स्वरूप बतलाया है, कुछ श्राविकाओं की आर्यिका दीक्षा के पूर्व क्षुल्लिका दीक्षा भी लेने की परम्परा रही है अतः उनकी क्रियाओं के बारे में भी संक्षेप में यहाँ वर्णन है– क्षुल्लिकाएँ ग्यारह प्रतिमा के व्रतों को धारण कर दो धोती और दो दुपट्टे का परिग्रह रखती हैं। इनकी समस्त चर्या क्षुल्लक के सदृश होती है। ये केशलोंच करती हैं अथवा कैंची से दो, तीन या चार महीने में सिर के केश निकालती हैं। ये भी आर्यिकाओं के पास में रहती हैं, उनके पीछे आहार को निकलकर पड़गाहन विधि से श्रावकों के यहाँ पात्र में भोजन ग्रहण करती हैं। इस प्रकार से स्त्रियों में साध्वीरूप में आर्यिका और क्षुल्लिका ये दो भेद ही होते हैं। दोनों के पास मयूर पिच्छिका रहती है। पहचान के लिए क्षुल्लिका के पास चादर रहती है और पीतल या स्टील का कमण्डलु रहता है।

प्राचीन ग्रंथों का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि पूर्व में अधिकतर आर्यिकाएँ ही आर्यिका दीक्षा प्रदान करती थीं। तीर्थंकरों के समवसरण में भी जो आर्यिका सबसे पहले दीक्षित होती थीं, वे ही गणिनी के भार को संभालती

थीं। तीर्थंकर देव के अतिरिक्त किन्हीं आचार्यों द्वारा आर्यिका दीक्षा देने के उदाहरण प्रायः कम मिलते हैं। इन आर्यिकाओं की दीक्षा के लिए जैनेश्वरी दीक्षा शब्द भी आया है। इन्हें **महाव्रतपवित्रांगा** भी कहा है और **संयमिनी, संयतिका** संज्ञा भी दी है।

जब आर्यिकाओं के व्रत को उपचार से महाव्रत कहा है और सल्लेखनाकाल में उपचार से निर्ग्रंथता का आरोपण किया है इसीलिए वे मुनियों के सदृश वंदनीय होती हैं, ऐसा समझकर आगम की मर्यादा को पालते हुए आर्यिकाओं की नवधाभक्ति करके उन्हें आहारदान देना चाहिए और समयानुसार यथोचित भक्ति करना, उन्हें पिच्छी-कमण्डलु, शास्त्र आदि दान भी देना चाहिए।

वर्तमान की आर्यिकाएँ– प्राचीनकाल में जैसे आर्यिकाएं, आचार्यों के संघ में भी रहती थीं और पृथक् भी आर्यिका संघ बनाकर विचरण करती थीं, उसी प्रकार वर्तमान में भी आचार्य श्री अभिनंदनसागर महाराज, आचार्य श्री वर्धमानसागर जी महाराज आदि बड़े-बड़े संघों में भी आर्यिकाएँ-क्षुल्लिकाएँ रहती हैं तथा गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी, गणिनी आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी, गणिनी आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी आदि अनेकों विदुषी आर्यिकाएँ अपने-अपने पृथक् संघों के साथ भी विचरण करती हुईधर्म की ध्वजा फहरा रही हैं।

गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी वर्तमान में समस्त आर्यिकाओं में सर्वप्राचीन दीक्षित सबसे बड़ी आर्यिका हैं, जिन्होंने चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज के दर्शन कर उनकी आज्ञा से उनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा धारण कर **'ज्ञानमती'** इस सार्थक नाम को प्राप्त किया है तथा शताब्दी के प्रथम आचार्य से लेकर अद्यावधि समस्त आचार्यों से अनुभव ज्ञान प्राप्त किया है।

संघ की सभी आर्यिकाएँ गणिनी आर्यिका के या किसी प्रमुख आर्यिका के अनुशासन में रहती हैं, प्रमुख आर्यिकाएँ उन्हें धर्म ग्रंथों का अध्ययन भी कराती हैं। इनके स्वाध्याय के लिए या लेखन कार्य के लिए ग्रंथ, स्याही, कलम, कागज आदि की व्यवस्था श्रावक-श्राविकाएँ करते हैं। वस्त्र फटने पर भक्तिपूर्वक उन्हें वस्त्र (सफेद साड़ी) प्रदान करते हैं। पिच्छी के लिए मयूर पंख लाकर देते हैं। आर्यिकाएँ भी अपने पद के अनुरूप साधुचर्या का पालन करती हैं, पद के विरुद्ध श्रावकोचित कार्यों को नहीं करती हैं, तभी उनकी आत्मा का कल्याण और स्त्रीलिंग का छेदन संभव हो पाता है। ध्यान, अध्ययन के साथ-

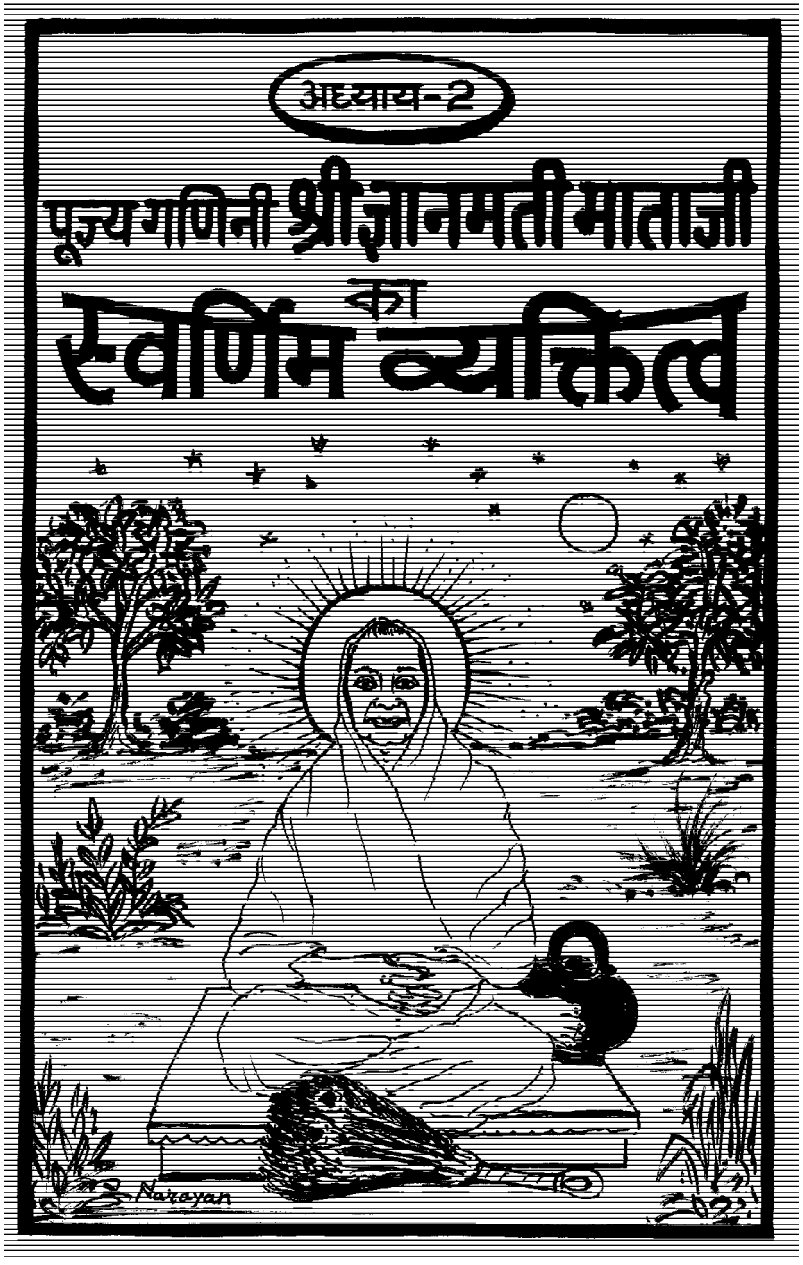
साथ इस युग में भी महीने-महीने तक का उपवास करने वाली तपस्विनी आर्यिकाएं भी हो चुकी हैं। सन् 1971 के चातुर्मास में अजमेर नगरी में आचार्य श्री धर्मसागर महाराज के संघ की आर्यिका श्री शांतिमती माताजी, आर्यिका श्री पद्मावती माताजी (ज्ञानमती माताजी की शिष्या) भादों के महीने में सोलहकारण के बत्तीस उपवास करते हुए उत्कृष्ट समाधि प्राप्त कर चुकी हैं, जिनके दर्शन करने का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हो चुका है। इसी प्रकार से आठ-दस, सोलह आदि उपवास करने वाली आर्यिकाएँ आज भी विद्यमान हैं जो सम्यक्त्व सहित निर्दोष व्रतों का पालन करते हुए निश्चित ही स्त्रीपर्याय से छूटकर क्रम से देवपर्याय प्राप्त कर, वहाँ से आकर मनुष्य भव में निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण कर मोक्ष प्राप्त करेंगी।

आर्यिकाओं की उत्कृष्ट चर्या चतुर्थकाल में ब्राह्मी, चंदना आदि माताएँ पालन करती थीं तथा पंचमकाल के अंत तक भी ऐसी चर्या का पालन करने वाली आर्यिका होती रहेंगी। जब पंचमकाल के अन्त में वीरांगज नाम के मुनिराज, सर्वश्री नाम की आर्यिका, अग्निदत्त श्रावक और पंगुश्री श्राविका इस प्रकार चतुर्विध संघ होगा, तब कल्की द्वारा मुनिराज के आहार का प्रथम ग्रास टैक्स के रूप में मांगने पर अन्तराय करके चतुर्विध संघ सल्लेखना धारण कर लेगा, तभी धर्म, अग्नि और राजा तीनों का अन्त हो जायेगा। अतः भगवान महावीर के शासन में आज तक अक्षुण्ण जैनशासन चला आ रहा है। मुनि- आर्यिकाओं की परम्परा भी इसी प्रकार से पंचमकाल के अन्त तक चलती रहेगी, इसमें कोई संदेह नहीं है।

यहाँ तक तो आपने आर्यिकाओं की चर्या के बारे में जानकारी प्राप्त की। अब आपके समक्ष एक ऐसी महान 'गणिनी आर्यिका श्री' का परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है, जिन्होंने बीसवीं सदी में कुंवारी कन्या के रूप में दीक्षा लेकर त्याग का मार्ग प्रशस्त किया। चूँकि उनके 53 वर्षीय दीर्घकाय जीवनवृत्त को कुछ पृष्ठों में निबद्ध करना कठिन प्रतीत होता है तथापि गुरुभक्तिवश ही उनके जीवन के महत्त्वपूर्ण अंशों को लेखनीबद्ध करने का लघुप्रयास कर रही हूँ।

अध्याय-2

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का स्वर्णिम व्यक्तित्व



अध्याय-2

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का स्वर्णिम व्यक्तित्व

पूज्य गणिनी आर्यिकाश्री का परिचय निम्न चार पंक्तियों से प्रारंभ होता है–

नैराश्यमद में डूबते, नर के लिए नव आस हो।
कोई अलौकिक शक्ति हो, अभिव्यक्ति हो विश्वास हो।।
कलिकाल की नव ज्योति हो, उत्कर्ष का आभास हो।
मानो न मानो सत्य है, तुम स्वयं में इतिहास हो।।

सच, जिनके आदर्श हिमालय पर्वत से भी ऊँचे हैं, जिनकी वाणी से निःसृत ज्ञानगंगा नीलनदी (जिसकी लम्बाई 6 हजार किमी. है) से भी बड़ी है, जिसकी कीर्तिप्रसार के समक्ष एशिया महाद्वीप का क्षेत्रफल भी छोटा प्रतीत होने लगता है और जिनके हृदय की गंभीरता प्रशान्त महासागर को भी उथला सिद्ध करने लगी है, उस महान व्यक्तित्व 'गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी' का परिचय भला शब्दों में कैसे बांधा जा सकता है?

विक्रम संवत् 1991 (22 अक्टूबर ईसवी सन् 1934) की शरदपूर्णिमा (आश्विन शु. पूर्णिमा) की रात्रि के प्रथम प्रहर में जिला बाराबंकी के टिकैतनगर ग्राम में श्रेष्ठी श्री छोटेलाल जी की धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनी देवी ने इस कन्या को जन्म देकर अपना प्रथम मातृत्व धन्य कर लिया था। उनके दाम्पत्य जीवन की बगिया का यह प्रथम पुष्प सारे संसार को अपनी मोहक सुगंधि से सुवासित करेगा, यह बात तो वे कभी सोच भी नहीं सके थे किन्तु सरस्वती के इस अवतार को जन्म देने में उनके जन्म-जन्मान्तर के संचित पुण्य कर्म ही मानो सहायक बने थे।

अवध प्रान्त में जन्म लेने वाली इस नारीरत्न का परिचय बस यही तो है कि सरयू नदी की एक बिन्दु आज ज्ञान की सिन्धु बन गई है, शरदपूर्णिमा का यह चाँद आज अहर्निश सारे संसार को सम्यग्ज्ञान के दिव्य प्रकाश से आलोकित कर रहा है।

बालिका का नाम रखा गया– **मैना**! मैना पक्षी की भाँति मधुरवाणी जो

घर से निकलकर गली-मोहल्ले और सारे नगर में गुंजायमान होने लगी थी। पूर्व जन्मों की तपस्या एवं माँ की घूंटी से जो नैसर्गिक धर्म-संस्कार प्राप्त हुए थे उन्होंने किशोरावस्था आते ही इन्हें ब्राह्मी और चन्दना का अलंकरण पहना दिया।

परिवार में प्रथम कन्या के जन्म से सभी हर्षित थे। कन्या के जन्मते ही प्रसूतिगृह में फैले अलौकिक प्रकाश को देखकर बूढ़ी दादी के मुँह से निकला कि अवश्य ही आज मेरे घर में कन्या के बहाने कोई देवी ने अवतार लिया है। बस, आशीर्वाद की फुलझड़ियाँ वृद्धा के मुख से फूट पड़ीं– **इसी प्रकाश से सदैव प्रकाशित रहे मेरी नन्हीं बेटी, मेरी बहू का प्रथम पुष्प चिरंजीवी हो तथा उसकी सुगंधि से दोनों कुल सुवासित होवें** इत्यादि।

इधर अपनी नन्हीं कली के जन्म की विशेषताओं को सुनकर माँ मोहिनी भी अपनी प्रसव पीड़ा भूलकर अपने अतीत और भविष्य का चिन्तन कर रही थीं। वे भी अपनी सासू जी का आशीर्वाद प्राप्त करके कहने लगीं– माँ! मैं तो इसे अपने पूज्य पिताजी का प्रसाद समझती हूँ क्योंकि उन्होंने मुझे विदा करते समय एक अमूल्य दहेज जो दिया था– **''पद्मनंदिपंचविंशतिका''**। मैंने विवाह के बाद प्रतिदिन उस ग्रंथ का स्वाध्याय कर-करके न जाने कितनी शुभ भावनाएँ भायी थीं, उसी के फलस्वरूप मुझे यह कन्यारत्न प्राप्त हुई है।

कन्या के जन्म पर भी पुत्र जन्मोत्सव जैसी खुशियाँ मनाई गईं। पिता छोटेलाल जी भी अपनी सन्तान की प्रशंसा सुन-सुनकर फूले नहीं समाते थे।

➢काम भी नाम के अनुसार ही–

बचपन से ही **''पद्मनंदिपंचविंशतिका''** ग्रंथ के स्वाध्याय से इनके मन में वैराग्य के अंकुर प्रस्फुटित हो चुके थे इसलिए गुरु उपदेश के बिना ही त्यागमार्ग पर अग्रसर होने का इन्होंने पुरुषार्थ प्रारंभ कर दिया।

कौन जानता था कि एक छोटे से ग्राम में जन्मी इस बालिका में एक दिन इतना साहस प्रगट हो जाएगा कि सारे संसार में अपनी प्रतिभा के द्वारा **''टिकैतनगर''** का नाम अमर कर देगी। किन्तु संसार में एक लोकोक्ति है– ''फूल अपनी सुगंधि दशों दिशाओं में बिखेरने के लिए दूसरों की खुशामद नहीं करते, बादल कभी मोर के पास अपना कमीशन एजेंट नहीं भेजते हैं कि हम आकाश के आंगन में छा गए हैं, तुम थिरको और नाचो। फूल खिलते हैं वातावरण स्वयं महक उठता है, बादल छाते ही मोर नाचने लगते हैं। उसी प्रकार महानता किसी के दरवाजे पर कभी प्रचार, प्रसार या प्रशंसा की भीख मांगने नहीं जाती, यह सब तो स्वयमेव उसकी झोली में आ गिरते हैं। महानता,

गुरुता और गुणों की पूजा-अर्चना की व्यवस्था सदियों से प्रकृति करती चली आ रही है।

पूज्य ज्ञानमती माताजी भी उन्हीं महान आत्माओं में से एक हैं, जिनकी गुणसुरभि से सम्पूर्ण जगत सुगंधि प्राप्त कर रहा है। समय के सूक्ष्म तन्तुओं ने उस बाल प्रतिभा को निखारना प्रारंभ किया, माता के द्वारा पिलाई गई जन्मघूंटी से मैना का धार्मिक स्वास्थ्य वृद्धिंगत होने लगा और वह अपने यौवन की पगडंडी पर कदम रखने लगी।

मैना अपने प्रारंभिक जीवन के सत्रह वर्षों को पूर्ण कर अट्ठारहवें वर्ष में प्रवेश कर रही थी, इसके साथ ही वह नारी जीवन के चरमलक्ष्य को भी सिद्ध करने के लिए प्रयत्नशील थी जबकि माता-पिता एवं समस्त परिवार अपनी उस गुणवती कन्या के हाथ पीले करने के समस्त उद्यम कर चुके थे।

➢पूर्णा तिथि की प्रतीक–

शरदपूर्णिमा तिथि तो प्रतिवर्ष आती और जनश्रुति के अनुसार अमृत बरसाकर चली जाती थी किन्तु सन् 1934 की शरदपूर्णिमा ने धरती पर अपनी अमिट छाप छोड़ दी और मानों यहाँ के निवासियों से यह कहकर चली गई कि इस पूर्णिमा के चाँद के समक्ष मेरी शीतल रश्मियाँ भी व्यर्थ हैं, मैंने स्वयं भी अब इस चन्द्रमा से अमृत ग्रहण करने का निर्णय किया है जिसने मुझे भी धन्य और अमर कर दिया है, क्या मैं इनका उपकार जन्म-जन्म में भी भूल सकती हूँ? अर्थात् अब इस अवनीतल पर **''पूर्णा तिथि की प्रतीक''** कन्यारत्न के जन्म ने शरदपूर्णिमा तिथि को अक्षय पद प्राप्त करा दिया, जिसे युगों-युगों तक कोई मिटा नहीं सकता।

➢स्वप्न भी होनी को बताने आया–

महापुरुषों के भविष्य को बताने हेतु शुभ-अशुभ स्वप्नों का दिग्दर्शन भी हुआ करता है। जैसे– भगवान ऋषभदेव को आहार देने से पूर्व हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस ने सुमेरु पर्वत, कल्पवृक्ष आदि सात स्वप्न देखे थे। नारी इतिहास को प्रारंभ करने वाली मैना ने भी रात्रि के पिछले प्रहर में एक स्वप्न देखा–

''मैं पूजन की थाली लेकर मंदिर जा रही हूँ, मेरे साथ आकाश में चन्द्रमा और नीचे उसकी शुभ्र चाँदनी पीछे-पीछे चल रही है, सभी नर-नारी मुझे आश्चर्यचकित हो देख रहे हैं।''

त्याग के लिए मैना का अन्तरंग पुरुषार्थ तो चल ही रहा था, इस स्वप्न ने उन्हें संबल प्रदान किया और प्रातःकाल मैना सोचने लगी– **मेरी**

विजय अवश्य होगी।

मैना ने सवेरे अपने छोटे भाई कैलाशचंद से स्वप्न की बात बताई तो वे भी एकदम बोल पड़े-**''जीजी! ऐसा लगता है कि आप भविष्य में महान साध्वी बनेंगी और आपके पुण्य एवं यश की चाँदनी चारों ओर अपना प्रकाश फैलाएगी।''** अत्यन्त कुशाग्रबुद्धि वाले लघुभ्राता के मुँह से भी ऐसी अनुकूल बात सुनकर मैना को बहुत ही अच्छा लगा। वे स्वयं तो साध्वी पद प्राप्ति के सपने संजोया ही करती थीं किन्तु इस युग में चल रही नारी की परतन्त्रता देखकर परिवार के समक्ष कुछ भी कहने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। फिर भी उन्होंने अपनी माँ से अपना अडिग संकल्प कई बार बताया था अतः घर में चर्चा तो फैल ही चुकी थी।

➢पिता का आश्वासन–

पुत्री के त्याग की प्रबल भावना को देखकर एक दिन पिता ने कहा– बेटी! मैंने सुना है श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर इन दिनों एक बड़ा मुनि संघ विराजमान है। उसमें कई एक आर्यिकाएँ भी हैं। हम तुम्हें वहाँ ले चलेंगे....। अब क्या था, मैना ने तो वहाँ ले चलने के लिए धुन ही लगा दी। तब पिता ''कुछ दिन बाद ले चलेंगे'' ऐसा कह-कहकर सान्त्वना देते रहे और समय निकालते रहे चूँकि मोह का उदय भला पुत्री को कैसे भेज सकता था?

➢कुमारिकाओं की पथ-प्रदर्शिका–

कन्या के अधिकारों का मूल्यांकन कराने वाली मैना ने जीवन के मधुमास में प्रवेश करने से पूर्व ही नारी उद्धार का संकल्प लिया और स्वयंभू होकर उसके पूर्ति के सपने संजोने लगीं। न जाने कहाँ से ऐसी-ऐसी बातें ये सीखकर आई थीं क्योंकि तब तक तो इन्हें किसी गुरु का संयोग भी प्राप्त नहीं हुआ था।

माता मोहिनी तो तब दंग रह जातीं, जब मैना की सखियाँ उनसे कहतीं कि आज हमें मैना ने शीलव्रत पालन का नियम मंदिर में दिलवाया है। अन्ततोगत्वा विक्रम संवत् 2009 (ईसवी सन् 1953) में भारत गौरव आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज के मंगल सानिध्य में शरदपूर्णिमा के ही दिन बाराबंकी में उनकी हार्दिक इच्छा की सम्पूर्ति हुई, जिसके फलस्वरूप मैना का मधुमास सप्तमप्रतिमारूप आजन्म ब्रह्मचर्य में परिवर्तित हो गया।

उस समय उन्होंने पारिवारिक एवं सामाजिक संघर्षों को झेलकर अपनी ही नहीं प्रत्युत् समस्त कुमारिकाओं के हाथों में जकड़ी परतन्त्रता की बेड़ियाँ तोड़कर असीम साहस और वीरता का परिचय दिया था। इनसे पूर्व बीसवीं

शताब्दी की किसी कन्या ने इस कंटीले मार्ग पर कदम नहीं बढ़ाया था। इसीलिए इन्हें **''कुमारिकाओं की पथ प्रदर्शिका''** कहने में हम सभी गौरव का अनुभव करते हैं।

➢वीर की अतिशय भूमि पर बनीं वीरमती आप–

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत लेने के पश्चात् ब्रह्मचारिणी कु. मैना मात्र एक श्वेत साटिका में लिपटी आर्यिका की भाँति आचार्यश्री के संघ में रहने लगीं। इनके साथ लखनऊ की एक ब्रह्मचारिणी चाँदबाई भी थीं। तभी संघ अतिशयक्षेत्र श्रीमहावीरजी पर पहुँचता है और वहीं मैना की क्षुल्लिका दीक्षा का मुहूर्त निकाला जाता है।

अभी विक्रम संवत् 2009 ही चल रहा था कि ईसवी सन् 1953 में प्रविष्ट हुआ, जब महावीर जी में होली का दीर्घकाय मेला लगा हुआ था, उसी समय माता-पिता को सूचित किये बिना मैना ने चैत्र कृष्णा एकम् को क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण कर ली। आचार्यश्री देशभूषण जी महाराज ने मैना की वीरता और वीरप्रभु की अतिशय भूमि पर दीक्षा होने के कारण शिष्या का नाम **''क्षुल्लिका वीरमती''** रखा। तभी बालसती क्षुल्लिका वीरमती की जयकारों से अतिशय क्षेत्र का अतिशय द्विगुणित हो गया। **अब यहाँ से दो वीरों का इतिहास जुड़ गया–एक तीर्थंकर महावीर का और दूसरा श्री वीरमती जी क्षुल्लिका का।**

➢कहाँ से कहाँ?–

मुनिराज सुकुमाल की भाँति एक कोमलांगी सुकुमारी साध्वी के रूप में आचार्य संघ के साथ पद विहार करने लगी। पैरों से टपकती खून की धार, पूर्व की अनभ्यासी, तीव्र गति चाल से उत्पन्न हृदय की धड़कनों को न वहाँ कोई पहचानने वाला ही था और न बताने वाला। क्षुल्लिका वीरमती जी सोचती थीं कि मैंने किसी मजबूरी या दूसरे की जबर्दस्ती से तो दीक्षा ली नहीं है, पूर्णस्वेच्छा से ली गई उस दीक्षा से वे कभी खेदखिन्न नहीं हुईं। अपने तीव्रतम वैराग्यपूर्वकली गई उस क्षुल्लिका दीक्षा से भी वे पूर्ण सन्तुष्ट कहाँ थीं, उन्हें तो नारी जीवन के उच्चतम शिखरस्वरूप आर्यिका दीक्षा लेने की पुनः धुन लग गई।

नीचे धरती माता और ऊपर आकाशरूपी पिता के संरक्षण में रहती हुईं आज की ज्ञानमती माताजी ने क्षुल्लिका अवस्था में आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज के साथ दो चातुर्मास किये, जिसमें सन् 1953 का उनका प्रथम चातुर्मास उनकी जन्मभूमि टिकैतनगर में हुआ और दूसरा सन् 1954 का चातुर्मास जयपुर में हुआ, जहाँ उन्होंने मात्र 2 माह में संस्कृत की कातन्त्र

रूपमाला व्याकरण पढ़कर अपने सतमंजिले ज्ञान महल की मजबूत नींव डाली। टिकैतनगर में उन्हें दक्षिण से आई हुई एक क्षुल्लिका विशालमती जी का समागम प्राप्त हुआ।

आचार्यश्री के समक्ष क्षुल्लिका वीरमती जी यदा-कदा अपनी आर्यिका दीक्षा के लिए निवेदन किया करती थीं किन्तु आचार्यश्री कहते थे–बेटा! अभी तक मैंने किसी को आर्यिका दीक्षा प्रदान नहीं की है तथा मेरे साथ तुम्हें बहुत अधिक चलना पड़ेगा क्योंकि मैं तेज चाल से प्रतिदिन 30-40 किमी.चलता हूँ। तुम अत्यन्त कमजोर हो और इस लघुवय में इतना नहीं चल सकती हो। हाँ, यदि तुम्हें आर्यिका दीक्षा लेनी ही है तो चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज के शिष्य आचार्यश्री वीरसागर महाराज के संघ में मैं तुम्हें भेज दूँगा। सुना है, वहाँ वृद्धा आर्यिकाएँ हैं और वे विहार भी थोड़ा-थोड़ा करते हैं अतः वँह तुम ठीक से रह सकोगी।

दूसरे संघ से अपरिचित और गुरुवियोग की बात से यद्यपि वीरमती जी कुछ दुःखी हुईं किन्तु और कोई चारा भी तो नहीं था उनके समक्ष आर्यिका दीक्षा ग्रहण करने का। खैर! संयोग-वियोग को सरलता से सहन करना तो उन्होंने जन्म से ही सीख लिया था क्योंकि अपने दो वर्षीय भाई रवीन्द्र को, जो उनके बिना सोता ही नहीं था, जीजी की धोती पकड़कर, अंगूठा चूसकर ही जिसकी सोने की आदत थी, उसे किस निर्ममतापूर्वक छोड़कर आई थीं। जब छोटा भैय्या चारपाई पर सो ही रहा था, इन्होंने अपनी धोती धीरे से खींचकर उसके पास दूसरा कपड़ा रख दिया, जिसे जीजी की धोती समझकर वह चूसता रहा और निद्रा के हिलोरें लेता रहा। उस मासूम को हमेशा के लिए छोड़ते हुए एक आँसू भी तो इनकी आँखों में नहीं आया था। 22 दिन की बहन मालती को शायद बाह्य स्नेहवश माँ से लेकर थोड़ा सा प्यार किया और भाईयों के राखी बंधवाई चूँकि रक्षाबंधन का पावन दिवस था। फिर चल दी थीं बाराबंकी की ओर देशभूषण महाराज को अपना पाठ सुनाने। क्या किसी को उस दिन यह पता भी चल सका था कि मेरी बेटी, मेरी बहना, मेरी पोती और मेरी भतीजी अब कभी हमें माँ, भाई, दादी, चाचा आदि कहने इस घर में आएगी ही नहीं!

उस 18 वर्ष प्राचीन जन्मजात वियोग के समक्ष दो वर्षों से प्राप्त गुरु सानिध्य का वियोग तो शायद कुछ भी नहीं होगा। हो भी, तो वीरमती जी का वैराग्य हृदय उसे कब स्थान देने वाला था, उसे तो अपनी मंजिल पर पहुँचना जो था।

एक दिन सुना, **''चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तिसागर महाराज कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र पर यमसल्लेखना ले रहे हैं''** तब ये आतुर होकर गुरु आज्ञापूर्वक क्षुल्लिका विशालमती जी के साथ उस जीवन्त तीर्थ के दर्शनार्थ निकल पड़ीं और दक्षिण भारत के 'नीरा' ग्राम में पहुँचकर युगप्रमुख आचार्यश्री के प्रथम दर्शन किये।

क्षुल्लिका विशालमती जी से इनका परिचय सुनकर वे करुणा के सागर आचार्यश्री बहुत प्रसन्न हुए और **'उत्तर की अम्मा'** कहकर इन्हें कुछ लघु सम्बोधन प्रदान किए। क्षुल्लिका वीरमती जी तो मानो यहाँ साक्षात् तीर्थंकर भगवान् महावीर की छत्रछाया पाकर कृतार्थ ही हो गई थीं। बार-बार गुरुदेव की पदरज मस्तक पर चढ़ाती हुई उनकी गुरु भक्ति अन्तर्हृदय की पावनता दर्शा रही थी। कुछ देर की मूक भक्ति के पश्चात् वेदना की शब्दावलियाँ फूटती हैं, जो गुरुवर्य से चिरकालीन भव भ्रमण कथा कह देना चाहती हैं किन्तु वीरमती जी उन्हें अपने एक वाक्य में समेटकर व्यक्त करती हैं–

'हे संसार तारक प्रभो! मैं आपके करकमलों से आर्यिका दीक्षा लेना चाहती हूँ।'

अनुकम्पा की साक्षात् मूर्ति आचार्यश्री की देशना मिली–

अम्मा! मैंने अब दीक्षा देने का त्याग कर दिया है, मैं समाधि ग्रहण करने कुंथलगिरि जा रहा हूँ। तुम मेरे शिष्य मुनि वीरसागर जी के पास जाकर आर्यिका दीक्षा प्राप्त करो, मेरा तुम्हें पूर्ण आशीर्वाद है।

आशा की किरणावलियाँ फूटीं वीरमती जी के हृदयांगन में और उन्होंने आर्यिका दीक्षा से पूर्व महामना, उपसर्गविजयी चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री का पण्डितमरण देखने का निर्णय किया अतः सन् 1955 का चातुर्मास क्षुल्लिका विशालमती जी के साथ महाराष्ट्र प्रान्त के ''म्हसवड़'' नगर में किया।

➢दो अविस्मरणीय उपलब्धियाँ–

20 वर्षीय क्षुल्लिका वीरमती जी से जहाँ म्हसवड़ की आम जनता अतिशय प्रभावित रही, वहीं यहाँ उन्हें दो शिष्याओं का लाभ मिला–कु. प्रभावती, जो आर्यिका श्री जिनमती जी हुईं और सौ. सोनूबाई, जिन्होंने आर्यिका पद्मावती बनकर मासोपवास करके सन् 1971 में उत्तम समाधिमरण प्राप्त किया। यह तो रही शिष्याओं की प्रथम उपलब्धि और दूसरी उपलब्धि उनके ज्ञान सूर्य की प्रथम किरण यहीं प्रस्फुटित हुई। उन्होंने अपने व्याकरण ज्ञान का प्रयोगात्मक उपयोग यहाँ **''जिनसहस्रनाम मंत्र''** की रचना से किया।

भगवान् के एक हजार नामों में चतुर्थी विभक्ति लगाकर नमः शब्द के साथ उनकी ज्ञान प्रतिभा एकदम निखर उठी।

क्षुल्लिका विशालमती जी ने तत्काल ही व्रत विधि सहित उन मंत्रों को लघु पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। आज ज्ञानमती माताजी की प्रथम साहित्यिक कृति **'जिनसहस्रनाम मंत्र'** का नाम लेते ही मेरे मन में अमिट विश्वास जम गया है कि जिस लेखनी का शुभारंभ ही श्री जिनेन्द्र के एक हजार आठ नामों से हुआ हो, उसके द्वारा दो-ढाई सौ ग्रंथ लिखा जाना कोई विशेष बात नहीं है। यदि माताजी के पास उत्तम स्वास्थ्य और साधु क्रियाओं में व्यतीत होने वाला समय और अधिक मिल जाता, तो निश्चित ही ग्रंथों की संख्या हजार तक पहुँचने में देर न लगती।

➢वीरमती से ज्ञानमती–

म्हसवड़ चातुर्मास के मध्य ही जब उन्होंने सुना कि आचार्यश्री ने कुंथलगिरि में यम सल्लेखना ले ली है, तब वे क्षुल्लिका विशालमती जी के साथ वहाँ अंतिम दर्शन करने और समाधि देखने पहुँच गईं। द्वितीय भादों शुक्ला दूज को आचार्यश्री ने बड़े ही शान्तिपूर्वक **''ॐ सिद्धाय नमः''** मंत्र ध्वनि बोलते एवं सुनते-सुनते अपने नश्वर शरीर का त्याग किया। उस समय पूरे एक माह तक क्षुल्लिका वीरमती जी को वहाँ रहने का सौभाग्य मिला। इस मध्य गुरुदेव के मुख से दो-चार लघु अनमोल शिक्षाएँ भी प्राप्त हुईं।

पुनः म्हसवड़ का चातुर्मास सम्पन्न करके वीरमती जी अपनी उभय शिष्याओं के साथ जयपुर (खानियाँ) में विराजमान आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज के संघ में पहुँचीं। गौरवर्णी, लम्बे कद और प्रतिभासम्पन्न लघुवयस्क व्यक्तित्व को देखकर आचार्यश्री एवं समस्त साधु-साध्वी आश्चर्यचकित थे। मूलाचार ग्रंथानुसार पहले तो सब तरफ से गुप्तरीत्या क्षुल्लिका वीरमती जी की परीक्षाएँ हुईं किन्तु साधु-साध्वी, ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणी सभी तो एक स्वर से इन्हें प्रथम श्रेणी का प्रमाण-पत्र देते हुए यही कह रहे थे–अरे! यह तो साक्षात् सरस्वती ही प्रतीत हो रही हैं। प्रातः 3 बजे से उठकर रात्रि के 10 बजे तक यह न तो पुस्तकों का पीछा छोड़ती हैं और न ही अपनी शिष्याओं को चैन लेने देती हैं, हर वक्त उन्हें ज्ञानाराधना में व्यस्त रखती हैं। इसके साथ ही सामायिक, प्रतिक्रमण और स्वाध्याय आदि समस्त क्रियाएँ शास्त्रोक्त समयानुसार करती हैं। किसी भी पाठ के लिए इन्हें पुस्तक देखने की भी तो जरूरत नहीं है। पूरा दैवसिक-रात्रिक प्रतिक्रमण आदि भी कण्ठस्थ है। आखिर इसे पूर्व जन्म का

संस्कार माना जाये या इस जन्म की तपस्या एवं सतत ज्ञानाराधना का फल!

कुछ भी हो, आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज ने एक कुशल जौहरी की भाँति इस हीरे को परखा और शीघ्र ही इन्हें आर्यिका दीक्षा प्रदान करने का निर्णय लिया। संघ अब जयपुर से विहार करके राजस्थान के **''माधोराजपुरा''** नगर में पहुँचा, तब वहीं विक्रम संवत् 2013 (सन् 1956) में वैशाख वदी दूज के शुभ मुहूर्त में क्षुल्लिका वीरमती जी को आचार्य श्रीवीरसागर जी महाराज ने आर्यिका दीक्षा प्रदान कर **''ज्ञानमती''** नाम से सम्बोधित किया। इस प्रकार बीसवीं शताब्दी की प्रथम ज्ञानमती को जन्म दिया आचार्य श्री वीरसागर जी ने। जो नाम कबीरदास जी के निम्न दोहे को असत्य साबित कर रहा है–

रंगी को नारंगी कहते, कहें तत्त्व को खोया।
चलती को गाड़ी कहें, देख कबीरा रोया।।

अर्थात् सार्थक नामधारी ज्ञानमती माताजी को यदि कबीरदास जी देख लेते, तो शायद उनके रोने की नौबत न आती।

आचार्यश्री ने अपनी नवदीक्षित शिष्या को अधिक शिक्षाएँ देने की आवश्यकता भी नहीं समझी। उनकी एक वाक्य की लघु शिक्षा ने ही ज्ञानमती माताजी के अन्दर पूर्ण आलोक भर दिया– **ज्ञानमती जी! मैंने जो तुम्हारा नाम रखा है, उसका सदैव ध्यान रखना।** बस, इसी शब्द ने आज माताजी को श्रुतज्ञान के उच्चतम शिखर पर पहुँचा दिया है, जहाँ आध्यात्मिक आनन्द के समक्ष शारीरिक अस्वस्थता भी नगण्य प्रतीत होने लगी है।

नये गुरुदेव और अपने नये नाम के साथ आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का नवजीवन प्रारंभ हुआ। आचार्य संघ पुनः विहार करता हुआ कुछ दिनों के बाद जयपुर खानियाँ में ही आ गया, वहीं सन् 1956 का वर्षायोग सम्पन्न हुआ। अपनी शारीरिक शिथिलता के कारण आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज ने उसके पश्चात् जयपुर शहर के सिवाय कहीं विहार नहीं किया। वे मितभाषी एवं स्वाध्याय प्रेमी थे। शाम को प्रतिक्रमण के पश्चात् शिष्यों के सुख-दुःख सुनकर किंचित् मुस्कराहट में उन सबका दुःख दूर कर दिया करते थे। वे कभी-कभी कहा करते– **मुझे दो रोग सताते हैं।** शिष्यगण उत्सुकतावश गुरुवर के दुःख जानने को आतुर होते, तभी उनकी मुस्कराहट बिखरती और वे कहते– **एक तो नींद आती है और दूसरी भूख लगती है।** इन दो रोगों से तो सभी संसारी प्राणी ग्रस्त हैं अतः उनकी बात पर शिष्यों को हँसी आ जाती और वे अपना भी दुःख-दर्द भूल जाते।

सच, गुरु के लिए तो ये पंक्तियाँ सार्थक ही सिद्ध होती हैं–

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव।।

आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज की छत्रछाया में उनकी नई शिष्या आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी को माता-पिता एवं गुरु का स्नेह प्राप्त हो रहा था। गुरुदेव की शिथिलता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी अतः सन् 1957 का चातुर्मास भी जयपुर खानिया में ही रहा। पूज्य ज्ञानमती माताजी कई बार अपने गुरुवर के प्रति असीम श्रद्धा व्यक्त करती हुई बताती हैं कि महाराज जी हमेशा धवला की पुस्तकों का स्वाध्याय किया करते थे और कहा करते थे कि भले ही इसमें कुछ विषय ऐसे हैं, जो समझ में नहीं आते हैं किन्तु पढ़ते रहने से अगले भवों में अवश्य ही ज्ञान का फल प्राप्त होगा।

चातुर्मास चल रहा था तभी आश्विन कृ. अमावस्या को आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज मध्यान्ह के लगभग 11 बजे समाधि लगाकर पद्मासन में बैठ गए और उनकी आत्मा इस जीर्ण शरीर से निकलकर देवलोक चली गई।

गुरु वियोग से दुखी चतुर्विध संघ ने वहीं पर अपना नया संघनायक चुना। संघ के सर्ववरिष्ठ मुनिराज श्री शिवसागर जी महाराज इस परम्परा के द्वितीय पट्टाचार्य बने और संघ का कुशलतापूर्वक संचालन किया।

➢गुरुता से लघुता भली–

आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी गुरुदेव के मरणोपरान्त भी आचार्य श्री शिवसागर महाराज के संघ में रहीं और उनकी आज्ञा से कई मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक आदिकों को विविध धर्मग्रंथों का अध्ययन कराया किन्तु उन्होंने अपनी इस गुरुता को कभी प्रगट नहीं किया। किसी मुनि के द्वारा यह कहने पर कि **''ज्ञानमती माताजी मेरी शिक्षा गुरु हैं''** वे खेद महसूस करतीं और कहतीं कि महाराज! मैं तो आप सबके साथ स्वाध्याय करती हूँ न कि पढ़ाती हूँ। यह उनके हृदय की महानता ही थी, वे हमेशा कहा करती हैं कि गुरुता के भार से मनुष्य अधिक दबता जाता है और लघुता से तराजू के खाली पलड़े की भाँति ऊपर उठता जाता है।

धन्य है उनका व्यक्तित्व! जिन्होंने गुरु बनकर भी गुरुता स्वीकार नहीं की, इसीलिए आज उन्होंने सम्पूर्ण भारतीय जैन समाज में सर्वोच्च विदुषी पद को प्राप्त कर लिया है। उनकी अध्यापन शैली भी इतनी सरल और रोचक है कि हर जनमानस बिना कठिन परिश्रम किए हर विषय को समझ सकता है।

अध्ययन काल में शिष्यों को शास्त्रीय विषयों के माध्यम से उनके द्वारा न जाने कितनी अमूल्य व्यवहारिक शिक्षाएँ भी प्राप्त हो जाती हैं, यह उनके वैदुष्य का सबल प्रमाण है।

सन् 1957 से सन् 1962 तक माताजी इसी आचार्य संघ में रहीं। इस मध्य आर्यिका पद्मावती जी, आर्यिका जिनमती जी, आर्यिका आदिमती जी, आर्यिका श्रेष्ठमती जी, आर्यिका संभवमती जी आदि को आचार्य श्री शिवसागर महाराज के करकमलों से दीक्षा दिलवाई। सन् 1961 में सीकर (राज.) चातुर्मास के अंतर्गत ब्र. राजमल जी को अनेक प्रेरणाएँ देकर मुनि दीक्षा के लिए उत्साहित किया, जो वहीं मुनि श्री अजितसागर बने। वे चतुर्विध संघ की सहमति से इस परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य बने।

➢आर्यिका संघ की मंगलमयी तीर्थयात्रा–

ईसवी सन् 1962 (वि. सं. 2019) के लाडनूं चातुर्मास के पश्चात् आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने गुरुभाई आचार्यश्री शिवसागर जी महाराज की आज्ञा से चार आर्यिका एवं एक क्षुल्लिका का संघ लेकर सम्मेदशिखर और गोम्मटेश्वर यात्रा के लिए विहार किया। इस आर्यिका संघ का सर्वप्रथम चातुर्मास सन् 1963 (वि. सं. 2020) में कलकत्ता महानगरी में हुआ।

श्री ज्ञानमती माताजी ही इस संघ की प्रमुख बड़ी आर्यिका थीं, शेष सभी तो उनके द्वारा हस्तावलंबन को प्राप्त संसार कर्दम से निकली शिष्याएँ थीं अतः माताजी को ही संघ की जिम्मेदारी का सारा भार वहन करना पड़ता। इनकी प्रवचन कला तो प्रारंभ से ही आकर्षक रही है। आगम में छिपे रहस्यों को जब रोचक शैली से प्रवचन में उद्घाटित करतीं, तब हर्षातिरेक में कई विद्वान श्रावक तो इन्हें **श्रुतकेवली** की संज्ञा प्रदान कर भी तृप्त न होते थे।

शुद्ध जल का नियम दिलाकर आहार लेने पर भी चौकों की भरमार रहती और क्यू लाइन लगवाकर लोग 1-1 ग्रास आहार दे पाते। आहार में मीठा, नमक, तेल, दही आदि रसों का त्याग ही था, प्रायः एक अन्न या दो अन्न मात्र ग्रहण करती थीं अतः उनके नीरस और अल्पाहार को देखकर सबको आश्चर्य होता और वे सोचने को मजबूर हो जाते कि माताजी इतना परिश्रम कैसे कर लेती हैं? कहाँ से शक्ति आती है? किन्तु ज्ञानमती माताजी के जीवन का एक छोटा सा सूत्र समस्त साधु समाज के लिए अनुकरणीय है–

जैसे गाय घास खाकर मीठा दूध देती है उसी प्रकार साधु रूखा-सूखा भोजन करके समाज को धर्मामृत प्रदान करते हैं। इसीलिए साधुओं की वृत्ति

''गोचरीवृत्ति'' कही गई है।

इसी सूत्र को सार्थक करती हुईं आर्यिकाश्री ने अपने कमजोर औदारिक शरीर से कठोर परिश्रम कर संसार को अथाह ज्ञानामृत पिलाया है। इसी तरह हैदराबाद, श्रवणबेलगोल, सोलापुर और सनावद आदि स्थानों पर किए गए आपके चातुर्मास भी ऐतिहासिक रहे हैं।

➢कतिपय उपलब्धियाँ–

सन् 1963 में कलकत्ता से आचार्यकल्प श्री श्रुतसागर जी की गृहस्थावस्था की सुपुत्री कु. सुशीला को अनेक संघर्षों के मध्य घर से निकाला और सन् 1974 में दिल्ली में आचार्य श्री धर्मसागर जी से दीक्षा दिलाकर **''आर्यिका श्रुतमती''** बनाया, जो वर्तमान में पूज्य ज्ञानमती माताजी की शिष्या आर्यिका श्री आदिमती माताजी के पास हैं।

सन् 1964 में (वि. सं. 2021) आंध्रप्रदेश के हैदराबाद शहर में आर्यिका संघ के चातुर्मास के मध्य आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी गंभीर रूप से बीमार हुईं। वहाँ की स्थानीय समाज ने भरपूर सेवा की, वैद्यराज जी भी कलकत्ता से आए, उनका इलाज चला। इसी बीच संघस्थ ब्र. कु. मनोवती ने माताजी से ही दीक्षा लेने का आग्रह किया। यहाँ एक अचम्भे और हँसी की बात है कि दीक्षा का नाम सुनते ही माताजी का स्वास्थ्य सुधरने लगा। हैदराबाद की जनता आश्चर्यचकित थी, वैद्य जी की औषधि से अधिक आरोग्यता तो उन्हें दीक्षा के नाम से प्राप्त हो गई थी। कोई सोच भी नहीं सकता था कि इस कमजोर हालत में माताजी पांडाल तक जाकर मनोवती का दीक्षा संस्कार कर पाएँगी किन्तु श्रावण शुक्ला सप्तमी तिथि को माताजी स्वयं चलकर पांडाल तक पहुँचीं तथा अपनी गृहस्थावस्था की लघु बहन कु. मनोवती को विशाल जनसमूह के मध्य क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान कर उनका **''अभयमती''** नाम घोषित किया। आंध्र प्रदेश में जैन दीक्षा का यह प्रथम अवसर था जो वहाँ के इतिहास का अविस्मरणीय पृष्ठ बन गया।

श्रवणबेलगोल गोम्मटेश्वर बाहुबली के इस ऐतिहासिक तीर्थ पर सन् 1965 (वि. सं. 2022) के चातुर्मास ने तो आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी को एक ऐतिहासिक साध्वी का रूप प्रदान किया है। बाहुबली स्वामी के पादमूल में 15 दिन की अखंड मौनपूर्वक की गई ध्यान-साधना ने उन्हें तेरह द्वीप के माध्यम से सब कुछ प्रदान कर दिया था। आगे चलकर यह तेरह द्वीप मात्र एक जम्बूद्वीप के रूप में परिवर्तित हुआ हस्तिनापुर की पावन वसुन्धरा पर। जिसे

दक्षिण-उत्तर का सेतु मानकर सारे देश के तीर्थयात्री तो देखने आते ही हैं, विदेशों से भी अनेक पर्यटक इस दर्शनीय स्थल को देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं।

सन् 1966 (वि. सं. 2023) सोलापुर के श्राविकाश्रम चातुर्मास में शिक्षण शिविरों के माध्यम से जो ज्ञान का अलख जगाया, वह वहाँ के इतिहास का अविस्मरणीय पृष्ठ बन गया है। वहाँ की प्रमुख ब्रह्मचारिणी ब्र. कु. विद्युल्लता जी शहा (संचालिका-श्राविकाश्रम) ने आज भी उन पावन स्मृतियों को हृदय में संजो रखा है।

सन् 1967 (वि. सं. 2024) में सनावद (म.प्र.) का चातुर्मास तो अद्यावधि जीवन्त है क्योंकि वहाँ के श्रेष्ठी स्व. श्री अमोलकचंद जैन सर्राफ के सुपुत्र ब्र. मोतीचंद जी एवं उनके चचेरे भाई यशवन्त कुमार को अपना संघस्थ बनाकर पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी ने मोक्षमार्ग की अनेक अमूल्य शिक्षाओं से उनके जीवन बदल दिये। जिनमें से यशवन्त कुमार को आचार्य वर्धमानसागर बनाने का श्रेय आपको ही है। ब्र. मोतीचंद जी क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी के रूप में अद्यावधि आपकी छत्रछाया में जम्बूद्वीप संस्थान को अपनी कर्मभूमि के रूप में स्वीकार कर सतत ज्ञानाराधना में तत्पर हैं। जम्बूद्वीप रचना निर्माण, ज्ञानज्योति प्रवर्तन तथा पूज्य माताजी के प्रत्येक कार्यकलापों में ब्र. मोतीचंद जी की प्रमुख भूमिका होने के नाते सनावद चातुर्मास हस्तिनापुर के इतिहास से सदा के लिए जुड़ गया है।

➢पुनः संघीय मिलन–

इस पंचवर्षीय भ्रमण योजना के पश्चात् आचार्य श्री शिवसागर महाराज की प्रबल प्रेरणावश ज्ञानमती माताजी अपने संघ सहित पुनः संघ में पधारीं। तब आचार्य संघ के साथ सन् 1968 (वि. सं. 2025) का चातुर्मास राजस्थान के **''प्रतापगढ़''** नगर में हुआ। अनन्तर अधिक दिनों तक श्री शिवसागर महाराज का सानिध्य न मिल सका क्योंकि सन् 1969 में ही फाल्गुन कृ. अमावस्या को श्री शांतिवीर नगर-महावीर जी में आचार्यश्री का अल्पकालीन बीमारी से अचानक समाधिमरण हो गया पुनः चतुर्विध संघ ने परम्परा के वरिष्ठ मुनिराज श्री धर्मसागर जी को तृतीय पट्टाचार्य मनोनीत किया और होने वाला पंचकल्याणक महोत्सव उन्हीं के सानिध्य में सानंद सम्पन्न हुआ तथा मुनि-आर्यिकाओं की 11 दीक्षाएँ भी उनके करकमलों से प्रथम बार सम्पन्न हुईं।

➢आचार्य श्री धर्मसागर जी के साथ भी–

आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के लिए आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज

के समान ही धर्मसागर जी महाराज भी गुरु भाई थे क्योंकि ये भी आचार्य श्री वीरसागर महाराज द्वारा दीक्षित मुनि शिष्य थे।

होनहार की प्रबलता कहें या कालदोष, द्वितीय पट्टाचार्य श्री शिवसागर जी महाराज की समाधि के पश्चात् यह विशाल संघ 2-3 टुकड़ों में बंट गया। आचार्यकल्प श्री श्रुतसागर महाराज, अजितसागर जी, सुबुद्धिसागर जी, श्रेयांससागर जी आदि अनेक साधु तथा विशुद्धमती माताजी आदि कई आर्यिकाएँ संघ से अलग हो गए किन्तु आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी नूतन आचार्यश्री के आग्रह पर उसी संघ में रहीं।

चतुर्मुखी प्रतिभा से सम्पन्न, अलग विहार एवं धर्मप्रभावना में कुशल तथा संघ की अपेक्षा अलग रहकर समाज को अधिक लाभ देने में सक्षम साधुगण प्रायः अपने दीक्षागुरु के अनुशासन में रहने में परतन्त्रता और कठिनाई का अनुभव करते हैं किन्तु माताजी प्रारंभ से ही हर प्रकार के माहौल में रहने की अभ्यस्त रही हैं क्योंकि उनका तो लक्ष्यमात्र यही रहा कि **''दीक्षा प्रभावना के लिए नहीं, आत्मकल्याण के लिए ग्रहण की जाती है।''**

सन् 1969 (वि.सं. 2026) में आचार्य श्री धर्मसागर जी के साथ ही माताजी का चातुर्मास भी जयपुर के बख्शी चौक में हुआ। यहाँ मैंने प्रथम बार ज्ञानमती माताजी के दर्शन किये थे जिसकी आज भी मुझे पूरी स्मृति है। मैंने वहाँ देखा था कि माताजी दिन के छः घण्टे मुनि-आर्यिका आदि को अष्टसहस्री, कातंत्रव्याकरण, राजवार्तिक आदि कई ग्रंथों का अध्ययन कराती थीं। एक आचार्यसंघ में साधुओं के शिक्षण की विधिवत् व्यवस्था का वह अनुकरणीय उदाहरण था। यह समुचित क्रम चला सन् 1971 के अजमेर चातुर्मास तक। इससे पूर्व टोंक (राज.) में सन् 1970 का चातुर्मास भी आचार्य संघ के साथ ही माताजी ने किया।

घड़ी, दिन, महीने और वर्षों ने अब संघ की वृद्धि में भी चार चांद लगा दिए थे। अजमेर चातुर्मास के मध्य भी कई दीक्षाएँ हुईं, जिसमें माताजी की गृहस्थावस्था की माँ मोहिनी देवी ने भी अपने विशाल परिवार का मोह छोड़कर आचार्यश्री धर्मसागर जी महाराज से आर्यिका दीक्षा ग्रहणकर **''रत्नमती'** नाम प्राप्त किया था। मोइनिया इस्लामिया स्कूल के विशाल प्रांगण में ज्ञानमती माताजी ने अत्यन्त निर्ममतापूर्वक अपनी माता का केशलोंच किया था। वहाँ की जनता रो रही थी, परिवार बिलख रहा था, हम सभी बच्चे माँ की ममता पाने को तरस रहे थे किन्तु ज्ञानमती माताजी और आर्यिका बनने वाली

रत्नमती माताजी के चेहरों पर अपूर्व चमक तथा प्रसन्नता थी जो सांसारिक राग पर विजयश्री प्राप्त करने की बात स्पष्ट झलका रही थी। इसके बाद पुत्री और माता का संबंध गुरु और शिष्य में परिवर्तित हो गया था।

➢निर्बाध संयम साधना–

ईसवी सन् 1965 से मस्तिष्क में आई जम्बूद्वीप रचना पृथ्वी पर बनने का संयोग प्राप्त हुआ 10 वर्ष पश्चात् 1975 में। 10 वर्षीय मानसिक योजना प्रारंभ होने के बाद 10 वर्ष के अंतराल में ही पूर्ण हुई, तभी सन् 1985 में उसका प्रतिष्ठापना महोत्सव मनाया गया। हालांकि इस दीर्घकाल के मध्य कहीं पर माताजी के द्वारा रुकने का आश्वासन न देने के कारण ही अब तक इसका निर्माण न हो सका था। उनके मन में कई बार यह शंका उठ जाती कि इस निर्माण से मेरे संयम में कहीं कोई बाधा न आ जाए अतः उन्होंने अपने शिष्य ब्र. मोतीचंद जी, ब्र. रवीन्द्र जी तथा मुझसे स्पष्ट कहा था–

मैं इस रचना निर्माण के लिए किसी से पैसा नहीं मागूँगी और न आहार संबंधी व्यवस्था की कोई चिंता करूँगी। यदि तुम लोग मुझसे निर्माण की प्रेरणा चाहते हो, तो सारी जिम्मेदारी का भार तुम लोगों पर होगा अन्यथा मुझे जम्बूद्वीप निर्माण में कोई रुचि नहीं है। मेरे संयम में किसी तरह का दोष लगना मुझे स्वीकार नहीं है।''

उनके सभी शिष्यों ने आश्वासन प्रदान कर उन्हें चिन्तामुक्त किया और आज इस बात की प्रसन्नता है कि पूज्य माताजी ने हस्तिनापुर, दिल्ली, खतौली, सरधना, मांगीतुंगी, अयोध्या, प्रयाग, कुण्डलपुर आदि स्थानों पर चातुर्माए किए किन्तु उनके संयम में किसी प्रकार की कोई बाधा कभी नहीं आई। न तो उन्होंने कभी जम्बूद्वीप निर्माण के लिए किसी श्रावक से पैसे की याचना की और न ही अपने आहार आदि की व्यवस्था हेतु किसी को कहा। उनके जीवन का एक संकल्प प्रारंभ से रहा है कि **''आहार में कभी संस्था के दान का एक पैसा भी नहीं लगना चाहिए और न ही साधु को अपने आहार के लिए श्रावकों से कहना चाहिए।''**

उनके इस नियम का अभी तक हम सभी ने पूर्णरूपेण पालन किया है और भविष्य में भी पूज्य माताजी की तरह निर्दोष संयम पालन की भावनावश इस नियम का पालन करने की उत्कट इच्छा है।

➢जम्बूद्वीप की प्रारंभिक उपज कहाँ से ?

ईसवी सन् 1965 में आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने संघ सहित

कर्नाटक के श्रवणबेलगोला तीर्थक्षेत्र पर भगवान बाहुबली के चरण सानिध्य में चातुर्मास स्थापना किया। उस समय माताजी के संघ में आर्यिका पद्मावती जी, आर्यिका जिनमती माताजी, आर्यिका आदिमती जी, क्षुल्लिका श्रेयांसमती एवं क्षुल्लिका अभयमती जी थीं। आर्यिका आदिमती जी व क्षुल्लिका अभयमती जी की अस्वस्थता के कारण माताजी को वहाँ पर लगभग एक वर्ष रुकना पड़ा। जिसके मध्य कई बार विंध्यगिरि पर्वत पर भगवान बाहुबलि के चरण सामीप्य में माताजी को ध्यान करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। ध्यान की धारा निरन्तर बढ़ती गई। एक बार 15 दिन तक मौनपूर्वक लगातार पहाड़ पर रहकर ध्यान किया। मात्र आहार के समय नीचे उतरना, आहार के अनंतर पुनः ऊपर जाकर रात्रि वहीं व्यतीत करती थीं। आर्यिका पद्मावती जी हमेशा माताजी के साथ ही रहती थीं। इसी मध्य एक दिन माताजी द्वारा भगवान बाहुबलि का ध्यान करते-करते उसी ध्यान की धारा में तेरहद्वीप के चार सौ अट्ठावन जिन चैत्यालयों की वंदना, वहाँ की अकृत्रिम छटा, वन खण्ड, स्वयंसिद्ध प्रतिमाएँ सब कुछ यथावत् मस्तिष्क में दृष्टिगत होने लगा। विशेष आनन्दानुभव के साथ ध्यान सन्तति समाप्त हुई। माताजी के हर्ष का पारावार नहीं था। जब प्रातःकाल आहार के समय पहाड़ से नीचे आईं तो करणानुयोग के त्रिलोकसार ग्रंथ को उठाकर उसमें ज्यों की त्यों रचना का वर्णन पढ़कर अत्यधिक प्रसन्न हुईं। 15 दिन बाद मौन की अवधि समाप्त होने पर उन्होंने अपनी शिष्या आर्यिकाओं को भी सारी घटना बताई। माताजी की शिष्या आर्यिका जिनमती जी ने कहा कि यह रचना पृथ्वी पर अवश्य साकार होनी चाहिए। माताजी अपने प्रवचनों में भी जब अकृत्रिम चैत्यालयों का वैभव, उनकी प्राकृतिक छटा का वर्णन करतीं, उस समय सभी श्रोता एक क्षण को वहीं पहुँचकर स्वयंसिद्ध प्रतिमाओं के ध्यान में लीन हो जाते। जैसा कि यह सूक्ति प्रसिद्ध ही है कि **''वक्त्रं वक्ति हि मानसम्''** ठीक इसी प्रकार माताजी के अन्तःकरण से निकले हुए शब्द श्रोताओं को प्रभावित किए बिना नहीं रहते। आज भी उनकी यही अन्तरंग भावना रहती है कि **''कब उन अकृत्रिम चैत्यालयों की वंदना साक्षात् करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त होगा।''** भगवान उनकी इस भावना को अवश्य पूर्ण करेगा।

कुछ दिनों के बाद श्रवणबेलगोला से विहार करके आर्यिका संघ सोलापुर (महाराष्ट्र) आया। यहाँ पर एक श्राविकाश्रम है, जिसकी संस्थापिका स्व. पद्मश्री पं. सुमतिबाई शहा कर्मठ महिला थीं। साथ में वहाँ की संचालिका बाल ब्र. विदुषी विद्युल्लता शहा (श्राविकाश्रम की संचालिका) भी माताजी की अनन्य

भक्तों में से हैं। इनकी मां आर्यिका चन्द्रमती जी, माताजी के साथ ही आचार्य वीरसागर जी महाराज के संघ में रहती थीं और ज्ञानमती माताजी से कुछ न कुछ अध्ययन भी करती थीं। यही कारण था कि उनकी माताजी के प्रति विशेष भक्ति थी अतः इन लोगों के आग्रह से माताजी ने सोलापुर के महिलाश्रम में ही चातुर्मास स्थापन किया। उसी समय आचार्य श्री विमलसागर महाराज का संघ सहित चातुर्मास सोलापुर में ही शहर में हुआ। दोनों संघों का संगम वहाँ की धर्मप्रभावना में विशेष सहकारी बना। ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में शिक्षण शिविर का आयोजन हुआ, जिसमें प्रौढ़ स्त्री-पुरुषों ने सक्रिय रूप से भाग लेकर ज्ञानार्जन किया। माताजी प्रतिदिन विभिन्न विषयों के साथ-साथ जैन भूगोल पर अच्छा प्रकाश डालतीं, जिससे ब्र. सुमतिबाई के हृदय में भी इस रचना को पृथ्वी पर बनाने की लालसा जागृत हुई। उन्होंने सोलापुर में इस रचना हेतु कई स्थल चयन किए और माताजी से कुछ दिन यहीं रहकर मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए निवेदन किया। उन्होंने बहुत आग्रह किया कि माताजी! हम आपकी चर्या में किसी प्रकार का दोष नहीं लगने देंगे, हमें मात्र आपके द्वारा दिशा-निर्देश चाहिए क्योंकि यह रचना आज तक कहीं भी बनी नहीं है, किसी इंजीनियर या आर्कीटेक्ट के गम्य भी यह विषय नहीं है। नंदीश्वर द्वीप की रचना, समवसरण की रचना तो कई जगह निर्मित हो चुकी हैं अतः उसकी नकल करने में हमें कोई परेशानी नहीं होगी किन्तु यह रचना मात्र आपके मस्तिष्क में है, आप ही इसका सही मार्गदर्शन दे सकती हैं, किन्तु माताजी के वहाँ नहीं रुकने के कारण वहाँ का कार्य संभव न हो सका। सोलापुर में ब्र. सुमतिबाई और कु. विद्युल्लता जी ने जिस तन्मयता से पूज्य माताजी की व संघ की वैयावृत्ति की, उसका उदाहरण माताजी के प्रवचन में कई बार सुनने को मिलता है– **''विद्वत्ता के साथ-साथ साधु सेवा का गुण वास्तव में सोने में सुगंधि का कार्य करता है।''** इस प्रकार से सोलापुर का चातुर्मास माताजी के जीवन का अविस्मरणीय पृष्ठ है।

माताजी की हार्दिक इच्छा तो हमेशा रही कि मेरे मस्तिष्क की रचना कहीं न कहीं पृथ्वी पर अवश्य साकार हो जाए किन्तु वे इसमें माध्यम नहीं बनना चाहती थीं। इनकी इच्छा थी कि कोई इसे स्वयं अपनी जिम्मेदारी पर करवाए। यही कारण रहा कि कहीं इसका योग नहीं बना। वैसे तो ऐसे-ऐसे महान कार्य किसी साधु-संतों के आश्रय के बिना असंभव ही होते हैं। इस शताब्दी के पुराने इतिहास को देखने से भी यही ज्ञात होता है कि धार्मिक

साहित्य तथा तीर्थों का उद्धार साधुओं के द्वारा ही हुआ है। चारित्र चक्रवर्ती आचार्य सम्राट श्री शांतिसागर महाराज की प्रेरणा से प्राचीन सिद्धान्त ग्रंथ ताम्रपट्ट पर उत्कीर्ण हुआ, जो फलटण में आज भी विराजमान है। युगों युगों तक यही साहित्यिक धरोहर जैन धर्म की प्राचीनता को दर्शाएगा। इसी प्रकार से कुंथलगिरि में देशभूषण और कुलभूषण मुनिराजों की प्रतिमाओं की स्थापना भी आचार्यश्री की प्रेरणा से ही हुई। वह तीर्थ आचार्यश्री को अत्यंत प्रिय था इसीलिए उन्होंने वहीं पर सल्लेखनापूर्वक अपने अंतिम शरीर का त्याग किया। कुंभोज बाहुबली जो महाराष्ट्र का जीवन्त तीर्थ है, उसका उत्थान भी आचार्य श्री की प्रेरणा से ही हुआ। इसका सुन्दर वर्णन ज्यों की त्यों डा. श्री सुभाषचन्द अक्कोले ने **''आचार्य शांतिसागर जन्मशताब्दी महोत्सव स्मृति ग्रन्थ''** में किया है। उन्होंने किस प्रकार से मुनि समन्तभद्र जी को कुम्भोज में बाहुबली की प्रतिमा स्थापित करने की प्रेरणा और आशीर्वाद प्रदान किया। देखिए–

''तुमची इच्छा येथे हजारों विद्यार्थ्यांनी राहावे शिकावे.....हा तुम्हा सर्वांना आशीर्वाद आहे।''

इसका हिन्दी अर्थ यह है–

''आपकी आन्तरिक इच्छा यह है कि यहाँ पर हजारों विद्यार्थी धर्माध्ययन करते रहें इसका मुझे परिचय है। यह कल्पवृक्ष खड़ा करके जा रहा हूँ। भगवान का दिव्य अधिष्ठान सब काम पूरा कराने में समर्थ है। यथासम्भव बड़े पाषाण को प्राप्त कर इस कार्य को पूरा कर लीजिए।''

मुनिश्री समन्तभद्र जी की ओर दृष्टि कर संकेत दिया–''आपकी प्रकृति (स्वभाव) को बराबर जानता हूँ। यह तीर्थ भूमि है। मुनियों को विहार करते रहना चाहिए इस प्रकार सर्वमान्य नियम है, फिर भी विहार करते हुए जिस प्रयोजन की पूर्ति करनी है उसे एक स्थान में यहीं पर रहकर कर लो। यह तीर्थक्षेत्र है, एक जगह पर रहने के लिए कोई बाधा नहीं है। जिस प्रकार से हो सके, कार्य शीघ्र पूरा करने का प्रयत्न करना। कार्य अवश्य ही पूरा होगा, सुनिश्चित पूरा होगा। आप सबको हमारा शुभाशीर्वाद है।''

आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज ने अयोध्या में 1008 भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा स्थापित करवाई, जयपुर खानिया का चूलगिरि पर्वत उन्हीं की देन है। उन्होंने अपनी गृहस्थावस्था की जन्मभूमि कोथली में कितना विशाल कार्य करवाया। गुरुओं की प्रेरणा व आशीर्वाद भक्तों के कार्यकलापों में संबल प्रदान करता है। आचार्यश्री विमलसागर महाराज ने सम्मेदशिखर में

समवसरण की रचना बनवाई, सोनागिरि में उनकी प्रेरणा से नंग-अनंग की मूर्ति तथा गुरुकुल की स्थापना हुई। इसी प्रकार जगह-जगह आचार्यश्री की प्रेरणा से बहुत से धार्मिक कार्य हुए हैं। आचार्यश्री विद्यासागर महाराज की प्रेरणा से सागर एवं जबलपुर (म.प्र.) में ब्राह्मी विद्या आश्रम की स्थापना हुई, जिसमें सैकड़ों अल्पवयस्क बालिकाएँ ज्ञानार्जन करके आत्मकल्याण के पथ पर अग्रसर हैं। इसी प्रकार धर्मगुरुओं की प्रेरणा से हमेशा समाज एवं धर्म की उन्नति हुई है। निन्दा और प्रशंसा की ओर इन साधुओं का लक्ष्य न होकर आत्म और पर के कल्याण की ओर ही होता है। निन्दा करने वाले मात्र अपने कर्म का बंध कर लेते हैं जो कि उन्हें भव-भव में स्वयं को भोगना पड़ता है। एक भव की अज्ञानता अनेक भव परिवर्तनों का कारण बनती है। तभी तो आचार्यों ने कहा है–

भुक्तिमात्रप्रदाने तु का परीक्षा तपस्विनाम्।
ते सन्तः सन्त्वसन्तो वा गृही दानेन शुद्धयति।।

अर्थात् गृहस्थ को साधुओं की निंदा करने से क्या प्रयोजन? वह तो आहारदानादि अपनी क्रियाओं को करके शुभ भावों का बंध कर ही लेता है। साधु में यदि साधुता नहीं है, तो उसका फल उन्हें स्वयं भोगना पड़ेगा, श्रावक तो उसके फल में हकदार हो नहीं सकता।

वर्तमान में मनुष्यों की स्थिति यह है कि व्यापारिक उलझनों में उलझकर रिश्वत में हजारों, लाखों रुपया देकर भी चैन की नींद नहीं सो सकते। जबकि सुबह से शाम तक एड़ी से चोटी तक परिश्रम करके खून पसीना बहा करके केवल पारिवारिक संतुष्टियों के लिए सब कुछ किया जाता है। यदि इसकी जगह संतोषपूर्वक न्याय से थोड़ा धन कमाया जाए, उसी में से थोड़ा धर्मकार्यों में दान किया जाए, साधुओं की प्रेरणा से किसी धर्मतीर्थ का जीर्णोद्धार करा दिया जाए तो वह अधिक श्रेयस्कर है लेकिन इसका मूल्यांकन कोई विरले पुरुष ही कर सकते हैं।

पूज्य ज्ञानमती माताजी ने जब तक इस रचना कार्य में स्वयं को नहीं डाला, तब तक वह प्रादुर्भूत न हो सकी। सोलापुर से विहार करके माताजी भ्रमण करते-करते इंदौर (म.प्र.) में अपने संघ सहित आ गईं। इंदौर से लगभग 60 किमी. दूर सनावद (म.प्र.) की भाक्तिक जैन समाज के आग्रह से माताजी के संघ का सन् 1967 का चातुर्मास सनावद में हो गया। यहाँ पर भी विशिष्ट व्यक्तियों ने जब माताजी के मस्तिष्क की रचना को सुना और समझा तो

रुचिपूर्वक वहीं पर इसे बनवाने का विचार करने लगे। पास में ही सनावद से 8-10 किमी. दूर सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र पर स्थान भी चयन किया गया। चातुर्मास समाप्ति के अनंतर सनावद वालों की प्रेरणा से माताजी ने सिद्धवरकूट यात्रा के लिए विहार किया। साथ में श्री रखबचंद जी कमलाबाई पांड्या, ब्र. मोतीचंद जी (क्षु. मोतीसागर), श्रीचंद जी, त्रिलोकचंद जी आदि बहुत से लोग थे। सिद्धवरकूट नर्मदा नदी के तट पर बसा होने के कारण विशेष आकर्षण का केन्द्र है। नाव से एक मील नदी के रास्ते को तय करके यात्रीगण उस क्षेत्र पर पहुँचते हैं। यात्रा संघ में गए हुए मोतीचन्द आदि सभी लोगों ने इस दृष्टि से उस स्थान को रचना निर्माण के लिए चुना, जहाँ नर्मदा का जल सुविधापूर्वक प्राप्त करके अपने निर्माण में नदी-समुद्रों के लिए तथा फौव्वारों की सुन्दरता के लिए जल पर्याप्त अवस्था में प्राप्त कर सकें। बहुत लम्बी-चौड़ी जगह का माप लिया गया। रमणीक स्थान होने के कारण चउमुखी दृष्टियों का केन्द्र बनता किन्तु वहाँ का भी योग नहीं था। अचानक आचार्यश्री शिवसागर जी महाराज के संघ से सूचना आ गई कि माताजी से कहो कि यह रचना महावीर जी तीर्थक्षेत्र पर बनेगी अतः वे शीघ्र ही आर्यिका संघ के साथ यहाँ आने का प्रयास करें। माताजी के हृदय में प्रारंभ से ही अटूट गुरु भक्ति थी। गुरु भाई आचार्यश्री का संदेश मिलते ही जल्दी ही संघ में जा पहुँचीं। तब तक तो माताजी के मन में तेरहद्वीप की रचना का ही प्लान था।

➢होनहार बहुत बलवान होती है–

आचार्य संघ महावीर जी पहुँचा ही था कि वहाँ पर आकस्मिक आचार्य श्री शिवसागर महाराज बीमार पड़ गए और देखते ही देखते फाल्गुनी अमावस्या को उनकी समाधि हो गई। अब उस संघ का नेतृत्व आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज के हाथों में आ गया। आचार्यश्री की समाधि से संघ का वातावरण शोकाकुल सा रहा। माताजी का उत्साह भी ठंडा पड़ चुका था अतः आगे कोई बात नहीं की गई। माताजी भी संघ के साथ में विहार व धर्मप्रभावना करती रहीं। महावीर जी के बाद सन् 1969 में जब संघ का चातुर्मास जयपुर (राज.) में था, तब माताजी ने वहाँ पर जैन ज्योतिर्लोक विषय पर शिविर लगाया, उस समय जनता को करणानुयोग के विषय में नया दिशाबोध मिला। संघस्थ ब्र. मोतीचन्द जी ने परिश्रमपूर्वक कुछ विशेष नोट्स भी तैयार किए। कुछ दिनों बाद उन्हीं नोट्स के आधार पर एक पुस्तक ''जैन ज्योतिर्लोक'' लिखी गयी, जो आज भी त्रिलोक शोध संस्थान में उपलब्ध है। माताजी को तो जैसे

करणानुयोग का सारा विषय हृदयंगम ही हो चुका था। यदि स्वप्न में भी कोई तत्संबंधी प्रश्न कर देवे, तो उसका उत्तर आगम आधारपूर्वक प्रस्तुत रहता था। अवश्य ही इन्हें कोई न कोई पूर्व भव के प्रबल संस्कार ही कहना पड़ेगा।

सन् 1971 का चातुर्मास आचार्य संघ के साथ ही अजमेर (राज.) में हुआ। वहाँ के सर सेठ भागचन्द जी सोनी और उनकी धर्मपत्नी ज्ञान से प्रभावित होने के कारण पूज्य माताजी के पास अधिक समय निकाल कर स्वाध्याय आदि का लाभ लेते। चातुर्मास सोनी जी की नशिया में ही हुआ था अतः वहीं पर प्रवचन भी होते थे। एक दिन सेठ जी के सामने माताजी की बात हुई, उन्होंने बड़ी रुचिपूर्वक माताजी को उसी नशिया में ऊपर कमरे में बनी हुई रचना को दिखाया, उसमें भी कुछ-कुछ वही झलक थी, बीच में पाँच मेरु भी बनाए गए थे। आज भी देश भर के पर्यटक उसे देखने जाते हैं। माताजी की मनोभावना थी कि कहीं खुले स्थान पर पृथ्वी पर यह रचना बने लेकिन तेरहद्वीप की रचना उस समय के लिए करोड़ों की लागत का कार्य था अतः प्रश्नवाचक चिन्ह बनकर खड़ा होता कि यह राशि कहाँ से आयेगी? कौन इसकी जिम्मेदारी लेगा? अन्ततोगत्वा सोच-विचार करके यह निष्कर्ष निकाला गया कि केवल जम्बूद्वीप की योजना को साकार करना चाहिए। अजमेर चातुर्मास समाप्त होने पर संघ का विहार हुआ। यहाँ से कुछ दूर ही ''पीसांगन'' नाम के गांव से पूज्य माताजी ने ब्यावर (राज.) की ओर विहार कर दिया।

➢रवीन्द्र कुमार जी कैसे आये संघ में–

सन् 1952 में जब माताजी ने दीक्षा के लक्ष्य से घर छोड़ा, अर्थात् बाराबंकी में विराजमान आचार्य श्री देशभूषण महाराज के दर्शन का बहाना बनाकर घर से निकलीं, तब रवीन्द्र कुमार (सबसे छोटे भाई) मात्र दो वर्ष के थे। उन्होंने उस समय तो अपनी जीजी को अच्छी तरह से देखा भी नहीं था किन्तु बाद में लखनऊ विश्वविद्यालय में बी.ए. का अध्ययन करते हुए रवीन्द्र जी अपने माता-पिता, भैय्या-भाभी के साथ सन् 1968 में चातुर्मास के मध्य प्रतापगढ़ (राज.) आए थे। उस समय पूज्य माताजी आचार्य श्री शिवसागर महाराज के संघ में थीं। उन्होंने रवीन्द्र जी की कुशाग्र बुद्धि देखकर उन्हें उस समय घर से निकलने की प्रेरणा दी थी, जो उनके हृदय में नींव की तरह बैठ गई, पुनः उसने साकार रूप लिया सन् 1972 में।

उससे पूर्व सन् 1970-71 में इनका संघ में थोड़ा-थोड़ा रहना तो हुआ किन्तु बाद में भाईयों ने घर ले जाकर अप्रैल 1972 में इन्हें रेडीमेड कपड़ों का

नया शोरूम खुलवाकर उसमें व्यस्त कर दिया। यह सुनकर ब्यावर (राज.) में अपने आर्यिका संघ सहित विराजमान पूज्य ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा पाकर संघस्थ ब्रह्मचारी मोतीचंद जी (वर्तमान में क्षुल्लक मोतीसागर हैं) ने टिकैतनगर जाकर इन्हें समझाया कि चलो, नये व्यापार के लिए माताजी का आशीर्वाद तो ले आओ। रवीन्द्र जी की इच्छा होते हुए भी नये व्यापार की जिम्मेदारी एवं पारिवारिक मोहपूर्ण दबाव के कारण उन्होंने जाने से मना कर दिया लेकिन मोतीचंद जी ने टिकैतनगर से वापस चलते-चलते भी पुरुषार्थ किया कि केवल दो दिन में वापस आ जाना.....आदि। उनके मार्मिक शब्दों ने बिना किसी तैयारी के भी रवीन्द्र जी को माताजी के पास पहुँचा दिया, फिर तो माताजी ने अपने चुम्बकीय उद्बोधन द्वारा उन्हें वैराग्य की घूंटी पिलाकर आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत लेने को राजी कर लिया और नागौर (राज.) में विराजमान पूज्य आचार्य श्री धर्मसागर महाराज के पास शीघ्र ही मोतीचंद जी के साथ रवीन्द्र जी को भेजकर आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत दिलवा दिया। उसके बाद भी यद्यपि कुछ दिन उन्होंने घर जाकर व्यापार संभाला किन्तु पुनः माताजी की प्रेरणा रही कि जब विवाह नहीं करना है तो व्यापार किसके लिए करना? अपना अमूल्य समय अब व्यर्थ मत व्यतीत करो, ज्ञानार्जन में ही जीवन की सार्थकता है..... आदि प्रेरणाओं ने रवीन्द्र जी को घर से निकालकर संघ में रहने में अहम् भूमिका निभाई और अवध प्रान्त के एकमात्र बालब्रह्मचारी नवयुवक के रूप में उस कर्मयोगी का नाम समस्त नवयुवकों के लिए उदाहरण स्वरूप बन गया।

इस जीवन्त कथानक में जितना श्रेय पूज्य ज्ञानमती माताजी को प्राप्त है, उससे कहीं अधिक पुरुषार्थ ब्र. मोतीचंद जी का सराहनीय रहा है, जिसे कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता है।

➢भारत की राजधानी दिल्ली में पदार्पण–

अजमेर चातुर्मास के पश्चात् पुनः आचार्य संघ से कुछ साधुओं ने अलग-अलग विहार किया। संघस्थ मुनि श्री सुपार्श्व सागर जी के निर्देशन में कुछ मुनियों का संघ सम्मेदशिखर, बुंदेलखण्ड आदि तीर्थों की यात्रा हेतु निकला एवं आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी अपने आर्यिका संघ के साथ पीसांगन (राज.) से आचार्यश्री की आज्ञा लेकर ब्यावर पधारीं। ब्यावर में दिल्ली के कुछ गणमान्य व्यक्ति पूज्य माताजी के पास दिल्ली की ओर मंगल विहार करने हेतु प्रार्थना करने आये।

सन् 1972 की महावीर जयंती के पश्चात् आर्यिका संघ का विहार दिल्ली की ओर हुआ। वैशाख, ज्येष्ठ मास की चिलचिलाती धूप में कभी-कभी 24-25 किमी. भी चलना पड़ता। आर्यिका श्री रत्नमती माताजी के जीवन में यह प्रथम पदयात्रा थी, वृद्धावस्था में इस लम्बे विहार के कारण उनके पैरों में सूजन आ गई अतः डोली की व्यवस्था भी की गई। पूज्य माताजी के इस प्रवास में लघुवयस्क दो मुनिराज (मुनि श्री संभवसागर एवं मुनि श्री वर्धमान सागर) भी थे जो कि प्रारंभ में माताजी के ही शिष्य रहे थे और माताजी की प्रेरणा से ही मुनि बने थे, वे दोनों सन् 1975 तक साथ में रहे।

➢पच्चीस सौवें निर्वाणोत्सव में सानिध्य–

ईसवी सन् 1974 में भगवान महावीर स्वामी का पच्चीस सौंवा निर्वाण महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया, जिसमें पूज्य आर्यिकाश्री की पावन प्रेरणा एवं अथक प्रयासों से दिल्लीवासी आचार्यश्री धर्मसागर महाराज के विशाल संघ को दिल्ली लाए। उस समय तक दिल्ली की जनता को भय था कि यहाँ इतने बड़े संघ का निर्वाह कैसे होगा? उन साधुओं को शूद्रजल त्याग करके आहार कौन देगा इत्यादि किन्तु माताजी ने यह कहकर वहाँ के शिष्टमंडल को आचार्यश्री के पास अलवर भेजा कि साधुओं के आहार की जिम्मेदारी मेरी है, तुम लोग तो मात्र उन्हें प्रार्थनापूर्वक दिल्ली तक ले आओ। आखिर हुआ भी यही, आचार्यश्री संघ सहित दिल्ली पधारे और पूरे शहर में अनगिनत चौके लगे, मानो वहाँ चतुर्थकाल का दृश्य उपस्थित हो गया था।

आर्यिकाश्री में संकल्प शक्ति अद्भुत है, वे जिस कार्य को भी हाथ में लेती हैं, उसे पूर्ण सफलता के साथ सम्पन्न करके दिखलाती हैं। इस प्रकार आचार्यश्री धर्मसागर महाराज के दिल्ली पधारने से पच्चीस सौंवे निर्वाणोत्सव में चार चाँद लगे, जिसका अन्तरंग श्रेय पूज्य माताजी को है। उस समय कई सामाजिक एवं शास्त्रीय विवादास्पद विषयों में आचार्यश्री इन्हीं आर्यिकाश्री से विचार-विमर्श कर समस्याओं का गंभीरतापूर्वक समाधान करते थे जो उनकी सिंहवृत्ति का परिचायक बना। आज दिल्ली और सम्पूर्ण पश्चिमी उत्तरप्रदेश ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत की जैन-जैनेतर समाज उनकी निस्पृहता, भोलेपन तथा सिंहवृत्ति को स्मरण करती है।

➢तीर्थक्षेत्र हस्तिनापुर का उद्धार–

हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र के वीरान जंगल ने आर्यिकाश्री को अपने संरक्षण हेतु पुकारा और उनकी पदरज पाकर हँसने मुस्कराने लगा। सन् 1974 में

चातुर्मास से पूर्व श्री ज्ञानमती माताजी अपनी एक शिष्या को लेकर हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र की यात्रा करने दिल्ली से निकलीं, साथ में ब्र. मोतीचंद जी थे। संयोगवश उन्हें यह तीर्थ पसंद आया और यहीं पर उन्होंने मोतीचंद जी द्वारा हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र कमेटी के महामंत्री बाबू सुकुमार चंद, मवाना के सेठ बूलचंद जी, लखमीचंद जी आदि महानुभावों के सहयोग से एक छोटी-सी भूमि का चयन कराया और सुमेरु पर्वत की नींव डलवाकर वे पुनः तीव्र गति से दिल्ली पहुँच गईं, जहाँ आचार्य संघ के साथ चातुर्मास सम्पन्न किया।

दिल्ली के इस ऐतिहासिक चातुर्मास के पश्चात् उन्होंने अपनी शिष्या कु. सुशीला को मगशिर कृ. 10 को आचार्यश्री से आर्यिका दीक्षा दिलाई जिनका नाम आर्यिका श्रुतमती जी रखा गया। जनवरी सन् 1975 में आपने अपने आर्यिका संघ सहित हस्तिनापुर की ओर विहार किया पुनः फरवरी में आचार्यश्री भी अपने चतुर्विध संघ सहित ज्ञानमती माताजी की प्रारंभिक कर्मभूमि के अवलोकनार्थ हस्तिनापुर पधारे। माताजी तथा समस्त संघ प्राचीन बड़े मंदिर तथा गुरुकुल परिसर में ठहरा।

आचार्य संघ का हस्तिनापुर में लगभग 4 माह का प्रवास रहा, इस मध्य तीर्थक्षेत्र के जल मंदिर, बाहुबलि मंदिर एवं जम्बूद्वीप स्थल पर विराजमान होने वाले कल्पवृक्ष भगवान महावीर स्वामी प्रतिमा की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई, जिसमें आचार्यश्री ने समस्त प्रतिमाओं को सूरिमंत्र प्रदान किए तथा द्वितीय महाकार्य संघस्थ मुनि श्री वृषभसागर महाराज की विधिवत् सल्लेखनापूर्वक समाधिमरण का हुआ। दोनों महायज्ञों में आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इन्हीं की प्रेरणा विशेष से सोलापुर (महा.) के प्रतिष्ठाचार्य पं. श्री वर्धमान जी शास्त्री ने समाज के आमंत्रण पर पधारकर आर्ष परम्परानुसार प्रतिष्ठा विधि सम्पन्न कराई।

➢अपनत्व भरी एक वार्ता–

आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज 9 अप्रैल 1975 को संघ सहित जब हस्तिनापुर से सहारनपुर की ओर विहार करने लगे, तो उन्होंने प्रवचन सभा में पूज्य ज्ञानमती माताजी को बड़े वात्सल्यपूर्वक सम्बोधित करते हुए कहा–

"माताजी! यहाँ आपके रुके बिना जम्बूद्वीप निर्माण का महान कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता है। तीर्थक्षेत्र पर अधिक दिन रुकने में कोई बाधा नहीं है अतः आप निर्विकल्प होकर हस्तिनापुर तीर्थ पर रहें। जम्बूद्वीप रचना शीघ्र पूर्ण होकर आपका मनोरथ सिद्ध होवे, यह मेरा आपको खूब-खूब आशीर्वाद है।"

आचार्यश्री की इस अपनत्व भरी वार्ता ने पूज्य माताजी को संबल प्रदान किया और उनके दृढ़ संकल्प का प्रतीक जम्बूद्वीप रचना आज संसार को अपना साकार रूप दर्शा रही है।

➢जल तें भिन्न कमल का अनुपम उदाहरण–

महापुरुष अपनी महानता का प्रचार करने हेतु किसी के द्वार पर नहीं जाते बल्कि महानता स्वयं ही उनके चरण चूम-चूमकर स्वयं को धन्य करती है। यही बात पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी के जीवन में चरितार्थ हुई है। उन्होंने गृहत्याग किया तो निज आत्मोद्धार के लिए, दीक्षा धारण की तो अपनी स्त्रीपर्याय का छेद करने के लिए, साहित्य सृजन किया तो निज आत्मा की पवित्रता और मन की एकाग्रता के लिए, शिष्यों का निर्माण किया तो अपने सम्यग्दर्शन के संवेग, अनुकम्पा आदि गुणों की वृद्धि हेतु तथा शिष्य को संसार समुद्र से पार करने के लिए एवं जम्बूद्वीप तथा कमल मंदिर आदि के निर्माण में प्रेरणा प्रदान की, तो अपने पिण्डस्थ ध्यान को साकार करने हेतु। उन्होंने आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी द्वारा कथित **'आदहिदं कादव्वं'** वाला सूत्र अपनाया, जिससे आत्महित के साथ-साथ परहित तो स्वयमेव ही हो रहा है।

आज हस्तिनापुर में आने वाले प्रत्येक तीर्थयात्रियों के मुँह से भक्ति के अतिरेक में यही निकल जाता है कि–

माताजी! आपने तो जंगल में मंगल कर दिया है, यहाँ की तो आपने काया ही पलट दी है, यहाँ आकर असीम शान्ति मिलती है जैसे मानों स्वर्ग में ही आ गये हों।

ज्ञानमती माताजी का उस समय मन्द मुस्कराहट मुद्रा में उत्तर होता है–

"अरे भाई! हम तो अकिंचन साधु हैं, न हमारे पास पैसा है न कौड़ी, ऐसी स्थिति में तुम अपने (समस्त जैन समाज के) द्वारा किये कार्य को मेरा क्यों कहते हो? हाँ! मैंने तो मात्र शास्त्रों में छिपी जम्बूद्वीप रचना का नक्शा बताया है, बाकी मेरा इसमें कुछ भी नहीं है।"

उनका यह आन्तरिक निस्पृहतापूर्वक दिया गया समाधान भक्तों को और भी अधिक अपनत्व भाव से भर देता है। तब वे समझने लगते हैं कि हाँ, सचमुच! यह जम्बूद्वीप तो हम सभी का है, हमने ही तो ज्ञानज्योति के माध्यम से अथवा यहाँ इसका साक्षात् निर्माण चलता देखकर सैकड़ों, हजारों, लाखों रुपये खर्च करके इसे बनाया है और पूज्य माताजी की दैवी प्रेरणा ने हमें संबल प्रदान किया है।

शत प्रतिशत सत्यता भी यही है कि गणिनी आर्यिका श्री जम्बूद्वीप की पावन प्रेरिका हैं निर्मात्री नहीं, क्योंकि उनके दैनिक जीवन का अर्धभाग तो साहित्य सृजन-लेखन में व्यतीत होता है, चौथाई भाग अपनी नित्य नैमित्तिक साधु क्रियाओं में और चौथाई भाग मजबूरीवश कमजोर शरीर के पालन में व्यतीत होता है, जिसका प्रत्यक्ष लाभ समाज को प्राप्त हो रहा है उनके वृहद् विधान, पूजन, अध्यात्म, सिद्धान्त, न्याय, कथा आदि साहित्य के द्वारा।

अभिवन्दनीय गणिनी माताजी के जीवन की यह व्यक्तिगत विशेषता देखी गई है कि हस्तिनापुर में करोड़ों रुपये के इस वृहद् निर्माण के पीछे उन्हें आज तक यह नहीं ज्ञात है कि कहाँ से? कैसे? कितना रुपया? किस निर्माण के लिए आया और खर्च हुआ है। पैसा छूने की बात तो बहुत दूर है, वे अपने समक्ष रुपयों की बात भी नहीं करने देती हैं।

संस्था तथा मूर्ति-मंदिर आदि के निर्माण की प्रेरणा देने वाले साधुओं की प्रायः आज का विद्वत् समाज आलोचना करता है किन्तु उनके लिए पूज्य माताजी का निस्पृह जीवन अवश्य ही अवलोकनीय है। उनका जीवन एक खुली पुस्तक के समान किसी भी समय नजदीकी से देखा जा सकता है। जैसा कि सन् 1975 में फ्रांस की एन. शान्ता नामक एक महिला, जैन साध्वियों पर रिसर्च करते समय पूज्य माताजी के पास हस्तिनापुर आकर लगभग 15-20 दिन रुकीं और 24 घण्टे उनके समीप रहकर आहार, विहार, धोती पहनना, सामायिक करना, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, शयन आदि सब कुछ सूक्ष्मतापूर्वक अवलोकन करती थी। यहाँ तक कि वह महिला माताजी के आहार के पश्चात् उन्हीं की थाली में परोसा गया बिना नमक, बिना घी, बिना मीठे का नीरस भोजन भी करती और कहती कि अनुभव किये बिना इनकी चर्या का वर्णन थिसिस में कैसे लिखा जा सकता है? इस साक्षात् अनुभव एवं अध्ययन के पश्चात् उस शोधकर्त्री ने UNKNOWN PILGRIMS (अज्ञात तीर्थयात्री) नाम से लिखित अपने शोधग्रंथ में दिगम्बर जैन साध्वी एवं पूज्य ज्ञानमती माताजी के विषय में अच्छा उल्लेख किया है। उनमें से कुछ पंक्तियाँ यहाँ भी दृष्टव्य हैं–

Mataji shuns publicity. She pursues her task ardently, living her life in accordance with the stricth obervance of the Digambaras, caring nothing for honours nor for making a name for herself. She is truly called 'Jnanamati' and Sramani, as being one for whom the daily acquisition, enlargement and deepening of knowledge is the supreme task and it is this knowledge that she spontaneously and ceaselessly

communicates to others, more by her life and her writings than by word of mouth. For her, knowing and teaching are one and the same thing.

Mataji has many interests and an openness of spirit, but she is totally gripped by and absorbed in the Digambara tradition and preeminently concerned to transmit it to others, which in itself is an enormous task. Within this tradition her particular interest is in those values which, just because they are truly spiritual, are also universal. However, the tradition through which these values are transmitted has become, during the course of the centuries, overloaded with certain subsidiary and sectarian practices and tendencies, furthermore, its close confinement within an, at time, fierce orthodoxy has often made it impenetrable, if not hostile, to other interpretations or to salutary changes. This fact Mataji does not always realise. She is even on occasion somewhat militant, in this sense that she is fully persuaded that the orthodox Digambara tradition is superior to others and that it maintains a rigorous fidelity to the teaching of the *tirthankaras*, which teaching, she believes, must be revitalised. This naturally leads to a certain critical and negative attitude towards the other sampradayas. Mataji's criticisms come from a sincere heart, one that is firmly determined to uphold what she believes to be the pure and original dharma, that men have gradually altered through their ignorance and cowardice. She considers, very reasonably, that the Scriptures and the works of the first acaryas are still available to recall us to the right path. So let us study them, she argues, and come out of our century old ignorance. And Mataji devotes all her energies to enlightening her disciples, the sravakas, sravikas and whoever comes to meet her. (पृष्ठ नं. 678-682-683)

पूज्य माताजी का यह विशेष पुण्य ही मानना होगा कि ब्र.मोतीचंद जी (वर्तमान क्षुल्लक मोतीसागर जी) एवं ब्र. रवीन्द्र जी इन्हें पुष्पदन्त और भूतबली के समान ऐसे सुयोग्य शिष्य मिले, जिन्होंने माताजी को कभी निर्माण तथा रुपये संबंधी सिर दर्द ही नहीं होने दी। वास्तव में संयम साधना के क्षेत्र में योग्य शिष्यों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहता है। दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की पूरी कमेटी इस बात से परिचित है कि **''ज्ञानमती माताजी सचमुच जल तें भिन्न कमल''** का अद्वितीय उदाहरण हैं।

वर्तमान में साधु समाज में व्याप्त कुछ शिथिलाचारों को देखकर लोग सभी साधुओं को एक कोटि में लेकर निंदा शुरू कर देते हैं किन्तु मैं अपने अनुभव और तर्क के आधार पर गौरवपूर्वक कह सकती हूँ कि आज सर्वथा शिथिलाचारी साधु नहीं हैं, सूक्ष्मता एवं सामीप्य से देखने पर 75 प्रतिशत शुद्ध परम्परा मिल सकती है, इसमें कोई संदेह नहीं है। खैर! पर के द्वारा प्रमाणित अथवा अप्रमाणित मान लिए जाने पर सच्चे साधु की आत्मसाधना पर कोई असर नहीं पड़ता, वह तो मुक्तिमार्ग का पथिक होने के नाते अपना आत्म शोधन करता है, यही शोधन कार्य मोक्षप्राप्ति में उसे सहायक होता है। इस कलियुग में पूज्य ज्ञानमती माताजी को यदि **ब्राह्मी माताजी का अवतार** कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

➢पंचकल्याणकों में पावन सानिध्य–

यूँ तो अपने दीर्घकालीन दीक्षित जीवन में आर्यिकाश्री ने अनेक स्थानों पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठाओं में अपना सानिध्य प्रदान किया है किन्तु त्रिलोक शोध संस्थान को जम्बूद्वीप परिसर के अनेक पंचकल्याणकों में उनका मंगल सानिध्य प्राप्त करने का सौभाग्य मिल चुका है–

1. फरवरी सन् 1975 भगवान महावीर स्वामी की प्रतिष्ठा (कमल मंदिर)
2. मई सन् 1979 सुदर्शन मेरु पंचकल्याणक प्रतिष्ठा
3. मई सन् 1985 श्री जम्बूद्वीप जिनबिम्ब प्रतिष्ठापना महोत्सव
4. मार्च सन् 1987 श्री पार्श्वनाथ पंचकल्याणक महोत्सव
5. मई सन् 1990 जम्बूद्वीप महोत्सव

इसके अतिरिक्त मार्च सन् 1992, अप्रैल 1992, सन् 2000 एवं सन् 2005 में ऐसी चार लघु पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं भी आपके सानिध्य में जम्बूद्वीप स्थल पर सम्पन्न हो चुकी हैं।

इसके अतिरिक्त सन् 2000 में दिल्ली में त्रिकाल चौबीसी की 72 रत्न प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई पुनः सन् 2002 और सन् 2003 में आपके प्रयाग एवं कुण्डलपुर प्रवास के मध्य दो पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ हस्तिनापुर में सम्पन्न हुईं जिसमें पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज का सानिध्य प्राप्त हुआ।

➢चातुर्मास कहाँ-कहाँ–

सन् 1952 में गृहपरित्याग के बाद लगभग 4-5 माह तक तो ब्रह्मचारिणी अवस्था में कु. मैना ने बिताया चूँकि उस समय काफी संघर्ष एवं सामाजिक

विरोधों के कारण वे दीक्षा न ले सकी थीं पुनः उचित अवसर पाते ही सन् 1953 में चैत्र कृ. एकम् को उन्होंने क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की तथा सन् 1956 में वैशाख कृ. दूज को आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर देश के विभिन्न अंचलों में पदयात्रा करते हुए खूब धर्मप्रभावना की एवं अद्यावधि कर रही हैं। उनके अब तक (सन् 1953 से 2005 तक) 53 चातुर्मास निम्न स्थानों पर सम्पन्न हो चुके हैं–

क्रम	स्थान	ईसवी सन्
1.	टिकैतनगर (उ.प्र.) (क्षुल्लिका अवस्था में)	1953
2.	जयपुर (राज.) (क्षुल्लिका अवस्था में)	1954
3.	म्हसवड़ (महा.) (क्षुल्लिका अवस्था में)	1955
4.	जयपुर खानिया (आर्यिका अवस्था से आगे के 50 चातुर्मास)	1956
5.	जयपुर खानिया	1957
6.	ब्यावर (राज.)	1958
7.	अजमेर (राज.)	1959
8.	सुजानगढ़ (राज.)	1960
9.	सीकर (राज.)	1961
10.	लाडनूं (राज.)	1962
11.	कलकत्ता (प. बंगाल)	1963
12.	हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)	1964
13.	श्रवणबेलगोला (कर्नाटक)	1965
14.	सोलापुर (महा.)	1966
15.	सनावद (म.प्र.)	1967
16.	प्रतापगढ़ (राज.)	1968
17.	जयपुर (राज.)	1969
18.	टोंक (राज.)	1970
19.	अजमेर (राज.)	1971
20.	दिल्ली (पहाड़ी धीरज)	1972
21.	दिल्ली (नजफगढ़)	1973
22.	दिल्ली (लाल मंदिर)	1974
23.	हस्तिनापुर (बड़ा मंदिर)	1975

24.	खतौली (उ.प्र.)	1976
25.	हस्तिनापुर (बड़ा मंदिर)	1977
26.	हस्तिनापुर (बड़ा मंदिर)	1978
27.	दिल्ली (मोरीगेट)	1979
28.	दिल्ली (कम्मो जी की धर्मशाला)	1980
29.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1981
30.	दिल्ली (कूचा सेठ)	1982
31.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1983
32.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1984
33.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1985
34.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1986
35.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1987
36.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1988
37.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1989
38.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1990
39.	सरधना (मेरठ) उ.प्र.	1991
40.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1992
41.	अयोध्या	1993
42.	टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.	1994
43.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1995
44.	मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र (महा.)	1996
45.	दिल्ली-चाँदनी चौक	1997
46.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	1998
47.	राजाबाजार, कनॉट प्लेस (दिल्ली)	1999
48.	दिल्ली-प्रीतविहार	2000
49.	दिल्ली-अशोकविहार	2001
50.	ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग तीर्थ (इलाहाबाद)	2002
51.	कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार)	2003
52.	कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार)	2004
53.	हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप स्थल)	2005

इनमें से प्रत्येक चातुर्मासों में शिविर, सेमिनार, मंडल विधान आदि

अनेक अविस्मरणीय प्रभावनात्मक वृहद् कार्य सम्पन्न हुए हैं।

➢व्यक्तित्व से कृतित्व की ओर–

दीक्षा लेने के बाद शिष्यों का संग्रह, ज्ञान, ध्यान आदि तो प्रायः समस्त साधुओं का लक्ष्य होता है किन्तु ज्ञानमती माताजी ने इन कार्यों के साथ-साथ कुछ ऐसे अविस्मरणीय कार्य किए हैं जिनके द्वारा युग-युग तक उनका नाम इतिहास पटल पर अंकित रहेगा।

1. साहित्य रचना का शुभारंभ करके कठिन से कठिन और सरल से सरल ग्रंथों का निर्माण किया। आपके द्वारा रचित ग्रंथों की संख्या दो सौ से भी अधिक है जिनमें से लगभग दो सौ ग्रंथ लाखों की संख्या में दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर में स्थापित वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला से प्रकाशित भी हो चुके हैं।

2. करणानुयोग साहित्य में वर्णित जम्बूद्वीप रचना को पृथ्वी पर मूर्तरूप देने की प्रेरणा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से निर्माण के क्षेत्र में सदैव अविस्मरणीय रहेगी। जिस प्रकार आचार्यश्री शान्तिसागर जी महाराज की प्रेरणा से कुंथलगिरि और कुम्भोज बाहुबली तीर्थ का उद्धार हुआ है, उसी प्रकार तीर्थ निर्माण के क्षेत्र में आपका भी भरपूर योगदान है। हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना, प्रयाग में दीक्षास्थली तीर्थ का निर्माण, कुण्डलपुर (नालंदा) में भव्य तीर्थ का निर्माण, अयोध्या तीर्थ का विकास, मांगीतुंगी तीर्थ का विकास एवं वहाँ पर्वत पर भगवान ऋषभदेव की 108 फुट उत्तुंग ऋषभदेव प्रतिमा निर्माण की प्रेरणा आदि कार्य आपके ही विराट व्यक्तित्व के द्वारा सम्पन्न हो सके हैं।

3. प्राचीन साहित्य एवं भगवान महावीर के सिद्धान्तों को राष्ट्रीय स्तर पर प्रसारित करने का शुभ संकल्प पूरा करके नारी जाति का सम्मान बढ़ाया। जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति रथ का प्रवर्तन 4 जून 1982 को भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आपकी प्रेरणा से ही किया था, जिसके माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जम्बूद्वीप रचना को ख्याति प्राप्त हो सकी है।

4. शिक्षा के क्षेत्र में आपने सम्पूर्ण जैन समाज में अपना कीर्तिमान स्थापित किया है। आपकी प्रेरणा से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान ने छोटे-बड़े प्रादेशिक, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शिविर-सेमिनारों के आयोजन भी सम्पन्न किए हैं।

5. भक्ति-संगीत के क्षेत्र में तो आपने एक नई मिशाल ही कायम करके दिखाई है। इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, तीनलोक, सर्वतोभद्र, सिद्धचक्र, विश्वशांति

महावीर विधान आदि वृहद् पूजन विधानों की रचना करके आपने जैन समाज के ऊपर महान उपकार किया है। आज से 20-25 वर्ष पूर्व तो एक सिद्धचक्र विधान का ही लोग यदा-कदा अनुष्ठान कर लिया करते थे किन्तु जब से पूज्य ज्ञानमती माताजी ने इन विधानों को रचा है, तब से भारत भर में लगभग प्रतिदिन विधानों का तांता सा लगा रहता है, जिसके माध्यम से जैन समाज के हजारों लोग धार्मिक अनुष्ठानों को करते रहते हैं। स्वयं गायन-वादन कला के आस्वाद से रहित होते हुए भी छन्दशास्त्र का तलस्पर्शी अध्ययन आपकी कवित्व शक्ति का परिचय देता है। एक-एक विधानों में लगभग 70-80 छंदों का प्रयोग करके चतुरनुयोग रूप जिनवाणी को ही उनमें निबद्ध कर दिया है। जब किसी नगर या शहर में इन विधानों की संगीतमयी ध्वनि मुखरित होती है, तब उस समय अच्छे-अच्छे नास्तिकों के कदम भी उसी ओर बढ़ने लग जाते हैं, न जाने कितने सुप्त हृदय जागृत हो जाते हैं।

➢माताजी की तपोभूमि हस्तिनापुर का संक्षिप्त ऐतिहासिक वर्णन–

आज से कोड़ाकोड़ी वर्षों पूर्व तृतीय काल में इन्द्र की आज्ञा से धनपति कुबेर ने तीर्थंकर आदि त्रेसठ शलाका महापुरुषों के लिए अयोध्या, सम्मेदशिखर, कुण्डलपुर, पावापुर, उज्जयिनी, हस्तिनापुर आदि नगरियों की रचना की थी। अनादिकालीन परम्परा के अनुसार अयोध्या हमेशा ही तीर्थंकरों की जन्मभूमि रही है और सम्मेदशिखर निर्वाणभूमि रही है किन्तु वर्तमान में हुण्डावसर्पिणी काल के प्रभाव से कुछ तीर्थंकरों ने अन्यत्र जन्म लिया और मोक्ष भी अन्य क्षेत्रों से प्राप्त किया। यही कारण है कि हस्तिनापुर की पुण्यभूमि को भी तीर्थंकर की जननी होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरहनाथ इन तीर्थंकरत्रय ने जन्म लेकर इसी भूमि पर एकछत्र राज्य किया, ये तीनों ही चक्रवर्ती और कामदेव पद के धारी हुए। हस्तिनापुर इनकी राजधानी थी। चक्रवर्ती का वैभव भोगकर पुनः उसका त्याग कर जैनेश्वरी दीक्षा लेकर घाति-अघाति कर्मों का नाश करके सम्मेदशिखर पर्वत से निर्वाण प्राप्त किया।

इससे भी पूर्व प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव भी वर्षोपवास के अनंतर हस्तिनापुर नगरी में आहार चर्या के लिए आए थे, राजा श्रेयांस और सोमप्रभ ने अपने पूर्वभव के जातिस्मरण हो जाने से उन्हें विधिवत् नवधाभक्तिपूर्वक पड़गाहन कर इक्षुरस का आहार दिया। आज भी वह पवित्र दिवस अक्षयतृतीया के नाम से जगप्रसिद्ध है। हस्तिनापुर और उसके चारों ओर आज भी इक्षु (गन्ने)

की सघन खेती देखी जाती है, जिससे यहाँ पर आने वाले हर यात्री का मुँह अनायास ही मीठा हो जाता है।

इस प्रकार अयोध्या के समान ही हस्तिनापुर की भी प्राचीनता सिद्ध हो जाती है। हाँ! काल प्रभाव से ये नगरियाँ अब छोटी हो गई हैं। इनके आसपास का बहुभाग पर्वत, नदी तथा अन्य प्रदेशों में विभक्त हो गया है। यहीं पर अकंपनाचार्य आदि सात सौ मुनियों पर राजा बलि ने उपसर्ग किया था। विष्णुकुमार मुनि ने उपसर्ग का निवारण कर रक्षाबंधन पर्व का शुभारंभ किया जिसे आज भी लोग श्रावण शुक्ला पूर्णिमा के दिन परस्पर में रक्षासूत्र बांधकर मनाते हैं, अभिनंदन आदि पाँच सौ मुनियों को राजा की आज्ञा से यहीं पर घानी में पेला गया था, सेमल की रुई गुरुदत्त मुनि के शरीर में लपेटकर भयंकर अग्नि का उपसर्ग हुआ। इस प्रकार अनेकों इतिहास यहाँ से जुड़े हुए होने से यह क्षेत्र ऐतिहासिक तीर्थक्षेत्र माना जाता है।

होनहार की बात होती है। कोड़ाकोड़ी वर्षों पूर्व जिस सुदर्शन मेरु पर्वत को हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस ने अपने स्वप्न में देखा था, उसे साकार करने का श्रेय पूज्य आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी को मिला।

➢दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना–

आर्यिका संघ का मंगल पदार्पण आषाढ़ शु.11 को दिल्ली के पहाड़ी धीरज पर हुआ और सन् 1972 का चातुर्मास पहाड़ी धीरज की ''नन्हेंमल घमण्डीलाल जैन धर्मशाला'' में सम्पन्न हुआ। दिल्ली में आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का यह प्रथम चातुर्मास अपने आप में ऐतिहासिक रहा क्योंकि **''दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान''** की स्थापना सन् 1972 में ही पहाड़ी धीरज पर हुई, जिसके माध्यम से आज देश-विदेश में विस्तृत धर्म प्रभावना हो रही है। हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण, ग्रंथों का प्रकाशन, सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका का प्रकाशन, पूरे देश में शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों एवं राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सेमिनारों के आयोजन, भगवान ऋषभदेव की दीक्षाभूमि प्रयाग में तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली तीर्थ का निर्माण, भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में नंद्यावर्त महल नाम से तीर्थ का निर्माण, अयोध्या, मांगीतुंगी आदि तीर्थों के विकास आदि विभिन्न कार्य इसी रजिस्टर्ड संस्थान द्वारा हस्तिनापुर कार्यालय से संचालित किए जाते हैं।

➢हस्तिनापुर तीर्थ विकास का प्रथम चरण–

यहाँ यह बता देना उचित होगा कि सन् 1972 में दिल्ली पहाड़ी धीरज पर

डॉ. कैलाशचंद जी, लाला श्यामलाल जी, वैद्य शान्तिप्रसाद जी, कैलाशचंद जी करोलबाग आदि महानुभावों के सहयोग से एक संस्था की स्थापना की गई थी, जिसका नाम ''दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान'' रखा गया। उसी संस्थान के नाम से हस्तिनापुर की प्रारंभिक भूमि क्रय की गई।

पूज्य माताजी ने पुनः सन् 1974 में हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र की ओर विहार किया।

पूज्य माताजी के पास फिलहाल उस समय ब्र. मोतीचन्द के सिवाय कोई पुरुषार्थी शिष्य नहीं था। रवीन्द्र जी भी उस समय घर गए हुए थे। अब मोतीचंद जी के साथ मेरठ के श्रेष्ठी बाबू सुकुमारचंद जी व मवाना के सेठ बूलचंद जी, लक्ष्मीचंद जी आदि लोगों का सहयोग मिलने लगा। पूज्य माताजी के आशीर्वाद और लगन का फल रहा कि हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र पर ही मंदिर से आधा फर्लांग दूर नसिया मार्ग पर उस भूमि के केन्द्र बिन्दु से बीचोंबीच में सुदर्शन मेरु पर्वत का जुलाई 1974 में शिलान्यास करवाकर माताजी निर्वाणोत्सव के निमित्त से पुनः दिल्ली विहार कर गईं। तब तक आचार्य धर्मसागर जी महाराज का संघ भी दिल्ली पदार्पण कर चुका था। आचार्यसंघ के साथ ही माताजी ने भी दिल्ली के लाल मंदिर में चातुर्मास स्थापना की। विभिन्न आचार्य और मुनियों के सानिध्य में राजधानी में चारों सम्प्रदायों की ओर से भगवान महावीर 2500वाँ निर्वाण महोत्सव राजनेताओं के सहयोग से आशातीत सफलताओं के साथ सम्पन्न हुआ। पूज्य ऐलाचार्य श्री विद्यानन्दि महाराज कई विषयों में माताजी से परामर्श करते-करते अक्सर कहते कि माताजी! हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र पर इस रचना की महत्ता अत्यधिक बढ़ेगी। सौभाग्य से आचार्यश्री धर्मसागर जी का संघ और एलाचार्य विद्यानन्दि जी महाराज भी फरवरी 1975 में हस्तिनापुर पधारे और बड़ी रुचिपूर्वक रचना स्थल पर भगवान महावीर प्रतिमा की स्थापना होते समय आचार्यश्री ने प्रतिमा के नीचे अचलयन्त्र स्थापित किया। वह छोटा सा महावीर मंदिर जम्बूद्वीप रचना की चउँमुखी उन्नति में अनुपम प्रभावशाली सिद्ध हुआ। आचार्य श्री धर्मसागर जी का संघ हस्तिनापुर में लगभग 4 महीने रहा। सरधना के निवासियों ने उस समय बड़ी तत्परता से वैयावृत्ति और चौके लगाकर आहार दान का लाभ लिया। आचार्यश्री जब हस्तिनापुर से मंगल विहार करने लगे, उस समय माताजी को आशीर्वाद प्रदान करके जम्बूद्वीप रचना के निमित्त हस्तिनापुर में ही रहने की प्रेरणा दी। अब माताजी के संघ में आर्यिका श्री रत्नमती माताजी रहीं। आर्यिका रत्नमती

माताजी और ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणियों सहित माताजी तीर्थक्षेत्र के बड़े मंदिर में रहती थीं। ब्र. मोतीचन्द जी, ब्र. रवीन्द्र कुमार जी, जो इस रचना के कर्ताधर्ता और नींव थे, वे लोग मंदिर बाउण्ड्री के बाहर कमरे में रहते और माताजी तथा संघस्थ हम सभी ब्रह्मचारिणियाँ मंदिर के कमरों में रहते थे। मंदिर से जम्बूद्वीप स्थल तक जाने में घने जंगल के कारण भय प्रतीत होता था। हम लोग भी कभी अकेले यहाँ तक आने की हिम्मत नहीं कर पाते थे। माताजी के साथ लगभग प्रतिदिन या एक-दो दिन बाद आते थे। जम्बूद्वीप स्थल पर मात्र एक चौकीदार का परिवार रहता था। ऑफिस के मैनेजर के रहने के लिए स्थल पर अभी तक कोई निर्माण नहीं हो सकने के कारण वे भी बड़े मंदिर में ही बाहर के एक कमरे में रहते थे। बाबू सुकुमारचंद जी संघ का विशेष ध्यान रखते और आवश्यकतानुसार सारी सुविधाएँ भी प्रदान करते थे। उनकी ध.प. प्रतिमाधारी व्रतिक महिला थीं वे जब भी हस्तिनापुर आतीं, हमेशा आहारदान तथा वैयावृत्ति के भावों से माताजी की सेवा करतीं। कभी स्वयं अपना चौका लगातीं और कभी संघ के चौके में आकर आहार देतीं।

पूज्य माताजी के निमित्त से अब हस्तिनापुर में राजस्थान, कर्नाटक, गुजरात, आसाम और उत्तरप्रदेश सभी ओर से लोग आने लगे। पिछड़ा और विस्मृत क्षेत्र अब प्रकाश में आने लगा। तीर्थक्षेत्र कमेटी के सभी पदाधिकारी एवं सदस्य बड़े प्रसन्न होते और कहते कि माताजी! आपके निमित्त से हमारा हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र अवश्य ही शीघ्र टूरिस्ट सेण्टर बन जाएगा। इस क्षेत्र के मंदिर में दान की रकम तो हमारी बढ़ती जा रही है, आपका जम्बूद्वीप बन जाने पर तो विदेशी पर्यटकों का भी यहाँ पर आना जाना रहेगा और तब यह जैन भूगोल के अनुसंधान का विशेष केन्द्र बन जाएगा। बाहर से आने वाले हर दर्शनार्थी के मुँह से भी यही सुना जाता कि हम लोग मेरठ-सरधना तक तो हमेशा व्यापारिक निमित्त से आते रहते थे लेकिन हस्तिनापुर के दर्शन कभी नहीं किए थे। ज्ञानमती माताजी के दर्शन से हमें दोहरा लाभ प्राप्त हो रहा है, यह खुशी की बात है। माताजी ने कभी भी किसी से जम्बूद्वीप रचना तथा अन्य किसी निर्माण आदि के लिए पैसे की बात नहीं कही। चूँकि माताजी भी बड़े मंदिर में ही रहती थीं अतः हर यात्री वहीं पर दान की रकम देते थे और अपनी इच्छानुसार जम्बूद्वीप में भी दान देते। जम्बूद्वीप स्थल पर सुमेरुपर्वत का निर्माणकार्य यथाशक्ति चल रहा था। यहाँ पर एक ऑफिस की अत्यन्त आवश्यकता महसूस हो रही थी, जिससे निर्माण की गतिविधि सुचारूरूप से

चल सके।

सन् 1975 में ऑफिस की नींव रखी गई, कुछ दिनों में वह तैयार हो गया। तब से लेकर आज तक उसी कार्यालय की गतिविधियों से छोटे-बड़े समस्त आयोजन सफल हो रहे हैं। संस्थान के मैनेजर कार्यालय में बैठते और दोनों संघस्थ ब्रह्मचारी (मोतीचन्द और रवीन्द्र कुमार) सुबह से शाम तक स्थल पर निर्माण आदि की कार्यवाही देखते और रात को सोने के लिए बड़े मंदिर में ही जाते। मैं प्रातःकाल पूज्य माताजी के साथ ही बड़े मंदिर से पूजन सामग्री और बाल्टी में शुद्ध जल तथा मंदिर की चाभी लेकर जम्बूद्वीप स्थल पर आती क्योंकि हम सभी लोग भगवान महावीर के मंदिर में ही अभिषेक-पूजन करते थे। माताजी को शुरू से ही धार्मिक अनुष्ठानों, विधि-विधानों में अधिक रुचि रही है, उसी के अनुसार हम लोगों से भी सिद्धचक्र, गणधरवलय, शान्तिविधान, ऋषिमण्डल आदि अनेक विधान करवाए।

माताजी स्वयं भी लाखों मंत्रों का जाप्य किया करती थीं, मैं समझती हूँ कि उनकी तपस्या एवं मंत्रों का ही प्रभाव है कि त्रिलोक शोध संस्थान के प्रत्येक कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हुए हैं।

जम्बूद्वीप स्थल पर सुमेरु पर्वत का कार्य द्रुतगति से चल रहा था। दिल्ली के इंजीनियर श्री के.सी. जैन, के.पी. जैन, एस.एस. गोयल तथा रुड़की के प्रसिद्ध इंजीनियर श्री डॉ. ओ.पी. जैन की विशेष सलाह लेकर 101 फुट ऊँचे सुमेरुपर्वत का निर्माण हुआ। जिसमें नीचे से ऊपर तक 136 सीढ़ियाँ बनाई गईं। गुलाबी संगमरमर पत्थर से बना हुआ सुमेरु पर्वत भक्तों के लिए विशेष आकर्षण का केन्द्र है। इसमें 16 जिनप्रतिमाएँ हैं जो अकृत्रिम बिम्बों के समान ही वीतरागी छवि से युक्त हैं। यह एक अनुभवगम्य विषय है कि जो भी दर्शक इन प्रतिमाओं के समक्ष नजदीकी से जाकर दर्शन कर आत्मावलोकन करते हैं, उन्हें अभूतपूर्व शान्ति प्राप्त होती है। ज्ञानमती माताजी इस पर्वत के ऊपर पांडुकवन में जाकर बहुधा घण्टों ध्यान किया करती थीं। आज भी यदा-कदा करती हैं। प्रातः, मध्याह्न और सायं तीनों समय यह पर्वत रंग बदलता हुआ सा प्रतीत होता है। पूर्व दिशा के उगते सूर्य की लालिमा जब सुमेरु पर्वत पर पड़ती है, तब उसकी आभा केशरिया रंग से युक्त हो जाती है। सामने भद्रसाल वन की प्रतिमा का दर्शन करते हुए पीछे सूर्य का बिम्ब चमकते भामण्डल जैसा प्रतीत होता है। मध्याह्न 11 बजे के अनन्तर तप्तायमान सूर्य की किरणें उस पूरे पर्वत को स्वर्णिम रूप में परिवर्तित कर देती हैं पुनः संध्याकाल में विशेषरूप

से शुक्लपक्ष की चाँदनी रात्रि में धवल दुग्ध के समान चन्द्रमा की शीतल किरणें अभिषेक करती हुई प्रतीत होती हैं यह कोई अतिशयोक्ति नहीं बल्कि सुमेरुपर्वत में विराजमान स्वयंसिद्ध प्रतिमाओं का अतिशय ही इसे चमत्कृत कर रहा है।

➢सूर्योदय और सूर्यास्त के मनोरम दृश्य–

सुमेरु पर्वत में ऊपर पाण्डुकवन में चढ़ने पर प्रातः सूर्य के उदय का और शाम को अस्ताचल की ओर जाते हुए सूर्य बिम्ब का दर्शन बड़ा सुन्दर लगता है। अन्य पर्वतीय क्षेत्रों की भांति इसका भी विशेष महत्त्व प्रदर्शित किया जा सकता था किन्तु हस्तिनापुर में इस विषय का प्रचार इसलिए नहीं किया गया कि ऊपर चढ़ते हुए स्थान अत्यन्त संकुचित रह गया है, जहाँ अधिक लोग एक साथ न चढ़ सकते हैं और न वहाँ बैठने की ही पर्याप्त जगह है वर्ना यह जम्बूद्वीप माउण्ट आबू जैसी ख्याति को प्राप्त हो सकता था। ख्याति तो यूँ भी बहुत है, इस रम्य क्षेत्र में लोग जम्बूद्वीप के दर्शन करने प्रातः 5 बजे से ही आने प्रारंभ हो जाते हैं। मध्याह्न की कड़कड़ाती धूप में भी सतत सुमेरु पर्वत पर यात्रियों का आवागमन चला करता है, रात्रि होते-होते भी यात्रियों के दिल में दर्शन की एवं सुमेरु पर चढ़ने की जिज्ञासा बनी रहती है किन्तु व्यवस्था की दृष्टि से अंधकार होने से पूर्व ही जम्बूद्वीप के दरवाजे बंद कर दिए जाते हैं।

➢सुदर्शन मेरु पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव–

उपरोक्त वर्णित सुमेरु पर्वत का निर्माण सन् 1979 में हुआ पुनः उसका पंचकल्याणक महोत्सव भी 29 अप्रैल से 3 मई 1979 तक सम्पन्न हुआ था। इस महोत्सव से पूर्व ज्ञानमती माताजी अपने संघ सहित दिल्ली में धर्मप्रभावना कर रही थीं। संस्थान के कार्यकर्ताओं ने पूज्य माताजी से महोत्सव में पधारने का आग्रह किया, उस समय प्रथम बार माताजी के संघ को जम्बूद्वीप स्थल पर ही ठहराया गया।

➢स्थल पर फ्लैट का प्रथम निर्माण–

सन् 1978 में हस्तिनापुर में पूज्य आचार्यकल्प श्री श्रुतसागर जी महाराज पधारे, उसी समय दिल्ली से श्री उम्मेदमल जी पाण्ड्या सपरिवार दर्शनार्थ आए थे। महाराज श्री ने यहाँ पर स्थानाभाव देखकर पाण्ड्या जी को प्रेरणा दी। उनकी प्रेरणानुसार दो कमरे, बाथरूम, लैट्रीन, रसोई, स्टोर सहित फ्लैट का निर्माण हुआ। धीरे-धीरे और प्रगति हुई, दानियों की भावनाएँ हुईं अतः इन्हीं फ्लैट के ऊपर 2-3 कमरे बनाए गए। सुदर्शन मेरु प्रतिष्ठा महोत्सव का समय

नजदीक आ रहा था। माताजी के संघ का आगमन होने वाला था। संघ को ठहराने के लिए इन्हीं फ्लैट के सामने फूस की 2-3 झोपड़ियाँ बनाई गईं, उन्हीं में माताजी को ठहराया गया। प्रतिष्ठा के 2-4 दिन पूर्व उम्मेदमल पाण्ड्या महोत्सव की व्यवस्था देखने हेतु हस्तिनापुर आये और उन्होंने माताजी को आग्रहपूर्वक फ्लैट में ठहराया, स्वयं वे टेण्टों में ठहरे, यह उनकी गुरुभक्ति का नमूना था।

सुदर्शन मेरु जिनबिम्ब पंचकल्याणक महोत्सव के कार्यक्रम प्रारंभ हुए। इसी सुअवसर पर पूज्य मुनि श्री श्रेयांससागर जी महाराज, जो 10 जून सन् 1990 को चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज की परम्परा के पंचम पट्टाचार्य बने, अपने संघ सहित पधारे। उन्हीं के करकमलों से समस्त प्रतिमाओं को सूरिमंत्र प्रदान किए गए। मुनिश्री के साथ में आर्यिका अरहमती माताजी और श्रेयांसमती माताजी थीं (जो क्रम से उनकी गृहस्थावस्था की माँ और पत्नी थीं) पूज्य ज्ञानमती माताजी के साथ आर्यिका श्री रत्नमती माताजी थीं। यह तो सर्वविदित ही है कि आर्यिका रत्नमती जी ज्ञानमती माताजी की जन्मदात्री माँ हैं जो स्वयं ज्ञानमती माताजी का शिष्यत्व स्वीकार करके रत्नत्रय साधना की ओर अग्रसर थीं। पूज्य रत्नमती माताजी ने अपनी शारीरिक अस्वस्थता के कारण जम्बूद्वीप रचना के निमित्त हस्तिनापुर में सर्दी, गर्मी, मच्छर आदि अनेकों कष्टों को सहन करके सदैव माताजी को सहयोग दिया, तभी निर्विघ्नरूप से जम्बूद्वीप का सफलतापूर्वक निर्माण हो सका।

भारत की समस्त जैनसमाज एवं महोत्सव समिति के सफल संयोजन में यह प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ। प्रतिष्ठाचार्य ब्र. सूरजमल जी ने तन्मयता के साथ महोत्सव कराया। इस प्रतिष्ठा में भगवान शांतिनाथ जी विधिनायक थे, जिनके माता-पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ कटक निवासी सेठ श्री पूषराज जी एवं उनकी धर्मपत्नी को।

➢सर्वोत्तम दर्शनीय पैड़–

इस महोत्सव में सर्वाधिक आकर्षण का केन्द्र वह पैड़ बनी, जिसके द्वारा 101 फुट ऊँचे सुमेरु पर्वत के ऊपर पांडुक वन में जाकर भगवान का जन्माभिषेक किया गया। यह पैड़ लोहे के पाइपों से दिल्ली निवासी श्री नरेश कुमार जैन बंसल ने अथक परिश्रम के द्वारा बनवाई। इस पैड़ को देखने के लिए हजारों नरनारी प्रतिदिन आते और ऊपर चढ़कर भगवान का अभिषेक करके आनंदित होते थे। 30 अप्रैल 1979 को भगवान शांतिनाथ का जन्माभिषेक महोत्सव

इसी मेरु की पांडुक शिला पर सौधर्मादि इन्द्रों द्वारा किया गया था। वह मनोरम दृश्य साक्षात् अकृत्रिम मेरु पर चढ़ते हुए इन्द्र परिकर का सा आनन्द उपस्थित कर रहा था।

इस प्रकार से विविध आयोजनों के साथ प्रतिष्ठा महोत्सव का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। 3 मई 1979 को 16 जिनबिम्ब सुदर्शन मेरु के भद्रसाल, नन्दन, सौमनस और पांडुक वनों में विराजमान हो गए, जिसके फलस्वरूप जीवन्त मेरु पर्वत अप्रतिम प्रतिभा का धनी हो गया और मानवमात्र के मनोरथ सिद्ध करने लगा।

इसके पश्चात् तो जम्बूद्वीप स्थल पर मई सन् 1985 में **'जम्बूद्वीप जिनबिम्ब प्रतिष्ठापना महोत्सव'** विशाल स्तर पर हुआ, जिसमें देश भर से लाखों यात्रियों ने हस्तिनापुर पधारकर जम्बूद्वीप रचना के दर्शन किये। परमपूज्य आचार्यश्री धर्मसागर जी महाराज के संघस्थ साधुगण इस महामहोत्सव में पधारे पुनः मार्च सन् 1987 में **''श्री पार्श्वनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं ब्र. श्री मोतीचंद जी की क्षुल्लक दीक्षा** सम्पन्न हुई। इस महोत्सव में परमपूज्य आचार्यरत्न श्री विमलसागर जी महाराज का ससंघ पदार्पण हुआ। इसके बाद मई सन् 1990 में **श्री महावीर जिन पंचकल्याणक महोत्सव''** हुआ। यह मेला **''जम्बूद्वीप महामहोत्सव''** के नाम से आयोजित किया गया था। पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के निर्देशानुसार प्रत्येक पांच वर्षों के बाद यह **''जम्बूद्वीप महामहोत्सव''** व्यापक स्तर पर मनाया जाता है और आगे भी मनाया जाता रहेगा। इसी शृंखला में सन् 1990, 1995, 2000 और 2005 के चार महामहोत्सव सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए हैं तथा पूज्य माताजी के सानिध्य में जम्बूद्वीप स्थल पर अनेकों पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव हुए हैं।

➢ज्ञानज्योति प्रवर्तन का शुभ संकल्प–

18 जुलाई 1981 का वह शुभ दिवस, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर नवनिर्मित धर्मशाला नं. 2 के कमरा नं. 12 में प्रथम मीटिंग हुई। आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने मस्तिष्क में जम्बूद्वीप के मॉडल को सम्पूर्ण भारत में भ्रमण कराने हेतु एक भाव संजोया था। उसी के विचार हेतु यह मीटिंग बुलाई गई थी। 8 दिन पूर्व से आयोजित इन्द्रध्वज मण्डल विधान विशाल पैमाने पर चल रहा था। अनेक स्थानों के महानुभाव विधान में भाग लेने आए हुए थे। मीटिंग के विषय से प्रभावित होकर कई विद्वान एवं श्रीमान् भी हस्तिनापुर पधारे।

मध्यान्ह 1.00 बजे से मीटिंग प्रारंभ हुई। मंगलाचरण किया– पंडित श्री कुंजीलाल जी गिरिडीह वालों ने। संस्थान के मंत्री रवीन्द्र कुमार जी ने कार्यक्रम की रूपरेखा बताई– **माताजी की यह इच्छा है कि जम्बूद्वीप के एक मॉडल को रथ के रूप में सुसज्जित करके सारे हिन्दुस्तान में उसका भ्रमण कराया जाए ताकि अहिंसा और नैतिकता का व्यापक प्रचार होकर जम्बूद्वीप का महत्त्व जनसामान्य तक पहुँच सके।** सर्वप्रथम उस भ्रमण करने वाले रथ के नाम पर विचार करने का निर्णय हुआ। तदनुसार उपस्थित समस्त महानुभावों ने नाम प्रेषित किए–

1. जम्बूद्वीप रथ
2. जम्बूद्वीप ज्ञान रथ
3. ज्ञानचक्र
4. जम्बूद्वीप चक्र
5. जम्बूद्वीप ज्ञान चक्र

इत्यादि कई नामों में से कोई नाम निश्चित नहीं हो सका। अन्त में एक नाम आया– **जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति**। जो सर्वसम्मतिपूर्वक पास किया गया। उसमें यह निर्णय लिया गया कि जम्बूद्वीप का मॉडल बनाकर बिजली, फौव्वारों से सुसज्जित करके एक वाहन पर समायोजित किया जाए। ज्ञान के प्रतीक में विस्तृत साहित्य का प्रचार किया जाए एवं ज्योति शब्द को द्योतित करने के लिए एक विद्युत् ज्योति प्रज्वलित की जाए। यह तो रहा जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति रथ के समायोजन का शुभसंकल्प, अब इस महती योजना को सफलतापूर्वक संचालन करने के लिए उपस्थित समस्त विद्वानों ने सहयोग प्रदान करने हेतु अपनी-अपनी स्वीकृति प्रदान की। सर्वप्रथम पं. बाबूलाल जी जमादार, पं. कुंजीलाल जी, प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी (फिरोजाबाद), डॉ. श्रेयांस कुमार जैन (बड़ौत), डॉ. सुशील कुमार जैन (मैनपुरी), श्री शिवचरणलाल जी (मैनपुरी) आदि अनेक विद्वानों ने अपना पूर्ण सहयोग देने को कहा। सफलतापूर्वक मीटिंग की कार्यवाही चली, जिसमें कतिपय श्रीमन्तों की ओर से यह एक सुझाव भी आया कि यह सब कुछ करने का प्रयोजन तो एक ही है– **जम्बूद्वीप का निर्माण कराना।** अतः इन सब झंझटों और ऊहापोहों से तो अच्छा है कि हम 50 श्रेष्ठियों से एक-एक लाख रुपया लेकर 50 लाख रुपया एकत्र करके जम्बूद्वीप को बना देंगे। ज्ञानज्योति के भ्रमण में तो पैसा और शक्ति दोनों लगेगा, जो बड़ा कठिन कार्य है। पूज्य माताजी ने उनके इस प्रस्ताव को सुना

किन्तु माताजी के गले यह बात नहीं उतरी, उन्होंने उपस्थित जनसमुदाय को सम्बोधित करते हुए कहा– **हमें मात्र जम्बूद्वीप नहीं बनाना है प्रत्युत् सारे देश में जैन भूगोल, अहिंसा धर्म और चरित्र निर्माण की योजना का प्रचार करना है। जैन समाज में पैसे की कमी नहीं है किन्तु जन-जन का आर्थिक एवं मानसिक सहयोग पाकर यह रचना सम्पूर्ण विश्व की बने, मेरी यह भावना है।**

माताजी के पास में मोतीचंद और रवीन्द्र कुमार ये दो प्रमुख स्तंभ ऐसे रहे, जिनके सबल कंधों पर जम्बूद्वीप निर्माण जैसे महान कार्य को प्रारंभ किया गया और उन्हीं के ऊपर ज्योति प्रवर्तन के कार्य का बीड़ा भी उठाया गया। कमेटी तो कार्य प्रारंभ होने पर सहयोग देती ही रही है और देगी ही। इन्हीं दृढ़ संकल्पों के आधार पर माताजी ने निर्णय लिया कि ज्योति का प्रवर्तन अवश्य होगा। कुल मिलाकर जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति प्रवर्तन की बात तय हुई। अब प्रश्न यह उठा कि इसका उद्घाटन कहाँ से और किसके द्वारा कराया जावे?

➢ज्योति प्रवर्तन भारत की राजधानी से–

त्रिलोक शोध संस्थान के कार्यकर्ताओं ने पूज्य माताजी के समक्ष निवेदन किया कि आपकी भावनानुसार अगर इस ज्योतिरथ का प्रवर्तन दिल्ली से एवं किन्हीं राजनेता के द्वारा कराया जाये, तो इसका राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान भी होगा और व्यापकरूप में अहिंसा धर्म का प्रचार भी होगा। इसकी प्रारंभिक रूपरेखा एवं प्रवर्तन-उद्घाटन जैसा महान कार्य आपके आशीर्वाद के बिना संभव नहीं है अतः आप दिल्ली विहार का विचार बनाइये। यद्यपि पूज्य माताजी की इच्छा दिल्ली के लिए विहार करने की बिल्कुल भी नहीं थी किन्तु लोगों के अति आग्रह से चातुर्मास के पश्चात् दिल्ली के विहार का प्रोग्राम बनने लगा। संघस्थ आर्यिका श्री रत्नमती माताजी की बिल्कुल इच्छा नहीं थी दिल्ली जाने की, क्योंकि दिल्ली का वातावरण उनके स्वास्थ्यानुकूल नहीं पड़ता था लेकिन इस महान कार्य की रूपरेखा सुनकर वे भी मना न कर पाईं और आर्यिका संघ का मंगल विहार फाल्गुन वदी 3, मार्च सन् 1982 में हो गया। 15 दिन में माताजी दिल्ली पहुँच गईं।

➢ऐतिहासिक प्रवर्तन का पूर्व संचालन मोरीगेट-दिल्ली से–

दिल्ली मोरीगेट की जैन समाज के विशेष आग्रह पर संघ वहीं पर जैन धर्मशाला में ठहरा। अब तो सबका यही लक्ष्य था कि जम्बूद्वीप का सुन्दर मॉडल शीघ्र तैयार कराया जाए और भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के करकमलों से ज्योति का उद्घाटन कराया जाए।

➢श्रेयांसि बहुविघ्नानि–

बड़े-बड़े कार्यों में प्रायः विघ्न भी आया ही करते हैं। ज्ञानज्योति प्रवर्तन की व्यापक रूपरेखा सुन-सुनकर कतिपय विघ्न संतोषियों ने अपना कार्य शुरू कर दिया। कई ज्योतिषियों की भविष्यवाणी हुई कि ज्योति प्रवर्तन कदापि नहीं हो सकता है, इन्दिरा जी किसी कीमत पर नहीं आ सकती हैं। एक ज्योतिषाचार्य जी ने कहा कि प्रधानमंत्री द्वारा उद्घाटन का तो कोई प्रश्न ही नहीं है एवं ढाई महीने से अधिक रथ का भ्रमण हो ही नहीं सकता है.....इत्यादि अनेकों बातें अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार लोग कहने लगे किन्तु ज्ञानमती माताजी के ऊपर किसी की बात का कभी असर नहीं हुआ, उन्होंने सदा संस्था के कार्यकर्त्ताओं को भी यही उपदेश दिया है कि **"अपने कार्य में सदा लगे रहो, बुराई करने वाले का कभी प्रतिकार मत करो, संघर्षों को चुनौती समझकर पुरुषार्थ करने में पीछे मत रहो।"** इन्हीं सूक्तियों के अनुसार मोतीचन्द जी, रवीन्द्र कुमार जी व पं. बाबूलाल जी जमादार तथा अन्य पदाधिकारीगण अपने कार्य में लगे रहे।

➢प्रधानमंत्री के पास डेपुटेशन–

त्रिलोक शोध संस्थान का एक डेपुटेशन प्रधानमंत्री के निवास स्थान पर उद्घाटन प्रस्ताव लेकर पहुँचा। थोड़ी देर की बातचीत के बाद इन्दिरा जी ने स्वीकृति नहीं दी। कई बार उच्चाधिकारियों के द्वारा कोशिशें कराई गईं किन्तु सब व्यर्थ था। जब प्रधानमंत्री के आने की विशेष उम्मीद नहीं दिखी, तब कई लोगों ने माताजी से अनुरोध किया कि इसका प्रवर्तन किसी सामाजिक व्यक्ति से करवाकर प्रारंभ किया जाये किन्तु माताजी ने यही कहा कि यह धर्म प्रचार का कार्य है, इन्दिरा जी अवश्य आएंगी, यह मुझे विश्वास है।

➢जे.के. जैन का अमूल्य सहयोग–

प्रधानमंत्री जी को लाने के प्रयास बराबर जारी रहे। एक बार यह ज्ञात हुआ कि संसद सदस्य जे.के. जैन इन्दिरा जी के निकटवर्ती हैं अतः उनसे संपर्क किया गया, उन्होंने प्रयास करने का वचन दिया। होनहार की बात, उन दिनों मोतीचंद जी,रवीन्द्र जी और हम लोग कोई दिल्ली में नहीं थे। अथक प्रयासों के बाद 25 मई 1982 को जे.के. जैन का टेलीफोन डॉ. कैलाशचंद जी के पास पहुँचा कि प्रवर्तन के लिए इन्दिरा जी ने स्वीकृति प्रदान कर दी है। डॉ. साहब ने आकर माताजी को खुशखबरी सुनाई और दूसरे दिन हम लोग जब जयपुर से आए, तो यह समाचार ज्ञात हुआ पुनः 2-3 दिन बाद 4 जून 1982

को उद्घाटन की तारीख निश्चित हो गई। बस फिर क्या था, सबकी भावनाएँ सफल हुईं, तैयारियाँ अब बहुत जोरों से होने लगीं। समय भी अल्प ही था किन्तु मोतीचंद, रवीन्द्र कुमार जी के साथ समस्त कार्यकर्ता उत्साहपूर्वक जुटे हुए थे। सारी दिल्ली में प्रचारार्थ खूब बैनर लगाए गए, पूरे देश में खबरें भेजी गईं, दैनिक अखबारों में प्रतिदिन विज्ञापन छपने लगे और नये ट्रक चेचिस में जम्बूद्वीप का सुन्दर मॉडल सुसज्जित किया गया, जिसका **''जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति''** रथ के नाम से प्रवर्तन प्रारंभ होने वाला था।

➢ऐतिहासिक दिवस–

देखते ही देखते 4 जून की तारीख भी आ गई। 2 जून से ही लालकिला मैदान में विशाल पांडाल और मंच बनाने की व्यवस्था चल रही थी। सुमेरु पर्वत के आकार का सुन्दर द्वार पांडाल के प्रमुख प्रवेश द्वार पर बनाया गया। सारी दिल्ली में प्रधानमंत्री के स्वागतार्थ तरह-तरह के सुन्दर तोरण बनाए गए। मंच की सारी व्यवस्थाएँ जे.के. जैन देख रहे थे, वह फूलों से और दीपों से सजा हुआ मंच अपने अतिथि की आतुरता से प्रतीक्षा कर रहा था। सभा मंच के बायीं ओर पूज्य ज्ञानमती माताजी और रत्नमती माताजी के लिए अलग मंच बनाया गया एवं मंच के दायीं ओर एक फूस की झोपड़ी थी, जहाँ माताजी सभा से पूर्व बैठी हुई थीं तथा आने-जाने वाले दर्शनार्थियों को उनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा था।

➢इन्दिरा जी का आगमन और सर्वप्रथम माताजी का आशीर्वाद–

मध्यान्ह के ठीक 2.30 बजे जन-जन का स्वागत स्वीकार करती हुई प्रधानमंत्री की कार उस ऐतिहासिक लालकिला मैदान में प्रविष्ट हुई। उनके साथ में गृहमंत्री श्री प्रकाशचंद सेठी, केन्द्रीय मंत्री एवं कई संसद सदस्य भी आए। श्री जे.के. जैन ने सर्वप्रथम इन्दिरा जी व सभी साथियों को पूज्य माताजी के दर्शन कराए, अनंतर सभी लोग मंच पर आ गए किन्तु इन्दिरा जी माताजी से कुछ व्यक्तिगत वार्ता करने हेतु वहीं रुक गईं। एक महिला होने के नाते उन्होंने पूज्य माताजी से अपने हृदय के कुछ उद्गार व्यक्त करते हुए समाधान पूछा, बातें तो जो और जिस रूप में उन्होंने की हों, यह मुझे नहीं मालूम, किन्तु इन्दिरा जी की धर्म के प्रति जो निष्ठा और विश्वास मैंने देखा, वह सचमुच अविस्मरणीय है। पूज्य माताजी ने उन्हें एक पैण्डन में यंत्र रखकर दिया जिसे उन्होंने श्रद्धावनत होकर तत्काल गले में पहन लिया। इसके साथ ही माताजी ने जिस मूँगे की माला पर करोड़ों मंत्रों का जाप्य किया था, उस

माला को उन्हें देते हुए कहा कि इस माला के द्वारा प्रतिदिन **''ॐ नमः''** मंत्र की एक माला अवश्य फेरें, इन्दिरा जी सिर झुकाकर सहर्ष उस माला को भी गले में डालकर बहुत प्रसन्न हुईं। उन्होंने 20 मिनट तक माताजी से बातचीत की और असीम शांति का अनुभव किया। इस मध्य माताजी और इन्दिरा जी के सिवाय अन्य कोई भी वहाँ उपस्थित नहीं था।

उधर माताजी और प्रधानमंत्री का वार्तालाप चल रहा था, इधर हजारों की संख्या में उपस्थित जनसमुदाय आतुरतापूर्वक अपने प्रिय नेता की प्रतीक्षा कर रहा था। 20 मिनट बाद पूज्य माताजी अपने मंच पर पधारीं और प्रधानमंत्री जी अपने मंच पर। इनके पदार्पण करते ही सारी जनता ने करतल ध्वनि से गड़गड़ाहटपूर्वक स्वागत किया। उस स्वागत का प्रत्युत्तर इन्दिरा जी ने हाथ जोड़कर अभिवादनपूर्वक दिया। सभा का कार्यक्रम अपनी गति से चला। पूज्य माताजी ने अपना आशीर्वाद सभी को प्रदान किया।

➢परमपूज्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी के आशीर्वचन–

''ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः''

तज्जयति परं ज्योतिः समं समस्तैरनन्त पर्यायैः।
दर्पणतल इव सकला प्रतिफलति पदार्थ मालिका यत्र।।

युग की आदि में तीर्थंकर ऋषभदेव जब राज्य सभा में विराजमान थे, प्रजा ने आकर अपनी समस्या रखी कि हे देव! अभी तक हम लोग कल्पवृक्ष से भोजन आदि सामग्री प्राप्त करते आये थे और आज वह कल्पवृक्ष फल नहीं दे रहे हैं, तो हम अपनी आजीविका का पालन कैसे करें तथा अपना जीवनयापन कैसे करें? तीर्थंकर ऋषभदेव उसी समय उसी जम्बूद्वीप के अंतर्गत विदेह क्षेत्र में जो स्थिति है, उसके बारे में देखकर-सोचकर युग की आदि से ही इस पृथ्वीतल पर भी 6 क्रियाओं का उपदेश दिया, वह विदेह क्षेत्र इसी जम्बूद्वीप के बीचों बीच में है। उसी विदेह क्षेत्र में सुमेरु पर्वत है, जो एक लाख योजन ऊँचा है उससे और स्वर्ग में मात्र एक बाल का अन्तर है अर्थात् वह मध्यलोक का मापदण्ड है। उस सुमेरु पर्वत पर ऋषभदेव से लेकर महावीरपर्यंत चौबीस तीर्थंकरों का जन्माभिषेक किया जा चुका है। अनंत-अनंत तीर्थंकरों का जन्माभिषेक उस पर मनाया जा चुका है और भविष्य में भी इसी पर्वत पर अनंत-अनंत तीर्थंकरों का जन्माभिषेक उत्सव मनाया जायेगा। यही कारण है कि यह पर्वत महान् पूज्य है, जो कि जम्बूद्वीप के बीचोंबीच में है। आज भी आप लोग पंडितों के मुख से, पुरोहितों के मुख से सुनते होंगे, प्रशस्ति के उच्चारण में, किसी भी

संकल्प में जम्बूद्वीपे, भरतक्षेत्रे, आर्यखण्डे इत्यादिरूप से, तो यह भरतक्षेत्र इसी जम्बूद्वीप का ही एक हिस्सा है जो कि जम्बूद्वीप के एक सौ नब्बेवाँ भाग प्रमाण है। इस भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में ही आज का उपलब्ध सारा विश्व है। इस जम्बूद्वीप की रचना में उपलब्ध पृथ्वी के अतिरिक्त भी पृथ्वी इस भूमण्डल पर है, यह दिशा-निर्देश वैज्ञानिकों को दिया जा रहा है। हमारे यहाँ साधन कुछ अल्प हैं, वैज्ञानिकों के यांत्रिक साधन विशेष हैं और वे खोज में आगे बढ़कर के आपके सामने कुछ न कुछ नई चीज उपस्थित करेंगे, ऐसा पूर्ण विश्वास है। हमारे महर्षियों ने यह बताया था कि पेड़ और पौधों में भी जीव है। आज के युग में वैज्ञानिकों ने भी सिद्ध कर दिया कि हाँ! पेड़ और पौधों में भी जीव है। ऐसे अनेक विषय हैं जिन्हें वैज्ञानिकों ने सिद्ध करके स्वीकार कर लिया है कि महर्षियों का कथन सत्य है। इस प्रकार ये जो हमारा आर्यखण्ड है, जिसमें हम लोग रहते हैं अनादिकाल से और इस युग की आदि से, यह समझिये अनेक महापुरुषों ने यहाँ जन्म लिया है ये महर्षियों का, पुण्यशाली तपस्वियों का क्षेत्र है। उन्होंने यहाँ पर अपनी साधना और तपस्या के बल से अपने को तो पवित्र बनाया ही, साथ ही देश में सत्चारित्र का निर्माण करके तमाम प्राणियों को पवित्र बनाया है और सुख-शांति की स्थापना की है। मुझे जैन रामायण की एक सूक्ति याद आती है–

यस्य देशं समाश्रित्य साधवः कुर्वते तपः।
षष्ठमंशं नृपस्तस्य लभते परिपालनात् ।।

जिस देश का आश्रय करके साधु तपस्या करते हैं, वहाँ के शासक उनका प्रतिपालन करने से उन साधुओं की तपश्चर्या का छटा भाग पुण्य प्राप्त कर लिया करते हैं। तो मैं ये स्पष्ट कहूँगी कि साधुओं के तपश्चरण का पुण्य इन्दिरा जी को स्वयं ही मिल रहा है। वे उस पुण्य को स्वयं ही ले लिया करती हैं, यह इस भारत भूमि का एक विशेष माहात्म्य है। वास्तव में ये तो कहना ही पड़ेगा कि इन्दिरा जी बहुत सौभाग्यशाली हैं। इस दशक में मैंने अनुभव किया कि अनेक धार्मिक आयोजनों में वे अपने अमूल्य समय को निकाल कर भाग लेती आ रही हैं। जैन समाज का भी यह गौरव कम नहीं है कि जैन समाज के प्रति उनकी इतनी प्रीति है। धर्मचक्र और मंगलकलश का प्रवर्तन भी उन्हीं के हाथ से होना और आज देखिये! ये जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति प्रवर्तन का पुण्य अवसर भी इन्हीं को मिल रहा है। आप सोचेंगे एक प्रधानमंत्री के प्रधानमंत्रित्वकाल में इतने-इतने आयोजन होवें और उन्हें ही पुण्य अवसर मिले, यह कम पुण्य

की बात नहीं है। मैं यही कहूँगी कि सचमुच में इन्दिरा जी जैसी साहसी महिला रत्न, जिनने इस युग में एक क्रान्ति लाई है सचमुच में यह ज्योति उनके हाथ से प्रवर्तित होकर न जाने भारत के कितने प्राणियों के हृदय के अंधकार को दूर करेगी, कितने मानुष के अंधकार को दूर करेगी। देखिये! संसार में अज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई अंधकार नहीं है और ज्ञान से बढ़कर विश्व में दूसरा कोई प्रकाश नहीं है। यह ज्ञानज्योति सारे भारतवर्ष में भ्रमण कर कोने-कोने में प्राणियों के अज्ञानरूपी अंधकार को दूर करे और ज्ञान का प्रचार करे, उसके साथ ही साथ सुख और शांति की सारे विश्व में स्थापना करे और प्रधानमंत्री इन्दिरागांधी के शुभ हस्तों से ऐसे-ऐसे पुण्य कार्य सदैव होते रहें तथा यह जनतंत्रशासन जनता में धर्मनीतिमय अनुशासन करता रहे, मेरा यही शुभाशीर्वाद है।

➢जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति प्रवर्तन के शुभ अवसर पर 4 जून 1982 को प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरागांधी का भाषण–

"पूज्य ज्ञानमती माताजी और उपस्थित सज्जनों, भाईयों और बहनों!

मुझे बहुत प्रसन्नता है कि इस शुभ अवसर पर आपने मुझे बुलाया है। जब ऐसा अवसर होता है विशेष करके धार्मिक अवसर, जब देश के कोने-कोने से बहन और भाई सब लोग आते हैं तो भारत की एकता का एक दृश्य देखने को मिलता है। हमारा भारत एक ऐसा देश है, जहाँ प्रायः विश्व के सभी धर्म हैं। हमारी नीति रही है कि सभी धर्मों का आदर हो, किसी का भी किसी प्रकार से न अपमान हो, न नीचा करने की कोई बात हो क्योंकि सभी धर्म में कुछ ऐसे सिद्धान्त होते हैं, जो व्यक्ति को ऊपर उठाने की कोशिश करते हैं, जो उसकी आत्मा को शक्ति देते हैं, ताकत देते हैं और जो जीवन की सख्त कठिनाइयां होती हैं, जैसे सभी के जीवन में होती हैं चाहे कोई बड़ा हो या छोटा, उसका सामना करने की ताकत देते हैं। जैसे व्यक्ति को मिलता है उसी प्रकार से अगर सारे देश में धर्म का आदर होगा तो सारा देश ऊपर उठेगा। हमारा प्रयत्न यही है कि इस देश को ऊँचा उठाया जाये। आर्थिक दृष्टिकोण से लोगों का जीवन स्तर ऊँचा उठे, गरीबी कम हो, पिछड़ापन हट जाये लेकिन केवल आर्थिक प्रगति काफी नहीं है, यह शुरू से ही गांधी जी तथा अन्य नेताओं ने हमको बतलाया कि संग-संग भारत की संस्कृति, भारत की सभ्यता, भारत की परम्परा और भारत के ऊँचे विचार इन चीजों पर यदि ध्यान नहीं दिया जायेगा तो केवल आर्थिक प्रगति से देश महान नहीं हो सकेगा।

जम्बूद्वीप का वर्णन हमारे सभी शास्त्रों में है जैसे बौद्धिक, जैनधर्म के

और वैदिक में जो वर्णन है, वह केवल भारतवर्ष का नहीं है उससे बहुत बड़ा है। इससे कोई यह न समझे कि हमारी नीयत दूसरों पर है या हम दूसरों से कुछ चाहते हैं। हम अपनी धरती से और अपनी जनता से ही संतुष्ट हैं और यूं तो इनकी सेवा करना इतना बड़ा काम है कि प्रयत्न ही हम कर सकते हैं। सम्मुख लड़ाई के लिए भी जो शक्ति चाहिए और जो साहस चाहिए वह धर्म के द्वारा ऊँची विचारधारा, ऊँचे मूल्यों के द्वारा मिल सकते हैं। यह बड़े दुःख की बात है कि मनुष्य जाति एक ऐसे समय, जब विज्ञान के द्वारा जानकारी बहुत बढ़ी है, जब बहुत सी प्राकृतिक ताकतें काबू में आई हैं, बड़े-बड़े काम मनुष्य कर सकता है, ऐसे समय बजाय इसके कि इस ताकत को वो उसमें लगायें जो हमारे दुर्बल भाई और बहन हैं उनको उठायें, जो दुर्बल देश हैं उनकी सहायता करें, मनुष्य जाति इस ताकत को अक्सर लड़ाई-झगड़े में लगाती है, एक-दूसरे से मुकाबला करने में, नीचे घसीटने में। लेकिन कभी-कभी धर्म के बारे में भी आपने देखा होगा कि इधर कुछ कौमी दंगे हुए जिससे कुछ ऐसे घटनाएं हुई जिससे किसी न किसी धर्म का लगता था कि कोई अपमान करना चाहता है। यह हमारी भारतीय परम्परा में नहीं है और न किसी भी धर्म में ऐसा कहा है और मेरी जब-जब बातें हुई लोगों से, तो देखा कोई ऐसा नहीं चाहता है। हम सब लोगों की बड़ी कोशिश होनी चाहिए कि हम कौमी एकता एवं सब धर्म में आदर विशेष करें क्योंकि ये अफवाह उड़ाई गई है कि शायद मैं धर्म को नहीं मानती, यह कैसे हो सकता है। मैं एक धार्मिक परिवार से आई हूँ एक परम्परा में मेरा पालन-पोषण हुआ जिसमें धर्म का, भारत की संस्कृति, सभ्यता का आदर, यहाँ यह सिखलाया गया कि ऊँचा रखने के लिए कोई भी कुर्बानी देने के लिए तैयार होना चाहिए। तो हम तो ऐसा विचार कर ही नहीं सकते कि किसी भी प्रकार से धर्म पर कोई हमला हो, अपमान हो या नीचा दिखाया जाये। बल्कि हम समझते हैं कि धर्म ऊँचा होगा तो समाज ऊँचा होगा, देश ऊँचा होगा और देश को बल मिलेगा। जो अपने देश के भीतर की कठिनाईयाँ हैं उनका भी वह सामना कर सकेगा। जैनधर्म के जो ऊँचे विचार हैं वे भी भारत की धरती से निकले हैं, भारत की विचारधारा से निकले हैं और स्वयं उसी विचारधारा पर अपना प्रभाव गहरा डाले हैं। आप सबका जो भारत है व जो किसी का भी कुछ धर्म है मैं सोचती हूँ कि वे जैनधर्म के ऊँचे विचार हैं, उनको सभी मानें। हमें मालूम है कि हमारी आजादी की लड़ाई में कितना महत्व इन विचारों को गांधी जी ने दिया। वे चूँकि हमारे नेता थे और उनके चरणों में बैठ

के हमने सीखा, तो हमारे भी रोम-रोम में ये चीजें आती हैं। हमारा आन्दोलन अहिंसा का था जो कि दुनिया के इतिहास में कभी नहीं देखा था। सबसे पहले बड़ा आन्दोलन इस रास्ते से हुआ। इसी प्रकार से हमें देखना है कि आजकल के जीवन में चाहे गरीबी हटाने का कार्यक्रम हो, देश को बलवान बनाने का कार्यक्रम हो, इसी रास्ते से बन सकता है। अहिंसा के रास्ते से, सहनशीलता के रास्ते से, सादगी में रहने से, इतनी बातें जो भगवान महावीर ने अपने वचन से छोड़ी हैं हमारे संग, वो चीजें हैं जो देश को मजबूत करती हैं ऊपर उठाती हैं। यह प्रसन्नता का विषय है कि पूज्य ज्ञानमती माताजी ने यह जम्बूद्वीप का मॉडल बनवाकर तथा जो हस्तिनापुर में बनाया जा रहा है, इससे लोग इसके बारे में ज्यादा से ज्यादा ठीक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे और जहाँ-जहाँ यह ज्योति जायेगी, वहाँ भी इसके द्वारा एक नई धार्मिक भावना जगेगी। मैं आपके सामने आभार ही प्रकट कर सकती हूँ कि ऐसे शुभ अवसर पर आपने मुझे बुलाया कि मैं इसका प्रवर्तन करूँ। यह देखकर मुझे बहुत खुशी है और माताजी को भी मैं बार-बार नमन करती हूँ।''

➢तव चरणों में सब झुकते हैं–

सन् 1979 में सुमेरुपर्वत के जिनचैत्यालयों की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में उत्तरप्रदेश के मंत्री रेवतीरमण जी आये। सन् 1980 में अक्टूबर में माताजी के जन्मदिवस पर केन्द्रीय नागरिक उड्डयन मंत्री ए.पी. शर्मा और केन्द्रीय मंत्री श्री प्रकाशचंद सेठी आए। पूज्य माताजी के सानिध्य में सन् 1982 में दिल्ली के लालकिला मैदान में तत्कालीन भारत की प्रधानमंत्री इन्दिरागांधी ने पधारकर जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति के मॉडल का शुभ प्रवर्तन प्रारंभ किया। 31 अक्टूबर सन् 1982 को दिल्ली में श्री राजीव गांधी संसद सदस्य ने जम्बूद्वीप सेमिनार का उद्घाटन करके शुभाशीर्वाद प्राप्त किया।

जनवरी सन् 1985 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री श्रीमती मोहसिना किदवई पूज्य आर्यिकाश्री के दर्शनार्थ पधारीं।

माताजी के शुभाशीर्वाद से उन्हीं के सानिध्य में सन् 1985 के जम्बूद्वीप जिनबिंब प्रतिष्ठापना महोत्सव की रूपरेखा बनाने के लिए नारायणदत्त तिवारी (तत्कालीन मुख्यमंत्री उत्तरप्रदेश) ने आकर यहाँ हस्तिनापुर के रत्नत्रयनिलय में बैठकर कमेटी के कार्यकर्ताओं से घंटों चर्चाएं की थीं।

प्रो. वासुदेवसिंह (मंत्री-उ.प्र.) ने अक्षयतृतीया के दिन झण्डारोहण करके **''अंतर्राष्ट्रीय जैन गणित एवं त्रिलोक विज्ञान सेमिनार''** का उद्घाटन किया

पुनः 28 अप्रैल 1985 को तत्कालीन केन्द्रीय रक्षामंत्री नरसिंहराव ने जंबूद्वीप स्थल पर हेलीकॉप्टर से आकर **''जंबूद्वीप अखंडज्ञानज्योति''** को स्थापित किया था। अनंतर नारायणदत्त तिवारी (तत्कालीन मुख्यमंत्री उत्तरप्रदेश) ने 30 अप्रैल 1985 के प्रतिष्ठा समारोह में पधारकर भगवान के राज्याभिषेक कार्यक्रम में भाग लिया और पचासों हजार की जनता को संबोधित करके साधुवर्गों और पूज्य माताजी का शुभाशीर्वाद ग्रहणकर जंबूद्वीप का उद्घाटन करके विद्युत् दीपों और फव्वारों से जंबूद्वीप को जगमगा दिया था।

इसी प्रतिष्ठा के मध्य विधानसभा अध्यक्ष श्री हुकुमसिंह, भूतपूर्व राज्यपाल किदवई जी आदि अनेक नेतागण पधारे।

सन् 1987 की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज अपने विशाल संघ सहित यहाँ पधारे थे, तब 8 मार्च को ब्र.मोतीचंद की क्षुल्लक दीक्षा के दिवस श्री माधवराव सिंधिया तत्कालीन रेलमंत्री- भारत सरकार पधारे थे।

सन् 1990 में जंबूद्वीप महामहोत्सव एवं पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में श्री अजितसिंह तत्कालीन उद्योगमंत्री भारत सरकार और बी. सत्यनारायण रेड्डी महामहिम राज्यपाल उत्तरप्रदेश पधारे थे।

सन् 1991 के सरधना चातुर्मास में 23 अक्टूबर के दिन पूज्य माताजी के जन्मदिवस समारोह में श्री मुरली मनोहर जोशी (राष्ट्रीय अध्यक्ष भारतीय जनता पार्टी) और डॉ.जे.के. जैन (राज्यसभा सदस्य) पधारे।

15 फरवरी 1992 को उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री कल्याणसिंह पूज्य माताजी के दर्शनार्थ हस्तिनापुर पधारे एवं 19 अगस्त 1992 को मध्यप्रदेश के लोकनिर्माण विभाग के मंत्री श्री हिम्मतसिंह कोठारी ने सपरिवार हस्तिनापुर पधारकर जंबूद्वीप रचना के दर्शन किए एवं पूज्य माताजी से शुभाशीर्वाद प्राप्त किया। इसके बाद सन् 1994 में अयोध्या में तत्कालीन मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव ने पूज्य माताजी के दर्शन करके अपने जीवन को धन्य किया। प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने दो बार (सन् 1998 एवं 2000 में) पूज्य माताजी के दर्शन किये तथा सन् 2003 में राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने तो दर्शन करके अपने को बहुत ही धन्य-धन्य समझा। पूज्य माताजी के दिल्ली, गुजरात एवं महाराष्ट्र आदि प्रदेशों में मंगल पदार्पण के अवसर पर वहाँ के मुख्यमंत्री, राज्यपाल आदि ने दर्शन करके धर्मलाभ प्राप्त किया। यह सब पूज्य माताजी के महनीय व्यक्तित्व का ही प्रभाव है जो वे

सभी को उदारतापूर्वक अपना आशीर्वाद प्रदान करती हैं।

यह अनेक राजनेताओं का जंबूद्वीप आदि के कार्यक्रमों में आगमन पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के मंगल आशीर्वाद का ही सुफल है। इन नेताओं ने आकर पूज्य माताजी से राज्य में शांति हेतु अनेक चर्चायें की थीं। माताजी ने भी प्रायः सभी को मांस, मद्य आदि का त्याग कराकर अनेक उपदेश देकर धर्म के यंत्र, मंत्र, जपमाला आदि भी दी हैं। यहाँ एवं अन्यत्र भी एम.एल.ए., एम.पी., आई.जी., डी.आई.जी., कमिश्नर, कलेक्टर, सुप्रीमकोर्ट, हाईकोर्ट के न्यायाधीश आदि पधारकर पूज्य माताजी से आशीर्वाद ग्रहण करते रहते हैं तथा एन.सी.सी., मिलिट्री आदि के कैम्प भी प्रायः हस्तिनापुर के प्राकृतिक वातावरण में आयोजित होते हैं, जिनमें शिविरार्थी जम्बूद्वीप स्थल पर आकर इन गरिमामयी व्यक्तित्व के समक्ष नतमस्तक होते हुए इनसे कल्याणकारी उपदेश एवं आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

➢केशलोंच –

दिगम्बर मुनि-आर्यिकाओं की चर्या में केशलोंच उनका एक मूलगुण है जो उत्तम, मध्यम, जघन्य विधि अनुसार दो, तीन, चार महीने में सम्पन्न करना होता है। पूज्य माताजी ने अपने 53 वर्षीय दीक्षित जीवन में लगभग 200 बार केशलोंच किए। प्रारंभ में तो दो से तीन माह के अंदर शास्त्रोक्त मध्यम चर्यानुसार केशलोंच करना ही इन्हें इष्ट था। यह क्रम लगभग 30 वर्ष तक चला है। उसके पश्चात् शारीरिक अस्वस्थता के कारण 3 से 4 माह के बीच में करने लगीं, वह तारतम्य वर्तमान में भी चल रहा है।

चाहे कैसी विकट परिस्थितियाँ इनके जीवन में क्यों न आईं किन्तु अपने मूलगुणों के पालन में पूज्य माताजी सर्वदा सावधान देखी गईं। ये हम शिष्यों को हमेशा यही शिक्षा देती रहती हैं कि **''शरीर तो भव-भव में प्राप्त होता है किन्तु संयम बड़ी दुर्लभता से मिला है। शरीर-स्वास्थ्य के लिए संयम की कभी विराधना नहीं करनी चाहिए, चाहे वह छूटे अथवा रहे।''**

इसी सूत्र का अनुसरण इन्होंने अपनी गंभीर अस्वस्थता में भी किया है। सन् 1985-86 में जब म्यादी बुखार एवं पीलिया के कारण ये मरणासन्न अवस्था में थीं, तो भी अपने केशलोंच के समय का इन्हें पूरा ध्यान रहा और एक दिन मुझसे बोलीं – तुम मुझे राख लाकर दे दो, मैं आज लोंच करूँगी। समय अभी 8-10 दिन शेष था 4 माह में, किन्तु उठकर अपने हाथों से ही अपने सिर के पूरे केशों का लोंच किया और नियमानुसार उपवास किया। मैंने

कुछ सहारा लगाने का प्रयत्न भी किया किन्तु प्रारंभ से ही अपने हाथ से करने की आदत होने के कारण धीरे-धीरे स्वयं करती रहीं, मुझे एक बाल भी नहीं उखाड़ने दिया।

इस दृश्य से हम सभी आश्चर्यचकित थे क्योंकि उन दिनों माताजी अशक्तता के कारण दीर्घशंका, लघुशंका के लिए खड़ी भी नहीं हो पाती थीं। यहाँ तक कि कुछ दिन तक करवट भी स्वयं बदलने में असमर्थ रहीं। मेरी लगभग 24 घंटे उनके पास ड्यूटी होती थी और सभी शिष्यगण परिचर्या में लगे हुए थे।

ऐसे गंभीर अस्वस्थ क्षणों में दो घण्टे लगातार बैठकर अपने हाथों से केश उखाड़ना मात्र कोई दैवीशक्ति एवं असीम आत्मबल का ही प्रतीक था। तपस्या की इसी दृढ़ता ने इन्हें सदैव नवजीवन प्रदान किया है। इनकी छत्रछाया मुझे भी ऐसी चारित्रिक दृढ़ता प्रदान करे, यही जिनेन्द्र भगवान से प्रार्थना है।

➢अपूर्व कार्यक्षमता–

उस दीर्घकालीन अस्वस्थता के पश्चात् माताजी आज भी एक स्वस्थ व्यक्ति से कहीं अधिक कार्य करती हैं। उन्हें शिष्यों का भी एक मिनट खाली बैठना पसंद नहीं है। जीवन के एक-एक क्षण का सदुपयोग करने की शिक्षा उनके सानिध्य से सहज प्राप्त हो सकती है। तभी तो उन्होंने सन् 1986 की मरणोन्मुखी अस्वस्थता के बाद भी कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीनलोक, जम्बूद्वीप आदि वृहद् मंडल विधानों की रचना की तथा समयसार ग्रंथ का अनुवाद किया, अनेक मौलिक ग्रंथों का सृजन किया तथा अब तक सिद्धचक्र, ऋषभदेव, पार्श्वनाथ, विश्वशांति महावीर विधान, गणधरवलय आदि लगभग 40 विधानों की रचना की। वर्तमान में षट्खण्डागम की सिद्धान्तचिंतामणि नामक संस्कृत टीका लेखन का नवीन कार्य चल रहा है। इसके अतिरिक्त उनका समय अपनी दैनिक क्रियाओं में तथा स्वाध्याय और भाक्तिकों को आशीर्वाद प्रदान करने में व्यतीत होता है।

➢शुद्ध प्रासुक लेखनी चिरकाल तक जीवन्त रहेगी–

आचार्य श्री कुंदकुंद, उमास्वामी, समन्तभद्र, अकलंकदेव तो हमने नहीं देखे, जो हमें अपने हाथों से लिखकर अमूल्य साहित्यिक कृतियाँ प्रदान कर गए किन्तु उन सबका मिलाजुला रूप हमें वर्तमान में गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के अन्दर दृष्टिगत हो रहा है जिन्होंने पूर्वाचार्यों की वाणी से अनुस्यूत एक-एक शब्द अपने ग्रंथों में संजोया है, पापभीरुता जिनमें कूट-कूट कर भरी हुई है, मनगढ़ंत एक शब्द भी जिनकी कृतियों में उपलब्ध नहीं हो

सकता, ऐसी शुद्ध लेखनी को जग का बारम्बार प्रणाम है।

प्रासुक लेखनी से हमारे पाठक भ्रमित हो सकते हैं कि पानी, दूध तथा खाद्य पदार्थ प्रासुक किये जाते हैं, क्या लेखनी भी किसी की प्रासुक हो सकती है? हाँ, लेखनी भी प्रासुक है तभी तो उनके द्वारा लिखित ग्रंथों में अतिशय देखा जा रहा है। सूखी नीली कोरस टिकिया का बुरादा अपने कमंडलु के जल में घोलकर फाउन्टेन पेन से डुबोकर उन्होंने सदैव लेखनकार्य किया। चौबीस घण्टे की मर्यादा के बाद पुनः कमंडलु के गरम-प्रासुक जल से पेन की निब धोकर दूसरी नई स्याही घोलकर लिखना यही उनका दैनिक लेखन क्रम था। सन् 1969-70 में अष्टसहस्री अनुवाद की 9 कापियाँ तो कच्ची पेंसिल से लिखी हैं और 1 कापी स्याही से लिखी है।

➢हस्तिनापुर तथा आसपास नगरों का मंगलमयी प्रवास–

भगवान ऋषभदेव की प्रथम पारणा स्थली, भगवान शान्ति, कुंथु, अरहनाथ की चार कल्याणक भूमि एवं अनेक इतिहासों को अपने गर्भ में संजोए हुए हस्तिनापुर नगरी ऐतिहासिक एवं पौराणिक तो है ही, जंबूद्वीप के निर्माण ने इस चेतना के स्वरों में नवजीवन प्रदान कर दिया है। अपनी कर्मभूमि एवं तपोभूमि जंबूद्वीप स्थल पर निर्मित **''रत्नत्रय निलय''** वसतिका में भी पूज्य माताजी का ससंघ वास्तव्य रहता है। उनकी शारीरिक अशक्तता ने जहाँ उन्हें हस्तिनापुर में अधिक प्रवास के लिए बाध्य किया है, वहीं देश-विदेश की जनता को उनसे असीम लाभ प्राप्त हो रहा है। जंबूद्वीप दर्शनार्थ आने वाले अधिकतर यात्रियों को यहाँ यदि विहार कर रहीं ज्ञानमती माताजी के दर्शन नहीं होते हैं, तो वे अपनी यात्रा अधूरी समझकर उन्हें ढूंढते हुए कहीं न कहीं पहुँचकर दर्शन करके ही यात्रा को पूर्ण मानते हैं।

सन् 1989-90 में जब बड़ौत, मोदीनगर, मेरठ, अमीनगर सराय आदि नगरों में शीतकालीन प्रवास के समय देश के सुदूरवर्ती प्रान्तों से आए हुए भक्तगण स्थान का पता लगा-लगाकर दर्शनार्थ पहुँचे, उस समय बड़ौत के निकट एक पोयस नामक बहुत छोटे से ग्राम में विदेश (जापान) से पधारे हुए योशिमाशा मिचिवाकी पूज्य माताजी एवं संघ के दर्शनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। उनके साथ में पधारे डॉ. अनुपम जैन (इंदौर-म.प्र.) ने उन्हें जैन साधुओं के पद विहार, कठिन तपश्चर्या आदि के विषय में बतलाया जिसे सुनकर वे बड़े प्रभावित हुए।

इसी प्रकार सन् 1991 में हस्तिनापुर से 50 किमी. दूर सरधना नगर में

पूज्य माताजी का जब संघ सहित चातुर्मास हुआ, तब वहाँ प्रतिदिन मेला सा लगा रहा। राजस्थान, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश आदि अनेक प्रान्तों से यात्री बसों का तांता लगा रहा। सरधना निवासी बड़ी प्रसन्नता पूर्वक अतिथियों का आतिथ्य-सत्कार करते तथा अपने नगर को एक जीवंत तीर्थ मानते हुए फूले नहीं समाते। हस्तिनापुर के आस-पास सैकड़ों ग्रामों एवं शहरों में विशाल जैन समाज है, उन सभी की अपने-अपने नगरों में माताजी को ले जाकर सानिध्य प्राप्त करने एवं ज्ञान लाभ लेने की तीव्र अभिलाषा रहती है।

➢पश्चिमी उत्तरप्रदेश में साधुसंघ विहार की प्रेरिका–

जम्बूद्वीप रचना के माध्यम से श्री ज्ञानमती माताजी ने पश्चिमी उत्तरप्रदेश को जहाँ एक विश्व की अद्वितीय धरोहर प्रदान की है, वहीं बड़े-बड़े साधु संत भी आपकी प्रेरणा से इस प्रान्त में पधारे, जिससे जैनत्व का विस्तृत प्रचार हुआ है।

परमपूज्य आचार्यश्री 108 धर्मसागर महाराज के पदार्पण के पश्चात् सन् 1975 में आचार्यकल्प श्री श्रुतसागर महाराज का हस्तिनापुर एवं उत्तरप्रदेश के कुछ नगरों में पदार्पण हुआ पुनः सन् 1979 में सुमेरु पर्वत की प्रतिष्ठा महोत्सव में आचार्यकल्प श्री श्रेयांससागर महाराज का ससंघ पदार्पण हुआ, जो सन् 1990 में आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज की परम्परा के पंचम पट्टाचार्य बने। सन् 1985 में जंबूद्वीप जिनबिम्ब प्रतिष्ठापना महोत्सव पर आचार्यश्री धर्मसागर महाराज संघस्थ मुनिश्री निर्मलसागर जी एवं कतिपय मुनि-आर्यिकाओं का आगमन हुआ तथा आचार्यश्री सुबाहुसागर महाराज ससंघ पधारे।

पूज्य माताजी की सदैव यह हार्दिक इच्छा रही है कि संसार में प्रथम बार निर्मित जम्बूद्वीप रचना के दर्शनार्थ एवं उत्तरप्रदेश की जनता के धर्मलाभ हेतु साधु संघ हस्तिनापुर एवं इस प्रान्त में पधारें। अपने निकटस्थ भक्तों को वे इसके लिए प्रेरणा भी प्रदान करती रहती हैं। इसी प्रेरणा के फलस्वरूप सन् 1987 में सन्मार्ग दिवाकर आचार्यश्री विमलसागर महाराज के विशाल संघ का हस्तिनापुर पदार्पण हुआ और मेरठ, बड़ौत आदि शहरों में भी कुछ समय तक संघ का प्रवास रहा। इसी प्रकार सन् 1989 में पूज्य माताजी की प्रेरणा से आचार्यश्री कुंथुसागर महाराज के चतुर्विध संघ का हस्तिनापुर पदार्पण हुआ। यहाँ 40 दिवसीय प्रभावनापूर्ण प्रवास के पश्चात् बड़ौत, मुजफ्फरनगर आदि नगरों में उनके चातुर्मास भी हुए।

पश्चिमी उत्तरप्रदेश की जनता पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी की इस प्रेरणा,

उदारता से अपने को सौभाग्यशाली मानती है। इसके अतिरिक्त आचार्य श्री सुमतिसागर महाराज, आचार्यश्री दर्शनसागर जी, आचार्यश्री कल्याणसागर जी आदि के संघ इस प्रदेश में पधारते रहे हैं, वे जंबूद्वीप रचना के निमित्त से हस्तिनापुर भी अवश्य पहुँचते हैं, यह सब पूज्य माताजी की प्रबल प्रेरणा एवं धर्मवात्सल्य का ही फल है।

➢तन्मयता ने चिन्मयता दी–

कुशल व्यापारी जब व्यापार में तन्मय होता है, तो एक दिन सेठ बन जाता है, कुशल चित्रकार अपनी चित्रकारी में तन्मय होकर अचेतन चित्रों में जान फूंक देता है, कुशल डाक्टर तन्मयता पूर्वक मरीजों का इलाज, ऑप्रेशन आदि के द्वारा उसे नवजीवन प्रदान कर देता है, ध्यानी दिगम्बर मुनि ध्यान में तन्मय होकर केवलज्ञान को प्राप्त कर लेते हैं, शिष्य तन्मयतापूर्वक अध्ययन करके ऊँची-ऊँची डिग्री प्राप्त कर लेते हैं, गुरु तन्मयतापूर्वक शिष्यों को पढ़ाकर उसे अपने से भी अधिक योग्य बना देते हैं। कहने का मतलब यह है कि तन्मयता प्राणी को उन्नति के शिखर पर पहुँचा देती है।

तत् शब्द में मयट् प्रत्यय लगकर तद्रूप अर्थ में 'तन्मय' शब्द प्रयुक्त होता है। पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी जब अपने लेखन में तन्मय हो जाती हैं, तब उन्हें अपने दर्शनार्थ आने वाले यात्रियों का भान ही नहीं रहता। आश्चर्य तो तब होता है, जब हम लोगों के द्वारा बताए जाने पर कि दूर-दूर से दर्शनार्थी आए हैं, आपने इन्हें हाथ उठाकर आशीर्वाद भी नहीं दिया, तब वे कहती हैं कि मुझे तो कुछ पता ही नहीं था, मैं लेखन करती हुई साक्षात् समवसरण या अकृत्रिम चैत्यालयों के दर्शनार्थ पहुँच गई थी।

3 जुलाई सन् 1992 की बात है– तहसील फतेहपुर (उ.प्र.) से पुतानचन्द जी के सुपुत्र यशवन्त कुमार एवं सुपुत्री आदि हस्तिनापुर आए, माताजी के दर्शन किए, मैं दूसरे कमरे में बैठी लिख रही थी, मेरे पास आए, दर्शन किए और बोले– शायद बड़ी माताजी ने हमें पहचाना नहीं। मैं उन्हें लेकर 15 मिनट बाद फिर माताजी के पास पहुँची, माताजी ने उन्हें देखा और उन लोगों से पुतानचंद जी के बारे में भी पूछा। फिर कहने लगीं कि तुम लोग कब आए हो? मैंने कहा– ये तो अभी आपके दर्शन करके गए हैं। माताजी मुस्कराने लगीं और बोलीं– मैं सिद्ध भगवान के गुणों में मगन थी (उस समय वे सिद्धचक्र विधान की रचना कर रही थीं) मुझे कुछ पता नहीं कि कौन, कब मेरे दर्शन करने आया? खैर! वे लोग तो बेचारे माताजी की प्रवृत्ति जानते थे, इसलिए बुरा

न मानकर पुनः उनका आशीर्वाद ग्रहण किया किन्तु कितनी ही बार ऐसे प्रसंगों में कुछ भक्तगण नाराज भी होते हैं। उनका कहना रहता है कि माताजी कम से कम हमारी ओर देखकर आशीर्वाद तो प्रदान करें, हम लोग दूर-दूर से केवल इन्हीं के दर्शनार्थ तो आते हैं, उनकी एक दृष्टिमात्र से हमारी सारी थकान दूर हो जाती है।

किसी अंश में भक्तों की अपनत्व भरी यह शिकायत मुझे सत्य ही प्रतीत होने लगती है और मैं माताजी से हँसी-हँसी में कहती भी हूँ कि लेखन के समय आपके साथ तो 'मयट्' प्रत्यय ही लग जाता है, तब आप सचमुच तद्रूप परिणत हो जाती हैं। उस समय माताजी का कहना होता है कि तन्मय हुए बिना सुन्दर कार्य की उपलब्धि नहीं होती है। अधिक जोर देने पर वे कहने लगती हैं– ध्यान और अध्ययन तो साधु का लक्षण ही है इसमें भी श्रावक यदि बुरा मानें, तो मैं क्या कर सकती हूँ? अब भक्तगण इस विषय पर स्वयं विचार करें और लिखाई-पढ़ाई में व्यस्त पूज्य माताजी से उनके बातचीत के समय पर ही बात करने का प्रयास करें क्योंकि उनकी यह तन्मयता जहाँ उनके स्वयं के लिए हितकारी है, वहीं लाखों लोगों को ज्ञान और भक्ति का मार्ग भी प्रशस्त करती है। यही तन्मयता उन्हें चिन्मयता प्रदान करती है।

➢चारित्रचन्द्रिका नाम की सार्थकता–

आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी के वाक्य ''चारित्तं खलु धम्मो'' के अनुसार जैनधर्म की नींव चारित्र पर ही टिकी है एवं सम्यग्दर्शन के साथ धारण किया गया अल्प चारित्र भी मोक्षमार्ग में साधक होता है, जबकि सम्यक्त्वरहित बहुत त्याग-तपस्यायुक्त चारित्र संसार का ही कारण होता है।

कसायपाहुड़ सूत्र ग्रंथ की जयधवला टीका में श्री वीरसेनाचार्य ने कहा भी है–

णाणं पयासओ तवो सोहओ संजमो य गुत्तियरो।
तिण्हं पि समाजोए, मोक्खो जिणसासणे भणिदं।।

अर्थात् ज्ञान स्व-परप्रकाशक होता है, तप से आत्मतत्त्व का शोधन होता है तथा संयम से आत्मा की रक्षा होती है एवं इन तीनों के संयोग-एकीकरण से प्राप्त अवस्था को जिनशासन में मोक्ष की संज्ञा प्रदान की गई है।

इसी मोक्षपद की शाश्वत सत्ता को प्राप्त करने हेतु अनादिकाल से मनुष्यगति में सर्वांगीण योग्य स्त्री-पुरुषों द्वारा अणुव्रत एवं महाव्रतरूप चारित्र धारण करने की परम्परा रही है। इन्हीं अवस्थाओं को देशचारित्र और सकलचारित्र के नाम से जाना जाता है। गृहस्थ श्रावक-श्राविकाएँ पाँच अणुव्रत, बारहव्रत,

ग्यारह प्रतिमा आदि व्रतों को पालन करके देशसंयमी कहलाते हैं तथा पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्तिरूप तेरह प्रकार के चारित्र को धारण करने वाले सकलसंयमी होते हैं।

इस ग्रंथ की मूलनायिका के रूप में जिन पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के जीवन दर्शन को ''चारित्रचन्द्रिका'' नामक इस ग्रंथ में प्रस्तुत किया गया है, उनके लिए कवि की ये पंक्तियाँ बिल्कुल सार्थक लगती हैं–

इनका कहना हम ज्ञान रखें, लेकिन चारित्र न खो डालें।
आचरण छूट जावे जिससे, हम ऐसा बीज न बो डालें।।
चारित्रहीन यदि ज्ञान मिला, तो बेड़ा पार नहीं होगा।
केवल कोरी इन बातों से, जग का उद्धार नहीं होगा।।

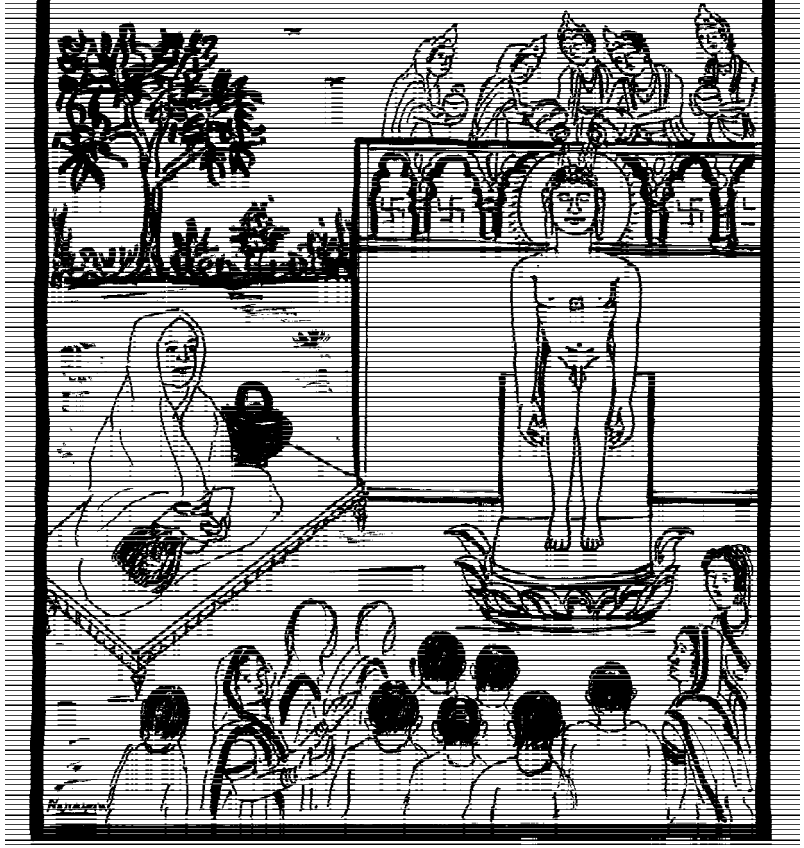
अर्थात् दृढ़ सम्यक्त्व के साथ इन्होंने 18 वर्ष की अल्प आयु से चारित्र के जिस दुर्गम कंटीले पथ पर कदम रखकर फूलों जैसा सुगंधित उपहार संसार को प्रदान किया है, उसी से प्रभावित होकर अयोध्या में श्रद्धालु भक्तों ने इन्हें ''चारित्रचन्द्रिका'' अलंकरण के द्वारा सम्मानित कर सचमुच में अपनी अमूल्य निधि का मूल्याकंन किया। सन् 1993 में प्राप्त इस उपाधि की सार्थकता से सम्पूर्ण देश परिचित हो इसी भावना से पूज्य ज्ञानमती माताजी के जीवन की असीमित विशेषताओं को अपने सीमित शब्दों में प्रस्तुत करने का यह मेरा अभिप्राय उनके चारित्र चन्द्रमा की चाँदनी से अपने अमावसी अंधियारे जीवन को प्रकाशित करने का प्रयास मात्र है।

मैंने सन् 1969 से इन्हें एक कर्मठ साध्वी एवं जन-जन की हितकारिणी जगन्माता के रूप में देखा है तथा सन् 1971 से तो आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत लेकर छाया की तरह हर पल पास रहकर इनके वैराग्यमयी जीवन के समस्त पहलुओं से एक जन्मजात शिशु की तरह परिचित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इनके चारित्र की चन्द्रिका-धवल चाँदनी से सैकड़ों सुकुमारिकाओं ने अमृतपान करके निज को धन्य किया है, इसीलिए बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती गुरुवर्य आचार्यश्री शान्तिसागर महाराज (मुनि परम्परा के जीर्णोद्धारक) के समान ये भी बालब्रह्मचारिणी आर्यिकापरम्परा की युगप्रवर्तिका के रूप में मानी जाती हैं।



अध्याय - 3

शाश्वत तीर्थ अयोध्या में प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक



अध्याय-3

शाश्वत तीर्थ अयोध्या में प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक

दक्षिण भारत में श्रवणबेलगोला के भगवान बाहुबलि महामस्तकाभिषेक की परम्परा तो एक हजार वर्षों से चली आ रही है किन्तु उत्तर भारत में महामस्तकाभिषेकों की परम्परा प्रायः नहीं देखी जाती थी अतः पूज्य माताजी की प्रेरणा से शाश्वत तीर्थ अयोध्या में विराजमान 31 फुट उत्तुंग प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा का महामस्तकाभिषेक युग-युग के लिए एक प्रेरणास्रोत बन गया।

➢द्वितीय बार किया गया ध्यान अद्वितीय बन गया–

धनतेरस की प्रत्यूष बेला थी, जब वीर निर्वाण संवत् 2518 समापन की राह देख रहा था। हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र के जम्बूद्वीप स्थल पर युगप्रवर्तिका, पूज्य 105 गणिनी, आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी ने प्रातःकालीन सामायिक में सुमेरु पर्वत का ध्यान करते-करते अयोध्या के भगवान ऋषभदेव का उन्हें ध्यान में ही दर्शन हो गया। भगवान महावीर स्वामी के कमल मंदिर एवं त्रिमूर्ति मंदिर के दर्शन करके जम्बूद्वीप की प्रदक्षिणा लगाते हुए वे मुझसे बोलीं–

''चन्दनामती! आज मेरे भाव अयोध्या तीर्थ की ओर विहार करने के लिए हो रहे हैं।'' मैं आश्चर्य से माताजी को देखने लगी कि आज कौन सी प्रबल प्रेरणा इन्हें प्राप्त हुई है? कहाँ तो सौ-पचास किलोमीटर विहार के लिए भी हकीम जी राय नहीं देते हैं क्योंकि चलने का अधिक परिश्रम इनके स्वास्थ्य के प्रतिकूल है, पुनः छह सौ किलोमीटर तक अयोध्या का रास्ता भला कैसे सोचा जा सकता है?

मेरी प्रश्नवाचक मुद्रा देखकर पूज्य माताजी स्वयमेव बोल पड़ीं–

''आज प्रातःकाल के ध्यान में मुझे अन्तर्प्रेरणा प्राप्त हुई है कि अयोध्या में विराजमान भगवान ऋषभदेव की उत्तुंग प्रतिमा का **''महामस्तकाभिषेक''** करवाने के लिए अयोध्या जाना है।''

थोड़े से वार्तालाप के बाद हम लोग अपनी वसतिका (रत्नत्रयनिलय) में आ गए। सामूहिक स्वाध्याय के अनन्तर क्षुल्लक मोतीसागरजी के समक्ष चर्चा आई लेकिन बात हँसी में उड़ गई। यह कहकर कि इतने लम्बे प्रवास के बारे में

सोचा ही नहीं जा सकता है। ''न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी'' इस सूक्ति को कहकर हम लोग निश्चिन्त हो गए किन्तु प्रबल प्रेरणा भला शारीरिक शक्ति कहाँ देखती है?

माताजी का चिन्तन चलता रहा कि अपने परमपिता आदीश्वर बाबा के पास कब और किस प्रकार पहुँचना है? ब्र.रवीन्द्र कुमार जी उस दिन दिल्ली गए हुए थे। अगले दिन कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी को वे हस्तिनापुर आए, चातुर्मास समापन की उस तिथि को सभी साधुओं के उपवास थे, मैंने अपना केशलोंच भी किया था। केशलोंच के बाद मध्यान्ह 11 बजे पूज्य माताजी रवीन्द्र जी से भी कहने लगीं कि मुझे अयोध्या तीर्थक्षेत्र की यात्रा हेतु विहार करना है।

थोड़ी देर हँसी मजाक के बाद विहार की इस भावना ने गंभीर रूप धारण कर लिया और माताजी बोलीं–''विहार तो मुझे करना है, रही बात आदिनाथ स्वामी के मस्तकाभिषेक की, उसका भार तुम्हीं (रवीन्द्र जी) को लेना होगा।''

एक बात यहाँ और स्मरणीय है कि राजस्थान की राजधानी जयपुर शहर के जैन श्रावकों ने सितम्बर 1992 में जयपुर में विशाल स्तर पर कल्पद्रुम महामंडल विधान आयोजित किया था। आचार्य श्री कुंथुसागरजी महाराज के सानिध्य में जम्बूद्वीप के सुप्रसिद्ध विद्वान पंडित सुधर्मचन्द्र शास्त्री एवं पंडित नरेश कुमार शास्त्री ने उस विधान को शास्त्रोक्त विधि से सम्पन्न कराया था। विधान में 1200 नर-नारियों ने पूजन की तथा प्रतिदिन 5000 लोग उस संगीतमयी पूजन को सुनने आते थे।

लाखों रुपये खर्च करके वहाँ के श्रावकों ने उस विधान को सम्पन्न कर राजस्थान में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया पुनः उन सभी ने निर्णय किया कि कल्पद्रुम विधान की रचयित्री पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के पास जाकर उनका अभिनन्दन करना है।

दिनाँक 18 अक्टूबर 1992 रविवार को जयपुर से 40 बसों एवं अनेक कारों में हजारों नर-नारी हस्तिनापुर पधारे। जम्बूद्वीप संस्थान के पदाधिकारियों ने उन सबका यथोचित आतिथ्य किया पुनः एक विशाल पांडाल में वहाँ उन सभी ने माताजी की अष्टद्रव्य से संगीतमय पूजन की और एक प्रशस्तिपत्र के माध्यम से पूज्य माताजी को **''आर्यिकाशिरोमणि''** की उपाधि प्रदान की।

खुशी में झूमते हुए उन जयपुर के नागरिकों ने गणिनी आर्यिकाश्री के चरणों में श्रीफल भेंट करके जयपुर में चातुर्मास करने का साग्रह निवेदन किया तथा यह प्रार्थना की कि हम लोग आपके सानिध्य में आपके ही द्वारा

रचित **''सर्वतोभद्रविधान''** इससे भी बड़े रूप में करेंगे, जिसमें 5 हजार नर-नारी पूजन में बैठेंगे तथा पचीसों हजार जनता प्रतिदिन आपका प्रवचन सुनकर लाभान्वित होगी। आपका यह जयपुर चातुर्मास हम इतिहास का अविस्मरणीय पृष्ठ बनाएंगे, आपकी स्वीकृति प्राप्त होते ही हम लोग आपके संघ का विहार पूरी व्यवस्था के साथ कराएंगे, प्रतिदिन सैकड़ों व्यक्ति आपके साथ पदविहार करेंगे.....इत्यादि।

इस प्रकार अपनी भक्ति भावनाएँ प्रगट कर तथा पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त कर जयपुर के भक्तगण तो चले गए किन्तु हम लोगों को कुछ चिन्तन करने का विषय वे प्रदान कर गए कि प्रत्यक्ष एवं परोक्ष में गुरु भक्ति कैसे होती है?

राजस्थान तो यूं भी भक्ति के क्षेत्र में सदा सरस रहा है इसीलिए वहाँ हमेशा साधुओं का सानिध्य बना ही रहता है।

24 अक्टूबर 1992 कार्तिक कृ. चतुर्दशी को जब अयोध्या विहार की प्रारंभिक वार्ता चल रही थी, तब रवीन्द्र जी को जयपुर के भक्तों की बात याद आ गई और वे बोल पड़े कि "माताजी! विहार ही करना है तो जयपुर की ओर करिये, वहाँ विशाल स्तरीय आयोजन हो सकते हैं। फिर हम सभी का यह कहना रहा कि इतने लम्बे विहार के बारे में तो आपको सोचना भी नहीं चाहिए क्योंकि स्वास्थ्य अनुकूल नहीं है तथा देश के हालात भी इन दिनों ठीक नहीं चल रहे हैं। अयोध्या के विवाद को लेकर कहीं भी किसी भी समय झगड़ा हो सकता है।"

उस दिन की बात तो लगभग यहीं पूरी हो गई, उसके बाद कई दिनों तक कोई चर्चा विहार संबंधी नहीं हुई अतः हम लोगों ने समझा कि अब माताजी ने अयोध्या विहार का अपना निर्णय बदल दिया है लेकिन उनके हृदय में अन्तर्प्रेरणा बराबर चलती रही जो पुनः प्रगट हुई 30 नवम्बर 1992 को।

➢प्रबल इच्छा को मिला एक सम्बल–

हुआ यूं कि उत्तरप्रदेश की तहसील फतेहपुर से जैन समाज के अध्यक्ष श्री सरोज कुमार जैन अपने अन्य और निकटस्थ साथियों के साथ हस्तिनापुर आए हुए थे। उन्होंने पूज्य माताजी के पास श्रीफल चढ़ाकर अवध प्रान्त में विहार करने हेतु निवेदन किया, तब माताजी मुस्कुराकर उनसे उधर के रूट की जानकारी करने लगीं। अवध के उन महानुभावों को तो शायद स्वप्न में भी उम्मीद नहीं थी कि माताजी का हमारे नगरों की ओर कभी विहार हो भी सकता है। बस वे जब भी आते थे तो निवेदन अवश्य करते थे कि माताजी!

क्या कभी आप अपनी जन्मभूमि की ओर भी ध्यान देंगी? आपका क्षेत्र ही आपका सानिध्य नहीं प्राप्त कर पा रहा है, यह तो **''दीपक तले अंधेरे''** वाली कहावत सिद्ध हो रही है।

सदैव की श्रद्धाभक्ति के अनुसार ही 30 नवम्बर को सरोज जी ने कहा था किन्तु इस बार की स्थिति देखकर वे कुछ आश्वस्त हुए और थोड़ी ही देर बाद मेरे पास आकर पूछने लगे–

''माताजी! क्या संघ का विहार वास्तव में हमारे प्रान्त की ओर हो सकता है?''

मैंने कहा–**''इसमें असंभव जैसी भी कोई बात नहीं है, भक्ति के बल पर सब कुछ संभव हो सकता है।''** फिर मैंने धनतेरस के दिन वाली थोड़ी सी बात भी उन्हें बताई, तब वे बड़े प्रसन्न हुए और कहने लगे कि **''लगता है अवध प्रदेश की लाटरी खुलने के दिन आ गए हैं।''**

उस समय हस्तिनापुर में क्षुल्लक मोतीसागर महाराज, ब्र.रवीन्द्र जी आदि कोई भी नहीं थे क्योंकि ये लोग सनावद (म.प्र.) क्षु. मोतीसागर जी की जन्मभूमि में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में गए हुए थे।

ये लोग अभी सनावद से वापस भी नहीं आए थे, उससे पूर्व पूज्य माताजी ने अयोध्या की ओर विहार करने का 90 प्रतिशत मन बना लिया और मुझे विहार की व्यवस्था बनाने हेतु निर्देश देने लगीं।

माताजी का पक्का निर्णय सुनकर मुझे कुछ घबड़ाहट सी होने लगी कि इतने कमजोर स्वास्थ्य में माताजी इतनी दूर कैसे विहार करेंगी? मैंने माताजी से कहा कि क्षुल्लक जी और रवीन्द्रजी के आने पर आप विचार-विमर्श करके निर्णय लीजिए किन्तु वे भला अब किसकी मानने वाली थीं! उन्होंने कहा कि तुम उधर प्रान्त में अब सूचना करा सकती हो कि फरवरी में मेरा विहार हस्तिनापुर से होगा।

मेरा हृदय अभी तक अन्दर से गवाही नहीं दे रहा था कि माताजी का विहार हो ही जाएगा, फिर भी मैंने टिकैतनगर के श्रावक प्रद्युम्न कुमार जैन (छोटीशाह) एवं फतेहपुर के सरोज जैन को संभावित विहार की सूचना भिजवा दी, ताकि पक्का निर्णय समाज के समक्ष आ सके।

➢6 दिसम्बर ने पुनः निर्णय बदलवाना चाहा–

यह एक अनहोना संयोग ही कहना पड़ेगा कि माताजी ने एक अत्यन्त विवादित एवं हरवक्त आग की लपटों में घिरे **''अयोध्या''** तीर्थक्षेत्र की ओर ही

विहार करने का निर्णय लिया, मानो भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि की प्रबल प्रेरणा ही उन्हें खींच रही थी। तभी एक बड़ा भारी प्रसंग आया– 6 दिसम्बर 1992 का, जब अयोध्या में हिन्दू-मुस्लिम विवाद जोरों से छिड़ गया और तमाम नरनारी बलिवेदी पर चढ़ गये।

पश्चिमी उत्तरप्रदेश के मवाना, मेरठ, सरधना आदि नगरों के लोगों को जब ज्ञात होना प्रारंभ हुआ कि पूज्य ज्ञानमती माताजी संघ सहित अयोध्या तीर्थ की ओर विहार करने वाली हैं, तब भक्तगण हस्तिनापुर आ-आकर अपनी विज्ञप्ति रखने लगे कि **''इस समय के माहौल में यहाँ से आपका अयोध्या के लिए विहार करना कथमपि उचित नहीं है।''**

कुछ लोगों ने माहौल का भय दिखाया एवं कुछ ने माताजी के स्वास्थ्य के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए कहा कि **''माताजी! अब आपको इधर ही आसपास थोड़ा-थोड़ा विहार करना चाहिए, ज्यादा दूर की यात्रा नहीं सोचना चाहिए।''** इसी तरह से अवध की ओर विहार करने की नरम-गरम वार्ता चलती रही, तभी दिसम्बर के अंतिम सप्ताह में टिकैतनगर के प्रद्युम्न कुमार जैन उर्फ छोटी शाह तथा सुभाषचन्द्र जैन हस्तिनापुर पहुँचे और पूज्य माताजी के श्रीचरणों में श्रीफल भेंट किया। छोटीशाह कहने लगे कि– **''माताजी! आपके इस विहार कराने का भार मैं अकेला उठाऊँगा और संघ को किसी तरह का कष्ट नहीं होने पाएगा।''**

अनेक ऊहापोहों के बाद माताजी ने अपनी पूर्ण स्वीकृति अयोध्या विहार के लिए प्रदान कर दी और संघपति के रूप में श्री छोटीशाह जी को मंगल आशीर्वाद दिया। ये लोग प्रसन्नमना घर वापस चले गये और धीरे-धीरे यह समाचार अवध की जनता में हवा की तरह फैल गया।इसी मध्य एक-दो ज्योतिषाचार्य ने भी आकर हम लोगों को बताया कि पूज्य माताजी के करकमलों से अयोध्या विकास का योग इतना प्रबल है कि कितनी भी अड़चनें आने पर इनके कदम अब रुक नहीं सकते हैं।

➢अयोध्या के लिए विहार का मंगल मुहूर्त–

जनवरी में भीषण सर्दी के कारण विहार करना संभव नहीं था किन्तु पूज्य माताजी की अन्तर आत्मा तो भगवान ऋषभदेव के दर्शन को व्याकुल थी अतः शुभमुहूर्त निश्चित किया-11 फरवरी 1993, फाल्गुन कृष्णा पंचमी का। यद्यपि माताजी के भक्तगणों को भली भाँति ज्ञात है कि इनके द्वारा संकल्पिक प्रत्येक कदम दृढ़ता के साथ सतत आगे ही बढ़ता है, वह कभी पीछे नहीं हटता

तथापि उनका रागी मन गुरु छाया से दूर रहने की विकलता से तड़पने लगा और उन्होंने हर संभव प्रयत्न किये कि माताजी का विहार किसी तरह स्थगित हो जावे।

इधर अवध प्रान्त में हर्ष का वातावरण छाया था, टिकैतनगर में संघपति छोटीशाह जी विहार की तैयारी में जुटे थे। वे समयानुसार 9 फरवरी को अपने लवाजमें के साथ हस्तिनापुर पहुँच गए और बताने लगे कि 8-10 दिन पूर्व हस्तिनापुर के मनोज कुमार जैन एवं मवाना (वर्तमान में दोनों मेरठ निवासी) के राकेश जैन के पत्र मेरे पास पहुँचे थे कि देश की परिस्थितियों के कारण पूज्य माताजी का विहार स्थगित हो गया है अतः आप लोग अब तैयारी न करें और न हस्तिनापुर आवें। तब मैंने पूछा– फिर भी आप पूरी तैयारी करके कैसे आ गए हैं? वे हंसकर कहने लगे– आखिर तो भगवान् भी भक्तों के वश में होते हैं, फिर पूज्य माताजी ने मुझे स्वीकृति प्रदान की थी, यदि कोई कारण था तो संघ से कोई सूचना जाती। मैंने तो सोच लिया कि अब चाहे हस्तिनापुर में सत्याग्रह ही क्यों न करना पड़े किन्तु मैं संघ को लिए बिना वापस नहीं लौट सकता हूँ।

पाठक समझ गए होंगे कि मोह के कारण ही इन भक्तों ने झूठे पत्र डाल दिये थे किन्तु पूज्य माताजी का संघ सहित मंगल विहार 11 फरवरी, फाल्गुन कृ. 5 को दिन में 2 बजे हस्तिनापुर से अवध प्रान्त की ओर हो गया। संयोग और वियोग के सुख-दुःख मिश्रित अनेक नेत्र अश्रुपूरित थे। जम्बूद्वीप का चप्पा-चप्पा अपनी माता को निहार रहा था तथा उनकी मनोकामना की सफलता हेतु अपने मंगल भाव प्रेषित कर रहा था।

➢ब्र. रवीन्द्र जी अधीर हो उठे–

संघ विहार करके अभी 8 किमी. दूर बहसूमा ही पहुँचा था, वहाँ दूसरे दिन 12 फरवरी को सबेरे 11 बजे सुभाषचन्द्र टिकैतनगर वाले पहुँचे और बताने लगे कि कल जब से आप लोगों का विहार हुआ है, तब से रवीन्द्रजी अत्यन्त व्याकुल हैं,पूरी रात सोए नहीं हैं, बिलख-बिलख कर रो रहे हैं। उनका हाल बताते हुए सुभाषजी स्वयं भी विह्वल होकर कहने लगे कि रवीन्द्र को हम लोगों ने बहुत समझाया किन्तु उन्होंने अभी भोजन भी नहीं किया है, उनकी आँखों से निरन्तर अश्रुधारा बह रही है और ज्यादा पूछने पर वे कहते हैं कि **''मैं अकेला कैसे रहूँगा?''** मैंने आपके पास उन्हें लाने की बड़ी कोशिश की किन्तु वे यहाँ भी नहीं आ रहे हैं। मुझे लगता है कि वे अपने को निपट एकाकी

अनुभव कर घबड़ा रहे हैं। माताजी! अब आप ही कुछ प्रयत्न कीजिए, उनकी दशा हमसे देखी नहीं जा रही है। आपका लम्बा प्रवास है, यदि इनका यही हाल रहा तो कैसे क्या होगा? मेरे मुँह से तुरंत निकला कि माताजी! यदि आप आदेश दें तो मैं वापस हस्तिनापुर भाई जी को समझाने चली जाऊँ?

यह अनहोनी घटना सुनकर पूज्य माताजी को भी आश्चर्य और दुःख हुआ। बहसूमा से मध्यान्ह 5 बजे मीरापुर के लिए विहार होना था उससे पूर्व माताजी ने संघपति छोटीशाह को, सुभाष को तथा कु. इन्दु, कु. सोनी को हस्तिनापुर भेजा कि जबर्दस्ती रवीन्द्रजी को मेरे पास ले आओ। शाम 4 बजे संघ का मीरापुर मंगल पदार्पण हुआ। वहाँ सबके साथ रवीन्द्र जी आए। उनकी आँखें ही अन्दर की वेदना प्रगट कर रही थीं। सबसे पहले तो स्नान करवाकर उन्हें जलपान कराया गया पुनः माताजी ने कहा कि अब तुम्हें हस्तिनापुर न जाकर मेरे साथ ही रहना है। धीरे-धीरे वार्तालाप होते-होते वे भी कुछ शान्त हुए और संघ का विहार निर्विघ्नतया प्रारंभ हुआ और सभी चल पड़े अपने गन्तव्य की ओर अयोध्या के बाबा श्री ऋषभदेव के दर्शन की अभिलाषा लेकर।

इसके बाद रवीन्द्रजी का हस्तिनापुर और संघ में आने-जाने का क्रम बना रहा। पूज्य माताजी ने उस दिन सन् 1952 का वह दिन याद किया, जब वे दो वर्ष के छोटे भाई रवीन्द्र के हाथों से अपनी धोती छुड़ाकर सदा के लिए घर से निकली थीं। बाद में अपनी जीजी के वियोग में वह बहुत बीमार हुआ किन्तु वैरागन जीजी को तिल भर भी ममता न छू पाई थी। आज के इन क्षणों में तो ऐसी कोई परिस्थिति नहीं थी किन्तु पूज्य माताजी के विहार से पूरा हस्तिनापुर इस तरह वीरान हो गया था कि वहाँ रहने व आने वाले हर व्यक्ति को कुछ दिन इसी तरह दुःख उत्पन्न कराते रहे।

➢चरण पड़ते ही गंगा में डूबा व्यक्ति तिर गया–

घटना है 13 फरवरी 1993 के अपरान्ह 4 बजे की, जब पूज्य माताजी मीरापुर से चलकर 14 किमी. दूर बैराज के गेस्ट हाउस पर पहुँची थीं। बैराज के पुल पर एक अतिशय चमत्कार हुआ, जिसे सभी ने आँखों से देखा। हुआ यूँ कि माताजी के आने से एक घंटे पहले एक व्यक्ति स्नान करते-करते गंगा में गिर गया था। वह बेचारा उस तेज धार में तैरने की कोशिश कर रहा था किन्तु लगभग डूबने ही वाला था कि माताजी के चरण उस पुल पर पड़े और न जाने कहाँ से 3-4 व्यक्तियों ने आकर उसी क्षण उसे बचा लिया। पानी से निकलते ही उस गिरे हुए मनुष्य की दृष्टि सबसे पहले पूज्य माताजी पर पड़ी और वह वहीं

चीख पड़ा–अरे अम्माजी! आपकी कृपा से आज मैं बचा हूँ, मुझे आशीर्वाद प्रदान कीजिए। बचाने वाले आदमी भी कहाँ से आए थे एवं कहाँ चले गए? कुछ पता ही नहीं चला। इसीलिए तो कवियों ने तपस्वी सन्तों की महिमा बताते हुए कहा है–

''वे गुरु चरण जहाँ धरें, जग में तीरथ होय।''

➢परीक्षा की कठिन घड़ियाँ–

सुकुमाल, सुकौशल मुनियों की तथा चन्दनबाला, सीता आदि आर्यिकाओं की कोमल काया एवं उनके कठोर तप की कथाएँ पुराणों में पढ़ने को मिला करती हैं। वर्तमान के साधु-साध्वी भी उस तपस्या की साधना कर अपनी मानव पर्याय सार्थक करते हैं। मैंने सुना भी था कि दीक्षा लेने के बाद अनेक परीक्षा की घड़ियाँ सामने आती हैं, जिन्हें सहन करने से ही उत्तीर्णता प्राप्त होती है और भविष्य के संकट झेलने की क्षमता जागृत होती है। बड़े उत्साहपूर्वक मैंने भी असीमित कल्पनाएँ संजोकर हस्तिनापुर से विहार किया था किन्तु अभी तो दो दिन ही बीते थे कि 13 फरवरी को मेरे पैरों में बड़े-बड़े छाले पड़ गए। अंगुलियों के सहारे चलने से सारी अंगुलियों में भी चने जैसे फफोले उठ आए। यह शायद मेरी कठिन परीक्षा थी कि अभी से तुम्हारा यह हाल है तो छह-सात सौ किलोमीटर का रास्ता कैसे पार कर पाओगी? पूज्य माताजी मुझे देखकर कभी चिन्तित होतीं कि कैसे क्या होगा? कभी वे साहस दिलातीं और कहतीं कि पहले मुझे भी इसी तरह छाले पड़ते थे, खून बहता था। मैंने कहा कि लगता है भगवान् ऋषभदेव मेरी कड़ी परीक्षा ले रहे हैं। मेरे जीवन की ये पहली घड़ियाँ थीं, जब मैंने साधु अवस्था का पद विहार कष्ट इस तरह झेला था। चलते समय जो कष्ट होता था, वह सब अपने विश्रामस्थल पर पहुँचकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद एवं मातृत्व स्नेह पाकर समाप्त हो जाता था।

आश्चर्य तो मुझे स्वयं पर उस दिन हुआ, जब 14 फरवरी को बिजनौर पहुँचते ही 15 ता. को सुबह एक डाक्टर महोदय ने आकर मेरी स्थिति देखते ही एक बड़ा सा छाला पकड़कर नोंच दिया, अब अन्दर की लाल खाल दिखने लगी थी। प्रत्यक्ष जाहिर था कि अब कुछ दिन विहार नहीं हो सकता है। डॉक्टर ने कुछ मल्हम लगाकर पट्टी बाँध दी और बोले कि 2-4 दिन चलना नहीं है वर्ना सेप्टिक होने का डर है।

जिस दिन से हस्तिनापुर से विहार हुआ था, प्रत्येक नगर में प्रोग्राम तारीखों के हिसाब से अप-टू-डेट तैयार कर लिए गए थे। अब बिजनौर में

रुकने का मतलब था कि आगे कई दिनों का कार्यक्रम अस्त-व्यस्त होता। 15 फरवरी को वहाँ विश्राम था, अगले दिन मैंने हृदय में भगवान का स्मरण किया और पूज्य माताजी का आशीर्वाद मिला, बस रास्ता कैसे तय हो गया, पता ही न चला। रास्ते में बरसात आई तो मुझे चलने में और अधिक सुविधा ही महसूस हुई।

हाँ! रास्ते में मैं सदैव पूज्य माताजी द्वारा बताया हुआ यह मंत्र अवश्य पढ़ती रहती थी– **''ॐ ह्रीं अनंतबलप्राप्तये श्री सिद्धपरमेष्ठिने नमः।''**

यद्यपि 28 फरवरी तक मुझे पैर के छालों से काफी तकलीफ रही, फिर भी विहार कभी रुका नहीं, इसे मैं प्रभु का आशीर्वाद समझती हूँ। शायद परीक्षा में उत्तीर्ण भी हुई तभी अपने गन्तव्य तक पहुँच सकी। मेरे साथ में टिकैतनगर के श्री मदनलाल जैन पैदल चलते हुए मेरे कष्टों का अनुभव करते रहते थे। वे अपने साथियों से कहते थे–

रक्त की धारा पैरों से बहती रही,
चन्दनामती की पदयात्रा चलती रही।।

वास्तव में यह जैनीचर्या इसीलिए तलवार की धार के समान कही गई है कि इसमें कहीं किसी शिथिलता की गुंजाइश नहीं है। पंचमकाल के अंत तक दिगम्बर जैन साधु-साध्वियों की यह चर्या इसी प्रकार चलती रहेगी, इसमें संदेह नहीं करना चाहिए।

➢अहिच्छत्र तीर्थ के प्रथम दर्शन कर अमूल्य न्योछावर भेंट की–

जैसे नई दुल्हन का प्रथम बार मुख दर्शन करके सभी पारिवारिक जन उसे कुछ न कुछ भेंट देते हैं उसी प्रकार पूज्य माताजी ने **''अहिच्छत्र''** तीर्थ के प्रथम दर्शन कर वहाँ एक बहुमूल्य भेंट समर्पित की।

जीवन में प्रथम बार वे 13 मार्च 1993 को अहिच्छत्र पहुँची थीं। वहाँ 3 दिन विश्राम भी रहा पुनः तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ के दर्शन से माताजी के हृदय में भावना जागृत हुई कि यहाँ तीस चौबीसी तीर्थंकरों की सात सौ बीस जिन प्रतिमाएँ विराजमान होनी चाहिए। इसी भावना के अनुसार उन्होंने 16 मार्च 1993 मंगलवार को भगवान ऋषभदेव की जन्मजयंती महोत्सव में प्रवचन करते हुए इस योजना को घोषित किया और इस निर्माण की जिम्मेदारी प्रेमचंद जैन, तेल वाले मेरठ निवासी को सौंपी। जिनेन्द्र भक्ति का अतिशय तुरंत फलित हुआ, योजना की घोषणा होते ही अनेक श्रद्धालुओं ने अपने-अपने नाम प्रतिमा हेतु लिखवाने शुरू कर दिये। देखते ही देखते लाखों रुपये

की स्वीकृतियाँ हो गईं। पूज्य माताजी की वह भेंट वहाँ साकार रूप ले चुकी है। इस भेंट को पूज्य माताजी भगवान पार्श्वनाथ के श्री चरणों में अपनी श्रद्धा पुष्प न्योछावर मानती हैं। उनका कहना है कि साधु और श्रावक दोनों के सम्मेलन से ही तीर्थों का विकास संभव है।

अहिच्छत्र की एक नई संस्था **''ज्ञानतीर्थ''** है, वहीं हमारे संघ का तीन दिन विश्राम रहा। इस संस्था के प्रमुख श्री सलेकचन्द्र जैन दिल्ली वालों को भी माताजी ने मंदिर निर्माण की उचित रूपरेखा तथा **''पार्श्वनाथ कला मंदिरम्''** नाम से नवीन आकर्षक योजना भी बताई जिसमें भगवान पार्श्वनाथ के जीवन से संबंधित इलेक्ट्रॉनिक झांकियों को दर्शाया जावे, तो जनता का आकर्षण बढ़ेगा।

➢बाल कल्याण का अनूठा दृश्य–

बच्चे हमारे देश और समाज की आधारशिला हैं, उन्हें सम्बोधित करना साधुओं का भी परम कर्तव्य होता है। पूज्य ज्ञानमती माताजी तो इस दिशा में पूर्णरूप से अग्रसर रहती हैं। तभी तो उन्होंने जहाँ अष्टसहस्री जैसे क्लिष्टतम ग्रंथ का हिन्दी में अनुवाद किया, वहीं बालोपयोगी **''बाल विकास''** नाम से 4 लघु पुस्तकें भी लिखी हैं जो विभिन्न परीक्षा बोर्डों में पढ़ाई जा रही हैं।

बरेली में मंगल पदार्पण करने के बाद वहाँ के एडवोकेट सत्येन्द्र कुमार जैन ने एक स्कूल में पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्रवचन कराने की चर्चा की थी पुनः 22 मार्च 1993 को **''बरेली फ्लोर मिल''** से **''फरीदपुर''** के रास्ते में वह स्कूल आया। स्कूल का नाम था– **''मानस स्थली पब्लिक स्कूल''**। यहाँ पूर्व नियोजित कार्यक्रम के अनुसार सारा स्टॉफ संघ के स्वागत को आतुर था। स्कूल के ''लेक्चर हॉल'' में हम लोगों के प्रवचन हुए पुनः माताजी ने अपने मंगल उद्बोधन में अहिंसा और सदाचार के विषय में बच्चों को बताया और वहाँ के शिक्षक-शिक्षिकाओं को आशीर्वाद प्रदान किया।

➢जिनकी दृष्टिमात्र से खीर अक्षय हो गई–

बात है 24 मार्च 1993 की, जब हम लोग प्रातः ''टिसुवा'' से ''फतेहगंज'' आए थे। संघ संचालक छोटी शाह जी ने उस दिन अपने अतिथियों के लिए खीर बनाई थी। संयोगवश वहाँ टिकैतनगर और तहसील फतेहपुर के कई लोग पहुँच गए थे अतः छोटी शाह को चिन्ता हो गई कि कहीं खीर कम ना पड़ जाए। दूध और मिलने की कोई उम्मीद नहीं थी और वे सबको पेट भर खीर खिलाना चाहते थे।

पूज्य माताजी भोजनशाला के पास वाले कमरे में ही भगवान का अभिषेक

देखने जा रही थीं कि वहीं छोटीशाह से बोल पड़ीं–मेहमानों के लिए क्या बनाया है? उन्होंने कहा–"माताजी! खीर बनाई है। यह देखिये! बन गई है, आप आशीर्वाद दीजिए कि कम ना पड़े क्योंकि लोग ज्यादा हो गए हैं।" पूज्य माताजी ने अनायास ही उस पर दृष्टि डाली और बोलीं–चिन्ता मत करो, कोई कमी नहीं होगी।"

संघपति छोटीशाह आज भी उस प्रसंग को याद करते ही रोमांचित और गद्गद हो जाते हैं तथा अनेक लोगों के समक्ष भी कहने लगते हैं कि उस दिन मेरी वह थोड़ी सी खीर अक्षय हो गई। सैकड़ों लोगों के खाने के बाद भी मैंने वह खीर गाँव वालों को खिलाई, फिर भी शाम तक बची रही पुनः दूसरे दिन सवेरे कुछ लोगों को बाँटकर बर्तन खाली किया।

यह सब दीर्घकालीन तपस्या एवं त्याग का ही प्रभाव है जो पंचमकाल में भी दृष्टिगोचर हो रहा है। गुरु की कृपा प्रसाद से सन् 1993 एवं 1994 छोटीशाह के लिए आर्थिक दृष्टि से भी अति उत्तम रहे।

➢जैनियों को भी जैनत्व सिखलाने की आवश्यकता–

कहते हैं कि सोते को जगाने की कला तो संसार जानता है किन्तु जागते मानवों के ज्ञानचक्षु खोलकर जगाना केवल सद्गुरु ही जानते हैं। बरेली और सीतापुर के बीच में "शाहजहाँपुर" एक विख्यात शहर है। वहाँ जैन मंदिर है और लगभग 25-30 घर भी जैनियों के हैं किन्तु पहुँचने पर ज्ञात हुआ कि मंदिर में कभी पूजन प्रक्षाल भी ठीक से नहीं होती है।

पूज्य माताजी ने मंदिर की वेदी में जो कमी थी, उसे अपने हाथों से दूर किया तथा सबको जैन धर्म के प्रति जागरूक किया। वहाँ संघ 27-28 मार्च दो दिन रुका। मंदिर के पास ही भगवानदास जैन के मकान में ही हम लोग ठहरे थे। गुरुचरणों का एवं उपदेश का वहाँ जो प्रभाव पड़ा, उसे आज तक भी वहाँ के लोग आकर बताते हैं और ज्ञानमती माताजी के कार्यक्रमों का पता लगते ही वे लोग सदैव वहाँ पहुँचने की कोशिश करते हैं।

➢खतरा डरकर भाग गया–

शाहजहाँपुर से लगभग 30 किमी. दूर नहर कालोनी की एक कोठी पर हम लोगों का रात्रि विश्राम था। यहाँ रात्रि में कुछ पुलिसवालों ने आकर संघ के लोगों में दहशत पैदा कर दी कि यहाँ तो रोज दुर्घटनाएं होती हैं। यह डकैत-बदमाशों का अड्डा है, आप लोगों को यहाँ नहीं ठहरना चाहिए क्योंकि हम लोग सुरक्षा नहीं कर सकते हैं।

संघपति थोड़ा डर गए और बोले–अब तो रात हो गई है, हमारे साधु रात्रि में विहार नहीं करते हैं अतः हम लोग यहीं ठहरेंगे, आपसे जो सहायता बने कर देना अन्यथा हम लोग भाग्य भरोसे हैं। उन्होंने माताजी को यह बात बताई एवं बोले कि पुलिस वाले कह गए हैं कि रात्रि में कोई कमरे से बाहर मत निकलना।

माताजी ने मुस्कराकर कहा–"छोटी शाह! सबसे कह दो कोई चिन्ता न करें। जितनी बार जिसको बाहर निकलना है निकले, किसी को कोई खतरा नहीं रहेगा। मैं सबकी पहरेदारी करने के लिए बैठी हूँ।" सभी लोग हँस पड़े किन्तु चूँकि कई गृहस्थ महिलाएं भी साथ में थीं, सबके पास 10-5 तोले सोने के जेवर भी थे अतः सबके मन के अन्दर डर घुसा था। प्रतिदिन की भाँति सबने मंगल प्रभात में आँखें खोलीं और कोई खतरे की स्थिति सामने नहीं आई। **"साधु की तपस्या के समक्ष ऐसे अनेक खतरे भी स्वयं डरकर भाग जाते हैं"** यह मैंने इस प्रवास में अनुभव किया।

➢सीतापुर से शुरू हुई अयोध्या की विकास यात्रा–

सीतापुर अवधप्रान्त का प्रवेश द्वार माना जाता है। वहाँ 4 अप्रैल 1993 चैत्र शु. 12 को पूज्य गणिनी माताजी के संघ का मंगल पदार्पण हुआ। दूसरे दिन उनके सानिध्य में महावीर जयंती पर्व मनाया गया पुनः 8 अप्रैल–वैशाख कृष्णा दूज को आर्यिकाश्री का 37 वाँ आर्यिका दीक्षा जयंती समारोह खूब धूम-धाम से आयोजित किया गया। अवधप्रान्त के समस्त ग्राम, नगर, शहरों की भारी भीड़ सीतापुर में अपनी विभूति के प्रथम दर्शन करने आई।

यहाँ के कर्मठ कार्यकर्ताओं ने सुन्दर व्यवस्था बनाई। सहगल धर्मशाला के पास विशाल पांडाल में समारोह सम्पन्न हुआ। सभा के बीच में ही अयोध्या के उद्धार और विकास का माहौल बना। पूज्य माताजी ने अयोध्या में भूत, वर्तमान एवं भविष्यत्काल संबंधी त्रिकाल चौबीसी तीर्थंकरों की 72 प्रतिमाओं का एक नया मंदिर बनाने की प्रेरणा दी, तत्क्षण ही 15 मिनिट में समस्त प्रतिमाओं के दातार भी घोषित हो गए। इस प्रकार शुभलक्षणपूर्वक अयोध्या के विकास की कहानी का शुभारंभ हुआ।

सीतापुर निवासी एक वृद्ध महानुभाव विष्णुकुमार जैन (मुन्ने बाबू) ने उस दिन माताजी के समक्ष संकल्प किया कि यदि आप अयोध्या तीर्थ पर चातुर्मास करेंगी, तो मैं अपना पूरा समय वहीं निकालूँगा। उन्होंने सपत्नीक अपने वचन का निर्वाह किया और माताजी के प्रवास में अपना पूरा समय अयोध्या के लिए प्रदान किया।

➢पीहर में बेटी की तेज आवाज सुनकर दिल्ली वाले बोल उठे–

दीक्षा जयंती की प्रवचन सभा में पूज्य माताजी एवं मेरा ओजस्वी प्रवचन सुनकर दिल्ली से आई जिनेन्द्र प्रसाद ठेकेदार की धर्मपत्नी सौ. विमला देवी बोल उठीं–

''माताजी! जैसे पीहर में पहुँचकर बेटी की आवाज तेज हो जाती है, वैसे ही आज मुझे लगता है कि आप लोगों में भी अपने पीहर अवध में आने से काफी ओजस्विता और अपनत्व जागृत हो गया है। तभी तो आपने अधिकारपूर्ण भाषा में अयोध्या की बात कही और यहाँ की जनता ने भी कितने अपनत्व भाव से उसे स्वीकार कर यह उत्साह प्रदर्शित किया है।'' उनका कहना था कि ''आपकी ऐसी जोशीली वाणी मैंने पहले कभी नहीं सुनी थी तो यह जन्मक्षेत्र के परमाणुओं का ही प्रभाव है।''

➢दान देय मन हरष विशेषै–

सीतापुर के ही एक श्रावक हैं श्री शीतल प्रसाद जी। उनके लड़के वीरेन्द्र कुमार जी के यहाँ मेरा आहार हुआ था। वे अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति के श्रावक हैं सदा दानादि करते रहते हैं। उस दिन मेरे आहार के बाद वह अनायास बोल पड़े–माताजी! मैं संघ में एक माइक सेट दान में देना चाहता हूँ। खैर, साधुओं को संघ संबंधी व्यवस्था से क्या लेना-देना? मैं आहार के बाद वापस मंदिर जी आ गई और वह महानुभाव संघ में आकर बहनों को एक माइक सेट दे गए पुनः अगले दिन वे मेरे पास आकर कहने लगे कि माताजी! मेरा तो उसी दिन 1 घण्टे में दुकान पर 25-30 हजार रुपये का फायदा हो गया। वास्तव में यह सब गुरुभक्ति एवं दान की महिमा है, तभी तो दान के विषय में कहा है कि–

''दान देय मन हरष विशेषै, इह भव जस परभव सुख देखे''।

➢अवध का पहला केशलोंच बिसवां में–

कई दिन से महमूदाबाद के लोग संघ के आगमन आदि का माहौल बनाते हुए अपेक्षा कर रहे थे कि पूज्य माताजी का केशलोंच समारोह हम महमूदाबाद में मनाएँ। कार्यक्रम लगभग निर्णय की कोटि में ही पहुँच गया था किन्तु दिनाँक 11 अप्रैल को माताजी ने अपनी डायरी देखी तो बोल पड़ीं कि अभी महमूदाबाद पहुँचने में लगभग 8 दिन लग जाएंगे और मेरा केशलोंच का समय आ गया है अतः कल बिसवां में मैं केशलोंच करूंगी।

यह अनहोना समाचार सुनते ही बिसवां वालों की मानों लाटरी खुल गई। उन लोगों ने आनन-फानन में एक रात के अन्दर सारी तैयारी कर ली। वहाँ

शिवाले के प्रांगण में पांडाल बना और जैन-अजैन तमाम जनता ने जैन साध्वी के केशलोंच का यह प्रथम दृश्य अपने नगर में देखा। इस अवसर पर अहिंसा-शाकाहार संगोष्ठी भी की गई, जिसमें स्थानीय 5-6 वक्ताओं ने अच्छे वक्तव्य प्रस्तुत किये। केशलोंच की बोलियों के माध्यम से स्थानीय जैन समाज को लगभग 35-40 हजार रुपये की आय हुई। सामान्य जनता एवं प्रबुद्ध वर्ग ने संप्रदाय का भेद मिटाकर माताजी की मंगलवाणी का पूरा लाभ उठाया तथा मांसाहार, शराब, जुंआ आदि व्यसनों का सैकड़ों लोगों ने त्याग किया। वहाँ पधारे महमूदाबाद के भूतपूर्व विधायक (भाजपा) ने भी उस दिन प्रवचन से प्रभावित होकर मांसाहार का त्याग कर दिया।

➢सिधौली में मंदिर संबंधी विवाद दूर हुआ–

15 अप्रैल 1993 को संघ का प्रवेश सिधौली में हुआ। सारा नगर तोरण द्वारों से सुसज्जित था, सर्वोदय स्कूल के बच्चों ने जुलूस में शामिल होकर मंगल आसी उतारी। यहाँ भी ''कनोड़िया भवन'' के प्रांगण में ''अहिंसा सम्मेलन'' में पूज्य माताजी एवं हम लोगों के प्रवचन हुए। कार्यक्रम में परगनाधिकारी तथा डी.वाई.एस.पी. आए और उन लोगों ने माँसाहार का पूर्णरूपेण त्याग किया।

सिधौली में एक जैन मंदिर है, वहाँ सन् 1989 में मैंने ब्रह्मचारिणी अवस्था में इन्द्रध्वज विधान करवाया था, उस समय से मंदिर में दो नई वेदियाँ बनाने की योजना चल रही थी किन्तु उसके विस्तारीकरण में आपसी विवाद हो गया था अतः वह कार्य अधूरा पड़ा था। पुनः वह विषय पूज्य माताजी के समक्ष आया, तब उन्होंने आपस में विचार-विमर्श करके शास्त्रीय आधार से उनका समाधान दिया, जिससे वहाँ के सारे विवाद समाप्त हो गए और मंदिर को बढ़ाने हेतु शिलान्यास माताजी के सानिध्य में हुआ, अब उसका निर्माण पूर्ण हो चुका है। वहाँ की समाज के विशेष आग्रह पर ब्र. कर्मयोगी रवीन्द्रकुमार जी ने जयपुर से उनकी प्रस्तावित मूर्तियाँ भी शीघ्र बनवाकर समाज को दे दीं। उनकी अब पंचकल्याणक भी हो चुकी है।

➢महमूदाबाद में ननिहाल तरीके का स्वागत–

जन्म के रिश्ते से महमूदाबाद पूज्य माताजी एवं हमारा ननिहाल है। हमारी माँ मोहिनीजी के पिता श्री सुखपालदास जैन यहाँ के जाने माने पंडित कहे जाते थे। संजोग भी कैसा बना कि नाना-मामा अपनी भानजी के दर्शन को भी तरस गए क्योंकि ज्ञानमती माताजी सन् 1952 के बाद कभी यहाँ आई ही नहीं थीं। अब जब सौभाग्य से उनका आगमन अवध में हुआ, तब वे सभी

संसार से चले गए हैं। हम लोगों के महमूदाबाद पहुँचने से पूर्व 21 फरवरी 1993 को एक मामा, जिनका नाम ''भगवानदास'' था, वे भी माताजी के आगमन की खुशियों को हृदय में रखकर ही स्वर्ग चले गये।

खैर! इन संबंधियों से अब माताजी को क्या लेना देना? यदि इनके प्रति इन्हें जरा भी स्नेह होता, तो क्या 40 वर्षों में कभी अपने जन्म क्षेत्र में जाने का विचार न बनातीं? यह तो धरती का सौभाग्य ही कहना होगा कि अयोध्या के भगवान् ऋषभदेव के दर्शन के निमित्त से पूज्य माताजी अवध में पधारीं और छोटे-छोटे नगरों को भी उनके पदार्पण का लाभ प्राप्त हुआ।

इसी श्रृंखला में महमूदाबाद का भी नम्बर आया था। 20 अप्रैल 1993 को नगर की हर गली अपनी बेटी की इन्तजारी में ढेरों पुष्प बरसाने को आतुर थी। ज्यों ही संघ का पदार्पण नगर में हुआ कि एक किमी. दूर से ही श्रद्धालुभक्त बैन्ड बाजे, संगीत मंडली आदि के साथ पूज्य श्री का स्वागत करने पहुँच गए। किसी विवाह में भी शायद ऐसी खुशियाँ नहीं मनाई गई होंगी, जो 20 अप्रैल को सब ने सामूहिक रूप से मनाई थी। इतनी पुष्पवृष्टि महमूदाबाद में हुई कि पूरा बाजार गुलाब के फूलों से पट गया था।

नगर के राजा साहब भी स्वागत करने आए। यहाँ लगभग 8 दिन वास्तव्य रहा, इसी मध्य चारित्र निर्माण संगोष्ठी हुई। अक्षय तृतीया पर्व मनाया गया तथा माताजी के सार्वजनिक प्रवचनों से पूरे नगर की जनता ने लाभ प्राप्त किया।

यहाँ आयोजित अहिंसा संगोष्ठी में डा. शेखर जैन, अहमदाबाद एवं प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन, फिरोजाबाद के प्रवचनों से जनता लाभान्वित हुई एवं दोनों विद्वानों का स्वागत हुआ।

➢आहारचर्या का विहंगम दृश्य–

इन नगरों में 15-20 चौके लगाकर जब लोग अपने-अपने घरों के आगे द्वारापेक्षण करने खड़े होते थे तो सचमुच चतुर्थकाल जैसा दृश्य उपस्थित होता था। हर श्रावक ज्ञानमती माताजी को तरह-तरह की विधि बनाकर पड़गाता और याचक दृष्टि से उनकी ओर देखकर मानों आँखों से कहता था कि **''हे माताजी! बस मेरे घर में आ जाओ।''** किन्तु साधु को आहार के समय न सेठ चाहिए न साहूकार, उन्हें न सोने की मुहरें चाहिए न अनेक फलों का ढेर। बस, जिसके यहाँ माताजी की विधि मिल गई, वही अपना भाग्य सराहने लगा। आहारचर्या के समय सैकड़ों व्यक्ति आगे-पीछे भागते थे क्योंकि पूरा

नगर इस कौतुक को देखने के लिए उमड़ पड़ता था। आहार के इन प्रसंगों पर मर्यादा पुरुषोत्तम राम की आहारचर्या का वर्णन अवश्य याद आता था।

➢छोटे-छोटे गाँवों में भी बड़ा स्वागत हुआ–

पैतेपुर और बेलहरा इन छोटे गाँव वालों ने भी संघ का जी भर कर स्वागत किया। 1 किमी. दूर से ही शाही जुलूस, पूज्य माताजी के ऊपर चंदोवा, नगर भर में तोरणद्वार आदि सजाए गए थे। सार्वजनिक सभाओं में मंगल प्रवचन, संघपति महोदय का भावभीना स्वागत इन सब कार्यों ने छोटे नगरों का नाम भी इतिहास में जोड़ दिया।

➢प्रथम मस्तकाभिषेक इतिहास का श्रीगणेश फतेहपुर से–

तहसील फतेहपुर की जैन समाज के अध्यक्ष सरोज कुमार जैन हस्तिनापुर से लेकर पूरे रास्ते बराबर आते रहे और छोटी शाह से मार्ग संबंधी व्यवस्था की जानकारी प्राप्त करते रहे। इनके साथ में वहाँ के अनेक महानुभाव अहिच्छत्र से ही अपने नगर पदार्पण की बात करने लगे थे। काफी इंतजार के बाद 29 अप्रैल को पूज्य माताजी का संघ सहित मंगल पदार्पण फतेहपुर में हुआ। 3 किमी. दूर से ही विशाल जुलूस के मध्य पुष्पवृष्टि का आकर्षक दृश्य था। स्वागत बैनर, अनगिनत तोरण, जगह-जगह दूध से चरण प्रक्षालन, मंगल आरती तथा जन-जन की आँखों में स्नेह अश्रु अपनी विभूति के प्रति असीम वात्सल्य के प्रतीक थे।

यहाँ के एक श्रावक निर्मल कुमार जैन काफी दिनों से जीवन-मरण के झूले में झूल रहे थे, सो उन्हें पूज्य माताजी का अपमृत्युघातक विशेष आशीर्वाद प्राप्त हुआ।

2 मई 1993 को फतेहपुर में श्रावक सम्मेलन एवं अयोध्या तीर्थक्षेत्र कमेटी की बैठक का कार्यक्रम पूर्वसुनियोजित था। सरोजकुमार जी एवं उनके सहयोगियों ने रात भर जागरण करके पांडाल एवं मंच को सुन्दर ढंग से सुसज्जित किया और आगत अतिथियों का जी भरकर स्वागत किया।

अयोध्या की बैठक श्री सुमेरचन्द पाटनी की अध्यक्षता में हुई। उसी में पूज्य माताजी ने सबके समक्ष अयोध्या में भगवान ऋषभदेव के महामस्तकाभिषेक महोत्सव की योजना बताते हुए एक महोत्सव समिति की घोषणा की। उन्होंने अपने श्रीमुख से ही महोत्सव समिति के अध्यक्ष के रूप में निर्मल कुमार जैन सेठी एवं महामंत्री के पद हेतु कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी का नाम घोषित किया, जिसको सभी ने प्रसन्नतापूर्वक गुरु आज्ञा रूप में स्वीकार किया। इसी

प्रकार समिति के कोषाध्यक्ष छोटीशाह चुने गए एवं कलश आवंटन के अध्यक्ष सुमेरचन्द पाटनी बनाए गए और महोत्सव के प्रचार का कार्य यहीं से प्रारंभ हुआ।

फतेहपुर में मात्र 4 दिन आर्यिका संघ का प्रवास रहा किन्तु उसी मध्य अनेक निर्माणात्मक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक कार्यक्रमों से जैन-अजैन सभी ने अपूर्व लाभ प्राप्त किया। पूज्य माताजी का **''गणिनी पद प्रतिष्ठापना समारोह''** भी 2 मई को यहीं मनाया गया जिसमें शोभायात्रा निकाली गई तथा माताजी के करकमलों में एक बृहद् अभिनन्दन पत्र समर्पित किया गया, संघपति छोटीशाह को भी सम्मान पत्र से सम्मानित किया गया।

➢अतिशय क्षेत्र त्रिलोकपुर के दर्शन–

बाईसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ के अतिशयों से पवित्र नगरी त्रिलोकपुर में 4 मई 1993 को आर्यिका संघ का शुभागमन हुआ। यहाँ के कर्मठ कार्यकर्ता पदमचन्द जैन पूज्य माताजी के अनन्य भक्त हैं। त्रिलोकपुर कार्यक्रम बनवाने में इन्होंने अत्यन्त परिश्रम किया, तब वहाँ दो दिन संघ का सानिध्य प्राप्त हो सका। भरपूर स्वागत एवं आतिथ्य सत्कार का प्रमुख श्रेय पदमचन्द जी को प्राप्त हुआ तथा सारी समाज ने गुरुवाणी, आहारदान, वैयावृत्ति का पुण्य संचित किया। पूज्य माताजी ने इस अतिशय क्षेत्र के विकास में भी पूरी रुचि ली जिसके फलस्वरूप वे वहाँ दुबारा नवम्बर 1994 में गईं और कल्पद्रुम मंडल विधान, भगवान नेमिनाथ का मस्तकाभिषेक आदि कार्यक्रम उनके संघ सानिध्य में सम्पन्न हुए।

➢पारिजात कल्पवृक्ष की स्थापना–

भगवान नेमिनाथ के चरण सानिध्य में पहुँचने से पूर्व पूज्य माताजी ने त्रिलोकपुर को एक नई भेंट प्रदान करने का शुभ भाव बनाया था। उन्होंने बताया कि भगवान नेमिनाथ के समवसरण में चार सिद्धार्थ वृक्ष होते हैं जिसमें चारों दिशाओं में चार सिद्ध प्रतिमाएँ रहती हैं। उनके नाम हैं–नमेरु, मंदार, सन्तानक और पारिजात। इनमें से एक **''पारिजात कल्पवृक्ष''** की स्थापना त्रिलोकपुर में करने का संकल्प ज्यों ही उन्होंने त्रिलोकपुर में विधान के मध्य प्रगट किया, तत्क्षण दानदातार तैयार हो गये। अब वह कल्पवृक्ष भी तैयार हो चुका है और चार सिद्ध प्रतिमाओं से समन्वित सिद्धार्थ वृक्ष त्रिलोकपुर में भक्तों के लिए आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है।

यह एक सुखद संयोग की बात है कि त्रिलोकपुर के पास ''बरोलिया'' नामक एक गांव में पारिजात नाम का वनस्पतिकायिक वृक्ष भी है जिसके बारे

में किंवदन्ती चली आ रही है कि पांडव उसे स्वर्ग से लेकर आए थे। उसे देखने के लिए भी दूर-दूर से लोग जाते हैं क्योंकि एशिया में केवल एक स्थान ''बरोलिया'' में ही यह वृक्ष पाया गया है।

➢जन्मभूमि का रोमाँचक मिलन–

माता कौशल्या की भाँति विरह की अग्नि में जल रही टिकैतनगर जन्मभूमि को आज अपने पूनों के चाँद का दर्शन होने वाला है। इस खुशी में 9 मई 1993 को नगर का कण-कण झूम रहा था। हर घर के द्वार पर मंगल चौक पूरे गए थे। संघपति छोटीशाह तो आज फूले नहीं समा रहे थे क्योंकि उनका परिश्रम आज फलीभूत होकर सामने आया था।

टिकैतनगर में नगर सीमा के प्रतीक मुख्य चार फाटक बने हैं, वे चारों दिशाओं में पुरानी किलाबन्दी के सूचक हैं। उन चारों फाटकों तक विशाल जुलूस के साथ माताजी एवं संघ को घुमाया गया। जब से अवध में संघ का भ्रमण प्रारंभ हुआ था, प्रत्येक गाँव के लोग स्वागत करने के बाद यही कहते थे कि हम तो कुछ भी नहीं कर सकते हैं, टिकैतनगर का प्रवेश देखने लायक रहेगा। सुन-सुनकर हम भी सोचते थे कि ये जाने क्यों ऐसा सोच रहे हैं? किन्तु जब जन्मभूमि की माटी का स्पर्श हुआ तो देखा, इससे भी कई गुना अधिक नगरी की सजावट, बैनर, तोरणद्वार तो स्वागत का दृश्य उपस्थित कर ही रहे थे, उसके साथ ही ''अमर उद्योग'' से प्रारंभ हुए जुलूस में 40 मोटर साइकिलों पर केशरिया झण्डा लिए हुए नौजवान, 40 महिलाएँ मंगल कलश लिए हुए आगे चल रही थीं। धरती की भीड़ के साथ-साथ मकानों की छतें भी नर-नारियों से भरी हुई थीं क्योंकि सभी अपनी विश्वविख्यात विभूति को देखने के लिए बेसब्री से इंतजार कर रहे थे। हर्ष के अश्रु नगरवासियों की आँखों में समा नहीं रहे थे अतः छलककर बाहर आने को आतुर थे।

बाजार के एक विशाल पांडाल में मंगल प्रवेश की प्रवचन सभा हुई। उत्तरप्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री कल्याणसिंह ने पधारकर पूज्य माताजी के चरणों में विनयांजलि अर्पित की तथा अपार भीड़ को सम्बोधित किया। राम के अयोध्या आगमन के समान ही इस दृश्य ने हर किसी को भाव विह्वल कर दिया था।

➢नहीं लेखनी लिख सकती है मातृभूमि के आँसू को–

वह एक अजीब गर्मागरम माहौल था, जब टिकैतनगर में 26 मई 1993 को यह निर्णय होने वाला था कि पूज्य माताजी के संघ का प्रथम चातुर्मास

अवध के किस नगर में होगा? टिकैतनगर की जनता अन्य स्थानों से निवेदन करने आने वालों को देख-देखकर बेचैन थी, उन्हें डर था कि कहीं कोई हमारी माताजी को अब हमसे छीन न ले। अनेक गीत, भजनों के माध्यम से सबने अनशन धरने की भक्तिभरी धमकियाँ भी दे डाली थीं। 26 ता.को भाग्य परीक्षण का सभी को बेसब्री से इंतजार था। कोई उस दिन मंदिर में नियम लेकर बैठ गए थे कि जब तक यहाँ के चातुर्मास का निर्णय नहीं सुन लेंगे, तब तकअन्न जल नहीं ग्रहण करेंगे, कितनों ने मनौतियाँ मान रखी थीं, कितने बाल-युवा दिलों ने माताजी के भवन के बाहर वोट क्लब का दृश्य उपस्थित कर तरह-तरह के पोस्टर, पेम्पलेट, नारे आदि अपनी माँग पूरी करने में लगाए थे।

मुझे स्वयं समझ नहीं आता है कि उन नाजुक क्षणों को मैं अपनी लेखनी से किस प्रकार लिखूँ? जब आत्मदाह तक की बात कानों में आ चुकी थी। टिकैतनगर का चौक बाजार उस भीषण गर्मी में भी जनसमूह से खचाखच भरा था। नर-नारियों, बालक-बालिकाओं, युवकों सबके जोशीले चेहरे देखकर हम सब भी असमंजस में पड़े थे। उस स्थिति का कुछ अंश वीडियो कैसेट से अथवा प्रत्यक्षदर्शियों से ही ज्ञात हो सकता है। मेरे कानों में तो आज भी वहाँ के 1-2 भजनों की पंक्तियाँ टकराती रहती हैं। जैसे–

''मेरी नगरी में चौमास, होगा ही होगा''.....।

''श्री गणिनी ज्ञानमती माताजी को, मैं तो आज मनाय लूँगी।''

कितने लोगों की तो आँखें रोते-रोते सूज गई थीं। कमरे के बाहर धरना दिये हुए युवकों को जब ब्र. रवीन्द्र जी ने कुछ समझाने की कोशिश की, तो लोगों ने उन्हें गोद में उठाकर एक कमरे में बंद कर दिया। ऐसी विचित्र स्थिति पूज्य माताजी ने भी इससे पूर्व कभी नहीं देखी थी। खैर! काफी जोशीले वातावरण में टिकैतनगर चातुर्मास की 99 प्रतिशत स्वीकृति की घोषणा पूज्य गणिनी आर्यिका श्री के मुखारविन्द से हो गई और नगर में चारों ओर दीवाली जैसी खुशियाँ मनाई जाने लगीं। फतेहपुर, बाराबंकी आदि स्थानों के महानुभावों को उस दिन अपने नगरों में चातुर्मास की स्वीकृति न मिलने के कारण जो दुःख हुआ, उसे भी मेरी लेखनी लिखने में असमर्थ है।

➢अयोध्या विहार की भूमिका–

चातुर्मास की स्वीकृति पाकर नगरी आश्वस्त थी। अभी आषाढ़ सुदी चतुर्दशी आने में लगभग 40 दिन शेष थे। 29 मई से 4 जून तक लघु पंचकल्याणक का आयोजन हुआ। इसी के बीच एक दिन 3 जून को लखनऊ से सुमेरचन्द

पाटनी पूज्य माताजी के दर्शनार्थ आए। वे चूँकि उन दिनों अयोध्या तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष थे अतः अपने अनुभव के आधार पर अयोध्या की दुर्दशा का बखान करते हुए कहने लगे–माताजी! मेरा निवेदन है कि आप ब्र. रवीन्द्र जी को कुछ वर्षों के लिए अयोध्या का अध्यक्ष बना दें और वहाँ का विकास, जीर्णोद्धार करवा दें, यह आपका परम उपकार होगा। पूज्य माताजी ने उन्हें सांत्वना प्रदान की तथा अयोध्या की विकासशील गतिविधियों पर चर्चा की।

आपसी विचार के बाद ब्र. रवीन्द्रजी ने प्रस्ताव रखा कि माताजी! अयोध्या में जिस तीन चौबीसी मंदिर का निर्माण होगा, उसका शिलान्यास यदि आपके सानिध्य में उचित स्थान देखकर हो जावे तो उत्तम रहेगा। आखिरकार चातुर्मास से पूर्व अयोध्या का विहार निर्णीत हो गया और 8 जून को टिकैतनगर से तीर्थ अयोध्या की ओर संघ का विहार हो गया, 16 जून को माताजी अपने ध्यान का केन्द्र आदिप्रभु के चरणों में पहुँच गईं।

➢आँसू भी तीर्थ के लिए उपहार बन गए–

आप सोच रहे होंगे कि भला आँसू उपहार कैसे बन सकते हैं? रोना तो प्रायः अशुभ माना जाता है परन्तु आपके और ज्ञानमती माताजी के आँसुओं में भी अन्तर है, आप तो सांसारिक भोगोपभोग वस्तुओं के लिए आँसू बहाते हैं जबकि ज्ञानमती माताजी के आँसू तीर्थ की दुर्दशा देखकर अनायास ही आँखों से निकल पड़े, उनको इस बात का बेहद दुःख हुआ कि हमारे प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि की यह स्थिति है?

इसे अद्भुत संयोग कहें या चमत्कार? वहाँ की स्थिति को देखते ही पूज्य माताजी ने एक प्रतिशत छूट का लाभ उठाते हुए वर्ष 1993 का चातुर्मास अयोध्या में ही करने का पक्का निर्णय ले लिया। इस चातुर्मास काल में सम्पूर्ण अवध ने भरपूर लाभ लिया। भादों में दशलक्षण पर्व में एक साथ 7 इन्द्रध्वज विधानों का अभूतपूर्व कार्यक्रम सम्पन्न हुआ पुनः शरदपूर्णिमा 30 अक्टूबर 1993 को पूज्य माताजी की 60वीं जन्मजयंती मनाई गई।

➢अयोध्या में हुए साक्षात् चमत्कार–

(1) भूत भी भाग गए–इस प्रकार चातुर्मास में कार्यक्रमों की श्रृंखला भी चलती रही और इधर मंदिर, कमरे, टोंकों के जीर्णोद्धार आदि का निर्माण कार्य जोरों पर चला। फरवरी 1994 में होने वाले महामस्तकाभिषेक महोत्सव की तैयारियाँ भी व्यापक स्तर पर हुईं। इन सब कार्यकलापों को देखकर अयोध्यावासी आश्चर्यचकित थे कि यह कौन सी दिव्य शक्ति अयोध्या में आ

गई है जिसके प्रभाव से यहाँ असीम शान्ति का वातावरण बना है और अहिंसा का सूत्रपात पुनः अयोध्या में हुआ है।

अनेक मठों के महन्त यह कहते कि इस रायगंज मंदिर में भूतों का निवास था, माताजी ने आकर उन भूतों को शांत कर दिया है इसीलिए यह परिसर अब स्वर्ग सा बन गया है।

(2) बिच्छुओं का आतंक टला—जब जून 1993 में पूज्य माताजी के संघ का अयोध्या में पदार्पण हुआ, तब रायगंज मंदिर परिसर में बिच्छुओं का भयंकर आतंक था। एक दो लोगों को बिच्छू ने काटा भी और कई यात्रियों की चप्पलों में, जूतों में घुसे दिखे। केचुओं की भांति जमीन पर घूमते सैकड़ों बिच्छू देखकर हम लोगों को भी डर लगता था। एक दिन माताजी ने मंत्रित सरसों सब दिशाओं में क्षेपण कर दी, फिर कभी बिच्छू के दर्शन नहीं हुए। वे सब कहाँ अन्तर्ध्यान हो गए, भगवान जाने!

(3) सर्प बालिका के पेट पर चढ़ गया—दशलक्षण पर्व के बाद एक दिन (2 अक्टूबर को) सुभाषचन्द जैन टिकैतनगर की पुत्री कु. सुवर्णा रात्रि में माताजी के कमरे में सो रही थी । लगभग 1 बजे रात में उसके पेट पर एक लम्बा सर्प चढ़ गया, उसने हाथ से छुआ और घबराकर उठ बैठी, हम लोगों को जगाया। पहले हमने सोचा कि कोई जन्तु होगा क्योंकि वहाँ कोई सर्प दिख नहीं रहा था। पुनः उसके कहने पर ठीक से देखा गया तो एक चटाई के पीछे लम्बा सा काला सर्प दिखा, उसे पकड़कर नौकर ने बाहर किया। गुरु की कृपा से एक बच्ची का बड़ा भारी संकट टला और वह गुरु तपस्या का अतिशय देखकर खूब प्रभावित हुई।

(4) आकस्मिक पंखे का उपद्रव भी टल गया—संघस्थ ब्रह्मचारिणी कु. बीना जैन एक दिन (15 अक्टूबर 1993 को) अयोध्या में त्यागीभवन के ही एक कमरे में सो रही थी, साथ में उसकी मम्मी कुमुदनी भी थीं। कमरे में बीचोंबीच में ठीक पंखे के नीचे दोनों सोई थीं, अकस्मात् बीना हवा कम करने के लिए स्विच बोर्ड के पास रेगूलेटर घुमाने पहुँची ही थी कि छत से पंखा कुंडे सहित जमीन पर धम से गिरा। काफी पुराना बहुत वजनदार पंखा था।माँ-बेटी घबड़ा गईं, किसी को कोई हानि नहीं पहुँची किन्तु सुबह कुमुदनी कहने लगीं कि माताजी! यदि बीना उस समय उठ न गई होती, तो उसी के ऊपर पंखा गिरता और न जाने क्या होता? मैंने कहा कि जहाँ पूज्य माताजी जैसी तपस्वी साधु की छत्र-छाया है, वहाँ कोई अनिष्ट की आशंका मत करो। यह तो

निश्चित है कि उस दिन बीना का कोई तीव्र पुण्य सामने आ गया, जिसने उसे भयंकर दुर्घटना से बचा दिया। अन्यथा 2 बजे रात को वह उठकर स्विचबोर्ड तक जाती ही क्यों? पंखे से दो-तीन फुट की दूरी पर तो बोर्ड, वहाँ तक लड़की का जाना और पंखे का गिरना सब कुछ 10-20 सेकेन्डों में हो गया। पूज्य माताजी ने कहा कि आज तुम्हारा पुनर्जन्म हुआ है अतः भगवान ऋषभदेव के मंदिर में शांतिविधान कर लो। इस आकस्मिक संकट के टलने के बाद पुनः बीना ने अपने कमरे में छत का पंखा ही नहीं लगने दिया।

(5) संघपति बनने से व्यापार में आश्चर्यजनक लाभ हुआ—गुरुभक्ति में कितनी शक्ति है, इसका अंदाजा शायद ही कोई लगा सके। श्री गौतम स्वामी ने आचार्यभक्ति में गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है—**''गुरुभक्ति संजमेण या तरंति संसार सायरं घोरं, छिण्णन्ति अट्ठकम्मं जम्मं मरणं ण पावेन्ति''** अर्थात् गुरुभक्ति से भक्त इस संसाररूपी घोर व विशाल सागर को पार तो कर ही लेते हैं, अष्टकर्मों का नाश कर जन्म-मरण से भी मुक्त हो जाते हैं, फिर गुरु की भक्ति करने से अगर कोई लाभ हो जाये तो कोई बड़ी बात नहीं। 28 जून की बात है, संघपति श्री छोटीशाह जी आहार के बाद माताजी के पास बैठकर कहने लगे कि माताजी! इस बार हमने आपके संघ को लाने में खर्च किया तो हमारे व्यापार में बहुत लाभ हुआ। यह सब आपके ही आशीर्वाद का फल है। वास्तव में गुरुभक्ति में इतनी शक्ति है जो तत्काल फलित होती है।

(6) आग का खतरा भी टल गया—एक दिन की बात है। हम लोग अयोध्या में बैठे पं. ज्ञानचन्द्र जी शर्मा से कुछ बातचीत कर रहे थे। लगभग 3 बजा था। अचानक जोर-जोर से आग-आग की आवाज सुनाई देने लगी। माताजी ने ब्र. बहनों को पता लगवाने भेजा तो पता लगा कि भोजनशाला के गैस सिलेण्डर में आग लग गई है। आग काफी भयंकर थी, इसलिए सब लोग बहुत अधिक घबरा रहे थे। पास ही में और दो सिलेण्डर, स्टोव, मिट्टी का तेल, कोयला, आदि सामान रखा था तथा वहीं रस्सी पर ढेर सारे कपड़े सूख रहे थे। घबराए हुए सब लोग दौड़ते हुए माताजी के पास आए और कहने लगे— माताजी! रक्षा करो, आज पता नहीं क्या होने वाला है! माताजी बोलीं—देखो! तुम लोग कोई चिन्ता मत करो, भगवान की कृपा से कुछ भी अनिष्ट नहीं होगा। इसके बाद उन्होंने सबको णमोकार मंत्र का पाठ करने व कुछ लोगों से शान्तिभक्ति का पाठ करने को कहा और स्वयं ध्यान में बैठ गईं। सचमुच चमत्कार हो गया! भगवान आदिनाथ व पूज्य माताजी की कृपाप्रसाद से किसी

प्रकार का कोई भी खतरा नहीं हुआ। लगभग दो घण्टे तक आग जलती रही और अतिशय देखिए कि कोई अहित नहीं हुआ। काफी देर बाद जब दमकल आया तो उन लोगों ने सिलेण्डर को उठाकर पानी की टंकी में डाल दिया और पूर्णरूपेण शान्ति हो गयी।

(7) वास्तव में धर्म बहुत महिमाशाली है—31 अगस्त 1993 की बात है। टिकैतनगर व दरियाबाद के कई लोग दर्शन करके अयोध्या से वापस अपने घर मेटाडोर से जा रहे थे। वे लोग अयोध्या से रौनाही तक पहुँचे ही थे कि अचानक एक नील गाय पता नहीं कहाँ से आकर गाड़ी से टकरा गई। एक्सीडेंट इतना तेज था और गाड़ी की जो कंडीशन हुई थी, उसे देखकर लगता था कि शायद ही गाड़ी में कोई बचा हो, लेकिन किसी का कुछ भी अहित नहीं हुआ, सभी बाल-बाल बच गये थे। धर्म की ऐसी महिमा देख वह सभी लोग तुरंत वापस लौट आए और आकर माताजी से कहने लगे—माताजी! आज हम सभी को नई जिदंगी मिली है, यह सब धर्म का अतिशय और आपका आशीर्वाद है।

(8) मूठ विद्या भी निरर्थक हो गई—अयोध्या में हम नित्य की भांति अपने-अपने स्वाध्याय में लीन थे, तभी बछरांवा के एक सज्जन, जिनका नाम कमलेश कुमार जैन था, मेरे पास आए और बोले कि 15 दिन पहले कोई मूठ विद्या मेरे सामने आयी, जिसका रंग कत्थई था। वह मूठ विद्या मेरे सीने पर 4 अंगुल पहले तक आकर चली गई। उस दिन तो मेरे प्राण इसलिए बच गये कि मेरे गले में माताजी का दिया हुआ यंत्र था एवं मैंने तुरंत माताजी का स्मरण किया था। जब मैंने दूसरे लोगों को बताया तथा एक ज्योतिषी से पूछा तो उन ज्योतिषी महोदय का कहना था कि पूज्य माताजी के यंत्र ने ही तुम्हारी रक्षा की है। वे सज्जन पूज्य माताजी का गुणानुवाद करते नहीं थक रहे थे क्योंकि उन्हें नवजीवन प्राप्त हुआ था।

(9) चोरी हुई मूर्तियाँ वापस मिल गईं—बेलहरा के मंदिर की प्रतिमाएँ चोरी चली गई थीं, इसलिए वहाँ के लोग काफी परेशान हो पूज्य माताजी के पास आकर मंत्र ले कर गए थे। रक्षाबंधन पर्व के एक दिन पहले वहाँ सरोज जैन, के.के. जैन, चुन्नू आदि बेलहरा के कई लोकर आकर कहने लगे कि माताजी! आपने जो मंत्र दिया था, वह करते ही दूसरे दिन प्रतिमाएँ स्वयमेव मिल गईं। वे लोग अपने साथ उन प्रतिमाओं को लेकर आए थे। बोले—आज ये प्रतिमाएँ हमें पुलिस के पास से प्राप्त हुई हैं, तो हम लोग यहाँ आए हैं। बेलहरा में 8-10 बार प्रतिमाओं की चोरी हुई है किन्तु प्रथम अवसर है जब हमें प्रतिमाएँ

वापस मिली हैं। यह सब मंत्र जाप्य का ही चमत्कार है।

(10) गाड़ी गड्ढे में गिर गई, फिर भी किसी को चोट नहीं आई—पूज्य माताजी की गृहस्थावस्था की बहन श्रीमती त्रिशला जैन, जो कि लखनऊ में रहती हैं, पूज्य माताजी के जन्मदिवस पर उनके दर्शनार्थ पधारी थीं। कार्यक्रम सम्पन्न होने के पश्चात् जब वे वापस लखनऊ जा रही थीं तो रास्ते में ''उधौली'' नामक गांव में उनकी गाड़ी एक गड्ढे में गिर गई किन्तु भगवान का अतिशय एवं चमत्कार! न तो गाड़ी को कुछ नुकसान हुआ और न ही किसी को जरा सी भी चोट आई। यह सब भगवान ऋषभदेव का ही चमत्कार था अन्यथा गाड़ी गड्ढे में गिर जाए और किसी को चोट क्या खरोंच भी न आवे, यह आश्चर्य की ही बात है।

(11) जबरदस्त एक्सीडेण्ट में भी सभी लोग सुरक्षित थे—इसी प्रकार का एक चमत्कार हुआ सनावद के महानुभाव श्री विमलचंद जैन के साथ। वह भी अयोध्या पूज्य माताजी के दर्शनार्थ पधारे थे, वापसी में लखनऊ के पास उनकी मेटाडोर का एक्सीडेंट हो गया। एक्सीडेंट इतना जबरदस्त था कि पूरी गाड़ी ही उलट गई लेकिन न ही ड्राइवर को कुछ हुआ और न ही गाड़ी के अंदर बैठे किसी भी व्यक्ति को कुछ हुआ।

(12) पैरों का दर्द गायब हो गया—दीपावली पर्व का पावन दिन था। अनेक श्रद्धालु भक्त पूज्य माताजी के दर्शनार्थ अनेक स्थानों से पधारे थे। चूँकि चातुर्मास का निष्ठापन हुआ था और आज का दिन नववर्ष का प्रारंभ दिन भी था अतः आज अवध की जनता पूज्य माताजी के दर्शन के लिए मानो उमड़ पड़ी थी। टिकैतनगर से (जन्मभूमि से) एक चिरपरिचित सज्जन आते ही कहने लग गये कि कई दिन से मेरे घुटने में इतना दर्द था कि उठना-बैठना भी मुश्किल था और यहाँ पैर रखते ही दर्द गायब हो गया, यह एक अतिशय ही है। मैं सोचने लगी कि जहाँ तीर्थंकर महापुरुष की छत्र-छाया है तथा पूज्य माताजी जैसी तपस्विनी की तपस्या के परमाणु चारों ओर फैल रहे हों, वहाँ ऐसा चमत्कार होना कोई अतिशयोक्ति की बात नहीं है।

(13) यंत्र-मंत्र के प्रभाव से पारस्परिक कलुषता दूर हो गई— 23 जनवरी 1994 की बात है। अवध प्रांत के एक सज्जन चौका लगाने हेतु अयोध्या आये थे। काफी श्रद्धालु महानुभाव हैं, सदैव गुरुभक्ति में तत्पर रहते हैं। उन्हीं के यहाँ मेरा और क्षुल्लक मोतीसागर जी का आहार हुआ। मध्यान्ह में वह आकर पूज्य माताजी का गुणानुवाद करते हुए मुझसे कहने लगे कि माताजी! मैंने पूज्य माताजी के यंत्र-मंत्रों का साक्षात् चमत्कार देख लिया है। अभी नवम्बर

की बात है, मेरा मकान बन रहा था और उसमें पड़ोसी ने थोड़ी सी जगह के लिए काफी तूफान मचा रखा था जिससे मेरा मकान बनने में काफी अड़चन आ रही थी। मैं माताजी से कीलों में मंत्र पढ़वाकर ले गया था, मैंने एक दिन वे कीलें गाड़ दीं और सुबह ही ऐसा अतिशय हुआ कि मेरे पड़ोसी महोदय स्वयं ही कहने लगे कि भैय्या! मुझे कई लोगों ने भड़का रखा था इसलिए मैं लड़ाई करता था, आप तो मेरे पड़ोसी हैं और सुख-दुख में हम दोनों ही एक-दूसरे के काम आएंगे। यह सब पूज्य माताजी के यंत्र-मंत्र का ही चमत्कार है कि जो जगह भी मिल गई और आपस में वर्षों से चली आ रही कलुषता भी दूर हो गई। माताजी वास्तव में कोई देवी का रूप ही हैं!

(14) पिच्छी लगते ही कार्य की सिद्धि हो गई– यूँ तो बहुत लोग पूज्य माताजी के पास आते हैं और आशीर्वाद प्राप्त करके वापस चले जाते हैं। किन्हीं-किन्हीं को पिच्छी लगवाने की भी बहुत अधिक ललक होती है और पूर्ण श्रद्धा-भक्ति के साथ लगवाई गई वह पिच्छी **'जो सैकड़ों मंत्रों से मंत्रित होती है'** भक्तों के मनोरथों को पलक झपकते ही पूर्ण कर देती है। सीतापुर की एक महिला हैं-श्रीमती किरन जैन। एक दिन वह आकर मुझसे कहने लगीं– माताजी! मैं अभी 15-20 दिन पूर्व अपनी लड़की को यहाँ लेकर आयी थी, वह बहुत परेशान थी। बात यह थी कि कुछ दिन से उसका पढ़ाई में दिमाग बिल्कुल नहीं लग रहा था, उसके ट्यूशन वाले टीचर ने पढ़ाने से इंकार कर दिया था। यहाँ से जाते ही ज्ञात हुआ कि टीचर ने ट्यूशन पढ़ाने की हाँ कर दी है। वह बार-बार कह रही थीं कि यह माताजी की पिच्छी का ही चमत्कार है, जिस समय यहाँ माताजी उस लड़की को पिच्छी लगा रही थीं, उसी समय सीतापुर में उसके पापा (नरेन्द्र जी) उस टीचर से पढ़ाई के विषय में बात कर रहे थे, वही पुण्य परमाणु कार्यसिद्धि में कारण बन गए।

(15) भगवान के माता-पिता बनने के पहले चमत्कार हो गया– अयोध्या में पंचकल्याणक की तैयारियाँ जोर-शोर से चल रही थीं, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में भगवान के माता-पिता हेतु नाम का चयन करना था। बाराबंकी के एक श्रेष्ठी महानुभाव श्री चंदनलाल जी आकर पूज्य माताजी से भगवान के माता-पिता बनने हेतु अनुनय-विनय करने लगे। अंततोगत्वा उन्हें सफलता मिल ही गई। 25 फरवरी की बात है, चंदनलाल जी आकर अपनी कथा सुनाते हुए कहने लगे– माताजी! जिस दिन मुझे भगवान के माता-पिता बनने की स्वीकृति प्राप्त हुई, उसी दिन मुझे एक नहीं, दो-दो फायदे हुए, एक तो घर जाते

ही मुझे ज्ञात हुआ कि मेरे ऊपर जो लाखों रुपये का मुकदमा चल रहा था, वह अपने आप समाप्त हो गया है और दूसरा मैंने उस दिन कई लाख रुपये का कपड़ा एक दिन में बेचा। यह सब पूज्य माताजी की ही कृपाप्रसाद है कि उस दिन मुझे भगवान के माता-पिता बनने का वचन मिला, जिसके फलस्वरूप ये अनहोने चमत्कार हुए।

➢मणि-कांचन का अद्भुत संयोग–

भगवान ऋषभदेव ने अयोध्या में कोड़ाकोड़ी वर्ष पूर्व जन्म लिया था किन्तु काल के थपेड़ों ने उनकी स्मृतियों को धूमिल कर दिया था। हाँ! उनके वंशज मर्यादा पुरुषोत्तम राम को अयोध्यावासी जरूर याद करते हैं क्योंकि उनका कथानक अभी मात्र 9 लाख वर्ष पुराना है।

इसी प्राचीन इतिहास की स्मृति दिलाने हेतु सन् 1951-52 में एक बार आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज अवध प्रान्त में पधारे और उनकी पावन प्रेरणा से अयोध्या के प्राचीन कटरा मंदिर में भगवान ऋषभदेव-भरत-बाहुबली की तीन प्रतिमाएँ विराजमान हुईं। उसी समय एक विशाल प्रतिमा भगवान ऋषभदेव की उन्होंने यहाँ और विराजमान करने की प्रेरणा दी। उस प्रतिमा का निर्माण सन् 1965 में पूर्ण हुआ, तब पुनः आचार्यश्री के सानिध्य में रायगंज के प्रांगण में इस 31 फुट ऊँची प्रतिमा की स्थापना पंचकल्याणक प्रतिष्ठापूर्वक हुई। इतना सब कुछ होने के बाद भी दुर्भाग्यवश अयोध्या तीर्थ का यथोचित विकास न हो सका। यह कौन जानता था कि इसका उद्धार करने एक दिन स्वयं अवध क्षेत्र की ब्राह्मी माता ज्ञानमती जी पधारेंगी! सन् 1992 में 23 अक्टूबर धनतेरस का दिन सचमुच ऐतिहासिक पृष्ठ बन कर आया था, ज्ञानमती माताजी को अयोध्या के विकास की स्मृति दिलाने। तभी तो मानो प्रभु की प्रेरणा पाकर वे सबके मना करने के बावजूद भी हस्तिनापुर से अपने पिता ऋषभदेव के दर्शनार्थ चल पड़ीं। 4 माह, 5 दिन की पदयात्रा के बाद उनका संघ सहित पदार्पण अयोध्या की धरती पर हुआ, फिर तो वसुन्धरा के भाग्य ही पलट गए। जिस भूमि ने सदियों से किसी संत का चातुर्मास अपनी आँखों से नहीं देखा था, उसने अपनी पुत्री ज्ञानमती जी का जबर्दस्ती यहाँ चातुर्मास कराकर दिखा दिया कि अब मैं अबला नहीं सबला बन गई हूँ। यह मणिकांचन का संयोग एक अनहोना संयोग हो है, जिसे विधाता ने करोड़ों वर्ष पूर्व लिखा होगा।

➢बसन्तोत्सव अपनी चरम सीमा पर था–

भगवान ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक हेतु 24 फरवरी 1994 का शुभ

मुहूर्त पूज्य माताजी ने अनेक मुहूर्तज्ञों से सलाह करके निश्चित किया और उसी निर्णीत तिथि के अनुसार एक नवीन गठित **''मस्तकाभिषेक महोत्सव समिति''** अपने कार्य में संलग्न हो गई।

दिन बीते, माह बीते और देखते ही देखते अयोध्या में 24 फरवरी को बसन्तोत्सव का रंग छा गया। प्रातःकाल से ही केशरिया वस्त्रों में लिपटा विशाल जनसमूह अपने पूर्वनिर्धारित कलशों को पाने हेतु आतुर हो रहा था।

कलशव्यवस्था के आयोजकों ने सुचारू व्यवस्था बनाने के लिए मंदिर के बाहर काफी दूर से बेरीकेटिंग बनाई थी ताकि क्रम-क्रम से ही लोग सीढ़ियों से चढ़कर मचान तक पहुँचें और अपने कलशों को प्रभु के मस्तक पर ढुरा सकें।

भगवान ऋषभदेव का मस्तकाभिषेक देखने हेतु पूज्य माताजी के आदेशानुसार मंदिर के बाहर लघुद्वार भी तोड़कर काफी बड़ा कर दिया गया था, जिससे प्रत्येक दर्शनार्थी ने बिना किसी व्यवधान के पूरा अभिषेक देखा। मंदिर के बाहर दोनों ओर से मजबूत सीढ़ियों का निर्माण किया गया था, जिस पर एक ओर से जाने तथा दूसरी ओर से वापस आने की व्यवस्था थी। केशरिया झण्डों से सजी सीढ़ियों पर जगह जगह स्वयंसेवक नियुक्त किए गए, जो कलशपास लिये हुए नरनारियों को ही ऊपर चढ़ने दे रहे थे।

मंदिर के ठीक सामने बाहर चबूतरे पर 1008 कलश स्वस्तिक के आकार में सजाए गए थे। आम के पत्ते, फूल की माला एवं नारियल से सजे हुए वे कलश बसन्ती बहार बिखेरते हुए जनमानस को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे। सर्वप्रथम उन समस्त कलशों की पूजन की गई पुनः प्रेरणास्रोत पूज्य माताजी एवं यहाँ पधारे मुनि संघ के मंगल सानिध्य में महामस्तकाभिषेक प्रारंभ हुआ।मस्तकाभिषेक से पूर्व स्वर्णकलश की बोली लेने वाले श्री महावीर प्रसाद जैन, बंगाली स्वीट सेंटर-दिल्ली का महोत्सव समिति की ओर से भगवान ऋषभदेव का प्रतीक भेंट कर सम्मान किया गया तथा तीर्थंकर कलश करने का सौभाग्य प्राप्त करने वाले महानुभावों का भी भगवान ऋषभदेव का प्रतीक भेंट कर स्वागत किया गया।

➢महावीर प्रसाद जैन, दिल्ली ने प्रथम अभिषेक स्वर्णकलश से किया–

जिस मस्तकाभिषेक की प्रतीक्षा वर्ष भर से की जा रही थी, उसका प्रथम सौभाग्य प्राप्त किया दिल्ली निवासी श्री महावीर प्रसाद जैन बंगाली स्वीट सेंटर ने। 24 फरवरी को मध्यान्ह 11 बजकर 5 मिनट पर जब वे असली सोने का सुसज्जित कलश लेकर अपनी धर्मपत्नी एवं परिवार सहित सीढ़ियों पर चढ़ने

से पूर्व अनेक श्रद्धालुओं को कलश का स्पर्श कराने लगे, तब भगवान ऋषभदेव की जय-जयकार से आकाश गुंजायमान हो उठा। ठीक 11 बजकर 15 मिनट पर भगवान के मस्तक पर प्रथम कलश की धारा होते ही जहाँ भक्तगण भावविभोर हो उठे, वहीं गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के हर्षाश्रु भी भक्तों की निगाहों से छिप न सके।

जो कुछ भी वहाँ उस क्षण हो रहा था, वह सब स्वाभाविक भी था। हर श्रद्धालु सोच सकता है कि जिस प्रबल भावना को संजोकर मातुश्री अथक परिश्रमपूर्वक अयोध्या में आई थीं, आज उसे सफलीभूत देखकर उनके वे नेत्र भला अपनी आनन्दभेंट प्रभु चरणों में क्यों न चढ़ाते!

श्री वादिराज मुनिराज की ये पंक्तियाँ यहाँ सार्थक सिद्ध हो रही थीं–

''आनन्दाश्रुस्नपितवदनं गद्गदंचाभिजल्पन्.....''

पूरे परिवार ने उस सोने के कलश से क्रम-क्रम से अभिषेक किया पुनः हर्षोल्लासपूर्वक भेंट में प्राप्त उस पवित्र कलश को मस्तक पर लगाया।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि मस्तकाभिषेक महोत्सव समिति की ओर से समस्त कलश करने वालों को पूर्व योजनानुसार स्वर्ण, रजत एवं सामान्य कलश भेंट स्वरूप प्रदान किए गए।

इसी शृंखला में प्रथम स्वर्णकलश से अभिषेक करके महावीर प्रसाद जैन ने खुशी से नाचते हुए हजारों रुपयों की एवं रजत पुष्पों की रत्नवृष्टि प्रभु ऋषभदेव एवं ज्ञानमती माताजी के ऊपर कर डाली, जिससे उन्होंने निश्चित ही सातिशय पुण्य बंध कर लिया।

➢तीर्थंकर के मस्तक पर तीर्थंकर कलशों से महाभिषेक–

जब रजत धातु से निर्मित तीर्थंकर नामक कलशों से तीर्थंकर प्रभु का अभिषेक हुआ, तब तीर्थंकर ऋषभदेव की जय-जयकार करते हुए भक्तगण झूम उठे। इस सौभाग्य को प्राप्त करने वालों में साहू अशोक कुमार जैन, श्री निर्मल कुमार सेठी, श्री गजराज गंगवाल, श्री श्रीपाल मोटर वाले-दिल्ली, श्री आर.के. जैन-मुम्बई, श्री पदमचंद पाटनी-दिल्ली, श्री राजकुमार जैन-प्रीतमपुरा, दिल्ली, श्री शीतल प्रसाद जैन-दिल्ली आदि प्रमुख रहे।

इसके पश्चात् गणधर कलश से दिल्ली के श्री अजितप्रसाद विनोद कुमार जैन पटाखे वालों एवं श्री देवेन्द्र कुमार जैन प्रीतविहार-दिल्ली ने अभिषेक किया पुनः चक्रवर्ती कलश प्राप्त करने का सौभाग्य मिला श्री पदमचंद अशोक कुमार-इलाहाबाद, श्री प्रेमचंद जैन-पहाड़गंज, नई दिल्ली, श्री कमलकुमार

जैन, खारीबावली-दिल्ली, श्री आनंद जी दीपक जी, पूषा रोड-नई दिल्ली, श्री हेमचंद विजय कुमार जैन, सरस्वती विहार-दिल्ली, श्री देवकुमार सिंह कासलीवाल-इंदौर एवं श्री मुकेश कुमार जैन-इंदौर को।

अभिषेक की इसी श्रृंखला में भरतकलशों से अभिषेक के पश्चात् पंचामृत अभिषेक प्रारंभ हुआ।

➢पंचामृत की धाराओं ने अयोध्या को केशरिया कर दिया–

तीर्थंकर गणधर आदि 72 कलशों के जलाभिषेक के पश्चात् जब पंचामृत की धाराएँ शुरू हुईं, तो देखने वाले भक्त नर-नारी अपने उमड़ते भावों को रोक न सके और भावभीना नृत्य करते हुए अभिषेक की पवित्र गंगा में स्नान करने लगे।

सर्वप्रथम सैकड़ों नारियल के शुद्धजल से श्री नरेशचंद अभयकुमार जैन-बाराबंकी ने पूरे परिवार के साथ अभिषेक किया। इक्षुरस के दीर्घकाय 5 घड़ों से अभिषेक करने का सौभाग्य प्राप्त किया। श्री पुखराज जी पाण्ड्या एवं अनूप बाई पाण्ड्या-गोरखपुर ने।

सौ किलो सन्तरे के रस से श्री मोतीचंद कासलीवाल जौहरी-दिल्ली ने भगवान ऋषभदेव का अभिषेक किया। 1 क्विटल अंगूर के रस से मस्तकाभिषेक करने का सौभाग्य प्राप्त किया श्री सुमेरचंद पाटनी-लखनऊ ने।

शक्कर से निर्मित शुद्ध 5 किलो बूरे से श्री मुकेश कुमार जवाहरलाल जैन-सूरत वालों ने अभिषेक किया, इसी प्रकार 10 किलो चावल के आटे (कल्कचूर्ण) को कोमलचंद जैन-महमूदाबाद वालों ने जब भगवान के मस्तक पर डाला, तो पूरा मंदिर सफेद बादलों से आच्छन्न जैसा हो गया और उस कल्क चूर्ण में मिश्रित कर्पूर ने सारे वातावरण को अपनी सुगंध से महका दिया पुनः 100 किलो अनार के रस से श्री मानमल झांझरी-झुमरीतलैया के सुपुत्र ने अभिषेक किया और शुद्ध घृत से अभिषेक करने की बोली प्राप्त करने का सौभाग्य श्री राजकुमार जैन-प्रतापगढ़ (उ.प्र.) वालों को मिला।

इन अष्टधाराओं के पश्चात् 500 लीटर दूध से बड़े-बड़े घड़ों के द्वारा भगवान ऋषभदेव का अभिषेक जब श्री उम्मेदमल पाण्ड्या-दिल्ली ने किया, तब तो अयोध्या की धरा पर रामराज की तरह मानों फिर से दूध की नदी ही प्रवाहित हो गई प्रतीत हो रही थी। सफेद दूध के मध्य केशरिया दूध की पड़ती हुई धारा प्रतिमा के श्वेत वर्ण को अत्यधिक मुखरित कर रही थी।

भगवान के दुग्ध स्नान के साथ-साथ सैकड़ों भक्तों ने अपनी सुध-बुध खोकर नीचे स्वयं उस दुग्धाभिषेक के गंधोदक सरोवर में स्नान कर अपनी

काया को परम पावन बनाया।

दूध के बाद क्रम आया दधिस्नपन का। इसका सौभाग्य श्री मनोज कुमार जैन (मेरठ निवासी) को मिला। 50 लीटर दही की मोटी धारा बर्फ के टुकड़ों के समान प्रतीत हो रही थी पुनः मनोज कुमार की मातेश्वरी श्रीमती आदर्श जैन एवं ध.प. सौ. नविता जैन आदि समस्त परिवार ने मिलकर 50 किलो सर्वौषधि चूर्ण से मिश्रित अनेक घड़ों जल से सर्वौषधि अभिषेक किया। इस सर्वौषधि में हल्दी,केशर, चंदन, कपूर, इलाइची, लवंग, जावित्री, जायफल आदि अनेक सुगंधित पदार्थ मिले हुए थे, जिससे मंदिर तो सुवासित हुआ ही, भक्तगणों ने भी अपने वस्त्रों को, शरीर को सुगंधित किया तथा सदा आरोग्यता प्राप्त करने की भावना से शीशी, पात्र एवं मलमल के छन्नों में भरकर अपने घर भी ले गए।

➢सरयू का जल भी आतुर हो उठा अपने प्रभु के अभिषेक को–

महापुराण में वर्णन आता है कि भगवान् ऋषभदेव के राज्याभिषेक के समय अयोध्या के नर-नारी मिट्टी के घड़ों में, कमलपत्र के दोनों में सरयू नदी का जल भरकर लाए थे और उससे भगवान के चरणों का अभिषेक किया था।

कोड़ाकोड़ी वर्षों से अयोध्या में सतत बह रही सरयू नदी आज पुनः अपने लाल के अभिषेक को आतुर हो उठी थी अतः पूज्य ज्ञानमती माताजी की प्रेरणानुसार आज सरयू नदी का जल मंगल कलशों में भर कर लाया गया और उससे अभिषेक करने का अहोभाग्य मिला श्री जिनेन्द्र प्रसाद जैन-ठेकेदार एवं उनकी ध.प. श्रीमती विमला देवी को।

➢असली केसर से होली–

24 फरवरी को प्रातःकाल से ही जहाँ अपार जनता भगवान का मस्तकाभिषेक करने और देखने के लिए उमड़ रही थी, वहीं व्यवस्थापक बंधु मस्तकाभिषेक की सामग्री तैयार करने में व्यस्त थे। बाराबंकी निवासी श्री सुशील कुमार जैन एवं उनके सहयोगियों ने जयपुर से पधारे स्वयंसेवकों की सहायता से सभी प्रकार के रस, दूध आदि वस्तुएँ समय पर प्रदान कर मस्तकाभिषेक कार्यक्रम सफल बनाया।

सुबह से घिसी जा रही ढेर सारी केशर गाढ़े सुर्ख रंग में जब मंच पर आई, तब सभी भक्तों का मन ललचा उठा और सबके मुंह से अनायास गीत के स्वर फूट पड़े **''केशरिया केशरिया, आज प्रभु का रंग केशरिया''**। इस स्वर लहरी के मध्य 500 ग्राम केशर, जिसे घिसने पर पूरा घड़ा भर गया था, उस काश्मीरी केशर से अभिषेक किया मांगीलाल बाबूलाल पहाड़े-हैदराबाद ने। तब

तो भगवान ऋषभदेव अपने असली रंग में आ गए थे। जैसा कि चैत्यभक्ति में उनके शरीर का वर्ण तपाये स्वर्ण के समान माना गया है। उगते हुए सूर्य की प्रभा के समान उस समय का वर्ण वास्तव में इतना मनमोहक था, जिसे लेखनी से पन्नों पर उतारा नहीं जा सकता है।

केशर अभिषेक के बाद गुलाब, गेंदा, चमेली आदि अनेक रंगों के पुष्पों को नई टोकरी में भरकर भगवान के मस्तक पर पुष्पवृष्टि की अतरसेन सत्येन्द्र कुमार जैन-जगाधरी वालों ने।

इधर तो अंदर काफी देर तक भक्तगण भगवान के ऊपर पुष्पवृष्टि करते रहे और उधर बाहर अयोध्या के राजा पप्पू भैय्या ने विशेष वायुयान के द्वारा मंदिर के ऊपर खूब पुष्पवृष्टि कर पुण्यार्जन किया। इसी क्रम में डॉ.विनय कुमार जैन-बाराबंकी ने सपरिवार मंगल आरती करने का सौभाग्य प्राप्त किया एवं सुगंधित जल की धारा टिकैतनगर निवासी प्रद्युम्न कुमार जैन (छोटी शाह) एवं कैलाशचंद जैन सर्राफ (लखनऊ) ने की।

प्रातः 11 बजे से प्रारंभ हुई महामस्तकाभिषेक श्रृंखला ने विराम लिया सायं 5 बजे, तब पूर्णकुंभ से महाशांतिधारा श्री विजय कुमार जैन दरियागंज-दिल्ली वालों ने सपरिवार किया। परमपूज्य गणिनी आर्यिका शिरोमणि के शुद्धोच्चारणपूर्वक हुई इस शान्तिधारा में विश्वशांति एवं जनकल्याण की भावना प्रचारित हुई।

मस्तकाभिषेक के इस कार्यक्रम में रवीन्द्र जैन-मुम्बई ने अपने सुन्दर गीत प्रस्तुत किए, जिनके बोल निम्न प्रकार थे–

1. आओ आओ रे मेरे संग आओ रे,
गुण ऋषभदेव के गाओ रे।

2. आदिनाथ भगवान का मस्तकाभिषेक।

इस प्रकार केशरिया होली खेलते हुए देश भर के श्रद्धालु भक्त **जय आदीश्वर जय वृषभेश्वर** के नारे लगाते रहे एवं अयोध्या की वसुंधरा पर प्रथम बार आयोजित यह महामस्तकाभिषेक आशातीत सफलताओं के साथ निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

मस्तकाभिषेक के इस पावन अवसर पर 24 फरवरी को ही संयोगवश अयोध्या में परमपूज्य आचार्य श्री 108 सुमतिसागर महाराज का ससंघ मंगल पदार्पण हुआ और आचार्य महाराज ने ससंघ पधारकर अभिषेक समारोह देखा तथा भक्तों को आशीर्वाद प्रदान किया।

उत्तरप्रदेश दूरदर्शन से कार्यक्रम का प्रसारण करने हेतु लखनऊ से श्रीमती

सुधा जिंदल टी.वी. कैमरा टीम लेकर पधारीं तथा फैजाबाद आकाशवाणी से रेडियो प्रसारण हेतु डॉ. दिलीप जैन रेकार्डिंग कराने के लिए वहाँ के महानुभाव को साथ लाए। आकाशवाणी फैजाबाद से 19, 20, 23 और 24 फरवरी के पूरे कार्यक्रम रिले हुए तथा लखनऊ से दिनाँक 25 फरवरी को शाम 5.50 बजे से 6.20 बजे तक (आधा घंटा) 24 फरवरी का महामस्तकाभिषेक कार्यक्रम एवं 20 फरवरी, 23 फरवरी की सभाओं का प्रसारण भी हुआ।

मस्तकाभिषेक समारोह में कलश व्यवस्थापक श्री सरोज कुमार जैन-फतेहपुर, संयुक्त महामंत्री महोत्सव समिति ने सुचारू ढंग से कलशों का आवंटन राशिक्रम के अनुसार किया तथा श्री प्रकाशचंद जैन सर्राफ, विमलचंद जैन-सनावद एवं राकेश जैन-मवाना (मेरठ) ने अभिषेक स्थल पर व्यवस्था बनाने में सक्रिय सहयोग प्रदान किया अतः निर्विघ्नरूप से सभी भक्तगणों ने मस्तकाभिषेक करने का आनंद प्राप्त किया।

श्री ऋषभदेव मस्तकाभिषेक, जो अयोध्या का प्रमुख और प्रथम कार्यक्रम था, उसके बारे में आँखों देखा संक्षिप्त चित्रण यहाँ मैंने प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त मस्तकाभिषेक से पूर्व (19 फरवरी से 23 फरवरी 1994 तक) अयोध्या की वसुन्धरा पर "जिनबिंब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव" भी संपन्न हुआ, जिसमें अनेक राजनेताओं ने पधारकर पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त किया। 20 फरवरी को उ.प्र. के मुख्यमंत्री मुलायम सिंह जी ने अयोध्या क्षेत्र के विकास हेतु कुछ घोषणाएँ भी कीं, जो इस प्रकार हैं–

1. अयोध्या में **'भगवान ऋषभदेव नेत्र चिकित्सालय"** खोला जाएगा।
2. राजघाट राजकीय उद्यान का नाम **"ऋषभदेव उद्यान"** कर दिया जायेगा।
3. फैजाबाद के अवध विश्वविद्यालय में **"ऋषभदेव जैन चेयर"** की स्थापना हेतु 25 लाख रुपयों का सरकार की ओर से अनुदान घोषित किया।
4. अयोध्या में **"अवध प्रेस क्लब"** की स्थापना और भवन निर्माण हेतु 10 लाख रुपये का अनुदान घोषित किया।

इन घोषणाओं के पश्चात् मुख्यमंत्री जी ने कहा कि मैं अयोध्या के लिए एक बहुत बड़ी योजना जनता के कल्याण की दृष्टि से बना रहा हूँ। समय आने पर उसे भी शीघ्र ही घोषित करके क्रियान्वित करने की तीव्र भावना है।

श्री मुलायम सिंह जी के भाषणोपरांत पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने आशीर्वादात्मक प्रवचन में जनमानस को सम्बोधित करते हुए कहा– भगवान् ऋषभदेव ने इसी अयोध्या की भूमि पर प्रजा को जीवन जीने की कला सिखाई

थी। असि, मसि, कृषि आदि षट् क्रियाओं के द्वारा कर्म करना बताया था। इसीलिए हमारी इस धरती को कर्मभूमि कहा जाता है। महापुरुषों के सिद्धान्त हर प्राणी के लिए होते हैं, किसी व्यक्ति विशेष के लिए नहीं। उन्होंने कहा कि जिस प्रकार पेड़ खूंखार शेर और दयामयी गाय दोनों को समान रूप से छाया प्रदान करता है, उसी प्रकार सनातन जैनधर्म भी सभी को आश्रय देकर पतित को भी पावन बनाता है। यह प्रसन्नता की बात है कि मुलायम सिंह जी जन्म से ही शाकाहारी हैं, अब ये अपने अहिंसक कार्यकलापों से संसार में भी अहिंसा धर्म का खूब प्रचार करें, यही मेरा उनके लिए मंगल आशीर्वाद है।

➢श्रीचन्द्र जैन (सनावद) ने सप्तम प्रतिमा ग्रहण की–

अयोध्या में भगवान के दीक्षा कल्याणक के मंगल अवसर पर सनावद (म.प्र.) निवासी धर्मनिष्ठ श्रावक श्रीचंद जी ने सप्तम प्रतिमा के व्रत पूज्य माताजी से ग्रहण किए। आपने सपत्नीक सन् 1987 में क्षुल्लक मोतीसागर जी की दीक्षा के समय हस्तिनापुर-जम्बूद्वीप में आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर माता-पिता बनकर आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया था पुनः अयोध्या के इस चातुर्मास में माताजी के संघ में ही रहकर यहाँ के कार्य में भी पूर्ण योगदान दिया। उनके सप्तम प्रतिमा लेने पर अनेक गणमान्य महानुभावों ने उनका स्वागत किया।

ज्ञातव्य है कि कुछ वर्षों बाद ये ब्र.जी आचार्य श्री रयणसागर जी महाराज से दीक्षा ग्रहण कर ''मुनि अमेयसागर'' बने पुनः इन्होंने सन् 2001 में समाधिमरणपूर्वक नश्वर शरीर का त्याग किया।

➢राजधानी लखनऊ में व्यापक धर्म प्रभावना–

लखनऊ की वसुन्धरा ने अपनी राजमाता के रूप में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का भावभीना स्वागत तो किया ही और 1 मई 1994 को उनकी दीक्षा जयंती का समारोह रवीन्द्रालय में मनाकर त्याग का आदर्श भी प्रस्तुत किया। लगातार 2 माह तक लखनऊ की सभी कॉलोनियों में आर्यिका संघ के पदार्पण से महती धर्म प्रभावना हुई। इस प्रवास से जनता को ज्ञात हो सका कि आचार्य संघ एवं मुनि संघों के समान ही **'गणिनी आर्यिका संघ'** भी त्याग और ज्ञान के माध्यम होते हैं। इससे पूर्व लखनऊ तथा पूरे अवध में आज तक कभी किसी आर्यिका संघ का पदार्पण नहीं हुआ था।

➢इन्दिरा नगर में श्रावक सम्मेलन (जब दान के लिए स्वर्णाभूषण भी उतरने लगे)

लखनऊ की एक कॉलोनी इन्द्रानगर है, जहाँ विशेष शिक्षित जैन समुदाय

को पाकर पूज्य माताजी ने भी अपने ज्ञान का अमृत खुले दिल से वितरित किया। 5 दिन तक वहाँ विभिन्न विषयों पर संगोष्ठी चली पुनः 19 जून 1994 को एक श्रावक सम्मेलन हुआ, जिसमें अनेक वक्ताओं के साथ ही हम लोगों ने भी श्रावकों को सम्बोधित किया। वहाँ एक विशाल जिनमंदिर का निर्माण उन दिनों चल रहा था। प्रवचन के मध्य कुछ महिलाएँ इतनी भावुक हो उठीं कि उन्होंने अपने स्वर्ण आभूषण भी उतार-उतारकर मंदिर निर्माण के लिए दान कर दिये। त्याग और दान का यह अनुपम उदाहरण प्रत्येक श्रावक-श्राविका के लिए अनुकरणीय है, जब देखते ही देखते वाणी के जादू से लाखों रुपये का अनुदान मंदिर के लिए एकत्रित हो गया।

➢वर्षों का मनमुटाव जिनकी प्रेरणा से स्नेहबंधन में बदल गया–

बाराबंकी वालों के विशेष आग्रह पर पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने यहाँ कई वर्षों से चले आ रहे आपसी मनमुटाव संबंधी दो विवादोंको बड़ी ही कुशलतापूर्वक समाप्त करवाकर आपसी सौहार्द्र की स्थापना कराई।

विवादग्रस्त दोनों पक्षों के लोगों ने माताजी से करबद्ध निवेदन किया कि यहाँ समाज के लोगों में चुनाव संबंधी बहुत बड़ा विवाद है, जिससे काफी तनाव है तथा दूसरा संघर्ष महावीर विद्यालय का है। इन दोनों विवादों के कारण समाज में आपसी मतभेद-मनभेद व कषाय का वातावरण बना हुआ है, इसे आपके आशीर्वाद से हम लोग समाप्त करना चाहते हैं। प्रशंसा की बात यह रही कि अनेक प्रबुद्ध लोगों ने यह कहा कि पूज्य माताजी! आपका जो भी आदेश होगा, हम उसे सुप्रीम कोर्ट के निर्णय से भी अधिक आदरपूर्वक स्वीकार करेंगे, पुनः हुआ भी यही।

दोनों पक्षों की बात सुनने के बाद पूज्य माताजी ने जो भी निर्णय दिया, उसे सभी लोगों ने मान्य किया और आपस में एक-दूसरे के साथ गले मिलकर विवाद समाप्त कर दिया। दो वर्षों से जो चार्ज विद्यालय कमेटी को नहीं प्राप्त हुआ था, गोलक नहीं खुली थी, वह सब सम्पूर्ण चार्ज नई कमेटी को पुरानी कमेटी ने सौंप दिया।

बाराबंकी की जैन समाज आज भी पूज्य माताजी के प्रति पूर्ण कृतज्ञ है तथा यह महसूस करती है कि माताजी के संघ सहित पदार्पण से हमारी समाज की खोई एकता पुनः स्थापित हुई है। गुरुसानिध्य से प्राप्त होने वाली सुभिक्षता का यह अनुपम उदाहरण है।

➢स्नेह की विकट स्थिति–

बाराबंकी समाज के प्रमुख भक्तगण अब पूज्य माताजी से भारी अनुरोध

करने लगे कि माताजी! अब आप यहाँ चातुर्मास करके हम लोगों की एकता का नमूना देखें तथा हमें संगठित होकर संघसेवा का अवसर प्रदान करें। इसी बीच लखनऊ चारबाग से धरणेन्द्र जैन, हंसकुमार जैन, श्रीमती त्रिशला जैन तथा समाज के अनेक प्रमुख नर-नारियों ने बाराबंकी पधारकर माताजी से लखनऊ चातुर्मास हेतु अनुरोध किया और भारी प्रभावना के साथ वहाँ चातुर्मास कराने का आश्वासन प्रदान करते हुए श्रीफल चढ़ाया। इधर टिकैतनगर के लोग तो पूर्व से ही आशान्वित थे कि इस बार पूज्य माताजी हमारे गांव को ही चातुर्मास का लाभ देंगी अतः वे लोग भी विश्वासपूर्वक बाराबंकी में अपना नारियल चढ़ाने आए। वे सभी अपने-अपने ढंग से संघ पर प्रभाव डालने के पूर्ण प्रयासों में लग गए। अब पिछले वर्ष जैसी ही स्थिति एक बार पुनः प्रगट हो गई, लखनऊ के श्रावकगण राजधानी की गरिमा के अनुरूप व्यापक प्रभावना आदि की बातें करने लगे और उनके साथ बाराबंकी के प्रतिष्ठित श्रावकगण भी अपने शहर का मोह छोड़कर लखनऊ चातुर्मास में संभावित प्रभावना का अनुमान लगाते हुए माताजी से लखनऊ के लिए ही आग्रह करने लगे। उस दिन अत्यधिक ऊहापोह की स्थिति के कारण पूज्य माताजी ने अपना कोई निर्णय नहीं सुनाया पुनः 2-4 दिन के बाद टिकैतनगर के लोगों का आग्रह तथा पूर्ण विश्वास समन्वित श्रीफल देखकर उनका हृदय पसीज गया और उस वर्ष टिकैतनगर चातुर्मास की उन्होंने पक्की स्वीकृति प्रदान कर दी।

वह छोटा सा गाँव अपनी कन्या का जगन्माता के रूप में प्रथम चातुर्मास कराकर धन्य तो हुआ ही, वहाँ के नर-नारियों को जो ज्ञान का लाभ इन दिनों प्राप्त हुआ, वह तो अभूतपूर्व ही था।

➢भवि भागनवश जोगे वशाय–

असलियत में इसे बाराबंकी नगर की जनता का भाग्य ही कहना पड़ेगा कि पूज्य गणिनी आर्यिकाश्री ने स्वयं अपने मुखारविन्द से अनेक दुर्लभ विषयों की कक्षाओं का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त कराकर उनकी परीक्षा ली एवं अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग का जीवन्त संदेश प्रदान किया।

इसी श्रृंखला में दशलक्षण पर्व के प्रवचन बाजार के चौराहे पर बनाए गए भव्य पांडाल में हुए, जिससे हिन्दू-मुसलमान सभी ने लाभ उठाया तथा जैन साध्वी का विशाल-व्यापक-सर्वोदय स्वरूप देखकर अपने जीवन को धन्य किया।

➢सन् 1994 का चातुर्मास जन्मभूमि-टिकैतनगर में–

यद्यपि लखनऊ प्रवास के मध्य वहाँ के नागरिकों ने लखनऊ में चातुर्मास

करने हेतु पूज्य माताजी से अनेक बार श्रीफल चढ़ाकर निवेदन किया किन्तु चूँकि सन् 1993 में पूज्य माताजी ने टिकैतनगर में 99 प्रतिशत चातुर्मास की स्वीकृति देकर एक प्रतिशत की छूट में अयोध्या तीर्थ पर चातुर्मास कर लिया था, उस समय टिकैतनगर के लोग बहुत दुःखी हो गए थे अतः सन् 1994 का चातुर्मास पूज्य माताजी ने टिकैतनगर में किया। चातुर्मास के मध्य अनेक प्रकार के प्रभावनात्मक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

➢संभावित कलह वास्तविक क्षमावणी बन गई–

जैसा कि बीसों वर्ष से टिकैतनगर में क्षमावणी पर्व के दिन सामाजिक संघर्ष चुनाव आदि किसी न किसी विषय को लेकर अवश्य हुआ करता था। यह भावी आशंका पूज्य माताजी के समक्ष भी आई तो उन्होंने कहा कि क्षमावणी पर्व तो आत्मशुद्धि के लिए आता है, इस दिन सामाजिक चुनाव या आर्थिक लेखा-जोखा लेकर नहीं बैठना चाहिए किन्तु इसके लिए कोई अतिरिक्त दिवस निर्धारित करें और यह पर्व अत्यन्त सौहार्द्र पूर्वक पारस्परिक क्षमायाचना करके मनावें। पूज्य माताजी की यह भावना सफल हुई और क्षमावणी पर्व चिरकाल पश्चात् वहाँ धूमधाम से बिना विवाद के सम्पन्न हो गया।

पूज्य माताजी की यह शिक्षा अन्य समाजों को भी ग्रहण करके सामाजिक चुनाव, आर्थिक व्यवस्था आदि के कार्य पर्व के दिन न करके अन्य साधारण तारीखों में करना चाहिए ताकि हमारे पवित्र पर्व शालीनता के साथ लोग मना सकें।

➢आचार्य श्री वीरसागर महाराज चरण स्थापना–

आश्विन कृष्णा अमावस्या को गणिनी आर्यिकाश्री के दीक्षागुरु आचार्य श्री वीरसागर महाराज की पुण्यतिथि मनाई गई तथा उनकी प्रेरणा से मंदिर जी में सुमेरु पर्वत के समक्ष आचार्यश्री के चरण विराजमान किए गये। यहाँ लोगों ने बताया कि सन् 1954 में आचार्यश्री वीरसागर महाराज अपने संघ के साथ टिकैतनगर पधारे थे और उनके पावन करकमलों से भगवान नेमिनाथ की प्रतिमा वेदी में विराजमान हुई थी। सो अब 40 वर्ष बाद उनके चरणों की स्थापना से पुनः उनकी स्मृतियाँ ताजी हो गईं।

➢जन्मभूमि में मनाई गई षष्ठी पूर्ति–

यह एक मणि-कांचन संयोग ही माना जाएगा कि जहाँ आठ वर्ष का शैशव बीता, वहीं ज्ञानमती माताजी ने अपने जीवन के साठ वर्ष पूर्ण किए। नगरवासियों ने अत्यन्त उत्साहपूर्वक उनके **''षष्ठिपूर्ति''** समारोह को मनाया।

इसके अन्तर्गत कई कार्यक्रमों के साथ-साथ देशभर से आमंत्रित 61 श्रेष्ठियों को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर उ.प्र. के महामहिम राज्यपाल श्री मोतीलाल जी वोरा, कारागार मंत्री-श्री अवधेश प्रसाद जी एवं फैजाबाद के पूर्व विधायक श्री जयशंकर पांडे आदि अनेक शासन-प्रशासन के लोग पधारे। विशेष बात यह है कि कारागार मंत्री ने इस अवसर पर जेल से 61 कैदियों को रिहा करने की घोषणा करते हुए स्वयं भी मानव कल्याण के पथ पर चलने का संकल्प लिया था।

➢विदाई के रोमांचक क्षण, आँसुओं से भीगे तन-मन–

चातुर्मास समापन के क्षण ज्यों-ज्यों नजदीक आ रहे थे, नगरवासियों की विह्वलता बढ़ती जा रही थी और आखिर वह मंगलविहार के दिन अश्रु सरिता रूप में फूट पड़ी। ओह! मैंने आज तक जीवन में ऐसा करुण क्रन्दन नहीं देखा। पिछले वर्ष तो मैं सोचती थी कि इन्हें अपनी निधि के चातुर्मास का लाभ न मिलने के कारण ये इतने दुखी हो रहे थे, किन्तु अब चातुर्मास होने के बाद इतिहास पुरुष जीवन्धर के समान अपनी माता को अपने नगर से जाने ही नहीं देना चाहते थे और अपनी इच्छा सफल होती न देख रोने के सिवाय उनके पास कोई चारा भी न था। जिनमंदिर से पूज्य माताजी के संघ सहित निकलते ही प्रत्येक श्रावक अपने घर के समक्ष उनके चरण प्रक्षाल करते हुए आरती करते ही फूट-फूट कर रो पड़ते। इन भावभीने क्षणों में हमारे संघ के लोगों की भी निष्ठुरता में कमी आ गई और कई जगह उन सबकी आँखें भी सजल हो गईं। गाँव का हर वृद्ध,बालक, महिला, युवा सभी तो सिसकियाँ भर-भर कर रो रहे थे। हम तो किंकर्तव्य विमूढ़ हो सबके मोह की लीला देख रहे थे और महसूस कर रहे थे कि इनकी अन्तर्वेदना वर्षों तक कोई दूर नहीं कर पाएगा। अत्यन्त कठोर हृदय होने के बावजूद भी उस समय पूज्य माताजी उन सबके शोक की उमड़ती सरिता को देख पाने में कठिनाई महसूस कर रही थीं।

युवकों की भजन पंक्तियाँ निरन्तर 6 किमी. तक गूंजती रहीं और हजारों नर-नारियों को रुलाती रहीं–

''माता तुम न जाना भूल, तुम तो चलीं दूर-दूर, हमें याद रखना''।

इसे बाल अपनत्व कहूँ या धर्म स्नेह? आज भी जब मैं उस दृश्य का स्मरण कर लेती हूँ तो सारा शरीर रोमांचित हो जाता है पुनः एक क्षण को उस वीतराग अवस्था को प्राप्त करने के लिए मन आतुर होता है जिसमें रंचमात्र मोहकर्म सताने न पावे क्योंकि मोक्ष प्राप्ति तो उस अवस्था से ही हो सकती है।

प्राचीन कथानक के अनुसार जैसे बलराम जब कोलाहल देखकर, अपने रूप के प्रति आकर्षण देखकर, ध्यान में विघ्न उपस्थित होता देख कर, जनता के स्नेह से अपने को विमुख करने हेतु मांगीतुंगी (महाराष्ट्र में) पर्वत पर जाकर जंगल की ओर मुँह करके जनता की ओर पीठ करके ध्यान में खड़े हो गए थे। इसी प्रकार पूज्य माताजी भी अपने कर्तव्य का निर्वाह करने के पश्चात् सारे अवधवासियों के स्नेह से अपने को विमुख करने हेतु चल पड़ीं दूसरी दिशा की ओर। अब उनका लक्ष्य भगवान ऋषभदेव और तीर्थ अयोध्या पर केन्द्रित हो गया, जिससे वहाँ के अधूरे कार्य पूर्ण सम्पन्न होकर क्षेत्र की कीर्तिध्वजा दिग्दिगन्त में फहराने लगे।

➢अयोध्या तीर्थ पर पुनः आगमन–

टिकैतनगर में चातुर्मास सम्पन्न करने के पश्चात् पूज्य माताजी 16 दिसम्बर 1994 को पुनः अयोध्या पधारीं, वहाँ पहुँचने के बाद 14 फरवरी 1995 तक समवसरण मंदिर एवं रचना का निर्माण कार्य द्रुतगति से पूर्ण हुआ पुनः 15 फरवरी 1995 से नवनिर्मित समवसरण मंदिर की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करवाकर आर्यिकाश्री ने तीर्थ और भगवान के श्रीचरणों में अपनी एवं देशभर की ओर से द्वितीय धरोहर भेंट में चढ़ाई। प्रतिष्ठा के अंतिम दिवस अर्थात् निर्वाणकल्याणक के दिन दोनों नूतन मंदिरों (तीन चौबीसी मंदिर एवं समवसरण रचना मंदिर) के शिखरों पर कलशारोहण हुआ एवं सन् 1994 में पूज्य माताजी की प्रेरणा से मुख्यमंत्री मुलायम सिंह द्वारा घोषित वहाँ के राजकीय उद्यान का नामकरण ''भगवान ऋषभदेव उद्यान'' किया गया एवं उस उद्यान में भगवान ऋषभदेव की आर.सी.सी. से निर्मित विशाल प्रतिमा स्थापित हुईं।

➢विश्वविद्यालय ने डी.लिट्. की मानद् उपाधि प्रदान कर अपने को गौरवान्वितकिया–

अयोध्या प्रवास के दौरान फैजाबाद के अवध विश्वविद्यालय के कुलपति श्री के.पी. नौटियाल जी कई बार पूज्य माताजी के दर्शन हेतु पधारे तथा जब उन्होंने यह जाना कि पूज्य माताजी इसी अवध प्रांत की अनमोल मणि हैं और इन्होंने एक छोटे कस्बे में छोटी सी लौकिक शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद भी अपने ज्ञान के आधार पर एक-दो नहीं अपितु दो सौ से अधिक ग्रंथों की रचना करके एक कीर्तिमान स्थापित कर दिया है, तब वे अपने आपको गौरवशाली समझते हुए बोले–माताजी! हम आपको विश्वविद्यालय की सबसे बड़ी मानद् उपाधि **डी.लिट्.** से सम्मानित करके अपने विश्वविद्यालय का गौरव बढ़ाना चाहते हैं परन्तु पूज्य माताजी ने हंसकर उनकी बातों को टाल दिया वे बोलीं– भैय्या! हमारे पास तो अपने गुरु द्वारा प्रदत्त आर्यिका और गणिनी पद ही

सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, शेष हमें कोई पदवी नहीं चाहिए।''

लेकिन ऐसा कहते हैं कि विचारक व्यक्ति के मन में यदि गहराई से कोई विचार समा जाता है, तो वह एक न एक दिन मूर्तरूप अवश्य लेता है। यही अवध विश्वविद्यालय के कुलपति जी के साथ भी हुआ, पूज्य माताजी की बात सुनकर उस समय तो कुलपति जी चले गए परन्तु जनवरी 1995 के अंतिम सप्ताह में एक दिन उन्होंने किसी के द्वारा समाचार भिजवाया कि मुख्यमंत्री श्री मुलायम सिंह यादव द्वारा भगवान ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक महोत्सव के मंच से घोषित ऋषभदेव जैन चेयर के भवन बनाने हेतु सरकार से पैसा प्राप्त हो गया है, उस भवन के शिलान्यास हेतु माताजी मुहूर्त निश्चित कर दें एवं अपना सानिध्य प्रदान करने हेतु स्वीकृति प्रदान करें।

शिलान्यास की बात आते ही पूज्य माताजी ने 5 फरवरी की तिथि घोषित करते हुए अपने पहुँचने की स्वीकृति दे दी। उस दिन कुलपति जी ने बहुत ही सूझ-बूझ का परिचय देते हुए शिलान्यास के पश्चात् उसी दिन (5 फरवरी 1995 को) पूज्य माताजी को विश्वविद्यालय लाकर डी.लिट्. की मानद् उपाधि प्रदान करके अपने विश्वविद्यालय का गौरव वृद्धिंगत कर लिया।

➢अयोध्या से मंगल विहार–

भगवान ऋषभदेव की जन्मजयंती के पश्चात् 28 मार्च 1995 को पूज्य माताजी ने अपने संघ के साथ अयोध्या से मंगल विहार कर दिया। बड़े बाबा के श्रीचरण छोड़ते हुए उन्हें भी मानसिक वेदना हुई तथा उन्होंने अपने उद्बोधन में अवधवासियों को अयोध्या तीर्थ की तन-मन-धन से रक्षा करने का संदेश दिया। पूज्यश्री की उक्त भावना को मैंने एक भजन में संजोया, जिसने समय के अनुरूप तीर्थभक्तों को प्रबल प्रेरणा प्रदान किया–

भजन

तर्ज –हम लाए हैं तूफान से किस्ती निकाल के.....

निधियाँ कई दे दी हैं, अयोध्या को मात ने।
अब तीर्थ को रखना, मेरे भक्तों! संभाल के।।टेक.।।

आए थे कभी देशभूषण जी महामुनी।
जिनकी कृपा से ऋषभदेव मूर्ति है बनी।।
उपकार उनका लिख गया इस तीर्थ भाल पे।
अब तीर्थ को रखना मेरे भक्तों! संभाल के।।1।।

वीरान हो गई थी पुनः पुरी अयोध्या।
जिनधर्म की प्रभावना न हुई थी यहाँ।।
प्रचलित है रामजन्मभूमि की मिशाल से।
अब तीर्थ को रखना मेरे भक्तों! संभाल के।।2।।

इस अवध की अनमोल मणी ज्ञानमती माँ।
गणिनी शिरोमणी तथा चारित्र चन्द्रिका।।
उनकी गई इक दृष्टि अयोध्या विकास पे।
अब तीर्थ को रखना मेरे भक्तों! संभाल के।।3।।

निज संघ सहित आ गईं इस आदि तीर्थ पर।
फिर छा गई यह ऋषभ जन्मभूमि जगत पर।।
अतिशायि कार्य हो गये हैं अल्पकाल में।
अब तीर्थ को रखना मेरे भक्तों! संभाल के।।4।।

फिर ना कभी वीरान हो जावे ये बगीचा।
श्री देशभूषण ज्ञानमती ने इसे सींचा।।
चैतन्य तीर्थ ''चन्दना'' गुरु ही त्रिकाल में।
अब तीर्थ को रखना मेरे भक्तों! संभाल के।।5।।

इस प्रकार अयोध्या की गलियाँ, वहाँ की जनता, वहाँ की इमारतें सब अपनी पुत्री को विदाई देते समय शून्यता का अनुभव कर रही थीं। अयोध्या के पत्रकार बंधु, वहाँ के सन्त-महन्त उस भावी शून्यता को शब्दों में प्रगट करते हुए कह रहे थे–

'पूज्य माताजी! आपके यहाँ पर विराजने से इतने दिन अयोध्या में जो चारों तरफ अमन–चैन हुई है, वह कहीं आपके जाते ही फिर न खत्म हो जाए, इसलिए आप अयोध्या से न जाएँ, यही आपसे हमारी प्रार्थना है।' एक प्रभावी महंत जी अपने उद्गार व्यक्त करते हुए बोले-

''अयोध्या में महन्त बहुत हैं किन्तु सन्त के रूप में हमने आपको पहली बार पाया है। वास्तव में महानता का अन्त करने वाले महन्त कहलाते हैं तथा संसार का अन्त करने के पथ पर चलने वाले सन्त कहे जाते हैं। यदि हमारी नगरी में आप जैसे निःस्वार्थ सन्त रहने लग जावें, तो इसका उत्थान अवश्य हो सकता है।''

सबकी भावनाओं का सम्मान करती हुईं, हृदय से जन-जन को आशीर्वाद प्रदान करती हुईं पूज्य माताजी ने 28 मार्च की शाम तक अयोध्या की सीमा

पार कर ली और मन में प्रभु की मूरत बसाए हुए चल पड़ीं अपने गन्तत्व की ओर। पूरे 60 दिनों में अयोध्या से हस्तिनापुर की यात्रा सम्पन्न हुई।

➢सन्त समागम से हृदय परिवर्तन–

पद विहार करते हुए जैन साधु-साध्वियों को अनेक अनहोने प्रसंगों का सामना करना पड़ता है। अयोध्या से विहार करने के दो-तीन दिन पश्चात् ही एक दिन मार्ग में एक ठाकुर साहब मिले, उन्होंने पूज्य माताजी के पास आकर पाँच सौ रुपये का नोट चढ़ाया। माताजी मुस्कराकर आगे चल पड़ीं, तो ठाकुर साहब ने नोट उठाकर उनसे लेने का आग्रह किया। पुनः हम लोगों ने उन्हें बताया कि जैन साधु पैसा छूते भी नहीं हैं लेने और रखने की बात तो बहुत दूर है। कुछ देर चर्चा करने के बाद वे प्रभावित होकर वापस चले गए।

संयोगवश दूसरे दिन अगले गाँव में शाम को 6 बजे पुनः वे वहाँ आ गए, जहाँ एक स्कूल में हम लोग ठहरे थे। वे फिर रुपये चढ़ाकर कहने लगे-

अम्माजी! आपने कल मुझे फुसलाकर पैसे वापस कर दिए थे परन्तु आज तो आपको लेना पड़ेगा, मैं बिना दिये वापस नहीं जाऊँगा।

"अच्छा! बिना दिये तुम वापस नहीं जाओगे" उसी की बात दुहराते हुए ज्ञानमती माताजी बोली, तब उसने फिर से उनसे रुपये ग्रहण करने की विनती की।

माता ने अब बच्चे की भावुकता पर ध्यान दिया और अकस्मात बोल पड़ीं–

"मैं जो कुछ भी कहूँ वह तुम मानने को तैयार हो?"

"हाँ हाँ माँ जी! मैं सब कुछ तुम्हारें चरणों में न्योछावर करने को तैयार हूँ।" ठाकुर ने कहा।

माताजी ने अब कुछ सोचकर कहा-वत्स। साधु को नोट या वोट नहीं चाहिए, उसे तुम्हारी खोट चाहिए। वह बेचारा बोल पड़ा-माँ! मैं समझा नहीं कि आप क्या चाहती हैं?

माँ का स्वर फूटा-बेटा! यदि माँसाहार करते हो तो छोड़ दो।

इतना सुनते ही वह ठगा सा रहा गया और कहने लगा–

माँ जी! क्या आप अंतर्यामी हैं? आपमें जरुर कोई दिव्यशक्ति है, जिसने बिना कुछ कहे मेरी खोट जान ली। अच्छा! आप यही खोट मुझे दे देने को कह रही थीं?

हाँ में सिर हिलते ही ठाकुर चरणों में नतमस्तक होकर बोल पड़ा–

"अम्मा! मैंने त्याग दिया आज आपके चरणों में जीवन भर के लिए माँसाहार को।"

उसके कई मित्र भी पास में खड़े थे और सैकड़ों ग्रामीण थे। उन सब ने यह दृश्य देखकर अण्डे खाने का, मांसाहार करने तथा शराब पीने का आजीवन त्याग कर दिया। कुछ ही क्षणों में वहाँ ठाकुर की माँ, पत्नी, बच्चे सब आ गए वे इस आकस्मिक त्याग से अत्यन्त प्रभावित हुए और पूज्य माताजी को कोटि-कोटि धन्यवाद देते हुए कहने लगे–

'सुनी तो बहुत थी सन्तों की महिमा पर आँखों से देखी है सच्ची कहानी"

पुनः कई दिनों तक वे ठाकुर साहब आते रहे और माताजी का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर ग्राम पंचायत के चुनाव में विजयी बने।

ऐसे कई उदाहरण इस पद विहार में देखे गए, जब छोटे-बड़े ग्राम के वासियों ने हम लोगों के लघु संबोधन पर अनेक व्यसनों का त्याग किया।

➢मच्छर भी गायब हो गए –

कुण्डासर नामक गाँव की बात है। हम लोग वहाँ रात्रि विश्राम हेतु एक डॉ. के घर पर रुके हुए थे। वे पति-पत्नी अत्यन्त सज्जन थे। सुबह जब हम लोग वहाँ से विहार कर रहे थे तो डॉ. साहब ने कहा–माताजी! यहाँ तो रोज इतने मच्छर रहते थे कि बैठना, उठना, लेटना मुश्किल पड़ जाता था किन्तु आज रात को तो चमत्कार हो गया। आज आप लोगों के आगमन व विश्राम से चमत्कारवश एक भी मच्छर नहीं रहा। वास्तव में सन्तों की चर्या ऐसी होती है कि मच्छर क्या, उनके तप के प्रभाव से बड़े-बड़े अकाल भी दूर हो जाते हैं।

➢बाबाजी ने कई लोगों को शाकाहारी बनाया–

हस्तिनापुर की ओर हम लोग निरन्तर बढ़ते चले जा रहे थे। कुंवरगड्डी में हमारा आहार था। दिन में एक बुड्ढे बाबाजी आये और कहने लगे कि आपने दो वर्ष पूर्व यहाँ जो प्रवचन किया था, उससे मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ। वे ऐसा कहकर मेरे द्वारा 2 वर्ष पूर्व सुनाई गई भील द्वारा कौवे के माँस त्याग की कथा ज्यों की त्यों सुनाने लगे, जिसे सुनकर हम सभी को बड़ी प्रसन्नता हुई, फिर वह पूज्य माताजी से अपने ज्ञानवर्द्धन के लिए एक पुस्तक "आटे का मुर्गा" प्राप्त कर प्रसन्न मन से यह कहकर चले गये कि अब मैं हर एक व्यक्ति को शाकाहारी बनने की प्रेरणा देता हूँ।

➢मिट्टी हटाते ही पानी आ गया–

अपने गृहस्थावस्था के ननिहाल महमूदाबाद से विहार कर हम लोग 8 किमी. दूर भेथरामाधव नामक गाँव के स्कूल में पहुँचे। ब्रह्मचारिणी बहनों को सुबह से यहाँ पानी की बड़ी दिक्कत थी। जब हम लोग वहाँ पहुँचे तो

सामने ही एक मिस्त्री ने मिट्टी हटाई और मोटर लगाते ही ट्यूबवेल चलने लग गया। बाद में गाँव वालों से पता चला कि यहाँ तो पानी की बहुत ज्यादा दिक्कत थी, यह तो कोई चमत्कार है, जो आज यहाँ पानी आ गया। इसी प्रकार की एक घटना खैराबाद नाम के गाँव में हुई, यहाँ आते ही ब्र. बहनों ने बताया कि यहाँ पानी के लिए हम सब बहुत परेशान हुए, गाँव वालों से पूछने पर ट्यूबवेल 1 किमी. दूर बताया और यहाँ का कुंआ बिल्कुल सूखा पड़ा था किन्तु माताजी का चमत्कार कि रात में ही जाने कहाँ से उसमें खूब अच्छा पानी आ गया और उसी से चौका बनाया गया।

➢सीतापुर में हुआ अवध यात्रा का समापन –

पिछले वर्ष अयोध्या में धर्मामृत की वर्षा करने के बाद पूज्य माताजी अयोध्या से विहार करके फतेहपुर, बेलहरा, पैतेपुर, महमूदाबाद, सिधौली होती हुई 28 अप्रैल 1995 को सीतापुर पहुँचीं। उनके मंगलपदार्पण पर सीतापुर जैन मंदिर के पीछे एक त्यागीभवन का शिलान्यास हुआ तथा वहीं से भक्तों ने भावभीनी विदाई दी।

इस अवसर पर लखनऊ से श्री सुमेरचंद जैन पाटनी व श्री विजय कुमार जैन पधारे और पाटनी जी ने सभा में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि **आज 14 महीने के बाद मैं पूज्य माताजी के दर्शन करने आया हूँ। इसे मैं अपना दुर्भाग्य मानता हूँ। इस मध्य मेरे मन में कारणवश कुछ गलतफहमी उत्पन्न हो गई थी जिनके कारण मैं संघ के दर्शन को नहीं आ सका और अयोध्या के द्वितीय पंचकल्याणक में भी भाग न ले सका। अभी मैं 5-7 दिन पूर्व ही अयोध्या होकर आया हूँ, वहाँ के कार्यकलापों की तो जितनी प्रशंसा की जावे, कम है। इतने कम समय में जो अनेक विशाल निर्माण हुए हैं, इतिहास उन्हें युगों-युगों तक स्वर्णाक्षरों में अंकित रखेगा। पूज्य माताजी अब अवधप्रान्त से विहार कर रही हैं, मैं कई दिनों से उनके दर्शन करने एवं क्षमायाचना करने हेतु आने वाला था किन्तु पारिवारिक परिस्थितियों के कारण नहीं आ सका। आज अवध यात्रा के समापन की बेला में माताजी से व आर्यिका संघ से क्षमायाचना करता हुआ यही आशा रखता हूँ कि मेरे ऊपर आप लोगों का पूर्व जैसा आशीर्वाद तथा स्नेह बना रहेगा।** अन्त में पाटनी जी ने कहा कि **अयोध्या तीर्थक्षेत्र की नई कमेटी के प्रति मेरी पूर्ण आस्था है, उसके प्रति मेरा कोई दुर्भाव नहीं है। आज पूज्य माताजी के समक्ष मैं पुरानी बातों का त्याग करके जा रहा हूँ। भाई रवीन्द्र जी अयोध्या के**

कार्य में मुझसे जब भी कोई सहयोग मागेंगे, मैं सदैव सहयोग दूँगा।

अवध यात्रा समापन के समय अपने मंगल उद्बोधन में परमपूज्य गणिनी आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने आशीर्वादात्मक प्रवचन में कहा कि साधु तो क्षमा की मूर्ति होते हैं। आप सभी अपने शाश्वत तीर्थ अयोध्या का सतत विकास करते हुए उसकी रक्षा करें, यही मेरा सबके लिए मंगल आशीर्वाद है।

➢आशीर्वाद से अनहोनी टल गई–

5 मई की बात है, हम लोग बंथरा से तिलहर डिग्री कालेज पदयात्रा करते हुए पहुँचे ही थे कि संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों ने आकर बताया कि माताजी! आज तो बड़ा अनिष्ट टला है वर्ना आज न जाने क्या होता? मेरे पूछने पर उन्होंने बताया कि आज हमारी मेटाडोर का बड़ा भारी एक्सीडेंट हुआ, भगवान की पेटी चूँकि साथ में थी इसलिए हम लोग बच गए। हुआ यूँ कि बंथरा स्कूल के बाहर एक छोटा सा आधा बना हुआ गेट था, उसमें से मेटाडोर निकलने लगी तो ऊपर कैरियर पर रखा सामान उस गेट से टकरा गया और गेट के दोनों पिलर और ऊपर का हिस्सा सारा का सारा हमारी मेटाडोर पर गिर गया। आगे का पूरा शीशा टूट गया, दरवाजे का लॉक टूटा और हल्की-फुल्की खरोंच गाड़ी में आयी किन्तु हममें से किसी को या ड्राइवर को एक खरोंच भी नहीं आयी। यह सब भगवान का चमत्कार और आपके आशीर्वाद का ही फल है कि इतने भयंकर एक्सीडेंट के बाद भी हम लोग सही–सलामत आपके सामने खड़े हैं।

➢व्यसन मुक्ति का जीवन्त संदेश देते हैं साधु-सन्त–

यूँ तो पूज्य माताजी की प्रेरणा व उपदेश से तमाम व्यक्ति मांसाहार का त्याग कर देते हैं परन्तु जिस गांव में ग्राम प्रधान मुसलमान हों और जाटों की बस्ती हो, वहाँ के लोग शराब व माँस का त्याग हमेशा के लिए कर दें, यह अपने आप में अनोखी एवं अविस्मरणीय बात है। छजलेट गाँव में भी ऐसा ही हुआ। हम लोग लगभग 1 फर्लांग अन्दर जाकर जूनियर हाईस्कूल में ठहरे, दिन का समय था। हस्तिनापुर से पधारे पं. नरेश कुमार शास्त्री को पूज्य माताजी ने प्रवचनार्थ इशारा किया, उनके प्रवचन के पश्चात् क्षुल्लक मोतीसागर महाराज का जैसे ही अहिंसा धर्म पर प्रवचन प्रारंभ हुआ, उस गाँव के लगभग 25-30 लोगों ने तुरंत ही शराब व मांस का त्याग कर दिया।

➢गुरु का उपदेश जीवन परिवर्तन में माध्यम बना–

जैसा कि मैंने आपको पहले बताया कि सन्त समागम मानव जीवन में

परिवर्तन ला देता है। वही परिस्थिति पटपरागंज नामक गाँव में भी देखने मिली। गाँव वालों की उत्सुकता देखकर मैंने अहिंसा धर्म पर उन सभी को थोड़ा सा उपदेश देकर मद्य और मांसाहार त्याग करने की प्रेरणा दी, उस समय जितने भी ग्रामीण प्रवचन सुनने आए थे, उन 300-400 लोगों ने तुरंत मद्य एवं मांसाहार त्याग का नियम ले लिया। इसी प्रकार मझगवां गाँव में पूज्य माताजी से कुछ ग्रामीण बोले – अम्मा! थोड़ा उपदेश सुना दो। माताजी ने उनको माँसाहार व मदिरापान का त्याग करने का उपदेश दिया और माताजी के सामने ही लगभग 200 ग्रामीणों ने मद्य एवं मांस का त्याग कर दिया।

➢धीवर ने मछली मारने का त्याग कर दिया –

एक भन्डिया नामक ग्राम में संघ का रात्रि विश्राम था। वहाँ जनता की भीड़ उमड़ आने पर पूज्य माताजी ने क्षुल्लक मोतीसागर को प्रवचन के लिए संकेत किया। उन्होंने प्रवचन में धीवर का एक प्राचीन कथानक सुनाते हुए कहा कि उसने एक महात्मा जी से एक दिन नियम ले लिया कि 'पहली मछली जो मेरे जाल में फँसेगी उसे मैं छोड़ दिया करूँगा।'' इस नियम के अनुसान उसने एक मछली को उसी दिन पांच बार जीवनदान दिया और कोई दूसरी मछली दिन भर जाल में न आने पर भी उसने नियम नहीं तोड़ा। भले ही उसे तथा उसके परिवार को भूखे रहना पड़ा।

उस नियम के प्रभाव से अगले जन्म में वह धीवर एक धनी सेठ का लड़का हुआ और जीवन में पाँच बार मृत्यु से उसकी रक्षा हुई। अतः प्रत्येक प्राणी को अपने समान मानकर किसी की हिंसा नहीं करना चाहिए।

उक्त प्रवचन समाप्त होते ही सभा में एक धीवर जाति का व्यक्ति उठ खड़ा हुआ और उसने जीवन भर के लिए मछली मारने तथा खाने का त्याग कर दिया। क्षुल्लक जी ने उसे सम्मानित किया, पुनः कई लोगों ने मांसाहार का त्याग किया।

प्राचीन काल के समान आज भी साधुओं की सत्संग सभाओं से अनेक जीवों का कल्याण होता है। देखो न! पौराणिक धीवर ने तो पहली मछली को जीवन दान देने का नियम लिया था। किन्तु आज के धीवर ने उससे भी अधिक साहस का परिचय दिया, निश्चित ही उसका भव सुधरने वाला होगा।

ऐसे छोटे-छोटे संस्मरणों से अवध यात्रा का एक वृहत् पुराण तैयार हो सकता है किन्तु यहाँ मैंने केवल दो-चार उदाहरण लिखकर ही साधु-सानिध्य से होने वाले परोपकारों को प्रस्तुत किया है।

पुनः 28 मई 1995, ज्येष्ठ कृ. चतुर्दशी भगवान शान्तिनाथ के जन्म, तप एवं निर्वाणकल्याणक की पावन बेला में पूज्य माताजी अपने पूरे संघ के साथ हस्तिनापुर पधारीं।

➢तेरी इस त्यागप्रथा में, कितनी बालाएँ आईं –

वैसे तो माताजी को इस हस्तिनापुर से अयोध्या विहार के मध्य अनेक अचेतन उपलब्धियों की प्राप्ति हुई थी, जिससे पूरे अवध की ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत देश की जनता लाभान्वित हो रही है और होती रहेगी परन्तु इनके साथ ही साथ जो चेतन उपलब्धियों के रूप में पूज्य माताजी ने तीन कन्याओं को संसाररूपी कीचड़ से निकालकर त्यागमार्ग में लगाने का उपक्रम किया है, वह युगों-युगों तक अविस्मरणीय रहेगा। उन कु. सारिका, कु. इन्दू एवं कु. अलका के लिए मेरा मंगल आशीर्वाद है कि उन्होंने अपनी छोटी-छोटी उम्र में यह जो तलवार की धार के समान कठिन व्रत अंगीकार किया है, उसका निरतिचार पालन करते हुए सदैव अपने चारित्र की वृद्धि करें। कु. सारिका पूज्य माताजी की गृहस्थावस्था की छोटी बहन श्रीमती कामिनी जैन (दरियाबाद) की सुपुत्री हैं, कु. इन्दू भी पूज्य माताजी के ही गृहस्थावस्था के भ्राता स्व. श्री प्रकाशचंद जैन की सुपुत्री हैं और कु. अलका भी उसी जन्मभूमि टिकैतनगर के ही श्रावक श्री कोमलचंद्र जैन की सुपुत्री हैं। जहाँ पर पूज्य ज्ञानमती माताजी जैसे महान साधु जन्मे हैं तथा अनेकों त्यागी, व्रती लगातार त्याग मार्ग में आगे बढ़कर नगरी का गौरव बढ़ा रहे हैं।

➢हस्तिनापुर तीर्थ पर मंगल-पदार्पण –

इस प्रकार अयोध्या से यहाँ तक के पदविहार में अनेक प्रकार के खट्टे-मीठे अनुभवों का आनन्द लेते हुए संघ का मंगल पदार्पण हस्तिनापुर के जम्बूद्वीप-स्थल पर हुआ। तीर्थ के अतुलनीय सौन्दर्य को देखते ही मन प्रसन्नता से भर उठा तथा इतनी लम्बी यात्रा की सारी थकान दूर हो गई।

मंगल प्रवेश के अवसर पर आयोजित प्रवचन सभा में सर्वप्रथम क्षुल्लक मोतीसागर जी महाराज ने अपने मंगलाचरण में कहा – **दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के कार्यकर्ताओं की कर्मठता और उनके दीर्घकालीन अनुभव का ही प्रतिफल है, जो अयोध्या तीर्थ का इतने अल्पकाल में उद्धार हो गया।**

पुनः मैंने अपने वक्तव्य में कहा कि – एक पथिक कुंए में गिर गया, तो अपनी प्राणरक्षा के लिए बचाओ-बचाओ कहकर चिल्लाने लगा। एक सिद्धांतशास्त्री

उसे कर्मसिद्धान्त का भाषण सुनाकर चले गये, एक नेता जी ग्राम पंचायत की बुराई करके चले गए और एक क्रिश्चियन भाई बोले–अभी साधन लाकर आपको निकालता हूँ पुनः तीर्थंकर महावीर के एक सच्चे भक्त ने बिना भाषण दिए, बिना विचार किए ही शीघ्र साथ में लाए छन्ना, लोटा, डोर का सदुपयोग किया और अपनी डोर के सहारे कुंए से उस दुखी पथिक को निकाल लिया, पथिक ने उसे कोटि-कोटि धन्यवाद दिया। इसी प्रकार हस्तिनापुर और अयोध्या दोनों तीर्थ उपेक्षितरूप में महावीर के भक्त को अपने उद्धार हेतु पुकार रहे थे, पूज्य ज्ञानमती माताजी के रूप में उन्हें सच्चा उद्धारक मिला और वे दोनों तीर्थ अब विश्व के मानस पटल पर उभरकर आए हैं।

सभा के अंत में पूज्य माताजी ने सभी उपस्थित भक्तों को अपना मंगलमयी आशीर्वाद प्रदान किया तथा अयोध्या और हस्तिनापुर का पारस्परिक संबंध जोड़ते हुए उन्होंने कहा कि–**''हिन्दी वर्णमाला का प्रथम अक्षर 'अ' है और अंतिम अक्षर 'ह' है अतः अयोध्या और हस्तिनापुर के बीच में वर्णमाला के शेष समस्त अक्षरों की भांति शेष सभी तीर्थ समाहित हो जाते हैं।''**

➢वर्षायोग स्थापना–

'धरती का स्वर्ग' कही जाने वाली हस्तिनापुर की धरती पर जिस दिन से पूज्य माताजी ने प्रवेश किया, नित्य ही छोटे-बड़े कार्यक्रम आयोजित होने लगे। इसी श्रृंखला में दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के पदाधिकारियों के विशेष आग्रह से पूज्य माताजी ने ईसवी सन् 1995 का वर्षायोग जम्बूद्वीप स्थल पर स्थापित किया।

चातुर्मास के मध्य रक्षाबंधन पर्व, दशलक्षण पर्व आदि कार्यक्रम विशेष आयोजनपूर्वक सम्पन्न हुए तथा जम्बूद्वीप का द्वितीय महामहोत्सव एवं पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का जन्मदिवस अद्वितीय समारोह के साथ मनाया गया।

➢सोने में सुगंधि–

पाँच वर्षों के बाद जम्बूद्वीप महामहोत्सव का यह आयोजन इसलिए और अधिक महिमामंडित बन गया क्योंकि उसी दिन आयोजन की प्रेरिका चारित्र चन्द्रिका गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की जन्म और वैराग्यजयन्ती भी आ गई थी। वह पवित्र दिवस था आश्विन शुक्ला पूर्णिमा (शरदपूर्णिमा) 8 अक्टूबर 1995 रविवार का। जब चन्द्रमा अपनी सोलह कलाओं से परिपूर्ण होकर अमृतमयी किरणें बिखेरता है, उसी शरदपूर्णिमा की रात्रि के प्रथम प्रहर

में जन्म लेने वाली कन्यारत्न ने सन् 1952 में शरदपूर्णिमा के दिन ही गृहबन्धन को त्याग कर रत्नत्रयपथ की ओर कदम बढ़ाए थे, इसीलिए शरदपूर्णिमा की तिथि वैराग्यदिवस से भी प्रसिद्ध हुई है।

➢जिलाधिकारी महोदय की घोषणा–

2 से 8 अक्टूबर तक आयोजित जम्बूद्वीप महामहोत्सव में मेरठ के जिलाधिकारी माननीय श्री दीपक सिंघल ने 6 अक्टूबर को पधारकर पूज्य गणिनी माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया। संस्थान की ओर से माननीय जिलाधिकारी महोदय का भावभीना स्वागत किया गया। इस अवसर पर जिलाधिकारी महोदय ने संस्थान व पूज्य माताजी द्वारा किये गये हस्तिनापुर विकास की प्रशंसा करते हुए कहा कि जिस प्रकार से श्रवणबेलगोला जैन समाज का अंतर्राष्ट्रीय स्तर का तीर्थ है, उसी प्रकार जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर को अंतर्राष्ट्रीय स्तर का तीर्थ बना देना चाहिए। आपने यह भी कहा कि आप लोग हस्तिनापुर के विकास की योजना तैयार करें, उसमें शासन से जो भी सहयोग की जरूरत होगी, मैं उसे पूरा करूँगा।

➢नूतन मंदिरों में श्री जी विराजमान हुए–

नवनिर्मित श्री शांतिनाथ मंदिर, श्रीवासुपूज्य मंदिर एवं ध्यान मंदिर में दिनाँक 4-5 अक्टूबर 1995 को घटयात्रापूर्वक 81 कलशों से वेदी शुद्धि हुई और धाम सम्प्रोक्षण, वेदीवस्त्राच्छादन, मंदिरों की चारों दिशाओं में चतुर्दिक् हवन कराकर समस्त शास्त्रोक्त विधि सम्पन्न हुई। पुनः 6 अक्टूबर (आश्विन शु. 13) को प्रातः 9 बजे से वेदियों में भगवान विराजमान किये गये।

सर्वप्रथम वासुपूज्य भगवान की प्रतिमा विराजमान करने का सौभाग्य मिला मवाना निवासी श्रीपाल जैन (भगत जी) को, पुनः भगवान् शांति-कुंथु-अरहनाथ की प्रतिमाएँ शांतिनाथ मंदिर में श्री राजकुमार जैन-मेरठ सदर ने विराजमान कीं। इस मंदिर का निर्माण भी राजकुमार जैन की ओर से ही हुआ है।

इसके पश्चात् बिल्कुल नये डिजाइन वाले नवनिर्मित ध्यान मंदिर में चौबीस तीर्थंकरों से समन्वित 'ह्रीं' की धातुनिर्मित प्रतिमा गुजरात (अहमदाबाद) निवासी श्री हीरालाल जैन एवं उनकी धर्मपत्नी सौ. कान्ताबेन को विराजमान करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

➢कलशारोहण एवं ध्वज स्थापना–

भगवान वासुपूज्य के मंदिर पर शिखरपूजन के साथ कलशारोहण श्री ऋषभकुमार जैन-जयपुर निवासी ने सपरिवार किया तथा श्री विजय

कुमार जैन-दरियागंज दिल्ली (सूर्या प्रिन्टर्स) ने अखंड ध्वज स्थापित किया।

तीर्थंकर श्री शांतिनाथ मंदिर पर मंदिर के ही निर्माता श्री राजकुमार जैन-मेरठ को कलशारोहण और अखंडध्वज स्थापना का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ।

इसी श्रृंखला में ध्यान मंदिर के ऊपर श्री हंसकुमार जैन, शालीमारबाग-दिल्ली ने कलशारोहण किया और श्री सुरेशचंद जैन गोटे वाले-गली गुलियान, दिल्ली परिवार ने अखंड ध्वज स्थापित कर अपनी पुण्यकीर्ति पताका फहराई।

➢महामहोत्सव के अवसर पर महाभिषेक–

विश्व की अलौकिक एवं एकमात्र जम्बूद्वीप रचना के मध्य निर्मित उत्तुंग सुमेरु पर्वत पर शरदपूर्णिमा की प्रातः से ही आम जनता के जाने पर प्रतिबंध लगा हुआ था, क्योंकि उस दिन वहाँ की पाण्डुक आदि चारों शिलाओं पर तीर्थंकर भगवन्तों का 1008 कलशों से महाभिषेक होने वाला था। कलशाभिषेक करने वालों को क्रमक्रम से वहाँ तक पहुँचाने हेतु सुन्दर और मजबूत व्यवस्था बनाई गई।

जम्बूद्वीप के सामने एक बड़े चबूतरे पर अनेक कर्मठ महानुभावों के सहयोग से शास्त्रोक्त विधि से बनाए गए मंडल पर 1008 कलश जल भरवाकर स्थापित किये गए। सुमेरु पर्वत की ही डिजाइन में बने ये रंगबिरंगे कलश दर्शकों के विशेष आकर्षण के केन्द्र रहे। संसार में प्रथम बार इस प्रकार के सुमेरु कलश निर्मित हुए, जो अभिषेक करने वाले महानुभावों को महोत्सव समिति की ओर से भेंट कर दिए गए। सुमेरु पर्वत के पांडुक वन में बनी पाण्डुक, पांडुकबला, रक्ता और रक्तकंबला इन चार शिलाओं पर भरतक्षेत्र, पश्चिम विदेह, ऐरावत क्षेत्र और पूर्व विदेह में जन्में तीर्थंकरों का अभिषेक होना था, जो कि जन्माभिषेक का प्रतीक था। उन तीर्थंकरों को अपनी-अपनी शिलाओं पर विराजमान करने का सौभाग्य निम्न चार श्रावकों ने प्राप्त किया और सौधर्म इन्द्र के रूप में गाजे-बाजे के साथ जिन प्रतिमाओं को त्रिमूर्ति मंदिर से सुमेरु पर्वत के ऊपर ले गए–

1. श्री अनिल कुमार जैन, प्रीतविहार-दिल्ली
2. श्री राजकुमार जैन, सफदरजंग एन्क्लेव-दिल्ली
3. श्री ऋषभ कुमार जैन, जयपुर
4. श्री राजेश कुमार जैन-सलावा (मेरठ)

➢'सुमेरु कलश' से प्रथम अभिषेक–

पूर्व नियोजित व्यवस्थानुसार प्रथम नम्बर के 'सुमेरु कलश' से अभिषेक करने वाले महानुभावों के लिए स्वर्ण के कलश बनाए गए थे।

सुमेरु कलश से सर्वप्रथम अभिषेक करने का सौभाग्य जिन महानुभावों ने प्राप्त किया, उन्हें वह स्वर्ण कलश स्मृतिस्वरूप भेंट कर दिया गया।

अन्य कलशों के द्वारा भी क्रम-क्रम से समस्त नरनारियों ने अभिषेक कर असीम पुण्य संचित किया। महिलाओं के लिए स्पेशल बनी केशरिया साड़ियाँ तथा पुरुषों के लिए सफेद धोती-दुपट्टे भी सबको प्रदान किए गए। उन्हें पहनकर पंक्तिबद्ध खड़े हुए इन्द्र-इन्द्राणियों की शोभा से महाभिषेक का वातावरण और भी मनमोहक बन गया था।

गीत-संगीत की मधुर ध्वनियों के बीच न्हवन करने वाले भक्तगण अभिषेक करते रहे और देखने वाली जनता के लिए नीचे पांडाल में क्लोजसर्किट टी.वी. की व्यवस्था थी, उनमें देख-देखकर वे सभी हर्षायमान हो नृत्य-गीत करके आनंद प्राप्त कर रहे थे। पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी, मैं, क्षुल्लक मोतीसागर महाराज, क्षुल्लिका श्रद्धामती जी एवं समस्त ब्रह्मचारिणी बहनों सहित पूरे संघ का सानिध्य भी भक्तों को उत्साह प्रदान कर रहा था तथा विभिन्न विद्वानों के द्वारा जहाँ अभिषेक मंत्रों का उच्चारण चल रहा था, वहीं सामयिक भाषणों से सुमेरु पर्वत, जम्बूद्वीप और महामहोत्सव से संबंधित अनेक तथ्यपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त हो रही थीं।

यह अभिषेक क्रम प्रातः 9 बजे से मध्यान्ह 1 बजे तक चला, जिसमें सुमेरु कलश, रत्नकलश, सुवर्ण कलश करने के पश्चात् कुछ श्रद्धालुओं ने पंचामृत अभिषेक करने का पुण्य लाभ प्राप्त किया।

➢महोत्सव एवं जन्मजयंती की विशाल सभा–

यूँ तो प्रातः 5 बजे से ही 'रत्नत्रय निलय' में अवध प्रान्त से आई जनता ने पुत्र जन्म जैसी खुशियाँ मनाना प्रारंभ कर दिया था, चरण प्रक्षालन, आरती, भजन, बधाई, पुष्पवृष्टि, रत्नवृष्टि आदि से जम्बूद्वीप परिसर अतिशय सुगंधित हो गया था, फिर भी मध्यान्ह 2 बजे से जम्बूद्वीप रचना की उत्तर दिशा में एक विशाल पांडाल में सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। यहाँ मुख्यअतिथि के रूप में पधारे भारत सरकार के केन्द्रीय खाद्य मंत्री-चौधरी श्री अजित सिंह जी।

सभा का शुभारंभ संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों द्वारा 'शारद वंदना' से हुआ पुनः महोत्सव समिति के उपस्थित कार्यकर्ताओं ने मुख्य अतिथि महोदय का स्वागत किया और उन्हें महोत्सव का प्रतीक **'सुमेरुकलश'** भेंट किया गया।

➢सरस्वती और लक्ष्मी का रूप बन गईं तब पूज्य माताजी–

सभा मंच पर बीचों बीच अपने संघ सहित काष्ठासन पर विराजमान पूज्य वात्सल्यमूर्ति-तीर्थोद्धारिका गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी सचमुच में उस दिन सरस्वती और लक्ष्मी दोनों का प्रतिनिधित्व करती प्रतीत हो रही थीं क्योंकि उनके बाईं ओर सरस्वती पुत्र विद्वानों का समूह अपनी माता के चरणों में विनयांजलि करने को आतुर बैठा था और उनके दाईं ओर राजनेता-समाजनेता, लक्ष्मीपुत्र श्रीमानगण अपनी अर्थांजलि समर्पित करने को लालायित थे। सभी के मुंह से श्रद्धापूरित शब्द निकल रहे थे कि **''इन शारद माता ने अपने ज्ञान की लक्ष्मी से निज को तो अक्षय निधि का भंडार बनाया ही है, इस वीरान हस्तिनापुर तीर्थ को भी साक्षात् समवसरण का स्वरूप प्रदान कर संसार में अमर कर दिया है।''**

जिनके वचनों से सरस्वती–जिनवाणी का रस टपकता है, सम्यग्ज्ञान का अमृत बरसता है, न्याय का रूप झलकता है, भक्ति का प्रवाह छलकता है, सिद्धान्त का समन्दर निकलता है, अध्यात्म का तेज दिखता है, वात्सल्य का भाव महकता है, निस्पृहता का सूत्र मिलता है, निश्छलता का मूर्तिरूप खिलता है, ऐसा न्यायप्रभाकर, विधानवाचस्पति, साहित्य वारिधि, विद्यावाचस्पति, आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी इस युग की सरस्वती का रूप हैं तभी निर्दोष ज्ञान प्राप्तिकी इच्छा से विद्वत्गण इनके सानिध्य को प्राप्त कर अतिहर्षित होते हैं।

जिनकी जिह्वा को दीर्घकालीन भाषासमिति ने वचनसिद्धि प्राप्त करा दी है अतः जिनकी एक प्रेरणा पर तीर्थोद्धार, मंदिर निर्माण, शिक्षा क्षेत्र, साहित्य प्रकाशन, महामस्तकाभिषेक आदि महोत्सवों के लिए श्रेष्ठीगण अपनी अर्थांजलि समर्पित करने को उत्सुक रहते हैं, वे श्रीमानों की श्रद्धापात्र इसीलिए हैं कि तीर्थंकर जन्मभूमियों के उद्धार-विकास की निश्छल और निस्पृह भावना उनके अंदर कूट-कूट कर भरी हुई है। वे अनेक कर्मठ साधुओं तथा श्रावकों को भी प्रेरणा दिया करती हैं कि तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमि के प्रतीक कई तीर्थ आज बिल्कुल उपेक्षित हैं, उनके उद्धार-विकास-प्रचार का कार्य यदि एक-एक साधुसंघ और एक-एक गाँव, शहर के श्रेष्ठी अपने ऊपर ले लें,तो निश्चित ही शीघ्र उन तीर्थों का यश संसार में फैल जाएगा और श्रीमानों के धन का सदुपयोग भी हो जावेगा।

श्रुतज्ञान की लक्ष्मी जिन्हें पूर्व भव के संस्कारों से प्राप्त हुई है, उन पूज्य माताजी में लक्ष्मी और सरस्वती पर्यायवाची के समान ही प्रतीत होती हैं।

➢कल्पवृक्ष और सुमेरु में सजे 62 दीप जल उठे–

पिछले वर्ष पूज्य माताजी का षष्टिपूर्ति महोत्सव जन्मभूमि टिकैतनगर में पूरे अवधवासियों ने असीम उल्लास के साथ मनाया था, जिनमें उत्तरप्रदेश के महामहिम राज्यपाल जी ने पधारकर 61 दीप वाले कल्पवृक्ष, स्वस्तिक और ॐ को प्रज्वलित कर वहाँ की जनता को शरदपूर्णिमा का आलोक प्रदान किया था। इस वर्ष वे पावन क्षण मातुश्री की तपोभूमि में माननीय केन्द्रीय खाद्य मंत्री श्री अजित सिंह को प्राप्त हुए। समारोह के संचालक कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी तथा सभाध्यक्ष श्री महावीर प्रसाद जैन (बंगाली स्वीट) अतिथि महोदय को मंच पर सुसज्जित सुन्दर सुमेरु पर्वत, कल्पवृक्ष और स्वस्तिक के निकट ले गए, जहाँ उन्होंने बिजली का स्विच दबाया और 62-62 विद्युत प्रभाएँ चमक उठीं। ये तीनों आइटम टिकैतनगर की भरतसेना के कर्मठ नवयुवक परिश्रम पूर्वक तैयार करवाकर लाए थे। अपनी विभूति के चरणों में प्रभांजलि अर्पित कर सम्यक् दिशा प्रदान करने हेतु उनका यह प्रयास सफलीभूत हो, यही मंगलकामना है।

➢समयसार उत्तरार्ध का विमोचन–

पूज्य आर्यिका श्री द्वारा हिन्दी ज्ञानज्योति टीका में रचित समयसार ग्रंथ के पूर्वार्द्ध का प्रकाशन तो सन् 1990 में हो चुका था, उसी टीका के उत्तरार्ध का प्रकाशन अब हो सका। उसका विमोचन भी आज शरदपूर्णिमा के दिन मुख्य अतिथि के द्वारा हुआ और उन्होंने पूज्य माताजी के करकमलों में समयसार ग्रंथ भेंट किया। साधु संघों तथा विद्वानों की चिरप्रतीक्षित आशा पूर्ण हुई, क्योंकि अब उन्हें पूरे समयसार ग्रंथ के स्वाध्याय का लाभ प्राप्त होगा। इन ग्रंथों में पूज्य माताजी ने आचार्य श्री अमृतचंद्र जी की आत्मख्याति टीका तथा आचार्य श्री जयसेन स्वामी की तात्पर्यवृत्ति दोनों संस्कृत टीकाओं की हिन्दी एक साथ प्रकाशित की है तथा स्थान-स्थान पर विशेषार्थों के माध्यम से सिद्धान्त को एवं उभयनय के समन्वय को प्रदर्शित कर ग्रंथ को वास्तव में सर्वांगीण बना दिया है। समारोह में उपस्थित विद्वानों को भी यह ग्रंथ भेंट में दिया गया।

➢गणिनी आर्यिका ज्ञानमती पुरस्कार डॉ. अनुपम जैन को–

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा घोषित तथा श्री अनिल कुमार जैन, कमल मंदिर-दिल्ली द्वारा अपने सुपुत्र चिरंजीव अतिशय जैन के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में स्थापित **''गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती पुरस्कार''** द्वारा प्रथम

बार डॉ. अनुपम जैन-इंदौर को सम्मानित किया गया। इस सम्मान में संस्थान ने डॉ. अनुपम जी को एक लाख रुपये की नगद राशि, रजत प्रशस्ति पत्र भेंट किया तथा शॉल, माल्यार्पण एवं श्रीफल समर्पित कर स्वागत किया। यह सम्मान कार्यक्रम के मुख्य अतिथि केन्द्रीय खाद्य मंत्री श्री अजित सिंह के करकमलों से सम्पन्न हुआ।

महोत्सव समिति के अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जी ने सम्मान के इस प्रसंग में बताया कि जैन समाज के द्वारा प्रथम बार इतनी बड़ी राशि वाले पुरस्कार से किसी जैन विद्वान को सम्मानित किया गया है। इससे पूर्व हमारी कतिपय संस्थाओं ने अन्य विद्वानों को ही ऐसे बड़े सम्मान प्रदान किए हैं किन्तु यहाँ पर चयन समिति ने डॉ. जैन को सम्मानित करने का निर्णय लिया। इस पुरस्कार के संस्थापक श्री अनिल जैन के प्रति भी महोत्सव समिति एवं संस्थान ने आभार प्रगट किया।

➢डॉ. अनुपम जैन का सामयिक वक्तव्य–

जैन समाज के नवोदित युवक डॉ. अनुपम जैन ने इस सम्मान को प्राप्त कर पूज्य गणिनी आर्यिका श्री तथा समस्त संघ के चरणों में नमन किया पुनः अपने संक्षिप्त वक्तव्य में उन्होंने कहा कि धर्म और समाज के प्रति मैंने आज तक जो कुछ भी अपना योगदान दिया है, वह सब पूज्य माताजी की ही देन है। आज से लगभग 15 वर्ष पूर्व मैंने इनके दर्शन किए, तब से ही मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ और इनकी प्रेरणा से अपने मुख्य विषय गणित के साथ थोड़ा-थोड़ा धार्मिक अध्ययन करने का भी लक्ष्य बनाया।

संस्थान के पदाधिकारियों ने मुझमें कुछ योग्यता देखकर यहाँ की अकादमिक एवं शैक्षणिक गतिविधियों के साथ मुझे जोड़ा, जिससे राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों के आयोजनों में मुझे सक्रिय रूप से भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ। मेरी हार्दिक भावना है कि पूज्य माताजी द्वारा निर्देशित साहित्यिक कार्यों तथा संस्थान की अकादमिक योजनाओं को खूब प्रगतिपथ पर अग्रसर कर अपने दायित्व का निर्वाह कर सकूँ।

आज के इस सम्मान के मंगल अवसर पर मैं त्रिलोक शोध संस्थान के प्रति आभार प्रगट करता हूँ तथा साधुजनों से इसी आशीर्वाद की आशा करता हूँ कि जीवन में आत्मविद्या को प्राप्त कर सच्चे ज्ञान का सार ग्रहण करूँ।

➢श्री णमोकार महामंत्र बैंक का उद्घाटन (एक अप्रत्याशित नूतन योजना)–

पैसों के लेन-देन वाले बैंक तो दुनिया में लाखों हैं किन्तु जिनेन्द्र भगवान

के नाम का लेन-देन करने वाले बैंक आज तक कहीं भी नहीं थे सो पूज्य माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप स्थल पर एक **''णमोकार महामंत्र बैंक''** की स्थापना 8 अक्टूबर 1995 शरदपूर्णिमा को हुई, जिसका उद्घाटन केन्द्रीय खाद्यमंत्री श्री अजित सिंह ने किया।

➢बैंक की योजना–

इस बैंक में श्रद्धालुभक्तों को णमोकार महामंत्र लेखन पुस्तिकाओं में लिखकर जमा करना होगा। इसके लिए विशेष प्रकार की कापियाँ श्री अमरचंद होमब्रेड-मेरठ के सौजन्य से प्रकाशित हुईं। 8 अक्टूबर को लेखन पुस्तिका का विमोचन श्री आनंद प्रकाश जैन (सौरम वाले)-दिल्ली ने किया। पुनः तत्काल ही बैंक कार्यालय से कापियों का वितरण प्रारंभ हो गया। महामंत्र लिखने के इच्छुक नर-नारियों ने दो घंटे में ही 1 हजार कापियाँ लेकर लेखन कार्य का शुभारंभ तीर्थक्षेत्र से ही कर दिया।

इन कापियों में बैंक के साथ मंत्र लेखन के समस्त नियम और उद्देश्य लिखे हैं तथा लेखकों को हीरक पदक, स्वर्ण पदक और रजत पदक से सम्मानित करने की योजना भी है। इन योजनाओं का लाभ प्रत्येक प्रान्त के नर-नारी आबाल-वृद्ध उठा रहे हैं। अन्य इच्छुकजन जम्बूद्वीप स्थल पर बने स्थाई बैंक से सम्पर्क करें।

➢नेताजी का दो महामहोत्सव में आने का सुखद संयोग–

सभा के मध्य स्वस्ति श्री पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर महाराज ने आज के संदर्भ में जम्बूद्वीप महामहोत्सव का वैशिष्ट्य बताते हुए कहा कि ''चौधरी अजित सिंह जी का यह परम सौभाग्य ही है, जो वे दुबारा आज पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त करने पधारे हैं। आज से पाँच वर्ष पूर्व सन् 1990 में भी जम्बूद्वीप के प्रथम महामहोत्सव में आप केन्द्रीय उद्योगमंत्री के रूप में पधारे थे और आज पुनः उसी महामहोत्सव में आना एक सुखद संयोग ही मानना पड़ेगा। भविष्य में भी वे जम्बूद्वीप स्थल पर पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद ग्रहण करें, यही उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरा शुभाशीर्वाद है।''

➢मुख्य अतिथि श्री अजित सिंह का भाषण–

पूज्यनीया माता ज्ञानमती जी, इस जम्बूद्वीप महोत्सव के लिए देश के कोने-कोने से आये हुए श्रद्धालुजन!

यह मेरे लिए अपार हर्ष का विषय है कि मैं जम्बूद्वीप के इस महामहोत्सव के शुभ अवसर पर आपसे बातचीत कर रहा हूँ। इससे पहले भी वर्ष 1990 में

इस महामहोत्सव में मैं आप लोगों के बीच आ चुका हूँ। मैं इस महामहोत्सव समिति के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने इतने बड़े पैमाने पर इस समारोह का आयोजन किया और मुझे आपसे दो शब्द कहने का मौका दिया। ऐतिहासिक नगरी हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप के नाम से जो विकास किया गया है, वह मुझे काफी लुभावना लगा। यहाँ के मंदिर, भवन, प्रतिमाएँ और पूरा क्षेत्र बहुत ही सुन्दर रूप से विकसित किया गया है। जम्बूद्वीप की चर्चा हमारे प्राचीन साहित्य में बार-बार मिलती है और इसका मतलब न केवल हमारे देश से बल्कि पूरी पृथ्वी से है। हस्तिनापुर हमारे देश का सर्वप्राचीन नगर है। यह नगर हमारे इतिहास, संस्कृति एवं धर्म से जुड़ा हुआ है।

भारत एक धर्मप्रधान देश रहा है लेकिन हमारे देश में धर्म का अर्थ किसी संकीर्ण विचार से नहीं है बल्कि हमेशा मानव धर्म या मानव कल्याण से रहा है। हमारे शास्त्रों में धर्म की चर्चा समाज को धारण करने वाली शक्ति के रूप में हुई है। **''धारयते इति धर्मः''** अर्थात् धर्म वह शक्ति है जो समाज को जोड़ती है, संगठित करती है व एक सूत्र में बांधती है। आज जबकि समाज में विघटन की शक्तियाँ सक्रिय हैं, सही अर्थों में धार्मिक भावना का विकास अति आवश्यक है और जैनधर्म जो मानवता व अहिंसा पर विशेष जोर देता है, सामाजिक एकता के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। जैन विचारधारा हमारे देश की बहुत पुरानी विचारधारा है। भगवान महावीर से पहले इसमें 23 तीर्थंकर हो चुके हैं। जैन मत भारतीय समाज में चल रहे जाति-पाति के भेदभाव के विरुद्ध रहा है। इसने महिलाओं को हमेशा से ही सम्मान दिया है। इसके अनुसार आदमी बड़ा व छोटा अपने कर्मों से होता है और छोटे से छोटा आदमी भी अच्छे कर्मों के बल पर अपने जीवन को सुधार सकता है। सम्यक् आचरण को जैनदर्शन में मूल सिद्धान्त के रूप में माना गया है।

जैनमत में मोक्ष को सांसारिक और आध्यात्मिक ऊँचाई हासिल करने के लिए बाहरी दिखावे और कर्मकाण्ड की जगह पर आचरण की सभ्यता पर बल दिया है। भगवान महावीर ने व्यक्तिगत, सामाजिक और आध्यात्मिक उद्धार के लिए अपनी आत्मा को, अपने मन को, शुद्ध, सरल बनाने पर बल दिया है। जैनधर्म में आध्यात्मिक उत्थान या मोक्ष प्राप्ति के लिए सम्यग्दर्शन अर्थात् सच्चे विश्वास, सम्यग्ज्ञान यानि सच्चा ज्ञान, सम्यक्चारित्र यानी सही आचरण को कहा है। इसे जैनधर्म में त्रिरत्न कहा जाता है। सम्यक् आचरण के लिए जैनमत में पाँच बुनियादी सिद्धान्त यानी पाँच महाव्रत हैं। जाहिर है कि इन

पाँच महाव्रतों का जहाँ तक हो सके, अधिक से अधिक पालन किया जाये, तो हमारे समाज में पारस्परिक स्नेह व सामंजस्य की भावना पनप सकती है। शांति व अहिंसा का जो संदेश भगवान महावीर ने दिया, उसकी जरूरत आज हमें पहले से अधिक है जबकि हमारे चारों तरफ आज सैलाब दिखाई पड़ते हैं, कहीं मजहब को लेकर ,कहीं जातीय दंगों को लेकर।

जैनमत के अनुसार कण-कण में आत्मा का निवास माना है अर्थात् मनुष्यों के लिए ही नहीं, पेड़-पौधों के लिए भी हमारे दिल में अहिंसा की भावना होनी चाहिए। आज अनेक जंगल व पेड़-पौधे काटे जा रहे हैं, पक्षी व पशुओं की हत्या हो रही हैं, उससे हमारे माहौल में प्रदूषण फैल गया है, पर्यावरण में असंतुलन आ गया है। ऐसे में मानवता की भावना होना हमारे लिए बहुत जरूरी है और जैन विचार मानने वाले आप लोगों का इसमें सहयोग अच्छी भूमिका अदा कर सकता है। यहाँ हम यह पाते हैं कि प्राचीनकाल से इस देश में बहुत सी विचारधाराओं ने, भ्रम ने जन्म लिया है तथा बहुत से गौण भी हो गये हैं। जैनधर्म हजारों साल बाद भी हमारे बीच में एक जीवित शक्ति है। इस देश के साहित्य, कला, संस्कृति, व्यापार व उद्योग को सुदृढ़ बनाने में जैनों का बड़ा योगदान है। पुराने समय से ही जैनियों में आम लोगों की भाषा है, जिसने कि पहले प्राकृत, अर्धमागधी, शौरसेनी आदि में अपने विचारों को प्रकट किया और आजकल हिन्दी, मराठी, गुजराती आदि सभी भाषाएँ जिस स्वरूप में हैं, उनमें जैन सम्प्रदाय का बड़ा योगदान है। कला के क्षेत्रों में बहुत से स्तूप, मूर्तियाँ खासकर श्रवणबेलगोला में गोम्मटेश्वर की मूर्ति, गुफा स्थापत्य जैनियों की देन है। व्यापार व उद्योग के क्षेत्र में जैनियों के योगदान को कौन नहीं जानता और इसीलिए जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में रेल लाईन बिछाने की बात जो हो रही थी, मेरा मानना है कि अगर उसमें आप जुट जायें तो सरकार की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। मैं फिर से आप लोगों का आभार प्रकट करता हूँ, हस्तिनापुर के विकास के लिए आप लोगों ने जो प्रयास किये है, उसकी सराहना करता हूँ और आशा करता हूँ कि यह जगह बड़े तीर्थ स्थल और पर्यटन स्थल के रूप में उभर कर आए और इसके लिए आप हमारा जो भी सहयोग चाहेंगे, उसके लिए हम तैयार हैं। पूज्य माताजी के चरणों में नमन, आप सबको धन्यवाद!

➢भगवान ऋषभदेव और अयोध्या तो इनके अन्तस में व्याप्त है–

मैंने अपने विनयांजलि वक्तव्य में कहा कि आकाश से ऊँचे आदर्श, पर्वत

से कठोर तप और नदी सरिताओं से लम्बी कीर्तिपताका से युक्त व्यक्तित्व का नाम है – आर्यिका ज्ञानमती। इनके जीवन का एक-एक क्षण स्वर्णाक्षरों में अंकित होने वाला ऐतिहासिक पन्ना है। एक अंग्रेजी लेखक की ये पंक्तियाँ इनके जीवन पर पूर्णरूप से घटित होती हैं –

Count your night by stars, not shadows.
Count your life with smiles, not tears.
And with joy and every birthday.
Count your age by friends, not years.

अर्थात् इन्होंने अपने जीवन को मात्र वर्षों से नहीं, अलौकिक कार्यों से महान बनाने में एक मिशाल कायम की है।

➢मंत्री जी ने चरण प्रक्षालन का सौभाग्य लिया –

पारम्परिक व्यवस्थानुसार पूज्य माताजी के चरण प्रक्षाल-पिच्छिका परिवर्तन आदि की बोलियाँ प्रारंभ हुईं, उस समय माननीय श्री अजित सिंह जी की उत्कण्ठा को देखकर पूज्य माताजी के चरण प्रक्षालन करने का सुअवसर उन्हें प्रदान किया गया। माननीय मंत्री जी दूध और जल से पूज्य माताजी के पावन चरण धोकर हर्षित हुए एवं उस चरणोदक को मस्तक पर लगाया।

इसी क्रम में पिच्छिका प्रदान करने का सौभाग्य श्री कमल कुमार जैन-मौसम विहार-दिल्ली को प्राप्त हुआ। उन्होंने सपरिवार मंच पर आकर पूज्य माताजी के करकमलों में नवीन पिच्छी प्रदान कर उनकी पुरानी पिच्छी प्राप्त की। जैन साधु के संयम का उपकरण पिच्छी है, यह जिन्हें प्राप्त होती है, उनके घर में सदैव धन-धान्य की वृद्धि होती है।

इसी संदर्भ में एक प्रत्यक्ष घटित अतिशय याद आ रहा है कि 10-12 वर्ष पूर्व एक सज्जन ने स्वप्न देखा कि ज्ञानमती माताजी की पिच्छी में से कीमती रत्न झड़ रहे हैं फिर उन्होंने स्वप्न के अनुसार एक दिन हस्तिनापुर आकर माताजी से उनके हाथ की पुरानी पिच्छी लेकर नई प्रदान कर गए पुनः उनके साथ वास्तव में चमत्कार हो गया कि पिच्छी घर में पहुँचते ही एक नये पेट्रोलपम्प को खरीदा और कुछ ही दिनों में वे कई पेट्रोल पम्प के मालिक बन गए। इस घटना के पश्चात् वे आज भी कहते हैं कि माताजी की पिच्छी से तो सचमुच रतन ही बरसते हैं। दरअसल जिस पिच्छिका से साधुजन सदा समस्त जीवों की रक्षा करते हैं, उसे हाथ में लेकर सामायिक-प्रतिक्रमण तथा न जाने कितने मंत्रों का जाप्य आदि करते हैं, उसमें ऐसे चमत्कार प्रगट हो जाना कोई

अतिशयोक्ति की बात नहीं है।

जन्मजयंती के इस पावन प्रसंग पर शौच का उपकरण 'कमण्डलु' प्रदान किया श्री कमलचंद जैन, खारीबावली-दिल्ली ने। ज्ञान का उपकरण 'शास्त्र' भेंट करने के लिए श्री राजकुमार जैन 'वीरा बिल्डर्स'-दिल्ली वाले पधारे और कमलाकार आरती में सजे 62 दीपकों से आरती उतारी – श्री मनोज कुमार जैन (मेरठ) सपरिवार ने, तब पूज्य ज्ञानमती माताजी की जयजयकारों से वातावरण गूंज उठा।

➢सम्पूर्ण समारोह की आधारशिला गणिनी आर्यिका श्री का देशवासियों के लिए पावन संदेश –

"ॐ नमः सिद्धेभ्यः" हमारे विद्वान् और भक्तगण शायद यह भूल जाते हैं कि आज मेरा 62वाँ जन्मदिन नहीं, बल्कि 43वाँ संयमदिवस है। 62 वर्ष पूर्व तो शरदपूर्णिमा को मेरे इस नश्वर शरीर का जन्म हुआ था। खैर! संयम धारण करने वाले संयमियों का सम्मान करना हमारे देश की परम्परा रही है और इसके लिए आचार्यों ने कहा भी है – **"देवा वि तस्स पणमंति, जस्स धम्मे सया मणो"** अर्थात् जिसके हृदय में धर्म विद्यमान है, देवता भी उसको नमस्कार करते हैं। अतः आप लोग आज मेरी नहीं, धर्म की जयंती मना रहे हैं।

जैन रामायण में एक बहुत सुन्दर बात आई कि **"जिस देश का आश्रय लेकर साधु तपस्या करते हैं, उस देश के राजा को साधु की तपस्या का छठा भाग पुण्य स्वयं प्राप्त हो जाता है।"** इस आधार से हम लोगों की तपस्या का पुण्य हमारे राजनेता भी ले रहे हैं, इससे पुण्य का खजाना कम न होकर बढ़ता ही रहता है। अभी मंत्री अजित सिंह जी रत्नत्रय की सुन्दर व्याख्या कर रहे थे, सो इसी रत्नत्रय को धारण करके वे अपनी आत्मा को अजित पद की प्राप्ति करावें, यही उनके लिए मेरा मंगल आशीर्वाद है।

➢जाति संगठन पर बल –

आज के इस प्रसंग में मुझे एक बात और कहनी है कि अभी कुछ दिनों से चर्चा सामने आई है कि सरकार ने जैनियों को अल्पसंख्यक की श्रेणी से अलग कर दिया है। यह एक विषय बन गया है कि सरकार में जैनियों की इतनी उपेक्षा क्यों है? इन सबका मूल कारण है हमारी संगठन शक्ति की कमी। हम सबको संगठित होकर कदम उठाना चाहिए क्योंकि जब अखिल भारतीय स्तर की संस्थाएँ इस दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठा रही हैं, तब जनता की आवाज ही सरकार तक जानी चाहिए और अजित सिंह जैसे नेताओं के

माध्यम से अपनी बात सरकार को पहुँचाएं तथा यदि इसमें भी सफलता न मिले तो आन्दोलन करें, क्योंकि जैनी अहिंसक हैं किन्तु कायर नहीं हैं।

इसके साथ एक उपाय मेरी समझ में और आया है जिसे मैं कई सभाओं में कह चुकी हूँ कि जैनधर्म एक प्राकृतिक धर्म है न कि जाति विशेष है। जैनधर्म पालन करने वालों की 84 जातियाँ पुरानी फूलमाल पच्चीसी में पढ़ी जाती थीं। अग्रवाल, खण्डेलवाल, पल्लीवाल, बघेरवाल, पोरवाड, लमेचू, परवार, गोलालारे आदि सभी जातियों का अपना अस्तित्व है, ये सभी किसी न किसी रूप में अनादि हैं। काल के अनुसार केवल उनके नामों में कुछ परिवर्तन हो जाता है। जैसे आम, गुलाब, गेहूँ, चावल आदि में अनेक जातियाँ होती हैं, वैसे ही 84 जातियाँ जैनियों की मानी गई हैं। इनमें से कई जातियों के सशक्त संगठन बने हुए हैं किन्तु अभी कई जातियाँ अपने संगठन में पीछे हैं सो प्रत्येक जाति को अपने-अपने संयोजक आदि बनाकर जातीय संगठन मजबूत करना चाहिए तथा राष्ट्रीय जनगणना में सभी को जैन अवश्य लिखना चाहिए किन्तु लोग अपने गोत्र कासलीवाल, सेठी, छाबड़ा, पाण्ड्या आदि को ही प्रधान कर देते हैं, इससे उनके नाम में जैनत्व नहीं झलकता है अतः यदि गोत्र प्रमुख करें तो उसके बाद जैन शब्द जरूर लिखें और अपना संगठित स्वरूप सरकार के समक्ष रखकर अल्पसंख्यक की श्रेणी प्राप्त करें।

जम्बूद्वीप महामहोत्सव में यहाँ पर अनेक धार्मिक और शैक्षणिक कार्यक्रम सम्पन्न हुए हैं। उन सबकी पुण्यवर्गणाएँ सारे विश्व में फैलकर सुख-शांति-समृद्धि और क्षेम को स्थापित करेंगी। इसके साथ ही समारोह को सम्पन्न करने वाले, उसमें भाग लेने वाले, अनुमोदना देने वाले सभी लोग असीम पुण्य के भागी बनें, सबका कल्याण हो, यही मेरा आप सबके लिए मंगल आशीर्वाद है।

इस प्रकार शरद पूर्णिमा की अमृतमयी बेला में देश की जनता ने पूनों के चाँदस्वरूप पूज्य चारित्रचन्द्रिका गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के दीर्घ एवं स्वस्थ जीवन की मंगल कामना की तथा पूज्यश्री का अमृतमयी आशीर्वाद ग्रहण किया पुनः देर रात तक आरती-भजन-नृत्य-संगीत का कार्यक्रम चलता रहा, भक्तगण अपनी भक्ति प्रदर्शित करते रहे और माताजी नभ के चन्द्रमा की साक्षी में अपना ज्ञान परिमार्जित करती रहीं। देखते ही देखते घड़ी में ज्यों ही 9 बजकर 15 मिनट हुए, तुरंत असली जन्म की सूचना देते हुए अवध से आए नर-नारियों ने घंटे, थाल और ढोल-मंजीरे बजाने शुरू कर दिए। महिलाओं ने बधाई गीत गाए, बालिकाओं ने मंगल गान गाए और पुरुषों ने अपने विनयभाव

प्रस्तुत किए। इस प्रकार पूर्ण चाँदनी को फैलाकर पूनों के चाँद ने अपनी सुनहरी आयु का नया अध्याय खोल दिया।

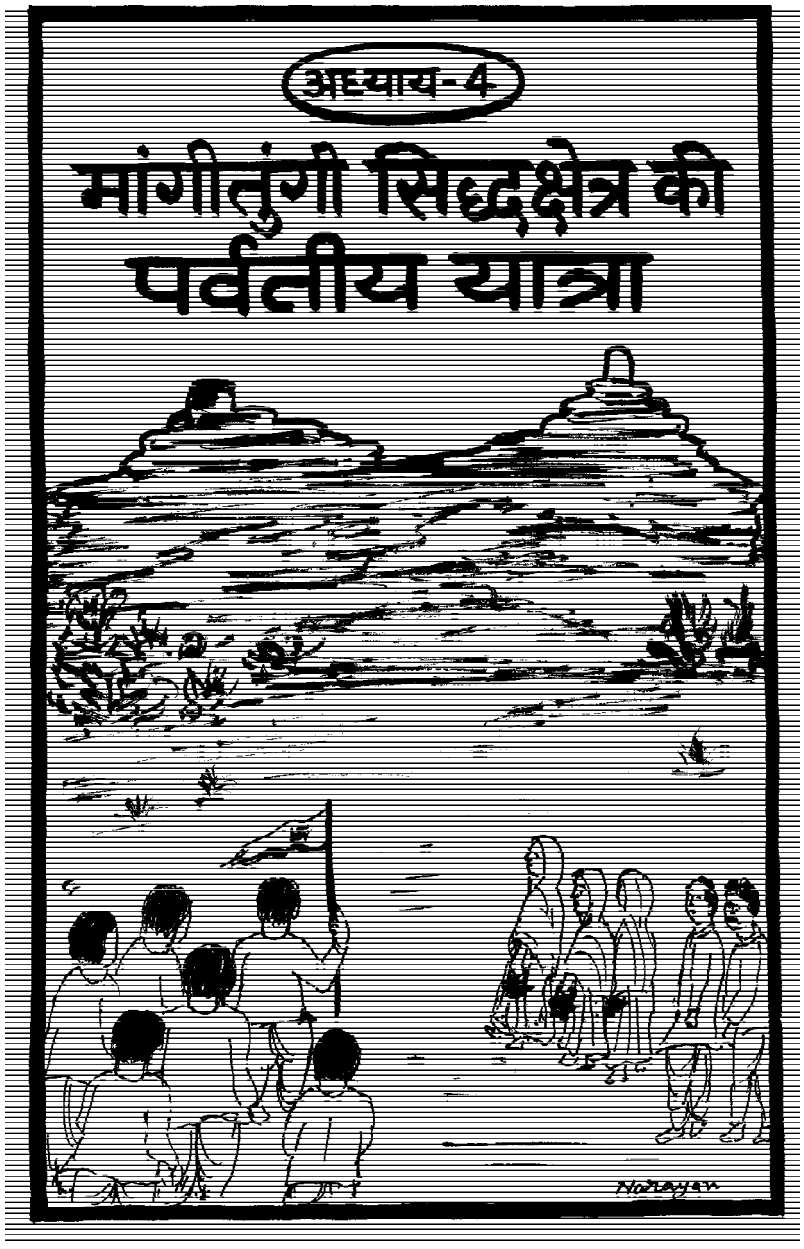
इस प्रकार विभिन्न कार्यक्रमों के मध्य वर्षायोग के 4 महीने कब व्यतीत हो गए, पता ही नहीं चला। आखिरकार कार्तिक कृ. अमावस्या को दीपावली पर्व के साथ ही चातुर्मास समापन की घड़ी भी आ गई। कमल मंदिर में भगवान महावीर निर्वाणोत्सव के अवसर पर आयोजित निर्वाणलाडू कार्यक्रम के साथ ही पूज्य माताजी ने शास्त्रोक्त विधि द्वारा चातुर्मास समापन की घोषणा कर दी।

आचार्यश्री कुन्दकुन्द स्वामी चतुर्विध संघ के नायक थे–

कुछ लोग कह सकते हैं कि कुंदकुंददेव अकेले ही आचार्य थे। यह बात भी निराधार है, पहले तो वे संघ के नायक महान् आचार्य गिरनार पर्वत पर संघ सहित ही पहुँचे थे। दूसरी बात गुर्वावली में श्री गुप्तिगुप्त भद्रबाहु आदि से लेकर 102 आचार्यों की पट्टावली दी है। उसमें इन्हें पाँचवें पट्ट पर लिया है। यथा– 1. श्री गुप्तिगुप्त 2. भद्रबाहु 3. माघनन्दी 4. जिनचन्द्र 5. कुन्दकुन्द 6. उमास्वामी आदि। इससे स्पष्ट है कि जिनचन्द्र आचार्य ने इन्हें अपना पट्ट दिया, पश्चात् इन्होंने उमास्वामी को अपने पट्ट का आचार्य बनाया। यही बात नंदिसंघ की पट्टावली के आचार्यों की नामावली में है। यथा-4. जिनचंद्र, 5. कुन्दकुन्दाचार्य 6. उमास्वामी।' इन उदाहरणों से सर्वथा स्पष्ट है कि ये महान् संघ के आचार्य थे। दूसरी बात यह भी है कि इन्होंने स्वयं अपने मूलाचार में 'माभूद में सत्तु एगागी'-मेरा शत्रु भी एकाकी न रहे, ऐसा कहकर पंचम काल में एकाकी रहने का मुनियों के लिए निषेध किया है। इनके आदर्श जीवन, उपदेश व आदेश से आज के आत्म हितैषियों को अपना श्रद्धान व जीवन उज्ज्वल बनाना चाहिए।

अध्याय-4

मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की पर्वतीय यात्रा



अध्याय-4

मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की पर्वतीय यात्रा

चातुर्मास समाप्त हुए अभी लगभग एक माह ही व्यतीत हुआ था कि पूज्य माताजी ने एक दिन मानसिक चिन्तन करके अनायास ही 25 नवम्बर 1995 को यह निर्णय ले लिया कि मुझे अपने शरीर-स्वास्थ्य को भी न देखकर भगवान राम की निर्वाणभूमि एवं बीसवीं सदी के प्रथम पट्टाधीश श्री शांतिसागर जी महाराज की अक्षुण्ण परम्परा के पट्टाचार्य स्व. 108 श्री श्रेयांससागर जी महाराज की कर्मभूमि मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र के लिए विहार अवश्य करना है।

चूँकि कई वर्षों से मांगीतुंगी तीर्थ पर विराजमान पूज्य आर्यिका श्री श्रेयांसमती माताजी के निवेदन भरे पत्र आ रहे थे तथा मांगीतुंगी क्षेत्र ट्रस्ट मंडल का भी अतीव आग्रह था कि पूज्य माताजी एक बार मांगीतुंगी पधारकर यहाँ की वर्षों से अवरुद्ध पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न करा दें अतः पूज्य माताजी ने आखिरकार उनके निवेदन को स्वीकार कर ही लिया।

पर्वत से नदियों के निकलने की अनादि परम्परा है किन्तु नदी कभी पर्वत को जन्म देती हो ऐसा सुनने, देखने अथवा पढ़ने में नहीं आया। इसी अदृष्टपूर्व इतिहास का परिचय कराती है गणिनी शिरोमणि आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की हस्तिनापुर से मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र तक की यह पर्वतीय यात्रा।

निर्णय के पश्चात् मात्र 2 दिन का अन्तराल देकर 27 नवम्बर 1995, मगशिर शु. षष्ठी को हस्तिनापुर जम्बूद्वीप में विराजमान अतिशयकारी सिद्ध प्रतिमाओं को नमन करके पूज्य माताजी ने संघ सहित मंगल विहार कर दिया। गंगा के तट से यह ज्ञान की गंगा जब बहती हुई पर्वत की वन्दना हेतु चल पड़ी, तो मार्ग में अनेक पर्वतीय कार्य होने लगे।

➢चुनाव की विजयश्री से प्रारंभ हुआ विहार का प्रथम दौर–

आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी द्वारा रचित ईर्यापथ शुद्धि का एक श्लोक है–

श्रीमुखालोकनादेव,श्रीमुखालोकनं भवेत्।
आलोकन विहीनस्य, तत्सुखावाप्तयः कुतः।।

अर्थात् अन्तरंग और बहिरंग लक्ष्मी से युक्त श्री जिनेन्द्र भगवान के मुख का अवलोकन करने वाले मनुष्य को लक्ष्मी–धन की प्राप्ति होती है। इससे विपरीत भगवान का दर्शन नहीं करने वाले को उस लक्ष्मी सुख की प्राप्ति कैसे

हो सकती है? यह जिनेन्द्र दर्शन की महत्ता को प्रगट करने वाला श्लोक है जिसका सारांश है कि व्यवहारिक और आत्मिक दोनों प्रकार की लक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए आर्हन्त्य लक्ष्मी को प्राप्त भगवान जिनेन्द्र की भक्ति करना आवश्यक है।

पूज्य गणिनी आर्यिकाशिरोमणि 105 श्री ज्ञानमती माताजी ने 27 नवम्बर 1995 को मध्यान्ह 3 बजे तीर्थ क्षेत्र परिसर से अपनी शिष्यमंडली के साथ जय जयकार के वातावरण में मांगीतुंगी का लक्ष्य लेकर मंगल विहार किया। आगे हस्तिनापुर सेन्ट्रल टाउन (जहाँ 15 हजार की जनसंख्या है) से कुछ पूर्व ही पोस्ट आफिस के मोड़ के पास मनोज कुमार जैन की मम्मी श्रीमती आदर्श जैन (ध.प. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन, हस्तिनापुर निवासी, मेरठ प्रवासी) संघ को अपने गृह चैत्यालय का दर्शन करने को निवेदन करने हेतु परिवार के साथ खड़ी थीं, उनके हाथों में ढेर सारे फूल थे।

वे प्रथम बार हस्तिनापुर टाउन एरिया के चुनाव में मेम्बरशिप के लिए भारतीय जनता पार्टी की ओर से खड़ी हुई थीं। पूज्य माताजी का आशीर्वाद पहले ही ग्रहण कर चुकी थीं, उस दिन हार-जीत का निर्णय मिलने वाला था अतः उनके संबंधीजन मवाना गए हुए थे।

संयोग की बात, पूज्य माताजी एवं हम लोग ज्यों ही उनके समीप तक पहुँचने वाले थे और पुष्पों से भरी उनकी अंजुली गुरुचरणों में न्यौछावर होने ही वाली थी, उसी समय किसी ने आकर उन्हें संदेश दिया कि **''आप चुनाव में विजयी हो गई हैं अतः बधाई स्वीकार करें।''** श्रीमती आदर्श जैन ने सर्वप्रथम गुरुचरणों में नमन किया और पुष्पांजलि बिखेरती हुई कहने लगीं कि **''माताजी का वरदहस्त ही मेरे लिए सबसे बड़ी सफलता का संबल है, मैं इससे ज्यादा और कुछ नहीं मानती।''**

उन्हें मंगल आशीर्वाद प्रदान करता हुआ गणिनी माताजी का संघ आगे बढ़ा, हमारा उस दिन का प्रथम रात्रिविश्राम **''मवाना''** नगर में होना था, वहाँ नगर प्रवेश करते ही पूर्व में आशीर्वादप्राप्त विजयी महिलाएँ पूज्य मातुश्री के दर्शन करने आ गईं, माताजी ने उन्हें पुनः अहिंसा एवं सदाचारपूर्वक समाज संचालन का शुभाशीष प्रदान किया।

उसके पश्चात् हम लोग 2 दिन बाद **''मेरठ''** शहर में पहुँचे, वहाँ भी माताजी से पूर्व परिचित विजयी नगरप्रमुख आशीर्वाद लेने आए और शाकाहारी होने तथा न्यायपूर्वक जनता का कार्य करने हेतु संकल्प लिया। इसी प्रकार

मोदीनगर, गाजियाबाद आदि नगरों में भी विजयश्री प्राप्त करने वालों के समाचार मिले, तब माताजी ने सभी को प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से आशीर्वाद प्रदान किया। जनता ने उनकी इस उदारता पर कोटि-कोटि वन्दन करके अपने को धन्य माना और इस विजय कथानक के साथ संघ का प्रभावनापूर्ण मंगल विहार द्रुतगति से प्रारंभ हुआ, तो शुभ शकुन के आधार पर सर्वत्र धर्म की, संघ की विजय ही विजय होती चली गई।

➢उत्तर वालों की दृष्टि में यह विदेश यात्रा थी–

जब पश्चिमी उत्तरप्रदेश वालों को ज्ञात हुआ कि ज्ञानमती माताजी उत्तर भारत को छोड़कर बहुत दूर जा रही हैं, तब अनेक भक्त चिन्तित हो उठे और माताजी को समझाने का भी प्रयास किया कि **''आपका स्वास्थ्य अब बहुत ज्यादा विहार के लायक नहीं है, आप इधर इलाके में ही विहार करके हम लोगों को ज्ञान लाभ प्रदान करें, आपके बिना जम्बूद्वीप की रौनक समाप्त हो जाती है.....इत्यादि।''**

जब विहार की चर्चा दैनिक अखबारों में आ गई, तब मेरठ निवासी श्री अमरचन्द जैन होमब्रेड की धर्मपत्नी सौ. श्रीमती कमलेश जैन ने आकर मुझसे कहा कि आज सवेरे मंदिर में चर्चा हो रही थी कि **''ज्ञानमती माताजी विदेश जा रही हैं।''** वे पुनः मुझसे पूछने लगीं कि **''क्या दिगम्बर जैन साधु-साध्वी विदेश जा सकते हैं?''** मैं हँसने लगी और फिर विचार आया कि **''देखो! हमारी जनता कितनी भोली, अन्जान और ममत्व परिणामों से परिपूर्ण है कि वह माताजी को अपने से दूर जाती देखकर मोह को संवृत नहीं कर पाती है, तभी उनके द्वारा किये जाने वाले प्रदेश परिवर्तन को देश का ही परिवर्तन मानकर इसे विदेश यात्रा समझने लगी है।''**

पुनः मैंने कमलेश जी को बताया कि दिगम्बर जैन मुनि एवं आर्यिकाओं को चूँकि जीवनभर पदविहार का नियम होता है, हवाई जहाज, रेल, मोटर आदि समस्त वाहन पर बैठने के लिए पूर्ण त्यागी होते हैं अतः वे विदेश जा ही नहीं सकते हैं। आज तक कोई भी मुनि-आर्यिकाओं के विदेश यात्रा के कोई उदाहरण भी नहीं हैं अतः उन लोगों के लिए ऐसा सोचना भी दोषास्पद है। हाँ, इन साधुओं से अतिरिक्त भट्टारकगण, ब्रह्मचारिणी बहनें एवं कुछ जैन विद्वान् विदेशों में जाकर अवश्य यथायोग्य धर्मप्रभावना करते हैं।

वैसे इस यात्रा के विषय में मैंने यह जरूर अनुभव किया कि हर स्त्री-पुरुष पूज्य ज्ञानमती माताजी को अत्यन्त स्नेहपूर्ण नजरों से देखकर नमन

करते और यह कहने को बाध्य हो जाते कि **''माताजी ने बहुत लम्बी यात्रा सोच ली है, भगवान इनका स्वास्थ्य ठीक रखे और पूरा संघ कुशलतापूर्वक शीघ्र मांगीतुंगी से वापस उत्तर भारत में आवे, हमें इनके पुनः दर्शन जल्दी ही प्राप्त हों, यही भावना है।''**

दिल्ली में तो कुछ पुरानी परिचित महिलाएँ सिसक-सिसक कर रोती हुई आपस में कह रही थीं कि हमारी माताजी हमसे दूर जा रही हैं। पता नहीं, मेरे जीवन में इनका पुनः दर्शन होगा या नहीं। मैंने उन्हें बहुत धैर्य बंधाया कि आप लोग अपना दिल इतना छोटा न करें किन्तु वे तो अपनी वृद्धावस्था, रुग्णता तथा गुरुवियोग के कारण दुःख का अनुभव कर रही थीं। पूज्य माताजी ने उन सबको बड़े प्रेम से पुण्यतीर्थ की वंदना का महत्त्व बताकर शांत किया तथा सबके लिए खूब-खूब आशीर्वाद देते हुए महाराष्ट्र से शीघ्र वापस आने का आश्वासन दिया।

➢मांगीतुंगी का नाम भी लोग ठीक से नहीं जानते थे–

उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान आदि प्रान्तों में जब हम लोगों का भ्रमण हुआ, तब देखा कि कोई कहता–**माताजी मांगातुंगा जा रही हैं, कोई मानतुंगगिरि कहते, कोई मांगेतुंगे** इत्यादि, उन्हें मांगीतुंगी का ठीक से नाम तक नहीं मालूम था। यह स्थिति देखकर जब हम लोग उस सिद्धक्षेत्र के महत्व पर प्रकाश डालते, तब जनता कहने लगती थी कि अब आपके निमित्त से हमारे दर्शन भी हो जायेंगे। इस प्रकार हजारों नर-नारियों को जीवन में पहली बार मांगीतुंगी के दर्शनों का सौभाग्य पूज्य ज्ञानमती माताजी के वहाँ पहुँचने पर प्राप्त हुआ।

शायद इसी स्थिति से अवगत पूज्य आचार्य श्री विद्यानंद महाराज ने दिल्ली में कहा था कि **''अब मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की प्रसिद्धि विश्वव्यापी होने वाली है क्योंकि ज्ञानमती माताजी जैसी कर्मठ साध्वी के कदम उस ओर बढ़ गए हैं।** उन्होंने इस यात्रा के प्रति मंगल कामना करते हुए माताजी के ''कुन्दकुन्द भारती'' से विहार के समय कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र जी को एक मंगल कलश प्रदान किया था।

➢समयानुसार शब्दों की खोज–

दिल्ली प्रवास की अंतिम श्रृंखला में दिनाँक 17 दिसम्बर 1995 को आचार्य श्री विद्यानंद महाराज एवं गणिनी आर्यिका संघ का मिलन कुन्दकुन्द भारती में हुआ, जो परम वात्सल्य अंग के प्रतीक रूप में जैन समाज के लिए एक आदर्श

बना। उस समय दोनों ज्ञानियों में तमाम तत्त्वचर्चा एवं विचारों के आदान-प्रदान हुए। महाराज श्री ने अमरकोष की एक पंक्ति लिखकर माताजी के कमरे में भिजवाई, जो उनकी गुणग्राहकता एवं सामयिक शब्दान्वेषण की ही विशेषता थी। पंक्ति निम्न प्रकार से है–

''स्यादाचार्याऽपि च स्वतः'' (अमरकोश, 2/6/14)

इसका अर्थ है कि जो स्वतः ही शब्दों की व्याख्या करने वाली नारी है वह **''आचार्या''** संज्ञक है।

इसी बात को उन्होंने प्रवचन में भी कहकर ज्ञानमती माताजी को **'आचार्या'** संज्ञा से सम्बोधित किया था। दिगम्बर जैन परम्परा में आर्यिकाओं के लिए यद्यपि इस पदवी की परम्परा नहीं है, उन्हें **'गणिनी'** के रूप में ही सर्वोच्च पदवी से अलंकृत किया है, फिर भी ज्ञानी की कीमत ज्ञानी पुरुष ही कर सकते हैं, यह बात एक सूक्तिश्लोक भी बताता है–

विद्वान् एव विजानाति, विद्वज्जन परिश्रमम्।
न हि वन्ध्या विजानाति, पुत्रप्रसववेदनाम्।।

अर्थात् विद्वान ही विद्वानों का मूल्यांकन करते हैं।

➢संघपति की नम्रता और त्याग का अद्वितीय उदाहरण–

11 दिसम्बर 1995 को दरियागंज-नई दिल्ली के बाल आश्रम प्रांगण में दिल्ली पंचायत के द्वारा पूज्य माताजी की स्वागत सभा आयोजित की गई थी। उस सभा में जैन समाज के शीर्ष नेता साहू अशोक कुमार जैन (अब स्वर्गीय) ने संघ को मांगीतुंगी तक पहुँचाने की जिम्मेदारी लेने वाले लाला श्री महावीर प्रसाद जैन बंगाली स्वीट सेंटर-साउथ एक्स., नई दिल्ली का पगड़ी बांधकर स्वागत किया और वहीं से उन्हें **''संघपति''** की उपाधि दी गई।

➢स्वागत के पश्चात् महावीर प्रसाद ने अपने संक्षिप्त उद्‌बोधन में कहा–

''मैं तो संघ की सेवा करने वाला सामान्य श्रावक हूँ मुझे संघपति मत कहिए। आज के मौके पर मैं पूज्य माताजी से एक मांग करना चाहता हूँ। जैसे भगवान राम को नदी पार करवाने के पश्चात् मल्लाह ने उनसे कहा था कि ''भगवन्! जिस प्रकार मैंने आपको नदी पार कराई है, उसी प्रकार आप भी मुझे इस संसाररूपी नदी से पार लगा देना, इसके अतिरिक्त मैं आपसे और कोई कीमत नहीं चाहता हूँ।'' इसी प्रकार **पूज्य माताजी! मैं तो आपको मांगीतुंगी की यात्रा कराऊँगा ही, लेकिन मेरी भी आपसे यह प्रार्थना है कि आप मुझे सिद्धशिला की यात्रा अवश्य करा देना।''**

इस यात्रा के प्रारंभ होते ही महावीर प्रसाद जी ने मांगीतुंगी पहुँचने एवं पंचकल्याणक होने तक शक्कर का त्याग कर दिया, जो अत्यन्त आग्रह के पश्चात् उन्होंने 23 मई 1996 को पूर्ण किया। यह उनकी नम्रता एवं त्याग का ही उदाहरण है। दिल्ली जैसी आधुनिक नगरी में रहते हुए भी यह दम्पत्ति वास्तव में आदर्श गुरुभक्त हैं। इनकी धर्मपत्नी श्रीमती कुसुमलता जी व्रत-उपवास, आहारदान, वैयावृत्ति आदि करने में रानी चेलना का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इन्हीं के संस्कारों से संस्कारित पूरा परिवार अत्यन्त धर्मनिष्ठ है।

➢ददाति यत्तु यस्यास्ति, सुप्रसिद्धमिदं वचः–

आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी की उक्त नीति के अनुसार यह सत्य है कि **''जिसके पास जो वस्तु होती है, वह वही दे सकता है''** अर्थात् सन्त-साधु ज्ञान तथा चारित्र की प्रतिमूर्ति होते हैं अतः वे सबको अपने उपदेशों के माध्यम से ज्ञान प्रदान करते हैं, इसी प्रकार श्रेष्ठी जनों के पास धन होता है अतः वे जिनमंदिर, मूर्ति आदि का निर्माण, गुरुओं के विहार में आर्थिक योगदान आदि देकर अपने द्रव्य का सदुपयोग करते हैं।

यूँ तो संघपति ने संघ संचालन का पूर्णभार वहन करने का संकल्प लिया ही था, फिर भी खारीबावली दिल्ली के द्वितीय श्रेष्ठी लाला प्रेमचंद प्रदीप कुमार जैन ने भी अपनी उदारता का परिचय देते हुए संघस्थ कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी के एक इशारे पर मंगल विहार के मार्ग का सर्वेक्षण करने हेतु नई ''टाटा सूमो'' गाड़ी उन्हें प्रदान की। इसके अतिरिक्त भी वे सदा संघ की सेवा हेतु हाथ जोड़कर निवेदन करते कि मेरे योग्य सेवा मुझे अवश्य बताइये। यह सब उनके पुण्य का ही प्रभाव है कि वे अगले जन्म के लिए अपना रिजर्व फण्ड तैयार कर रहे हैं।

दिल्ली से विहार करके पूज्य माताजी का संघ सहित मांगीतुंगी में मंगल पदार्पण पूरे पाँच माह के पश्चात् 27 अप्रैल 1996 को हुआ। इस मध्य उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र इन छह प्रान्तों में विभिन्न नवनिर्माण योजनाएँ एवं धर्म-प्रभावना के अनेक विशाल कार्य सम्पन्न हुए, जो समय-समय पर सम्यग्ज्ञान तथा अन्य अखबारों के माध्यम से आपको ज्ञात हुए हैं। यहाँ संक्षेप में मैं उन स्थानों के नाम प्रस्तुत करके पाठकों को उनसे परिचित कराना चाहती हूँ, जहाँ (अयोध्या एवं मांगीतुंगी के मध्य) पूज्य माताजी ने नवनिर्माण कराने की प्रेरणा प्रदान की–

सन् 1993-94 में–

	कहाँ	क्या
1.	अहिच्छत्र तीर्थ (उ.प्र.)	तीस चौबीसी मंदिर (11 शिखर का)
2.	अयोध्या (उ.प्र.)	समवसरण एवं तीन चौबीसी मंदिर
3.	त्रिलोकपुर (उ.प्र.)	पारिजात चैत्यवृक्ष
4.	टिकैतनगर (उ.प्र.)	ह्रीँ एवं बीस तीर्थंकर प्रतिमा
5.	सिधौली (उ.प्र.)	मंदिर विस्तारीकरण का शिलान्यास
6.	तहसील फतेहपुर (उ.प्र.)	विद्यालय शिलान्यास
7.	सीतापुर (उ.प्र.)	स्वाध्याय भवन
8.	दरियाबाद (उ.प्र.)	श्री ऋषभदेव उद्यान

सन् 1995-96 में–

9.	मेरठ (कमलानगर)	बीस तीर्थंकर एवं चौबीस तीर्थंकर कमल मंदिर
10.	प्रीतविहार-दिल्ली (अनिल जैन की कोठी पर)	ऋषभदेव कमल मंदिर
11.	चमत्कार जी सवाई माधोपुर (राज.)	कैलाशपर्वत
12.	श्री शान्तिवीर नगर, महावीर जी (राज.)	मन्दार कल्पवृक्ष
13.	केशवरायपाटन (राज.)	पंचपहाड़ी एवं दिव्यध्वनि स्तंभ
14.	कोटा (रजा.)	तीन लोक रचना
15.	पिड़ावा (राज.)	श्री पार्श्वनाथ समवसरण रचना
16.	जयसिंहपुर (उज्जैन) म.प्र.	महावीर की तपोभूमि एवं आ. शांतिसागर मांगलिक भवन
17.	लक्ष्मीनगर, उज्जैन	आ. शांतिसागर मांगलिक भवन
18.	गोम्मटगिरी, इंदौर (म.प्र.)	ॐकार गिरि रचना
19.	सुदामानगर, इंदौर	तीस चौबीसी जिन प्रतिमा, आचार्य श्री शांतिसागर जी एवं वीरसागर जी महाराज के चरण

20.	सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र	तेरहद्वीप रचना
21.	सनावद	णमोकार धाम
22.	पावागिरि-ऊन सिद्धक्षेत्र	सुवर्णभद्र आदि चार मुनियों के चरण तथा आ. शांतिसागर-वीरसागर जी के चरण
23.	सेंधवा	गृहचैत्यालय
24.	शांतिनगर-धूलिया (महा.)	दि. जैन छात्रावास का शिलान्यास
25.	मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र	सहस्रकूट कमल मंदिर, नवग्रह चरण एवं सीता माता के चरण (पर्वत पर)
26.	चाँदवड़ (महा.)	नवग्रह के 9 चरण (नवग्रह शांति मंदिर हेतु)

सन् 1996-97 में–

27.	पावागढ़ (गुजरात)	ध्यान मंदिर में ह्रीँ की प्रतिमा, उद्यान में सीता-लवकुश का इतिहास
28.	ईडर (गुजरात)	पहाड़ी पर ह्रीँ की प्रतिमा, पहाड़ी को ऋषभदेवगिरि नामकरण
29.	तारंगा जी सिद्धक्षेत्र (गुज.)	भगवान ऋषभदेव की ग्रेनाइट प्रतिमा, आ. शांतिसागर जी की प्रतिमा (गुफा में)
30.	डेरोल (गुज.)	बीस तीर्थंकर के चरण, आ. शांतिसागर, वीरसागर महाराज के चरण
31.	खेरवाड़ा (राज.)	पहाड़ी पर कैलाशपर्वत का शिलान्यास
32.	ऋषभदेव केशरिया जी	पहाड़ी पर अयोध्या नगरी की रचना का शिलान्यास
33.	सलूम्बर (राज.)	प्रयाग रचना
34.	झाड़ोल (राज.)	ह्रीँ प्रतिमा स्थापना की प्रेरणा
35.	देवपुरा (राज.)	नवग्रहशांति मंदिर
36.	उदयपुर (राज.)	महावीर स्वामी का समवसरण (यंत्र स्थापन), ऋषभदेव प्रतिमा स्थापना
37.	अणिन्दा पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र (राज.)	ॐ और ह्रीँ की प्रतिमा स्थापना
38.	चित्तौड़ (राज.)	ह्रीँ की प्रतिमा
39.	जूनिया (टोंक-राज.)	ह्रीँ की प्रतिमा

40.	भीलवाड़ा (आर.के. कालोनी)	चैत्यवृक्ष
41.	केकड़ी (अजमेर-राज.)	सम्मेदशिखर रचना
42.	रेवाड़ी (हरियाणा)	कैलाशपर्वत की वेदी (मंदिर में)

इनमें से अनेक स्थलों पर संघपति लाला महावीर प्रसाद जैन-बंगाली स्वीट सेंटर एवं लाला प्रेमचंद प्रदीप कुमार जैन-खारीबावली दिल्ली ने लाखों रुपये की दानराशि घोषित करके कीर्तिमान स्थापित किया। इसी प्रकार से पूज्य माताजी के अन्य कई भक्तों ने समय-समय पर पहुँचकर कई योजनाओं में सहयोग प्रदान कर पुण्यलाभ प्राप्त किया।

यह तो मैंने नवनिर्माण की योजनाओं का संक्षिप्त उल्लेख किया है इसके अतिरिक्त कई नगरों में गृहचैत्यालय, अतिथिभवन, औषधालय आदि के निर्माण की भी प्रेरणा प्रदान की है, जिनमें से कई निर्माण तो पूर्ण हो चुके हैं तथा अनेक स्थानों पर यथायोग्य निर्माणकार्य द्रुतगति से चल रहा है।

➢मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र में 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव प्रतिमा निर्माण की प्रेरणा–

मांगीतुंगी पर्वत पर बैठकर एक दिन ध्यान करते हुए पूज्य माताजी को आभास हुआ कि यहाँ की किसी चट्टान में पूर्वमुखी भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा का अखण्ड पाषाण छिपा हुआ है, जिसका निर्माण होना चाहिए। पुनः वास्तुशास्त्री से जानकारी करने पर ज्ञात हुआ कि मांगी पर्वत के नीचे (सुधबुध-गुफा के ऊपर) वास्तव में 500 फुट की एक अखंड चट्टान कसौटी के अमूल्य पाषाण की है। यह सब जानकर सारी जनता का रोम-रोम पुलकित हो उठा एवं क्षेत्र के ट्रस्टी तथा श्री जयचंद जैन कासलीवाल (एम.एल.ए.) तथा डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल (अध्यक्ष- महाराष्ट्र तीर्थक्षेत्र कमेटी) ने पूज्य माताजी से उस प्रतिमा को साकार करवाने हेतु बारम्बार निवेदन किया। 27 अक्टूबर को इसकी घोषणा होते ही दिल्ली, महाराष्ट्र के अनेक दानियों ने लाखों रुपये की न्योछावर राशि लिखवा दी। उस प्रतिमा निर्माण का दुरूह कार्यभार मुख्यरूप से कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र जी, डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल जी एवं आमदार कासलीवाल जी को सौंपा गया, प्रगति कार्य निरन्तर चल रहा है। यह विशाल प्रतिमा विश्व की एक अनुपम कृति होगी, जो युगों-युगों तक दिगम्बरत्व का अलख जगाती रहेगी। इस कठिन निर्माणकार्य की निर्विघ्न सफलता हेतु पूज्य माताजी ने सभी को एक मंत्र जपने का आदेश दिया जो निम्न प्रकार है–

''ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवाय सर्वसिद्धिकराय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः''

आप सभी पाठकजन भी इस मंत्र की माला अवश्य फेरें ताकि पुण्यार्जन के साथ-साथ जिनप्रतिमा के निर्माण में भी आपका मानसिक सहयोग प्राप्त हो सके।

➢संक्रान्ति की प्रादेशिक प्रथा बड़ी विचित्र लगी–

14 जनवरी 1996 को हम लोग राजस्थान के बाँदीकुई नगर में थे, वहाँ चौके में पूज्य माताजी को अष्टमी के दिन बिल्कुल नीरस आहार करते देखकर लोगों ने कहा कि **''आज के दिन तो हमारे प्रान्त में गरीब-अमीर सभी के घरों में ''दाल-बाटी-चूरमा'' अवश्य खाया जाता है।** अतः माताजी को भी आज नीरस भोजन नहीं करना चाहिए। मैंने कहा कि यह तो प्रान्तीय परम्पराएँ हैं, उत्तरप्रदेश के अवध इलाके में आज के दिन लोग उड़द की खिचड़ी बनाकर खाते हैं, इसी प्रकार अलग-अलग प्रदेश में अलग-अलग परम्पराएँ होंगी।

पुनः वहाँ के कई भाई-बहनों ने बताया कि ''आज संक्रान्ति के दिन हमारे प्रान्त में बच्चे-बूढ़े महिलाएँ सभी गोलियाँ जरूर खेलते हैं और जो लोग नहीं खेलते हैं, उनके शरीर में फोड़े-फुंसी-गुमड़े आदि निकल आते हैं। इसी प्रकार पतंग भी आज खूब उड़ाई जाती है, कितने बच्चे पतंग उड़ाते-काटते छतों से गिरकर घायल भी होते हैं किन्तु पतंग उड़ाना छोड़ते नहीं हैं।''

ये विचित्र परम्परापोषक बातें सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि लोग कैसी-कैसी धारणाएँ बना लेते हैं और उन्हें प्राचीन प्रथा के आधार पर चलाते रहते हैं।

संक्रान्ति के दिन पतंग उड़ाने की परम्परा गुजरात में भी देखने को मिली।

➢सत्संग से बाल-हृदय परिवर्तन–

सन्तों के बारे में कवियों ने कहा ही है कि–

ते गुरु मेरे उर बसहुं, जे भवजलधि जहाज।
आप तिरें पर तारहीं, ऐसे श्री ऋषिराज।।

आत्मकल्याण एवं पर प्राणियों के कल्याण करने वाले साधु-साध्वियों के प्रवचन एवं सानिध्य से न जाने कितने हृदय परिवर्तन होकर माँसाहारी से शाकाहारी एवं व्यसनी से निर्व्यसनी बनते तो देखे ही जाते हैं, इसके साथ-साथ उनकी वैराग्य प्रतिमा की चुम्बकीय शक्ति से बहुत सारी भव्यात्माएँ भी वैराग्य मार्ग में अग्रसर हो जाती हैं। पूज्य ज्ञानमती माताजी तो इस बात की जीवन्त उदाहरण हैं जिनकी प्रेरणा से अनेकों स्त्री-पुरुष, बालक-बालिकाएँ, युवक-युवती, ब्रह्मचारिणी, आर्यिका, क्षुल्लिका, क्षुल्लक, मुनि, आचार्य आदि पदों पर आसीन हुए हैं।

27 फरवरी 1996 को मध्य प्रदेश के उज्जैन जिले में स्थित सुसनेर नगर के चौराहे पर हुए पूज्य माताजी के प्रवचन से प्रभावित होकर वहाँ के श्रावक निर्मल कुमार जैन लुहाड़िया की एक मात्र पुत्री कु. प्रीति जैन माता-पिता से कुछ कहे बिना ही हम लोगों के साथ वहीं से चल पड़ी और काफी संघर्ष के बाद उसने वैराग्य मार्ग में आकर पूज्य माताजी से आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत एवं दो प्रतिमा ग्रहण कर ली। पूज्य माताजी की छत्रछाया में उसका सात्विक जीवन ज्ञान के अमृत से सिंचित हो रहा है। यह हृदय परिवर्तन मात्र 4-5 घण्टे के सत्संग से ही बिना किसी प्रेरणा के हो गया। इस बालिका ने कहा कि पूज्य माताजी द्वारा रचित पुस्तकें पढ़कर कई बार मैं सोचा करती थी कि मैं इन्हीं ज्ञानमती माताजी के पास कभी न कभी जरूर जाकर व्रत लूंगी, तो शायद पूज्य माताजी मुझे लेने ही सुसनेर आ गईं। यह अनहोने संयोग वास्तव में अविस्मरणीय हो जाते हैं।

➢एक की कर्मठता से पूरा समाज लाभान्वित हो गया–

23 फरवरी 1996 को राजस्थान में साल्याखेड़ी ग्राम में पिड़ावा के धर्म बन्धु वहाँ संघ को ले जाने हेतु निवेदन करने आए किन्तु पता चला कि पिड़ावा जाने से कुछ रास्ता बढ़ जायेगा एवं सड़क बहुत खराब है। हम लोगों के पैरों की तकलीफ देखकर पूज्य माताजी ने वहाँ जाने की स्वीकृति नहीं दी, वे लोग बहुत ज्यादा आग्रह भी न करके रात्रि में वापस चले गये।

इधर 3-4 दिनों से झालरापाटन आदि नगरों के महानुभाव न जाने क्यों माताजी से पिड़ावा पदार्पण के लिए खूब आग्रह कर रहे थे इसीलिए आज उन श्रावकों के वापस चले जाने पर भी माताजी के मन में खटकता रहा कि एक बड़ा समाज धर्मलाभ से वंचित रह जाएगा। जबकि कुछ वास्तविकता यह भी थी कि पिड़ावा की समाज में शायद थोड़ी सुस्ती थी क्योंकि उन्होंने पहले से आकर कोई निवेदन नहीं किया था। अब हम 24 फरवरी को साल्याखेड़ी से पिड़ावा वाला रास्ता पीछे छोड़कर देहरिया आ गए, यहाँ से राजस्थान छूटकर मध्यप्रदेश की सीमा प्रारंभ हो गई।

उस दिन मध्यान्ह में 1 बजे पिड़ावा के कुछ नर-नारियों को साथ लेकर वहाँ के पटवारी धनसिंह जैन आ गए और श्रीफल चढ़ाकर माताजी से कहने लगे कि **''आपको पिड़ावा तो चलना ही पड़ेगा, वहाँ 350 घर का दिगम्बर जैन समाज है, वे सब आपके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।''**

माताजी एवं हम सब हँसने लगे और उनसे कहा कि अब प्रयास करना

बेकार है क्योंकि वह रास्ता पीछे छोड़कर हम मध्यप्रदेश में आ गए हैं। फिर भी पटवारी जी पूरे आग्रह के साथ कहने लगे कि माताजी! यहाँ से एक बिल्कुल छोटा कच्चा रास्ता है, जिससे पिड़ावा केवल 10-12 किमी. पड़ेगा। हमें आपके सानिध्य में वहाँ समवसरण रचना का कार्य भी प्रारंभ करना है तथा गाँव की समस्त जनता को आपका आशीर्वाद दिलवाना है।

उनके अत्यधिक निवेदन पर माताजी ने करुणारस से आर्द्र होकर पिड़ावा जाने की स्वीकृति प्रदान कर दी पुनः हम लोगों ने पिड़ावा के लिए विहार कर दिया और हमें उस मार्ग से चलना पड़ा, जहाँ संभवतः कभी कोई मनुष्य तो क्या पशुओं का आवागमन भी नहीं होता होगा। नदी, पहाड़, कंकड़, पत्थर, कांटे आदि को किसी भी तरह से शाम सूर्यास्त से पूर्व तक पार किया गया, तब हम 10 किमी. चलकर शेरपुर नामक ग्राम में पहुँचे तथा अगले दिन 25 फरवरी को प्रातः 9.30 बजे पिड़ावा पहुँच गये। वहाँ पांडाल में सभा तैयार थी, मंदिरों के दर्शन करके हम सब सभामंच पर पहुँचे, जहाँ मेरे एवं क्षुल्लक जी के प्रवचनों के पश्चात् **''भगवान पार्श्वनाथ समवसरण''** निर्माण की घोषणा होते ही दानदातारों ने अपनी अर्थांजलियाँ भेंट करनी शुरू कर दीं पुनः पूज्य माताजी के आशीर्वादात्मक प्रवचन हुए। मध्यान्ह में 2 बजे समवसरण का शिलान्यास असीम उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ पुनः जनता को मंगल आशीर्वाद प्रदान कर संघ का आगे की ओर प्रस्थान हो गया।

आगे का रास्ता भी अत्यंत खराब था, जिससे हम लोगों के पैर काफी छिल गये, छाले पड़ गए लेकिन साथ-साथ चल रहे पिड़ावा के श्रावकों की सन्तोषजनक प्रसन्नता देख-देखकर माताजी के मुख से यही निकला कि देखो! एक व्यक्ति के पुरुषार्थ से इतनी बड़ी समाज को लाभ मिल गया और 2-4 व्यक्तियों की उदासीनता के कारण पूरा गाँव धर्मलाभ से वंचित रह जाता।

➢एक श्रावक की श्रद्धा–

इस मध्य शेरपुर के एक मात्र निवासी जैन श्रावक कहने लगे कि मैंने 4-5 दिन पूर्व स्वप्न देखा कि माताजी हमारे यहाँ पधारी हैं किन्तु जब सुना कि आप सीधे सुसनेर जा रही हैं, तो मैंने अपने दुर्भाग्य पर दो आँसू बहाकर संतोष कर लिया था लेकिन आज आपको अपने गांव में पाकर मैं फूला नहीं समा रहा हूँ क्योंकि मेरा सपना सच में साकार हो गया है।

सुबह पिड़ावा जाते समय रास्ते में एक युवक ने आकर बताया कि मैं आज रातभर कान के दर्द से छटपटाता रहा, एक मिनट भी नींद नहीं आई,

कोई दवा से लाभ नहीं हुआ, फिर मैं उठकर जबर्दस्ती आप लोगों के दर्शन हेतु चल दिया। माताजी! मुझे स्वयं आश्चर्य हो रहा है कि यहाँ आकर मस्तक झुकाते ही मेरे कान का दर्द न जाने कहाँ चला गया! वह सज्जन उस दिन से परमगुरुभक्त बन गये। इसी प्रकार कितने ही नर-नारियों को तन-मन-धन का मनवाञ्छित लाभ पूज्य माताजी के वात्सल्यमयी आशीर्वाद से प्राप्त हो जाता है, जो उनके अखण्ड तप-तेज का ही प्रभाव है। जैसा कि आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने कहा भी है–

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो, दानादुपासनात्पूजा।
भक्तेः सुन्दररूपं, स्तवनात्कीर्तिषु तपोनिधिषु।।

अर्थात् तपोनिधि सन्त-साध्वियों को नमन करने मात्र से उच्चगोत्र का बंध होता है, उन्हें आहार आदि दान देने से भोगोपभोग सामग्री प्राप्त होती हैं, उनकी उपासना से मनुष्य भी पूजा का पात्र बन जाता है, उनकी भक्ति करने से सुन्दर रूप मिलता है तथा उनके गुणों का स्तवन करने से अपने यशकीर्ति की वृद्धि होती है।

ऐसे अनेकानेक गुणों से समन्वित गुरु चरणों में किया गया नमन यदि शारीरिक-आधि-व्याधि को दूर कर दे, तो उसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

➢देवों की याद दिला दी एक भक्त आजाद कुमार जैन की सेवा ने–

पिड़ावा से आगे सुसनेर तक का रास्ता भी बहुत अधिक पथरीला एवं कंकरीला था। वहाँ से विहार करते हुए रास्ते में शाजापुर-मध्यप्रदेश के इंजीनियर आजाद कुमार जैन (सनावद निवासी) आ गये और पद- विहार की कठिन परिस्थिति देखकर रात्रि में वापस चले गये।

पुनः 26 फरवरी को प्रातः जब हम बोलियाबारी से श्यामपुर जा रहे थे तो रास्ते में देखा कि सैकड़ों मजदूर सड़क से कंकड़-पत्थर दूर करके झाड़ू लगा रहे थे। हम सोचने लगे कि शायद सड़क बनाने हेतु सरकारी आदेशानुसार यह कार्य हो रहा है लेकिन उन लोगों ने बताया कि **''आप सभी साधुओं के पदविहार का कष्ट देखकर इंजीनियर साहब आजाद कुमार जैन के आदेश पर यह सफाई चल रही है, सुसनेर तक यह सड़क आपको बिल्कुल स्वच्छ मिलेगी।''**

यह सेवा देखकर पूज्य माताजी कहने लगीं कि पहले जब भगवान् का समवसरण विहार करता था, तो वायुकुमार देव हवा से पृथ्वी स्वच्छ करते थे, मेघकुमार देव धरती को जल से एकदम शुद्ध करते थे। आज मेरे भक्त आजाद

ने देवता के समान ही अपने अधिकार का सदुपयोग करके सड़क को निष्कंटक बना दिया, इससे इन्होंने असीम पुण्य का संचय कर गुरुभक्ति का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किया है।

➢मांगीतुंगी के कीड़े पलायमान हो गये थे–

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम आदि निन्यानवे करोड़ मुनिराजों की निर्वाणभूमि मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पर जब पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का वर्षायोग चल रहा था, अत्यधिक वर्षा होने के बावजूद भी वहाँ कभी बरसाती कीड़े, डाँस, मच्छर आदि नहीं दिखते थे, तब वहाँ रहने वाली आर्यिका श्री श्रेयाँसमती माताजी, सुगुणमती माताजी, सुदृष्टिमती माताजी आदि कई बार कहा करती थीं कि "माताजी! हर वर्ष तो यहाँ पर बरसात में सर्प, बिच्छू खूब दिखते थे, मच्छरों के कारण तो यहाँ बिजली जलाना ही मुश्किल था किन्तु इस बार न एक मच्छर दिख रहा है और न सर्पादि का कोई उपद्रव है। आपके तप का यह प्रभाव हम लोगों को प्रत्यक्ष देखने को मिल रहा है।''

दरअसल, मांगीतुंगी में मई के पंचकल्याणक महोत्सव के समय माताजी ने पर्याप्त मंत्रों के माध्यम से कील, मंत्र आदि लगवाए थे उसी के फलस्वरूप वहाँ समस्त विघ्नों की उपशांति हो गई थी।

➢मुनि श्री रयणसागर जी की गुणग्राहकता–

मांगीतुंगी के पंचकल्याणक में पूज्य मुनि श्री रयणसागर महाराज (परमपूज्य स्व. मुनि श्री दयासागर जी महाराज के शिष्य) का भी मंगल पदार्पण हुआ था। हम लोगों ने उनके पहली बार दर्शन किए थे और वे भी पूज्य ज्ञानमती माताजी से प्रथम बार मिलकर अतीव प्रसन्न थे। उन्होंने प्रतिष्ठा महोत्सव के पश्चात् भी 1 माह मांगीतुंगी में रुककर अनेक विषयों पर माताजी से चर्चा की, तमाम परम्परा एवं आगम से संबंधित ज्ञान को ग्रहणकर वे सदैव कहा करते थे कि अम्मा! आपने आचार्य शांतिसागर महाराज की परम्परा में जो प्रभावक अभिवृद्धि की है, उसे हम लोग कभी भूल नहीं सकते, आपके ज्ञान के समक्ष हम तो बिल्कुल बालक के समान हैं। पूज्य महाराजश्री ने भगवान् ऋषभदेव जन्मजयंती महोत्सव में भी अपना सक्रिय योगदान प्रदान करने का आश्वासन देते हुए कहा कि मैं जहाँ भी रहूँगा, आपके द्वारा भेजे गये सभी कार्यक्रम सामाजिक स्तर पर अवश्य आयोजित कराऊँगा, यह उनकी गुणग्राहकता का ही प्रतीक है।

पूज्य मुनि श्री के दीक्षित शिष्य, नवोदित प्रतिभा सम्पन्न क्षुल्लक मयंकसागर जी से भी मिलकर खूब प्रसन्नता हुई, वे भी सदैव पठन-पाठन, गुरुभक्ति में

लीन रहते थे तथा भविष्य में इन गुरु-शिष्य से जिनधर्म की अतिशय प्रभावना होगी, ऐसी पूर्ण आशा है।

➢ब्र. गणेशीलाल जी की भावना भी सफल हुई–

सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगी पर 65 वर्षों से अपनी समर्पित सेवा प्रदान करने वाले वयोवृद्ध ब्रह्मचारी गणेशीलाल जी (महामंत्री मांगीतुंगी ट्रस्ट कमेटी) भी इस व्यथा से पीड़ित थे कि शायद अब मुझे यहाँ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा देखने को नहीं मिलेगी किन्तु पूज्य ज्ञानमती माताजी के प्रबल पुरुषार्थ से जब वह दुर्लभ क्षण उनके जीवनकाल में सुलभ हो गया, तो 85 वर्षीय ब्रह्मचारी जी फूले नहीं समाए। उन्होंने जीवन के समापन काल में जैनेश्वरी दीक्षा लेकर समाधि की प्राप्ति की।

एक बार मांगीतुंगी में पारस्परिक चर्चा के दौरान जब उन्हें ज्ञानमती माताजी की कठोरचर्या के बारे में यह ज्ञात हुआ कि **''उनकी आहार व्यवस्था एवं संघ व्यवस्था में कभी किसी कमेटी का, मंदिर के दान का, चन्दे से इकट्ठा किया हुआ पैसा नहीं लिया जा सकता है ऐसा उनका कट्टर नियम है।''** तो उन्होंने आश्चर्यपूर्वक बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की और कहने लगे कि आप जैसे विरले साधु ही ऐसे नियम पालन कर सकते हैं, तभी तो आपकी वचनवर्गणा से समाजों को नई चेतना प्राप्त होती है।

➢गृह चैत्यालय के लिए संघ की प्रतिमा भी दे दी–

संघ का विहार जब दिल्ली से मांगीतुंगी की ओर हुआ, तो दिनाँक 18 दिसम्बर 1995 को सैनिक फार्म में महासभा अध्यक्ष निर्मल कुमार जैन सेठी की कोठी पर रुकना हुआ। वे विहार के पश्चात् पूज्य माताजी से कहने लगे कि आज मैंने सीतापुर से भगवान् की प्रतिमा मंगवाई थी कि माताजी के करकमलों से मैं उन्हें अपने घर में विराजमान करवा कर गृहचैत्यालय बनाऊँगा किन्तु कारणवश वह प्रतिमा आ नहीं पाई है। सेठी जी के चेहरे पर थोड़ी सी उदासी देखकर पूज्य माताजी तुरंत बोल पड़ीं–निर्मल! चिन्ता मत करो, मैं तुम्हारे यहाँ अपने संघ की प्रतिमा विराजमान कर देती हूँ, तुम लोग उनकी सेवा-पूजा करके सद्गृहस्थी का संचालन करो, यही मेरा मंगल आशीर्वाद है।

सेठी जी की प्रसन्नता का पार नहीं रहा, वहाँ प्रतिमा विराजमान करने के बाद संघ के लिए जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से दूसरी प्रतिमा मंगवाकर आगे विहार का कार्यक्रम यथावत् चला।

दरअसल चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज एवं आचार्य

श्री वीरसागर महाराज की आज्ञानुसार उनकी परम्परा के सभी आचार्य एवं आर्यिकाओं के संघ में चैत्यालय की व्यवस्था आज भी चल रही है क्योंकि उनका कहना था कि कितने ही स्थानों पर मंदिर नहीं मिलते हैं, तो वहाँ साधु और श्रावक-श्राविकाओं को दर्शन करने के लिए संघ में प्रतिमा रखना अति आवश्यक है। जिनेन्द्र दर्शन के बिना आचार्य श्री शिवसागर जी, आचार्य श्री धर्मसागर जी, आचार्य श्री देशभूषण जी, आचार्य श्री विमलसागर जी आदि कोई भी आहारचर्या नहीं करते थे।

इसी आर्षपरम्परा के निर्वाह हेतु पूज्य ज्ञानमती माताजी के संघ में भी प्रायः एक जिनप्रतिमा का चैत्यालय रहता ही है। दिल्ली के पश्चात् ऐसा प्रसंग आया दिनाँक 11 अप्रैल 1996 को सेन्धवा (म.प्र.) में, जब निहालचंद जैन पाटनी के घर में हम लोग ठहरे और वहाँ ज्ञात हुआ कि 8-10 घर जैन श्रावकों के हैं किन्तु मंदिर दर्शन के बिना उनका जीवन निर्वाह चल रहा है, आगे उन लोगों में मंदिर बनाने की इच्छा भी है लेकिन अभी सफलता नहीं मिल पा रही है। समस्या सुनकर माताजी ने तुरंत अपने चैत्यालय वाली महावीर स्वामी की प्रतिमा पाटनी जी के घर में ही ऊपर कमरे में गृहचैत्यालय बनाकर विराजमान करवा दी और बनने वाले मंदिर के लिए भी उसी समय काफी धनराशि की स्वीकृतियाँ हो गईं। इसी हर्षोल्लास के वातावरण में संघ का शाम को 5 बजे आगे के लिए विहार हो गया और मांगीतुंगी से हमें जिनप्रतिमा उसी दिन मंगवानी पड़ी।

इसी प्रकार कई स्थानों पर संघ की प्रतिमा देकर पूज्य माताजी ने अनेक भव्य प्राणियों को सम्यग्दर्शन प्राप्ति का माध्यम प्रदान किया, जो उनकी उदारता एवं वात्सल्य का परिचायक है।

➢गाँव में सर्कस आया है?

भौतिकवादी इस युग में दिगम्बर जैन साधु-साध्वियों का मंगल पदविहार धर्म से अनभिज्ञ लोगों के लिए वास्तव में बड़े अचम्भे का कारण बन रहा है। आज से 70-80 वर्ष पूर्व जब बीसवीं शताब्दी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज का संघ दक्षिण भारत से उत्तरप्रांत की ओर आया था, तब संघपति सेठ पूनमचंद घासीलाल जवेरी (बम्बई) ने बैलगाड़ियों में संघ संचालन का सारा सामान रखकर पूरी यात्रा सम्पन्न कराई थी परन्तु आज तो भौतिक संसाधनों ने संघ संचालकों की सारी समस्या ही हल कर दी है।

पूज्य माताजी के संघ के संघपति महावीर प्रसाद जैन बंगाली स्वीट,

दिल्ली वालों ने प्रारंभ से विहार की व्यवस्था हेतु दो गाड़ियाँ (ट्रक एवं मेटाडोर), मोटर साइकिल तथा छोटे-मोटे कार्यों के लिए 2-3 साइकिलों का प्रबंध कर लिया था। संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनें संघ का कुशल संचालन करती हुई 10 जनवरी 1996 को राजस्थान के एक गाँव "ढिगवड़ा" के स्कूल में पहुँचीं। सबसे पहले वहाँ रात्रिविश्राम का सामान (चावल की घास, चटाई, पाटे आदि) जालीनुमा बने हुए ट्रक में लेकर वे लोग गई थीं क्योंकि सर्दी का मौसम था। शाम को 5 बजे हम लोग भी वहाँ पहुँच गये तो कु.बीना, आस्था आदि बहनें कहने लगीं कि यहाँ आते ही स्कूल के बच्चे, अध्यापक तथा गाँव के लोगों की भीड़ लग गई और वे हम लोगों से पूछने लगे कि–

"दीदी! क्या यह सर्कस की गाड़ी आई है? आज यहाँ सर्कस दिखाया जायेगा क्या?" हमने कहा कि नहीं, यहाँ पर जैन साध्वी ज्ञानमती माताजी का संघ आ रहा है, वे लोग यहाँ रात्रि विश्राम करेंगी। गाड़ी से सामान निकालते हुए हमने घास के बोरे उतरवाये जो कि आप लोगों के सोने हेतु हम कमरे में ले जा रहे थे, तो उन लोगों ने पूछा कि–

"क्या आपके साथ घोड़े भी हैं? उन्हें खिलाने के लिए घास वगैरह भी क्या आप साथ में ही रखती हैं?"

इतना सब बताते हुए वे बालिकाएँ जोर-जोर से हँसने लगीं और कहने लगीं–माताजी! जब हम लोग छोटे-छोटे उन गाँवों में, जहाँ जैन श्रावक नहीं होते हैं वहाँ, स्कूल, पंचायत भवन, डाकबंगले आदि स्थानों पर पहुँचते हैं, तो लोग तरह-तरह के प्रश्न पूछकर हम लोगों का मनोरंजन कर देते हैं। ये सब सुनकर पूज्य माताजी कहने लगीं कि–"देखो! हम जैन साधु-साध्वियों की चर्या ही ऐसी है, जिसे अन्य लोगों के लिए समझना बड़ा कठिन है। तुम लोग इतना अवश्य ध्यान रखना कि इन प्रश्नों का उत्तर हमेशा प्रौढ़तापूर्वक देना और कभी उनकी हँसी मत उड़ाना।"

हम लोगों को पदविहार के मध्य जिन गाँवों में जैन श्रावक नहीं होते हैं, वहाँ स्कूल, कॉलेज में ही ठहरना पड़ता है, तब अनेक प्रकार के प्रसंगों का सामना करना पड़ता है पुनः वहाँ प्रवचन-प्रश्नमंच, पुरस्कार आदि आयोजित करके हजारों-हजार बालक-बालिकाओं, अध्यापक-अध्यापिकाओं को धर्मज्ञान देकर अपूर्व प्रसन्नता का अनुभव होता है।

➢भगवान राम के समान तीर्थ का उद्धार–

मांगीतुंगी में 19 मई 1996 को पूज्य गणिनी आर्यिका शिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी ने विशाल जनसमूह को सम्बोधित करते हुए एक पौराणिक घटना सुनाई कि आज से नौ लाख वर्ष पूर्व मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम वन में विचरण करते-करते कुंथलगिरि के निकट जब आये, तो वहाँ गाँव के बाहर देखा कि शाम को सारे नर-नारी अपने-अपने सिर पर सामान लिए आगे चले जा रहे हैं। उन्होंने लक्ष्मण से पता लगवाया तो ज्ञात हुआ कि यहाँ पर कोई दैत्य शाम होते ही भयंकर शब्द करता है, जिसके कारण नगर के तमाम लोग भय के कारण मर जाते हैं, गर्भवती स्त्रियों के गर्भपात हो जाते हैं, कितने ही बालक काल के गाल में समाहित हो जाते हैं इसीलिए ये सब नर-नारी शाम को गाँव छोड़कर भाग जाते हैं और प्रातःकाल गाँव में वापस आ जाते हैं, यह सुनकर सीता कहने लगी कि शाम हो रही है, अभी यहाँ वही भयंकर शब्द शुरू हो जायेगा। इसीलिए हम भी गाँव वालों के साथ चलें और प्रातः वापिस आ जायेंगे। लेकिन राम ने कहा–नहीं, हम लोग आज उस राक्षस से आमना-सामना करके नगर वालों के संकट को दूर करेंगे। सीता के जिद्द करने पर भी वे राजी नहीं हुए और जल्दी-जल्दी वे सभी कुंथलगिरि के पर्वत पर चढ़ गए। वहाँ सामने देखते हैं कि दो महान मुनिराज अपने अखण्ड ध्यान में लीन हैं। सायंकाल होते ही एक राक्षस की भयंकर आवाज से पर्वत हिलने लगा। भयभीत हुई सीता को उन्होंने दोनों मुनियों के बीच में बिठा दिया तथा स्वयं धनुष की टंकार से उस दैत्य का सामना करने लगे। थोड़ी ही देर में दैत्य की शक्ति कुंठित हो गई और वह इन्हें नारायण व बलभद्र का अवतार मानकर अपनी विक्रिया समाप्त कर भाग गया। इस प्रकार मुनियों का उपसर्ग दूर होते ही शुक्लध्यान के द्वारा उन्होंने केवलज्ञान की प्राप्ति कर ली। तब वहाँ देवों ने भी आकर गंधकुटी की रचना करके कुलभूषण, देशभूषण नामक केवली भगवंतों की महान पूजा की पुनः रामचन्द्र ने बहुत समय तक उस पर्वत पर रहकर कई जिनालयों का निर्माण कराया।

इस प्रवचन से परिलक्षित होता है कि रामचन्द्र जैसे महापुरुष भी तीर्थों के उद्धार एवं मुनियों की रक्षा हेतु पूर्ण पुरुषार्थ करते थे। यह तो नौ लाख वर्ष पूर्व का प्राचीन कथानक है किन्तु ऐसा लगने लगता है कि साक्षात् राम का रूप धारण करके ही पूज्य माताजी ने हस्तिनापुर, अयोध्या, मांगीतुंगी एवं अन्य अनेक तीर्थों के उद्धार का बीड़ा उठाया है। उन्हें इन उद्धारों के लिए कितने ही संघर्ष एवं कष्ट झेलने पड़ते हैं, तो भी वे अपने पुरुषार्थ से विचलित नहीं होती हैं तथा निस्पृहवृत्ति से भायी गई उनकी भावना आशातीत सफलताओं के साथ

सम्पन्न होती है। यही कारण है कि जिस मांगीतुंगी तीर्थ को लोग जानते भी नहीं थे, वह सारे देश में अब प्रसिद्धि को प्राप्त हो गया।

➢महाराष्ट्र का लघु भ्रमण नया अनुभव दे गया–

नीतिकारों ने कहा है कि–

पद्मिन्यो राजहंसाश्च, निर्ग्रन्थाश्च तपोधनाः।
यत्र देशे प्रसर्पन्ति, सुभिक्षं तत्र जायते।।

अर्थात् पद्मिनी जाति की स्त्रियाँ, राजहंस, निर्ग्रन्थ साधु-साध्वी जहाँ भी विचरण करते हैं, वहाँ सुभिक्ष हो जाता है। यह नीति तो 9 जून 1996 रविवार को तभी सार्थक हो गई थी, जब मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पर वर्षायोग स्थापना की स्वीकृति पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने प्रदान कर दी थी। उस प्रवचन सभा के पश्चात् ज्यों ही माताजी पांडाल से उठकर त्यागीभवन में पहुँचीं, त्यों ही मूसलाधार वर्षा के द्वारा मेघदेवता ने उनके प्रति आदरांजलि प्रगट की थी पुनः महाराष्ट्र के अन्य नगरों की जनता भी चातुर्मास से पूर्व डेढ़ माह के समय में उन्हें अपने शहरों में ले जाने के लिए लालायित हो उठी और मालेगांव, नाँदगाँव, सटाणा, कोपरगाँव आदि स्थानों से पधारे प्रमुख जनों ने श्रीफल चढ़ाकर निवेदन भी किया।

मौसम और स्वास्थ्य यद्यपि दोनों की विशेष अनुकूलता नहीं थी फिर भी भक्तों की भक्ति ने मन को उद्वेलित किया और 2 जुलाई 1996, आषाढ़ शुक्ला दूज को माताजी मालेगांव का प्रमुख लक्ष्य लेकर अपने संघ के साथ विहार कर गईं। विहार के दो दिन पश्चात् मालेगांव वालों को सूचना मिली कि **''ज्ञानमती माताजी का मांगीतुंगी से हमारे शहर के लिए विहार हो चुका है''** पुनः उन लोगों ने मार्ग में आकर कार्यक्रम की रूपरेखा समझी। मंगल विहार का यह अनुभव भी अपने आप में अपूर्व ही था कि साधु को विहार से पूर्व गन्तव्य स्थान के लिए सूचित करना कोई आवश्यक नहीं है, वे तो अतिथी होते हैं अतः कभी भी, कहीं भी बिना सूचना के विहार कर सकते हैं, इससे उन्हें निश्चित ही नये-नये अनुभव प्राप्त होते हैं। कहा भी है–

तिथिपर्वोत्सवा सर्वे, त्यक्ता येन महात्मना।
अतिथिं ते विजानीयात्, शेषमभ्यागतं विदुः।।

अर्थात् समस्त तिथियाँ, पर्व और उत्सवसंबंधी विकल्पों से ये साधु-साध्वी सदा ही दूर रहते हैं, इसीलिए इनका ''अतिथि'' यह यथार्थ नाम है तथा शेष लोगों को विद्वानों ने **''अभ्यागत''** संज्ञा से सम्बोधित किया है।

➢हम उन्हें हँसे, वे हमें हँस रहे थे–

हम लोग 4 जुलाई को पदविहार करते हुए प्रातः 8 बजे ''आसखेड़ा'' के विद्यालय में पहुँचे, जहाँ संघ की ब्रह्मचारिणी बहनों ने आहारचर्या की व्यवस्था की हुई थी। स्कूल के अध्यापकों की अभिरुचि देखकर वहाँ मध्यान्हकालीन प्रवचन का आयोजन किया गया। सारे स्कूल के लगभग 1000 बालक-बालिकाएँ प्रवचन सभा में एकत्रित हुए, सभामंच पर ब्र. श्रीचन्द जी एवं ब्र. गौतमचन्द जी के साथ सर्वप्रथम क्षुल्लक श्री मोतीसागर महाराज का पदार्पण हुआ और उन्हें एक चादर-लंगोट की वेशभूषा में देखकर सब बच्चों की हँसी का फौव्वारा छूट पड़ा। अध्यापकों ने अनुशासनपूर्ण दृष्टि से उन्हें शान्त किया और ब्र. गौतमजी ने मराठी भाषा में प्रवचन करके जैन गुरुओं की महत्ता तथा विद्यार्थी के गुणों पर भी प्रकाश डाला।

उसके बाद मोतीसागर महाराज ने अपने मंगल प्रवचन में कहा कि– **''आप लोग मुझे देखकर हँस रहे हैं एवं आप लोगों को देखकर मुझे हँसी आ रही है कि आज के इस आधुनिक युग में भी आप बालकगण नेकर-शर्ट की ड्रेस के साथ-साथ सिर पर सफेद टोपी लगाए हुए हैं। जैसे यह आपके स्कूल की ड्रेस है, वैसे ही यह हमारी ड्रेस है। हमारे देश के राष्ट्रपति महात्मागांधी की भी लगभग ऐसी ही वेशभूषा थी जो कि साधुता की प्रतीक थी।**

साधुगण चलते-फिरते विद्यालय होते हैं, इनसे चारित्र निर्माण की अपूर्व प्रेरणा देश और समाज को प्राप्त होती है। पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी जैसी महान् साध्वी का पदार्पण आज आपके स्कूल में हुआ है, जिन्होंने नारी उत्थान के लिए जैन समाज में एक कीर्तिमान स्थापित किया है। एक कवि ने इनके लिए कहा है–

जो बतलाते नारी जीवन, लगता मधुरस की लाली है।
वह त्याग तपस्या क्या जाने, कोमल फूलों की डाली है।।
जो कहते योगों में नारी, नर के समान कब होती है।
ऐसे लोगों को ज्ञानमती का, जीवन एक चुनौती है।।

इसके पश्चात् मेरा उद्बोधन हुआ पुनः गणिनी माताजी ने स्कूल के बालक-बालिकाओं को, अध्यापकों एवं नगर के नागरिकों को अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान किया। यह स्कूल ''कर्मवीर भाऊरावपाटील'' की स्मृति में रैय्यत समाज द्वारा निर्मित है, यहाँ टोपी लगाना प्रत्येक विद्यार्थी को आवश्यक है।

मैं सोचती हूँ कि जब आज पूरे भारत में दिगम्बर जैन साधुओं के चतुर्विध

संघ का विहार हो रहा है, जैन-अजैन सभी को उनके दर्शन भी सुलभतया होते हैं क्योंकि विहार करते समय साधुओं को अधिकतर विद्यालयों में ही ठहरना पड़ता है, फिर भी अभी इस साधुचर्या से अनभिज्ञ लोगों के लिए मुनि और क्षुल्लक, ऐलक की मुद्रा हास्यास्पद ही बनी हुई है। धन्य है यह जैनी चर्या! जिसका धरती पर कभी एकछत्र शासन था किन्तु वह प्राकृतिक सार्वभौम जैनधर्म इस सदी में अन्य धर्मों की अपेक्षा पीछे हो रहा है।

➢एक शिम्पी की दुकान पवित्र हुई–

आसखेड़ा से हम लोगों को 4-5 किमी. जाकर रात्रि विश्राम करना था किन्तु जब संघ व्यवस्थापक ने सर्वे किया तो ज्ञात हुआ कि 13 किमी. से पहले ठहरने का कोई स्थान नहीं है अतः उस दिन विद्यालय में ही रात्रि विश्राम हुआ और 5 जुलाई को प्रातः वहाँ से विहार हुआ, तब तक संयोगवश 7 किमी. दूर मेनरोड पर ही एक शिम्पी के नये अधबने मकान में जगह मिल गई और वहीं उस दिन का आहार हुआ। मध्यान्ह में मकान मालिक ने अत्यन्त विनम्रतापूर्वक पूज्य माताजी से अपनी कपड़े की दुकान पर चरण रखने का निवेदन किया। आगे के लिए विहार करते समय हम लोग उनकी दुकान से होकर निकले चूँकि घर और दुकान की दीवार एक ही थी, माताजी ने उनसे शाकाहार के बारे में पूछा तो ज्ञात हुआ कि पूरा परिवार शाकाहारी है। अत्यन्त प्रसन्नता के साथ माताजी ने उन्हें **''धर्मलाभ''** आशीर्वाद दिया, वे सभी फूले नहीं समा रहे थे तथा माताजी से पुनः इसी रास्ते से वापसी में जाने का आग्रह कर रहे थे।

मालेगांव के कुछ जैन समाज के प्रमुख श्रावक भी वहाँ पहुँच गए थे, उन्होंने उन महानुभावों की गुरुभक्ति देखकर उनके भाग्य की सराहना की। वास्तव में साधु तो आकाश के समान विशाल हृदय वाले ही होते हैं, तभी जन-जन को उनका आशीर्वाद प्राप्त करने का लाभ मिलता है। एक कवि ने कहा भी है–

जाति न पूछो साधु की, ले लो इनसे ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ी रहन दो म्यान।।

अर्थात् साधु के प्रति जाति-पाँति का भेदभाव छोड़कर प्राणीमात्र को उनके ज्ञान का लाभ उठाना चाहिए।

➢तीव्र भक्ति ने भावना बदल दी–

महाराष्ट्र की दिगम्बर जैन समाज के लोकप्रिय नेता नासिक जिले के सम्माननीय विधायक (आमदार) श्री जयचंद जी कासलीवाल 5 जुलाई को

''चांदवड़'' से दो गाड़ियाँ लेकर रास्ते में श्रीफल चढ़ाने आ गए और कहने लगे कि माताजी! आपको हमारे चाँदवड़ जरूर चलना है, यदि आप यहीं से अपना रास्ता बदल दें तो केवल 10-5 किमी. का अन्तर पड़ेगा और वापस वहाँ से मालेगाँव होकर मांगीतुंगी का मार्ग ठीक रहेगा अन्यथा मालेगांव से चाँदवड़ जाने पर आपको 40 किमी. अधिक चलना पड़ेगा। कुछ भी हो, आपको चांदवड़ तो चलना ही पड़ेगा। इसीलिए हम सभी समाज के लोग आपसे निवेदन करने आए हैं।

विधायक जी की सुपुत्री कु. प्रीति जैन हमारे साथ मांगीतुंगी से ही पैदल चल रही थी, उसने माताजी की अस्वीकृति देखकर आग्रह को सत्याग्रह में परिवर्तित कर दिया। अन्ततोगत्वा प्रीति ने पूरे चातुर्मास तक मांगीतुंगी रहने का एवं आगे भी विहार में साथ चलने का भाव व्यक्त किया।

इन सब परिस्थितियों को देखकर पूज्य माताजी ने मालेगांव से चाँदवड़ जाने की स्वीकृति प्रदान कर दी। यद्यपि हम लोग मांगीतुंगी से मात्र मालेगांव की भावना लेकर ही निकले थे, चातुर्मास से पूर्व और कहीं अधिक जाने का न तो समय ही था और न स्वास्थ्य, किन्तु आमदार जी, उनकी पत्नी सौ. अर्चना जैन, पुत्री प्रीति जैन के आग्रह तथा समाज के विशेष निवेदन को वे टाल न पाईं और तीव्र भक्ति देखकर उनकी भावना परिवर्तित हो गई। उन्होंने चांदवड़ जाने की स्वीकृति प्रदान कर दी।

➢कु. प्रीति एवं कु.पल्लवी की पदयात्रा संघ के साथ–

देश-विदेशों में ख्याति प्राप्त विश्व की सबसे छोटी जादूगर कु. पल्लवी गुलाबचंद जैन कासलीवाल-ओझर निवासी भी अपने काका की सुपुत्री बड़ी बहन प्रीति के साथ मांगीतुंगी में पूज्य गणिनी माताजी के पास 25 जून को कुछ दिनों के लिए धार्मिक अध्ययन करने आई थी पुनः हम लोगों का मालेगांव की ओर विहार हो गया, तो ये दोनों बालिकाएँ भी साथ में पदयात्रा करती हुईं गुरुभक्ति, वैयावृत्ति, आहारदान, धर्मशिक्षण आदि का लाभ प्राप्त करने लगीं।

मार्ग में कितनी जगह लोग जादूगरनी पल्लवी को देखकर आश्चर्य चकित होते थे कि इतनी छोटी, सुकुमार और आधुनिक सुविधाओं में रहने वाली यह कन्या माताजी के साथ कैसे चल रही है? इसका इन त्यागीवर्गों के साथ मन कैसे लगता है? किन्तु यह बात आप उससे साक्षात् पूछकर देखें तो वह कहती है कि **''जो आनन्द मैंने इस संघ के साथ प्रवास में प्राप्त किया है, वैसी अनुभूति मुझे कभी नहीं हुई।''** यह सब पूज्य माताजी के तेजोमय व्यक्तित्व

का ही आकर्षण है।

लगभग 200 किमी. की इस पदयात्रा के पश्चात् जब मांगीतुंगी से 30 जुलाई को वह अपना कालेज प्रारंभ हो जाने के कारण मम्मी-पापा के साथ वापस घर जाने लगी, तो उसके अश्रु गुरुचरणों का प्रक्षालन करते हुए उसकी अन्तर्वेदना को प्रगट कर रहे थे, जो धर्म संस्कारों के प्रतीक थे।

➢जलती धरती ने पैरों को तप्तायमान कर दिया–

हम लोग 7 जुलाई 1996 रविवार को मालेगाँव के कैम्प एरिया में पहुँचे, तो वहाँ की जैन समाज ने मध्यान्हकालीन प्रवचन कार्यक्रम एक हॉल में आयोजित किया और हम लोगों को दो फर्लांग दूर वहाँ जाना पड़ा। उस मार्ग में धरती पर पैर रखना तपे तवे पर पैर रखने के सदृश था। केवल वहाँ जाने तक में ही कुछ के पैरों में छाले आ गए और एक ब्रह्मचारी जी के तो पैरों में चीरा लगकर फट सा गया। खैर! यह साधुचर्या की कठोरता समझकर हम सभी ने समताभावपूर्वक सहन किया किन्तु जूते, चप्पल पहनकर चलने वाले, सदा वाहन आदि पर चलने वाले गृहस्थ श्रावक इस परीषह का अनुमान भी नहीं लगा सकते हैं।

कुछ भी हो, पंचमकाल के हीनसंहननधारी मनुष्य भी दिगम्बर जैनी दीक्षा धारण करके असंख्य कर्मों की निर्जरा कर सकते हैं, यह बात भावसंग्रह (प्राकृत) में स्पष्ट की गई है–

वरिससहस्सेण पुरा, जं कम्मं हणइ तेण काएण।
तं कम्मं वरिसेण हु, णिज्जरयइ हीण संहणणे।।

अर्थात् चतुर्थकाल में मुनिगण जितने कर्मों को उत्तम संहनन वाले शरीर से तप करके एक हजार वर्ष में नष्ट करते थे, उतने कर्मों को आज के हीन संहननधारी साधु एक वर्ष की तपस्या द्वारा नष्ट कर सकते हैं। इसीलिए आज के युग में हम लोग अपने कमजोर एवं सुकुमार शरीर को तपस्या की अग्नि में तपाने का पुरुषार्थ करते हैं, तभी इन्हें गर्मी, सर्दी, शूल-फूल के कष्ट सहन करने में कष्ट नहीं, बल्कि आल्हाद का अनुभव होता है।

➢पंचामृत अभिषेक महाराष्ट्र की पहचान है–

बहुत पहले से सुना करती थी कि दक्षिण भारत में तेरहपंथ-बीसपंथ का कोई भेदभाव नहीं रहता है, वहाँ प्रत्येक दिगम्बर जैन मंदिर में स्त्री-पुरुष सभी मिलकर प्राचीन शास्त्रीय परम्परानुसार जिनेन्द्र भगवान् का पंचामृत अभिषेक करते हैं। इस शताब्दी के प्रथम आचार्य चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तिसागर

महाराज भी इसी परम्परा को मानकर सदैव भगवान का पंचामृत अभिषेक देखा करते थे।

यूँ तो महाराष्ट्र प्रान्त में हम लोग जब से आए थे, तब से प्रत्येक गाँव में श्रद्धालु भक्त पूज्य माताजी को मंदिर में प्रवेश करते ही अभिषेक दिखाने को आतुर रहते थे तथा इधर घर-घर में बनाए हुए अपने गृह चैत्यालय का दर्शन कराने भी संघ को ले जाने का प्रयास करते थे किन्तु मालेगाँव शहर में 8 जुलाई 1996 को जब गणिनी माताजी का संघ सहित मंगल प्रवेश हुआ, तो वहाँ के मंदिर में अभिषेक की जो शास्त्रोक्त प्रक्रिया देखी, वह मेरे लिए अविस्मरणीय हो गई। वहाँ के श्रावक-श्राविकाओं ने पं. आशाधर जी द्वारा रचित संस्कृत अभिषेक पाठ का सुन्दर स्वर में उच्चारण करते हुए लगभग 1 घंटे में अभिषेक पूर्ण किया और संघ को पवित्र गन्धोदक प्रदान किया।

जहाँ दक्षिण भारत में पंथवाद की निष्पक्ष रूप से एकरूपता है, वहीं उत्तर भारत में दोनों पंथों का प्रचलन वर्तमान में देखा जा रहा है तथा कहीं-कहीं तेरहपंथ की खींचातानी भी शुद्धतेरहपंथ के नाम पर शुरू हो गई। इन विवादों में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी सदैव सामञ्जस्य की स्थिति ही पसंद करती हैं, यही कारण है कि उनकी पावन प्रेरणा से सन् 1972 में स्थापित दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की रजिस्टर्ड कमेटी में सन् 1975 में ही यह रेजूलेशन पास किया गया कि– **''वर्तमान में दिगम्बर जैन आम्नाय में बीसपंथ और तेरहपंथ ये दो पंथ प्रचलित हैं। जंबूद्वीप के सभी जिनमंदिरों में दोनों पंथ के अनुयायी अपनी-अपनी इच्छानुसार अभिषेक पूजा कर सकते हैं, यहाँ पंथवाद का कोई विवाद नहीं रहेगा।''**

उनकी इस दीर्घदर्शिता के कारण उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम चारों दिशाओं से तथा सारे देश की जनता, जो जम्बूद्वीप रचना के दर्शन करने हस्तिनापुर पहुँचती है, उसे उपर्युक्त शिलालेख देखकर परम आह्लाद का अनुभव होता है तथा पूज्य ज्ञानमती माताजी की उदारनीति से उन्हें संतोष मिलता है।

➢साधु संघ वास्तव में चलते-फिरते विश्वविद्यालय होते हैं–

हिन्दुस्तान के प्रत्येक प्रदेश में जहाँ सैकड़ों विश्वविद्यालय खुले हुए हैं, वहीं अनेक स्थान पर आज **''ओपन यूनिवर्सिटी''** भी हैं। दिल्ली में एक **''इन्दिरागाँधी ओपन यूनिवर्सिटी''** है, जहाँ से हजारों विद्यार्थी फार्म भरकर घर बैठे पढ़ने और परीक्षा देने के अधिकारी होते हैं।

यह तो लौकिक शिक्षण प्राप्त करके पेट भरने वाली विद्या सिखाने वाले

विश्वविद्यालयों की बात हुई किन्तु साधु-साध्वियों के संघ तो असलियत में चारित्र निर्माण और आध्यात्मिकता के खुले विश्वविद्यालय होते हैं। साधु श्रृंखला में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी तो सबके लिए एक मिशाल हैं ही, उनके द्वारा कोई भी कार्य शुरू किये जाने पर प्रायः सभी साधुसंघ उस मार्ग का अनुसरण करते हैं जैसे– बाल ब्रह्मचारिणी बनकर त्याग मार्ग को अपनाना, ग्रन्थ लेखन करना, शास्त्रोक्त नवनिर्माण की प्रेरणा देना, शिविर-सेमिनारों का आयोजन कराना,..... इत्यादि कार्य उनके जीवन्त इतिहास के प्रतीक हैं।

उनके बारे में सरस कवि ने लिखा है–

सच तो इस नारी की शक्ती, नर ने पहचान न पाई है।
मन्दिर में मीरा है तो वह, रण में भी लक्ष्मी बाई है।।
है ज्ञान क्षेत्र में ज्ञानमती, नारी की कला निराली है।
सच पूछो नारी के कारण, यह धरती गौरवशाली है।।

मालेगांव पहुँचते ही वहाँ के स्त्री-पुरुषों का उत्साह देखकर पूज्य माताजी ने हम लोगों को आदेश दिया कि यहाँ 5 दिन का **''ध्यान शिविर एवं शिक्षण शिविर''** आयोजित करके सबके लिए चिरस्थाई ज्ञान प्रदान करके जाना है। बस, 8 जुलाई की मध्यान्ह से ही बच्चों एवं प्रौढ़ स्त्री-पुरुषों के लिए बाल विकास तथा द्रव्यसंग्रह की कक्षाएँ शुरू हो गईं और रात्रि में इनामी प्रश्नमंच, आरती प्रतियोगिता, अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता तथा प्रातःकाल में ध्यानाभ्यास आदि अनेक कार्यक्रम 12 जुलाई तक चले, जिनसे भारी जन-समूह ने ज्ञान लाभ प्राप्त किया।

➢पदस्थ ध्यान के अन्तर्गत ''ह्रीं'' बीजाक्षर का ध्यानाभ्यास–

मैंने प्रातःकाल की कक्षा में 8.30 से 9.15 बजे तक योगसाधना के विभिन्न पहलुओं का महत्त्व बताकर 9-10-11 जुलाई को तीन दिन में ''ह्रीं'' बीजाक्षर का तीन श्रेणियों में ध्यान कराया, जो वहाँ के श्रद्धालुओं के लिए चिरस्मृति का प्रतीक बन गया और वह ध्यान की ऑडियो कैसेट वहाँ कैम्प मंदिर में अनेक स्त्री-पुरुषों को आज तक भी ध्यान का अभ्यास करा रही है।

➢कषायों में क्रोध सबसे अधिक बुरा है–

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी का प्रवचन प्रतिदिन प्रातःकाल ही ध्यानसाधना के बाद होता था और वे प्रतिदिन नये-नये दुर्लभ विषयों का प्रतिपादन अपने प्रवचन में करती थीं, जैसे– कर्मभूमियों की

व्यवस्था, जैन ज्योतिर्लोक, जैन भूगोल, गुरुभक्ति से प्राप्त तपोशक्ति, भगवान् ऋषभदेव द्वारा प्रतिपादित षट्क्रिया आदि अनेक शास्त्रीय प्रकरणों का सरलरूप में स्पष्टीकरण करतीं, जो आसानी से सबको हृदयंगम हो जाते और सभी लोग जीवन में मिले इस दुर्लभ सन्तसमागम की भूरि-भूरि सराहना करते थे।

इसी प्रवचन श्रृंखला में दिनाँक 10 जुलाई बुधवार को उन्होंने तीन लोक का स्वरूप बतलाया तथा अधोलोक को प्राप्त कराने वाली चार कषायों के बारे में बताते हुए कहा– यूँ तो कषाएँ चारों ही बुरी हैं, वे आत्मा को कस रही हैं और इनमें से लोभ को पाप का बाप भी कह दिया है, मान से नरकगति की प्राप्ति बताई है, माया से तिर्यंचगति मिलती है किन्तु जहाँ तक मैंने इस विषय में चिन्तन किया तो निष्कर्ष निकाला कि मान, माया और लोभ तो स्वयं के लिए ही घातक होती हैं जबकि क्रोध कषाय स्व और पर दोनों का अहित करके जन्म-जन्मान्तर में वैर बन्धन को बढ़ाती है।

देखो! एक वशिष्ठ नामक मुनि एक बार मथुरा के गोवर्द्धन पर्वत पर एक मास का उपवास लेकर ध्यान में लीन थे। उनकी तपस्या से प्रभावित होकर मथुरा के राजा उग्रसेन ने नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि मुनिराज के मासोपवास का पारणा मैं अपने राजमहल में ही आहार देकर करवाऊँगा, अन्य किसी के घर में चौका नहीं लगेगा। महीने भर के उपवास के बाद जब वशिष्ठ मुनिराज शहर में आहार के लिए आए, तब राजा उग्रसेन कार्यव्यस्तता में आहार देना भूल गए अतः मुनि चर्या करके वापस चले गये। इसी प्रकार दो-तीन बार राजा ने इसी प्रकार कहा और समय आने पर वे भूल गए, जिससे मुनिराज को आहार लाभ प्राप्त नहीं हो सका।

एक बार चर्या करते हुए वे मुनि अशक्तावश भूमि पर गिर पड़े, तब नगर की जनता कहने लगी कि हाय! यहाँ का राजा बड़ा दुष्ट है, जो भक्ति का प्रदर्शन करके घमण्ड के कारण हम लोगों को आहारदान न तो देने देता है और न स्वयं ही देता है। ये शब्द मुनि ने सुन लिए और उसी समय उन्होंने क्रोधित होकर निदान कर दिया कि **''अगले जन्म में इस राजा का पुत्र होकर इसका बदला चुकाऊँ''** इस प्रकार मिथ्यात्व पूर्वक कषाय परिणामों से मरकर वह उग्रसेन की रानी के गर्भ में आ गया और कंस के रूप में जन्म लेकर उसने अपने पिता को बन्दी बनाया पुनः कृष्ण ने जन्म लेकर उसका वध करके अपने नाना उग्रसेन को बन्धन मुक्त किया था। देखो! क्रोध के कारण एक मुनि ने अपनी तपस्या मिथ्या कर दी एवं भव-भव में नरक आदि गतियों के दुःख उठाए। क्रोध

में व्यक्ति को हिताहित का विवेक नहीं रह जाता है। वह अग्नि की प्रतिकृति बन जाता है इसीलिए उसे **''आगबबूला''** कहने लगते हैं।

क्रोध को कभी भी क्रोध से शान्त नहीं किया जा सकता है, उसे तो क्षमा जल से ही शमन कर सकते हैं। भगवान् पार्श्वनाथ का उदाहरण क्षमा में प्रसिद्ध है तथा कमठ का क्रोध में नाम मशहूर हुआ है। आज देखा जाता है कि कोई-कोई मुनि कषाय की उग्रता से जरा सा निमित्त बनाकर भाग जाते हैं और कहने लगते हैं कि मेरा अपमान हो गया लेकिन साधु के लिए यह कथमपि उचित नहीं है। मुनि तो क्या गृहस्थ को भी क्रोष कषाय को कम करने का अभ्यास करना चाहिए एवं अधोगति में जाने से बचना चाहिए।

➢गुरु की किञ्चित् अस्वस्थता का समाचार पा दौड़े आए लाला प्रेमचंद जी–

गुरु और शिष्य के निश्छल प्रेम की बातें इतिहासों में कई बार पढ़ी और सुनी थीं कि–

''गुरु और शिष्य की कौन-सी बात अंजानी है।
सागर को मालूम है कि बूँद में कितना पानी है।।

किन्तु वर्तमान में जब विशिष्ट भक्तों की गुरुभक्ति सामने देखने को मिलती है, तो सम्राट चन्द्रगुप्त की स्मृति आए बिना नहीं रहती जिन्होंने मुनि बनकर श्रुतकेवली भद्रबाहु की जंगल में बारह वर्षों तक भक्ति करके देवों के भी आसन को कम्पित कर दिया था।

मालेगाँव विहार से पूर्व एक बार पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का स्वास्थ्य शारीरिक आदि परिश्रम के कारण कुछ नरम हो गया था, वह खबर किसी तरह से दिल्ली में संघपति महावीर प्रसाद एवं प्रेमचंद जी को पता लगी, तो उन्हें खूब बेचैनी हो गई और दोनों तुरंत मांगीतुंगी जाने को तैयार हो गये। इसी मध्य इन लोगों को ज्ञात हुआ कि अनिल कुमार जैन कागजी स्वास्थ्य समाचार लेने जा चुके हैं, तब तक रवीन्द्र जी का फोन भी मिल गया कि स्वास्थ्य अब मध्यम है, कुछ कमजोरी विशेष के कारण गड़बड़ हो गया था। अनिल जी ने भी पुनः दिल्ली पहुँचकर सबको माताजी की स्वस्थता की सूचना दे दी थी किन्तु सबसे सुनने के बावजूद भी लाला प्रेमचंद जैन-खारीबावली दिल्ली वालों को चैन न पड़ी। हम लोग ''गायत्री भवन'' में ठहरे हुए थे, जब उन्होंने पूज्य माताजी से सारे कुशल समाचार पूछ लिए, तभी चैन की साँस लेकर स्नान-भोजन आदि किया।

पुनः प्रेमचंद जी तीन-चार दिन संघ के साथ ही रहे और संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों से सारी संघ व्यवस्था संबंधी जानकारी लेकर कहने लगे कि **''पूज्य माताजी हमारे देश की ऐसी निधि हैं, जिनके समक्ष सोना, चाँदी, हीरा, मोती, माणिक्य सारे रत्नों की कीमत भी कुछ नहीं है। इन्हें जरा भी कष्ट होते ही हम लोग बेचैन हो जाते हैं, आप लोग इनकी स्वस्थता का पूरा ध्यान रखें क्योंकि हम लोगों को अभी इन्हें कुशलतापूर्वक इधर से विहार कराकर दिल्ली ले जाना है और बड़े-बड़े धर्मकार्य इनके माध्यम से सफल करना है।**

उनकी यह भक्तिपूर्ण वार्ता सुनकर मैंने कहा–प्रेमचंद जी! असाता कर्म के आगे कभी-कभी बाह्य उपचार भी असफल हो जाते हैं। माताजी इन छोटे-छोटे कष्टों से कभी घबराती नहीं हैं, उनका तत्त्वज्ञान, भेदविज्ञान बहुत दृढ़ है अतः आप लोग भी घबराया मत करो। आपकी माताजी को हम लोग कुशलतापूर्वक ही सदा देखते हैं और सकुशल ही ये दिल्ली तक की लम्बी यात्रा भी तय कर लेंगी। खैर! अपनी गुरुभक्ति का परिचय देकर वे श्रावकरत्न तो वापस चले गए किन्तु उनकी भावनाओं की चर्चा हम कई दिन तक करते रहे।

➢गुरु चरणों से शहर की सारी गंदगी वर्षा में धुल गई–

9 जुलाई की रात्रि में बहुत घनघोर वर्षा हुई। पूज्य माताजी के पास ही गायत्री भवन के हॉल में सारी ब्रह्मचारिणी बहनें सोई हुई थीं। लगभग 11 बजे से 2 बजे रात तक भीषण दुर्गन्ध युक्त बदबू ने हम सबको बेचैन कर दिया, किसी तरह प्राणायाम पूर्वक बैठकर हम सब लोग माला फेरते रहे पुनः कुछ देर तक बदबू शान्त होने के बाद किंचित् निद्रा आई और सुबह उठकर प्रतिक्रमण, सामायिक आदि नित्य क्रिया के पश्चात् मैंने कहा कि आज यहाँ से कहीं अन्यत्र विहार कर देना चाहिए क्योंकि इस दुर्गन्ध में 3-4 दिन निकाल पाना बड़ा कठिन है।

हम लोगों की आकुलता देखकर पूज्य माताजी कहने लगीं–''बेटा! साधु को सुगंध और दुर्गन्ध दोनों में समता भाव रखना होता है।'' दूसरी बात मुझे लगता है कि यहाँ पास में कोई बड़ा नाला है और उसमें पूरे शहर की गंदगी बहकर आई थी, उसी कारण बदबू फैल गई थी संभवतः इस तेज बरसात में वह सारी बह गई होगी, तो अब वातावरण स्वच्छ होकर सब ठीक हो जाएगा।

थोड़ी देर बाद वहाँ के एक गुरुभक्त महानुभाव श्री हीरालाल जैन पहाड़े आए, वे कहने लगे कि माताजी! यहाँ आपके चरण पड़ते ही दुष्काल घोषित होते-होते बच गया। 4-5 वर्षों बाद पहली बार इधर ऐसी वर्षा हुई है, किसानों

को इससे भारी राहत मिली है। हमारे थोड़े से बदलते रुख को देखकर वे बोले कि मालेगांव में 80 प्रतिशत मुसलमान जनता रहती है इसीलिए यहाँ का पर्यावरण दूषित रहता है किन्तु आज वह सारी गंदगी आपके आशीर्वाद से धुलकर बह गई है, अब कोई बदबू नहीं आएगी। हमें आप लोग आशीर्वाद और शक्ति प्रदान करें कि हम जैन कालोनी के निकट अपने साधुओं के लिए **''त्यागी भवन''** बनाएँ ताकि उनकी चर्या निर्बाधरूप से चल सके। अभी हमें मजबूरी में त्यागियों को यत्र-तत्र ठहराना पड़ता है।

याद रहे, मालेगांव में लगभग 100 घर दिगम्बर जैन धर्मावलम्बियों के हैं, जो आस-पास के गाँवों से यहाँ आकर बसे हैं और सबके सहयोग से वहाँ एक विशाल दिगम्बर जैन मंदिर एवं जैन धर्मशाला का निर्माण हुआ है।

इसके पश्चात् चाँदवड़ (महाराष्ट्र) जाकर 26 जुलाई 1996 को वापस मांगीतुंगी पहुँचे तथा 29 जुलाई को वहाँ वर्षायोग स्थापन हुआ। पुनः 11 नवम्बर को चातुर्मास सम्पन्न करके 15 नवम्बर 1996 (कार्तिक शु. 5) को दिल्ली की ओर मंगल विहार हुआ।

➢समाजों की समयसूचकता–

राजस्थान में ''रठोड़ा'' नामक एक छोटा सा गाँव है, जहाँ जैन समाज अत्यन्त श्रद्धालु गुरुभक्त है। हमें पहले ही ज्ञात हो गया था कि इस गाँव में 6-7 श्रावक मुनि बन चुके हैं। आचार्य श्री धर्मसागर महाराज के संघ में मुनि श्री भूपेन्द्र सागर एवं योगेन्द्र सागर महाराज समाधिस्थ हो चुके हैं उनके गृहस्थावस्था के भाई-बन्धुओं ने भी आकर पूज्य माताजी से रठोड़ा चलने का खूब आग्रह किया। छोटा गांव होने के नाते गलियाँ थोड़ी गंदी भी थीं लेकिन सबकी पवित्र भावना देखते हुए संघ को वहाँ जाना पड़ा।

आगे के अपने निश्चित कार्यक्रम के अनुसार 28 जनवरी 1997 को वहाँ आहार हुआ और मध्यान्हकालीन प्रवचन के पश्चात् शाम 3.30 बजे वहाँ से विहार हो गया। काफी दूर तक गांव के सैकड़ों नर-नारी भेजने आए, रास्ते में चलते हुए हमने कुछ लोगों से पूछा कि **''आप लोगों ने आज पूरे दिन हमारे प्रवास, जुलूस आदि किसी भी आयोजन में अपने गाँव के साधुओं की एक बार भी जयकार नहीं बोली, क्या आप लोगों की उनके प्रति श्रद्धा नहीं है?''**

यह सुनकर रठोड़ा समाज के प्रमुख लोग कहने लगे कि ''माताजी! हमारी नीति तो यह है कि जिस दूल्हे की बारात निकलती हो, उसके ही गीत गाने चाहिए। जो साधु हमारे गांव में आते हैं, हम उनकी जयकार करते हैं।

हमारे गांव के साधुओं में हमारी पूरी श्रद्धा है तथा आप जैसे लोगों के मुखारविन्द से हम अपने साधुओं की प्रशंसा सुनकर असीम प्रसन्नता का अनुभव कर लेते हैं और हम यह सोचते हैं कि हमारे जय बोलने की अपेक्षा दूसरों से सुनना ज्यादा अच्छा है क्योंकि अपने ही मुँह मियां मिट्ठू बनने में क्या मजेदारी है?''

इसी प्रकार का वातावरण आचार्य शांतिसागर महाराज छाणी वालों की जन्मभूमि छाणी (राजस्थान) में भी देखने को मिला। गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र आदि प्रान्त के अनेक ऐसे गाँव के श्रावकों की समयसूचकता वास्तव में सभी के लिए अनुकरणीय आदर्श के रूप में प्रतीत हुई। इस प्रवास के मध्य एक स्थान ऐसा भी मिला, जहाँ पर ज्ञात हुआ कि जो भी साधु यहाँ आते हैं, उनसे इस गांव के जन्में साधु की जय बोलने की जबर्दस्ती कुछ लोग करते हैं लेकिन यह वास्तविक गुरुभक्ति का नमूना नहीं है क्योंकि यह विषय साधुओं की व्यक्तिगत श्रद्धा का है, समाज को इसमें उन्हें बाध्य नहीं करना चाहिए। हाँ! चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज की जय प्रत्येक धर्म सभाओं में अवश्य बोलना चाहिए क्योंकि उनकी ही कृपा से इस बीसवीं शताब्दी में दिगम्बर सन्तों के निर्बाध रूप से दर्शन प्राप्त हो रहे हैं।

मेरी दृष्टि से तो प्रत्येक जिनमंदिरों के अंदर और बाहर पेन्टर से निम्न पंक्तियाँ लिखवा देनी चाहिए, जो बच्चे-बच्चे के मुँह से जुलूस आदि के नारे के रूप में उच्चारण भी कराना चाहिए–

1. **गली-गली में गूंजे नाद–**ऋषभदेव जय आदिनाथ।।
2. **जैनं जयतु शासनम्–**वन्दे शान्तिसागरम्।।

➢साधु के मान ही नहीं तो अपमान कैसा?

धर्मप्राण भारतदेश की इस वसुधा पर सन्तों के प्रति आस्था लगभग सभी सम्प्रदायों में आज भी चरमसीमा पर देखी जाती है और दिगम्बर जैन साधु-साध्वियों के कठोर त्याग के प्रति तो प्रत्येक प्राणी नतमस्तक होकर गौरव का अनुभव करता है, फिर भी कभी-कभी पदविहार करते हुए हम साधुओं को कुछ विपरीत अनुभव भी आते हैं।

दिनाँक 25 जुलाई 1996 की बात है, जब संघ मांगीतुंगी में चातुर्मास स्थापित करने हेतु चाँदवड़ (महाराष्ट्र) से मांगीतुंगी जा रहा था, बीच में तहाराबाद से पूर्व करंजाड नाम का एक छोटा सा गांव था। वहाँ स्कूल में व्यवस्थापकों ने आहार की व्यवस्था की थी। हम लोग जब वहाँ पहुँचे, तो संघस्थ बहनों ने चौके के बाहर बरामदे में ही हमारे बैठने का इंतजाम किया

था, पूछने पर ज्ञात हुआ कि यहाँ के लोग अन्य कमरे नहीं देंगे। आमने-सामने वहाँ दो स्कूल थे, उनमें कमरे भी खुले हुए साफ दिख रहे थे किन्तु स्कूल के लोगों की अनुमति बिना संघ का कोई व्यक्ति उनमें घुसा नहीं और जैसे-तैसे तकलीफ सहन करके शुद्धि, आहार आदि सभी कार्य किये गये।

हम लोग आपस में विचार करने लगे कि देखो। बेचारे अज्ञानी जीवों की कैसी स्थिति है, जो साधुचर्या की महत्ता ही नहीं जानते हैं। खैर! साधुओं को तो हर तरह के प्रसंगों में समता भाव रखकर खुशी-खुशी उन्हें झेलना होता है। हमने कहा कि एक ही दिन में दो तरह के अनुभव आ गये। कल शाम को यहाँ से 9 किमी. पहले बनौली नामक ग्राम में हम एक अजैन व्यक्ति के यहाँ रात्रि विश्राम करके आज सुबह वहाँ से निकलने लगे, तो पास के घर वाले एक सज्जन ने पूज्य माताजी के चरणस्पर्श करते हुए कहा कि "मेरे भाग्य में आपका सत्संग नहीं था इसीलिए आप मेरे यहाँ नहीं ठहरीं, जबकि मैंने कल बड़े उत्साहपूर्वक अपना मकान खाली कर दिया था कि माताजी यहाँ ठहरेंगी और हमें उनसे धर्मलाभ का अवसर प्राप्त होगा।"

इस विषय में हमें कुछ मालूम भी नहीं था, पिछले गाँव सटाणा के श्रावकों ने जहाँ बताया, हम वहीं रुक गए। उन महानुभाव की आँखों में प्रेम के अश्रु आ गये तो माताजी ने उन्हें सांत्वना देते हुए खूब-खूब आशीर्वाद प्रदान किया और विहार करके आगे करंजाड आकर इससे ठीक विपरीत स्थिति देखी, तो हँसी भी आई और उन जीवों पर करुणा भी जागृत हुई।

मध्यान्ह की सामायिक के बाद माताजी ने मुझे एवं मोतीसागर जी को कहा कि **"स्कूल के अध्यापक एवं बच्चों को प्रवचन सुनाना है।"** तब मैंने अवश्य कहा कि "माताजी! इतनी उदारता तो नहीं करनी चाहिए जहाँ साधुओं के प्रति श्रद्धा के भाव नहीं हैं, वहाँ फालतू प्रवचन करने से क्या लाभ?" किन्तु माताजी कहने लगीं – नहीं बेटा! ऐसा नहीं सोचा जाता है, धर्म से अनभिज्ञ इन अज्ञानी प्राणियों को सम्बोधन प्रदान करना साधुओं का कर्तव्य है। इन प्रसंगों में हमें अपना अपमान नहीं मानना चाहिए क्योंकि मेरे गुरु महाराज आचार्य शांतिसागर एवं वीरसागर महाराज कहा करते थे कि साधु के जब मान ही नहीं होता, तो उनका अपमान कैसे हो सकता है?

पुनः हम लोगों ने वहाँ प्रवचन किया, प्रश्नमंच करके बच्चों को 10 पुरस्कार भी प्रदान किये गये। यह सब देखकर स्कूल के अध्यापक एवं बच्चे सभी जैन सन्तों की चर्या से अत्यन्त प्रभावित हुए और कई लोगों ने शराब,

अण्डा, माँस, बीड़ी, सिगरेट, जुआ आदि व्यसनों का त्याग किया, जिससे हम लोगों को भी बड़ी प्रसन्नता हुई।

वास्तव में जैन साधुचर्या की यह विचित्रता ही है। अनेक शहर एवं नगरों में जैन श्रावक बेचारे तरसते रहते हैं कि महाराज या माताजी के चरण किसी तरह मेरे घर में पड़ जाएँ किन्तु आहार का चौका या चैत्यालय हुए बिना अथवा किसी विशेष प्रसंग के अतिरिक्त साधु उनके यहाँ जाते नहीं हैं किन्तु विहार करते हुए मार्ग में स्कूलों में तथा पटेल, पाटील, वैष्णव मकान-मंदिर आदि स्थानों पर हम लोग अपने आप ठहरते हैं क्योंकि 15 से 25 किमी. से अधिक एक दिन में पदविहार नहीं हो पाता है।

➢संघर्ष विजय में परिवर्तित हो गये –

पूज्य ज्ञानमती माताजी ने अपने गुरु की सूक्ति का सदैव पालन करके संघर्षों पर विजय प्राप्त की है कि **"सुई का काम करो कैंची का नहीं"** अर्थात् सामाजिक संगठन पर बल देकर सबको एकता के सूत्र में बाँधना चाहिए, विघटन का कार्य कभी नहीं करना चाहिए। मंगल विहारों के मध्य यूँ तो अनेक स्थानों पर कई संघर्ष समाप्त होकर सामाजिक एकता की स्थापना हुई है किन्तु कुछ स्थान तो इस बात के अमिट संस्मरण ही बनकर रह गए। जैसे –

1. उज्जैन (म.प्र.) की दिगम्बर जैन समाज में कई वर्षों से आपसी फूट थी। जिसके कारण मुनिसंघ व्यवस्था कमेटी के मंच पर भी कभी उन विरोधियों को बिठाया नहीं जाता था। महावीर जयंती के वार्षिक कार्यक्रम भी दोनों ग्रुप अलग-अलग मनाकर दो रथयात्रा निकालते थे। ये सब बातें माताजी को ज्ञात हुईं तो वहाँ 6 मार्च 1996 को जब माताजी का 43वाँ क्षुल्लिका दीक्षा दिवस मनाया जा रहा था एवं माताजी की प्रेरणा से वहाँ जयसिंहपुरा में "भगवान् महावीर तपोवन" का शिलान्यास हो रहा था, उसी मंगलबेला में माताजी ने दोनों पक्षों को निष्पक्षरूप से समझाकर क्षणमात्र में सभा के अंदर परस्पर में क्षमायाचना करवा कर उन्हें गले मिलवा दिया और सभा में दोनों पक्षों की ओर से घोषणा कर दी गई कि **"आज से हम सब एकजुट होकर धर्मप्रभावना के कार्य करेंगे, महावीर जयंती में एक ही रथ निकलेगा, उस दिन सबका सामूहिक भोज होगा तथा उज्जैन में पधारने वाले सभी साधु-साध्वियों का सदैव सम्मान होगा इत्यादि।"**

2. हम लोग तेज रफ्तार से मांगीतुंगी की ओर बढ़े जा रहे थे कि 16 अप्रैल 1996 को नरडाणा (महाराष्ट्र) के निकट एक लोहा फैक्ट्री में रात्रि

विश्राम था। 17 अप्रैल को प्रातः विहार करके सोनगिर पहुँचना था तभी प्रातः 5 बजे मांगीतुंगी से ब्र. गणेशीलाल जी (महामंत्री क्षेत्र कमेटी), डा. पन्नालाल पापड़ीवाल (महामंत्री-मांगीतुंगी पंचकल्याणक समिति), रविकुमार जैन (ट्रस्टी) आदि कई लोगों ने आकर मांगीतुंगी में कल 16 तारीख को घटी अघटित घटना के बारे में बताते हुए काफी चिन्ता एवं रोष व्यक्त किया। उनकी संक्षिप्त रिपोर्ट सुनकर पूज्य माताजी के मुँह से तत्काल निकल पड़ा कि **''कोई चिन्ता मत करो, संकट आया था, टल गया, अब तुम्हारा कार्यक्रम बिल्कुल निर्विघ्न शानदार सम्पन्न होगा। यदि किसी ने इसमें विघ्न डालने का जरा भी दुष्प्रयास किया, तो वह सफल नहीं हो पायेगा। तुम लोग अपने कार्य में लग जाओ और दूसरी ओर कोई लक्ष्य मत दो।''**

यह गुरुवाणी सुनकर सभी कार्यकर्त्ता प्रसन्न होकर अपने-अपने कार्यों में संलग्न होकर प्रतिष्ठा के कार्य में लग गये। 2-4 दिन बाद सारे विघ्न स्वयमेव शान्त हो गये और माताजी के संघ का मांगीतुंगी में पदार्पण, ग्यारह सौ पचास प्रतिमाओं का पंचकल्याणक एवं मुनिसुव्रत भगवान् की 21 फुट उत्तुंग प्रतिमा का महामस्तकाभिषेक आदि समस्त समारोह आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न हुए। वहाँ उपस्थित 1 लाख जनता को देखकर महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री मनोहर जी जोशी भी भाषण में कहने लगे कि **मैंने आज तक महाराष्ट्र की किसी राजनीतिक सभा में भी इतनी अपार भीड़ नहीं देखी।**

3. मांगीतुंगी से हम सभी वापस दिल्ली की ओर अत्यन्त शीघ्रता के साथ विहार कर रहे थे, रास्ते में 27 फरवरी को राजस्थान का एक नगर ''केकड़ी'' आया, वहाँ प्रातः 9 बजे पहुँचे और मध्यान्ह 3 बजे विहार हो गया किन्तु इन छह घंटों में ही केकड़ी की काया पलट हो गई। वहाँ अत्यन्त प्राचीन प्रतिमाओं सहित चार जिनमंदिरों के दर्शन किये और एक नवनिर्मित श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में जगह देखकर माताजी ने सम्मेदशिखर की रचना निर्माण की बात कही, तो तुरंत दानदातारों की इच्छा साकार हो गई और पूरा प्रारूप 15 मिनट में तैयार होकर आर्थिक लाभ से भी परिपूर्ण हो गया।

मध्यान्ह में 1 बजे से उसी मंदिर के विशाल हॉल में प्रवचन सभा चल रही थी, इसी मध्य 1-2 महानुभावों ने क्षुल्लक मोतीसागर जी को बताया कि यहाँ कई वर्षों से समाज में काफी आपसी संघर्ष चल रहा है, इस मंदिर की मूर्ति पर कोर्टकेस चल रहा है, हम लोग इस फूट के कारण परेशान हैं। पूज्य माताजी यदि हमारे इस झगड़े को मैत्री में परिवर्तित करा दें, तो हम

उनके बड़े आभारी होंगे।

मेरे प्रवचन के बीच में ही महाराज जी ने पूज्य माताजी को सारी बात बताई, तभी ज्ञात हुआ कि जो सज्जन इस मंदिर में कभी पैर भी नहीं रखते थे, वे आज आप लोगों का प्रवचन सुनने यहाँ आए हैं और उन्होंने सम्मेदशिखर की नवनिर्माण योजना में आज पहला नाम अपना लिखाया है। किसी व्यक्ति ने आकर यह भी बताया कि कई सन्तों एवं महानुभावों ने अनेक बार इस विषय में पुरुषार्थ किये हैं लेकिन आज तक सफलता नहीं मिल सकी है।

पूज्य माताजी ने संक्षेप में ही स्थिति का परीक्षण किया और सभा में उन दोनों पार्टियों को सम्बोधन प्रदान किया। सारी समाज आश्चर्यचकित हो देख रही थी कि कौन सा जादू हो गया है! संयोगवश उस लघु सम्बोधन से ही दोनों प्रतिद्वन्द्वी आपस में क्षमायाचना करके सबके सामने गले मिल गये तभा सभा में घोषणा कर दी कि आज से हमारा समस्त वैर विरोध समाप्त हो गया तथा हम आगे सभी कार्यों में पूरा सहयोग प्रदान करेंगे। सभी नर-नारियों के नेत्रों में हर्ष के अश्रु थे एवं धन्य-धन्य, जय-जय की ध्वनि सबके मुख से निकल रही थी। बेचारे जोर-जोर से कहने लगे कि ऐसी माता यहाँ फिर-फिर आवें, हे ज्ञानमती माताजी! तुम्हारी आयु में मेरे जीवन के क्षण भी लग जाएँ, तुम्हें ऐसी लम्बी उमर मिले।

यहाँ से विहार करने के बाद भागचन्द जैन एडवोकेट रास्ते में कहने लगे कि आज यहाँ जो आश्चर्यजनक कार्य 6 घण्टे में हुए हैं, वे छह माह में भी संभव नहीं थे। माताजी! हमारे केकड़ी के लोग आज अतीव प्रसन्न हैं, आपने जो सामाजिक एकता हमारे यहाँ स्थापित करवा दी है, उस उपकार को हम लोग कभी भूल नहीं सकते हैं।

यहाँ प्रसंगोपात्त मुझे ध्यान आ गया कि 3-4 दिन पहले केकड़ी से भागचन्द जी वकील साहब, मोहनलाल जैन कटारिया आदि कुछ महानुभाव शाहपुर में माताजी को आमंत्रण देने आए थे पुनः विहार में मेरे साथ पैदल चलते हुए वकील साहब ने मुझे कहा–''माताजी! कल सोते हुए पिछली रात्रि में मैंने स्वप्न देखा कि एक बड़े से हाथी के ऊपर एक छोटा हाथी चढ़ा हुआ है एवं दोनों प्रेमपूर्वक आलिंगन कर रहे हैं। मेरे इस स्वप्न का क्या फल हो सकता है? कृपया आप बताने का कष्ट करें कि यह मेरे शुभ का प्रतीक है या अशुभ का?

मैंने कहा कि देखो! न तो मुझे निमित्त ज्ञान है, न ही ज्योतिषज्ञान, किन्तु आपका स्वप्न सुनकर जरुर लगता है कि यह किसी न किसी मंगल

मिलन का प्रतीक है। वकील साहब बोले कि पूज्य ज्ञानमती माताजी जैसी महान् साध्वी के दर्शन से ज्यादा और मंगल मिलन क्या होगा? लेकिन आज जब अनहोना सामाजिक संगठन का कार्य हुआ, तब मैंने वकील साहब से कहा कि आपका स्वप्न वास्तव में तो आज साकार हुआ है।

केकड़ी में निवाई (राज.) के कई लोग पूज्य माताजी को निवाई चलने का आग्रह करने हेतु आए हुए थे, यह सारा चमत्कार प्रत्यक्ष अपनी आँखों से देखकर लालचन्द जी, भागचन्द जी आदि महानुभाव विनम्र निवेदन करने लगे कि माताजी! हमारे निवाई में पिछले वर्ष से काफी सामाजिक फूट हो गई है, हम लोग उससे बहुत दुःखी हैं। हमें विश्वास है कि आपके चरण पड़ने से वहाँ भी अपूर्व शांति की स्थापना होगी अतः आप दया करके वहाँ जरुर चलें। उनके अत्यन्त आग्रह के बावजूद भी चूँकि माधोराजपुरा, जयपुर और दिल्ली पदार्पण की तारीखें पहले ही निश्चित हो चुकी थीं अतः निवाई वालों को निराश होना पड़ा पुनः वहाँ के लालचन्द जी हमारे साथ में आमेर तक बराबर पैदल चलते रहे और वापस जाते समय उनकी आँखों से धर्मप्रेम की अविरल अश्रुधारा निकल रही थी, जो उनकी गुरुभक्ति का प्रतीक थी।

➢कादेड़ा ग्राम शायद इसी इन्तजार में था–

25 फरवरी 1997 की शाम को हम लोग बच्छखेड़ा से कादेड़ा पहुँचे, वहाँ मेनरोड पर ही बसे गाँव में लालमिर्चों का बाजार होने के कारण भीषण तीक्ष्णता थी। कु. बीना शास्त्री वहाँ का सर्वे करके जब वापस आई तो खूब छींक रही थी, उसने बताया कि गाँव में तो धाँस के कारण आप लोग ठहर ही नहीं सकती हैं इसीलिए मैं गाँव के पहले स्कूल में रात्रि विश्राम की व्यवस्था करके आई हूँ। हम सब वहीं जाकर ठहरे पुनः 26ता. को प्रातः आगे ''खबास'' गाँव के लिए विहार करते समय सड़क पर ही बने जिनमंदिर के दर्शन किए, वहाँ पूज्य माताजी का मंगल प्रवचन भी हुआ किन्तु वहाँ विचित्र स्थिति देखने को मिली कि–

मंदिर में प्राचीन सुन्दर संगमरमर की कलात्मक वेदी बनी हुई है लेकिन बड़ी-बड़ी पद्मासन मूर्तियाँ बाहर रखी हुई हैं और वेदी बिल्कुल खाली पड़ी है। पूछने पर ज्ञात हुआ कि 30 साल से वेदी बनी हुई है किन्तु वेदी प्रतिष्ठा, शुद्धि आदि नहीं हो पा रही है। यहाँ जैन समाज के मात्र 8-10 घर हैं, वे सब कार्य में ढीले हैं, उदासीन हैं, इसीलिए आज तक यह कार्य नहीं हो पाया। क्षुल्लक मोतीसागर जी ने रास्ते में भी उन लोगों को काफी प्रेरणा दी कि वेदी में भगवान्

शीघ्रातिशीघ्र विराजमान करो, इससे समाज की उन्नति होगी।

उनके द्वारा ठीक से स्वीकार न करने पर **''केकड़ी''** के श्रावकों के ऊपर इस कार्य का भार डालते हुए कहा गया कि आप साधारण आयोजन करके 2-4 हजार रुपया खर्च कर वेदी प्रतिष्ठा करा लें, हम हस्तिनापुर से विद्वान् भेजकर यह सारा काम बिल्कुल संक्षेप में करा देंगे पुनः घीसालाल जैन केकड़ी ने आश्वासन दिया और पूज्य माताजी ने तुरंत 10 मार्च से 13 मार्च 1997 का मुहूर्त निश्चित करके सभा में घोषणा कर दी।

निश्चित मुहूर्त के अनुसार पंडित प्रवीणचंद शास्त्री-जम्बूद्वीप, हस्तिनापुर को वहाँ भेजा गया, वेदी प्रतिष्ठापूर्वक भगवान् वेदी में विराजमान हो गये। सभी ने आनन्द विभोर होकर खूब जयजयकार किया पुनः कुछ महानुभाव आकर जयपुर में हम लोगों से बताने लगे कि माताजी! 5-7 हजार की भीड़ कादेड़ा में हुई तथा कई लाख रुपये की बोलियाँ हो गईं, बहुत अच्छा समारोह आपके आशीर्वाद से सम्पन्न हुआ, आगे भी आप हम सभी पर ऐसी ही कृपादृष्टि रखिएगा।

ऐसी अनहोनी घटनाएँ वास्तव में अपूर्व संयोग या होनहार को ही सूचित करती हैं अन्यथा जो कार्य 30 वर्ष से रुका पड़ा था, वह ज्ञानमती माताजी के क्षणिक पदार्पण से पूर्ण हो जाए, प्रबल निमित्त के अतिरिक्त इसे और कुछ नहीं कहा जा सकता है।

➢काल के अनुसार साधुचर्या पर चिन्तन होना चाहिए–

हम लोग गुजरात के एक शहर ''ईडर'' में गए। वहाँ अत्यन्त भक्तिमान समाज है तथा मंदिरों में काफी प्राचीन प्रतिमाएँ हैं। यहाँ एक छोटी सी पहाड़ी पर दिगम्बर जैन मंदिर है, उसे पूज्य माताजी की प्रेरणा से ''ऋषभदेवगिरि'' नाम प्रदान किया गया है।

इस ईडर शहर में आहारचर्या के समय मैं 3-4 चौके से वापस लौटी पुनः प्रकाशचन्द जैन नाम के श्रावक के चौके में आहार हुआ। कारण यह था कि चौके में स्टोव पर खाना बनाया गया था और आहार के समय स्टोव बाहर कर दिये जाने पर भी मिट्टी के तेल (घासलेट, कैरोसिन) की काफी दुर्गन्ध थी। मुझे समझ में नहीं आया कि आहार करूँ या न करूँ? क्योंकि अभी तक अपनी संघ परम्परा (आचार्य शांतिसागर परम्परा) में गैस या स्टोव का बना भोजन साधुओं के आहार में खुला नहीं है। इसीलिए मैं उन घरों से लौट आई एवं प्रशस्त चौके में आहार करने के बाद मैंने पूज्य माताजी से निवेदन किया कि

ऐसे अवसर पर क्या करना चाहिए?

उन्होंने तो मुझे कहा कि तुमने ठीक किया। चूँकि इस विषय पर अभी कोई सामूहिक निर्णय नहीं हुआ है इसीलिए पुरानी परम्परानुसार लकड़ी या कोयले की अग्नि पर बना भोजन ही अपने को लेना है।

फिर भी मेरा कहना यही है कि इन सामयिक समस्याओं पर साधुओं को एकजुट होकर मीटिंग करना चाहिए और कुछ तथ्यों की सामूहिक उद्घोषणा होनी चाहिए। जैसे आज से 32 वर्ष पूर्व दिसम्बर 1974 में परमपूज्य आचार्य श्री धर्मसागर महाराज ने मेरठ शहर की रेलवे रोड स्थित धर्मशाला में बैठकर 40 साधु-साध्वियों के बीच में कुएँ के जल से संबंधित निर्णय लिया था कि बोरिंग एवं हैण्डपम्प का जल कुएँ के समान ही शुद्ध है क्योंकि आजकल गाँवों के कुएँ सूख गए हैं, उनका पानी सड़ रहा है तथा घरों की छोटी चक्की का आटा चौके में प्रयोग किया जा सकता है.....इत्यादि पुनः फरवरी 1975 में हस्तिनापुर में आचार्यश्री ने चौके के चंदोवे के विषय में निर्णय दिया कि लिन्टर वाली साफ-सुथरी छतों में बिना चंदोवे के भी आहार हो सकता है और कड़ियों की घास-फूस वाली छत में चंदोवा लगाना आवश्यक है। इन्हीं निर्णयों के अनुसार उस संघ परम्परा में मध्यम स्तरीय क्रियाओं का परिपालन चल रहा है। संभवतः इन्हीं जैसी तमाम समस्याओं के समाधान हेतु ही मूलाचार में आचार्य श्री कुंदकुंददेव ने पाँच-पाँच वर्ष में साधुओं को एक जगह एकत्रित होकर **''युगप्रतिक्रमण''** करने का निर्देश दिया है लेकिन वर्तमान में वह परम्परा लुप्त ही हो गई। सन् 1987 में हस्तिनापुर में पूज्य ज्ञानमती माताजी ने आचार्य विमलसागर महाराज के साथ में उस युगप्रतिक्रमण का प्रारंभीकरण किया और उसके बाद वे अपने संघ में ही 5-5 वर्ष के बाद यह प्रतिक्रमण किया करती हैं। क्या ही अच्छा हो, यदि 1000 की संख्या में विद्यमान आचार्य, उपाध्याय, मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक-क्षुल्लिका आदि सभी किसी तीर्थ या शहर में एकत्रित होकर उदार भाव से एक-दूसरे के अनुभव सुनें एवं सब मिलकर कुछ न कुछ समाधान ढूँढकर समाज में एक सदृश प्रवृत्ति का दिग्दर्शन करायें।

➢स्वप्न में सरस्वती की बात साकार हो गई–

पूज्य गणिनी माताजी ने 8 अक्टूबर 1995 को हस्तिनापुर में जैन सिद्धान्त के सर्वोच्च सूत्रग्रंथ षट्खण्डागम की ''सिद्धान्तचिन्तामणि'' नाम की संस्कृत टीका लेखन का दुरूह कार्य शुरू किया था पुनः 27 नवम्बर को मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र के लिए हस्तिनापुर से विहार कर दिया, तब तक केवल 25-30 पृष्ठों

का लेखन हुआ था, इस बारे में उन्हें एक दिन चिन्ता हो गई कि मैंने इतना लम्बा विहार सोच तो लिया है किन्तु मेरा यह लेखन का कार्य रास्ते में तो हो नहीं सकता है, कैसे और कब यह टीका पूरी होगी?

संयोगवश दूसरे दिन रात्रि में माताजी ने स्वप्न देखा कि ''सरस्वती माताजी साक्षात् प्रगट होकर मुझसे कह रही हैं– **ज्ञानमती जी! तुम चिन्ता मत करो, तुम्हारा लेखन बराबर चलता रहेगा, रास्ते में तुम्हें कोई बाधा नहीं होगी।''**

माताजी ने सुबह मुझे बताते हुए कहा कि **''जीवन में पहली बार मेरी सरस्वती माता से वार्ता हुई है। पता नहीं कितनी सफलता मुझे मिलेगी!''**

आश्चर्य ही नहीं, शायद यह अतिशयोक्ति ही है कि इस यात्रा में भी माताजी का लेखन कार्य बराबर चलता रहा और 7 मार्च 1997 को कुल 463 दिन में 1000 (एक हजार) पृष्ठों में प्रथमखण्ड की छहों पुस्तकों की संस्कृत टीका का ऐतिहासिक लेखन कार्य पूर्ण किया एवं द्वितीय खण्ड का कार्य प्रारंभ किया।

इस मध्य मांगीतुंगी से विहार करते समय भी ठीक उसी प्रकार का स्वप्न हुआ कि सरस्वती माता कह रही हैं– **देखो ज्ञानमती जी! मैंने तुमसे कहा था न कि तुम्हारा काम नहीं रुकेगा। अब तो तुम खुश हो?**

सुबह होते ही फिर पूज्य माताजी कहने लगीं– चन्दनामती! देखो, सरस्वती माता की कही हुई सारी बातें कैसी साकार हो रही हैं। मैंने तो जीवन में पहली बार ही इस प्रकार स्वप्नों में सरस्वती देवी से साक्षात्कार किया है।

आज के क्षणों में मुझे लगता है कि जैसे पुष्पदन्त-भूतबली मुनियों के समक्ष मंत्र सिद्ध से देवियाँ प्रगट हो गई थीं और उनके द्वारा षट्खण्डागम सूत्रग्रंथ का लेखन पूर्ण कर दिये जाने पर देवताओं ने आकर उनकी पूजा की थी, उसी प्रकार यदि शारदा माता की दीर्घकाल से सेवा कर रहीं अर्थात् साहित्य सृजन कर रहीं ज्ञानमती माताजी से प्रसन्न होकर चक्रेश्वरी आदि कोई व्यन्तर देवियाँ स्वप्न में उन्हें समाधान देकर सन्तुष्ट कर दें, तो शायद कोई अतिशयोक्ति वाली बात नहीं है।

➢दिल दहल गया वह दृश्य देखकर–

19 जनवरी 1997 को हम ''हाथरवा'' से ''बड़ाली'' नामक गाँव में पहुँचे। वहाँ स्कूल में ठहरे, एक दिगम्बर जैन डॉक्टर महानुभाव के घर में चौके लगे, वहाँ आहार के पश्चात् ''खेडब्रह्मा'' की ओर विहार करते समय कुछ लोगों ने

बताया कि यहाँ अभी कुछ माह पूर्व भूगर्भ से 27 जिनप्रतिमाएँ निकली थीं, उनमें से लगभग 15-16 प्रतिमाएँ तो ईडर के दिगम्बर जैन श्रावकों ने ले जाकर वहाँ मंदिर में विराजमान की हैं, जिनके दर्शन भी हम लोग करके आए हैं, इसके अतिरिक्त 26 प्रतिमाएँ यहाँ श्वेताम्बर जैन मंदिर में विराजमान हैं।

हम उन्हें देखने गाँव के भीतर गए, तो उस दर्जी के घर को देखा जहाँ बाथरूम बनाने के लिए खुदाई करते हुए अचानक वे सारी प्रतिमाएँ भूगर्भ से निकल पड़ीं। बड़ाली में चूँकि दिगम्बर जैन समाज है नहीं, श्वेताम्बरों की वहाँ पर बहुलता है इसीलिए दिगम्बर समाज को वे सारी मूर्तियाँ नहीं मिल सकीं। हम जब उस श्वेताम्बर मंदिर में उन मूर्तियों की स्थिति देखने गये तो सचमुच दिल दहल गया। उन लोगों ने मूर्तियों को अपने कब्जे में ही नहीं किया बल्कि सभी प्रतिमाओं के लिंग काट दिए। वैसे यह अत्यन्त विचारणीय जघन्य कार्य है। नई मूर्तियों का निर्माण अपने-अपने मतानुसार कोई भी करा ले, यह तो सहज सुलभ है किन्तु प्राकृतिक दिगम्बर प्राचीन प्रतिमाओं की दिगम्बरत्व मुद्रा काटने का दुःसाहस भला अगले भव में क्या फल प्रदान करेगा? थोड़ा सोचें एवं पाप भीरु बनें कि यदि हम किसी साधारण मनुष्य, जो अपना शत्रु है, उसके भी कोई अंग प्रत्यंग को काट दें तो एक नैतिक अपराध माना जाता है, तो तीन लोक के नाथ भगवान की प्रतिमाओं पर ऐसे प्रहार करना अपराध है या नहीं? स्वयं चिन्तन करें।

➢साधु बने हैं तो सहना ही पड़ेगा–

कई बार आहार के पश्चात् महिलाओं को एक गीत गाते सुना जाता है–

''माताजी दीक्षा दे दो, चलूँगी थारे साथ।
मैं लड्डू खाने वाली, मुझे रोटी लगे उदास।
रोटी में गुजर करूँगी, चलूँगी थारे साथ।।''

यह गीत सुनकर कभी मैं हँसा करती थी और सोचा करती थी कि ''श्रावक लोग तो बेचारे भक्तिवश चौके में इतनी सारे चीजें बनाते हैं कि हम साधुजन उन्हें देखकर ही घबड़ा जाते हैं और अपनी चर्या-स्वाध्याय-सामायिक आदि क्रियाओं की निष्प्रमाद चर्या निर्वाह हेतु कभी-कभी हमें उन चीजों का त्याग भी करना पड़ता है, फिर ये महिलाएँ गीत में ऐसा क्यों बोलती हैं? किन्तु वास्तव में नये गाँव, नये प्रदेशों में पदविहार करने पर आहारसंबंधी तमाम अनुभव आते हैं, तो उनकी पंक्तियाँ सार्थक प्रतीत होने लगती हैं।''

हम राजस्थान के एक गाँव झालरापाटन में थे, वहाँ अनेक चौकों में

जहाँ-जहाँ जिसकी विधि मिली, वहाँ गये। मेरा जहाँ पड़गाहन हुआ, वहाँ आहार की सारी वस्तुओं में नमक की जगह फिटकरी मिली हुई थी। संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनें पास में बैठकर शोधन कर-करके लोगों से आहार दिलवा रही थीं। मुझे दाल, सब्जी कुछ अच्छी नहीं लग रही थी किन्तु साधुचर्या की कठिनता समझ-समझ कर लगभग प्रतिदिन की भाँति ही आहार ले लिया, कोई कुछ समझ नहीं पाया कि कुछ गड़बड़ है। यहाँ तक कि फलों में भी नमक समझकर फिटकरी मिला-मिला कर देते रहे, संकेत न करने की आदत के कारण मैंने थोड़े-बहुत फल भी ले लिए पुनः आहार के बाद जब मैंने स्थान पर आकर पूज्य माताजी से प्रत्याख्यान ग्रहण करते समय बताया कि आहार में फिटकरी लेने के कारण जी मिचली हो रही है। माताजी ने थोड़ा अमृतधारा और घी की मालिश करवाई और कहने लगीं कि–

''बेटा! साधु बने हो, तो यह सब तो सहना ही पड़ेगा वर्ना कर्म निर्जरा कैसे होगी?'' ऐसे अनुभव कई जगह प्रायः आते ही रहते हैं, जब या तो नमक की जगह दूसरी चीज या नमक बहुत अधिक हो गया अथवा डाला ही नहीं गया, तो गुरुकृपा से खुशी-खुशी सहन करने में कोई कष्ट महसूस नहीं होता है और आहार में कड़वी तूमड़ी आदि के इतिहास याद करके कष्ट सहन करने की अपूर्व क्षमता भी आती है।

➢कु. सुवर्णा जैन की अपूर्व पदयात्रा–

यूँ तो साधुओं के साथ सभी गाँव-शहरों के श्रावक-श्राविकाएँ थोड़ी-बहुत दूर तक पैदल चलकर उन्हें लेने या पहुँचाने तो जाते ही हैं किन्तु उनके साथ हजारों किमी. की पदयात्रा करने वाले लोग बहुत कम मिलते हैं, उन कम लोगों में एक युवा बालिका रही-सुवर्णा जैन, जिसने उत्तर प्रदेश के टिकैतनगर ग्राम से मांगीतुंगी आकर संघ के साथ विहार करने की हार्दिक इच्छा व्यक्त की एवं अपने पिता सुभाषचन्द्र जैन से जबर्दस्ती आज्ञा भी ले ली। फिर तो उसने पूरे 135 दिन की पदयात्रा हम लोगों के साथ करते हुए फूल-शूल, नदी-पहाड़, कंकड-पत्थर के मार्ग तय किये एवं अपूर्व प्रसन्नता के साथ गुरुसानिध्य का लाभ उठाया। बीच में भैया एवं पापा के आने पर भी यात्रा छोड़कर वह वापस नहीं गई अतः पूरी यात्रा के खट्टे-मीठे अनुभव प्राप्तकर उसने जीवन में प्रथम अमूल्य अवसर प्राप्त किया। ज्ञातव्य है कि कु. सुवर्णा पूज्य ज्ञानमती माताजी की गृहस्थावस्था की भतीजी है।

➢अन्य पुण्यशालियों ने भी पदयात्रा में भाग लिया–

मांगीतुंगी से दिल्ली तक के विहार में सुवर्णा के पश्चात् द्वितीय नम्बर में सर्वाधिक पैदल चलने का सौभाग्य प्राप्त किया दुर्लभ कुमार जैन-उज्जैन (म.प्र.) एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुदेश जैन ने, जो 5 जनवरी 1997 से 6 मार्च तक 814 किमी. हम लोगों के साथ चलकर सुख-दुःख के सभी क्षणों में सदा मुस्कराते रहे।

इसी प्रकार से ब्र. गौतमचन्द्र और उनकी ध.प. सौ. ब्र. इन्दुमती जैन-औरंगाबाद (महा.), कु. साधना-मांगीतुंगी, शुभचन्द्र जैन (टिकैतनगर-उ.प्र.), कु. प्रीति जैन-चांदवड़ (महा.), कु. समता एवं नम्रता जैन-श्रीरामपुर (महा.), सौ. कान्ता जैन ध.प. हीरालाल जैन-अहमदाबाद, (गुज.), महावीर प्रसाद जैन-लावा (राज.), लालचंद जैन-निवाई (राज.), श्रीमती कुमुदनी जैन एवं उनकी सुपुत्री कु. सरिता जैन-कानपुर (उ.प्र.), श्रीमती मालती जैन एवं उनके सुपुत्र चि. पारस जैन-दिल्ली आदि ने सैकड़ों किमी. की पदयात्रा करके सत्संग का पूरा-पूरा लाभ उठाया। इसी प्रकार मांगीतुंगी जाते समय सौ. शोभा एवं शरद पहाड़े-श्रीरामपुर (महा.), प्रमोद एवं प्रवीण जैन-मांगीतुंगी, विशाल जैन, रिंकेश, दीपेश, रूपेश-सनावद (म.प्र.), कु.ऋतु जैन-सनावद, मुनि श्री निजानंदसागर, नवयुवकमंडल-कापडणा (महा.) आदि का पदविहार में महत्वपूर्ण योगदान रहा।

➢सुकुमार बालिकाओं का अथक परिश्रम–

इतने लम्बे विहार में सबसे बड़ी चिन्ता यह थी कि लाला महावीर प्रसाद जी संघपति के रूप में लाखों रुपया तो खर्च कर देंगे किन्तु रास्ते में संघसंचालन का दुरूह कार्य कौन करेगा? संघ में रहने वाली छोटी-छोटी कोमल ब्रह्मचारिणी कन्याएँ मात्र आत्मकल्याण और विद्या अध्ययन के लिए माताजी की छत्रछाया में रहती हैं। उन्हें संघविहार कराने का न तो अनुभव ही था और न इतना परिश्रम करना ही उनके बस का था। पूज्य माताजी कभी मेरे स्वास्थ्य की वजह से और कभी अन्य सबकी परेशानी देखकर इस विहार से पीछे हट जाती थीं।

फिर जब एक दिन मैंने कहा कि पूज्य माताजी! मेरे कारण आप इस यात्रा को मत स्थगित कीजिएगा, आपका आशीर्वाद जब प्रतिपल मुझे प्राप्त हो रहा है, तब मुझे अवश्य शक्ति मिलेगी और मुझे विश्वास है कि यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न होगी।

पुन. कु. बीना-आस्था को भी जब मैंने बताया कि अब केवल रास्ते में संघ संचालन की समस्या है वर्ना माताजी की मांगीतुंगी विहार करने की पूरी

इच्छा बन गई है, तब उन दोनों बहनों ने तुरंत आश्वासन देते हुए कहा कि माताजी! आप निश्चिंत होकर विहार कीजिए, हम लोग सारी व्यवस्था संभालकर आपकी यात्रा में सहभागी बनेंगे। इस प्रकार दक्षिण यात्रा शुरू हुई और दोनों बहनों ने तथा ब्र. श्रीचन्द जी ने सारी संघव्यवस्था संभाली, उनके साथ-साथ कु. सारिका, कु. चन्द्रिका, कु. इन्दु, कु. अलका एवं कु. प्रीति आदि छोटी-छोटी सुकुमार बालिकाओं ने जिस अथक परिश्रम से यह यात्रा सम्पन्न कराई है, वह वास्तव में अविस्मरणीय है। दिल्ली के भक्त श्रावक एवं हर गांव के लोग इन कन्याओं को देखकर कहने लगते कि माताजी! आपके संघ की बहनें तो प्रत्येक कार्य में निपुण हैं, स्टेज पर चाहे भजन गाने का हो या भाषण करने का, चौके में हो या अध्ययन में अथवा अध्यापन आदि सभी क्षेत्र में ये लोग पूर्ण कुशलता के साथ भाग लेती हैं। मैंने कहा कि यह सब पूज्य ज्ञानमती माताजी के आशीर्वाद का ही फल है, जो कि उनके पास रहने वाला हर व्यक्ति सर्वतोमुखी (आलराउन्डर) हो जाता है।

अपने कर्तव्य का पालन करते हुए इन बालिकाओं ने रास्ते के सारे सुख-दुःखों का अनुभव करते हुए भी सदैव मुस्कराहट का ही परिचय दिया। इसके लिए उन्हें बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद देते हुए मैं उनके चारित्रवृद्धि की मंगल कामना करती हूँ।

➢दीक्षास्थली माधोराजपुरा की आत्मीयता–

आज से 50 वर्ष पूर्व राजस्थान की जिस पवित्र नगरी माधोराजपुरा में युग की प्रथम बालब्रह्मचारिणी ने आचार्य श्री वीरसागर महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा धारणकर **''ज्ञानमती''** नाम प्राप्त किया था, वहाँ के श्रावकों की अत्यधिक भक्ति के कारण माधोराजपुरा में भी संघ का पदार्पण गुरुवार, 6 मार्च 1997 को हुआ। पूज्य माताजी भी दीक्षा के बाद पहली बार वहाँ पहुँच रही थीं इसीलिए वहाँ के उत्साह एवं प्रसन्नता का कोई ठिकाना न था।

नगर प्रवेश की मंगल बेला में दिल्ली से भी संघपति जी पूरे दलबल के साथ पहुँच गये क्योंकि उन सभी लोगों को माधोराजपुरा वालों ने अतीव आग्रहपूर्वक आमंत्रण भेजा था। दीक्षा नगरी जहाँ किसी नववधू की भांति खूब सजाई गई थी, वहीं राजकीय प्राथमिक विद्यालय स्कूल से प्रारंभ होने वाले जुलूस में विशेष रूप से तीन घोड़े भी मंगाए गए थे, जो राजस्थान, अवध एवं राजधानी दिल्ली के नाम से प्रतिनिधित्व करते हुए वहाँ के नवयुवकों को बैठाकर आगे-आगे चल रहे थे। मुख्य प्रवेशद्वार पर एवं अन्य कई द्वारों पर

माताजी के बड़े-बड़े फोटो (कट आउट) लगाए गए थे। तरह-तरह के झाड़-फानूस, बिजली, झालर, घंटे आदि सजाकर समस्त जाति-सम्प्रदाय के नागरिक पलख पांवड़े बिछाकर अपनी निधि का स्वागत करने को आतुर थे। गुलाब के फूलों की वृष्टि, रतन एवं सितारों को बरसाकर मकानों की छत से, अटारियों से एवं गलियों से उछल-उछलकर लोग नारे एवं जयजयकारों से नगरी को गुंजायमान कर रहे थे।

पूज्य माताजी वहाँ तीन दिन रुकीं तो हिन्दू, मुसलमान, जैन आदि सम्पूर्ण जाति-बन्धुओं ने अपनी दुकानें एवं समस्त प्रतिष्ठान बंद रखे तथा प्रवचन सभा में भाग लिया। गाँव में जितनी भी संस्थाएँ, कमेटी, सोसाइटी थीं, सभी के लगभग 20-25 प्रतिनिधियों ने माताजी का सम्मान किया पुनः उन्हें संघपति की ओर से माताजी के लेमिनेटेड चित्र एवं कुछ साहित्य भेंट किया गया।

➢बेटी विदा कराने का भी मुहूर्त होता है–

हम लोग 5 मार्च की शाम को फागी से विहार करके 5 किमी. दूर एक प्याऊ पर आ गये थे, जहाँ से माधोराजपुरा केवल 3 किमी.था। यद्यपि वहाँ स्थान अत्यन्त अल्प एवं खराब था किन्तु खुला एरिया होने के कारण उन लोगों ने शामियाना, टेन्ट वगैरह लगाकर रात में खूब भजन-कीर्तन किया, सैकड़ों लोग रात में वहीं सोये।

6 मार्च को प्रातः 7 बजे माधोराजपुरा के कुछ पुरुष एवं 1-2 महिलाओं ने आकर माताजी को श्रीफल चढ़ाया, हम सभी को साड़ियाँ भेंट की और बोले कि **''माताजी! अब आप पीहर की ओर प्रस्थान करें, हम आपको विदा कराने आए हैं।** यह सुनकर हम लोग हँसने लगे। वे पुनः बोले कि कल बुधवार था, हमारे राजस्थान में बुधवार को बेटी नहीं विदा करते हैं, इसीलिए कल शाम को हमने आपको यहाँ ठहरने का कष्ट दिया वर्ना केवल दो किमी. चलकर ही माधोराजपुरा के सुन्दर स्कूल में आपका रात्रि विश्राम कराते।''

पूज्य माताजी तो ऐसे व्यवहारिक प्रसंगों से पूर्ण अनभिज्ञ रही हैं अतः वे बहुत संकोच करने लगती हैं इन छोटी-छोटी मनोरंजक बातों पर। यहाँ भी उक्त बात सुनते ही उन्होंने शरम के कारण सिर झुका लिया और उन लोगों के कमरे से बाहर जाते ही हमसे बोलीं– **''यह सब क्या हो रहा है? मुझे यह ड्रामा अच्छा नहीं लगता। साधुओं का भी भला कोई पीहर या ससुराल होता है।''** हम सब शिष्यों ने किंचित् हँसी के साथ इस विषय को यह कहकर समाप्त किया कि **''आपकी ज्ञानमती पर्याय की जन्मभूमि तो यह है ही, फिर पहली बार आगमन के कारण जहाँ लोगों में जोश-खरोश है, वहीं सांसारिक अपनत्व भी उमड़ पड़ने से यदि कोई स्नेहिल शब्द मुँह से निकल जाते हैं, तो इसमें शरमाने की क्या बात है?**

माताजी का सुन्दर गौरवर्णी चेहरा लज्जावश लाल सुर्ख सा हो गया, आखिर अपनी दीक्षाभूमि के नागरिकों का अप्रतिम वात्सल्य देखकर हृदय में गौरव तो हुआ ही होगा कि कम से कम आज भी उन सबके मन में त्याग एवं त्यागियों के प्रति नम्र भावना है जो कि पूरे गाँव की सर्वतोमुखी उन्नति का प्रतीक है।

खैर! गुरुवार को प्रातः इस मंगल रश्म रिवाज के पश्चात् माधोराजपुरा में पूज्य माताजी का संघ सहित गुरु एवं बेटी दोनों रूप में मंगल पदार्पण हो गया। पता नहीं ये रिवाज अन्य प्रान्तों में भी हैं या नहीं कि बेटी को किस दिन विदा नहीं कराते हैं और किस दिन कराते हैं? मुझे भी इस संबंध में कोई जानकारी नहीं है।

➢रिश्तेदारी भी निकल गई–

अभी तो माताजी को छोटी सी बात में ही संकोच उत्पन्न हो रहा था और अब बात उससे भी आगे बढ़ गई, जब नगर के अन्दर प्रवेश करते ही ऊँची ध्वनि सुनाई पड़ने लगी– **''मेरी बहना आई है, ज्ञान की गंगा लाई है''** एवं **''हर माँ की बेटी कैसी हो, ज्ञानमती जी जैसी हो.**.....आदि। कुछ देर बाद ही ज्ञात हुआ कि जुलूस में जो मंगल कलश लेकर सबसे आगे चल रहे थे, वे राँवका दिगम्बर जैन परिवार के लोग थे, इनके माता-पिता श्रीमती एवं श्री सागरचन्द जैन राँवका पूज्य माताजी की दीक्षा के समय उनके माता-पिता बने थे। संतोष कुमार जैन राँवका उनके सबसे बड़े सुपुत्र हैं, उनके पूरे परिवार ने उस दिन विशेष रूप से स्वागत किया। जुलूस के बीच में माताजी की मंगल आरती जब राँवका मकान के पास उतारी गई, तो बूढ़ी माँ जी आकर माताजी के चरणों से लिपट गईं और हर्ष के अश्रुओं से उनके चरणप्रक्षाल करने लगीं। वह दृश्य अत्यन्त हृदयद्रावक एवं प्रेरक बन गया था। वास्तव में इन खुशियों का वर्णन लेखनी के द्वारा नहीं किया जा सकता है। आगन्तुक हजारों अतिथि उन दृश्यों को देखकर द्रवित हो गये थे।

मैंने उस दिन अपने सार्वजनिक वक्तव्य में कहा था कि ''जब सन् 1956 में यहाँ माताजी की आर्यिका दीक्षा हो रही थी, तब इनके माता-पिता पूर्ण स्वस्थरूप में टिकैतनगर (उ.प्र.) में मौजूद थे लेकिन न जाने क्यों? उन्हें खबर

भी नहीं दी गई कि तुम्हारी बेटी की दीक्षा हो रही है। मैंने अपने होश में उन माता-पिता की अविरल अश्रुधारा देखी है, जो बेटी की दीक्षा देखने को तरस गये और कहते रह गये कि आखिर हमने क्या गुनाह किया था, जो हमें एक पत्र देकर बुलाया भी नहीं गया। हमने उसे पैदा किया था, हमें उससे तीव्र मोह था लेकिन हम उसे उठाकर तो नहीं ले आते।''

इसमें ज्ञानमती माताजी की निस्पृहता, निष्ठुरता और निर्मोहिता तो प्रमुख रही ही होगी किन्तु आचार्यसंघ की व्यवहारशून्यता भी माननी ही होगीकि संघ के किसी साधु, ब्रह्मचारी, साध्वी आदि किसी के मन में भी न आया कि जहाँ सबके पास दीक्षा के पोस्टर-पत्र आमंत्रण हेतु भेजे जा रहे हैं, वहीं मूल दीक्षार्थीके घर या गाँव में भी पता पूछकर एक समाचार भी तो भेजा जाये।

खैर! दीक्षा तो हो ही गई और वैशाख कृष्णा दूज के दिन ली गई दीक्षा दूज के चाँद की तरह ही असीम वृद्धि में परिवर्तित हुई किन्तु गृहस्थावस्था के माता-पिता परिकर के न आने से इस राँवका परिवार का पुण्य जागृत हुआ, जो भव-भव में उन लोगों के लिए अविस्मरणीय रहेगा। माधोराजपुरा के नागरिक यदि ज्ञानमती माताजी को अपने गाँव की पुत्री मानते हैं, तो यहाँ का बच्चा-बच्चा इनका भाई और भतीजा है और सभी को इनके आदर्शों का पालन करते हुए त्याग एवं सदाचार का परिचय देना चाहिए।

➢दीक्षा में वटवृक्ष का अद्भुत संयोग–

हमने वहाँ पहुँचकर माताजी से पूछा कि **''आपकी दीक्षा किस स्थान पर हुई थी?''** वे कहने लगीं कि मुझे ज्यादा स्मृति तो नहीं है किन्तु धुंधली सी याद ताजी हो रही है कि वहाँ पर एक बड़ का बहुत बड़ा पेड़ था। हमारी जिज्ञासा जानकर माधोराजपुरा के लोग हमें उस मुख्य स्थान पर ले गये, जहाँ सन् 1956 में पूज्य माताजी की दीक्षा हुई थी। मेन बाजार के उस स्थान पर एक बहुत पुराना खूब बड़ा वटवृक्ष था। माताजी को भी उसे देखते ही दीक्षा के समय का सारा नजारा याद आ गया।

इस प्रसंग में मैंने कहा कि माताजी ने भगवान् ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या की छत्रछाया में जन्म लेकर उनकी पुत्री ब्राह्मी गणिनी जैसा ही मार्ग स्वीकार किया और यह भी संयोग की ही बात है कि ऋषभदेव ने वटवृक्ष के नीचे दीक्षा ली थी, तो माताजी के गुरुदेव ने भी उनके लिए वटवृक्ष वाला स्थान ही चुना, शायद इसीलिए भगवान् ऋषभदेव इनके परमइष्ट आराध्य देव बन गये, उनके परमाणु ही कुछ इनके अन्दर समा गये, तभी ज्ञान की अजस्र धारा

प्रवाहित करती हुईं जहाँ इन्होंने दो सौ से अधिक ग्रन्थ लिखकर नारी गरिमा का कीर्तिमान स्थापित किया, वर्तमान में षट्खंडागम की संस्कृत टीका, ''सिद्धान्तचिन्तामणि'' का लेखन कर रही हैं, वहीं भगवान् ऋषभदेव का जन्मजयंती महोत्सव, अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव, भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार आदि अनेक कार्यक्रमों का आयोजन करवाकर जन-जन को जैनधर्म की प्राचीनता से परिचित किया है।

उस प्राचीन वटवृक्ष के नीचे खड़े होकर ग्रामवासियों ने पूज्य माताजी से अपने कल्याण हेतु किंचित् सन्देश व आशीर्वाद प्राप्त किया तथा कई फोटो खिंचवाए।

➢उस सांड के पोते को भी देखा–

ब्र. सूरजमल बाबाजी-निवाई (राज.) वालों के मुख से तो कई बार हम लोग सुना करते थे कि माताजी की दीक्षा के समय एक बड़ा सांड सभा को पार करके सीधे मंच के पास इनके मंगल चौक (जिस पर इन्हें दीक्षा के लिए बिठाया जा चुका था) के समक्ष नतमस्तक हो गया था। तब तमाम लोगों ने उसे कोई भव्य प्राणी समझकर लड्डू-फल खिलाए थे। वही बात माधोराजपुरा में उस वृक्ष के नीचे खड़े कई प्रत्यक्षदर्शी प्रौढ़ व्यक्तियों ने हम सबको बताई। उसके साथ एक रोमांचक घटना यह ज्ञात हुई कि गाँव के लोग उस सांड को माताजी की दीक्षा के बाद से लेकर जीवनपर्यन्त लड्डू या अन्य मिष्ठान्न ही खिलाते रहे।

कुछ लोगों ने बताया कि उसे हम लोग जैन श्रावक जैसा मानते थे और वह कभी किसी को हानि नहीं पहुँचाता था। हाँ, इतना अवश्य था कि वह जिस मकान या दुकान के सामने जाकर खड़ा हो जाता, वही उसे मिठाई खिलाने लगते तथा यदि कभी कोई उसके सामने अरुचि से मिठाई पेश करता था, तो वह पता नहीं कैसे उसकी मनोभावना दूषित जानकर मिठाई नहीं खाता और आगे बढ़ जाता। कुल मिलाकर पूरे कस्बे में उसे देवता जैसा मानकर उसकी आवभगत की जाती थी।

सबसे अधिक आश्चर्य तो तब हुआ, जब पता लगा कि अभी 3-4 वर्ष पूर्व ही वह मरा है। उसके मरने पर गाँव में उसकी शवयात्रा निकाली गई और उसके अंतिम संस्कार स्थल पर स्मृतिस्वरूप एक चबूतरा बनाया गया। तब मैंने उन लोगों को सलाह दी कि कहीं इस चबूतरे के निमित्त से किसी मिथ्यात्व का प्रचार न होने लगे इसीलिए आप लोग यहाँ एक शिलापट्ट लिखवाकर लगा दें कि **''यहाँ दफनाया गया सांड एक अहिंसक पशु बनकर सदाचारी मनुष्य के**

समान क्रिया करता था। पूज्य ज्ञानमती माताजी की दीक्षा के समय अत्यन्त नम्रता का परिचय देकर इसने सबके हृदय में अपना स्थान बना लिया था, इसीलिए नगरवासियों ने उसकी स्मृति में इस चबूतरे का निर्माण कराया है, आप सब इसके जीवन से प्रेरणा प्राप्त करें।''

वहाँ से हम अपने विश्रामस्थल की ओर लौट रहे थे, तो रास्ते में एक सांड बैठा था, गाँव के लोगों ने बताया कि ''माताजी! यह उसी सांड का पोता है, इसे भी सब लड्डू खिलाते हैं।'' हमारे खड़े होने पर वह थोड़ी देर देखता ही रहा पुनः एक थाल में कुछ लोग नुक्ती ले आए और उसे बड़े प्रेम से खिलाया। कुछ बच्चों ने छेड़खानी की तो वह भागने लगा किन्तु हम लोगों को देखकर पुनः शान्तभाव से बैठ गया। इसमें कुछ न कुछ पूर्व जन्म के संस्कार अवश्य होंगे। हो सकता है पहले मनुष्य पर्याय में इसने सन्तों का सत्संग किया हो किन्तु कुछ मायाचारी आदि कारणों से मरकर तिर्यंच बन गया और अब संत चरणों में नमन करने से कुछ जातिस्मरण हो गया हो, या आगे के लिए शुभगति का बंध हो गया हो इसीलिए उसने इतनी शान्तता का परिचय प्रदान किया।

माधोराजपुरा कस्बे की यूँ तो कुल आबादी 10-12 हजार है, जिसमें लगभग 70 घर जैन समाज के हैं, 4 जैन मंदिर हैं, जो अपनी प्राचीनता का परिचय दे रहे हैं। दीक्षास्थली के पीछे ही विशाल प्राचीन किला खण्डहर के रूप में पड़ा है, उसे भी हम लोग देखने गये तो कई ऐतिहासिक तथ्य ज्ञात हुए।

➢तीर्थंकर तपकल्याणक वनस्थली–

माधोराजपुरा के लोग इस नगर को यद्यपि **''ज्ञानमती दीक्षा वनस्थली''** के रूप में विकसित करना चाहते थे, उसी निमित्त से वहाँ एक बड़ी जमीन पहले से ही उन लोगों ने निश्चित कर रखी थी। उस स्थान पर पूर्व निर्धारित योजनानुसार दिल्ली के जाने माने भक्त श्रेष्ठी कमलचन्द जैन-खारीबावली के सौजन्य से एक **''ज्ञानमती कीर्तिस्तंभ''** का शिलान्यास कराया गया किन्तु ज्ञानमती माताजी तो सदा अपने गुरु या तीर्थंकरों के नाम से ही बड़ी-बड़ी योजना साकार करने में अपनी सफलता मानती हैं। उन्हें जब कीर्तिस्तंभ की बात पता चली तो कहने लगीं कि मैंने तो पहले से ही माधोराजपुरा के लिए बिल्कुल नई रचना निर्माण का भाव संजोया हुआ है। वह है– ''तीर्थंकर तपकल्याणक वनस्थली'' इसमें चौबीस तीर्थंकरों के अलग-अलग दीक्षावृक्ष बनाकर उनके नीचे पिच्छी-कमंडलु सहित ध्यानमुद्रा में भगवन्तों की प्रतिमा विराजमान होंगी।

सारी योजना सभा में घोषित होते ही मिनटों में साकार हो गई और 7 मार्च को भारी उत्साह के साथ शिलान्यास हुआ, जिसमें आसपास के नगरों के हजारों नर-नारियों ने भाग लेकर अर्थांजलि चढ़ाई।

➢धार्मिक पंथवाद की प्रान्तीय परम्परा–

हम लोग जन्मतः उत्तरभारत के निवासी हैं, उसमें भी अयोध्या की तरफ पूर्वी उत्तरप्रदेश में बचपन से कभी तेरहपंथ-बीसपंथ की चर्चा ही नहीं सुनी थी। उधर सभी मंदिरों में स्त्री-पुरुष समानरूप से पूर्ण शुद्धिपूर्वक मंदिरों में अभिषेक-पूजा करते थे, वहाँ वही परम्परा आज भी है। यदि कहीं-कहीं थोड़ा बहुत तेरहपंथी पण्डितों का असर भी हुआ है तो भी कट्टरवादिता नहीं है। इसी प्रकार फल-फूल चढ़ाना, पंचामृत अभिषेक ये सभी बातें निर्विवाद रूप से देखते थे किन्तु पश्चिमी उत्तरप्रदेश में आने के पश्चात् हम लोगों को पंथवाद का भेद आदि ज्ञात हुआ तो माताजी सदा इन विषयों में मध्यस्थ ही रहीं, उनका कहना रहा कि ''जहाँ जिनकी जैसी परम्परा है वहाँ उन्हें वैसा ही करने दो, हमें उनसे क्या लेना-देना। इसीलिए कभी भी उनके साथ किसी का कोई विवाद नहीं हुआ और उन्होंने कहीं पर कभी भी कोई हस्तक्षेप नहीं किया। हाँ, यदि किसी ने आगम के परिप्रेक्ष्य में कभी जानने की इच्छा प्रगट की तो उसका समाधान अवश्य किया।

लगभग 30 वर्ष से उत्तरप्रदेश की तेरहपंथ परम्परा देखते-देखते हम लगभग उसी के आदी हो गये थे किन्तु सुनते अवश्य थे कि इन उत्तर भारत में श्रेष्ठियों के घर की महिलाएँ भी जब गोम्मटेश्वर बाहुबली के उत्सव में जाती हैं तो भगवान् का अभिषेक करके आती हैं और इस प्रान्त में परम्परा न होने से यहाँ नहीं करती हैं।

जब सन् 1993-94 में अयोध्या की ओर माताजी ने विहार किया, तो वहाँ सभी नगरों में वही पुरानी परम्परा देखी। उधर के लोग अपने घर में कोई भी नया फल आम-अंगूर आदि आने पर पहले मंदिर में चढ़ाकर खाते-खिलाते हैं। जब सन् 1995-96 में हमने दक्षिण भारत की ओर विहार किया, तो राजस्थान में दोनों मान्यताएँ मिलीं, मध्यप्रदेश में 90 प्रतिशत तेरहपंथ एवं 10 प्रतिशत बीसपंथ देखा तथा महाराष्ट्र में शतप्रतिशत बीसपंथ परम्परा है, गुजरात में प्रायः बीसपंथ ही है, राजस्थान के मेवाड़ एवं बागड़ संभाग में कट्टर बीसपंथ परम्परा है पुनः शेष राजस्थान में मिली-जुली व्यवस्था तथा हरियाणा में प्रायः तेरहपंथ आम्नाय देखी एवं राजधानी दिल्ली में समन्वयवादी और कट्टरवादी

दोनों तरह के लोग सम्पर्क में आते हैं किन्तु हम लोगों को किसी से कोईविवाद नहीं रहता। ये तो श्रावक की क्रियाएँ हैं, मेरी समझ में तो इसमें साधुओं को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए और यदि करते हैं, तो प्राचीन आचार्य प्रणीत ग्रन्थों का आश्रय लेकर श्रावकों का सही मार्गदर्शन ही करना चाहिए अन्यथा जैसा कि आचार्य श्री शिवकोटि ने भगवती आराधना ग्रन्थ में कहा है कि–

पदमक्खरं च एक्कं पि जो ण रोचेदि सुत्तणिद्दिट्ठं।
सेसं रोचंतो विहु मिच्छाइट्ठी मुणेयव्वो।।

अर्थात् शास्त्र में वर्णित एक भी पद या अक्षर का जो श्रद्धान नहीं करता है, वह मिथ्यादृष्टि माना जाता है।

आगम हमारी किसी की व्यक्तिगत बपौती नहीं है अतः हम उसमें किसी तरह का हेरफेर करने के अधिकारी भी नहीं हो सकते हैं। अपनी स्वार्थसिद्धि की बजाय हमें उसका निष्पक्ष भाव से अध्ययन करके जीवन में उतारना चाहिए, तभी शास्त्रस्वाध्याय की सार्थकता हो सकती है।

श्री गुणभद्रस्वामी ने आत्मानुशासन में कहा भी है–

शास्त्राग्नौ मणिवद्भव्यः, विशुद्धो भाति निर्वृतः।
अंगारवत्खलो दीप्तो, मली व भस्म वा भवेत् ।।

अर्थात् शास्त्ररूपी अग्नि में तपकर भव्य प्राणी तो मणि (रत्न) के समान विशुद्ध–निर्मल हो जाते हैं तथा दुर्जन प्राणी उसमें अंगारे के समान तप्त हो जाते हैं अथवा जलकर राख–भस्मीभूत हो जाते हैं।

पंचमकाल में शास्त्र ही हमारे लिए ज्ञान नेत्र हैं, उनका ज्ञान कराने वाले साधु-साध्वी ही हमारे परमेश्वर हैं अतः देव-शास्त्र-गुरु पर श्रद्धान करके अपने सम्यग्दर्शन को दृढ़ करना चाहिए न कि पंथवाद का दुराग्रह पकड़कर उसे मलिन करना चाहिए।

➢महिलाओं की भिन्न-भिन्न वेशभूषा–

इस फैशनवादी युग में तो लड़कियाँ एवं महिलाओं की बदलती वेशभूषा की तो कोई एक आधारशिला नहीं रह गई है। कभी लड़कियाँ लड़कों की ड्रेस पहनने लगती हैं, तो कभी लड़के लोग लड़कियों की ड्रेस सलवार जैसे पठानी सूट आदि पहनने लगते हैं। कभी लड़कियाँ हेयर स्टाइल लड़कों जैसे बनवाने लगती हैं, तो कभी पुरुष अपने बाल लड़कियों जैसे थोड़े लम्बे कर लेते हैं। पाश्चात्य संस्कृति का भी भरपूर असर भारतीय पहनावे पर आ गया है, जिससे प्रायः हर माँ-बाप अपनी लड़कियों की सुरक्षा को लेकर

चिन्तित रहने लगे हैं।

जब हम किसी प्रान्त के बड़े शहरों में गये, तो वहाँ की फैशनपरक वेशभूषाएँ देखकर प्रान्तीय परम्परा का ज्यादा अनुमान नहीं लग पाता था किन्तु जब छोटे-बड़े ग्राम-कस्बों में हमारा विहार हुआ, तो जरूर उनकी संस्कृति, पहनावा आदि का परिचय हुआ। उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश आदि प्रान्तों में तो प्रायः महिलाएँ साड़ी पहनकर सिर ढकती हैं किन्तु कर्नाटक, महाराष्ट्र एवं गुजरात में महिलाएँ सिर खुला ही रखती हैं और बालों में फूल के गुच्छे या लड़ी लगाने की आम परम्परा है। कर्नाटक में खुले सिर ही विवाह होते हैं और सिर ढकने को लोग अशुभ मानते हैं। उनका कहना है कि इधर प्रान्त में विधवा होने के बाद महिलाएँ सिर ढकती हैं।

राजस्थान के बड़े घरानों में जहाँ नई वधुओं के लंबे घूंघट हट गये हैं, वहीं पुरानी महिलाएँ पूरी तरह से रूढ़िवादिता का पालन करती हुई काफी लम्बा घूंघट निकालती हैं। पुरुषों में भी नवयुवकों ने नई वेशभूषा अपना ली है किन्तु पुराने लोग अभी भी धोती-कुर्ता एवं राजस्थानी पगड़ी बाँधे हुए देखे जाते हैं। बहुत छोटे गांव में भी आदिवासियों के सिर पर बाबा आदम के जमाने की पुरानी पगड़ी दिखाई देती है तथा पहनाव भीलों जैसा जंगली लगा। राजस्थान की ग्रामीण महिलाएँ एक हाथ लम्बा घूंघट करके भी दूर-दूर से सिर पर 3-3 घड़े एवं बगल में एक घड़ा दबाकर पानी भरकर लाती हैं। वे जब हम लोगों को सड़क पर पैदल चलते देखतीं, तो एक आँख खोलकर घूंघट के अन्दर से ही देखकर हँसने लगती थीं लेकिन हमें उनके चेहरे नहीं दिखते थे। बागड़ में कहीं-कहीं हमने देखा कि महिलाओं के घूंघट तो खूब लम्बे हैं किन्तु छाती-पेट सब खुले रहते हैं। तो किंचित् हँसी भी आती और उनकी अज्ञानतापूर्ण रूढ़िवादिता पर आश्चर्य भी होता। इसी प्रकार कहीं-कहीं लड़कियों को भी केवल पेटीकोट ब्लाउज पहने देखकर संघ के लोग खूब हँसते थे किन्तु क्षुल्लक मोतीसागर महाराज के डर से सब शीघ्र ही गंभीरतापूर्वक अपने-अपने काम में लग जाते थे।

गुजरात प्रांत में प्रवेश करते ही हम ब्यारा नामक गाँव से विहार कर रहे थे, तो एक वकील लड़की मेरे साथ चल रही थी। कुछ चर्चा के मध्य मैंने उससे पूछा कि तुम्हारे पति क्या करते हैं? तुम्हारी ससुराल कहाँ है? वह हँसकर बोली कि माताजी! मैं तो अभी कुँवारी हूँ। मैं थोड़ा झेंप सी गई तुरंत मैंने कहा कि फिर तुमने पैर में बिछुए और गले में मंगलसूत्र क्यों पहना है? ये तो सुहाग के प्रमुख चिन्ह होते हैं।

उस समय साथ चल रही और भी महिलाएँ बताने लगीं कि हमारे गुजरात में ऐसी कोई परम्परा नहीं है, कुँवारी कन्याएँ भी शौक में ये चीजें पहन लेती हैं और सुहागन नहीं भी पहनती हैं। तब मुझे पहली बार वहाँ की परम्परा के बारे में कुछ ज्ञान हुआ कि गुजरात में ऐसा भी होता है। जबकि पूरे उत्तर प्रान्त में विवाह के पश्चात् ही महिलाएँ बिछुए और मंगलसूत्र पहनती देखी जाती हैं। इन प्रान्तीय परम्पराओं को जाने बिना कई जगह समस्या का सामना करना पड़ता है।

इसी प्रकार उत्तर भारत में लौकी नामक सब्जी को बड़ी लाभप्रद मानकर श्रावक-साधु सभी खाते हैं किन्तु दक्षिण प्रान्त में लौकी को अभक्ष्य मानकर कोई भी नहीं खाते हैं। ऐसी कई बातें प्रान्तीय परम्पराओं पर आधारित हैं, जिन्हें जानकर ही कोई निर्णय करना चाहिए।

➢मौसम का धन्यवाद कैसे करें?

पूज्य माताजी के प्रवचन में कई बार सुना करती थी–

पद्मिनी जाति की विशेष स्त्रियाँ, राजहंस और निर्ग्रंथ तपोधन-साधु-साध्वी जिस देश में विचरण करते हैं, वहाँ स्वयमेव सुभिक्ष हो जाया करता है। इस दुःषमकाल में हमारे भारत देश में न तो पद्मिनी स्त्रियाँ हैं, न मानसरोवर पर रहने वाले राजहंस हैं, न हि ऋद्धिधारी जिनकल्पी महामुनि हैं और न ही विशल्या जैसी दिव्यशक्तिधारिणी कन्याएँ हैं, जिनकी दृष्टिमात्र से सारे रोग-शोक-महामारी नष्ट हो जाये किन्तु फिर भी कठोर तपस्या करने वाले एवं दीर्घकालीन दीक्षा लक्ष्मी से समन्वित कुछ साधु-साध्वी आज भी इस धरती पर उपर्युक्त श्लोकार्ध को अंशमात्र साकार करने वाले अवश्य विद्यमान हैं, जिनके समक्ष प्रकृति को नमन करना ही पड़ता है।

हमारे इस लम्बे प्रवास में भी हमारे साथ पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का प्राचीन प्रतिमा की भाँति अतिशय ही रहा कि प्रकृति ने मौसम की अनुकूलता करके पग-पग पर हमारा सहयोग किया। मांगीतुंगी जाते समय हम 27 नवम्बर 1995 से 15 फरवरी 1996 तक केवल एक ही समय दिन में 1 बजे से 4 बजे तक चलते थे, उसके बाद सुबह-दोपहर दोनों समय चलकर पूरे पाँच महिने में 1620 किमी. का रास्ता तय किया था किन्तु वापसी में 1800 किमी. केवल 135 दिन में (साढ़े चार माह में) चले, उसमें खास निमित्त मौसम की अनुकूलता का रहा। दिसम्बर, जनवरी के महीने में उत्तरी इलाकों में जबर्दस्त सर्दी होती है, उस समय हम महाराष्ट्र और गुजरात की सड़कों पर दोनों समय चलते थे, वहाँ का गुलाबी मौसम हमारे विहार में अतीव सहायक

रहता था पुनः 23 जनवरी से राजस्थान में जब हमारा प्रवेश हुआ, तो भीषण ठंड का दौर निकल चुका था अतः वहाँ भी सुबह 7-8 बजे से चलने में कभी असुविधा नहीं हुई। इसीलिए हम कहीं भी पूर्व निर्धारित समय से लेट नहीं पहुँचे बल्कि कहीं-कहीं तो ज्यादा चलने के कारण समय से एक दिन पूर्व ही पहुँच गये। जो रास्ता हमें बहुत लम्बा लग रहा था, वह भी मौसम के सहयोग एवं माताजी द्वारा प्रदत्त मंत्र जाप्य से शीघ्र ही पार हो गया।

जयपुर से दिल्ली तक सड़क मार्ग 270 किमी. है, उसकी चिन्ता कई दिन पूर्व से थी कि 30 मार्च को दिल्ली प्रवेश की तारीख दे दी गई है और 16 मार्च की शाम को हम जयपुर से निकलेंगे, तो बीच के केवल 13 दिनों में हमारे अत्यन्त थके पैर हमें दिल्ली कैसे पहुँचा देंगे? किन्तु हम तो निरन्तर मंत्रजाप्य करते हुए आगे बढ़ रहे थे।

हम रोज 22-23 किमी. की रफ्तार से चले और 29 मार्च की शाम 5 बजे ही दिल्ली के दरियागंज बाल आश्रम में पहुँच गये। बीच में 26-27 मार्च की भीषण गर्मी देखकर हम थोड़ा परेशान हुए पुनः 27 तारीख को जब ब्र. रवीन्द्र जी ने कैलाशचंद्र जैन-करोलबाग एवं नरेश जैन बंसल से हमारे पास समाचार भिजवाया कि गुड़गाँवा से 15 किमी. यदि चल लें, तो नरेश बंसल के शोरूम पर रात्रि विश्राम कर लें, उनकी बड़ी इच्छा है। मैंने कहा कि इस गर्मी में इतना लम्बा चलना दोपहर में संभव ही नहीं है किन्तु पता नहीं क्या चमत्कार हुआ कि दोपहर में बादल घिर आए, ठंडी-ठंडी हवा ऐसी चलने लगी, जैसे गर्मी का मौसम ही न हो।

मैं यद्यपि गुड़गाँवा में भी 2 किमी. अधिक एक भक्त के यहाँ चलकर आई थी और सुबह तो 10 किमी. चली ही थी, फिर भी पैरों में न जाने कहाँ से शक्ति आ गई कि हँसते-मुस्कराते रास्ता पार हो गया। संभवतः उस दिन पूरे प्रवास का सबसे ज्यादा किमी. (26 किमी.) चलना पड़ा था। फिर रात में तेज बरसात आने से अगले दिन 29 मार्च को शोरूम से 10 किमी. चलकर सफदरजंग एन्क्लेव में राजकुमार जैन वीरा बिल्डर्स की कोठी पर आए, वहाँ आकर आहार करके शाम को दरियागंज पहुँचे।

मौसम ने इन सब प्रसंगों में साथ देकर वास्तव में सन्त तपस्या के प्रभाव का परिचय प्रदान किया है। उसका धन्यवाद भला किन शब्दों में किया जाये? वह तो बस सदा तपस्वियों की साधना में बाधक न बनकर साधक बना रहे, यही समय की माँग है वर्ना इस धरती पर प्राकृतिक प्रकोप मानवों की दानवता

के कारण अपना विकराल रूप धारण किए हुए हैं जिन्हें दूर करने में मात्र सन्तों की तपस्या, आध्यात्मिकता ही साधन है, बाकी कुछ नहीं।

➢घटाने की कोशिश में रास्ता बढ़ता ही गया–

गुजरात प्रान्त से विहार करके जब दिल्ली जाने का रूट बना, तो लग रहा था कि रास्ता थोड़ा जरूर बढ़ रहा है किन्तु सबने समझाया कि माताजी! आप मध्यप्रदेश के सबसे कम वाले शिवपुरी रूट से जाएँगी, तो लगभग 1300 (तेरह सौ) किमी. और गुजरात होकर जाने में केवल 100 (सौ) किमी. ज्यादा पड़ेगा परन्तु सारा गुजरात, जो आपके दर्शनों का प्यासा है, उसे लाभ मिल जायेगा। सबकी भक्तिपरक बातें सुनकर माताजी ने गुजरात का निर्णय दे दिया। उसके बाद तो रास्ता बढ़ता ही चला गया। सबसे पहले जो अहमदाबाद मांगीतुंगी से केवल 350 किमी. था, हमें पावागढ़ सिद्धक्षेत्र होकर जाने में 500 किमी. पड़ गया, पुनः उस प्रान्त वालों के अत्यधिक आग्रह पर ईडर, हिम्मतनगर, सलाल आदि नगरों का दौरा करने पर रास्ता अधिक हो गया और आगे कई जगह ब्र. श्रीचन्द जी गाड़ी लेकर लम्बे रास्ते को कम करने गये, तो अनभिज्ञता के कारण वह रूट ज्यादा हो गया, फिर श्रावकों ने बताया कि आप यदि उस रास्ते से आते तो 10-15 किमी. कम चलना पड़ता। कई जगह ऐसी ही बातें सुनकर हम लोग हँसते और आपस में कहते कि **''ज्यों-ज्यों दवा करने चले, त्यों-त्यों मरज बढ़ता ही जा रहा है।** फिर भी हम सब सकुशल रहे, कोई बीमार नहीं हुआ, यही सबसे बड़ा प्रभु का आशीर्वाद रहा। तारंगासिद्धक्षेत्र की वंदना के लिए भी लगभग 80 किमी. एवं अणिंदा पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र के दर्शन हेतु भी 30-40 किमी. बढ़ाये गये।

➢पुरानी शिष्याओं का मिलन–

पूज्य माताजी की सबसे पुरानी शिष्याओं में आर्यिका जिनमती जी, आदिमती जी थीं। दक्षिण भारत की यात्रा के समय माताजी बोली थीं कि कहीं न कहीं जिनमती जी मुझे जरूर मिलेंगी लेकिन 1 फरवरी 1996 को इन्द्रगढ़ (राज.) में पता लगा कि जिनमती माताजी की अत्यधिक रक्तक्षय के कारण 30 जनवरी को समाधि हो गई। शिष्या के वियोग का समाचार सुनकर यद्यपि काफी देर हृदय में विक्षिप्तता रही, फिर अपने तत्त्वज्ञान से उन्होंने हम सबको पुरानी बातें सुनाकर श्रद्धांजलि सभा रखी और धीरे-धीरे सब कुछ सामान्य हो गया।

अब जब माताजी को गुजरात से राजस्थान होकर दिल्ली जाना था, तब वहाँ साबला में विराजमान दूसरी पुरानी शिष्या आदिमती माताजी एवं श्रुतमती

माताजी को कहलवाया कि कहीं न कहीं आकर मिलना जरूर है। उधर उन लोगों की तीव्र इच्छा थी अपनी अम्मा से मिलने की। बीच में लोहारिया के प्रमुख श्रावक नाथूलाल सेठ, मगनलाल जैन आदि काफी प्रयासरत थे कि पूज्य माताजी के संघ को हम लोहारिया जरूर ले जायेंगे और वहीं इस वर्ष का चातुर्मास भी करायेंगे किन्तु रूट कुछ इस प्रकार बना कि लोहारिया के साथ-साथ डूंगरपुर, सागवाड़ा आदि विशेष भक्तिमान नगरों के श्रावक भी रोते ही रह गये और माताजी वहाँ न जा सकीं। चूँकि दिल्ली तक की सारी तारीखें पूर्व निर्धारित हो चुकी थीं और इस सौ किलोमीटर के एरिये को बढ़ा देने से सारा प्रोग्राम उलट-पुलट हो जाता, फिर आगे की गर्मी से भी जी घबड़ा रहा था। लम्बी चलाई के कारण हम सब काफी थके भी थे अतः सारी परिस्थितियाँ देखकर माताजी ने भक्तों के दुःख से दुःखी होने के बावजूद भी उन सबको मना कर दिया और सलूम्बर (राज.) में आदिमती माताजी, श्रुतमती जी एवं नवदीक्षित आर्यिका सुबोधमती जी को आने का संदेश भिजवा दिया।

हम लोग इधर केशरिया जी से विहार करते हुए 29 जनवरी 1997 को प्रातः सलूम्बर पहुँचे थे और उधर साबला से विहार करके ये तीनों माताजी 28 जनवरी को सलूम्बर आ गई थीं। सुबह नगर प्रवेश से पूर्व ही ये माताजी रास्ते में आ गईं और अपनी अम्मा से चिपककर सिसक-सिसककर रोने लगीं। माताजी ने उन्हें खूब वात्सल्यपूर्वक देखा और 22 वर्ष से बिछुड़ी शिष्याओं का सुख-दुःख पूछकर उन्हें सांत्वना प्रदान की। दो दिन तक वहाँ उन लोगों के साथ हम सभी को रहने का, विचारों के आदान-प्रदान का मौका मिला। आदिमती माताजी, श्रुतमती माताजी ने पूज्य माताजी की खूब वैयावृत्ति की, उनसे अनेक शिक्षाएँ प्राप्त की तथा पुनः-पुनः गुरुदर्शन की इच्छा व्यक्त करते हुए तीसरे दिन हम लोगों के विहार के पश्चात् वे भी साबला की ओर विहार कर गईं। गुरु-शिष्य का यह रोमांचक मिलन वास्तव में इतिहास का एक अंग बन गया और मेरी मनोभावना प्रबल होकर संकल्प में परिवर्तित हुई कि **''मैं गुरु की छत्रछाया जीवन में कभी नहीं छोड़ूंगी ताकि जीवित रहते हुए गुरुवियोग का दुःख मुझे सहन न करना पड़े।''**

➢क्षुल्लक मोतीसागर जी का अपूर्व समर्पण–

पूज्य माताजी के वर्तमानकालीन संघस्थ शिष्यों में क्षुल्लक मोतीसागर महाराज सर्वाधिक पुराने शिष्य हैं। सन् 1967 में सनावद (म.प्र.) चातुर्मास से माताजी का शिष्यत्व स्वीकार करने के बाद आज तक 40 वर्षों में ब्र. मोतीचंद

से क्षुल्लक मोतीसागर बनकर जहाँ आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया है, वहीं धर्मप्रभावना के प्रत्येक कार्य में बीजारोपण करने का श्रेय भी इन्हें प्राप्त है। जम्बूद्वीप निर्माण, ज्ञानज्योति रथ प्रवर्तन, अयोध्या विकास, मांगीतुंगी पंचकल्याणक, प्रयाग एवं कुण्डलपुर तीर्थ निर्माण, भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार, भगवान महावीर ज्योति रथ प्रवर्तन तथा अन्य-अन्य तमाम कार्य जो पूज्य ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से हुए, उन सबमें क्षुल्लक मोतीसागर जी का समर्पण सदा अविस्मरणीय रहा है। यद्यपि क्षुल्लक के लिए पदविहार करना मुनि-आर्यिका के समान अनिवार्य नहीं है, फिर भी इन्होंने अयोध्या एवं मांगीतुंगी यात्रा का पूरा प्रवास (लगभग 6 हजार किमी.) पैदल ही करके अपूर्व धर्मप्रभावना का कार्य किया है एवं संघ की व्यवस्था को बहुत ही मनोयोग से संभाला है।

पूज्य माताजी के श्रीचरणों में क्षुल्लक जी की इसी प्रकार से समर्पित भावना सदा बनी रहे तथा इनके स्वस्थ जीवन में सर्वतोमुखी प्रगति हो, यही मेरी मंगल कामना है।

➢ब्र. कर्मयोगी रवीन्द्र जी की कर्मठता–

योग्य व्यक्ति की पहचान उनके कर्मठ व्यक्तित्व से होती है और वे कर्मठ व्यक्तित्व समाज में बिरले लोग ही होते हैं। पूज्य माताजी के संघस्थ कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी उन बिरले नवयुवकों में से ही जैन समाज के क्षितिज पर चमकते अनोखे सितारे हैं, जो विद्वत्ता के साथ-साथ अपूर्व कार्यप्रणाली की क्षमता के धनी हैं। पूज्य माताजी के द्वारा संकल्पित प्रत्येक साहित्यिक, निर्माणात्मक, सृजनात्मक कार्यों को समाज में मूर्तरूप प्रदान करने वाले रवीन्द्र जी से देश की लगभग समस्त जनता परिचित हो चुकी है। उनकी लगनशीलता एवं कर्मठता के फलस्वरूप ही अयोध्या, मांगीतुंगी, प्रयाग, कुण्डलपुर आदि के विशाल कार्य पूज्य माताजी की भावना के अनुरूप सम्पन्न हुए हैं। इसीलिए जहाँ अवध की जनता ने उन्हें अयोध्या तीर्थक्षेत्र कमेटी का दो बार अध्यक्ष बनाया, वहीं मांगीतुंगी में निर्मित होने वाली 108 फुट उत्तुंग भगवान् ऋषभदेव की खड्गासन प्रतिमा निर्माण योजना का भी इन्हें दक्षिण भारत की जनता ने प्रमुख बनाया तथा मांगीतुंगी के जटिल कार्य पंचकल्याणक महोत्सव सम्पन्न कराने के पश्चात् उधर के अनेक नगरों में रवीन्द्र जी का भावभीना स्वागत हुआ।

➢महाराष्ट्र प्रान्त का ऐतिहासिक महोत्सव–

लघु सम्मेदशिखर के नाम से जाना जाने वाला महाराष्ट्र प्रान्त का

सर्वप्राचीन दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगी तीर्थ अब सम्पूर्ण भारत के मानस पटल पर उभर कर आ गया है। 55 वर्षों के पश्चात् वहाँ 19 मई से 23 मई 1996 तक पंचकल्याणक महोत्सव एवं तीर्थंकर श्री 1008 मुनिसुव्रतनाथ भगवान का महामस्तकाभिषेक समारोह जिन आशातीत सफलताओं के साथ सम्पन्न हुआ, उसके लिए वहाँ पधारे धर्म गुरुओं के मंगल आशीर्वाद, दिल्ली, राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, अवध आदि प्रान्तों का आर्थिक सहयोग, अनेक कर्मठ कार्यकर्ताओं की कड़ी मेहनत, महाराष्ट्र की जनता का अदम्य उत्साह, प्रदेश के दैनिक अखबारों के संपादक एवं संवाददाताओं का प्रचारात्मक सहयोग, प्रादेशिक दूरदर्शन विभाग का सहयोग, जैन पत्र-पत्रिकाओं का सहयोग, प्रतिष्ठाचार्य तथा उनके सहयोगी विद्वानों का वैधानिक सहयोग, पुलिस विभाग, प्रशासन सहयोग आदि अनेक निमित्त दृष्टिगोचर होते हैं।

➢ठण्डे मौसम ने हिल स्टेशन की याद दिला दी–

यहाँ पर सर्वाधिक सहयोग मौसम ने दिया, जिसके लिए आयोजकगण पूर्व से चिंतित थे कि इतनी भीषण गर्मी वाले ज्येष्ठ माह में कितने यात्री यहाँ आएंगे और कैसे गर्मी सहन करेंगे? किन्तु इसे अतिशय चमत्कार ही कहना होगा कि दिन में लू-लपट का नाम नहीं था एवं शाम होते ही मौसम हिल स्टेशन जैसा सुहावना हो जाता था। पिछली रात्रि में तो सभी लोग हल्की रजाइयाँ अथवा मोटी चादरें ओढ़कर चैन की नींद सोते थे, सुबह स्नान में गरम पानी खोजते यात्री अपनी-अपनी बाल्टियाँ लेकर टहलते नजर आते पुनः सभी के मुँह से यही निकलता था कि यहाँ आकर तो शिमला-मसूरी आदि हिल स्टेशन जैसा आनन्द आ रहा है एवं पवित्र तीर्थ की वंदना के साथ ही, गुरुदर्शन तथा पंचकल्याणक महोत्सव देखकर पुण्य संचय भी हो रहा है।

➢भूमि देवता ने जल समस्या हल कर दी–

मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पर पंचकल्याणक करने में दीर्घकाल से जल की समस्या भी बाधा उत्पन्न कर रही थी, जिसके कारण वहाँ के ट्रस्टी कहा करते थे कि जब तक पानी की व्यवस्था नहीं होगी, तब तक हम लोग महोत्सव कैसे कर सकते हैं? तब 15 दिसम्बर 1995 को पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने कहा कि **''सब चिंता छोड़ दो, जाओ, जहाँ खुदाई करोगे, वहीं पानी निकल पड़ेगा, पंचकल्याणक मई में ही होगा और सब लोग पानी पीकर पानी-पानी हो जायेंगे।''** और हुआ भी यही कि उस पहाड़ी क्षेत्र पर जहाँ पत्थर की चट्टानों में कभी-कहीं पानी नहीं दिखता था, वहाँ भगवान मुनिसुव्रतनाथ

एवं माताजी का नाम लेकर बोरिंग कराते ही पानी निकल पड़ा और वह पाइप लाइनों से पूरी जनता तक पहुँचाया गया, जिससे जनता को जल के अभाव का सामना नहीं करना पड़ा।

➢सिद्धक्षेत्र का प्रथम चातुर्मास अपूर्व सिद्धी का प्रतीक बना–

यूँ तो पूज्य माताजी द्वारा त्यागमय जीवन में कदम रखने के पश्चात् उनके अनेक चातुर्मास विभिन्न प्रान्तों के विभिन्न शहरों एवं तीर्थों पर सम्पन्न हो चुके थे किन्तु उन्होंने अभी तक किसी सिद्धक्षेत्र पर चातुर्मास नहीं किया था, वह संयोग मिला सन् 1996 में 99 करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगी को।

इसे सिद्धक्षेत्र का अतिशय कहा जाए, आर्यिका श्रेयांसमती माताजी व संघ की प्रबल इच्छा कही जाए या महाराष्ट्र की जनता का भाग्य, नासिक जिले के लोकप्रिय विधायक (आमदार) जयचंद कासलीवाल और डॉ. पन्नालाल जैन पापड़ीवाल (महाराष्ट्र तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष) का अकाट्य पुरुषार्थ कहा जाये, अथवा पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की आन्तरिक भावना?

जो कुछ भी मानें किन्तु उसके पीछे निर्वाणभूमि के प्रति छिपी माताजी की अनन्य भक्ति भावना तो स्वीकार करना ही पड़ेगा क्योंकि आग्रह करते-करते जब एक दिन भक्तों ने इस बात पर माताजी का ध्यान केन्द्रिय किया कि आपका एक चातुर्मास सिद्धक्षेत्र पर भी होना चाहिए, तब उन्होंने चिन्तन किया और हम लोगों से कहने लगीं कि वास्तव में मैंने सन् 1952 के श्रावण मास में घर छोड़ा और तब से आज तक मेरे 44 चातुर्मासों में कोई सिद्धक्षेत्र चातुर्मास स्थल नहीं है। सन् 1963 में सम्मेदशिखर का योग भी आया था किन्तु कलकत्ता वालों के अत्यधिक आग्रह से मैंने 10 दिन में 300 किमी. की तीव्र गति की पदयात्रा करके कलकत्ता पहुँचकर चातुर्मास स्थापित किया था। अब मेरी कुछ इच्छा है कि इस सिद्धक्षेत्र पर एक चातुर्मास कर ही लें।" हम लोगों ने (मैंने, क्षुल्लक मोतीसागर जी और ब्र. रवीन्द्र कुमार जी ने) कहा कि आपकीइच्छा और आदेश के समक्ष हम विनयावनत हैं और हम कुछ भी सुझाव कैसे दे सकते हैं? सबके मिले-जुले योगदान से चातुर्मास मांगीतुगी में हो गया और वह पूज्य माताजी तथा सिद्धक्षेत्र दोनों के जीवन में अपूर्व सिद्धि का प्रतीक बन गया।

➢सहस्रकूट कमलमंदिर एक अपूर्व देन–

मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पर लगभग 10 वर्ष पूर्व स्व. पंचम पट्टाधीश आचार्य श्री श्रेयांससागर महाराज की प्रेरणा से धातु की एक हजार आठ खड्गासन

प्रतिमाओं के निर्माण हेतु दातारों ने पैसे दिए किन्तु वे प्रतिमाएँ अभी निर्मित नहीं हो सकी थीं। गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी एवं आर्यिकारत्न श्री श्रेयांसमती माताजी की प्रबल प्रेरणा से वहाँ के ट्रस्टीगण मई 1996 तक वे समस्त प्रतिमाएँ जयपुर से बनवाकर ले आये और समय से उनकी प्राण-प्रतिष्ठा भी हो गई।

इसी मध्य जब पूज्य माताजी ने एक दिन आर्यिका श्री श्रेयांसमती माताजी से पूछा कि ये सहस्रकूट प्रतिमाएँ कहाँ विराजमान होंगी? तब श्रेयांसमती माताजी ने विश्वहितंकर सातिशय चिंतामणि पार्श्वनाथ मंदिर के शिखर पर ले जाकर स्थान दिखाया, जहाँ शिखर में तीन कटनी का गोल छोटा सा चबूतरा बना था, वहाँ जगह इतनी छोटी थी कि अन्दर जाकर तो कोई दर्शन ही नहीं कर सकता था। उसे देखकर माताजी कहने लगीं–

"मुझे ये स्थान सहस्रकूट जिनालय के लिए बिल्कुल पसंद नहीं है। इतनी सुन्दर प्रथम बार निर्मित खड्गासन सहस्रकूट प्रतिमाओं के लिए तो मंदिर अलग से ही बनना चाहिए।"

यह सुनकर श्रेयांसमती माताजी एवं कुछ ट्रस्टी महानुभाव बोल पड़े–

"माताजी! हम लोगों ने तो अभी तक इस बारे में कुछ सोचा भी नहीं है। आप जैसा चाहें, वैसा मंदिर बनवा दीजिए।"

उस दिन माताजी ने कुछ चिन्तन किया और एक कमल जिनालय का निर्माण करवाकर उसकी 108 पंखुडियों पर ये प्रतिमाएँ विराजमान करने की प्रेरणा दी। ब्र.रवीन्द्र जी से उसकी रूपरेखा बनवाकर क्षुल्लक मोतीसागर महाराज ने 22 मई 1996 को विशाल सभा में ज्यों ही उस मंदिर की घोषणा की, दानदातारों की भीड़ लग गई और शीघ्र ही लाखों रुपये की स्वीकृतियाँ हो गईं। इसके पश्चात् समस्या थी कि मंदिर का निर्माण कैसे और कौन करवाएगा? क्षेत्र पर तो विशाल निर्माणाधीन मुनिसुव्रत मंदिर ही अभी अधूरा पड़ा था, यात्रियों की सुविधा हेतु अनेक वर्षों से स्वीकृत 20 कमरों का निर्माण भी आज तक पूरा नहीं हो पाया था, तो अब बिल्कुल नया काम करवाने की जिम्मेदारी भला कौन लेता? किन्तु सभी ट्रस्टियों की इच्छा थी कि माताजी ने जैसे जगह-जगह नई योजनाएँ साकार करवाई हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कोई न कोई नई रचना अवश्य बन जावे।

ट्रस्टियों ने सोच-विचार कर कमल मंदिर के निर्माण का संयोजक डॉ. पन्नालाल जैन पापड़ीवाल को बनाया किन्तु वे भी इतना बड़ा कार्य अक्टूबर

तक मात्र 3 महीने के अन्दर करवाने में परेशानी महसूस कर रहे थे। यह सारी प्रक्रिया तथा प्रारंभ में कार्य की रुकावट आदि देखकर पूज्य गणिनी माताजी ने कमल मंदिर के निर्माण की जिम्मेदारी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन के ऊपर डालते हुए कहा कि **''24 अक्टूबर आश्विन शुक्ला त्रयोदशी को शुभ मुहूर्त में कमल की 108 पंखुडियों पर सहस्रकूट की 1008 प्रतिमाएँ विराजमान करना है।''**

इतनी सब बात होने के बाद जगह का पूर्णरूपेण निर्णय हेकर 5 जून 1996 को शिलान्यास उस स्थान पर किया गया, जहाँ तीर्थक्षेत्र के महामंत्री वयोवृद्ध ब्र. गणेशीलाल जी सपरिवार 65 वर्षों से निवास कर रहे थे। उन्होंने स्वेच्छा से अपना अहोभाग्य समझते हुए टूटे-फूटे जीर्ण मकान को छोड़कर नए कमरों में गृहस्थी परिवर्तन कर लिया। उसके बाद 2 जुलाई 1996 को पूज्य माताजी का मालेगांव की ओर ससंघ मंगल विहार हो गया और रवीन्द्र जी हस्तिनापुर चले गये। इस मध्य जीर्ण मकान को गिरवाने, नींव खुदवाने आदि का काम डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल ने द्रुतगति से करवाया पुनः पूज्य माताजी का संघ 26 जुलाई को मांगीतुंगी पहुँच गया। 29 जुलाई (आषाढ़ शु. 14) को पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी, आर्यिका श्री श्रेयांसमती माताजी, इन दोनों संघों ने वर्षायोग स्थापना की और रवीन्द्र जी ने कमल मंदिर का नक्शा बनवाकर कार्य प्रारंभ करवा दिया। उन्होंने आसाम के कारीगर वासुदेवपाल को 108 पांखुडी बनाने का ठेका दे दिया किन्तु अगस्त के अंतिम सप्ताह तक निर्माण की मंद स्थिति देखकर क्षुल्लक मोतीसागर जी को चिंता हुई और उन्होंने रवीन्द्र जी को परामर्श देते हुए कहा कि ''यह मंदिर इस गति से अक्टूबर तक तैयार नहीं हो सकता है। इसे वास्तव में पूरा करने के लिए तुम्हें हस्तिनापुर से अपने कारीगर, सुपरवाइजर आदि को बुलाना पड़ेगा।''

तब रवीन्द्र जी ने तत्काल फोन करके हस्तिनापुर से अपनी पूरी निर्माण की टीम बुलाई और सितम्बर से कार्य तूफानी स्तर पर प्रारंभ हो गया। इस प्रकार 3-4 बार में हस्तिनापुर से सुपरवाइजर (शरीफ अहमद), मिस्त्री, मजदूर, लुहार, बढ़ई आदि लगभग 20-25 व्यक्तियों ने मांगीतुंगी पहुँचकर 20 अक्टूबर 1996 तक बाहर की रेलिंग आदि सहित पूरा ''सहस्रकूट कमल मंदिर'' तैयार करके क्षेत्र को प्रदान कर दिया, जिसमें 22 से 24 अक्टूबर तक वेदी शुद्धि, प्रतिष्ठा का कार्य हुआ एवं 24 अक्टूबर को प्रातः 9 बजे प्रतिमाएं विराजमान हो गईं तथा मध्यान्ह 3 बजे मंदिर पर कलशारोहण, ध्वजारोहण द्वारा अतिशय कान्ति का उद्योत होने लगा। मंदिर का उद्घाटन 26 अक्टूबर को संघपति लाला

महावीर प्रसाद जैन (बंगाली स्वीट सेंटर-दिल्ली) ने किया तथा दोनों संघों के पावन सानिध्य में इस वृहत् कार्य की पूर्णता पर गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के आशीर्वादात्मक उद्बोधन को पाकर जनमानस आल्हादित हो गया।

महाराष्ट्र एवं सुदूरवर्ती प्रान्तों के तमाम तीर्थयात्रियों ने यहाँ पहुँचकर यही कहा कि 3 माह में मांगीतुंगी की तो काया ही पलट गई है। मात्र एक कमल मंदिर की पूर्णता ही नहीं, पूज्य ज्ञानमती माताजी के लगभग 6 माह के प्रवास के अंतर्गत सरकार एवं समाज सभी का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ, जो क्षेत्र की चतुर्मुखी प्रगति का कारण बना। नासिक जिले के लोकप्रिय विधायक (आमदार) श्री जयचंद जैन कासलीवाल ने महाराष्ट्र सरकार की ओर से मांगीतुंगी पर्वत की चोटी तक विद्युत प्रकाश की स्थाई व्यवस्था करवा दी, यात्रियों को धर्मशाला से पर्वत के निकट सीढ़ियों तक जाने हेतु पक्की सड़क पुल का निर्माण भी करवा दिया।

इस प्रकार सिद्धक्षेत्र का यह प्रथम चातुर्मास महाराष्ट्र प्रान्त के लिए अपूर्व सिद्धी एवं प्रसिद्धी में निमित्त बन गया, क्योंकि शासन के अतिरिक्त दिगम्बर जैन समाज का भी आशातीत सहयोग प्राप्त हुआ।

➢मांगीतुंगी में एक और अनहोना संयोग देखने को मिला–

चातुर्मास के मध्य कल्पद्रुम, इन्द्रध्वज, सिद्धचक्र आदि कुल मिलाकर छोटे-बड़े लगभग 60 विधान सम्पन्न हुए एवं 26 अक्टूबर 1996 शरदपूर्णिमा को पूज्य माताजी का 63वाँ जन्मजयंती महोत्सव मनाया गया। उसी दिन मांगीतुंगी में एक अनहोना संयोग और भी देखने को मिला जो अतिशय का ही द्योतक था। हुआ यूँ कि पूज्य माताजी ने मार्च 1996 में घोषणा की थी कि अप्रैल सन् 1997 से पूरे देश में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव का जन्मजयंती महामहोत्सव राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मनाना प्रारंभ किया जाएगा, जो जैनधर्म की प्राचीनता, सार्वभौमिकता का परिचायक होगा। इस व्यापक समारोह के अन्तर्गत माताजी ने अयोध्या, प्रयाग, हस्तिनापुर में जन्म, दीक्षा एवं आहारचर्या के प्रतीक निर्मित करने की प्रेरणा की, तो प्रयाग से डॉ. प्रेमचंद जैन वहाँ की योजना को समझने हेतु मांगीतुंगी पधारे थे। माताजी उन्हें बता रही थीं कि प्रयाग में धातु का एक विशाल वटवृक्ष बनाकर उसके नीचे भगवान ऋषभदेव की पिच्छी-कमण्डलु सहित मुनि मुद्रा की खड्गासन प्रतिमा विराजमान करना है क्योंकि प्रयाग भगवान के उत्कृष्ट त्याग के कारण ही सार्थक नाम वाला है। इस चर्चा के मध्य में ही श्री प्रेमचंद प्रदीप कुमार जैन, खारीबावली-दिल्ली ने

कहा कि **''प्रयाग में यह वटवृक्ष की पूरी योजना मेरी ओर से बनाई जावे''** तथा संघपति महावीर प्रसाद जी बोले कि **''मेरी ओर से प्रयाग में भगवान ऋषभदेव की 21 फुट पद्मासन प्रतिमा का निर्माण करवा दीजिए।''** इन दोनों दानी महानुभावों का दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-हस्तिनापुर एवं प्रयाग की ओर से सम्मान किया गया।

सभा में उपस्थित समस्त जनसमूह आश्चर्यचकित हो कहने लगा कि **''यह कैसी जादुई शक्ति है, जो जिह्वा से वचन निकलते ही भक्तगण आगे से आगे उन्हें पूर्ण करने को तैयार खड़े रहते हैं।'** मैंने कहा कि **''यह सब भगवान के प्रति माताजी की अप्रतिम भक्ति का ही चमत्कार है इसीलिए इनके प्रत्येक कार्य के पीछे चक्रेश्वरी देवी की शक्ति दौड़ती रहती है।''**

पूज्य माताजी के जीवन में सिद्धक्षेत्र का यह प्रथम चातुर्मास जन-जन के लिए किसी न किसी कार्य की सिद्धि का प्रतीक बन गया, यह प्रसन्नता की बात है। भविष्य में इसी प्रकार से गुरु प्रेरणा प्रत्येक समाज का कल्याण करे, यही मंगलकामना है।

मांगीतुंगी तीर्थ से विहार :–

मूर्ति निर्माण की घोषणा से जहाँ एक ओर सभी के हृदय खुशी से अभिभूत हो रहे थे, वहीं पूज्य माताजी के मांगीतुंगी से विहार की घोषणा ने सभी को गंभीर मुद्रा में डाल दिया। पिछले 6-7 महीनों से माताजी के सानिध्य में जो उल्लास एवं उमंग देखने को मिलती थी, सभी को उसके खो जाने का डर था। आर्यिका श्री श्रेयांसमती माताजी, उनके संघ की सभी आर्यिकाएँ, पूज्य माताजी के असीमवात्सल्य को पाकर हृदय से अभिभूत थीं। खैर..... चातुर्मास के उपरान्त अपने पूर्व नियोजित कार्यक्रमानुसार पूज्य माताजी ने 14 नवम्बर 1996 को वहाँ से विहार कर दिया एवं 30 मार्च 1997 को संघ सहित भारत की राजधानी दिल्ली पहुँच गईं।

➢आर्यिका माताजी का वात्सल्य भुलाया नहीं जा सकता–

जिस दिन से हम लोगों ने हस्तिनापुर से मांगीतुंगी की ओर विहार किया था, उस दिन से ही मांगीतुंगी में विराजमान पूज्य आर्यिका श्री श्रेयांसमती माताजी के अतिरिक्त आर्यिका श्री सुगुणमती माताजी, आर्यिका श्री चन्द्रमती माताजी, आर्यिका श्री सुदृष्टिमती माताजी, आर्यिका श्री मनोमती माताजी, आर्यिका श्री दक्षमती माताजी आदि आर्यिकाएँ भी अतीव प्रसन्न थीं कि इस निमित्त से हमें पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के दर्शन एवं उनसे ज्ञानार्जन

और दीर्घकालीन अनुभव भी प्राप्त हो सकेगा। हम लोगों की निर्विघ्न यात्रा सम्पन्नता हेतु इन सभी माताओं ने जाप्यादि के अनुष्ठान भी किये थे तथा वहाँ पहुँचने पर इन लोगों के असीम वात्सल्य ने हमारी सारी थकान दूर कर दी थी।

मांगीतुंगी पंचकल्याणक एवं चातुर्मास के प्रवासकाल में पूज्य सभी माताजी के साथ बिताए गए स्वाध्याय, आगमचर्चा, वैयावृत्ति आदि के स्वर्णिम क्षण सदैव याद आते हैं। गणिनी माताजी के प्रति इन लोगों की अगाढ़ श्रद्धा-भक्ति तो थी ही, मुझ लघु दीक्षित आर्यिका व क्षुल्लक मोतीसागर जी के लिए भी सदा विनय, वात्सल्य एवं गुणग्राहकता ही झलकती थी। यही कारण रहा कि हम सबको भी वहाँ का प्रत्येक कार्य जम्बूद्वीप के समान अपना प्रतीत होता था और कठिन से कठिन कार्य करके, लेखन आदि का परिश्रम करके भी हमें थकावट महसूस नहीं होती थी।

वहाँ कुछ अत्यधिक पुराने एवं दकियानूसी विचारों वाली एक आर्यिका मनोमती जी थीं, जो चौके में किसी श्रावक-श्राविका को पॉलिस्टर के कपड़े पहने देख लेतीं या किसी की चोटी में रबड़ बैंड, हाथ में अंगूठी आदि देख लेतीं, तो कभी-कभी बेचैन होकर आहार छोड़ देतीं या काफी हूँ हूँ करके चौके के बाहर से उन्हें भगा देती थीं, तो मैं तथा संघ की ब्रह्मचारिणी बहनें उनके साथ खूब मजाक भी करती थीं लेकिन उन्होंने कभी बुरा न मानकर सदैव मुस्कराहट का ही परिचय देते हुए कहा कि तुम खूब हँस लो, मुझे अच्छा लगता है, परन्तु मैं क्या करूँ? मुझे यह सब देखकर घबड़ाहट होने लगती है।

पूज्य माताजी जब उन्हें समझातीं, तो वे बड़े विनय भाव से कहने लगतीं कि **ऐसी वात्सल्यमयी माँ मुझे बड़े भाग्य से मिली है, इस प्रकार बच्चों के समान प्यार से समझाने वाला मुझे जीवन में कोई नहीं मिला था। आपके जाने के बाद मुझे इस तरह से कौन समझाएगा ?**.....इत्यादि।''

इसी प्रकार एक वयोवृद्ध आर्यिका श्री सुगुणमती माताजी दिन में 4-5 बार मंदिर दर्शन करने जातीं, कभी-कभी गिर जाने पर चोट लगने पर भी उन्हें 2-4 बार मंदिर दर्शन के बिना चैन नहीं पड़ती थी, तो क्षुल्लक मोतीसागर जी ने उन्हें 'दर्शनमती' कहना शुरू कर दिया लेकिन वे बिल्कुल भी बुरा न मान कर यही कहती रहतीं कि **''आप लोगों का प्रेम हमेशा याद आएगा तथा आप सभी का दिन भर कार्य करने का जो सुन्दर तरीका है, सामूहिक स्वाध्याय, सामूहिक अध्ययन, संघ का अनुशासन आदि देखकर मन बड़ा प्रसन्न होता है।''**

इस प्रकार आर्यिका श्री सुदृष्टिमती माताजी हमेशा पूज्य गणिनी माताजी

के लिए शास्त्रभंडार से शास्त्र निकालना, वैयावृत्ति करना, पिच्छी बनाना आदि प्रत्येक कार्य हेतु हरदम तैयार रहतीं और हम लोगों के सुख-दुःख का भी खूब ध्यान रखते हुए प्रसन्नता का अनुभव करतीं। इन छोटी उम्र वाली माताजी की नवोदित प्रतिभा भविष्य में निश्चित ही गुरु परम्परा वृद्धि में चार चाँद लगाएगी।

चातुर्मास में श्रावण शु. 8 को औरंगाबाद की एक ब्रह्मचारिणी राजाबाई कासलीवाल ने आर्यिका दीक्षा लेकर शैलमती नाम प्राप्त किया। वे भी मांगीतुंगी के इतिहास से जुड़ी एक कड़ी हैं। इन समस्त माताओं से युक्त आर्यिका संघ का वात्सल्य अब तो हमारे जीवन का अविस्मरणीय अंग ही बनकर रह गया है क्योंकि पदविहारी साधुओं का मिलन तो यदा-कदा ही संभव होता है।

➢हरियाणा राज्य में प्रेरणादायी प्रतिबंध–

23 मार्च 1997 को हम लोग राजस्थान के ''शाजांपुर'' के डाकबंगले में ठहरे थे। अगले दिन 24 मार्च को होली थी इसीलिए जगह-जगह शराब की दुकानों पर लोग झूमते नजर आते थे। उस दिन शाम को ठीक 6 बजे राजस्थान प्रान्त की सीमा समाप्त करके ''बावल'' नामक गाँव के स्कूल में आए तो हरियाणा की सीमा प्रारंभ होते ही वहाँ के लोगों ने बताया कि ''माताजी! हमारे हरियाणा में तो सरकार की ओर से कानून लागू है कि शराब पीकर यदि कोई गाड़ी चलाता पाया गया, पीता हुआ कोई सड़क पर देखा गया अथवा शराब की बोतलें लेकर किसी को पकड़ा गया तो उसे सीधे जेल भेज दिया जाता है। इसके साथ ही पूरे हरियाणा में कोई शराब की दुकान नहीं खोल सकता है **यह राजकीय प्रतिबंध है।**''

यह प्रतिबंध सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई और हमने कहा कि यदि इसी प्रकार हर प्रदेशों में ऐसे ही कानून बन जाएं, तो हमारा देश **''सोने की चिड़िया''** की सार्थकता को पा जावे, जिस हरियाणा को हम बहुत बिगड़ा हुआ क्षेत्र माना करते थे, वहाँ बहुत ही सदाचार प्रवृत्ति देखने को मिली। यहाँ तक कि हम लोगों ने होली (दुलहंडी) के मुख्यदिवस पर भी दोनों समय पदविहार किया। रेवाड़ी एवं दिल्ली के श्रावक साथ रहे, कहीं भी किसी प्रकार की समस्या सामने नहीं आई।

➢टूरिंग शिलान्यास–

यूँ तो हम लोग मांगीतुंगी से विहार करते हुए जगह-जगह नई-नई योजनाओं के शिलान्यास करते आए थे। उसी श्रृंखला में हरियाणा प्रान्त भी अछूता नहीं रहा, रेवाड़ी के मॉडल-टाउन एरिया में नवनिर्मित होने वाले मंदिरजी

के लिए पूज्य माताजी ने कैलाशपर्वत की वेदी का शिलान्यास संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों को भेजकर करवाया क्योंकि 25 मार्च को वहाँ चैत्र कृष्णा एकम तिथि को पूज्य माताजी का 44वाँ क्षुल्लिका दीक्षा दिवस शहर में मनाया जा रहा था पुनः उसी दिन आगे धारूहेड़ा के लिए विहार भी था किन्तु 26 मार्च को धारूहेड़ा पहुँचते ही चमत्कार की मानो पराकाष्ठा ही हो गई। हुआ यूँ कि धारूहेड़ा में गाँव से बाहर मेन हाईवे रोड पर **''जैन पब्लिक स्कूल''** में पूज्य माताजी व हम सभी को जरा सी देर रोककर देवेन्द्र कुमार जैन नामक वहाँ के श्रावक ने कहा कि पिछले वर्ष यहाँ से जाते समय आपने आशीर्वाद दिया था, तो हमें खूब बड़ी भूमि स्कूल के पार्क हेतु मिल गई है, अब आप ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि हम इस भूमि का अच्छा विकास कर सकें।

पूज्य माताजी हम लोगों के साथ लघु विचार-विमर्श करके बोलीं कि इस पार्क का नाम **''भगवान ऋषभदेव पार्क''** रखो तथा इस पार्क में एक छोटा सा कैलाशपर्वत बनाकर उस पर भगवान ऋषभदेव की पद्मासन प्रतिमा विराजमान करो ताकि दोनों ओर से निकली मुख्य सड़कों पर चलते पथिकों की दृष्टि भगवान् पर पड़े और अनायास ही वे अपने पापों का नाश करने में सफल हो सकें।

धारूहेड़ा के जो 4-5 लोग साथ थे, उन्हें यह प्रस्ताव बहुत अच्छा लगा फिर तो **''शुभस्य शीघ्रं''** वाली नीति सार्थक हो गई और देखते ही देखते कैलाशपर्वत का स्थान निश्चित हो गया, पूज्य माताजी के करकमलों से वहाँ रक्षायंत्र स्थापित करवाने के दृष्टिकोण से गड्ढा खुदने लगा, फिर एक सज्जन बोले कि ''माताजी! यदि आप आदेश करें तो शिलान्यास ही हो जाये। मैं अभी 5 मिनट में सारी सामग्री ले आता हूँ।'' माताजी की स्वीकृति होते ही सारा समारोह घंटे भर में सम्पन्न हो गया। तब तक गाँव के 20-25 नर-नारी भी वहाँ आ गये थे, क्षुल्लक मोतीसागर जी की प्रेरणा से बोली भी हुईं, तो मिनटों में 1 लाख से अधिक धनराशि एकत्रित हो गई। सभी ने उत्साहपूर्वक कैलाशपर्वत का शिलान्यास किया पुनः माताजी के संघ का 'धारूहेड़ा'' गाँव के अन्दर पदार्पण हुआ और आहार के पश्चात् मध्यान्ह प्रवचन करके 4 बजे ही आगे विहार हो गया।

इतना सब देखकर कई नगरों के लोग तो कहने लगते थे कि आपके संघ में यह तो देवोपुनीत जैसी व्यवस्था लगती है कि 2-4 घंटों में ही आपके संघ के माध्यम से समाज को कई प्रकार की उपलब्धियाँ हो जाती हैं। उस दिन तो मैं भी कह उठी कि ''माताजी! आप वास्तव में अब **''शिलान्यासमती''** और

''निर्माणमती'' के रूप में ही साकार हो रही हैं क्योंकि अब तो चलते-फिरते शिलान्यास होने लगे हैं।

➢णमोकार बैंक की शाखाएँ–

जम्बूद्वीपस्थल-हस्तिनापुर में पूज्य माताजी की प्रेरणा से 8 अक्टूबर 1995, शरदपूर्णिमा को **''णमोकार महामंत्र बैंक''** की स्थापना हुई थी पुनः उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात प्रान्तों में संघ भ्रमण के दौरान दो सौ से अधिक बैंक की शाखाएँ खुलीं और 50 हजार से अधिक निःशुल्क लेखन पुस्तिकाएँ दानदातारों की ओर से लेखकों को वितरित की गईं।

इन 10 वर्षों में बैंक में करोड़ों मंत्रों का संग्रह हो चुका है।

➢महिला संगठन की इकाई समितियाँ–

मार्च 1996 में इंदौर (मध्यप्रदेश) में पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से उन्हीं के सानिध्य में एक **''अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन''** नाम से महिलाओं का संगठन गठित हुआ, जो अन्य समस्त सभा, संस्थाओं की राजनीति से दूर सामाजिक कुरीतियों को हटाने हेतु सक्रिय है तथा अनेक प्रान्तों में इसकी लगभग 175 इकाई समितियाँ खुल चुकी हैं, जो सक्रिय कार्य करती हुई नारी जागरण की ओर अग्रसर हैं।

➢स्वप्नवत् सारा विहार सम्पन्न हो गया–

अपने निश्चित कार्यक्रमानुसार जब हम लोग 30 मार्च 1997 को लालकिला मैदान दिल्ली आ गए, तो संघपति महावीर प्रसाद जी, उनकी पत्नी सौ. कुसुमलता जी, प्रेमचंद जी-खारीबावली, कमलचंद जैन आदि महानुभाव कहने लगे कि माताजी! आज ऐसा लग रहा है, मानो यह सब स्वप्न था। क्या यह वास्तव में सत्य घटना है कि आप लोग 3600 किमी. एक वर्ष में चलकर वापस आ गये हैं?

सत्य को ही स्वप्न समझने में मैं स्वयं भी सम्मिलित हो गई और समझ नहीं आया कि इतनी भारी धर्मप्रभावना के साथ उत्तर से दक्षिण-पश्चिम की सीमाओं को अपने ही पैरों से नाप लेना वास्तव में भगवान ऋषभदेव का जाप्य मंत्र एवं पूज्य माताजी का आशीर्वाद ही हमारा संबल रहा है। पाठकजन इस स्वप्न को पूर्ण सत्य ही मानें और अपने आत्मबल को वृद्धिंगत कर देव-शास्त्र-गुरु के परमभक्त बनें।

➢धर्मगुरुओं से वात्सल्यपूर्ण मिलन–

हस्तिनापुर से मांगीतुंगी एवं मांगीतुंगी से वापस दिल्ली प्रवास तक मध्य

में कुछ स्थानों पर दिगम्बर जैन आचार्यों, मुनियों एवं आर्यिकाओं से भी मिलकर अनेक सामयिक विषयों पर चर्चाएं हुईं, वे स्थान और साधु के नाम इस प्रकार हैं–

1. आचार्य श्री विद्यानंद महाराज	– दिल्ली
2. आचार्य श्री सन्मतिसागर महाराज संघ	– दिल्ली
3. आर्यिका कुलभूषणमती माताजी	– महावीर जी (राज.)
4. मुनि श्री सिद्धान्तसागर महाराज	– सवाई माधोपुर (साहू सीमेंट फैक्ट्री)राज.
5. मुनि श्री तरुणसागर महाराज	– कोटा (राज.)
6. मुनि श्री निजानंदसागर महाराज	– इंदौर (म.प्र.)
7. मुनि श्री रयणसागर महाराज	– मांगीतुंगी (महा.)
8. आर्यिका श्री श्रेयांसमती माताजी	– मांगीतुंगी (महा.)
9. आर्यिका श्री कीर्तिमती माताजी	– महुवा (गुज.)
10. मुनि श्री कीर्तिधरनंदी महाराज	– अहमदाबाद
11. मुनि श्री हेमंतसागर एवं विरागसागर महाराज	– खेरवाड़ा एवं केशरिया जी (राज.)
12. आर्यिका श्री आदिमती एवं श्रुतमती माताजी	– सलूम्बर (राज.)
13. आचार्य श्री पद्मनंदि महाराज संघ	– देवपुरा (राज.)
14. आचार्य श्री अभिनन्दन सागर महाराज संघ	– उदयपुर (राज.)
15. आचार्य श्री नेमिसागर महाराज	– दिल्ली-लालमंदिर

➢राजनेताओं को मंगल आशीर्वाद–

अनेक नगर एवं शहरों में छोटे-बड़े राजनेता, पुलिस अधिकारी, पटवारी, नगरप्रमुख, सरपंच आदि ने आकर पूज्य माताजी के श्रीचरणों में वंदन कर शुभाशीर्वाद प्राप्त किया है, उनमें से कुछ प्रमुख नेताओं के नाम प्रसंगोपात्त यहाँ दे रही हूँ–

नेता के नाम	**कहाँ आए?**
1. श्री चरती लाल गोयल (दिल्ली प्रदेश विधान सभा अध्यक्ष)	दरियागंज, दिल्ली
2. श्री मनोहर जोशी -मुख्यमंत्री महाराष्ट्र प्रदेश	मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र

3. श्री जयचंद जैन कासलीवाल (विधायक) महाराष्ट्र	मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र
4. महाराष्ट्र शासन के अनेक विभागीय मंत्री	मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र
5. श्री शंकर सिंह वाघेला मुख्यमंत्री गुजरात प्रदेश	अहमदाबाद (गुजरात)
6. श्री कृष्णपाल सिंह -महामहिम राज्यपाल गांधीनगर (गुजरात)	गुजरात
7. दीप्तीवेनपटेल चेयर मैन महिला उत्कर्ष मंडल गुजरात	अहमदाबाद
8. आनन्दीबेनपटेल सांसद	अहमदाबाद
9. भावनाबेन दवे (भूतपूर्व मेयर अहमदाबाद)	अहमदाबाद
10. लीलाबेन अध्वर्यु (कार्पोरेटर)	अहमदाबाद
11. श्री दिनेश चंद रावल (चेयरमेन इंडियन काउंसिल ऑफ वेलफेयर)	अहमदाबाद
12. श्री विजय भाई पटेल (सांसद)	अहमदाबाद
13. श्री यतीन भाई ओझा (विधान सभा सदस्य)	अहमदाबाद
14. श्री शांतिलाल चपलोत (राजस्थान विधान सभा अध्यक्ष)	सलूम्बर (राज.)
15. श्री साहब सिंह वर्मा (मुख्यमंत्री दिल्ली प्रदेश)	लालकिला मैदान दिल्ली
16. श्री जय प्रकाश अग्रवाल (सांसद)	लालकिला मैदान, दिल्ली
17. कु. पूर्णिमा सेठी (विधायक) दिल्ली	लालकिला, दिल्ली
18. श्री मदनलाल गाबा (क्षेत्रीय विधायक)	ऋषभविहार, दिल्ली
19. डा. हर्षवर्धन (स्वास्थ्य एवं शिक्षामंत्री-दिल्ली प्रदेश)	ऋषभविहार, दिल्ली
20. श्रीमती मिथिलेश जैन (अध्यक्ष पर्यावरण विभाग)	ऋषभविहार, दिल्ली
21. श्री जय प्रकाश अग्रवाल (सांसद)	ऋषभविहार, दिल्ली
22. श्री वीरेन्द्र कुमार जैन (वित्त राज्य मंत्री भारत सरकार)	सूर्य नगर (गाजियाबाद)
23. श्री वासुदेव कप्तान-विधायक दिल्ली प्रदेश	लालकिला मैदान, दिल्ली

➢राजधानी में प्रवेश के साथ ही कार्यक्रमों का सिलसिला शुरू हो गया–

अब तक दिल्ली वाले भी अच्छी तरह से समझ चुके हैं कि ज्ञानमती माताजी न तो स्वयं खाली बैठती हैं और न वे किसी को जरा भी देर खाली बैठने देती हैं अतः दिल्ली में 30 मार्च 1997 को मंगल प्रवेश होते ही 2 अप्रैल को भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती महोत्सव का विशेष कार्यक्रम दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर एवं अग्रवाल दिगम्बर जैन पंचायत के संयुक्त तत्त्वावधान में रथयात्रा एवं दिगम्बर जैन लाल मंदिर में 108 चाँदी के कलशों से भगवान ऋषभदेव का जन्माभिषेकपूर्वक मनाया गया तथा इस वर्ष को **''भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती महोत्सव वर्ष''** घोषित किया गया।

इसी अवसर पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से चाँदनी चौक, दिल्ली में अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन की इकाई का दीप जलाकर उद्घाटन किया गया। वर्तमान में दिल्ली की विभिन्न कॉलोनियों में उस महिला संगठन की लगभग 50 इकाईयाँ कार्य कर रही हैं।

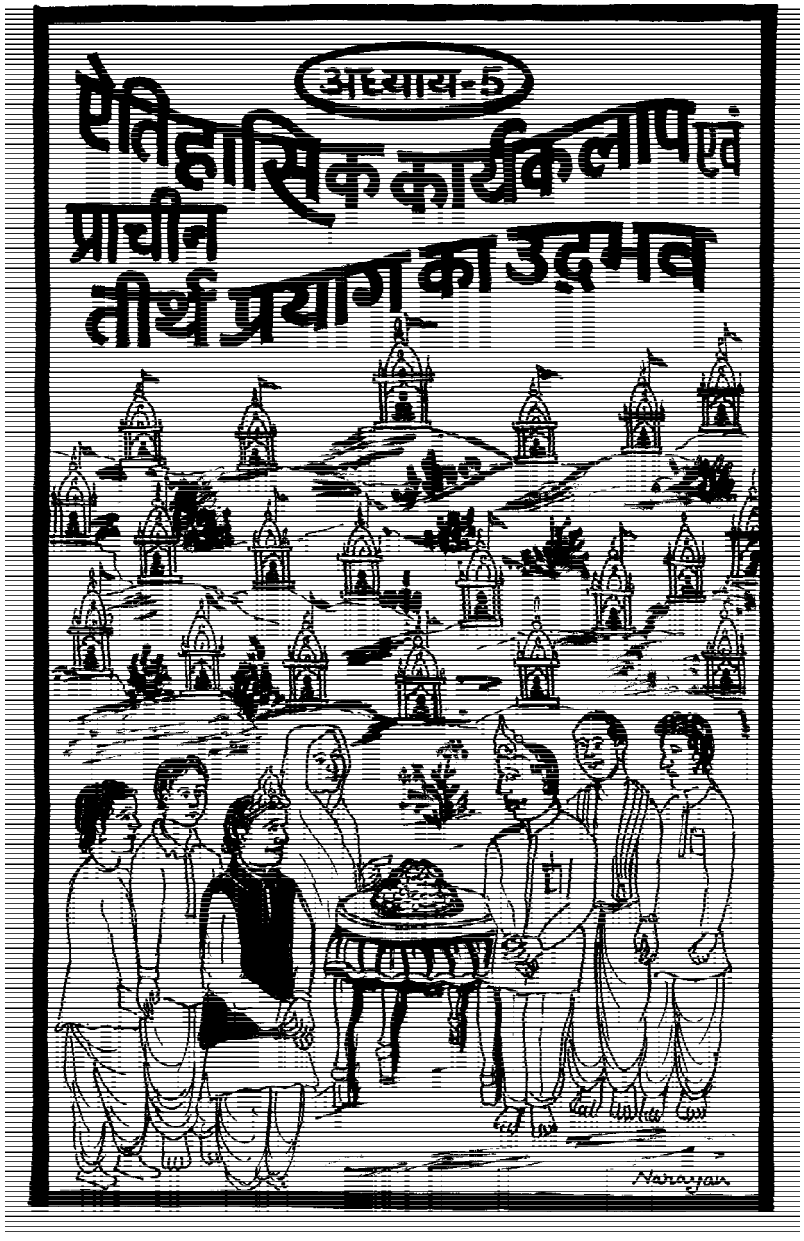
स्व. डॉ. दरबारीलाल कोठिया के उद्गार–

अत्यन्त प्रमोद की बात है कि केवल अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग में ही नहीं, चारित्राचारादि पंचाचार में सतत निरत पूज्य ज्ञानमती माताजी ने अष्टसहस्री जैसे दुरूह न्याय ग्रंथ के हिन्दी अनुवाद के अभाव की पूर्ति का सफल एवं स्तुत्य कार्य किया है। अष्टसहस्री जितना जटिल और दुखगाह दार्शनिक ग्रंथ है, इसे तज्ज्ञ विद्वान् ही जानते हैं। एक ही स्थल पर बौद्ध दर्शन की चर्चा करते-करते अन्य दर्शनों की भी चर्चा आ जाती है, जिसे समझना साधारण बुद्धि का कार्य नहीं है। उसे समझने-समझाने के लिए बुद्धि का बहु-आयाम करना पड़ता है। जिसका सभी भारतीय दर्शनों में गहरा प्रवेश हो वही अष्टसहस्री का मर्मोद्घाटन कर सकता है। माताजी ने इस दुखगाह ग्रंथ का अति सरल हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करके जिस साहस एवं बुद्धि वैभव का परिचय दिया है वह निःसंदेह स्तुत्य है।''

5 जुलाई 1974, वाराणसी

अध्याय-5

ऐतिहासिक कार्यकलाप एवं प्राचीन तीर्थ प्रयाग का उद्भव



अध्याय-5

ऐतिहासिक कार्यकलाप एवं प्राचीन तीर्थ प्रयाग का उद्भव

इतिहास बनाने वाले, होते हैं विरले प्राणी।
इतिहास को पढ़कर फिर तो, बन जाते कितने ज्ञानी।।

अर्थात् संसार में कुछ विरली महान आत्माएँ ही अपने आदर्शों के द्वारा इतिहास का निर्माण करती हैं पुनः उनके द्वारा निर्मित इतिहास को पढ़कर न जाने कितनी भव्यात्माएँ अपना कल्याणमार्ग प्रशस्त करती हैं। पूज्य ज्ञानमती माताजी एक ऐसी ही ऐतिहासिक नारी हैं, जिन्होंने अपने प्रत्येक कार्यकलाप के द्वारा जन-जन को प्रेरणाएँ प्रदान करके नए-नए इतिहासों का निर्माण किया है। इनके जीवन की ऐतिहासिक घटनाएँ यद्यपि अनेकानेक हैं, फिर भी यहाँ प्रसंगोपात्त मैं कतिपय प्रमुख सृजनात्मक कार्यकलापों से पाठकों को अवगत कराती हूँ।

➢प्रीतविहार (दिल्ली) में कमल मंदिर का निर्माण–

दिल्ली के एक श्रावक श्री अनिल कुमार जैन ने पूज्य माताजी से मांगीतुंगी जाते समय अपने मकान के लॉन में एक गृह चैत्यालय बनाने की भावनानुसार जमीन में यंत्र स्थापित कराया था। यंत्र के चमत्कार स्वरूप वहाँ उन्होंने माताजी की प्रेरणा से कमल मंदिर बनवा लिया और वापस संघ के दिल्ली आने तक उस मंदिर का निर्माण पूरा हो गया। अतः जून 1997 में अत्यन्त प्रभावनापूर्वक भगवान ऋषभदेव की सवा दो फुट पद्मासन धातु प्रतिमा का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव संघ सानिध्य में सम्पन्न हुआ। आज वह कमल मंदिर दिल्ली का एक चमत्कारिक **''भगवान ऋषभदेव कमल मंदिर''** के नाम से प्रसिद्ध हो चुका है। उसके निर्माता पुण्यशाली श्रावक अनिल जी माताजी के अनन्य भक्त हैं।

➢एक साथ चौबीस कल्पद्रुम विधानों ने विहंगम दृश्य उपस्थित कर दिया!–

अक्सर यह देखा जाता है कि किसी को अगर एक मण्डल विधान करना है तो उसे बड़ी चिंता हो जाती है कि कैसे यह विधान प्रभावनापूर्वक सम्पन्न होगा? कितने लोग करेंगे? लेकिन ज्ञानमती माताजी ने कभी नकारात्मक ढंग से सोचना सीखा ही नहीं है। मैंने और माताजी ने मिलकर दिल्ली में एक भक्ति महाकुंभ का विराट आयोजन कराने की दृष्टि से चौबीस भगवन्तों के समवसरण

एक साथ बनाकर कल्पद्रुम विधान की योजना बनाई, पुनः उन्होंने एक साथ एक-दो नहीं अपितु चौबीस कल्पद्रुम विधान कराने की घोषणा कर दी। जिन-जिन महानुभावों ने वह दृश्य देखा है, वे आज भी आकर यही कहते हैं कि माताजी! उस समय तो ऐसा लगता ही नहीं था कि इस समय पंचमकाल चल रहा है, बिल्कुल चतुर्थकाल जैसा दृश्य सर्वत्र दृष्टिगोचर होता था। एक साथ हजारों लोग केशरिया परिधान में पूजन करते थे जबकि दिल्ली जैसी आधुनिक नगरी के वासियों में इतनी भक्तिभावना की उम्मीद नहीं थी परन्तु उस विधान को देखकर तो विश्वास हो गया कि आज भी समाजों में देव-शास्त्र-गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा-भक्ति की भावना भरी हुई है।

इस प्रकार भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती महोत्सव वर्ष में यह एक अभूतपूर्व भक्ति आयोजन सम्पन्न हुआ।

➢समवसरण प्रवर्तन के साथ जन्मजयंती वर्ष का समापन हुआ–

''भगवान ऋषभदेव जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर हैं अतः भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक नहीं हैं'' इस बात से जन-जन को परिचित कराने हेतु पूज्य माताजी के मन में सन् 1992 से लगन लगी थी अतः अयोध्या तीर्थ का विकास, 108 फुट मूर्ति निर्माण प्रेरणा, 24 कल्पद्रुम विधान आदि कुछ न कुछ प्रभावनात्मक कार्य समय-समय पर हुए, उसी शृंखला में पूज्य माताजी ने दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के कार्यकर्ताओं को **''भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार''** के नाम से पूरे भारत में एक रथ घुमाने की प्रेरणा दी। उस रथ के साथ-साथ जन्मकल्याणक के प्रतीक में एक **विशाल ऐरावत हाथी** से समन्वित दूसरा रथ भी बनाया गया। इन दोनों रथों का **उद्घाटन 22 मार्च 1998** को ऋषभजयंती के दिन जन्मजयंती महोत्सव वर्ष के समापन अवसर पर **राजधानी दिल्ली के लालकिला मैदान से केन्द्रीय वित्तराज्यमंत्री श्री वी.धनंजय कुमार जैन की अध्यक्षता** में हुआ पुनः **9 अप्रैल 1998** को भगवान महावीर जन्मजयंती के दिन तत्कालीन **प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी** ने भारतभ्रमण हेतु इन रथों का प्रवर्तन किया। निरन्तर तीन वर्षों तक सम्पूर्ण भारत में इस समवसरण श्रीविहार के द्वारा भगवान ऋषभदेव के सिद्धान्तों का एवं व्यसनमुक्ति, सदाचार, शाकाहार का जो व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ है, वह अविस्मरणीय है।

➢हर दिन नया तेरे जीवन का होता है–

वास्तव में ज्ञानमती माताजी के जीवन का अगर सूक्ष्मता से अवलोकन किया जाये, तो उनके जीवन का हर क्षण, हर पल, उनकी हर सोच, उनका

हर कदम, उनका हर दिन किसी न किसी नई उपलब्धि को प्राप्त कराने वाला होता है, इन्हीं उपलब्धियों के क्रम में ज्ञानमती माताजी ने विचार किया कि जहाँ से शिक्षा का प्रचार-प्रसार होता है, उनके कुलाधिपतियों को भगवान ऋषभदेव के जीवन से परिचित कराना परम आवश्यक है अतः उन्होंने हम लोगों के साथ विचार-विमर्श करके **''भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन''** आयोजित करने की प्रेरणा प्रदान की।

दिल्ली से विहार करके हस्तिनापुर आने के पश्चात् पूज्य माताजी के सानिध्य में 4 से 6 अक्टूबर 1998 तक यह आयोजन रखा गया, जिसमें पूरे देश के विश्वविद्यालयों से लगभग 30 कुलपति, कुछ पूर्व कुलपति एवं शताधिक प्रोफेसर विद्वानों ने भाग लिया। सभी ने इस बात को स्वीकार किया कि अभी तक हम लोग भगवान महावीर को जैनधर्म का संस्थापक मानते थे परन्तु आज यह बात ज्ञात हुई है कि **''जैनधर्म प्राकृतिक शाश्वत धर्म है और भगवान ऋषभदेव से महावीर तक इस युग के 24 तीर्थंकर हुए हैं।''**

➢भगवान ऋषभदेव का निर्वाण महोत्सव अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया–

जब से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना हुई है, तब से ही इसके कार्यकलाप सर्वतोमुखी, सर्वोदयी एवं राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के रहे हैं, इसीलिए विविध संस्थाओं के कार्यकर्ता भी इसे जैनधर्म का पावर हाउस, कार्यकर्ताओं का ट्रेनिंग सेंटर आदि कहते हैं।

भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती, भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार के पश्चात् पूज्य माताजी की इच्छा हुई कि भगवान ऋषभदेव का निर्वाण महोत्सव अब अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मनाया जाये अतः 4 फरवरी 2000 को (माघ कृ. 14, भगवान ऋषभदेव निर्वाण कल्याणक दिवस) निर्वाण महोत्सव का उद्घाटन राजधानी दिल्ली के लालकिला मैदान में तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने किया, जिसमें कृत्रिम-विशाल कैलाश पर्वत के समक्ष सर्वप्रथम प्रधानमंत्री जी ने निर्वाणलाडू समर्पित किया पुनः सभाध्यक्ष तत्कालीन केन्द्रीय वित्त राज्यमंत्री श्री वी.धनन्जय कुमार जैन ने द्वितीय लाडू चढ़ाया, उसके बाद तो हजारों नर-नारियों ने पंक्तिबद्ध होकर भक्तिभावपूर्वक 1008 निर्वाणलाडू चढ़ाकर अपने जीवन को धन्य किया। इसी अवसर पर लालकिला मैदान-दिल्ली में कैलाशपर्वत पर विराजमान होने वाली 72 रत्नप्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई एवं 4 से 10 फरवरी तक ''विशाल ऋषभदेव मेला'' भी आयोजित हुआ, जिसे देश-विदेश के लाखों नर-नारियों ने देखा।

➢जम्बूद्वीप का तृतीय महामहोत्सव सन् 2000 में मनाया गया–

जम्बूद्वीप रचना का निर्माण पूर्ण होने के बाद सन् 1985 में पूज्य माताजी ने संस्थान के कार्यकर्ताओं को प्रेरणा प्रदान की थी कि प्रत्येक पाँच वर्षों में **''जम्बूद्वीप महामहोत्सव''** का आयोजन करना है। उनकी प्रेरणानुसार सन् 1990 और 1995 में दो महोत्सव सम्पन्न हो चुके थे पुनः सन् 2000 में भगवान ऋषभदेव निर्वाण महोत्सव की सम्पन्नता के पश्चात् पूज्य माताजी दिल्ली से विहार करके हस्तिनापुर पहुँचीं, वहाँ उनके सानिध्य में चैत्र शुक्ला 13 से वैशाख कृष्णा 5 (16 से 23 अप्रैल 2000) तक पंचकल्याणक प्रतिष्ठापूर्वक जम्बूद्वीप-महामहोत्सव का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। यह पूरा पंचकल्याणक प्रथम बार विमलेश एवं दीपक जैन-गुलमोहर पार्क, दिल्ली के अर्थ सौजन्य से सम्पन्न किया गया।

➢इतिहासकार सम्मेलन ने नया इतिहास कायम किया–

जम्बूद्वीप महोत्सव की सम्पन्नता के पश्चात् 11 जून 2000 को हस्तिनापुर में त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा ''जैनधर्म की प्राचीनता'' विषय पर एक दिवसीय संगोष्ठी आयोजित हुई, जिसमें अनेक उच्चकोटि के इतिहासकार एवं विद्वान् पधारे तथा दिल्ली से एन.सी.ई.आर.टी. की ओर से पधारे इतिहास के रीडर श्री प्रीतीश आचार्य ने सभी विद्वानों के आलेख सुनकर संगोष्ठी की रिपोर्ट शिक्षा विभाग तक पहुँचाने का आश्वासन दिया पुनः जब पूज्य माताजी हस्तिनापुर से विहार करके दिल्ली (प्रीतविहार-कमल मंदिर) पहुँचीं, तब वहाँ एन.सी.ई.आर.टी. के डायरेक्टर प्रो. जे.एस. राजपूत पूज्य माताजी के दर्शन हेतु पधारे तथा अनेक चर्चाओं के दौरान उन्होंने इतिहास की नई पाठ्यपुस्तकों में संशोधन करने का विश्वास दिलाते हुए पूज्य माताजी से जैनधर्म का एक अधिकृत पाठ लिखकर देने को कहा जो कि कुछ ही दिन पश्चात् उनके पास भिजवा दिया गया। इस बीच तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी भी दो बार पूज्य माताजी के दर्शनार्थ आए और पाठ्यपुस्तकों में यथायोग्य संशोधन की बात पर उन्होंने कहा कि **''हर धर्म के अधिकृत साधु-संतों एवं विशिष्ट विद्वानों से लेख को प्रमाणित करवाकर ही पाठ्यपुस्तकों में प्रकाशित हो, ऐसा मेरा प्रयास है।''**

इस प्रकार पूज्य माताजी द्वारा पुरुषार्थ करते-करते आखिर एक दिन सफलता मिली, जब संसद भवन के सत्रों में भी पाठ्यपुस्तकों के संशोधन की विस्तृत चर्चा चली और जैनधर्म के साथ-साथ अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति लिखी गई असत्य बातों का कुछ अंशों में संशोधन (सन् 2003 के संस्करणों में)

हुआ था। आगे भी पुरुषार्थ करते रहने से अन्य विवादास्पद विषयों का परिवर्तन भी संभव है।

➢द्वितीय सहस्राब्दि का अन्तिम चातुर्मास स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा–

जब सारी दुनिया सन् 2000 में द्वितीय सहस्राब्दि की विदाई और तृतीय सहस्राब्दि के आगमन का जश्न मना रही थी, ऐसे समय में ज्ञानमती माताजी का अन्तर्मन एक नवीन तीर्थ के निर्माण की योजना बना रहा था। उन्होंने अनिल कुमार जैन, प्रीतविहार-दिल्ली की तीव्र भावनानुसार सन् 2000 का चातुर्मास स्वप्रेरणा से निर्मित भगवान ऋषभदेव कमल मंदिर में किया। उस चातुर्मास के मध्य दिल्ली में कैलाश मानसरोवर यात्रा, 48 भक्तामर मण्डल विधान आदि कई भव्य कार्यक्रम सम्पन्न हुए तथा भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं ज्ञानकल्याणक भूमि प्रयाग-इलाहाबाद में नवीन तीर्थ निर्माण की रूपरेखा तैयार हुई। इसे कमल मंदिर में विराजमान भगवान ऋषभदेव की मनोहारी प्रतिमा का अतिशय चमत्कार ही समझना चाहिए।

➢मैं तो सोने का मंदिर बनवाऊँगा–

एक बालक की भावना तो देखिए! जब से अनिल जी ने कमल मंदिर का निर्माण कराया, उनके पुत्र अतिशय जैन ने कई बार ये भावना प्रगट की कि मैं भी बड़ा होकर पापा की तरह एक बड़ा सा मंदिर बनवाऊँगा। पूछने पर कि किस प्रकार का मंदिर बनवाने की आपकी भावना है, उस बालक ने तुरंत उत्तर दिया कि "पापा ने तो संगमरमर का मंदिर बनवाया है, मैं सोने का मंदिर बनवाऊँगा।"

वास्तव में सम्राट् चन्द्रगुप्त द्वारा देखे गए स्वप्न साकार होते दिखाई दे रहे हैं।

➢श्री ज्ञानमती माताजी को हमने तीर्थ बनाते देखा–

जब से पूज्य माताजी के मन में प्रयाग तीर्थ बनाने की योजना आई थी, तब से ही वे वहाँ कैसा मंदिर बनाना है, कैसे क्या करना है, कौन सी आकर्षक रचना बननी चाहिए? आदि-आदि बातें ही सोचती रहती थीं। उठते-बैठते, चलते-फिरते बस उन्हें यही एक धुन थी कि 'इलाहाबाद-प्रयाग' में 'तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली' नाम से तीर्थ का निर्माण करना है।

आखिरकार प्रीतविहार-दिल्ली में चातुर्मास सम्पन्न करने के पश्चात् उन्होंने संघ सहित इलाहाबाद के लिए मंगलविहार कर ही दिया। वहाँ भूमि क्रय करके भाई रवीन्द्र जी वहाँ पर पूज्य माताजी की प्रेरणानुसार निर्माणकार्य तो प्रारंभ करा ही चुके थे। वहाँ पहुँचकर पूज्य माताजी बहुत ही प्रसन्न हुईं।

उसके बाद तो निर्माणकार्य में न जाने कहाँ से गति आ गई, देखते ही

देखते भगवान ऋषभदेव की 14 फुट पद्मासन प्रतिमा का 51 फुट ऊँचे स्तम्भ के ऊपर विराजमान होना, 72 जिनप्रतिमाओं से समन्वित विशाल कैलाशपर्वत की रचना बनना, वटवृक्ष मंदिर का निर्माण, समवसरण मंदिर का निर्माण आदि इतनी शीघ्रता से सम्पन्न होते चले गए, ऐसा लग रहा था कि मानो कोई दैवी शक्ति ही आ गई हो।

अपनी आँखों के सामने इतना बड़ा तीर्थ निर्मित होते देखकर ही मैंने कुछ पंक्तियाँ संजोई थीं–

श्री ज्ञानमती माताजी को हमने तीर्थ बनाते देखा,
ये हैं इतिहास प्रणेता।

➢प्रयाग तीर्थ की यात्रा ने असली महाकुंभ का रूपक प्रस्तुत किया–

विश्व के क्षितिज पर महाकुंभ नगरी के रूप में विख्यात प्रयाग-इलाहाबाद नगरी को कौन नहीं जानता? आध्यात्मिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक वैभव को स्वयं में समेटे यह नगरी गंगा,यमुना एवं सरस्वती नदियों की त्रिवेणी का संगम स्थल है। कहा जाता है कि यहाँ गंगा और यमुना नदियाँ तो बहती हुई आकर मिलती हैं और सरस्वती अदृश्य रूप से इसमें प्रवाहमान हैं। करोड़ों-करोड़ों हिन्दुओं की आस्था के केन्द्र बिन्दु इस संगम स्थल पर आकर अनेकों हिन्दू श्रद्धालु भक्त इसमें स्नान करके अपने मानव जीवन को धन्य समझते हैं तथा स्वयं को पुण्यशाली मानते हैं। किन्तु वास्तव में हम प्राचीन इतिहास पर दृष्टिपात करें तो हमें ज्ञात होता है कि आज से कोड़ाकोड़ी वर्ष पूर्व जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने अयोध्या नगरी में जन्म लेकर जहाँ कर्मभूमि की आदि में प्रजा को जीवन जीने की कला सिखाई, राजनीति, न्यायनीति, वर्णव्यवस्था आदि का सूत्रपात किया, वहीं नीलांजना के नृत्य से वैराग्य को प्राप्त कर इसी प्रयाग की पवित्र धरती पर वटवृक्ष के नीचे प्रथम जैनेश्वरी दीक्षा लेकर मुनि परम्परा को प्रादुर्भूत किया था और वह वटवृक्ष आज करोड़ों वर्ष बाद भी प्रयाग की भूमि पर अवस्थित रहकर भगवान ऋषभदेव एवं मुनि परम्परा के प्रारंभीकरण की गौरव गाथा का दिग्दर्शन करा रहा है।

महानुभावों! चूँकि उस वटवृक्ष के नीचे घोरातिघोर तपश्चरण कर उन आदिब्रह्मा आदि 1008 नामों से समलंकृत भगवान ऋषभदेव ने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्ररूपी रत्नत्रयी त्रिवेणी में अवगाहन कर अपनी आत्मा की विशुद्धि कर परमात्म स्वरूप की प्राप्ति की थी और वास्तविक रूप में वही त्रिवेणी संगम के रूप में जाना गया था, जिसमें अवगाहन करके कोई

भी प्राणी अपनी आत्मा को परमात्मा बना सकता है परन्तु युग बदला और इतिहास भी बदल गया, सतयुग कलियुग में परिवर्तित हो गया, जिस प्रयाग नगरी के बारे में जैन रामायण-पद्मपुराण में वर्णन आता है–

प्रजाग इति देशोसौ, प्रजाभ्योस्मिन् गतो यतः।
प्रकृष्टो वा कृतस्त्यागः, प्रयागस्तेन कीर्तितः।।281।।

(तृतीय पर्व, पृ. 51)

अर्थात् भगवान ऋषभदेव अयोध्या की प्रजा समूह से दूर हो जिस स्थान पर पहुँचे थे, उस स्थान का नाम **'प्रयाग'** प्रसिद्ध हो गया अथवा भगवान ने उस स्थान पर बहुत भारी याग अर्थात् त्याग किया था, इसीलिए उसका नाम **''प्रयाग''** प्रसिद्ध हो गया।

उस प्रयाग तीर्थ को लोग कालदोषवश विस्मृत कर बैठे और चूँकि वहाँ प्रति 12 वर्षों में संगम के तट पर महाकुंभ मेला लगता है अतः उस तीर्थ को विश्व महाकुंभ नगरी के रूप में जानने लगा किन्तु युग परिवर्तन के बाद भी धरती की पावनता ने भारत देश को अनेक इतिहासपुरुष प्रदान किए हैं। दक्षिण भारत में जहाँ एक चारित्रचक्रवर्ती ने जन्म लेकर मुनि परम्परा का पुनरुद्धार किया, वहीं उत्तर भारत ने एक चारित्रचन्द्रिका को जन्म देकर संसार की कन्याओं के लिए माता ब्राह्मी का पथ प्रदर्शित किया है। दक्षिण भारत के उस रत्न का नाम था 'चारित्रचक्रवर्ती आचार्य शांतिसागर जी महाराज' और उत्तर भारत की इस निधि का नाम है–''चारित्र चन्द्रिका गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी'' उन चारित्र चक्रवर्ती गुरुवर को तो मैं अपने चर्मचक्षुओं से देख नहीं पाई किन्तु उनका प्रतिनिधित्व कर रहीं उन चारित्रचन्द्रिका को देखने का हमें पुण्य अवसर प्राप्त हुआ है। उन्होंने अपने 53 वर्षीय तपस्वी जीवन में जो सोचा, वह करके दिखलाया। उनके कार्यकलाप देखने से ज्ञात होता है कि उन्हें तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों एवं पंचकल्याणक भूमियों से अत्यधिक लगाव है और वह निरन्तर सभी को यही प्रेरणा देती हैं कि हमें अपना सर्वस्व न्योछावर करके भी इन तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमि एवं पंचकल्याणक भूमियों के संरक्षण-संवर्धन, विकास एवं जीर्णोद्धार में लगना चाहिए।

प्रत्येक धरती के गर्भ में उसका भविष्य लिखा हुआ एक अज्ञात कोने में छिपा रहता है और समय आने पर वही जन्मकुंडली बनकर प्रकट होता है, यही घटना प्रयाग तीर्थ के साथ घटी, जब इस पावन तीर्थ को लेकर करोड़ों हिन्दू इक्कीसवीं सदी का प्रथम महाकुंभ मना रहे थे, उस समय पूज्य गणिनीप्रमुख

श्री ज्ञानमती माताजी ने नई सदी को नव उपहार के रूप में 'तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली-प्रयाग तीर्थ' के रूप में एक अनुपम सौगात भेंट की, जो युगों-युगों तक जैनधर्म की प्राचीनता एवं उसकी यशपताका को जीवन्त रखेगा।

➢तीर्थ ही तीर्थ का निर्माण करते हैं–

'जो संसार सागर से तिरावे, वही तीर्थ है' हमारे पूर्वाचार्यों का यह कथन सदाकाल से प्रसिद्ध है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्चारित्र रूप आत्मस्वरूप में निर्विकल्प समाधि की स्थिति को 'भावतीर्थ' कहा जाता है और इस भावतीर्थ की उपलब्धि कराने वाले महान पुरुषों के चरण जिस भी धरा को स्पर्श करते हैं, वह स्वयमेव ही तीर्थ स्वरूप हो जाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि तीर्थंकर के गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान व निर्वाण रूप पंचकल्याणकों से समन्वित भूमि की भावपूर्ण वंदना-पूजन आदि क्रियाएं भी साधुओं व श्रावकों के लिए संसार सागर से पार कराने वाली होती हैं। जैसा कि कहा है भी.....

शालिपिष्ट भी शर्करयुत, माधुर्य स्वादकारी जैसे।
पुण्य पुरुष के पदरज से ही, धरा पवित्र हुई वैसे।।

जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव को विश्व के क्षितिज पर प्रतिष्ठित करने के लक्ष्य को पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने जब आत्मसात किया, तो न जाने किन-किन विचार श्रृंखलाओं ने उनके हृदय में जन्म लेकर मूर्तरूप धारण करना प्रारंभ कर दिया और शायद यही कारण है कि जैनधर्म की प्राचीनता पर उठे प्रश्नचिन्ह का पूर्ण निराकरण करने हेतु जहाँ उन्होंने भगवान ऋषभदेव के गर्भ एवं जन्मकल्याणक से पावन शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या तीर्थ के पुनरुद्धार का शंखनाद किया, वहीं भगवान की तप एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि 'प्रयाग' को भी अछूता न रखा और उसे ग्रंथों से निकालकर जनमानस का तीर्थ बनाने हेतु उत्कट संकल्प कर लिया।

➢भूमि भी नहीं थी और पंचकल्याणक की घोषणा कर दी–

जिनके जीवन का प्रत्येक क्षण स्वर्णिम इतिहास का एक नवीन पृष्ठ है, जिनका प्रत्येक कदम एक नये तीर्थ के निर्माण का प्रारंभ है, जिनकी विचार परम्परा का प्रत्येक बिन्दु अपने में सागर की गहराइयों को समाहित किए हुए है, जिनकी लेखनी से निकला प्रत्येक शब्द जिनागम का सार है, ऐसी पूज्य माताजी की सर्वतोन्मुखी प्रेरणाएँ सदैव ही हम सभी के लिए आदर्श रही हैं। अगर यह कहा जाए कि ज्ञानमती माताजी की डिक्शनरी में असंभव नाम का कोई शब्द नहीं है, तो कोई अतिशयोक्ति वाली बात नहीं है।

जनसाधारण के लिए जहाँ यह बात बहुत विशेषता रखती है कि अगर हमें एक छोटा सा घर भी बनाना है, तो हमें भूखण्ड की आवश्यकता होगी किन्तु सरस्वतीस्वरूपा ज्ञानमती माताजी तो योजना के प्रारंभ होते ही उसे मूर्तरूप दे देती हैं, फिर चाहे वह किसी तीर्थ का निर्माण हो अथवा कोई महोत्सव इत्यादि, यही बात प्रयाग तीर्थ के लिए भी लागू हुई कि पूज्य माताजी ने पंचकल्याणक, महाकुंभ मस्तकाभिषेक इत्यादि कार्यक्रमों की तिथियाँ घोषित कर दीं, प्रयाग के लिए विहार का समय निश्चित कर लिया पर आश्चर्य यह कि अभी तीर्थ निर्माण के लिए भूमि ही नहीं क्रय की गई थी! अन्ततोगत्वा समिति के सदस्यों को साथ लेकर भाई रवीन्द्र जी दो-तीन बार इलाहाबाद गए और यह भी पूज्य माताजी का आशीर्वाद और जिनेन्द्र भक्ति की महिमा ही थी कि 2-3 बार के प्रयास में ही इलाहाबाद शहर से 12 किमी. दूर बनारस हाइवे पर दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर की ओर से भूमि का क्रय किया गया। 3 जुलाई 2000 का शुभ दिवस इतिहास के पन्नों में अंकित हो गया, जब एक प्राचीन तीर्थ के प्रकटीकरण का शुभ योग आया।

➢तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली तीर्थ का शिलान्यास–

माताजी की प्रेरणा से राजधानी दिल्ली में भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष के अन्तर्गत **''कैलाश पर्वत मानसरोवर यात्रा''** का आयोजन चल रहा था। पूज्य माताजी एवं हम सभी उस कृत्रिम पर्वत की वंदना कर जहाँ उन आदिप्रभु को स्मरण कर रहे थे, वहीं भाई जी एवं समिति के कार्यकर्तागण 'तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली-प्रयाग' के शिलान्यास हेतु माताजी का आशीर्वाद प्राप्त कर प्रयाग की ओर रवाना हो गए। 4 अक्टूबर 2000, प्रातः 9 बजे की मंगलबेला में शिलान्यास का कार्यक्रम अत्यन्त सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। इलाहाबाद मण्डल के मण्डलायुक्त श्री सदाकांत जी का उद्बोधन अत्यन्त उत्साहपूर्वक हुआ। आज माताजी बहुत प्रसन्न थीं, कहने लगीं-''चन्दनामती! जैसे नेताजी सुभाषचंद बोस ने नारा दिया था कि **''तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा''** उसी प्रकार वर्तमान में मेरा नारा है कि **''तुम हमें सहयोग दो, हम तुम्हें तीर्थ देंगे।''** उस समय माताजी की उत्कट प्रभुभक्ति देखकर मन में रोमांच हो आया कि जिन चारित्रचक्री गुरु की यह शिष्या हैं, उनकी छाया तो इनमें पड़ना स्वाभाविक ही है। वैसे कई बार अर्थव्यवस्था के कारण कार्यों में रुकावट आ जाती है अन्यथा माताजी की भावनाएँ तो ना जाने कितनी ऊँची हैं, जिससे जैनधर्म आकाश की ऊँचाइयों तक पहुँच सकता है।

➢एक नहीं तीन-तीन संघपति तैयार हो गए–

दिगम्बर जैन साधुओं के पदविहार की परम्परा अनादिकालीन है। पदविहार की महत्ता एवं आनन्द कुछ अलग है। साधु के पदविहार से समाज में नूतन जागृति आती है। नगर-नगर, डगर-डगर के जनमानस को साधु दर्शन के साथ-साथ जीवन निर्माण की प्रेरणा प्राप्त होती है। जैन ही नहीं, जैनेतर नागरिक को भी साधु की मंगल वाणी सुनने का अवसर सहज ही प्राप्त हो जाता है। वाणी तो मानव दिन भर सुनता है किन्तु बोलने से पहले जिस महापुरुष के जीवन में वाणी का सार अवतरित हो चुका है, उनकी वाणी का प्रभाव अचूक होता है और फिर जिनसंस्कृति की संरक्षिका और संवाहिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमतीमाताजी के मंगल विहार की बात हो, तो फिर कहना ही क्या!

पूज्य माताजी के मस्तिष्क में जब प्रयाग की ओर मंगल विहार की बात आई और लोगों तक यह बात गई, बस माताजी का मंगल विहार कराने हेतु एक नहीं तीन-तीन संघपति तैयार हो गये। सर्वप्रथम अयोध्या तीर्थ की ओर मंगल विहार करवाने वाले संघपति लाला श्री प्रद्युम्न कुमार जैन (छोटी शाह)-टिकैतनगर वालों ने आकर माताजी से श्रीफल चढ़ाकर निवेदन किया और स्नानादि दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होकर पूजा-पाठ कर ही रहे थे कि इतने में मेरठ निवासी श्री आनन्द कुमार जैन, (जैन मार्बल होम) जो काफी दिनों से माताजी से आगामी विहार हेतु संघपति बनने का निवेदन कर रहे थे, आकर साष्टांग माताजी के चरणों में लेट गए और बार-बार निवेदन करने लगे, उधर संघपति महावीर प्रसाद जी तो मन में यही स्वप्न संजोए बैठे थे कि यह सौभाग्य मुझे ही मिलने वाला है। इधर माताजी ने सभी का आग्रह देखकर यही कहा कि जिसका पुण्य होगा, उसे यह अवसर मिल जाएगा और आखिर पुण्य का उदय आया मेरठ निवासी श्री आनन्द जैन (जैन मार्बल होम) का, जिन्होंने प्रयाग यात्रा करवाकर अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करने के साथ-साथ सातिशय पुण्य का संचय कर लिया और इस ऐतिहासिक कड़ी में अपना नाम भी अंकित करा लिया। कुछ दिनों बाद महावीर प्रसाद जी की धर्मपत्नी कुसुमलता जी आकर मुझसे बताने लगीं कि माताजी! जब इन्हें पता लगा कि इस ऐतिहासिक यात्रा का सौभाग्य किसी और को प्राप्त हो गया है, तो यह बहुत रोये। उनकी बात सुनकर यही लगा कि ऐसी विराट व्यक्तित्व की धनी ऐतिहासिक प्रतिभा के लिए अगर एक क्या सौ-सौ संघपति भी आतुर हो उठें, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

➢प्रभु ऋषभदेव के प्रथम मुखावलोकन पूर्वक प्रारंभ हुआ प्रयाग का मंगल विहार-

श्रीभूपाल कवि विरचित **'जिनचतुर्विंशतिका'** स्तोत्र में बड़ा ही सुन्दर एवं सजीव वर्णन आया है–

श्री लीलायतनं महीकुलगृहं कीर्तिप्रमोदास्पदं,
वाग्देवीरतिकेतनं जयरमाक्रीडानिधानं महत्।
स स्यात्सर्वमहोत्सवैकभवनं यः प्रार्थितार्थप्रदं,
प्रातः पश्यति कल्पपादपदलच्छायं जिनाङ्घ्रिद्वयम्।।

अर्थात् जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल के समय जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करता है, वह बहुत ही सम्पत्तिशाली होता है, पृथ्वी उसके वश में रहती है, उसकी कीर्ति सब ओर फैल जाती है, वह हमेशा प्रसन्न रहता है, उसे अनेक विद्याएँ प्राप्त हो जाती हैं, युद्ध में उसकी विजय होती है, अधिक क्या कहें, उसे सब उत्सव प्राप्त होते हैं। यह जिनेन्द्र दर्शन की महत्ता को प्रकट करने वाला श्लोक है जिसका तात्पर्य है कि जिनेन्द्र भगवान के दर्शन मात्र से ही स्वयमेव बड़े-बड़े कार्यों की सिद्धि हो जाती है।

यह एक अद्भुत ऐतिहासिक संयोग ही रहा कि प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में नवनिर्माणाधीन **''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली''** में विराजमान होने वाली भगवान ऋषभदेव की 14 फुट उत्तुंग प्रतिमा जयपुर से प्रयाग के लिए 30 अक्टूबर 2000 को रवाना हो चुकी थीं और माताजी के विहार का शुभ मुहूर्त 1 नवम्बर 2000 का निकला था। 1 नवम्बर को ट्राला दिल्ली से होते हुए जाना था, तो भाई जी के प्रयासों के फलस्वरूप उसे प्रीतविहार लाया गया और पूज्य माताजी ने संघ सहित प्रभु ऋषभदेव का प्रथम मुखावलोकन कर कुछ धार्मिक विधि सम्पन्न कराई। मैंने एवं क्षुल्लक मोतीसागर जी ने ट्राले के अन्दर जाकर प्रतिमा पर स्वस्तिक आदि बनाया। बड़े उल्लासपूर्ण वातावरण में मुखावलोकन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् प्रातः 10 बजे कमल मंदिर से संघ सहित मंगल विहार हुआ और वास्तव में प्रभु के मुखावलोकनपूर्वक प्रारंभ हुआ यह विहार स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने वाला स्वर्णिम पृष्ठ बन गया।

➢विदेशों में भी भगवान ऋषभदेव का नाम पहुँचाया–

नई सहस्राब्दि के प्रवेश पर सम्पूर्ण विश्व में शांति एवं समरसता स्थापित करने हेतु विश्वभर के धर्माचार्यों का **''विश्व शांति शिखर सम्मेलन''** यूनाइटेड नेशन्स द्वारा न्यूयार्क (अमेरिका) में 28 से 31 अगस्त 2000 तक आयोजित किया गया।

उस शिखर सम्मेलन में मुझे पत्र द्वारा ससम्मान आमंत्रित किया गया था परन्तु साध्वी चर्या के नियमों की आबद्धता के कारण मेरा इसमें भाग लेना संभव नहीं था अतः पूज्य माताजी की आज्ञानुसार कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन को भेजने का निर्णय लिया गया। सम्पूर्ण भारतवर्ष से निमंत्रित सौ से अधिक संप्रदाय के धर्माचार्यों के साथ ही दिगम्बर जैन समाज के धर्माचार्य के रूप में ब्र.रवीन्द्र जी का इस शिखर सम्मेलन में भाग लेना मात्र गौरव एवं हर्ष का ही विषय नहीं था, वरन् अनादि निधन शाश्वत जैनधर्म की प्राचीनता एवं इसके सार्वभौम सिद्धान्तों की विश्वभर के लिए उपयोगिता को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने में यह नींव का पत्थर सिद्ध हुआ। इस शिखर सम्मेलन में इन्हीं प्रयाग के भगवान ऋषभदेव के चित्र सहित जैनधर्म एवं भगवान ऋषभदेव का संक्षिप्त जीवन परिचय एवं प्रयाग में होने वाली पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के English Folder के माध्यम से विदेशों तक भगवान ऋषभदेव की धूम मच गई और अनेकों धर्माचार्यों के साथ-साथ विश्व के कोने-कोने से सम्मेलन में पधारे अतिथियों एवं विदेशियों ने जैनधर्म का साररूप ज्ञान प्राप्त किया।

➢प्रीतविहार निवासी चेतनलाल जी का भी पुण्य जागृत हो उठा–

आचार्य पद्मनंदि रचित **''पद्मनंदिपंचविंशतिका''** नामक ग्रंथ में दान का बड़ा ही सुन्दर वर्णन आया है कि–

आयासकोटिभिरुपार्जितमङ्गजेभ्यो
यज्जीवितादपि निजाद्दयितं जनानाम्।
वित्तस्य तस्य सुगतिः खलु दानमेक-
मन्या विपत्तय इति प्रवदन्ति सन्तः।। (पृष्ठ 95, श्लोक 7)

अर्थात् नाना प्रकार के दुःखों से जो धन पैदा किया गया है तथा जो पुत्रों से व अपने जीवन से भी अधिक प्यारा है, उस धन की यदि अच्छी गति है, तो केवल दान ही है। अर्थात् वह धन केवल दान से ही सफल होता है किन्तु दान के अतिरिक्त दिया हुआ धन विपत्ति का कारण है, ऐसा सज्जन पुरुष कहते हैं इसलिए भव्यजीवों को अपना कमाया हुआ धन दान में ही खर्च करना चाहिए।

इस श्लोक का तात्पर्य यह है कि हमें पुण्य योग से चंचला लक्ष्मी की प्राप्ति हुई है, उसका उपयोग हमें उत्तम पात्र के दान में करके आगामी पुण्य का बंध कर लेना चाहिए क्योंकि हमें ज्ञान की प्राप्ति भी पूर्वोपार्जित पुण्य के उदय से हुई है। ऐसा ही पुण्यबंध का सुअवसर दिल्ली-प्रीतविहार निवासी लाला श्री चेतनलाल जी को प्राप्त हुआ। हुआ यूँ कि पूज्य माताजी का ससंघ कमल

मंदिर से विहार होकर रात्रि विश्राम चेतनलाल जी के अतीव आग्रह पर उनकी फैक्ट्री पर हुआ पुनः अगले दिन प्रातःकालीन सभा में उन्हें मात्र थोड़ा सा सम्बोधन प्राप्त होते ही उनकी पत्नी श्रीमती सुलोचना जी ने प्रयाग तीर्थ पर निर्मित होने वाले कैलाशपर्वत एवं उसमें विराजमान होने वाली 72 प्रतिमाओं के निर्माण की स्वीकृति प्रदान कर अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करते हुए सातिशय पुण्य का बंध कर लिया क्योंकि शास्त्रों में कहा है–

जो धनिया के बराबर जिनमंदिर बनाकर उसमें सरसों बराबर जिनबिंब विराजमान करते हैं, उनके अनंत पुण्य की कल्पना नहीं की जा सकती है, फिर जो उत्तुंग जिनभवन का निर्माण कराकर जिनबिंब स्थापना कर उनकी प्राणप्रतिष्ठा कराते हैं, उनके अपूर्व पुण्य का वर्णन करने में तो साक्षात् शारदा माता भी सक्षम नहीं हैं।

➢दादरी में विराजमान हुईं भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा–

संघ का विहार प्रयाग की ओर चल रहा था। 4 नवम्बर 2000 को माताजी को चिटहरा ग्राम में रुकना था, चिटहरा से 2 किमी. दूर दादरी नाम के छोटे से गांव में कुछ जैन श्रावक रहते थे किन्तु वहाँ कोई मंदिर नहीं था, **'श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर'** के नाम से मंदिर निर्माण का कार्य चल रहा था, उन जैन श्रावकों के थोड़े से आग्रहमात्र से माताजी ने वहाँ रुककर सभी को अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान किया तथा अपने हाथ से सरस्वती-लक्ष्मी की प्रतिमा विराजमान की पुनः अगले दिन संघस्थ ब्र. बहन को भेजकर पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा भी विराजमान करने को कहा।

एक घंटे के उस अल्प प्रवास की अमिट छाप का पता उनकी बातों से चला, जब हमें कुछ दूर तक छोड़ने आए वहाँ के श्रावकों ने बताया कि माताजी! आज हमें जितनी प्रसन्नता हुई है, उसका वर्णन हम शब्दों में नहीं कर सकते हैं। हम लोगों के मन में साधुओं के प्रति गलतफहमी बैठ गई थी, दरअसल यहाँ कुछ समय पूर्व एक साधु आए और आते ही कमरा बंद कर लिया पुनः बिना कुछ कहे ही चले गए, उसके पश्चात् एक साधु और आए, हमने उनसे प्रवचन के लिए निवेदन किया तो वे कहने लगे कि मैं 10-20 लोगों में प्रवचन नहीं करता हूँ, 500 लोग हों, तभी प्रवचन करता हूँ और वे बिना कुछ सम्बोधन दिए ही चले गए और आज जब हम लोगों ने ज्ञानमती माताजी से कहा तो वे तुरंत आकर प्रवचन करने लगीं, इससे हमें बेहद खुशी हुई है। तब मैंने कहा–भइया! अपन साधु काहे के लिए बने हैं? परोपकार के लिए, स्व-

पर कल्याण के लिए न कि ख्याति, लाभ, पूजा के लिए और अगर हमारे प्रवचन सुनने वाले 10 भी लोग हों तो क्या, उनमें से एक ने भी अच्छी बात ग्रहण कर ली, तो हमारा प्रवचन करना सार्थक हो गया। हम क्या, हमारी बड़ी माताजी भी छोटे-छोटे गाँव-कस्बों में अजैन श्रावकों तक को प्रायः दिन में 1-2 बार प्रवचन के माध्यम से सम्बोधन प्रदान कर उन्हें अहिंसक एवं सदाचारी जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करती हैं। यह सुनकर वे दंग रह गए और माताजी की सरलता के आगे नतमस्तक हो उठे।

➢विश्व हिन्दू परिषद के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष माताजी के दर्शन के लिए छोटे से गाँव में आ गए–

दादरी से आगे हम लोग चिटहरा के प्राइमरी स्कूल में ठहरे थे, वहाँ हमें सूचना मिली कि विश्व हिन्दू परिषद के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष अशोक सिंघल जी पूज्य माताजी के दर्शन करने के लिए यहाँ पधार रहे हैं, छोटे से गाँव के टूटे-फूटे स्कूल के मात्र 2 कमरों में जैसे-तैसे बहनों ने व्यवस्था की थी। करीब 10 बजे सिंघल जी आए और 11 बजे तक माताजी से बहुत ही रुचिपूर्वक वार्ता की और प्रयाग के महाकुंभ मेले में नवम धर्मसंसद के मंच पर पधारकर जैनधर्म का प्रतिनिधित्व करने का आग्रह किया। उस समय उनकी मुखमुद्रा से झलकती प्रसन्नता यह स्पष्ट बता रही थी कि राजसी ठाठ से रहने वाले सिंघल जी को उस छोटे से कस्बे में गुरु दर्शन कर अपरिमित प्रसन्नता हुई।

➢विहार के साथ-साथ लेखनी भी चल रही थी–

त्याग और वैराग्य की जीवन्त मूर्ति पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने इस नश्वर शरीर को कुछ न गिनते हुए सदैव धर्मप्रभावना, संस्कृति सुरक्षा, धर्म-धर्मायतनों की रक्षा और जिनवाणी माँ की सेवा में अहर्निश अपने जीवन को समर्पित किया है, तभी आज इनकी सर्वदा प्रवाहमान लेखनी से 200 से अधिक ग्रंथ निःसृत होकर जन-जन में ज्ञान, भक्ति, अध्यात्म व नूतन चेतना का संचार कर रहे हैं। इनके विराट व्यक्तित्व का मूल्यांकन चंद शब्दों में कर पाना कठिन ही नहीं, असंभव सा प्रतीत होता है, डॉ. कस्तूरचंद जैन कासलीवाल-जयपुर ने तो इनकी पहचान बताते हुए कहा है–

ज्ञानमती माताजी तेरी यही निशानी,
एक हाथ में पिच्छी, दूजे में जिनवाणी।।

चाहे तीरथ हो या मंदिर, जंगल हो या शहर, एकान्त स्थान हो या विशाल जनसभा, माताजी की लेखनी धाराप्रवाह संस्कृत भाषा में चलती रहती है। अगर

आम आदमी को एक छोटा सा पत्र भी लिखना हो, तो 10 बार सोचता है किन्तु माताजी के मुख में व लेखनी में तो साक्षात् सरस्वती विराजमान हैं, आप कभीभी उनका लिखा कोई भी पेज उठाकर देख लें, कहीं कोई काट-पीट, कोई अशुद्धि नहीं मिल सकती। प्रयाग यात्रा के मध्य दोनों समय विहार चल रहा था, फिर भी माताजी को जैसे ही समय मिलता, वह अपना लेखन कार्य प्रारंभ कर देती थीं। चूँकि भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव नजदीक आ रहा था और माताजी की भावना इस वर्ष में प्रभु महावीर के चरणों में अपनी कोई कृति समर्पित करने की थी अतः उन्होंने भगवान महावीर के 2526वें निर्वाण दिवस के समापन एवं 2527वें वर्ष के प्रारंभ में कार्तिक कृष्णा एकम की तिथि में मंगलाचरणपूर्वक उसका प्रारंभीकरण कर दिया था और उसी को गति प्रदान करने हेतु वे विश्वशांति महावीर विधान के लिए 2600 मंत्र बना रही थीं।

➢ऐतिहासिक जैन स्वर्ण मंदिर के दर्शन किए–

9 नवम्बर को हम लोग खुर्जा (बुलंदशहर) पहुँचे। यहाँ 2 दिगम्बर जैन मंदिर हैं। मध्यान्ह में संघ सहित दोनों मंदिरों के दर्शन करने गए। बड़ा मंदिर 200 वर्ष पुराना है, यहाँ पूरे मंदिर में कुन्दन का काम है। यह मंदिर भारतवर्ष की एक प्राचीन बहुमूल्य धरोहर के रूप में उत्तरप्रदेश की जैन समाज का गौरव है। यहाँ सोने का काफी बड़ा रथ है, लकड़ी का ऐरावत हाथी है, विशाल शास्त्र भण्डार में हस्तलिखित ताड़पत्र के ग्रंथ हैं। इन शास्त्रों में एक स्वर्णाक्षरों में लिखित तत्त्वार्थसूत्र ग्रंथ देखा तथा मणि एवं स्वर्ण के सुन्दर रंगीन चित्र देखे। उसके पश्चात् छोटे मंदिर के दर्शन किए। वहाँ भी कुन्दन का काम पूरे मंदिर में है। प्राचीन धरोहर एवं जिनसंस्कृति के वैभव का छोटा सा नमूना देखकर मन गद्गद हो उठा। उस समय ताम्रपत्रों को देखते हुए माताजी ने बताया कि– "चंदनामती! इन्हें देखकर मुझे आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की स्मृति हो आई, जिन्होंने अथक परिश्रमपूर्वक ताम्रपत्रों पर धवला ग्रंथ को उत्कीर्ण कराया था। वर्तमान में यह सब हमारे लिए प्राचीन धरोहर के रूप में हैं, जिनकी सुरक्षा करना प्रत्येक जैन श्रावक का कर्त्तव्य है। हम इसे देखकर सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि आज से कुल 100 वर्ष पूर्व हमारी जिनसंस्कृति का वैभव कितना वृहत् रहा होगा किन्तु कालदोषवश काफी कुछ लुप्तप्राय हो गया और अब हमारे पास जो पूर्वाचार्यों की धरोहर है, आचार्य महाराज कहते थे कि हमें अपना सर्वस्व न्योछावर कर उसे बचाना चाहिए।" खुर्जा में एक दिन का प्रवास था चूँकि खुर्जा की खुरचन बड़ी मशहूर है, हमारे

साथ चल रहे दिल्ली निवासी पुष्पेन्द्र जी कहने लगे कि माताजी! हमने तो यहाँकी खुरचन खाई भी, स्टॉफ वालों को खिलाया भी और घर के लिए भी बांधकर ले जा रहे हैं। सुनकर हँसी भी आई कि श्रावकों को इन सब चीजों में ही विशेष आनन्द आता है और हम लोग धर्म की खुरचन का स्वाद लेने में खुश होते हैं।

➢अलीगढ़ में मस्तकाभिषेक की प्रेरणा प्रदान की–

माताजी की यह भावना थी कि जिन शासनपति भगवान महावीर के शासनकाल में हम लोग निराबाधरूप से अपनी चर्या का परिपालन कर रहे हैं, उनके 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव को राष्ट्रीय स्तर पर मनाया जाए और 2500वें निर्वाण महोत्सव की तरह हर गली-कूचे में भगवान महावीर की अनुगूंज फैल जाए अतः वह स्थान-स्थान पर सभी को इस महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत अनेक कार्यक्रम आयोजित करने की प्रेरणा प्रदान कर रही थीं। 14 नवम्बर को माताजी अलीगढ़ के छिपैटी मंदिर के दर्शनार्थ गईं, वहाँ मंदिर जी में भगवान महावीर की 8-9 फुट की पद्मासन प्रतिमा देखकर उन्होंने वहाँ के लोगों को महावीर जयंती पर 1008 कलशों से भगवान महावीर के महामस्तकाभिषेक का आयोजन करने की प्रेरणा प्रदान की, जिसे सभी ने सहर्ष स्वीकार किया और माताजी की दूरदृष्टि की प्रशंसा की।

➢एटा के इतिहास में त्रिवेणी संगम की अद्भुत कड़ी जुड़ गई–

एटा शहर में पूज्य मुनि श्री अमितसागर महाराज एवं गणिनी श्री विशुद्धमती माताजी पूर्व से ही विराजमान थीं, आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी की संघस्थ बहनें 2-3 दिन से बराबर पूज्य माताजी के दर्शन हेतु आ रही थीं चूँकि इन लोगों ने अभी तक माताजी को देखा नहीं था अतः मिलने की उत्कंठा से ही दोनों संघ विराजमान थे। 19 नवम्बर 2000 को प्रातः पूज्य माताजी का संघ सहित मंगल पदार्पण भव्य शोभायात्रापूर्वक एटा शहर में हुआ। इन दोनों संघों के साथ पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के संघ का मिलन सचमुच वहाँके इतिहास में त्रिवेणी संगम की कड़ी को जोड़ गया। तीनों संघों के पारस्परिक मिलन व वात्सल्य से सारा समाज भावविभोर हो गया तथा पूज्य माताजी के श्रीचरणों में एटा चातुर्मास हेतु बारम्बार निवेदन करने लगा। प्रवेश की इस धर्मसभा में अति उत्साही मुनि श्री अमितसागर महाराज ने माताजी के प्रति बड़े ही सुन्दर शब्दों में कहा कि आज ज्ञानमती माताजी में मुझे नारी के तीन रूप (सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा) दिख रहे हैं, पुनः उन्होंने इसका रोचक विश्लेषण किया।

दो दिवसीय इस प्रवास के मध्य तीनों संघों की आपस में अनेक सैद्धान्तिक

चर्चाएं हुईं पुनः 21 नवम्बर को हम जब एटा से निकलने लगे, तो गणिनी विशुद्धमती माताजी थोड़ी दूर तक भेजने आईं और मुनि श्री अमितसागर महाराज के संघस्थ साधुओं ने माताजी से कहा कि-माताजी! ऐसा आशीर्वाद रखना कि आपका भतीजा (अमितसागर जी) खूब धर्मप्रभावना करता रहे और हम लोग उनके बेटे बनकर धर्मसाधना करते रहें। सुनकर मन में बड़ा आल्हाद हुआ पुनः हम वहाँ से कुरावली की ओर विहार कर गए। दरअसल ये मुनि अमितसागर जी आचार्य श्री धर्मसागर महाराज के शिष्य हैं और धर्मसागर जी एवं ज्ञानमती माताजी एक ही गुरु आचार्यश्री वीरसागर जी के शिष्य हैं, इसीलिए अपने पिता धर्मसागर जी की गुरु बहिन के नाते अमितसागर महाराज ने इन्हें मजाक में ही बुआ कहकर अपने को इनका भतीजा कह दिया था। इसका आशय तो मात्र उनकी माताजी के प्रति गुणग्राहकता ही था।

➢दिगम्बर जैन चतुर्विध संघ सम्मेलन एवं भगवान ऋषभदेव संगोष्ठी का भी आयोजन हुआ–

संत-साधु चलते फिरते तीर्थ माने जाते हैं। बहती धारा के समान ये एक स्थान से दूसरे स्थान पर पदविहार कर भव्यों को मोक्षमार्ग का उपदेश देते रहते हैं अतः उनका आपस में मिल पाना प्रायः कम ही हो पाता है और जब कभी होता है, तो कोई न कोई विशेष उपलब्धि अवश्य हो जाती है।

यही एटा शहर में तीनों संघों के मिलन पर भी हुआ। त्रिवेणी संगम के सदृश तीन महानदियों के सम्मिलन प्रसंग पर दिगम्बर जैन मुनि-आर्यिका, श्रावक-श्राविकाओं के चतुर्विध संघ का ऐतिहासिक सम्मेलन सम्पन्न हुआ, जिसमें भगवान ऋषभदेव की संस्कृति को साक्षात् अपनी मुद्रा द्वारा प्रदर्शित करने वाले दिगम्बर मुनिराजों एवं आर्यिका माताओं के उपकारों से सम्पूर्ण समाज परिचित हुआ और पुनः-पुनः ऐसे संघों के मिलन की भावना करने लगा।

➢साधु-साध्वी देश और समाज के दिशा-निर्देशक होते हैं–

इस सम्मेलन की प्रेरणास्रोत पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने वर्तमान युग में ऐसे सन्त सम्मेलनों की उपयोगिता बतलाते हुए कहा कि साधु-साध्वी ही चूँकि देश और समाज के दिशा-निर्देशक होते हैं अतः उन्हें स्वयं भी समय-समय पर एक-दूसरे संघ के साथ मिलकर विचारों का आदान-प्रदान करना चाहिए तथा आगम के आलोक में यतिचर्या का विश्व में विचार विनिमय करना चाहिए।

प्राचीन परम्परानुसार इतिहास साक्षी है कि पहले भी साधु-संघों के

विशाल सम्मेलन हुआ करते थे। उसी सम्मेलन में आचार्य श्री धरसेन स्वामी ने दो योग्य शिष्यों को अपने पत्र द्वारा आमंत्रित करके उन्हें अपना श्रुतज्ञान प्रदान किया था, तभी आज हमारे सामने षट्खण्डागम जैसे सूत्र ग्रंथों की रचना दिख रही है। ऐसे सम्मेलनों की आज भी महती आवश्यकता है।

➢कन्नौज में दो लाभ एक साथ–

इत्र के लिए देश-विदेश में मशहूर कन्नौज नगरी का भी मानो भाग्य खिल उठा कि कई-कई सौभाग्य उसे एक साथ प्राप्त हो गए। 1 दिसम्बर 2000 को माताजी ने कन्नौज में मंगल प्रवेश किया और अगले दिन पूज्य माताजी को केशलोंच करना था, उसी शाम वहाँ पर माताजी की प्रेरणा से प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा प्रवर्तित **''भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ''** व विशाल ऐरावत हाथी रथ आ पहुँचा।' भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत प्रवर्तित इस रथ का दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश आदि स्थानों पर घूमकर धर्म की विजयपताका को फहराते हुए अब उत्तरप्रदेश में भ्रमण प्रारंभ हुआ था और 2 दिसम्बर को इसका कन्नौज में कार्यक्रम था। मध्यान्ह में पाण्डाल में ही माताजी का केशलोंच हुआ और उसी सभा में समवसरण श्रीविहार की सभा चली। जहाँ कन्नौज निवासी एक ओर केशलोंच का वैराग्यवर्धक दृश्य देखकर अभिभूत हो रहे थे, वहीं समवसरण के दर्शन कर प्रसन्न हो रहे थे। स्वयं माताजी भी आज बहुत प्रसन्न थीं क्योंकि दिल्ली से समवसरण प्रवर्तन के बाद आज प्रथम बार पूज्य माताजी को समवसरण के दर्शन हुए थे अतः माताजी का उपवास होने के बाद भी वे जुलूस में साथ-साथ चलीं। वस्तुतः जिनेन्द्र भगवान की भक्ति पूज्य माताजी के अन्दर कूट-कूट कर भरी है। इससे उनमें आत्मशक्ति आ जाना सहज सी बात है।

➢तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग तीर्थ पर जिनमंदिरों का शिलान्यास हुआ–

प्रयाग तीर्थ की ओर विहार करते हुए संघ का मंगल पदार्पण औद्योगिक नगरी (कपड़ा उद्योग) के रूप में मशहूर कानपुर शहर में हुआ। जहाँ 10 दिसम्बर 2000 को प्रयाग में आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के संदर्भ में एक मीटिंग रखी गई, जिसमें स्थान-स्थान से अनेकों लोग पधारे। इस सभा में श्रीप्रकाश जायसवाल (सांसद एवं उ.प्र. कांग्रेस अध्यक्ष) भी पधारे और अपने सुन्दर विचार व्यक्त किए। 11 दिसम्बर को प्रयाग तीर्थ पर निर्मित होने वाले जिनमंदिरों का शिलान्यास समारोह का कार्यक्रम था अतः कार्यकर्ताओं का एक समूह एवं अनेक भक्तगण सभा के पश्चात् प्रयाग की ओर रवाना हुए।

तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग में 11 दिसम्बर, मगशिर शुक्ला पूर्णिमा के दिन भव्य शिलान्यास समारोह सम्पन्न हुआ, जिसमें 14 फुट पद्मासन भगवान की 51 फुट ऊँचे कैलाशपर्वत पर बनने वाली वेदी, दीक्षाकल्याणक तपोवन, समवसरण मंदिर, कीर्तिस्तंभ, गणिनी ज्ञानमती निलय एवं पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हेतु मंच निर्माण के शिलान्यास सम्पन्न हुए। जिस-जिस ने भी इस समसामयिक कार्य के बारे में सुना, उसने खूब प्रशंसा करते हुए कहा कि शीघ्र ही यह अद्वितीय तीर्थ भारत की धरोहर बनने जा रहा है।

➢जिसके पास जो चीज होती है, वह वही देता है–

आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी की उक्त नीति बड़ी ही सारपूर्ण एवं सत्य कथन को बताने वाली है कि जिसके पास जो चीज होती है, वह वही देता है। दिगम्बर जैन साधु दर्शन, ज्ञान, चारित्र की प्रतिमूर्ति होते हैं अतः भव्यजनों को उपदेश देते हुए ज्ञानदान देते हैं तथा रत्नत्रय की सतत प्रेरणा प्रदान करते हैं। इसी प्रकार श्रावक के लिए आचार्यों ने षट्आवश्यक कर्त्तव्यों का उपदेश दिया है, उसका परिपालन करने हेतु वे अपने धन का सदुपयोग करते हुए दान, पूजा, जिनमंदिर निर्माण, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, मूर्ति निर्माण, गुरुओं के विहार आदि पुण्यकार्यों को करते हैं।

वैसे तो संघपति महोदय अपने कर्तव्य का पूर्णतया निर्वहन करते हुए न सिर्फ अपने द्रव्य का सदुपयोग कर रहे थे अपितु विहार में पैदल चलकर यात्रा का आनंद लेते हुए संघ व्यवस्था भी देख रहे थे। लम्बे विहार और मौसम को देखते हुए उन्होंने संघ विहार हेतु नई गाड़ी (ट्रक) बनवाई तथा जब प्रयाग तीर्थ के पंचकल्याणक हेतु कानपुर में मीटिंग चल रही थी, तो उन्होंने थोड़ी सी प्रेरणा प्राप्त होते ही महोत्सव के सौधर्म इन्द्र बनने हेतु भी अपनी स्वीकृति ब्रान की और अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग कर महान पुण्य अर्जित कर लिया।

➢सत्संग से जीवन की दिशा बदल जाती है–

रास्ते में पदविहार करते समय स्कूलों में ठहरने का अवसर ज्यादा आता है और छोटे-छोटे गाँव होने से वहाँ की जनता किसी अजूबे की भांति हम लोगों और किसी सर्कस की भांति ब्रह्मचारिणी बहनों व उनके सामान को देखते हैं और सब कुछ जानने की जिज्ञासा भी रखते हैं अतः उन्हें हमें प्रवचन के माध्यम से जैन साधु-साध्वी की चर्या बतानी पड़ती है। ऐसे ही एक बार हम लोग एक स्कूल में ठहरे, पता लगा यहाँ के मुखिया का यह स्कूल है और यहीं पास में उन्होंने 'कपिल आश्रम' के नाम से एक आश्रम बनवा रखा है,उनको जब सूचना

मिली, तो वे भी सत्संग सुनने के उद्देश्य से स्कूल में आ गए। बातों-बातों में उनसे पूछा गया कि आप शाकाहारी हैं या मांसाहारी? तो उन्होंने (मेजर युधिष्ठिर सिंह) जवाब दिया कि माताजी! मैं चूँकि पहले फौज में था अतः मैं मांसाहारीहूँ। तब क्षुल्लक मोतीसागर जी ने उन्हें शाकाहार और मांसाहार के बारे में बताते हुए मांसाहार त्याग करने की प्रेरणा प्रदान की, फिर तो बिना कुछ सोचे ही उन्होंने पूर्णरूपेण मांसाहार का त्याग कर शाकाहार का नियम ले लिया।

इसी प्रकार और भी अनेक स्थानों पर गांव वालों ने हम लोगों के प्रवचन सुनकर शराब, मांसाहार, जुआ खेलना आदि अनेक व्यसनों का त्याग किया।

इसीलिए सत्संगति के बारे में कही गई उक्त सूक्ति पूर्णतया चरितार्थ होती है कि–

दुर्जनेऽपि हि सौजन्यं, सुजनैर्यदि सङ्गमः।।

अर्थात् सज्जनों के समागम होने से दुर्जन मनुष्य में भी सज्जनता आ जाती है।

➢न्यायालय की नगरी इलाहाबाद में हुआ मंगल प्रवेश–

अनेक पौराणिक और ऐतिहासिक कथाओं को अपने गर्भ में समेटे इलाहाबाद नगरी वर्तमान में उत्तरप्रदेश के उच्च न्यायालय के रूप में बहुत प्रसिद्ध है, जहाँ की हाईकोर्ट में आकर व्यक्ति को सर्वदा न्याय प्राप्ति की आशा रहती है। 1 नवम्बर 2000 को दिल्ली से पदविहार कर, प्रयाग तीर्थ को अपना लक्ष्य बनाकर हम संघ सहित अपनी मंजिल के आखिरी पड़ाव पर आ गये थे। यूँ तो जैन साधु का कोई नियत स्थान नहीं होता, पर जिस लक्ष्य से विहार करते हैं, उसकी सिद्धि हो जाने पर निसर्गतः प्रसन्नता होती ही है।

29 तारीख को प्रातःकाल इलाहाबाद की ही एक कालोनी प्रीतमनगर में श्री पी.के. जैन (वकील) के निवास पर आहार हुआ और आहार व सामायिक के पश्चात् 12.15 बजे इलाहाबाद की जीरोरोड स्थित जैन धर्मशाला में मंगल पदार्पण हेतु वहाँ से विहार हुआ। आज इलाहाबाद के नागरिकों का उत्साह देखते ही बनता था, ऐसा लग रहा था कि उन्हें कोई अनमोल निधि मिल गई हो। 2 बजे प्रयाग होटल के पास से जुलूस प्रारंभ हुआ। जैन विद्यालय के 500 बच्चे हाथों में सुन्दर-सुन्दर सूक्तियों के बैनर लेकर चल रहे थे, स्थान-स्थान पर लगे बैनर जन-जन की माताजी के प्रति श्रद्धा को दर्शा रहे थे। स्वरूपरानी पार्क-जीरोरोड के पाण्डाल में हुई धर्मसभा में मुख्य अतिथि श्री के.पी. श्रीवास्तव, इलाहाबाद के मेयर तथा विधानसभा अध्यक्ष के साथ-

साथ अनेक जैन-अजैन लोग एक बार माताजी के दर्शन की लालसा से अपार जनसमूह के रूप में उपस्थित हुए थे। वास्तव में पूज्य माताजी के बारे में कही हुई ये पंक्तियां कितनी सार्थक हैं–

यूँ तो कितनी हो चुकीं और कितनी होंगी माताएँ हैं।
जिनकी तप-त्याग-तपस्या से, गौरवमय दशों दिशाएँ हैं।।
पर वर्तमान में ज्ञानमती, माता सी कोई न माता हैं।
जिनके चरणों में दो क्षण को, दुःख को भी सुख मिल जाता है।।

➢प्रथम दर्शन कर अमूल्य कृति भेंट की–

जैनधर्म के अनुसार वीर नि.सं. सर्वाधिक प्राचीन होने से भगवान महावीर के निर्वाण प्राप्ति का अगला दिवस कार्तिक शुक्ला एकम् वर्ष का प्रारंभ अर्थात् नया वर्ष माना जाता है परन्तु वर्तमान में ईसवी सन् अधिक प्रचलन में है अतः 1 जनवरी को सम्पूर्ण भारत में इसे ही वर्ष का प्रथम दिवस मानकर लोग नाना प्रकार से उसे मनाते हुए अपनी खुशियाँ प्रकट करते हैं। अनेकों प्रकार से ग्रीटिंग्स, गिफ्ट आइटम का अपने प्रियजनों में आदान-प्रदान व पार्टी देना आदि एक साधारण सी बात है परन्तु दिगम्बर जैन साधु-साध्वी जो परम पिता परमेश्वर, माँ जिनवाणी तथा जिनधर्म को अपना सर्वस्व मानते हैं, उनके लिए प्रत्येक दिवस का शुभारंभ जिन मुखावलोकन से होता है और किसी विशेष दिवस में भी वह प्रभुभक्ति व जिनधर्म प्रभावना को ही मुख्यता देते हैं, फिर चाहे वह रक्षाबंधन हो या दीपावली, वर्ष का प्रारंभ दिवस हो या अन्य कुछ।

फिर भी हमारे नव वर्ष 2001 के नूतन वर्ष प्रथम दिवस का शुभारंभ निर्माणाधीन तीर्थराज प्रयाग में मंगल प्रवेश एवं तीर्थंकर ऋषभदेव के प्रथम दर्शन से हुआ। हुआ यूँ कि हम लोगों ने 1 नवम्बर 2000 को दिल्ली से विहार करके 29 दिसम्बर को प्रयाग शहर में प्रवेश किया। 58 दिवसीय इस विहार के पश्चात् इलाहाबादवासियों के अतीव आग्रह पर 3 दिन जैन विद्यालय में रहने के बाद 1 जनवरी 2001 को प्रातः 8 बजे वहाँ से चलकर 13 किमी. दूर बनारस हाइवे रोड पर निर्माणाधीन **''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली तीर्थ''** पर 11.15 पर मंगल प्रवेश हुआ। यहाँ आकर परम आल्हाद के कारण हर्ष के अश्रु आ गए, देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि ब्र.रवीन्द्र जी के कुशल नेतृत्व में सारा निर्माण कार्य खूब जोरों से चल रहा है। उस समय तीर्थ क्षेत्र पर प्रवेश कर प्रतिष्ठेय जिनप्रतिमा का प्रथम दर्शन कर माताजी ने अपनी नूतन कृति के रूप में भगवान ऋषभदेव के श्रीचरणों में **''विश्वशांति महावीर विधान''** को समर्पित

कर परम आल्हाद का अनुभव किया। कार्तिक कृष्णा अमावस 27-10-2000 को मंगलाचरणपूर्वक प्रारंभ किए गए अतिशयकारी महाविधान का लेखन 1-1-2001, वीर नि. सं. 2527, पौष शु. षष्ठी को पूर्ण हुआ। 66 दिन तक लिखी गई 135 पृष्ठों की इस कृति में अन्तर्ज्ञान से निकले शब्द इनकी कार्यसिद्धि में कारण तो बने ही, निराबाध चलने वाले इस लेखन के मंत्रों ने हम सभी को शक्ति प्रदान की, तभी व्यापक प्रभावनापूर्वक यह यात्रा सम्पन्न हुई और इस धरा को दीक्षास्थली तीर्थ जैसी महान उपलब्धि हुई।

➢एक अजैन व्यक्ति ने वसतिका दान देकर महान पुण्य का संचय कर लिया–

स्वामी समन्तभद्राचार्य ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार नामक ग्रंथ में दान का बड़ा सुन्दर महत्व बताया है–

क्षितिगतमिव-वटबीजं, पात्रगतं दानमल्पमपि काले।
फलतिच्छायाविभवं, बहुफलमिष्टं शरीरभृताम्।।

जिस प्रकार वट का बीज बहुत छोटा होता है परन्तु उस छोटे बीज से इतना विशाल वृक्ष होता है कि जिसकी छाया में हजारों पुरुष बैठ सकते हैं, उसी प्रकार पात्रों को भक्तिपूर्वक दिया हुआ थोड़ा भी दान विशिष्ट फल को देता है।

दान देते समय दातार के इतने विशुद्ध परिणाम होते हैं, जिसकी तुलना नहीं की जा सकती है। उन्हीं विशुद्ध परिणामों के कारण जिस जीव के कुगतिबंध होकर परभव संबंधी आयु का बंध यदि नहीं पड़ा है, तो वह कुगति बंध को छोड़कर सुगतिबंध को कर लेता है। और तो क्या? दान देने की अनुमोदना करने वोलभी भोगभूमि जैसे उत्तम क्षेत्र में जाकर जन्म धारण करते हैं, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण आहारदान देने वाले राजा वज्रजंघ, रानी श्रीमती के साथ-साथ सिंह, सूकर, नेवला, बंदर जैसे पशु थे, जिन्होंने अनुमोदनामात्र से उत्तम भोगभूमि प्राप्त की।

दीक्षास्थली तीर्थ पर यूँ तो निर्माणकार्य द्रुतगति से चल रहा था किन्तु अभी वहाँ ठहरने जैसी कोई व्यवस्था नहीं थी। दिन में माताजी और हम लोग वहाँ जाकर एक छोटे से कपड़े के टेंट में रुक जाते थे और माताजी सामायिक, ध्यान व अनेकों जाप्यादि वहाँ करती थीं, प्रतिदिन ब्रह्मचारिणी बहनें भगवान को वहाँ विराजमान करके विधानपूजा करती थीं किन्तु संगम का तट और अत्यधिक सर्दी होने से खुले में रहना वहाँ के कार्यकर्ताओं को इष्ट नहीं था अतः उन्होंने माताजी से बार-बार यही आग्रह किया कि अभी आप कुछ दिन इलाहाबाद शहर में रुकिए परन्तु मेरी विशेष इच्छा थी कि हम लोग अब यहीं तीर्थ पर ही रुकें। संयोगवश शहर से नवगठित अ.भा.दि. जैन महिला संगठन-

इलाहाबाद इकाई की अध्यक्षा-श्रीमती साधना जी माताजी के दर्शनार्थ वहाँ आई थीं, हम लोगों की इच्छा देखकर उन्होंने पास के ही एक अजैन गृहस्थ के पास जाकर बातचीत की। भव्यपरिणामी उस गृहस्थ ने खुशी-खुशी अपने छोटे से घर के तीन कमरे खाली करके महान पुण्य का संचय कर लिया। शीघ्र ही संघस्थ ब्र. बहनों ने वहाँ जाकर सफाई करके रात्रि विश्राम की व्यवस्था कर दी और हमारा कई दिनों तक रात्रिकालीन प्रवास उसके घर में रहा। वहीं पास में ही एक और अजैन के काफी पुराने मकान में भूसे से भरे दो कमरे थे, जब ब्र. बहनों ने उनसे जाकर बात की, तो वह भी अपने कमरे खाली करने को तैयार हो गया और उसमें बहनों ने अपने ठहरने व चौके की व्यवस्था की।

➢लोक निर्माण राज्यमंत्री माताजी के दर्शनार्थ पधारे–

दीक्षास्थली तीर्थ पर पदार्पण के साथ ही पूज्य माताजी के दर्शनार्थ अनेक नेतागण, प्रशासनिक अधिकारी एवं अनेकों संस्थाओं के प्रतिष्ठित पदाधिकारियों का आवागमन प्रारंभ हो गया। 2 जनवरी 2001 को इलाहाबाद निवासी भाजपा नेता श्री सुनील कुमार जैन के साथ लोकनिर्माण राज्यमंत्री श्री राकेश दत्त तिवारी आये और उन्होंने लोकनिर्माण विभाग द्वारा महाकुंभ मेला परिसर में होने वाले **''भगवान ऋषभदेव सनातन संस्कृति संगम''** में अनेकों प्रवेश द्वार एवं बोर्डों पर जैन तीर्थ दीक्षास्थली का नाम लिखवाने की बात कही।

इससे पूर्व गोवंश रक्षा एवं मांस निर्यात विरोध परिषद के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष श्री के.एल. गोधा जी-उदयपुर (राज.) कई बार माताजी के पास आकर कुंभ मेले में जैन शासन की प्रभावना करने हेतु बार-बार आग्रह कर रहे थे। अभी भी उनका आना बराबर चालू था और विशेष आग्रह कर आखिरकार उन्होंने मेला परिसर में जैनधर्म की प्रभावना हेतु 4 दिवसीय कार्यक्रम की स्वीकृति प्राप्त कर ली और बहुत प्रसन्न होकर इस कार्य में लग गए।

➢कैलाशपर्वत पर विराजमान हुईं भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा–

दीक्षास्थली तीर्थ परिसर के बीचोंबीच में भगवान ऋषभदेव की निर्वाणस्थली को भारत भू पर साकार कर जन-जन को उसका सहजता-सुलभता के साथ दर्शन करवाने हेतु कैलाशपर्वत की प्रतिकृति का निर्माण कार्य भी द्रुतगति से चल रहा था, 17 जनवरी के पावन दिवस, माघ कृष्णा अष्टमी को 51 फुट ऊँचे निर्माणाधीन कैलाशपर्वत के ऊपर निर्मित की गई वेदी पर पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में क्रेन द्वारा मूर्ति चढ़ाने की प्रक्रिया अपरान्ह 3 बजे से प्रारंभ हुई। सर्वप्रथम जिस कमल पर श्रीजी को विराजमान करना था, उसे चढ़ाया गया पुनः

18 जनवरी को मध्यान्ह 11.5 बजे क्रेन द्वारा ही भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा कमलासन पर विराजमान की गई, ज्यों-ज्यों प्रतिमा जी ऊपर चढ़ रही थीं, त्यों-त्यों भक्तों के जयकारों से सम्पूर्ण आकाशमंडल गुंजायमान हो रहा था, प्रतिमा विराजमान होते ही पूज्य माताजी की आंखों से हर्षाश्रु छलकने लगे, तब मुझेलगा कि मानो आज हमारी यात्रा पूर्ण हुई है, जिन आदि प्रभु के सर्वोदयी-अहिंसामयी सिद्धान्तों एवं जैनधर्म की प्राचीनता के दिग्दिगन्त्व्यापी प्रचार-प्रसार के लक्ष्य को लेकर हम निकले थे, वह दिन अब दूर नहीं है। अब यह तीर्थ जिनधर्म की सांस्कृतिक धरोहर बनकर विश्व के क्षितिज पर उदीयमान सूर्य की भांति चमकेगा और सम्पूर्ण विश्व में जैनधर्म एवं तीर्थंकरपरम्परा की कीर्तिध्वजा लहराएगी।

➢प्रयाग के महाकुंभ मेले में प्रथम बार जैनधर्म का प्रतिनिधित्व–

यह भी स्वर्णिम इतिहास का निर्माण ही कहा जाएगा, जब प्रयाग के विश्वप्रसिद्ध 12 वर्षीय महाकुंभ मेले में प्रथम बार जैनधर्म का प्रतिनिधित्व पूज्य माताजी ने किया। कई माह पूर्व से विश्व हिन्दू परिषद की उच्च स्तरीय समिति के कार्यकर्ताओं द्वारा निवेदन किए जाने पर माताजी ने परिषद द्वारा आयोजित **''धर्म संसद''** (नवम) में संघ सहित अपना सानिध्य प्रदान करने की स्वीकृति दी पुनः तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी एवं गोवंश रक्षा तथा मांस निर्यात विरोध परिषद के संयुक्त तत्वावधान में कुंभ मेला परिसर में जैनधर्म का कार्यक्रम आयोजित किया गया।

18 जनवरी को भगवान की मूर्ति कैलाशपर्वत पर विराजमान करने के पश्चात् गाजे-बाजे एवं जयघोषों के बीच 108 कलशों को मस्तक पर धारण किए हुए इन्द्राणियों तथा सैकड़ों स्कूली बच्चों (जैन विद्यालय, प्रयाग) सहित जुलूस में भगवान को पालकी में विराजमान करके माताजी एवं हम सभी ने संघ सहित महाकुंभ मेला परिसर में प्रवेश किया। जहाँ **''ऋषभदेव मण्डप''** में झण्डारोहण तथा भगवान का पंचामृत अभिषेक एवं महाशांतिधारा सम्पन्न की गई तथा प्रतिदिन मध्यान्ह में संघस्थ बहनों एवं प्रो. टीकमचंद जैन-दिल्ली द्वारा अनेकों विधानों का आयोजन किया गया, जिसमें जैनसमाज के अलावा अजैनों ने भी पधारकर जैनधर्म की महिमा को जाना।

➢भगवान ऋषभदेव सनातन संस्कृति संगम–

19 जनवरी 2001 को मेला परिसर में मंगल प्रवेश के साथ ही विश्व हिन्दू परिषद के कार्यकर्ता हमें अपने पाण्डाल में ले गए। उस समय मैंने सिंघल जी के आग्रह विशेष पर आज के विश्व की सबसे ज्वलंत समस्या आतंकवाद से

निपटने हेतु भगवान ऋषभदेव की अहिंसामयी नीति एवं आपसी बन्धुत्व तथा संगठनरूप शक्ति पर धर्मसंसद के मंच से समस्त साधु-सन्तों के बीच प्रकाश डाला, जिसे सुनकर उन्हें लगा कि अहिंसा ही एक ऐसा प्रबल साधन है, जिसके द्वारा हम विश्व में शांति व मैत्रीभाव की पुनर्स्थापना कर सकते हैं।

वास्तव में अहिंसा धर्म का जितना सूक्ष्म विवेचन आचार्यों ने जैनधर्म में किया है, वैसा अन्यत्र कहीं नहीं मिल सकता है। 20 जनवरी को माताजी ने इसी मंच से भगवान ऋषभदेव को मानवीय संस्कृति का प्रथम प्रतिपादक सिद्ध करते हुए जब उनके सर्वोदयी सिद्धान्तों को विश्वशांति के लिए सर्वाधिक प्रासंगिक बताया, तो अपार जनसमूह ने भगवान के जयघोषों से समस्त परिसर को गुंजायमान कर दिया। अगर यह कहा जाए कि महाकुंभ मेले के मध्य जैनधर्म के इस जगमगाते सूर्योदय ने युगों-युगों के लिए शाश्वत इतिहास का निर्माण कर दिया, तो शायद कोई अतिशयोक्ति वाली बात नहीं होगी।

➢भगवान ऋषभदेव निर्वाणोत्सव पर मेला परिसर के जैन पाण्डाल में 1008 निर्वाणलाडू चढ़ाए गए–

यह एक अनहोना संयोग था, जब मेला परिसर के मध्य प्रथम बार जैनमंच से भगवान ऋषभदेव का निर्वाण महोत्सव इतनी धूमधाम से मनाया जा रहा था। निर्वाण दिवस की पूर्व संध्या पर 21 जनवरी को इसी मण्डप में विशिष्ट अतिथियों के बीच जब 1008 निर्वाण लाडू चढ़ाए गए, तो उपस्थित जनसमूह के उत्साह एवं भक्तिभाव की धारा ने करोड़ों वर्ष पूर्व का इतिहास सजीव कर दिया।

भक्ति आयोजन से गद्गद हुए संघपति लाला महावीर प्रसाद जी बोले– माताजी! मेरी सभी को 1008 थाल एवं लाडू बांटने की भावना है पुनः उन्होंने माताजी की आज्ञा पाकर जैन-अजैन सभी को थाल एवं लाडू वितरित किए तथा कलश यात्रा में 108 महिलाओं को कलश, साड़ियाँ आदि भेंट की। विश्व हिन्दू परिषद के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अशोक सिंघल, भारतीय जीव जन्तु कल्याण बोर्ड के राष्ट्रीय अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री गुमानमल लोढ़ा, आचार्य श्री धर्मेन्द्र जी, गोवंश रक्षा एवं मांस निर्यात विरोध परिषद के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष-श्री के.एल. गोधा-उदयपुर, श्री हुकुमचंद साबला-इंदौर आदि महानुभावों की उपस्थिति एवं जैन संस्कृति तथा भगवान ऋषभदेव पर हुए उनके ओजपूर्ण संभाषणों से सभा अत्यन्त गरिमामयी वातावरण में सम्पन्न हुई। इस चतुर्दिवसीय कार्यक्रम में **भगवान ऋषभदेव चित्र प्रदर्शनी** के सैकड़ों चित्रों के माध्यम से भारतीय संस्कृति, व्यसनमुक्ति, अहिंसा धर्म एवं भगवान ऋषभदेव-महावीर

स्वामी के जीवन दर्शन से जनसाधारण को परिचित कराया गया।

पुनः नवनिर्मित प्रयाग तीर्थ में भी माघ कृष्णा चतुर्दशी को **''भगवान ऋषभदेव निर्वाणकल्याणक दिवस''** पर निर्वाणलाडू चढ़ाया गया।

➢दीक्षास्थली तीर्थ पर प्रथम बार हुआ व्रताचार एवं बालक का मुण्डन व नामकरण संस्कार –

मानव जीवन में संस्कारों का अत्यधिक महत्व है। The Charity begin at home अर्थात् बालक सच्चरित्रता का प्रथम पाठ अपने घर से ही सीखता है। यदि जीवन में सुसंस्कार हैं तो देश, धर्म, समाज व कुल को एक अच्छा नागरिक, अच्छा श्रावक, अच्छा कार्यकर्ता और अच्छा कुलदीपक मिलता है और कुसंस्कारों का प्रभाव तो सभी जानते हैं। जैनधर्म में जीव के गर्भ में आने से लेकर मृत्युपर्यन्त षोडश संस्कार माने गए हैं। अगर माताएं गुरु सानिध्य में जाकर इन सभी संस्कार विधि को क्रमशः सम्पन्न करती हैं, तो सन्तान वास्तव में बहुत ही प्रतिभासम्पन्न व तेजस्वी होती है।

महानुभावों! संस्कार ही तो पाषाण की मूर्ति पर किए जाते हैं, जब वह भगवान बनकर हमें जैनत्व का पाठ सिखाती है। पूज्य माताजी की सदैव यही प्रेरणा प्रत्येक सद्गृहस्थ के लिए रहती है कि जहाँ तक संभव हो, प्रत्येक श्रावक को इन षोडश संस्कारों को अपने घर में जन्म लेने वाले गर्भस्थ शिशु में अवश्य प्रत्यारोपित करना चाहिए। उनकी ही प्रेरणा प्राप्त कर उनके गृहस्थावस्था के छोटे भाई श्री प्रकाशचंदजी समय-समय पर अपने घर की बहुओं व उनके नवजात शिशु को माताजी के पास लाकर उनके व्रताचार, मुण्डन, नामकरण, लेखन, प्रथम बार चलना आदि संस्कारों को करवाते रहते थे। 40 दिन के बच्चे को लेकर जब माँ पहली बार मंदिर जीती है, उसे अवध प्रान्त में व्रताचार–वर्ताचार कहते हैं।

उनके लिए यह एक सुखद संयोग ही था कि जिस प्रयाग तीर्थ में भगवान ऋषभदेव ने आज से करोड़ों वर्ष पूर्व प्रथम केशलोंच कर मुनि परम्परा का इस युग में प्रारंभीकरण किया था, उसी तीर्थ की पवित्र गोद में आकर सर्वप्रथम उन्हें अपने सुपुत्र राजन जैन की पत्नी श्रीमती प्रियंका एवं उनके नवजात शिशु का व्रताचार, मुण्डन एवं नामकरण संस्कार करवाने का सुयोग प्राप्त हुआ। 27 जनवरी को सर्वप्रथम बालक को जिनमंदिर के दर्शन करवाकर जब वे लोग उसे पूज्य माताजी के पास लाए तो माताजी ने शिशु के कान में णमोकार मंत्र सुनाकर उसे जैन बनाया पुनः उसका 'उत्सव' नाम रखा। यह प्रकाशचंद जी का पुण्य ही रहा है कि उनके प्रत्येक पुत्र-पुत्री, पोते-पोतियों यहाँ तक कि स्वयं

उनको भी पूज्य माताजी के श्रीमुख से नाम प्राप्त हुआ।

यहाँ यह प्रसंग लेखनीबद्ध करने का तात्पर्य मात्र इतना है कि प्रत्येक जैन श्रावक को इस बात से यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि हमें अपने पुत्र-पुत्रियों, नाती-पोते आदि के नामकरण आदि संस्कार गुरुओं के समक्ष ही करना चाहिए ताकि गुरु द्वारा प्रदत्त उन संस्कारों के माध्यम से प्रत्येक बालक-बालिका शिक्षा प्राप्त कर अपने भावी जीवन का निर्माण कर सके।

➢साकार होता तीर्थ का विकसित स्वरूप–

मात्र कुछ माह की ही अल्पावधि में विकसित स्वरूप प्राप्त करते दीक्षास्थली तीर्थ को जब पूज्य माताजी जैसी महान साध्वी का सानिध्य प्राप्त हुआ, तो वह उनके द्वारा प्रवाहित अजस्र ज्ञानधारा में अक्षयवट की भांति अभिसिंचित होकर देश-विदेश को अपनी ज्ञानछाया से संतृप्त करने लगा और अब तो देखते ही देखते वह समय भी आ गया, जब सभी प्रतिमाओं की प्राणप्रतिष्ठा कर उन्हें जगत्पूज्य भगवान बनाना था। अतः पूज्य माताजी की प्रेरणा से ब्र. रवीन्द्र जी व अन्य कर्मठ कार्यकर्ताओं द्वारा 4 फरवरी से 8 फरवरी 2001 तक **''भगवान ऋषभदेव पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक''** का विराट आयोजन किया गया, जिसका झण्डारोहण 29 जनवरी 2001 को माताजी के अनन्य भक्त श्री अनिल जैन (कमल मंदिर)-प्रीतविहार, दिल्ली ने किया। 4 फरवरी से 8 फरवरी तक गर्भ, जन्म, दीक्षा आदि पांचों कल्याणकों का दिग्दर्शन कराया गया तथा समस्त आगमोक्त अंतरंग क्रियाएं सम्पन्न कर पाषाण प्रतिमा को जगत्पूज्य बनाया गया।

➢तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली-प्रयाग तीर्थ का लोकार्पण–

4 फरवरी 2001 को मध्यान्ह 1 बजे केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री (भारत सरकार) श्री मुरली मनोहर जोशी एवं उ.प्र. लोक निर्माण राज्यमंत्री श्री राकेश दत्त त्रिपाठी पूज्य माताजी के दर्शन हेतु पधारे और जोशी जी ने तीर्थ का लोकार्पण कर परम प्रसन्नता व्यक्त की। उन्हें जब हम लोगों ने अपने प्रवचन के माध्यम से इस तीर्थ की महत्ता, जैनधर्म की प्राचीनता एवं पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से लोगों को दिग्भ्रमित किए जाने वाले अंशों के बारे में बताया तो वे बोले–

माताजी! मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ कि आपकी प्रेरणा से जिस तीर्थ का निर्माण हुआ है मुझे उसके लोकार्पण हेतु आने का सुअवसर मिला। जरूर हमने पिछले जन्मों में कुछ अच्छे कार्य किए होंगे, जो हमें भारत के आध्यात्मिक

संतों की पुण्य साधना एवं तपस्या का फल मिलता है। जैनधर्म शाश्वत धर्म है, वह किसी जाति सम्प्रदाय का नहीं बल्कि मानवधर्म है। माताजी से चर्चा होने पर मेरे ध्यान में बात आई और मैंने पुस्तकों को देखा, सभी धर्मों के वास्तविक अंशों की सत्यता रहे, किसी धर्म के मानने वालों को चोट न पहुँचे, असंतोष व अपमान न हो, इस बात का ध्यान रखते हुए आगे आने वाले पाठ्यक्रम में निश्चित बदलाव होगा।

➢संगम के जल से हुआ प्रभु का जन्माभिषेक–

प्रयाग में पंचकल्याणक के मध्य 5 फरवरी को सौधर्म इन्द्र श्री आनन्द कुमार जैन-मेरठ अपने इन्द्र परिवार के साथ संगम के तट से जल लाने हेतु ऐरावत हाथी पर बैठकर भव्य जुलूस के साथ वहाँ गए, उस समय संगम तट पर गीत, भजन, नृत्यपूर्वक निकली उस शोभायात्रा का दृश्य ही अलौकिक था, वह जुलूस संगम के तट पर जाकर एक सुन्दर सी कतार में पंक्तिबद्ध हो गया, जो कि सचमुच के जन्माभिषेक जैसा आभास करवा रहा था। सभी इन्द्र-इन्द्राणी कलशों में संगम का जल भरकर पुनः भव्य जुलूसपूर्वक वापस आए और तीर्थ परिसर में नवनिर्मित पाण्डुकशिला पर जिनशिशु का 108 कलशों से न्हवन कर शचि (श्रीमती अलका जैन-मेरठ) ने तीर्थंकर शिशु को वस्त्राभरणों से अलंकृत कर माता-पिता को सौंप दिया।

➢तीर्थंकर भगवान का जन्माभिषेक मुनियों द्वारा भी दर्शनीय है–

प्रसंगोपात्त यहाँ एक बात अवश्य बताना चाहूँगी। चूंकि विषय चल रहा है तीर्थंकर भगवान के जन्माभिषेक का और वर्तमान में कुछ साधु यह कहकर जन्मकल्याणक महोत्सव के जुलूस एवं पाण्डुकशिला पर होने वाले जन्माभिषेक को देखने नहीं जाते हैं कि **''साधुओं को मात्र दीक्षाकल्याणक आदि में जाना चाहिए, जन्मकल्याणक में वे भाग नहीं ले सकते हैं।''** इस विषय में आगम में प्रमाण मिलता है कि चारणऋद्धिधारी मुनि भी जिनेन्द्र भगवान का जन्माभिषेक बड़े भक्ति-भाव से देखते हैं। जैसा कि महापुराण नामक आर्ष ग्रंथ में वर्णन आया है–

सानन्दं त्रिदशेश्वरैः सचकितं देवीभिरुत्पुष्करैः,
सत्रासं सुरवारणैः प्रणिहितैरात्तादरं चारणैः।
साशङ्कं गगनेचरैः किमिदमित्यालोकितो यः स्फुरन्,
मेरोर्मूर्द्धिन स नोऽवताज्जिनविभोर्जन्मोत्सवाम्भः प्लवः।।216।।

(पर्व 13)

अर्थात् मेरुपर्वत के मस्तक पर स्फुरायमान होता हुआ जिनेन्द्र भगवान के जन्माभिषेक का वह जलप्रवाह हम सबकी रक्षा करे, जिसे कि इन्द्रों ने बड़े आनन्द से, देवियों ने आश्चर्य से, देवों के हाथियों ने सूंड ऊँची करके बड़े भय से, चारण ऋद्धिधारी मुनियों ने एकाग्रचित्त होकर बड़े आदर से और विद्याधरों ने ''यह क्या है'' ऐसी शंका करते हुए देखा था।''

इससे सिद्ध होता है कि वर्तमान के दिगम्बर मुनि, आचार्य या उपाध्याय आदि को जन्मकल्याणक जुलूस में सम्मिलित होने में रंचमात्र भी दोष नहीं है। बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज की परम्परा में आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज, आचार्य श्री धर्मसागर महाराज आदि चतुर्विध संघ सहित जन्माभिषेक देखते थे। तीर्थंकर भगवान का जन्मकल्याणक दिव्य अलौकिक होता है अतः सामान्य मुनि एवं आचार्यों को उनका जन्माभिषेक देखने में कोई विकल्प नहीं करना चाहिए। तीर्थंकर की महिमा का वर्णन तो अनिर्वचनीय है।

➢अखिल भारतीय दि. जैन महिला संगठन का अधिवेशन–

5 फरवरी को प्रयाग में पूज्य माताजी की प्रेरणा से गठित अ.भा.दि. जैन महिला संगठन का अधिवेशन हुआ, जिसमें भारत के कोने-कोने से संगठन की पदाधिकारी बहनों ने पधारकर अपने विचार एवं प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की। अधिवेशन की सभाध्यक्ष श्रीमती कुसुमलता जैन-दिल्ली ध.प. महावीर प्रसाद जैन (संघपति) एवं मुख्य अतिथि श्रीमती रीता बहुगुणा जोशी (पूर्व मेयर-इलाहाबाद) थीं। उन्होंने इस अवसर पर पधारकर अपार प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि पूज्य माताजी ज्ञान की देवी सरस्वती रूप हैं, इन्होंने अपना पूरा जीवन परोपकार हेतु समर्पित किया है, इससे ऐसा लगता है कि सन्तों और ऋषियोंकी इस भारत भूमि में हमारी महिलाओं ने बहुत योगदान दिया है। आपके आशीष व आपकी तपस्या से हर मानव को निश्चित ही मार्गदर्शन मिलेगा।

जैनधर्म बहुत प्राचीन धर्म है, भगवान ऋषभदेव के नाम से ही इस स्थान का नाम प्रयाग पड़ा, यह धरती उनकी चरणधूलि से पवित्र हुई है। इसी धरती पर माताजी आशीर्वाद देने हेतु पधारी है। अ.भा.दि. जैन महिला संगठन की कर्मठता, कार्यकुशलता देखी, मात्र 5 वर्षों में की गई समाजसेवा हेतु आप बधाई की पात्र हैं। हममें से शिक्षित महिलाएँ शिक्षा का प्रचार करेंगी, अहिंसा व सत्कर्म के कार्य को माताजी से सीखकर लोगों तक फैलाएंगी, इस दीक्षास्थली में माताजी का योगदान प्रयाग को समृद्ध कर रहा है, भविष्य में माताजी जो

निर्देश देंगी, मैं उसका परिपालन करूँगी। इस महाकुंभ के अवसर पर आप सबका प्रयाग नगर में स्वागत है। पुनः पूज्य माताजी ने एवं मैंने सभी महिला संगठन की बहनों एवं श्रीमती जोशी को अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान किया तथा विदेशों तक भगवान ऋषभदेव का प्रचार करते हुए, आगे भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मोत्सव पर भी प्रचार-प्रसार करने की उन्हें प्रेरणा प्रदान की।

➢प्रयाग तीर्थ पर प्रथम बार पूज्य माताजी द्वारा दो कन्याओं को ब्राह्मी-सुन्दरी बनाकर विद्यादान–

पंचकल्याणक में प्रथम बार दिखाया जाने वाला यह दृश्य अद्भुत ही था, जब पूज्य माताजी ने भगवान ऋषभदेव की ब्राह्मी-सुन्दरी पुत्रियों के विद्याध्ययन के दृश्य को दर्शाते हुए स्वयं अपने हाथों से रजत थाल में दो क्वांरी कन्याओं को विद्याध्ययन करवाया, जिसमें ब्राह्मी बनने का सौभाग्य-कु. मानवी जैन-मेरठ एवं सुन्दरी बनने का सौभाग्य-कु. रूबी जैन -इलाहाबाद को प्राप्त हुआ। इसके साथ ही भगवान ऋषभदेव द्वारा दिये गये विद्यादान एवं राजनीति का वर्णन पूज्य माताजी ने अपने उपदेश में किया।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में न्यायमूर्ति श्री डी.पी.एस. चौहान (चेयरमैन-म.प्र. लीगल सर्विस अथॉरिटी, जबलपुर), डॉ. अरविंद कुमार जैन-स्वास्थ्य राज्यमंत्री (उ.प्र.) तथा नार्दर्न इण्डिया पत्रिका के सम्पादक श्री प्रेमशंकर दीक्षित जी पधारे, जिनका कमेटी की ओर से स्वागत किया गया। माननीय स्वास्थ्य राज्यमंत्री जी ने कहा कि यह सारी व्यवस्था जो वर्तमान में है, वह भगवान ऋषभदेव की देन है, भगवान ने सबको जीवन जीने की कला सिखाई, जिनका वर्णन वेदों में भी आता है। हम लोग पंचकल्याणक को जैन रामलीला कहते हैं, भगवान ऋषभदेव ने नौ निधियाँ व चौदह रत्नों को त्यागकर विभाव परिणति को मिटाया, हमारा भी आपसे निवेदन है कि सबको जैन दर्शन व भगवान का स्वरूप समझाकर संस्कारित करें। चाहे भगवान ऋषभदेव हों, भरत हों या राम हों, इंसान में से ही भगवान बने हैं और बाकी लोग समझते हैं कि भगवान ने हमें बनाया है, जो उनकी मिथ्या भ्रांति है।

➢अयोध्या के महन्त नृत्यगोपालदास जी का आगमन–

प्रयाग तीर्थ एवं भगवान ऋषभदेव के दर्शनार्थ पधारे हुए अयोध्या की छोटी छावनी के महन्त नृत्य गोपालदास जी ने पूज्य माताजी के गुणों एवं वात्सल्यमयी रूप की प्रशंसा करते हुए कहा कि जैनधर्म में त्याग-तपस्या की प्रधानता है। जैन साधु-साध्वी कठोर तप करते हैं, जैनधर्म मानवों का संवर्धन ह्रं

संरक्षण कर रहा है, इसी प्रकार की समता-ममता हमें मिले, यही कामना है।

इलाहाबाद विकास प्राधिकरण सचिव श्री इष्टदेव प्रसाद राय एवं मुख्य अभियंता श्री के.के. पाण्डेय जी ने भी पधारकर पूज्य माताजी के दर्शन कर स्वयं को गौरवान्वित महसूस किया।

➢7 फरवरी को प्रयाग तीर्थ कुछ क्षण के लिए हस्तिनापुरी बन गया–

भगवान ऋषभदेव प्रयाग की पावन भूमि पर दीक्षा ग्रहण कर छः माह योग में लीन रहने के पश्चात् जब मुनिपरम्परा को जीवन्त रखने हेतु (आहारचर्या बतलाने हेतु) आहारार्थ निकले, तब किसी को भी आहार की विधि न मालूम होने से जनता भगवान को नाना प्रकार के वस्त्राभरण, मिष्ठान्न, भोजन, पुत्री आदि दिखाकर उन्हें ग्रहण करने की प्रार्थना करते थे। छः माह के भ्रमण के पश्चात् उन्हें हस्तिनापुर की पावन धरा पर वहाँ के युवराज श्रेयांस ने आठ भव पूर्व के जातिस्मरणपूर्वक आहार की विधि ज्ञात होने पर एक वर्ष 39 दिन के उपवास के बाद प्रथम बार इक्षुरस का आहार दिया, वह तिथि वैशाख शु. तीज थी, जो **'अक्षय तृतीया'** के नाम से अक्षय हो गई।

उसी आहारचर्या की याद दिलाता भगवान की आहारचर्या का दृश्य जब तीर्थ परिसर में दर्शाया गया, तो कुछ क्षण के लिए प्रयाग तीर्थ हस्तिनापुरी के रूप में परिवर्तित हो गया। आहारचर्या के समय यत्र-तत्र जेवर, कपड़े आदि लेकर भगवान को बुलाते लोगों का अजब ही नजारा था और जब श्रेयांस राजा के महल में भगवान का पड़गाहन हुआ, तो जयजयकारों से पाण्डाल गुंजायमान हो उठा था।

➢दीक्षाकल्याणक तपोवन का उद्घाटन–

दीक्षास्थली तीर्थ पर नवनिर्मित करोड़ों वर्ष पूर्व प्रथम दीक्षा की स्मृति को चिरस्थाई बनाने वाले ''भगवान ऋषभदेव दीक्षाकल्याणक तपोवन'' का उद्घाटन मुख्य अतिथि के रूप में पधारे महामहिम श्री विष्णुकांत शास्त्री (राज्यपाल उत्तरप्रदेश) एवं सभाध्यक्ष श्री अशोक सिंघल द्वारा 7 फरवरी को मध्यान्ह 1 बजे हुआ। इसी अवसर पर माननीय राज्यपाल जी की भतीजी 'जया कालिया (राष्ट्रीय सदस्य-समाज कल्याण बोर्ड), न्यायमूर्ति श्री राधेश्याम गुप्ता (उ.प्र. सरकार) व अन्य प्रशासनिक अधिकारी पधारे।

कार्यक्रम का शुभारंभ माननीय राज्यपाल जी द्वारा दीप प्रज्ज्वलन एवं संघस्थ बहनों के मंगलाचरण पूर्वक हुआ। पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर जी ने कहा कि नेता भाषण अधिक करते हैं किन्तु काम कम करते हैं, आज हमें

प्रसन्नता है कि महामहिम जी काम करने वाले नेता हैं। जिस दिन से मैंने सुना कि ऐसे अद्वितीय राज्यपाल, जिन्होंने भगवान ऋषभदेव की शिक्षा को स्वयं तो अपने जीवन में उतारा ही, बल्कि राज्यपाल बनते ही घोषणा कर दी कि हमारे राजभवन में मांसाहार क्या, प्याज भी इस्तेमाल नहीं होगा, सुनकर बेहद खुशी हुई। माताजी को नेताओं को बुलाने का यही उद्देश्य रहा है कि यहाँ आने पर उन्हें शाकाहारी जीवन की प्रेरणा दी जाए।

➢महामहिम द्वारा 'प्रयाग तीर्थ वंदना' पुस्तक का विमोचन–

महामहिम जी ने पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा संस्कृत भाषा में लिखित 'प्रयाग तीर्थ वंदना' नामक नूतन कृति का विमोचन किया और स्वहस्ताक्षर युक्त एक प्रति माताजी के करकमलों में भेंट की।

पुनः मैंने महामहिम जी को बताया कि सन् 1998 में **''ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार''** का राजधानी दिल्ली से प्रवर्तन करते समय प्रधानमंत्री जी ने माताजी से प्राप्त छठे अंश आशीर्वाद से भी अधिक की कामना की थी, उस समय माताजी ने कहा था कि हम अपनी तपस्या का पुण्य देंगे और सरकार स्थिर होगी, उन्होंने अटल जी को भगवान ऋषभदेव के चरणचिन्ह दिये, पुनः 4 फरवरी 2000 को निर्वाणोत्सव के उद्घाटन पर आए प्रधानमंत्री जी ने फिर वही शब्द दोहराए कि तब का आशीर्वाद अभी तक मेरे काम आया, अब आज का आशीर्वाद आगे तक काम आएगा। यह सुनकर राज्यपाल जी बहुत प्रसन्न हुए।

➢पूज्य गणिनी माताजी ने कहा–

यह वही पवित्र भूमि है, जहाँ भगवान ने दीक्षा लेकर वटवृक्ष के नीचे केवलज्ञान प्राप्त किया था। महामहिम जैसे लोगों का इस धर्ममंच पर आने का यही तात्पर्य है कि वे अपने कर्मों से ढके आवरण को हटाकर वास्तविक ज्ञान प्राप्त करें। जैनधर्म शम-दम शासनरूप है, जहाँ इन्द्रियों का दमन व कषायों का शमन किया जाता है, राज्यपाल जी उत्तरप्रदेश का गौरव हैं, अगर सारा देश ऐसा ही क्रम लागू करे, तो क्या ही अच्छा हो! आवश्यकता है भगवान ऋषभदेव-महावीर के सिद्धान्तों को विश्व में पहुँचाने की। राज्यपाल जी भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण रखकर चरम शिखर पर पहुँचावें और सिंघल जी महापुरुष राम की जन्मभूमि की रक्षा के साथ मर्यादा की रक्षा के कार्य में सफल हों, यही आशीर्वाद है।

➢राज्यपाल जी भारत गौरव की उपाधि से सम्मानित–

इस अवसर पर राज्यपाल जी के शुद्ध-सात्त्विक व धर्माचरण से युक्त

जीवन से प्रभावित होकर दीक्षास्थली तीर्थ के कर्मठ कार्यकर्ताओं द्वारा उन्हें **''भारत गौरव''** की उपाधि से सम्मानित कर प्रशस्ति पत्र भेंट किया गया।

➢माताजी प्रत्येक कार्य का अथ करती हैं इति नहीं–

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के जीवन की यह विशेषता है कि वह प्रत्येक कार्य का अथ करती हैं इति नहीं। अर्थात् माताजी सर्वप्रथम तो जो कार्य हाथ में लेती हैं, उसे शीघ्र ही मूर्तरूप देते हुए उसे पूर्णता प्रदान करती हैं और उसके समापन के पूर्व ही नूतन कार्य की घोषणा कर देती हैं। चूँकि अभी भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव का समापन हो रहा था अतः माताजी ने भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मोत्सव पर समिति बनाने की घोषणा करते हुए कहा कि मैं किसी भी कार्यक्रम का समापन नहीं करना चाहती, अथ हो और समाप्ति न हो, यह निर्वाण महोत्सव का समापन भले ही हो किन्तु कार्य की इति नहीं है क्योंकि अब भगवान ऋषभदेव को आदि में लेकर भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मजयंती महोत्सव पर कौशाम्बी में महावीर स्वामी की आहार भूमि पर भगवान महावीर व चन्दनबाला की आहारमुद्रा की मूर्ति विराजमान की जाएगी। हम भगवान ऋषभदेव का उत्सव मनाते हुए यह संकल्प करते हैं कि एक वर्ष में बहुत कुछ कार्य करते हुए महावीर जयंती वर्ष को मनाएंगे।

➢माननीय श्री महामहिम जी ने कहा–

हमारी परम्परा में अद्भुत समदर्शिता का आभास मिलता है। प्रत्येक धर्म भगवान को किसी न किसी रूप में मानता है। नारदीय सूत्र में लिखा है–जो तीर्थ का निर्माण करे, भवसागर से पार करे, वह तीर्थंकर है। ऐसे प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव को मैं प्रणाम करता हूँ। हमारी संस्कृति बहुत समृद्ध है, अनेक परम्पराओं का इसमें समावेश है जिसमें जैनशासन का विशेष महत्व है। जिन तीर्थंकर भगवान की दीक्षाभूमि पर हम खड़े हैं, उन्होंने अहिंसा, षट्कर्म का उपदेश दिया। यह वीरों की अहिंसा है, कायरों की नहीं। इस तीर्थ की श्रद्धा शीघ्र ही मूर्तरूप लेगी।

➢श्री सिंघल जी ने कहा–

यह बड़ा ऐतिहासिक प्रसंग है, अपने देश में महापुरुषों को उचित स्थान प्रदान करना भक्तों का कार्य है इसीलिए मैं इन्हें भामाशाह कहता हूँ। बड़े आनन्द का विषय है कि प्रथम बार पूज्य माताजी के प्रयत्नों से बहुत आनन्दपूर्वक महाकुंभ नगर में कार्यक्रम हुआ, निर्वाण उत्सव मनाया गया। मैं मानता हूँ कि

वास्तव में भारत ही जैन है और जैन ही भारत है। ज्ञानमती माताजी ने हमारे देश पर बड़ा उपकार किया है, हम जिसे भूल गए थे, इन्होंने उसे स्मृत करवा दिया है।

➢गुजरात में आए भूकंप से संत्रस्त लोगों के लिए प्रार्थना की गई–

भूकंप एक प्राकृतिक आपदा है, कहा जाता है कि जब धरती पर निरीह जीवों पर अत्याचार-अनाचार बढ़ते-बढ़ते चरम सीमा पर पहुँच जाता है, तब धरती माता का हृदय भी विह्वल हो उठता है और उसके हृदय में मची उथल-पुथल भूकंप का रूप ले लेती है। शायद यही कारण है कि आज धरती पर बढ़ते अत्याचार-अनाचार के प्रतिफल में प्रतिवर्ष कहीं न कहीं भयावह भूकंप आते हैं, कहीं बाढ़ आ जाती है, कहीं सुनामी लहरें अपना कहर बरपा देती हैं, उनके बारे में सोचने मात्र से ही सारा शरीर और हृदय कांप उठता है। उसी प्राकृतिक आपदा का एक कहर बरपा गुजरात में आये विनाशकारी भूकंप से। 26 जनवरी 2001 को आए उस भूकंप में जनसहायतार्थ जहाँ देश का बच्चा-बच्चा उमड़ पड़ा, वहीं पंचकल्याणक में विश्वशांति महायज्ञ के माध्यम से शांति, सुरक्षा की कामना के साथ-साथ दीक्षास्थली पर पधारे हजारों श्रद्धालु भक्तों ने सभी मृतकों के, उनके परिवारों के एवं भूकंप से त्रस्त लाखों-लाख बेघर हुई जनता की शांति हेतु भगवान ऋषभदेव से मंगल प्रार्थनाएँ की तथा अनेक लोगों ने आर्थिक अनुदान भी घोषित किया।

➢भव्य समवसरण रथ की शोभायात्रा–

7 फरवरी 2001 को सायं 5 बजे भगवान के केवलज्ञान की सम्पूर्ण क्रियाएं सम्पन्न हुईं जिसमें संयोगवश भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ के आगमन से उसकी शोभा द्विगुणित हो उठी और उसी में भरत चक्रवर्ती आदि को क्रम से बिठाकर 12 सभा का दृश्य उपस्थित कर शोभायात्रा निकाली गई।

मंच पर परदे के अन्दर जिनप्रतिमाओं एवं कैलाशपर्वत, तपोवन आदि में विराजमान जिनप्रतिमाओं को सूरिमंत्र प्रदान कर केवलज्ञान की घोषणा होते ही पर्दा खुल गया और क्षणमात्र में 12 सभाओं का दृश्य उपस्थित हो गया।

➢असली कैलाशपर्वत पर चढ़ाया गया निर्वाणलाडू–

जिस कैलाशपर्वत से भगवान ऋषभदेव ने मोक्ष प्राप्त किया, उसी कैलाशपर्वत की भव्य प्रतिकृति पर विराजमान 14 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की मनोहारी प्रतिमा निर्वाणकल्याणक के पश्चात् परम पूज्य बन गई, पुनः श्रीजी के सम्मुख पूजनपूर्वक निर्वाणलाडू चढ़ाया गया। इस भव्य प्रतिकृति के निर्माण का पुण्य प्राप्त करने वाली श्रीमती सुलोचना जैन ध.प.श्री चेतनलाल

जैन-प्रीतविहार, दिल्ली ने सपरिवार उपस्थित होकर परम आनंद के साथ भगवान का अभिषेक किया।

➢समवसरण मंदिर का उद्घाटन–

जिस पुरिमतालपुर के उद्यान में भगवान ऋषभदेव को दिव्य केवलज्ञान की प्राप्ति हुई थी, वर्तमान में वह उद्यान भी प्रयाग में ही माना जाता है। भगवान के केवलज्ञान होते ही धरती से 5 हजार धनुष (20 हजार हाथ) ऊपर अधर आकाश में धनकुबेर ने समवसरण की रचना की थी, उसी समवसरण की भव्य प्रतिकृति एक रथ के रूप में पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से राजधानी दिल्ली के लाल किला मैदान से सन् 1998 में उद्घाटित हुई, जिसे भारत भ्रमण हेतु तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने प्रवर्तित किया और लगभग 3 साल तक भारत के कोने-कोने में अहिंसा, शाकाहार, विश्वमैत्री तथा तीर्थंकर भगवान के सर्वोदयी सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार करने के बाद प्रयाग तीर्थ के इसी जिनमंदिर में विराजमान की गई। तीर्थ के गौरव अध्यक्ष एवं केन्द्रीय वस्त्र राज्यमंत्री (भारत सरकार) श्री वी. धनंजय कुमार जैन ने इसका उद्घाटन कर परम प्रसन्नता व्यक्त की। इस अवसर पर अ.भा.दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष-साहू रमेश चंद जैन भी पधारे। साहू जी तीर्थ के प्रथम दर्शन कर भावविभोर हो उठे और बोले-तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षाभूमि पर आने के निमित्त से मैं 50 वर्ष बाद प्रयाग की धरती पर आया हूँ। तीर्थक्षेत्र कमेटी का अध्यक्ष होने के नाते मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि एक प्राचीन तीर्थ पुनरुद्धार होकर तीर्थों की श्रृंखला में जुड़ गया, ऐसी पवित्र स्थली पर हम उत्सव मना रहे हैं, सभी को बधाई।

मैं विश्वास दिलाता हूँ कि पूर्ण मनोयोग के साथ तीर्थों की सेवा में संलग्नहूँगा।

➢श्री धनंजय जी ने कहा–

इस दीक्षास्थली पर आने का मुझे सौभाग्य मिला, बड़ी प्रसन्नता हुई। जिस भूमि से भगवान ने हमें जीवन जीने का पाठ दिया, वहाँ पूज्य माताजी की प्रेरणा से हुए निर्माणकार्य को देखकर प्रसन्नता हुई।

माननीय प्रधानमंत्री जी की अध्यक्षता में इस वर्ष भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मजयंती महोत्सव हम मना रहे हैं। पूरे भारत में सन् 2002 तक यह कार्यक्रम चलेगा, जिसमें केन्द्र सरकार द्वारा 100 करोड़ रुपये का ऐलान किया गया है। 6 अप्रैल को शाकाहार दिवस की घोषणा हुई है। 6 अप्रैल 2001 से अप्रैल 2002 तक ''अहिंसा वर्ष'' घोषित हुआ है। पूज्य माताजी हमें समय-

समय पर मार्गदर्शन देती रहें, जिससे तीर्थंकरों के सिद्धान्तों को समझकर हर मानव शांति से जी सके, सब एकत्रित होकर सारी दुनिया को समृद्धिशाली बना सकें। इस भूमि पर बहुत ही गौरवशाली कार्य हो रहा है, जिससे मैं एवं सारा जैन समाज आपके साथ जुड़ा है।

इसी अवसर पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा हस्तलिखित 2600 मंत्रों से समन्वित विश्वशांति महावीर विधान की हस्तलिखित प्रति का लोकार्पण मुख्य अतिथि श्री धनंजय जी द्वारा किया गया।

➢बसन्तोत्सव के बसंती माहौल में इक्कीसवीं सदी का प्रथम महाकुंभ–

देखते ही देखते वह पावन घड़ी आ गई, जिसका उस दिन से इंतजार था, जिस दिन से इस तीर्थ को साकाररूप देने की घोषणा हुई थी। प्रातःकाल से ही केशरिया वस्त्रों में लिपटा विशाल जनसमूह अपने पूर्वनिर्धारित कलशों को पाने हेतु आतुर हो उठा था।

ऊपर जाने के लिए दोनों ओर से मजबूत सीढ़ियाँ बनाई गई थीं, जिस पर एक ओर से चढ़ने तथा दूसरी ओर से उतरने की व्यवस्था थी। केशरिया झण्डों से सजी सीढ़ियों पर स्थान-स्थान पर खड़े सुयोग्य कार्यकर्ता कलश पास देखकर ही नर-नारियों को ऊपर चढ़ने दे रहे थे।

कैलाशपर्वत के ठीक सामने चबूतरे पर भरत सेना-टिकैतनगर के कर्मठ कार्यकर्ताओं द्वारा सजाए गए महाकुंभ की आकृति के 1008 स्वर्ण, रजत आदि महाकुंभ बसन्ती बहार बिखेरते हुए जनमानस को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे।

➢स्वर्ण महाकुंभ से प्रथम मस्तकाभिषेक–

दुल्हन के समान इस नूतन तीर्थ भूमि पर अभिषेक करने को आतुर बंधुओं का तांता लगा था। प्रथम स्वर्ण महाकुंभ कलश लेकर लाला महावीर प्रसाद जी के साथ वस्त्र राज्यमंत्री श्री वी. धनंजय कुमार जी ने ऊपर पहुँचकर ज्यों ही मंत्रोच्चारण प्रारंभ होते ही कलश प्रारंभ किया, उपस्थित भक्तगण भावविभोर हो उठे और हों भी क्यों न, मध्यान्ह 11.15 मिनट पर किया गया यह प्रथम कलश वास्तव में इतिहास का अमिट पन्ना जो बनकर रह गया था।

जिन-जिन कलशों से प्रभु के मस्तक पर अभिषेक हो रहा था, उस-उस वर्ण में भगवान सभी के नेत्रों को आनन्दकारी लग रहे थे। सफेद दूध के पड़ते ही पूरी प्रतिमा श्वेतवर्णी हो उठी, दधि पड़ते ही ऐसा प्रतीत हुआ मानों घड़े भर मोती प्रभु के ऊपर बरसाए गए हों, केशर और सर्वौषधि की सुगंधि से जहाँ सारा वातावरण महक उठा, वहीं पुष्पवृष्टि में बरसाए गए पुष्प धनकुबेर के

द्वारा की जाने वाली रत्नवृष्टि की याद दिला रहे थे। इस पंचामृत अभिषेक से कैलाशपर्वत तो सुवासित हुआ ही, भक्तगणों ने अपने वस्त्रों को, शरीर को सुगंधित किया और शीशी, छन्ने एवं स्टील की डिब्बियों में भरकर अपने घर भी ले गए।

इस दृश्य को कैलाशपर्वत की प्रतिकृति के निर्माता श्री चेतनलाल जैन की धर्मपत्नी श्रीमती सुलोचना जैन सपरिवार देखकर परम हर्षित हो रही थीं, कैंसर जैसी घातक बीमारी से ग्रस्त होने के बावजूद भी उनकी तीव्र अभिलाषा ने उन्हें महाकुंभ मेले की भयंकर भीड़ में कैलाशपर्वत के दर्शन की शक्ति प्रदान कर दी। आश्चर्य तो तब हुआ, जब वे रात में बैठकर पूरा सांस्कृतिक कार्यक्रम रुचिपूर्वक देखती रहीं। पुनः कार्यक्रम समापन के बाद सकुशल वे दिल्ली पहुँच गईं और इसी पुण्य के फलस्वरूप आगे वे निराकुलतापूर्वक जून 2001 में समाधिपूर्वक स्वर्गवासी हो गईं।

➢सम्पूर्ण व्यवस्थाओं ने दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया–

सभी आगन्तुक अतिथिगण और इलाहाबाद जैन समाज आश्चर्यचकित था कि मात्र 3 माह के भीतर तीर्थ निर्माण के साथ इतनी सुन्दर व्यवस्था हुई है, जिसकी हमने कल्पना तक नहीं की थी। आवास, भोजन, पानी, साजसज्जा, पाण्डाल व्यवस्था आदि जितनी भी व्यवस्थाएं की गयी थीं, सभी की पधारे हुए लाखों श्रद्धालुओं ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की।

➢समापन की विदाई बेला में कई हर्षपूरित नेत्र माताजी का गुणगान कर रहे थे–

महाकुंभ मस्तकाभिषेक समापन की बेला में सभी को पूज्य माताजी का वात्सल्यपूर्ण आशीर्वाद प्रवचन भी प्राप्त हुआ, जिसे सुनकर सभी के नेत्रों में हर्षपूरित अश्रु भर गए और सभी बोल उठे–हे माता! तू धन्य है, तेरी महिमा अपरम्पार है।

➢ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव की ऐतिहासिक धरोहर है यह तीर्थ–

"शास्त्रों में आचार्यों ने कहा है कि सौ नये मंदिर का निर्माण कराने से जो पुण्य अर्जित होता है, उससे कई गुना अधिक पुण्य एक पुराने जीर्ण-शीर्ण मंदिर अथवा तीर्थंकर भगवन्तों की गर्भ, जन्मादि पंचकल्याणक भूमियों के उद्धार, संरक्षण-संवर्धन करने में है। ये पंचकल्याणक भूमियाँ एवं प्राचीन मंदिर हमारी सांस्कृतिक धरोहर हैं और धर्म के प्रतीक हैं, इनकी रक्षा करना हम सबका प्रथम पुण्य कर्त्तव्य है। वे तीर्थ हमारे धर्म के स्तम्भ हैं, आधारशिला हैं। ये हमें

सदैव धर्म की प्रेरणा देकर हमारा आत्मकल्याण कराने में सहायक होते हैं।"

शास्त्र-पुराणों में इन तीर्थों को अचेतन तीर्थ एवं पंचपरमेष्ठी भगवन्तों को चेतन तीर्थ माना है। वर्तमान में चेतन तीर्थों के द्वारा ही इन अचेतन तीर्थों का विकास, जीर्णोद्धार, संरक्षण-संवर्धन संभव है। शायद यही कारण है कि पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी सदैव तीर्थंकरों की कल्याणक भूमियों के विकासादि में स्वयं भी तत्पर रहती हैं और सभी को उसमें दत्तचित्त रहने की प्रेरणा प्रदान करती हैं। वस्तुतः इसी प्रेरणा का प्रतिफल यह **"तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली"** तीर्थ है, जो करोड़ों वर्ष पूर्व के इतिहास को वर्तमान में पुनः जीवन्त कर रहा है। भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव के समापन अवसर पर निर्मित यह तीर्थ समस्त जैनधर्मावलम्बियों की ऐतिहासिक धरोहर है, जो युगों-युगों तक उन स्मृतियों को तरोताजा करते हुए तीर्थंकर भगवन्तों के अहिंसा, अनेकान्तवाद, विश्वमैत्री, प्राणीमात्र के प्रति करुणा जैसे सर्वोदयी सिद्धान्तों को जन-जन में प्रतिष्ठापित करता रहेगा। इसीलिए ऐसी इतिहास प्रणेत्री माता के बारे में मैंने लिखा–

इस तीर्थ प्रणेत्री माता का, यश युग-युग अमर रहेगा।
"चन्दनामती" हर कवि इनका, पावन यशगान करेगा।। पावन.....
इस पुण्य से इनको तीर्थंकर पद, निश्चित शीघ्र मिलेगा।।
ये हैं इतिहास प्रणेता।।

➢तीर्थ पर प्रथम केशलोंच का सौभाग्य मुझे भी मिल गया–

जिस पवित्र धरा पर आज से करोड़ों वर्ष पूर्व सिद्ध प्रभु की साक्षी लेकर भगवान ऋषभदेव ने पंचमुष्टि केशलुंचन किया था और जैनेश्वरी दीक्षा लेकर मुनिपरम्परा को जीवन्त किया था, उसी पावन भूमि पर तीर्थ के नवनिर्माण के पश्चात् प्रथम बार मुझे केशलोंच करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अवसर पर श्री विक्रमाजीत तिवारी (ए.डी.एम.एफ.) इलाहाबाद और श्री मुन्नीलाल पाण्डे (एस.डी.एम.) ने पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया। उस समय माताजी ने उपस्थित मुख्य अतिथि, विभिन्न पत्रकारों तथा जनसमूह को केशलोंच की महिमा बताते हुए कहा कि भगवान ऋषभदेव ने प्रयाग में ही वटवृक्ष के नीचे प्रथम केशलोंच किया था पुनः जब उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया, तब उनके समवसरण में उनके पुत्र वृषभसेन एवं ब्राह्मी-सुन्दरी पुत्रियों ने केशलोंच कर मुनि और आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर प्रथम गणधर तथा प्रथम गणिनी का पद प्राप्त किया था।

तिवारी जी को 15 फरवरी को गोरखपुर विश्वविद्यालय से पी.एच.डी. की उपाधि मिलने के उपलक्ष्य में कैलाशपर्वत का मोमेन्टो देकर कमेटी द्वारा सम्मानित किया गया।

➢तीर्थ पर अनेकों विधान सम्पन्न हुए–

इस तीर्थ पर पंचकल्याणक की पूर्णता के पश्चात् से अनेकों लघु एवं वृहद् विधान प्रारंभ हो गए। सर्वप्रथम कैलाशपर्वत के गुफा मंदिर में 16 फरवरी से **'समवसरण विधान'** प्रारंभ हुआ, जिसमें हजारीबाग की कुछ महिलाओं एवं संघस्थ ब्र.कु. इन्दु ने भाग लिया पुनः अष्टान्हिक पर्व में इलाहाबाद जैन समाज द्वारा **''सिद्धचक्र पाठ''** किया गया। इसके अतिरिक्त 1 जनवरी 2001 को पूज्य माताजी के तीर्थ पर मंगल प्रवेश से लेकर जब तक प्रवास रहा, तब तक निरन्तर संघस्थ बहनों द्वारा ऋषभदेव विधान, शांतिविधान, ऋषिमण्डल विधान आदि अनेकों विधान आयोजित होते रहे। जिनेन्द्र भगवान की भक्ति को अपना प्रमुख ध्येय मानने वाली पूज्य माताजी का यही कहना रहता है कि भगवान की भक्ति से बड़ी-बड़ी आपदाएँ दूर होकर अलौकिक सुख के साथ-साथ आध्यात्मिक सुख भी मिलता है अतः हमें अपने जीवन में प्रतिदिन कुछ समय प्रभु भक्ति के लिए अवश्य निकालना चाहिए।

➢यात्रियों का भी आवागमन प्रारंभ हो गया–

फाल्गुन शु. अष्टमी, 3 मार्च 2001 को संघस्थ क्षुल्लक मोतीसागर जी का 15वाँ दीक्षा दिवस था, उस दिन सुबह से लेकर शाम तक 5 बसें आ गईं और भले ही तीर्थ पर ठहरने की व्यवस्था अभी पूर्णरूपेण नहीं हो पाई थी, परन्तु जितनी व्यवस्था हो सकी, वह उसमें ही संतुष्ट हो बड़े प्रसन्न हुए और तीर्थ व माताजी के दर्शन कर अपना अहोभाग्य माना। उसके बाद तो यात्रियों का जो आवागमन प्रारंभ हुआ, वह धीरे-धीरे बढ़ता चला गया, आज शिखरजी की यात्रा करने वाले प्रत्येक यात्री इस तीर्थ पर आकर तीर्थदर्शन के साथ वहाँ की सुन्दर व्यवस्था से परम प्रसन्न होते हैं।

➢भगवान ऋषभदेव का जन्म-तपकल्याणक एवं पूज्य माताजी का केशलोंच समारोह–

चैत्र कृष्णा नवमी की तिथि भगवान ऋषभदेव के जन्म एवं तपकल्याणक से पावन है। दीक्षास्थली तीर्थ पर भगवान के जन्म व तपकल्याणक अवसर पर पूज्य माताजी का केशलोंच हुआ। सभा के पश्चात् कैलाशपर्वत पर विराजमान बड़े भगवान का पंचामृत अभिषेक हुआ तथा वटवृक्ष के नीचे ध्यानस्थ महामुनि

का 108 कलशों से अभिषेक हुआ।

आज के पावन दिवस मैंने दीक्षा वाले भगवान के पास एक नया कमण्डलु रखकर माताजी से शुद्ध करवाकर लिया और नई पिच्छी रखवाकर पूज्य माताजी ने ग्रहण की, सो उस दिन बड़ा सौभाग्य प्रतीत हुआ कि प्रयाग के असली दीक्षानगर में प्रभु के दीक्षाकल्याणक के दिवस दीक्षा के उपकरण हम लोगों ने प्राप्त किए।

➢एक ऐतिहासिक दिवस–

27 मार्च 2001 की तिथि को मैंने ऐतिहासिक इसलिए बताया क्योंकि जिस पवित्र वटवृक्ष के नीचे भगवान ऋषभदेव ने आज से करोड़ों वर्ष पूर्व दीक्षा ली थी, वह आज भी वंश परम्परा से अक्षय होकर मिलिट्री एरिये में स्थित है और उसी वटवृक्ष को देखने के लिए हम सभी पूज्य माताजी के साथ आज पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार 7 बजे पहुँच गए। चूँकि उस एरिया में सरकारी आदेशानुसार ही जाया जा सकता है अतः उन सभी औपचारिकताओं को जैन तीर्थ के कार्यकर्ताओं ने पूर्ण कर सरकारी आदेश ले लिया था। पूज्य माताजी ने पहले से ही भगवान ऋषभदेव के चरण बनवा लिए थे अतः सभी ब्रह्मचारिणी बहनों ने चरण, पूजन सामग्री, जल एवं यंत्र साथ में ले लिए थे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने अक्षयवट के नीचे यंत्र स्थापित कर वहीं भगवान के चरण विराजमान कर उनका अभिषेक-पूजन कराया, सामूहिक भक्तामर स्तोत्र का पाठ हुआ और माताजी का संक्षिप्त उद्बोधन हुआ।

वहाँ हमें जैन समाज के लोगों ने बताया कि अभी 2-3 वर्ष पूर्व तक यहाँ भगवान के चरण विराजमान थे और हम लोग प्रतिवर्ष अक्षयतृतीया के दिन सारी जैन समाज के साथ आकर भक्तामर स्तोत्र का पाठ भी किया करते थे। अब पुनः चरण स्थापना करते देखकर उन सभी को परम आल्हाद हुआ। इस प्रकरण को लिखने तक ज्ञात हुआ है कि भगवान ऋषभदेव के वे श्रीचरण वटवृक्ष के नीचे ज्यों की त्यों विराजमान हैं। आज भी वहाँ यह किंवदन्ति प्रसिद्ध है कि इसी वटवृक्ष के नीचे भगवान ऋषभदेव को दिव्य केवलज्ञान प्रगट हुआ था।

पूरी हिन्दू समाज के लोग इस वटवृक्ष को बहुत ही पूज्य मानते हैं और बड़ी श्रद्धा से इसे अक्षयवट मानकर दर्शन करते हैं।

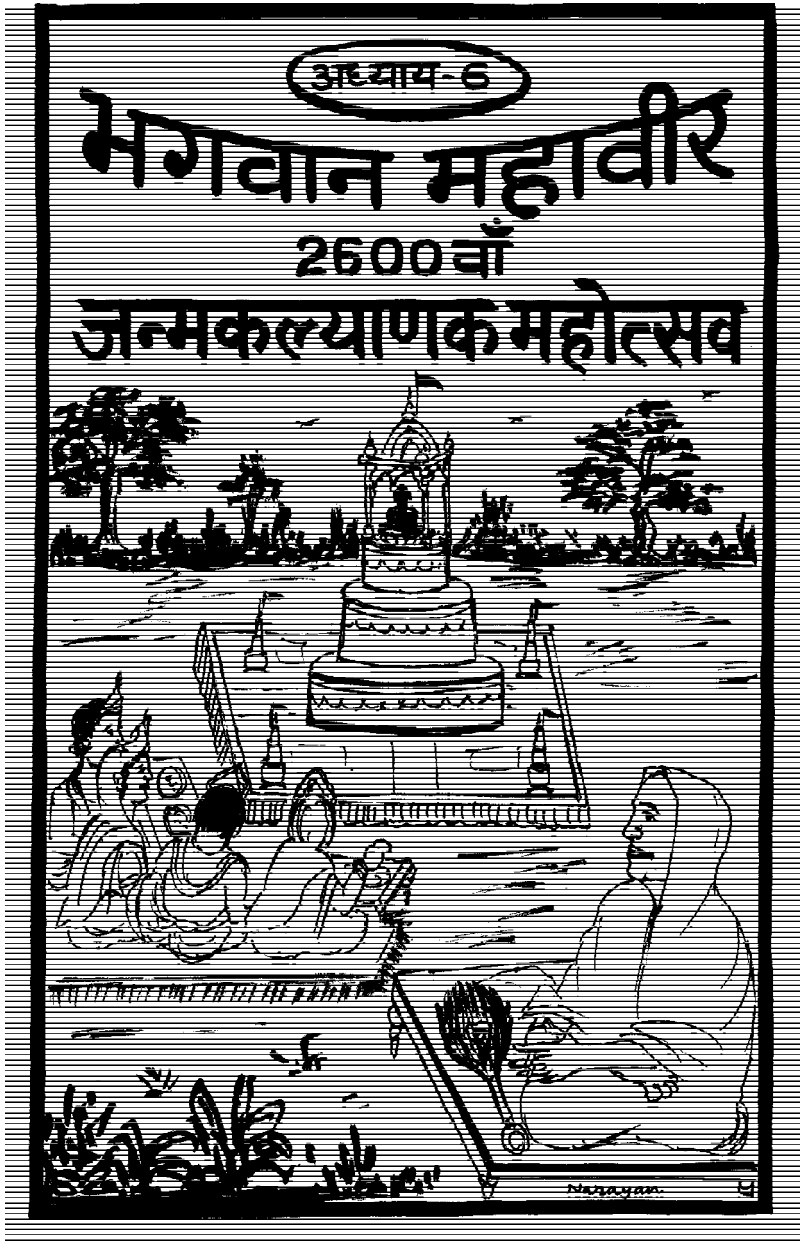


अध्याय-6

भगवान महावीर

2600वाँ

जन्मकल्याणक महोत्सव



अध्याय-6

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव

यह हमारे भारत का गौरव ही है कि इस देश में भगवान ऋषभदेव से लेकर महावीरपर्यंत 24 तीर्थंकर भगवन्तों ने जन्म लेकर इसे सनाथ किया है। भगवान महावीर को जन्म लेकर 2599 वर्ष व्यतीत हो गए और 6 अप्रैल 2001, चैत्र शुक्ला तेरस को उनका 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव मनाने हेतु अनेक राष्ट्रीय, केन्द्रीय, सामाजिक स्तर की कमेटियाँ बनाई गई थीं, जिनमें से भगवान महावीर 2600वाँ जन्मोत्सव दिगम्बर जैन राष्ट्रीय समिति के महामंत्री श्री डी.के. जैन एडवोकेट-दिल्ली को पूज्य माताजी ने 13-3-2001 को दीक्षास्थली तीर्थ से एक प्रेरणापत्र के साथ निम्न प्रारूप भिजवाया–

➢भगवान महावीर 2600वाँ जन्मजयंती का प्रस्तावित प्रारूप–

जैसा कि सन् 1974 में भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव के अवसर पर जैनधर्म की व्यापक प्रभावना का सुअवसर देश को प्राप्त हुआ था, उसी प्रकार पुनः उन्हीं भगवान महावीर स्वामी का 2600वाँ जन्मकल्याणक मनाने का स्वर्णिम अवसर हम सभी को प्राप्त हुआ।

यह निश्चित है कि आगे निकट भविष्य में हमारे और आपके जीवनकाल में उक्त प्रकार के शताब्दी या सहस्राब्दी महोत्सव मनाने का पुण्य अवसर नहीं आएगा कि जिसके माध्यम से हम तीर्थंकरों के नाम और सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार विश्व स्तर पर कर सकें अतः इस स्वर्णिम अवसर में एक वर्ष तक भगवान महावीर का विविध आयामों के साथ गुणगान करने के लिए कुछ प्रेरणाबिन्दु यहाँ प्रस्तुत हैं–

प्रेरणास्पद संकेत बिन्दु–

1. अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी के 2600वें जन्मजयंती महोत्सव वर्ष में महावीर के साथ-साथ प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का नाम, परिचय एवं उनके द्वारा मानवीय संस्कृति के प्रति किए गए उपकारों का वर्णन समस्त साहित्य के साथ अवश्य प्रकाशित किया जावे।

2. इस वर्ष के अन्तर्गत चौबीसों तीर्थंकरों की जन्मभूमियों का विकास केन्द्रीय दिगम्बर जैन समिति द्वारा करने का पूरा प्रावधान बने। उन जन्मभूमियों पर एक-एक कीर्तिस्तंभ बनाए जाएँ तथा वहाँ पर जन्मे भगवान के जीवन

परिचय को शिलालेख पर उत्कीर्ण कराया जाए।

3. इन कार्यों में केन्द्रीय समिति द्वारा आर्थिक सहयोग का बजट अवश्य बनाएं अन्यथा उपेक्षित पड़ी तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास आर्थिक समस्या के कारण रुक जाता है।

4. सभी तीर्थंकरों की जन्मभूमि या अन्य कल्याणक की भूमि वाले तीर्थों पर उन-उन भगवन्तों की एक-एक बड़ी प्रतिमा विराजमान की जावें, ताकि उन तीर्थों का माहात्म्य वृद्धिंगत हो सके। इधर-उधर अन्य नये तीर्थों को बनाने की बजाय कल्याणक भूमियों का उद्धार एवं विकास करना चाहिए क्योंकि इसके बिना हमारी प्राचीन संस्कृति विलुप्त हो रही है।

जैसे–पूज्य माताजी ने करोड़ों वर्ष प्राचीन किन्तु विलुप्त हो चुकी भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं ज्ञानकल्याणक भूमि प्रयाग में ऋषभदेव दीक्षास्थली का निर्माण करवाकर जनमानस को पौराणिक इतिहास से परिचित करवाया है।

खैर! प्रयाग में तो तीर्थ के नाम पर कोई स्थान ही नहीं था, न ही तीर्थक्षेत्र कमेटी की लिस्ट में प्रयाग तीर्थक्षेत्र का अस्तित्व था, यहाँ तो त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर द्वारा सारा कार्य नये सिरे से हाइवे पर जमीन खरीदकर किया गया है किन्तु अन्य तीर्थंकरों की कल्याणक भूमियों पर तीर्थ के नाम से स्थान तो हैं ही, बस उन्हें विकसित करके प्रचार में लाने की आवश्यकता है। प्रसंगानुसार मैं यहाँ तीर्थंकरों की सभी जन्मभूमियों के नाम दे रही हूँ, जिनके दर्शन कर आप सभी को वहाँ दिखने वाली कमियों को दूर करने हेतु समाज का ध्यान केन्द्रित करना है–

	तीर्थंकर का नाम	**जन्मभूमि**
1.	पाँच तीर्थंकर-ऋषभ, अजित, अभिनंदन, सुमति, अनन्तनाथ	अयोध्या
2.	संभवनाथ	श्रावस्ती
3.	पद्मप्रभनाथ	कौशाम्बी
4.	सुपार्श्वनाथ, पार्श्वनाथ	वाराणसी
5.	चन्द्रप्रभु	चन्द्रपुरी
6.	पुष्पदंतनाथ	काकन्दी
7.	शीतलनाथ	भद्दिलपुर
8.	श्रेयांसनाथ	सिंहपुरी (सारनाथ)
9.	वासुपूज्य	चंपापुरी

10.	विमलनाथ	कंपिलापुरी
11.	धर्मनाथ	रतनपुरी
12.	शांति, कुंथु, अरनाथ	हस्तिनापुरी
13.	मल्लिनाथ, नमिनाथ	मिथिलापुरी
14.	मुनिसुव्रतनाथ	राजगृही
15.	नेमिनाथ	शौरीपुर
16.	महावीर स्वामी	कुण्डलपुर

5. वर्तमान में देश के अन्दर लगभग 230 विश्वविद्यालय हैं, उनमें भगवान महावीर के नाम से एक संगोष्ठी कराई जावे।

6. सभी विश्वविद्यालयों में भगवान महावीर, ऋषभदेव एवं चौबीसों तीर्थंकरों से संबंधित दिगम्बर जैन साहित्य निःशुल्क प्रदान किया जाए, जिससे वहाँ एक जैन लाइब्रेरी बन जावे।

7. महावीर जन्मजयंती के इस पावन प्रसंग पर समस्त दिगम्बर जैनाचार्य आदि चतुर्विध संघों की एक समन्वय समिति बनाई जाय तथा कुछ स्थानों पर चतुर्विध संघ सम्मेलन भी आयोजित किए जावें, इससे समाज में पुनर्संगठन का रूप बनेगा।

8. दिगम्बर जैन आम्नाय की साध्वियों की एक **''साध्वी परिषद''** बनाई जावे, जो नारी शक्ति की प्रतीक होगी।

9. जन्ममहोत्सव वर्ष के समापन अवसर पर सन् 2002 में विश्व स्तर पर एक **''भगवान महावीर विश्वशांति शिखर सम्मेलन''** कराया जावे।

यह विशाल कार्य सरकारी समिति के सहयोग से ही पूर्ण संभव हो सकता है अतः इस विषय में सरकार के समक्ष प्रारूप बनाकर प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

➢भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव हेतु गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के लिए प्रेरणा संदेश–

मार्च 1998 में विश्व के सबसे बड़े प्रजातंत्र **''भारतदेश''** की बागडोर प्रधानमंत्री के रूप में संभालने के पश्चात् महान सौभाग्य से आपने मेरे ससंघ सानिध्य में महावीर जयंती 9 अप्रैल 1998 को दिल्ली के तालकटोरा इन्डोर स्टेडियम से महावीर के पूर्वज प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के समवसरण रथ का भारत भ्रमण हेतु प्रवर्तन किया था। उस रथ के माध्यम से तीर्थंकर

परम्परा के महान सिद्धान्तों को जन-जन में संकल्पित करने में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है।

इसी श्रृंखला में 4 फरवरी 2000 को आपने दिल्ली के लाल किला मैदान में मेरी प्रेरणा एवं उपस्थिति में तत्कालीन केंद्रीय वित्तराज्यमंत्री श्री वी.धनंजय कुमार जैन की अध्यक्षता में ''भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव'' का उद्घाटन किया था। यह महोत्सव वर्ष भी राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भगवान ऋषभदेव की सर्वोदयी शिक्षाओं-विश्वमैत्री, पारस्परिक सौहार्द, अहिंसा, अनेकान्तवाद, पर्यावरण शुद्धि इत्यादि को विविध आयोजनों के साथ विश्वभर में फैलाने में पूर्ण सफल हुआ। इसी निर्वाण महामहोत्सव वर्ष का भव्य समापन महाकुंभ मेले की विश्व प्रसिद्ध भूमि प्रयाग तीर्थ पर ''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली'' प्रयाग दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र के निर्माण के साथ किया गया जिसका उद्घाटन एवं लोकार्पण 4 फरवरी 2001 को आप ही के मंत्रीमण्डल के केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री श्री मुरली मनोहर जोशी के करकमलों से सम्पन्न हुआ। इस तीर्थ की यही विशेषता है कि युगों-युगों तक तीर्थंकरों की वाणी को प्रचारित करने वाला यह स्थायी केन्द्र संसार को प्राप्त हुआ है।

अब यह बड़े सौभाग्य का विषय है कि जिन तीर्थंकर ऋषभदेव के प्रचार-प्रसार का आपने इस प्रकार प्रद्योतन किया, उन्हीं की तीर्थंकर परम्परा के अंतिम एवं चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर के 2600वें जन्मजयंती महोत्सव का शुभारंभ आप 6 अप्रैल 2001 को राजधानी दिल्ली में कर रहे हैं। वास्तविकता तो यही है कि इन तीर्थंकर भगवन्तों के सिद्धान्त ही आज विश्व के लिए सर्वाधिक आवश्यक हैं और इन सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में सहभागी बनना महान पुण्य का विषय है। मेरा आपके लिए यही मंगल प्रेरणा संदेश एवं आशीर्वाद है कि अहिंसा के युगपुरुष भगवान महावीर के सिद्धान्तों एवं जनकल्याणी वाणी का आप एवं आपकी सरकार खूब प्रचार-प्रसार करें तथा इन्हीं सिद्धान्तों की छत्रछाया में आपका धर्ममयी शासन सुरक्षित रहते हुए समस्त देश एवं विदेश में शांतिकारी, सुभिक्षकारी एवं कल्याणकारी सिद्ध हो, यही मेरी हार्दिक भावना है।

➢पूज्य माताजी का राष्ट्र के नाम मंगल संदेश–

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की तीर्थंकर परम्परा में अंतिम एवं चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का 2600वाँ जन्मजयंती महोत्सव वर्ष 'अहिंसा-वर्ष' के रूप में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक रूप से

मनाया जा रहा है, यह अत्यन्त हर्ष एवं गौरव का विषय है।

आज के युग को चौबीसों तीर्थंकर भगवन्तों एवं उनके पदचिन्हों पर चलने वाले महापुरुषों के सर्वोपयोगी सिद्धान्तों जैसे – पारस्परिक सामंजस्य, विश्वमैत्री, अहिंसा, अनेकांत, पर्यावरण रक्षा इत्यादि को व्यवहारिक रूप से आत्मसात् करने की महती आवश्यकता है क्योंकि इन्हीं प्रकाश बिन्दुओं के माध्यम से वर्तमानएवं भविष्य में मानव जीवन एवं अस्तित्व का पथ आलोकित हो सकता है।

भगवान महावीर स्वामी अहिंसा के अग्रदूत युगपुरुष थे। जिस समय धरती पर हिंसा की भीषण ज्वाला धधक रही थी, ऐसे समय में अहिंसारूप शीतल जलवृष्टि करके महावीर ने सम्पूर्ण मानवता को अत्यन्त सौम्यकारी धर्म का दिव्य मलहम प्रदान किया था। **''आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्''** अर्थात् **''जो स्वयं को प्रतिकूल हो, ऐसा व्यवहार दूसरों के साथ भी न करें''**जैसा करुणामयी सिद्धान्त विश्व को देकर उन्होंने सभी प्राणियों को आत्मवत् समझकर सभी के साथ मैत्री का व्यवहार करने का अमर संदेश प्रदान किया था।

हम सबको भी परस्पर मैत्रीभाव धारण करते हुए विगत में घटित सभी विघटनकारी संदर्भों से मुख मोड़कर पूर्ण संगठित होकर स्व-पर कल्याण का महान लक्ष्य पूरित करते हुए अपने सद्भावपूर्ण आचरण से संसार को एक बार पुनः भगवान महावीर का स्मरण दिला देना है, उस युग को पुनर्जीवित कर देना है। अभी इससे पूर्व में आप सबने भगवान महावीर के पूर्वज भगवान ऋषभदेव का जो अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष मनाया, उसी श्रृंखला में एवं परम्परा में भगवान महावीर का यह महोत्सव भी समस्त विश्व एवं मानवता के लिए पूर्ण कल्याणकारी, मंगलकारी एवं सुभिक्षकारी हो, यही मेरी हार्दिक भावना है।

➢विभिन्न सामाजिक संस्थाओं, विद्वानों, युवाओं एवं महिलाओं के लिए वार्षिक कार्यकलाप हेतु प्रेरणा बिन्दु –

भारतीय समाज की आधारशिला के रूप में शिक्षा जगत् के कीर्तिमान स्वरूप विद्वज्जन, भावी पीढ़ी के उन्नायक युवावर्ग, पातिव्रत्य संस्कृति की जीवन्त प्रतीक नारीसमाज एवं कलिकाल में धर्मधुरा की संवाहक बालपीढ़ी को भगवान महावीर के 2600वें जन्मोत्सव वर्ष के संदर्भ में अपनी सक्रिय भूमिका निर्वाह करने हेतु मैं उक्त संस्थाओं के माध्यम से आह्वान करती हूँ कि जीवन में प्राप्त हुए इन स्वर्णिम क्षणों के एक-एक पल का मूल्यांकन करें तथा अपने सुन्दर कार्यकलापों से जिनशासन को विश्व के क्षितिज पर पहुँचाकर धर्मप्रभावना का पुण्य प्राप्त करें।

धर्मप्रभावना की श्रृंखला में निम्न संकेत बिन्दु प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिन्हें आप स्थानीय समाज, जिला स्तर, प्रदेश स्तर तथा राष्ट्रीय स्तर पर सम्पन्न करके अपना उत्तरदायित्व निभा सकते हैं –

सांकेतिक प्रेरणा बिन्दु –

1. पूरे देश के दिगम्बर जैन मंदिरों में 2600 प्रतिमाएँ (ऋषभदेव एवं महावीर की युगल प्रतिमा) विराजमान करना।

2. 26 तीर्थों का जीर्णोद्धार एवं विकास करके वहाँ कीर्तिस्तंभ, स्मारक आदि बनावें।

3. 2600 मंत्रों से समन्वित विश्वशांति महावीर विधान 26 स्थानों पर 2600 इन्द्र-इन्द्राणियों द्वारा सम्पन्न हो।

4. 2600 महिलाओं द्वारा कलश यात्रा हो।

5. 2600 महाकुंभों द्वारा भगवान महावीर का पाण्डुकशिला पर अभिषेक किया जावे।

6. 26-26 विद्वानों का प्रत्येक प्रांत में सम्मान होवे।

7. 26-26 प्रतिभाशाली महिलाओं का प्रत्येक प्रांत में सम्मान होवे।

8. 26-26 विशिष्ट कार्यकर्ता युवकों का प्रत्येक प्रांत में सम्मान किया जावे।

9. 26-26 कुमारी कन्याओं (विशेष कार्य करने वाली) का प्रत्येक प्रांत में सम्मान हो।

10. 26-26 बहादुर बच्चों का प्रत्येक प्रांत में सम्मान हो।

11. महिला संगठन की समस्त इकाईयाँ स्थानीय समाज की 26 विशिष्ट महिलाओं को ''माता त्रिशला'' पुरस्कार से सम्मानित करें।

12. अ.भा.दि. जैन केन्द्रीय महिला संगठन 2600 गरीब बच्चों की शिक्षा का प्रबंध करें।

13. प्रत्येक संस्था 26-26 महावीर संगोष्ठियाँ कराने की जिम्मेदारी लेवे।

14. 26 प्रशिक्षण शिविर (दशलक्षण पर्व के प्रवचन में जाने हेतु विद्वान बनाने के लिए) आयोजित हों।

15. 24 तीर्थंकरों की जन्मभूमि एवं कल्याणक भूमियों का जीर्णोद्धार तथा विकास हो। उनमें से एक-एक संस्था एक तीर्थ के विकास की जिम्मेदारी ले सकती है।

16. 26 विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में दिगम्बर जैन ग्रंथों सहित एक-एक गोदरेज अलमारी भेंट की जाये।

17. 26-26 दानी श्रेष्ठियों का सम्मान प्रत्येक प्रान्त में किया जाए।

18. 26-26 कीर्तिस्तंभ प्रत्येक प्रांत में निर्मित हों (कीर्तिस्तंभ का नक्शा एवं मॉडल जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में उपलब्ध है, उसी का नमूना एक कीर्तिस्तंभ तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग तीर्थ पर निर्मित हो चुका है)।

19. 26 राजकीय उद्यान (देश भर में) महावीर के नाम पर किए जाएं तथा उनमें भगवान महावीर का स्टेचू बने।

20. प्रत्येक शहर, ग्राम और नगर में 2600-2600 लोगों से अष्टमूलगुण पालन का फार्म भरवाना।

21. 2600 नगरों में मांस की दुकानें बंद करने का अभियान चलाना।

22. मांस निर्यात के विरोध में प्रत्येक जिले से 2600-2600 पत्र केन्द्र सरकार को भिजवाना।

नोट-पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने 7 इंच की खड्गासन ऋषभदेव एवं महावीर स्वामी की प्रतिमाएँ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित की हैं, सो इच्छुकजन जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में इन दोनों प्रतिमाओं का जोड़ा प्राप्त कर सकते हैं।

➢विश्वशांति महावीर विधान के साथ प्रारंभ हुआ प्रयाग में भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मजयंती महोत्सव–

पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में 1 अप्रैल से 9 अप्रैल 2001 तक आयोजित इस विधान के सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी बनने का गौरव श्री कृष्ण कुमार जैन एवं श्रीमती साधना जैन को प्राप्त हुआ। 2600 मंत्रों से समन्वित, सुमेरु पर्वत के आकर्षक मण्डल से युक्त और रत्नों द्वारा पूजा-जाप्य से स्वयं में अद्भुत इस मण्डल विधान में अनेक धर्मनिष्ठ श्रद्धालु भक्तों ने शांतिधारा, रत्नजाप्य, मण्डल विधान, आरती आदि का सौभाग्य प्राप्त किया।

➢प्रयागवासियों को जीवन में अमूल्य क्षण प्राप्त हुए–

यह प्रयागवासियों का परम सौभाग्य ही था कि जिन पूज्यनीया ज्ञानमती माताजी का दिल्ली निवासी 2600वें जन्मजयंती महामहोत्सव हेतु पलक पांवड़े बिछाकर इंतजार कर रहे थे, उनके सानिध्य में उन्हें भगवान महावीर का महोत्सव मनाने का सुअवसर प्राप्त हुआ चूँकि यह महोत्सव इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ बनकर युगों-युगों के लिए चिरस्थायी स्मृति जन-जन को प्रदान करेगा।

पूर्व निर्धारित कार्यक्रमानुसार प्रातः 5.30 बजे बैण्ड-बाजे के साथ शहर के मुख्य मार्गों से प्रभात भेरी निकली, पश्चात् माताजी की प्रेरणा से जन्मोत्सव

की खुशी में नवनिर्मित 'महावीर जयंती भवन' में जनता द्वारा घंटा, बाजे, शंख, ढोलक आदि बजाकर भगवान के चरणों में दीपक, फल आदि समर्पित किए गए और इन्द्रों द्वारा की गई रत्नवृष्टि के प्रतीकरूप रत्नवृष्टि कर उन रत्नों को जनता में वितरित किया गया। जन्म महोत्सव का झण्डारोहण प्रातः 7.15 बजे स्वरूपरानी पार्क में हुआ, पश्चात् धर्मसभा हुई, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के कुलपति श्री जी.वी. मेहता तथा कौशाम्बी के युवा जिलाधिकारी श्री पार्श्वसारथी शर्मा जी व विशिष्ट अतिथि श्रीमती उषा मेहता जी पधारे। पूज्य माताजी ने इन अतिथियों एवं उपस्थित जनसमुदाय को सम्बोधित करते हुए उन्हें भगवान महावीर के जीवन से परिचित करवाया और कहा कि मैंने एकवर्षीय आयोजन के मध्य होने वाले कार्यक्रमों की रूपरेखा बनाई है जिसमें इलाहाबाद विश्वविद्यालय में **''जैन चेयर की स्थापना''**, 26 संगोष्ठी, 26 धीमान व्यक्तियों का सम्मान आदि प्रमुख हैं, जिनकी आगे मैं विस्तृत चर्चा करूँगी। साथ ही उन्होंने आज के पवित्र अवसर पर राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री व अन्य शासकगणों को अपने हृदय में अहिंसा धारण कर अहिंसक राष्ट्र व विश्वशांति की स्थापना का आशीर्वाद दिया।

प्रो. महोदय द्वारा सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका अप्रैल माह के महावीर जयंती अंक के विमोचन एवं सम्माननीय अतिथियों द्वारा समवसरण श्रीविहार रथ व जन्मकल्याणक प्रतीक ऐरावत हाथी रथ पर स्वस्तिक बनाकर भव्य एवं अद्भुत रथयात्रा जुलूस शहर के विभिन्न मार्गों से निकला, जिसमें बैण्ड, बाजे, भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ, ऐरावत हाथी रथ, पारम्परिक रथ, 26 घोड़े, हाथी, इन्द्राणियों की मंगल कलश यात्रा, महावीर अहिंसा रैली रूप 2600 बच्चों का ध्वजा जुलूस जन-जन की प्रशंसा का केन्द्र बने। स्थान-स्थान पर प्रसाद वितरण व प्रतीक रूप में अनेक वस्तुएँ बाँटी गईं। जुलूस का समापन पाण्डुक शिला पर जन्माभिषेकपूर्वक हुआ और उसके बाद सामूहिक प्रीतिभोज हुआ। इस अवसर पर जैन समाज के सारे प्रतिष्ठान बंद रहे। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम से पूर्व धर्मसभा में अनेक प्रशासनिक अधिकारी व मंत्रीगण पधारे, जिसमें लोक निर्माण विभाग एवं सिचाई मंत्री श्री ओमप्रकाश सिंह द्वारा पूज्य माताजी द्वारा रचित ''भगवान महावीर कैसे बने?'' कृति का विमोचन किया गया तथा भगवान को पालना झुलाने का कार्यक्रम हुआ।

➢तीर्थंकर शिशु का 1008 कलशों से जन्माभिषेक–

7 अप्रैल को प्रातः भगवान महावीर का 1008 कलशों से जन्माभिषेक

हुआ। पूज्य माताजी ने आचार्य कुन्दकुन्द रचित निर्वाणभक्ति का प्रमाण दिखाकर बताया कि भगवान महावीर का जन्म चैत्र शुक्ला 13 की रात्रि में हुआ था और चैत्र शु. 14 को प्रातः इन्द्रों ने जिनशिशु को ले जाकर सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक किया था। इसके बाद भगवान की बालक्रीड़ा का सुन्दर व मनमोहक कार्यक्रम हुआ।

➢सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक से उद्घाटित हुआ 2600वाँ महावीर महोत्सव–

हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना के बीचों-बीच में विश्व की प्रथम कृति के रूप में निर्मित 101 फुट ऊँचे सुमेरुपर्वत की पाण्डुक शिला पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से वहाँ के पदाधिकारियों एवं संघस्थ ब्र. बहनों द्वारा 6 अप्रैल को ही प्रातः 6 बजे महावीर स्वामी का जन्माभिषेक किया गया, उसके पश्चात् सर्वत्र 2600वें जन्मकल्याणक उत्सव को विभिन्न आयोजनों के साथ मनाना प्रारंभ हो गया।

➢संघ द्वारा पाँच स्थानों पर एक साथ महावीर जयंती सम्पन्न की गई–

पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से संघस्थ भाई जी एवं बहनों द्वारा 5 स्थानों पर एक साथ महावीर जयंती मनाई गई। सर्वप्रथम हस्तिनापुर के सुमेरु पर्वत पर संघस्थ ब्र.कु. बीना-आस्था द्वारा जन्माभिषेक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ पुनः ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग तीर्थ पर ब्र. चन्द्रिका द्वारा जन्मकल्याणक के प्रतीकरूप महावीर स्वामी का 108 कलशों से अभिषेक कराया गया। प्रयाग शहर में माताजी के संघ सानिध्य में कार्यक्रम हुआ, दिल्ली में राष्ट्रीय उद्घाटन कार्यक्रम में ब्र. रवीन्द्र जी व संघस्थ बहनों ने भाग लिया तथा लखनऊ की उद्घाटन सभा में भाई रवीन्द्र जी ने भाग लिया।

वास्तव में पूज्य माताजी की तो सदैव यही उत्कट भावना रहती है कि मैं मात्र 2-4 स्थान पर ही नहीं अपितु एक साथ सम्पूर्ण भारत में भव्य स्तर पर तीर्थंकर भगवन्तों की कल्याणक तिथियों का उत्सव करवाऊँ, जिससे जिनधर्म की पताका चहुँओर फहराए और शायद यही कारण है कि ''भावना भवनाशिनी होती है'' यह सूक्ति चरितार्थ होकर उनके द्वारा आयोजित प्रत्येक लघु अथवा वृहद् कार्यक्रम महती धर्मप्रभावनापूर्वक सम्पन्न होते हैं।

➢विश्व में एक ही सुमेरु पर्वत है जो तीर्थंकरों के जन्माभिषेक से पावन एवं पूज्य है–

जैन पुराणों में वर्णन आता है कि तीनों लोकों एवं तीनों कालों में सुमेरु पर्वत सबसे अधिक महान एवं पूज्य है। वैसे तो यह 16 चैत्यालयों से युक्त

होने से सर्वपूज्य है ही तथापि जब तीर्थंकर जन्म लेते हैं, तो सौधर्म इन्द्र सर्वप्रथम जिनबालक को सुमेरु पर्वत की पाण्डुकशिला पर विराजमान करके उनका जन्माभिषेक करते हैं, जिससे इस मेरु पर्वत की पूज्यता अनन्तगुणा वृद्धिंगत हो जाती है। शास्त्रों में वर्णित वह सुमेरुपर्वत अनुपलब्ध नहीं प्रत्युत् अतिदुर्लभ है।

आज भारत की धरती से 20 करोड़ मील की दूरी पर स्थित होने के कारण साधारण मनुष्य उसके दर्शन-वंदन के सौभाग्य से वंचित रह जाते हैं, केवल ऋद्धिधारी मुनि ही उस सुमेरुपर्वत के दर्शन करके अपने पुण्य की सराहना करते हैं। वर्तमान में भले ही हम उस सुमेरु पर्वत तक नहीं पहुँच सकते किन्तु पूज्य माताजी की प्रेरणा से मेरठ जिले के हस्तिनापुर तीर्थ पर निर्मित 101 फुट ऊँचे सुमेरु पर्वत के दर्शन करके अपने कर्मबंधन को काट सकते हैं। जैसा कि शास्त्रों में वर्णन है, ठीक उसी प्रकार भद्रशालवन, नन्दनवन, सौमनसवन एवं पाण्डुकवनों में 16 चैत्यालयों से संयुत यह सुमेरु पर्वत भारत ही नहीं अपितु विश्व की एक अनुपम कृति है, जहाँ 136 सीढ़ियों के माध्यम से ऊपर पहुँचने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो हमने असली सुमेरु पर्वत के ही दर्शन कर लिए हों। वास्तव में इससे अधिक हमारे लिए पुण्य की बात और क्या हो सकती है कि जिस कृति की हम और आप स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकते थे, वह हमें इस धरती पर साक्षात् प्राप्त हो रही है।

यहाँ इस सुमेरु पर्वत की महत्ता को बतलाने का एकमात्र उद्देश्य यह है कि वर्तमान में जो भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मजयंती महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया है उसका सबसे पहला और सीधा संबंध सुमेरु पर्वत से है। भगवान महावीर स्वामी ने कुण्डलपुर नगरी (बिहार) में जन्म लिया था, तो सौधर्म इन्द्र ने सबसे पहले उनका 1008 कलशों से जन्माभिषेक सुमेरु पर्वत पर ही किया था। इसी सुमेरु पर्वत के महत्त्व को आम जनता तक पहुँचाने के उद्देश्य से पूज्य माताजी की कृति ''विश्वशांति महावीर विधान'' में इसी सुमेरु पर्वत के मण्डल का आकार है तथा 2600 अर्घ्यों के साथ मण्डल पर 2600 रत्न चढ़ाने की नई परम्परा भी इसमें दर्शाई गई है।

➢भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव का राष्ट्रीय स्तर पर भव्य उद्घाटन समारोह–

विश्ववंद्य भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव को मनाने की शुभ घड़ियाँ असंख्य खुशियाँ लेकर हम सबके समक्ष आ गईं, जब जनता

के साथ-साथ भारत सरकार ने भी महावीर जन्मोत्सव मनाने की घोषणा कर धरती को महावीर से परिचित होने का स्वर्णिम अवसर प्रदान कर दिया। इस राष्ट्रीय महोत्सव का भव्य उद्घाटन भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा 6 अप्रैल 2001 को प्रातः 10 बजे दिल्ली के इन्दिरागांधी (इंडोर) स्टेडियम में किया गया। इस पावन अवसर पर माननीय प्रधानमंत्री जी के साथ गृहमंत्री – श्री लालकृष्ण आडवाणी, संचार मंत्री – श्री रामविलास पासवान एवं केन्द्रीय मंत्री – श्री सुन्दरलाल पटवा, केन्द्रीय वस्त्रराज्यमंत्री – श्री वी. धनंजय कुमार भी उपस्थित थे। उद्घाटन तो हो गया और सरकार ने इस महोत्सव हेतु 100 करोड़ रुपये का अनुदान घोषित करते हुए डाक टिकट भी जारी कर दिया परन्तु कुछ ऐसा अघटित कार्य उस सभा में हो गया, जो दिगम्बर जैन समाज के लिए एक कटु अनुभव प्रदान कर गया। पूज्य आचार्य श्री विद्यानंद जी महाराज दो मुनियों के साथ उस सभा में सानिध्य प्रदान करने गये थे किन्तु वे कारणवश स्टेडियम के बाहर से ही वापस आ गये।

यहाँ इस प्रसंग में ज्ञातव्य है कि सन् 1974 में भगवान महावीर का 2500वाँ निर्वाण महोत्सव राष्ट्रव्यापी स्तर पर सरकार एवं समाज द्वारा मनाया गया था। वह पूरा दृश्य आज भी मेरी आँखों के समक्ष है, जब सन् 1972 में ही दिल्ली के प्रमुख कार्यकर्ता श्री परसादी लाल जैन पाटनी, श्री पारसदास जैन मोटर वाले, डॉ.कैलाशचंद जैन राजा ट्वायज आदि अनेक महानुभावों ने ब्यावर (राज.) में जाकर पूज्य माताजी को निर्वाण महोत्सव की रूपरेखा बताकर दिल्ली पधारने हेतु निवेदन किया और उनके निवेदन को स्वीकार कर माताजी अपने संघ सहित राजस्थान से दिल्ली पधारीं। उस समय आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज चांदनी चौक, कम्मोजी की धर्मशाला में विराजमान थे और माताजी पहाड़ी धीरज-दिल्ली में चातुर्मास स्थापित करके आचार्यश्री के दर्शनार्थ आया करती थीं जिससे आचार्यश्री के मुख से कई बार महावीर निर्वाणोत्सव की व्यापक चर्चाएँ सुनी गईं। स्थानकवासी जैन सम्प्रदाय के मुनि श्री सुशील कुमार जी, आचार्य देशभूषण महाराज एवं साहू शान्तिप्रसाद जैन उस विषय की रूपरेखा तैयार करने में पूरे मनोयोग से लगे हुए थे पुनः सन् 1973 में मुनि श्री विद्यानंद जी महाराज-दिल्ली पधारे, तब उपर्युक्त विचार-विमर्श में विद्यानंद महाराज एवं ज्ञानमती माताजी का पूरा सहयोग लिया जाता था।

उस समय विभिन्न सम्प्रदायों में विभक्त सम्पूर्ण जैन समाज ने हर तरह से एकजुट होकर अपना संगठित रूप प्रस्तुत किया था,जिससे प्रभावित होकर

तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने सरकारी स्तर पर कमेटी गठित कर कार्यक्रम की व्यापक रूपरेखा बनाई थी। इस संगठन का एक उदाहरण आचार्य श्री देशभूषण महाराज के मुख से सुना है –

"सन् 1972 में एक दिन संसद भवन में महावीर निर्वाण महोत्सव की बैठक थी। मुनि सुशील कुमार जी उसमें भाग लेने आए। मैं भी दिगम्बर समाज के लोगों द्वारा मना करने पर भी 2-3 भक्तों को लेकर संसद भवन पहुँचा किन्तु वहाँ दिगम्बर साधुओं का प्रवेश निषिद्ध होने के कारण मुझे प्रधानमंत्री के सुरक्षाकर्मियों ने बाहर ही रोक दिया। मैं बिना एतराज के वहीं खड़ा रहा और अंदर मुनि सुशील कुमार जी को यह सूचना मिलते ही वे भी बाहर आ गए तथा इन्दिरा जी से उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि यदि हमारे आचार्य देशभूषण महाराज संसद की इस मीटिंग में नहीं आएंगे, तो मैं भी मीटिंग में भाग नहीं लूँगा और यह कार्यक्रम होना संभव नहीं है। मुनि जी की ऐसी एकता एवं मैत्री भावना देखकर इन्दिरा जी मुझे ससम्मान संसद भवन में ले गईं और निर्वाण महोत्सव संबंधी वह मीटिंग बड़े सुन्दर वातावरण में सम्पन्न हुई।"

दिल्ली के इस धर्मप्रभावक वातावरण को देखकर तभी पूज्य माताजी ने अनेकानेक प्रेरणा भरे पत्र भेजकर आचार्यश्री धर्मसागर महाराज को भी संघ सहित दिल्ली पधारने का निवेदन किया था पुनः जुलाई 1974 को आचार्य संघ का दिल्ली आगमन हुआ और नवम्बर 1974 में भगवान महावीर का 2500वाँ निर्वाण महोत्सव अनेक उपलब्धियों के साथ सम्पन्न हुआ था। यह बात मैंने यहाँ इसीलिए उल्लिखित की है कि उस समय से लेकर आज तक की स्थिति में देश की राजनीति के समान ही जैन समाज की अखण्डता में भी बिखराव आया है, इस कटुसत्य को हम सभी को स्वीकार करना पड़ेगा। सामाजिक संगठन में विश्वास रखने वाले उदारहृदयी जो साधु एवं श्रावक उस समय थे, आज उनमें से कुछ का साया हमारे ऊपर से उठ गया है और संकीर्ण विचारधारा के कुछ लोग अपना द्वेषजाल फैलाकर सरेआम सरकार के सामने भी अपनी अखण्डता में दरारें डालकर प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं। यहाँ सोचने की बात यह है कि आचार्य देशभूषण महाराज संसद के अन्दर समाचार दिए बिना यदि बाहर से वापस चले गए होते, तो समस्या का समाधान कदापि नहीं होता।

➢जमीन आसमान का अन्तर था दोनों सार्वजनिक सभाओं में –

13 नवम्बर 1974 में महावीर निर्वाणोत्सव की रामलीला मैदान दिल्ली की मुख्य सभा तथा 6 अप्रैल 2001 में महावीर जयंती महोत्सव की इन्दिरा

गांधी स्टेडियम दिल्ली के उद्घाटन समारोह की सभा में जमीन-आसमान का अन्तर दिख रहा था, जिसका टी.वी. के आस्था चैनल पर प्रसारण देखकर दिगम्बर जैन समाज के बच्चे-बच्चे के मन को आघात पहुँचा। कहाँ सन् 1974 में दिगम्बर जैन साधु-साध्वियों की अल्प संख्या होते हुए भी उस मंच पर 62 साधु-साध्वी विराजमान थे और कहाँ अब लगभग एक हजार-साधु-साध्वियों के रहते हुए भी उनमें से 6 अप्रैल को स्टेडियम में मंच पर एक भी साधु-साध्वी, क्षुल्लक-क्षुल्लिका आदि में से कोई अस्तित्व नजर नहीं आया। दिगम्बर जैन समाज के पदाधिकारियों को दिल्ली एवं आस-पास उपस्थित मुनि-आर्यिकाओं, क्षुल्लक-क्षुल्लिका आदि को आमंत्रित करना चाहिए था। यदि पदाधिकारियों द्वारा उन्हें आमंत्रित किया गया था, तो उन सभी साधु-साध्वियों को कार्यक्रम में उपस्थित होना चाहिए था। आश्चर्य की बात यह रही कि श्वेताम्बर सम्प्रदाय के भी पधारे साधु-साध्वी में से किसी ने प्रधानमंत्री एवं अन्य आगन्तुक शासनाधिकारियों को भगवान महावीर जन्मोत्सव को आयोजित करने हेतु एक भी वाक्य का आशीर्वाद नहीं बोला, जबकि इससे पूर्व 9 अप्रैल 1998 एवं 4 फरवरी 2000 को भगवान ऋषभदेव के कार्यक्रमों में पधारकर प्रधानमंत्री जी ने पूज्य माताजी के आशीर्वादात्मक प्रवचन को अपने वक्तव्य में देश रक्षा के लिए कवचरूप स्वीकार किया था।

➢नहीं लेखनी लिख सकती है ऐसी विषम परिस्थिति को–

प्रयाग में विराजित पूज्य माताजी एवं हम लोगों को जब प्रयागवासियों ने टी.वी. के माध्यम से वह दृश्य दिखाया और उस दृश्य को प्रत्यक्षदर्शियों के मुख से सुना गया, तो जिस अन्तर्वेदना का अनुभव हुआ, उसे मैं अपनी लेखनी से लिख भी नहीं सकती। पूज्य माताजी के मुख से तो बार-बार यही शब्द निकला कि वे महामना आचार्य देशभूषण महाराज, आचार्य सुशील मुनि एवं साहू शान्तिप्रसाद जैन यदि आज जीवित होते, तो ऐसा दृश्य कदापि उपस्थित नहीं होता, किन्तु तत्त्वज्ञानी माताजी पुनः कहती हैं कि क्या जिस घर से बड़े-बूढ़े लोगों का साया उठ जाता है, उस घर में शादी, विवाह या अन्य बड़े-छोटे कार्य बंद हो जाते हैं? कभी नहीं, बल्कि घर की भावी पीढ़ी उससे भी अधिक धूमधाम से सभी व्यवहारिक कार्यों को सम्पन्न करती है, उसी प्रकार हमारी समाज के कर्णधारों को भी प्राचीन साधु-साध्वियों के अनुभव का लाभ उठाते हुए महावीर जन्मोत्सव को अतीव उत्साह के साथ मनाना चाहिए तथा सामाजिक विघटनकारी व्यक्तित्व से सदैव सावधान रहकर अपनी अस्मिता की रक्षा

करनी चाहिए।

➢उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ में महावीर स्वामी 2600वाँ जन्मजयंती कार्यक्रम–

उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ में 2600वें जन्मजयंती महोत्सव पर लखनऊ के विभिन्न मार्गों से भगवान महावीर की निकलती हुई रथयात्रा हजरतगंज में एक सभा के रूप में परिवर्तित हो गई। मंच पर माननीय मुख्यमंत्री श्री राजनाथ सिंह, नगर आवासमंत्री श्री लालजी टंडन, नगर प्रमुख श्री एस.सी. राय, पूर्व राज्यमंत्री-श्री राजेन्द्र तिवारी, फल एवं उद्यान मंत्री-श्री धनराज यादव एवं सभा के प्रमुख वक्ता कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र जी उपस्थित थे।

दीप प्रज्वलन एवं स्वागत सम्मान के पश्चात् श्री धर्मवीर जैन (रिटायर्ड इंजी.) ने स्वागत भाषण प्रस्तुत करते हुए शासन से सहयोग के मुद्दे पर प्रकाश डाला। पश्चात् कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी ने केन्द्रीय सरकार द्वारा आयोजित उद्घाटन सभा पर प्रकाश डालते हुए भगवान महावीर के जीवन दर्शन पर प्रकाश डाला पुनः मंत्री महोदय से कहा कि लखनऊ के एक पार्क का नाम भगवान महावीर स्वामी के नाम से हो और उसमें भगवान महावीर की मूर्ति स्थापित करने की अनुमति जैन समाज को प्रदान करें।

माननीय मुख्यमंत्री जी ने अपने भाषण में कहा कि सर्वप्रथम मैं आप सबको महावीर जयंती की बधाई देता हूँ और पूर्ण विश्वास के साथ कहता हूँ कि आज भारत की संस्कृति की एकता एवं अखण्डता को कायम रखने में जैनधर्म का पूर्ण योगदान रहा है। मैं प्रधानमंत्री जी को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने प्रादेशिक स्तर पर भगवान महावीर महोत्सव समिति का गठन किया है और मैं इस समिति का अध्यक्ष बनाया गया हूँ। मैं इस पावन दिवस पर लखनऊ के हाथी पार्क का नाम महावीर पार्क के नाम से घोषित करता हूँ एवं भगवान महावीर की मूर्ति स्थापित करने की अनुमति देता हूँ।

इस अवसर पर मेरठ से पधारे श्री आनंद जैन-जैन मार्बल होम ने अपनी ओर से पार्क में मूर्ति स्थापना करने की घोषणा की।

➢अनेक गणमान्य महानुभावों द्वारा पूज्य माताजी से किया गया अतीव आग्रह–

राजधानी दिल्ली में जन्मजयंती महोत्सव के उद्घाटन सत्र में घटित अप्रत्याशित घटना से सम्पूर्ण जैन समाज में छाई उदासीनता एवं कष्ट को देखते हुए साहू रमेश जी जैन आदि अनेकानेक गणमान्य महानुभावों के फोन ब्रह्मचारी रवीन्द्र जी के पास आने लगे और लोगों ने तो यहाँ तक कहना प्रारंभ

कर दिया कि अगर माताजी दिल्ली में होतीं, तो 2600वें जन्मोत्सव के उद्घाटन समारोह का नजारा ही अलग होता। भाई जी! आप तो कैसे भी करके माताजी को जल्दी से जल्दी दिल्ली ले आओ। जो हो गया, वह तो अब वापस नहीं आ सकता किन्तु अब आगामी 1 वर्ष के अन्तर्गत हम माताजी के वात्सल्यपूर्ण प्रेरणा एवं दिशानिर्देश में इसे एक नया रूप प्रदान करेंगे ताकि लोग इस घटना को भूलकर इस 2600वें जन्मोत्सव की एक यादगार छवि अपने मन में बनावें।

➢पूज्य माताजी का 46वाँ आर्यिका दीक्षा दिवस–

9 अप्रैल 2001, वैशाख कृ. दूज को वृहद् शांतिधारापूर्वक विश्वशांति महावीर विधान की सम्पन्नता के साथ पूज्य माताजी का 46वाँ आर्यिका दीक्षा दिवस का कार्यक्रम प्रारंभ हुआ, जिसमें अनेकों महानुभावों ने पूज्य माताजी के चरणों में अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित की।

➢कौशाम्बी-प्रभाषगिरि तीर्थ के पदाधिकारियों ने विनम्र प्रार्थना की–

इलाहाबाद (प्रयाग) के निकट ही भगवान पद्मप्रभु के गर्भ एवं जन्मकल्याणक से पवित्र कौशाम्बी तीर्थ है तथा उसी से कुछ दूरी पर स्थित प्रभाषगिरि (पभौसा) तीर्थ है जो भगवान पद्मप्रभु के दीक्षा एवं ज्ञानकल्याणक से पवित्र विश्व की प्राचीन ऐतिहासिक नगरी होने के साथ ही जैन संस्कृति का प्रतीक, भक्ति व आस्था का आधार, उपासना और साधना का केन्द्र है। आत्मकल्याण का पाठ पढ़ाने वाले इस कौशाम्बी तीर्थ के साथ जहाँ भगवान पद्मप्रभु का इतिहास जुड़ा है, वहीं आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व का इतिहास भी जुड़ा है, जब महासती चंदना द्वारा भगवान महावीर को आहारदान देने पर न केवल पंचाश्चर्य की वृष्टि हुई थी अपितु चंदना की लौहशृंखला टूटने का चमत्कार भी हुआ था।

यह एक सुखद संयोग और सोने में सुहागा वाली बात हुई, जहाँ निर्वाणोत्सव के समापन के साथ ही भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मजयंती महोत्सव आ गया, वहीं कौशाम्बी-प्रभाषगिरि के कार्यकर्ताओं को एक सुनहरा मौका मिल गया ''महावीर स्वामी की चमत्कारिक आहारभूमि एवं भगवान पद्मप्रभु की जन्मभूमि के उद्धार का''।

चूँकि शास्त्र-पुराणों की बातें कतिपय लोग ही जानते हैं अतः कार्यकर्ताओं के अतीव आग्रह से इस प्राचीन कथानक को साकाररूप प्रदान करने हेतु पूज्य माताजी ने इलाहाबाद शहर से ऋषभदेव दीक्षास्थली तीर्थ पर पधारकर पुनः 21 अप्रैल को कौशाम्बी तीर्थ की ओर मंगल विहार किया।

➢कौशाम्बी तीर्थ पर मंगल प्रवेश–

30 अप्रैल 2001, वैशाख शु. सप्तमी को हम लोगों ने पूज्य माताजी के साथ कौशाम्बी तीर्थ पर मंगल प्रवेश किया। यहाँ हमारा प्रवास श्वेताम्बर मंदिर में रहा, इसी मंदिर के सामने दिगम्बर जैन समाज की 3000 गज की जगह पड़ी है, उसमें पूज्य माताजी के सानिध्य में शिलान्यास करके प्रातः 9.30 बजे भगवान पद्मप्रभु के चरण चिन्ह विराजमान किए गए।

➢सुमेरु पर्वत का 22वाँ प्रतिष्ठापना दिवस–

चूँकि 30 अप्रैल को हस्तिनापुर में निर्मित सुमेरु पर्वत का 22वाँ प्रतिष्ठापना दिवस भी था अतः उसके उपलक्ष्य में संघस्थ ब्र. बहनों ने संगीत के साथ सामूहिक रूप में जम्बूद्वीप पूजा, सुमेरु पर्वत पूजा, महावीर पूजा एवं पद्मप्रभु भगवान की पूजन की। सायंकाल प्रतिक्रमण के पश्चात् माताजी कमरे से बाहर श्वेताम्बर मंदिर आदि देखने हेतु निकलीं और अकस्मात् ही गांव के मंदिर की ओर उनके चरण चल पड़े, 2 किमी. के पदविहार के पश्चात् माताजी भगवान पद्मप्रभु की जन्मभूमि में पहुँच गईं।

➢शायद होनी को यही मंजूर था–

अकस्मात् हुए इस विहार ने एक बार तो संघ के लोगों को हैरत में डाल दिया परन्तु शायद यही होनहार थी, तभी तो माताजी के चरण अनायास ही उस भूमि की ओर चल पड़े, जहाँ के कण-कण में भगवान पद्मप्रभु के जन्म के परमाणु आज भी विद्यमान हैं, जहाँ कभी इन्द्र की आज्ञा से धनकुबेर ने प्रभु के गर्भागम से पूर्व रत्नवृष्टि की थी, जहाँ सुर-नर वंदित प्रभु शैशवावस्था में पालने में झूले थे, जहाँ देवों ने स्वर्ग से आकर प्रभु का जन्मोत्सव मनाया था, जहाँ प्रभु शैशव से बाल्यावस्था में आकर देव बालकों के संग खेले थे और कुमारावस्था में जन-जन के आकर्षण का केन्द्र बने थे, आज वही नगरी कालदोषवश वीरान एवं उपेक्षित थी, माताजी ने संघ सहित उस ओर मंगल पदार्पण किया और वहीं प्रभु के दर्शन के पश्चात् रात्रिविश्राम भी किया परन्तु तीर्थ की वीरानियत एवं एकमात्र प्राचीन जिनमंदिर की जीर्ण-शीर्ण दशा देखकर माताजी को आन्तरिक वेदना हुई, वे कहने लगीं– चंदनामती! अगर एक-एक साधु अथवा श्रेष्ठी एक-एक जन्मभूमि के विकास का कार्यभार अपने ऊपर ले लें, तो वह दिन दूर नहीं, जब इस देश में पुनः सर्वत्र जिनधर्म का ध्वज लहराएगा लेकिन यह बात कैसे सबको समझाई जाए।

अगले दिन माताजी ने वहाँ के पदाधिकारियों को अनेक प्रेरणाएँ देकर

इसे विकसित स्वरूप प्रदान करने की बात कही। जीव रक्षा का उपकरण पिच्छी एवं शौच का उपकरण कमण्डलु मात्र अपने पास रखने वाले अपरिग्रही, महाव्रती साधु तो मात्र श्रावक को प्रेरणा ही दे सकते हैं वस्तुतः ऐसी परम पावन वसुन्धरा शीघ्र ही विकसित होकर विश्व के क्षितिज पर पहुँचे, यही मंगल कामना है।

➢प्रभासगिरि तीर्थ चमक उठा विश्व के व्योम पर–

सन्तों के बारे में कहा है कि–

जहाँ पड़े गुरुचरण वहाँ की, रज चंदन हो जाती है।
मरुथल में भी कल-कल करती, कालिन्दी बह जाती है।।

यह पंक्तियाँ पूज्य माताजी के जीवन पर पूर्णतः चरितार्थ होती हैं। जहाँ भी उनके चरण पड़े हैं, वहाँ जंगल में मंगल हो गया, जीर्ण-शीर्ण अवस्था वाले तीर्थों ने विकसित स्वरूप प्राप्त कर लिया। प्रभाषगिरि तीर्थ पर 2 मई 2001 से 7 मई 2001, वैशाख शु. 10 से वैशाख शु. 15 तक आयोजित **''तीर्थंकर महावीर जिनबिंब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सव** में अपना मंगल सानिध्य प्रदान करने हेतु उन्होंने 1 मई को मंगल प्रवेश किया। यह एक संयोग ही था कि पूज्य माताजी के मंगल आगमन के साथ-साथ आगे-आगे प्रतिष्ठेय भगवान की प्रतिमा जी आईं, जिससे माताजी के मन में बड़ी प्रसन्नता रही। 2 मई को हम पूरे संघ सहित प्रभाषगिरि पर्वत की वंदना हेतु गये। छोटी सी सुरम्य पहाड़ी देखकर मन प्रसन्न हो गया। हमने वहाँ माताजी के साथ भक्ति पाठ किया तथा संघस्थ बहनों ने भगवान का अभिषेक-पूजन किया।

8.30 बजे प्रतिष्ठा महोत्सव का झण्डारोहण हुआ एवं मध्यान्ह 3 बजे भगवान पद्मप्रभु की सवा सात फुट ऊँची पद्मासन प्रतिमा क्रेन द्वारा विराजमान की गईं। पश्चात् भगवान के गर्भकल्याणक आदि अन्तरंग क्रियाओं द्वारा पंचकल्याणक प्रतिष्ठा प्रारंभ हो गई। 5 मई को प्रभावनापूर्वक भगवान महावीर के प्रथम आहार का दृश्य दिखाया गया एवं मानस्तंभ में विराजमान भगवन्तों का महामस्तकाभिषेक हुआ।

➢विश्वशांति महावीर विधान का चमत्कार–

4 मई 2001 को भगवान के दीक्षाकल्याणक दिवस पर इलाहाबाद से अनेक महानुभाव पधारे थे, मध्यान्ह में वे हमारे पास आकर दर्शन करके बैठ गए, उनमें से एक महिला जिनका नाम श्रीमती सीमा जैन (ध.प. श्री स्वतंत्र प्रकाश जैन) था, कहने लगीं कि माताजी! विश्वशांति महावीर विधान में

बैठकर मेरे घुटने का दर्द बिल्कुल खत्म हो गया है जबकि मैं उसमें बैठने के लिए बहुत सोच रही थी कि कैसे बैठ पाऊँगी किन्तु मैंने मशीन के समान सुबह 2.30 बजे से उठकर उन दिनों खूब मेहनत की और बिल्कुल स्वस्थ रही। यह साक्षात् चमत्कार ही मेरे साथ हुआ है।

वास्तव में विचार करके देखा जाए तो आचार्यों ने जिनेन्द्र भक्ति की अचिन्त्य महिमा का वर्णन करते हुए कहा है–

एकापि समर्थेयं, जिनभक्तिर्दुर्गतिं निवारयितुं।
पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः।।

फिर ज्ञानमती माताजी जैसी महान साध्वी, जिनके रोम-रोम में तीर्थंकर प्रभु की भक्ति ही समाई हो और जिनकी लेखनी में साक्षात् शारदा माता का वास हो, उनकी लेखनी से निःसृत वीर प्रभु के गुणगान करने वाले मंत्रों में कोई चमत्कार आ गए, तो कोई अतिशयोक्ति वाली बात नहीं है।

➢महासती चंदना द्वारा महामुनि महावीर को आहार दान का ऐतिहासिक दृश्य–

इस प्रतिष्ठा की ऐतिहासिक विशेषता रही कि 2565 वर्ष पूर्व के इतिहास को साकार करते हुए भगवान महावीर 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत माताजी की प्रेरणा से महामुनि महावीर एवं उनको आहार प्रदान करते हुए महासती चंदना की प्रतिमा की स्थापना की गई तथा 7 मई को अपार जनसमूह के मध्य महामुनि महावीर के आहारदान का दृश्य दिखाया गया। श्री महावीर प्रसाद जैन, बंगाली स्वीट, दिल्ली ने इस प्रतिमा की स्थापना एवं प्रथम ग्रास आहार देने का पुण्य प्राप्त किया।

यह वही पवित्र भूमि है, जहाँ 2565 वर्ष पूर्व राजा चेटक की पुत्री चंदना के साथ एक ऐतिहासिक घटना घटी थी, जिसे एक विद्याधर हरण कर ले गया और रानी के भय से उसे जंगल में डाल दिया, पुनः एक भील ने उसे देखकर अपने राजा को सौंप दिया। भील राजा ने उसे अपनी रानी बनाना चाहा किन्तु उसकी दृढ़ता देखकर उस भील की माता ने चंदना की रक्षा की, अनन्तर भील ने चंदना को कौशाम्बी नगरी के एक मित्रवर सेठ को दिया, उन्होंने उसे अपने स्वामी वृषभसेन के पास पहुँचा दिया, सेठ ने कुलीन कन्या समझकर उसे अपनी पुत्री के समान रखा परन्तु सेठानी ने उसे शंका भरी दृष्टि से देखकर उसे सेठ की अनुपस्थिति में सांकल से बांधकर रखा तथा खाने के लिए मिट्टी के सकोरे में कांजी से मिला हुआ कोदों का भात दिया करती थी, एक दिन कौशाम्बी नगरी में महामुनि महावीर के आहारार्थ आने पर उसने अत्यन्त

भक्तिपूर्वक उन्हें पड़गाहना चाहा, उस समय उसकी लौहशृंखला टूट गई और वह सुन्दर वस्त्राभूषणों, केशों से सुसज्जित हो गई। शील के माहात्म्य से मिट्टी का सकोरा स्वर्ण पात्र और कोदों का भात शाली चावलों की खीर बन गई। महावीर को चंदना ने पड़गाहन करके भक्तिपूर्वक आहारदान दिया और देवों ने पंचाश्चर्य वृष्टि की थी।''

उसी कथानक को साकाररूप प्रदान करने हेतु वहाँ उनका स्थाई स्मारक बनाया गया, जिससे सभी महावीर स्वामी के साथ ही महासती चंदनबाला के आदर्शमयी इतिहास से परिचित हो सकेंगे।

➢दिल्ली की ओर विहार की घोषणा सुन प्रयागवासी रो पड़े–

राजधानी दिल्ली के भक्तों, श्रेष्ठियों एवं वरिष्ठ कार्यकर्ताओं के पुनः-पुनः दिल्ली की ओर मंगल विहार के अतीव आग्रह को देखते हुए माताजी ने 6 मई को सायंकालीन प्रवचन सभा में दिल्ली की ओर मंगल विहार एवं वहीं के चातुर्मास की घोषणा कर दी, तो इलाहाबाद वालों को अत्यधिक दुःख हुआ। कुछ महिलाएँ तो फूट-फूट कर रोने लगीं। दरअसल लगभग 15 दिन से इलाहाबाद वालों ने कई बार नारियल चढ़ाकर नए तीर्थ पर चातुर्मास हेतु निवेदन किया था और उन्हें कुछ विश्वास सा हो गया था कि शायद दीक्षास्थली में ही चौमासा हो जाएगा किन्तु आज निर्णय सुनते ही सब बहुत दुःखी हुए।

वस्तुतः सन्त-साधु का आहार-विहार अनियत (अनिश्चित) ही होता है अतः बहती धार के समान कब किस ओर मुड़ जाएँ, कुछ निश्चित नहीं है। फिर जहाँ धर्मरक्षा, तीर्थरक्षा इत्यादि विषय सामने हों, तो भक्तों का आग्रह छोड़कर भी उस ओर लक्ष्य करना ही होता है अतः श्रावक-श्राविकाओं को साधु-साध्वियों से ज्यादा मोह नहीं करना चाहिए।

➢भगवान विमलनाथ की जन्मभूमि कम्पिला जी तीर्थ पर पड़े पूज्य माताजी के चरण –

प्रयाग तीर्थ का विकसित स्वरूप देखकर पूज्य माताजी ने 22 अप्रैल 2001 को दिल्ली की ओर मंगल विहार कर दिया। विहार की शृँखला में कन्नौज, फर्रुक्खाबाद, कायमगंज आदि स्थानों पर होते हुए जैनधर्म के तेरहवें तीर्थंकर भगवान विमलनाथ के गर्भ, जन्म, तप एवं ज्ञानकल्याणक से पवित्र भूमि श्री कंपिला जी दि. जैन तीर्थ (जि. फर्रुखाबाद) में पूज्य माताजी के आगमन पर एक नवीन सूर्य का उदय हुआ, जब इस तीर्थ के विकास हेतु **'सती द्रौपदी कला मन्दिरम्''** एवं तीर्थंकर परम्परा के प्रवर्तक आदिब्रह्मा भगवान

ऋषभदेव की सवा सात फुट उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा की स्थापना की घोषणा पूज्य माताजी द्वारा की गई।

महान शीलवती महाभारत काल की सती द्रौपदी की जन्मस्थली एवं स्वयंवर स्थली 'कंपिला जी' में दस इलेक्ट्रानिक झांकियों से समन्वित 'कला मंदिरम्' की उद्घोषणा के पीछे पूज्य माताजी की यही भावना निहित रही कि इस माध्यम से क्षेत्र के विकास एवं आकर्षण में वृद्धि के साथ-साथ जनसाधारण को जहाँ भगवान ऋषभदेव-महावीर स्वामी की झाँकियों के द्वारा जैनधर्म की प्राचीनता एवं अविच्छिन्न परम्परा का ज्ञान होगा, वहीं भगवान विमलनाथ का जीवनवृत्त एवं सती द्रौपदी का पंचभर्तारी न होकर उनके द्वारा एक पतिव्रत धर्म पालन से उत्पन्न शील व्रत का माहात्म्य भी सामने आएगा।

➢एक बार पुनः खुर्जा के स्वर्ण मंदिर के दर्शन मिले–

21 जून 2001 को हम लोग विहार करते हुए खुर्जा पहुँचे। पूर्व में प्रयाग जाते वक्त भी हमारा यहाँ आगमन हुआ था। खुर्जा पहुँचकर मैंने और माताजी ने आधा किमी. अंदर जाकर स्वर्ण मंदिर के दर्शन किए। यहाँ की गलियाँ बहुत गंदी थीं, जिन्हें देखकर मन में ग्लानि तो हुई, किन्तु मंदिर पहुँचकर वह असीम प्रसन्नता में परिवर्तित हो गई क्योंकि कुन्दन के वृहद् कसीदाकारी काम वाला यह भारत का एकमात्र ऐतिहासिक मंदिर है, यहाँ सोना भी भारी मात्रा में लगा हुआ है।

आज से 200 वर्ष पूर्व पंचायत के सहयोग से बने इस मंदिर में पं. सेठ मेवाराम जैन रानीवाला ने पूरा कुन्दन और सोने का काम कराया था, उनके वंशज (पड़पोते) अशोक कुमार जैन अभी यहाँ रहते हैं, यह मंदिर अब जीर्णोद्धार की हालत मे है। विशेषरूप से यहाँ देखने में आया कि शीतलनाथ भगवान की वेदी के पीछे उनका भरा हुआ कल्पवृक्ष का संगमरमर से निर्मित चिन्ह है, जिसमें सोने का काम है तथा मंदिर की सभी वेदियों में लगे तीनों छत्रों का क्रम ऊपर बड़ा, पुनः उससे छोटा है, जो माताजी उचित मानती हैं। यहाँ के नशिया मंदिर में एक महानुभाव की ओर से जम्बूद्वीप की संक्षिप्त रचना भी बनी है।

➢एक आश्चर्यकारी घटना सुनने में आई–

26 जून 2001 को हम लोग राजधानी दिल्ली के निकट नोएडा में ठहरे हुए थे। शाम को यहाँ कुछ महिलाएं माताजी के दर्शनार्थ आईं और मुझसे कहने लगीं कि माताजी! यहाँ पर हम लोगों ने भी ज्ञानमती माताजी द्वारा दी

गई रोटी कटोरदान में रखकर एक सप्ताह बाद दो रोटी बनकर निकलते देखा है और ऐसा तमाम महिलाओं के घर में हुआ है। लोगों ने इसे चमत्कार माना है कि जिसके यहाँ रोटी आएगी, उसकी खूब उन्नति होगी। सुनकर हमें बड़ी हँसी आई और आश्चर्य भी हुआ कि साधु तो मात्र आशीष देते हैं रोटी इत्यादि नहीं, फिर यह हवा किसके द्वारा और कैसे फैलाई गई है। इसी प्रकार अनेक लोगों से यह बात सुनी गई, जबकि माताजी ने कभी किसी को रोटी नहीं दी थी बल्कि अक्षीण महानस ऋद्धि का मंत्र अवश्य दिया करती हैं।

➢प्रयाग तीर्थ निर्माण के सहयोगी महान पुण्य के भागी हैं–

मात्र 1 वर्ष के अन्दर तीर्थ अपने विकसित स्वरूप को प्राप्त कर विश्व के क्षितिज पर ''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली'' के रूप में प्रगट हो गया, यह आश्चर्य की ही नहीं, असंभव सी बात दिखती है, मगर उस असंभव कार्य को पूज्य माताजी के मंगल आशीर्वाद से कर्मयोगी रवीन्द्र जी एवं उनकी कर्मठ टीम ने जिस कुशलता के साथ संभव कर दिखाया, वह देवोपुनीत कार्य के समान ही प्रतीत हो रहा था। मूल से लेकर चूल तक बनने वाले उस तीर्थ में जिन-जिन महानुभावों ने अपनी अर्थांजलि, भावांजलि लगाई, अपना तन-मन-धन का सहयोग दिया अथवा छोटे कार्य से लेकर बड़े-बड़े कार्यों को सम्पादित किया, वे सब महान पुण्य के भागी होने के साथ प्रशंसा के भी पात्र हैं और उन सभी के लिए मेरी मंगलकामना है कि वे सदैव इसी प्रकार तीर्थ सुरक्षा व विकास कार्य में संलग्न रहकर जिनधर्म पताका को ऊँची रखने में सहयोगी बनकर अपनी आत्मा को भी समुन्नत बनावें।

➢सुकुमार बालिकाओं के अथक परिश्रम को भी नहीं भुलाया जा सकता–

प्रयाग तीर्थ के निर्माण में जहाँ अनेकों पुण्यशाली भव्यात्माओं ने अपना प्रशंसनीय सहयोग प्रदान किया, वहीं संघ में रहने वाली छोटी-छोटी ब्रह्मचारिणी बालिकाओं के अथक परिश्रम को भी नहीं भुलाया जा सकता है। जहाँ इस कार्य में पूज्य माताजी की सतत प्रेरणा, संघस्थ क्षु. मोतीसागर जी एवं ब्र.रवीन्द्र जी की कर्मठता ने रंग दिखाया, वहीं इन बहनों ने पूज्य माताजी द्वारा निर्देशित प्रत्येक कार्य में अपना अहर्निश सहयोग प्रदान किया, फिर चाहे वह स्टेज संभालना हो या भाषण करना, चौके में हो या अध्ययन में, विहार में मेरे साथ पैदल चलना हो या छोटी-छोटी व्यवस्था से लेकर कितनी भी बड़ी व्यवस्था क्यों न करनी पड़े, सदैव प्रसन्न मन से पूर्ण कुशलतापूर्वक प्रत्येक कार्य में भाग लेतीं तभी तो माताजी को लम्बे-लम्बे विहार करने में कुछ

सोचना नहीं पड़ता है। इन सबकी कार्यकुशलता देखकर कई बार लोग आकर कहने लगते हैं कि माताजी! आपके संघ की बहनें तो आलराउण्डर हैं अर्थात् सर्वतोमुखी प्रतिभा की धनी हैं। साथ ही कई एक लोग कहते हैं कि माताजी! आपकी संघ की ये आठ बहनें अष्ट दिक्कुमारिकाओं के समान स्वर्ग से आई प्रतीत होती हैं जो अहर्निश आप सबकी सेवा में लगी रहती हैं। तब मेरे मुख से निकल पड़ता है कि यह सब पूज्य माताजी के आशीर्वाद का ही फल है, उनके पास रहने वाला हर व्यक्ति सर्वतोमुखी प्रतिभा का धनी हो जाता है।

मात्र आत्मकल्याण और विद्या अध्ययन के लिए माताजी की छत्रछाया में रहने वाली इन आठों ब्र. बहनों कु. बीना, आस्था, सारिका, चन्द्रिका, इन्दु, अलका, प्रीति व स्वाति के लिए मेरा बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद है कि वे ख्याति, लाभ, पूजादि से दूर रहते हुए सदैव गुरुभक्ति व आत्मकल्याण को ही अपना मुख्य लक्ष्य बनाए रखें और क्रम-क्रम से अपने चारित्र को वृद्धिंगत करते हुए शीघ्र ही आर्यिका दीक्षा धारण कर अपने जीवनरूपी मंदिर पर कलशारोहण करने का सौभाग्य प्राप्त करें।

➢अशोक विहार-दिल्ली में वर्षायोग स्थापना–

3 जुलाई को सत्यवती कालोनी से दिल्ली विहार करके हमने पूज्य माताजी के साथ चातुर्मास स्थल की ओर पदार्पण किया। एक कि.मी. लम्बे जुलूस में अपार जनसमूह की उपस्थिति यह दर्शा रही थी कि किस प्रकार दिल्लीवासी पूज्य माताजी का इंतजार कर रहे थे। पूरे रास्ते में बैनर लगे थे, पंचरंगी द्वार लगे थे तथा मंदिर के आस-पास भी खूब सजावट थी। मंदिर में मंगल प्रवेश की सभा में संघपति श्री आनंद जी -पवन जी (जैन मार्बल होम-मेरठ), ब्र. रवीन्द्र जी तथा संघस्थ बहनों का समाज द्वारा सम्मान किया गया। 9 बजे तक चली सभा के बाद जुलूस के साथ संघ को वसतिका तक लाने के मध्य पचासों घरों के आगे लोगों ने खूब स्वागत करते हुए पाद प्रक्षाल, आरती, पुष्पवृष्टि आदि की। हर घर के आगे फूल व रंगोली के चौक बने थे।

4 जुलाई 2001 को वर्षायोग स्थल का नामकरण ''महावीर निलय'' घोषित किया गया। अपरान्ह 3 बजे महावीर निलय से पूज्य माताजी जुलूस के साथ मंदिर जी में पहुँचीं, जहाँ वर्षायोग स्थापना की सभा हुई। साहू रमेशचंद जी की अध्यक्षता में आयोजित इस सभा में मुख्य अतिथि के रूप में सांसद श्री साहिब सिंह वर्मा एवं विधायक दीपचंद बंधु जी उपस्थित थे। इस अवसर पर साहू जी ने अपने वक्तव्य में कहा कि ''यदि माताजी 6 अप्रैल के

कार्यक्रम में होतीं, तो जो दुर्घटना दि. जैन समाज के साथ हुई है, वह न होती। हम लोगों ने दीक्षास्थली में ही माताजी से महावीर जयंती तक दिल्ली पधारने का निवेदन किया था लेकिन पदविहार करने वाले साधुओं की भी अपनी चर्या है। खैर! अब मुझे विश्वास है कि माताजी के निर्देशन में आगामी कार्यक्रमों से अच्छी धर्मप्रभावना होगी।''

आज के सुअवसर पर दिल्ली की सभी कालोनियों के मुख्य कार्यकर्ता एवं महिला संगठन इकाइयों की प्रतिनिधियों के साथ-साथ अनेकों महानुभाव उपस्थित थे और भीड़भाड़ के मध्य सभी में अच्छा उत्साह था।

➢वीर शासन जयंती पर्व–

तीर्थंकर महावीर को दिव्य केवलज्ञान की उपलब्धि होने पर भी 66 दिनों के बाद गौतम गणधर के आने पर उनकी दिव्यध्वनी खिरी थी अर्थात् उस दिन से ही उनका शासन प्रारंभ हुआ था। श्रावण कृष्णा एकम के उस पावन दिवस को 'वीर शासन जयंती पर्व' के रूप में तब से ही मनाया जाता है।

इसी संदर्भ में 6 जुलाई से 8 जुलाई 2001 तक माताजी के संघ सानिध्य में अशोक विहार में वीरशासन जयंती का त्रिदिवसीय आयोजन रखा गया, जिसमें 6 ता. को भगवान महावीर के समवसरण की रचना कर गौतम गणधर की सामूहिक पूजन सम्पन्न की गई। 7 जुलाई को 'श्रुतस्कंध विधान' किया गया। 8 जुलाई को प्रातः विपुलाचल पर्वत की भव्य झांकी एवं 2600 ग्रंथों का जुलूस निकाला गया। जुलूस के पश्चात् मंदिर जी में जिनवाणी माता का अभिषेक (दर्पण में) हुआ तथा माताजी ने वीरशासन जयंती के महत्व पर प्रकाश डाला।

➢सप्त दिवसीय महावीर देशना शिविर–

राजधानी दिल्ली में मंगल पदार्पण एवं चातुर्मास स्थापना के साथ ही माताजी ने भगवान महावीर से संबंधित अनेक लघु एवं वृहत् कार्ययोजना की रूपरेखा बनाकर उसे क्रियान्वित करना प्रारंभ कर दिया। इसी श्रृंखला में उन्होंने जन-जन को भगवान महावीर के जीवन एवं उनके कल्याणकारी सिद्धान्तों से परिचित करवाने हेतु सप्त दिवसीय महावीर देशना शिविर का आयोजन 9 जुलाई से 15 जुलाई तक किया।

जिसमें माताजी के साथ-साथ स्वयं मैंने, संघस्थ क्षु. मोतीसागर जी ने अनेक विषय पर क्लास लीं, जिसमें सामायिक, द्वादशांग ज्ञान एवं ध्यान साधना के विषय प्रमुख रहे।

➢रमेश जैन (पी.एस.मोटर्स) का अत्यधिक उत्साह–

11 जुलाई 2001 को रमेश जैन (पी.एस.मोटर्स) एवं डी.के. जैन एडवोकेट (महावीर जन्मोत्सव दि. जैन राष्ट्रीय महासमिति के महामंत्री) पधारे। पूज्य माताजी के दर्शन करने के बाद रमेश जी एकदम बोल पड़े कि माताजी! रवीन्द्र जी को इस राष्ट्रीय महावीर समिति में सक्रिय योगदान देना है तथा इस संबंध में आपके द्वारा जो भी कार्य हुए हैं और होने वाले हैं वे सभी इस समिति के ही अंग माने जायेंगे। पूज्य माताजी ने उन्हें दो-तीन बातें बताईं–

1. 21 से 28 अक्टूबर तक आयोजित होने वाले विश्वशांति महावीर विधान की भावी योजना।

2. पूरे देश में बोर्ड एवं होर्डिंग के मैटर भेजना।

3. स्कूल-कालेजों में अपना साहित्य भेजकर संगोष्ठी, नाटक आदि आयोजित कराना।

डी.के. जैन ने भी अपनी कुछ योजनाएं बताईं किन्तु इन लोगों के सामने आर्थिक समस्याएं होने से कुछ क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा था। खैर! यह देखकर प्रसन्नता हुई कि रमेश जी ने अस्वस्थ होकर भी महावीर जन्मोत्सव में काफी सक्रिय भूमिका निभाई, शायद पूज्य माताजी के दिल्ली पहुँच जाने से ही इनमें अतीव उत्साह आ गया था।

➢भगवान पार्श्वनाथ का निर्वाण महोत्सव एवं 1008 पुष्पों से सहस्रनाम विधान–

तेइसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ ने सम्मेदशिखर से श्रावण शुक्ला सप्तमी को निर्वाण पद पाया, जिसे मोक्ष सप्तमी या मुकुट सप्तमी भी कहते हैं। जैन परम्परानुसार अनेक कुमारी कन्याएँ इस मुकुटसप्तमी व्रत को करती हैं। 27 जुलाई को मोक्षसप्तमी के पावन पर्व पर भगवान पार्श्वनाथ की पूजन कर सामूहिक निर्वाणलाडू चढ़ाया गया। पूज्य माताजी के मंगल प्रवचन के पश्चात् मेरे द्वारा लिखित 'मोक्षसप्तमी पर्व का महत्त्व' नामक लघु नाटिका का मंचन भी हुआ। 27 मार्च को 1008 कमल पुष्पों से सहस्रनाम विधान किया गया, जिसे करने का सौभाग्य श्री रमेश जैन (पी.एस. मोटर्स) की धर्मपत्नी को प्राप्त हुआ।

➢शालीमारबाग-दिल्ली में माताजी के संघ सानिध्य में रक्षाबंधन पर्व सोल्लास हुआ–

30 जुलाई को प्रातः 6 बजे अशोक विहार से शालीमार बाग मंदिर के लिए विहार हुआ। यहाँ के लोगों में भी विशेष उत्साह दिखा। वहाँ पहुँचकर

सुन्दर कलात्मक मंदिर दर्शन करके हृदय अत्यन्त गद्गद हो गया। यहाँ के लोगों ने बताया कि सन् 1997 में जिस दिन से पूज्य माताजी ने यहाँ 4 यंत्र स्थापित किए हैं, उस दिन से कार्य तेजी से चलता ही गया। सन् 1993 में यहाँ के लोग इस मंदिर के बारे में माताजी का मार्गदर्शन लेते हेतु टिकैतनगर भी गए थे।

वहाँ पहुंचते ही मंदिर जी में प्रवचन सभा हुई, जिसमें मेरे 13वें दीक्षादिवस पर मुझे पूज्य माताजी का वात्सल्यपूर्ण आशीर्वाद प्राप्त हुआ। समाज के द्वारा मुझे 13 ग्रंथ भेंट किए गए। 4 अगस्त को मध्यान्ह में रक्षाबंधन का सामूहिक आयोजन किया गया, इससे पूर्व प्रतिदिन शिक्षण शिविर चलाया गया। रक्षाबंधन के शुभ दिन दिल्ली की अधिकतर कालोनियों एवं देश के विविध अंचलों से पधारे जैन बंधुओं ने भाग लेकर माताजी की प्रेरणा से धर्मध्वज में रक्षासूत्र बांधा एवं परस्पर भी रक्षासूत्र बांधकर राष्ट्र, धर्म, धर्मायतन, तीर्थों, साधुओं एवं साधर्मी जनों की रक्षा का संकल्प लिया।

इस अवसर पर प्रख्यात सांसद एवं विधिवेत्ता श्री एल.एम. सिंघवी जी ने भी पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया।

इससे पूर्व प्रातःकाल अकम्पनाचार्यादि सात सौ मुनियों एवं मुनि विष्णुकुमार की सामूहिक पूजन हुई एवं भगवान श्रेयांसनाथ का निर्वाणलाडू चढ़ाया गया।

➢पहाड़गंज में वार्षिक रथयात्रा–

दिल्ली की पहाड़गंज कालोनी में प्रतिवर्ष वार्षिक रथयात्रा का आयोजन होता है परन्तु इस वर्ष वे लोग इसे विशेषरूप से मनाना चाहते थे अतः उन्होंने माताजी के श्रीचरणों में श्रीफल चढ़ाकर अपना मंगल सानिध्य प्रदान करने की भावना की, जिसे माताजी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। आश्विन कृ. चतुर्दशी, 16 सितम्बर को मध्यान्ह में पहाड़गंज की मुख्य सड़कों पर भव्य शोभायात्रा निकाली गई और बीच बाजार में मंच बनाकर प्रवचन सभा रखी गई।

उस दिन संघस्थ क्षुल्लक मोतीसागर जी के 62वें जन्मदिवस के अवसर पर प्रातः सामूहिक शान्तिविधान हुआ एवं दिन में हम लोगों ने क्षुल्लक जी के प्रति मंगल कामना व्यक्त की।

➢2600वाँ जन्मकल्याणक राष्ट्रीय समिति का अधिवेशन–

6 अप्रैल को भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के राष्ट्रीय स्तर पर उद्घाटन के साथ-साथ मुख्यरूप से सरकारी राष्ट्रीय समिति, चारों जैन सम्प्रदाय वाली महोत्सव महासमिति, दिगम्बर जैन राष्ट्रीय समिति

एवं अनेक राज्य स्तरीय समितियों ने भगवान महावीर के इस जन्मकल्याणक वर्ष के कार्यक्षेत्र में पदार्पण किया।

इनमें से भगवान महावीर 2600वाँ जन्म महोत्सव दिगम्बर जैन राष्ट्रीय समिति का प्रथम अधिवेशन पूज्य माताजी के मंगल सानिध्य में एवं श्रीमती इन्दू जैन (चेयरमैन-टाइम्स ग्रुप) की अध्यक्षता में 7 अक्टूबर को राजा बाजार, कनॉट प्लेस (दिल्ली) में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। देशभर से पधारे कार्यकर्ताओं ने अपने-अपने क्षेत्रों में किए गए महोत्सव वर्ष संबंधी कार्यक्रमों का विवरण प्रस्तुत करते हुए भविष्य के लिए पूज्य माताजी से दिशा निर्देशों को प्राप्त किया। पूज्य माताजी ने इस अवसर पर कहा कि जैन समाज को मात्र सरकारी अनुदान पर आश्रित न होकर अपने कार्यों के माध्यम से इस वर्ष को सार्थक करना है। भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर एवं स्मारक के रूप में वैशाली को विकसित करने की प्रेरणा के साथ-साथ दिल्ली में एक राष्ट्रीय जैन सूचना केन्द्र, कीर्तिस्तम्भों एवं भगवान महावीर द्वारों तथा जन्मकल्याणक संबंधी होर्डिंग लगाने की प्रेरणा भी पूज्य माताजी ने समाज को प्रदान की।

श्रीमती इन्दू जैन ने युवा पुरुष एवं महिलाओं को आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करते हुए भगवान महावीर केन्द्र द्वारा युवा संगठन के निर्माण का आह्वान किया। लखनऊ (उ.प्र.) से श्री कैलाशचंद जैन सर्राफ, इंदौर (म.प्र.) से डॉ. अनुपम जैन, दिल्ली से साहू श्री रमेशचंद जैन एवं अन्य महानुभावों ने भी सभा को सम्बोधित किया। अधिवेशन में डॉ. हुकुमचंद भारिल्ल-जयपुर, श्री बसंत भाई दोशी-मुम्बई सहित अनेक विद्वान एवं गणमान्य कार्यकर्ता भी पधारे।

➢छब्बिस सौ मंत्रों के साथ छब्बिस सौ रतन चढ़ाए गए 26 मंडलों पर–

चूँकि भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष वर्तमान सहस्राब्दि के लिए एक स्वर्णिम उपहार लाया और इस उपहार को प्रत्येक जनमानस विविध कार्यकलापों के माध्यम से विभक्त करना चाहता था, साथ ही भगवान महावीर के प्रति अपने श्रद्धा, भक्ति और विनय के पुष्प समर्पित कर उन क्षणों को चिरस्थाई करने की भावना थी क्योंकि यह अवसर पुनः जीवन में प्राप्त नहीं होने वाला था। जहाँ स्वयं भारत सरकार उन अहिंसा के अवतार भगवान महावीर के इस 2600वें जन्मोत्सव को राष्ट्रीय स्तर पर **'अहिंसा वर्ष'** के रूप में अनेकों कार्यक्रमों के माध्यम से मनाकर उन महामानव के पावन चरणयुगल में अपनी पुष्पांजलि समर्पित कर रहा था, वहीं सम्पूर्ण

जैन समाज के गौरव साधु-साध्वी, शीर्षस्थ नेता एवं श्रावक भी अनेक धार्मिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक एवं निर्माण कार्यों के द्वारा अपने श्रद्धा पुष्प उन्हें समर्पित कर रहे थे। चूँकि भारतीय संस्कृति युगों-युगों से अपनी श्रद्धा-भक्ति के कारण विश्व के मानसपटल पर अपनी आभा को विस्तारित किए हुए है अतः पाश्चात्य संस्कृति का समावेश होते हुए भी आज तक देव-शास्त्र-गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा दृष्टिगत होती है।

तीर्थंकर महावीर की आराधना के इस क्रम में पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी ने अनेकानेक कार्यकलापों के अन्तर्गत उनके 2600 गुणों का स्मरण करते हुए 2600 मंत्रों से समन्वित **''विश्वशांति महावीर विधान''** की रचना करके जहाँ तीर्थंकर भगवान के प्रति अपने श्रद्धा सुमन समर्पित किए, वहीं उस नूतन रचना से सम्पूर्ण देशवासियों को भगवान महावीर की सर्वोदयी गरिमा का भी परिचय प्राप्त हुआ। दिल्लीवासियों के अतीव आग्रह पर मई-जून की भीषण गर्मी में विहार कर जनसाधारण में भगवान महावीर के जन्मकल्याणक महोत्सव को अनुगुंजित करने हेतु जब माताजी ने विहार कर दिल्ली में पदार्पण किया, तो दिल्लीवासियों में एक बार पुनः आशा जगी। वहाँ पहुँचकर माताजी ने कार्यकर्ताओं की मीटिंग करके **''विश्वशांति महावीर विधान''** के वृहत् आयोजन की रूपरेखा जनता के समक्ष रखी, जन-जन की सराहना को प्राप्तकर यह योजना गतिशील होने लगी। इसी मध्य दिल्ली के प्रमुख लोगों का आग्रह अत्यधिक प्रबल होने लगा कि संघ का प्रवास दिल्ली में ऐसे केन्द्रीय स्थल पर हो, जहाँ रहकर सरलता से इतने बड़े आयोजन की गतिविधियाँ संचालित की जा सकें, फलस्वरूप अशोक विहार में चातुर्मास स्थापित कर पूज्य माताजी ने श्री अग्रवाल दिगम्बर जैन मंदिर, राजाबाजार-कनॉट प्लेस में अपना ससंघ प्रवास रखा।

➢भगवान की भक्ति से विश्वशांति संभव है–

चूँकि इस राष्ट्रीय आयोजन हेतु आयोजन स्थल के चयन की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी, अतएव अनेक स्थानों का निरीक्षण करने के पश्चात् दिल्ली गेट स्थित फिरोजशाह कोटला मैदान का चयन हुआ, जिसमें **''भगवान महावीर मण्डप''** के रूप में भव्य पाण्डाल के अन्दर 26 मण्डलों को बनाकर इस आयोजन का प्रारंभीकरण किया गया। इस मध्य अमेरिका में 11 सितम्बर 2001 को वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हुए आतंकवादी हमले के बाद विश्वयुद्ध जैसा भयावह वातावरण निर्मित हो गया था, ऐसी विषम परिस्थिति में कभी-कभी

विधान का आयोजन स्थगित करने की बात भी आई किन्तु पूज्य माताजी ने दृढ़तापूर्वक सभी को आदेश दिया कि यह भक्ति का आयोजन है, इसे टालो मत और भगवान की कृपा से उन मंत्रों द्वारा सम्पूर्ण विश्व में शांति स्थापित होगी। श्री एस.के. जैन-अतिरिक्त पुलिस आयुक्त, दिल्ली द्वारा दिया गया समस्त सुरक्षा व्यवस्था का आश्वासन भी कार्यक्रम की पूर्णता में सभी के लिए विशेष सम्बल रहा।

➢विश्वशांति महावीर विधान आयोजन का उद्घाटन–

वास्तव में ऐसे आयोजनों के अन्दर करोड़ों की संख्या में होने वाले मंत्र के शांत परमाणु सम्पूर्ण विश्व में फैलकर शांति की स्थापना करते हैं। पूज्य माताजी के अलौकिक कार्यों की गणना हम शब्दों में नहीं कर सकते, उनके द्वारा प्रदत्त अनुपम कृतियाँ विश्व को मिली अमूल्य सौगात के रूप में हैं तभी तो महोत्सव में पधारीं मुख्य अतिथि साहू इन्दू जी ने कहा कि विश्व शांति की शुरूआत के प्रेरणाबिंदु हमें जैनधर्म के द्वारा ही प्राप्त होते रहे हैं और यह कैसे प्राप्त हों, यह माताजी जैसे सन्तों एवं साध्वियों की कृपा द्वारा ही संभव है। श्री धनंजय जी ने तो अत्यन्त प्रसन्न होते हुए कहा कि पूज्य माताजी की प्रेरणा से वर्तमान में जो भी कार्यक्रम हुए, सभी में मुझे भाग लेकर पुण्य प्राप्ति का अवसर मिला। आज दुनिया में तनाव का माहौल है, सब शांति चाहते हैं, पर हमें वास्तविक शांति के लिए स्वयं में शान्ति लानी होगी। जैनधर्म सदैव शांति का संदेश देता रहा है। पूज्य माताजी सदैव समसामयिक कार्य करती हैं, इस विश्वशांति विधान से विश्व में निश्चित ही शांति होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

पूज्य माताजी ने इस उद्घाटन सत्र में सभी को अपना शुभाशीष प्रदान करते हुए उद्घोष किया–दो प्रकार के कार्य होते हैं एक स्थाई और दूसरे अस्थायी। यद्यपि यह मण्डल विधान अस्थायी दिखते हैं, पर यह हमारी आत्मा को स्थायी पद प्राप्त कराने हेतु बहुत बड़ा योगदान देते हैं। जैसे–भोजन, वस्त्र अस्थायी हैं, मकान स्थायी है परन्तु भोजन आदि के बिना हम नहीं रह सकते, उसी प्रकार आत्मा की शुद्धि करने वाले, स्थायी रूप देने वाले, परमात्मपद प्रदान करने वाले ये विधान-पूजन आदि कार्यक्रम हैं, जिन्हें करने की प्रेरणा आचार्यों ने ग्रंथों में भी दी है।

आजकल कुछ लोगों की दृष्टि में स्कूल, हॉस्पिटल आदि स्थाई कार्य हैं परन्तु मेरा कहना यह है कि जिस विश्वशांति की अपेक्षा हमें है, वह स्कूल, कॉलेज व अस्पतालों से नहीं मिल सकती है। वह शांति हमें भगवन्तों की भक्ति

से ही मिलेगी क्योंकि इससे निकलने वाली किरणें ही सम्पूर्ण विश्व में शांति की स्थापना करेंगी। आत्मा की शांति, शुद्धि, सिद्धि के लिए यह स्थायी है, विश्व में शांति, पर्यावरण शुद्धि, विश्व मैत्री हेतु इसका अमूल्य योगदान है। भगवान महावीर के 2600वें जन्मोत्सव के उद्घाटन पर हुए कार्यक्रम के पश्चात् यह पहला राष्ट्रीय आयोजन जैन समाज द्वारा हो रहा है, जिसमें विभिन्न प्रान्तों से पधारकर लोग अनुष्ठान कर रहे हैं। इस विश्वशांति विधान के साथ यहाँ मध्यान्ह में प्रतिदिन 2 घण्टे तक बराबर विश्वशांति मंत्र का घोष चलेगा। सारे भारत में विश्वशांति हेतु यह मंत्र पहुँचाया जाएगा। इसकी कोई सवा लाख, कोई 25 लाख तो कोई 25 करोड़ जाप्य कर रहे हैं। हमारे और आपके मुख से निकलने वाली पंक्तियाँ भगवान महावीर के पास सिद्धशिला तक पहुँचकर वापस आकर आपके मनोरथों को पूर्ण कर देंगी।

➢राजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला बनने का गौरव किसने प्राप्त किया–

विश्वशांति महावीर विधान के 26 मण्डलों में से प्रथम मण्डल में राजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला के रूप में श्रेष्ठी श्री कमलचंद जैन, खारीबावली-दिल्ली एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मैना सुन्दरी जैन ने पूजन करने का सौभाग्य प्राप्त किया।

➢प्रत्येक मण्डल पर चढ़े 2600 रत्नों को देखने हेतु भीड़ उमड़ पड़ी–

इस विश्वशांति महावीर विधान का मुख्य आकर्षण थे प्रत्येक मण्डल पर चढ़ने वाले 2600-2600 रत्न, यूँ तो प्रत्येक विधानों का अपना महत्व होता है पर यह विधान रत्नों द्वारा पूजा के कारण समस्त मण्डल विधानों का शिरमौर बन गया। शास्त्र पुराणों में वर्णन मिलता है कि पहले लोग स्वर्ण दीनार चढ़ाकर, गजमोती चढ़ाकर भगवान की अर्चा करते थे, पर इस कलियुग में रत्नों द्वारा भगवान की पूजा करने का यह पहला पाठ था, जिसे देखने के लिए भारत के कोने-कोने से लोग आ रहे थे और पूज्य माताजी की प्रशंसा करते नहीं थकते थे।

➢मंत्रित रत्नों को लेने की होड़ लग गई–

भक्तों ने जहाँ मण्डल पर रत्न चढ़ाकर अपनी भक्ति प्रदर्शित की, वहीं इस विश्वशांति विधान में होने वाली 9 पूजाओं में 9 जाप्य हुईं, जिनके 108 मंत्रों से उन रत्नों को मंत्रित कर कोई एक धनकुबेर महानुभाव उसे श्रद्धालुओं में वितरित करते थे।

प्रत्येक मण्डल से 108-108 रत्नों को एक कलश में एकत्रित कर प्रतिदिन जब उन लगभग 3 हजार रत्नों को वितरित किया जाता, तो उन अमूल्य रत्नों

को लेने की एक होड़ सी लग जाती। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं रत्न लेने के साथ-साथ अपने इष्ट मित्रों को रत्न लेने हेतु बुलाकर लाता था।

➢दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की कर्मठता को भुलाया नहीं जा सकता–

यह सम्पूर्ण आयोजन दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के कर्मठ कार्यकर्ताओं द्वारा आयोजित किया गया था, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण यही था कि आगत किसी भी दर्शनार्थी बंधु या पूजक को किसी भी परेशानी का सामना नहीं करना पड़ा अपितु सभी प्रशंसा करते ही देखे गए। इससे पूर्व भी पूज्य माताजी की सद्प्रेरणा से आयोजित प्रत्येक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम में उनकी कर्मठता देखी जा चुकी है। अगर इस संस्था को वर्तमान की सभी संस्थाओं में सर्वतोमुखी, जागरूक व कर्मठ संस्था कहा जाए तो शायद कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

➢पं. शिवचरणलाल जैन-मैनपुरी का ''गणिनी ज्ञानमती पुरस्कार'' से सम्मान–

25 अक्टूबर 2001 को सायंकालीन सभा में जैन साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करने हेतु सुप्रसिद्ध जैन विद्वान् पं. श्री शिवचरणलाल जैन-मैनपुरी को श्री अनिल कुमार अतिशय कुमार जैन (कमल मंदिर), प्रीतविहार के सौजन्य से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर के पदाधिकारियों द्वारा शाल, पुष्पहार आदि के साथ एक लाख रुपये की नगद राशि एवं प्रशस्ति पत्र के साथ ''गणिनी ज्ञानमती पुरस्कार'' प्रदान किया गया। इस अवसर पर पुरस्कार प्रदाता श्री अनिल जैन ने माताजी के अनंत उपकारों का स्मरण करते हुए कहा कि यह पुरस्कार आर्थिक दृष्टि से मैं महान नहीं मानता वरन् इसकी विशेषता तो गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के नाम से है, जो इस युग के लिए मोबाइल एन्साइक्लोपीडिया हैं। संस्थान के अध्यक्ष ब्र.रवीन्द्र जी ने पंडित जी की विद्वत्ता बताते हुए उनके चिरंजीवी भविष्य की मंगल कामना की तथा समस्त विद्वानों के प्रति आभार व्यक्त किया।

पूज्य माताजी ने 26 अक्टूबर को प्रातःकालीन सभा में पुरस्कृत विद्वान श्री शिवचरणलाल जी के लिए शुभाशीर्वचन बोलते हुए उन्हें प्राचीन आगम एवं आर्षपरम्परा के प्रति दृढ़ रहने की प्रेरणा प्रदान की। पण्डित श्री शिवचरणलाल जैन-मैनपुरी ने अपने वक्तव्य में सन् 1978 के प्रशिक्षण शिविर को अपने ज्ञान की नींव बताते हुए कहा कि हस्तिनापुर में आयोजित उस शिविर के अन्दर जैन समाज के मूर्धन्य विद्वान पं. मक्खनलाल जी शास्त्री-मुरैना, पं. मोतीचंद कोठारी-फलटण, पं. लालबहादुर शास्त्री-दिल्ली, पं. बाबूलाल जमादार सहित

80 विद्वानों ने माताजी के मुखारविन्द से "प्रवचन निर्देशिका" का प्रशिक्षण प्राप्त करके धन्यता का अनुभव किया था। मैं भी उसी शिविर का विद्यार्थी था और आज उसी प्रवचन निर्देशिका ग्रंथ को अपने सामने रखकर मैं प्रवचन करता हूँ। पण्डित जी ने संस्थान एवं अनिल जी के प्रति आभार व्यक्त करते हुए श्रेष्ठियों के साथ विद्वानों का सामंजस्य बनाने का आश्वासन दिया।

➢राष्ट्रीय श्रावक सम्मेलन–

27 अक्टूबर प्रातः 9 बजे विधान प्रमुख राजा सिद्धार्थ श्री कमलचंद जैन, खारीबावली-दिल्ली की अध्यक्षता में आयोजित श्रावक सम्मेलन के मुख्य अतिथि श्री शांति देसाई-महापौर (दिल्ली) विशिष्ट अतिथि-साहू रमेशचंद जैन एवं श्री जे. के. जैन आदि रहे। संघस्थ क्षु. मोतीसागर जी ने सभा का मंगलाचरण किया पुनः मैंने इस सम्मेलन की आवश्यकता, उपयोगिता, महत्त्व एवं प्रासंगिकता पर प्रकाश डालते हुए उपस्थित जनसमूह को यही प्रेरणा दी कि जिस परिवार में कोई मुखिया नहीं होता है, वह परिवार नष्ट हो जाता है और जिस देश तथा समाज में कोई नायक न हो, वह देश तथा समाज नष्ट हो जाता है, अतएव हमें नायक की जरूरत है। आज के इस मंच से महिला संगठन, विद्वत् महासंघ, शास्त्री परिषद, युवा परिषद, महासमिति, महासभा, परिषद आदि से यही कहना है कि श्रावक के साथ साधुओं को भी रखें, तभी प्रगति होगी। हमें मुख्य रूप से भगवान महावीर के सिद्धान्तों में अहिंसा का प्रचार, भ्रूण हत्या का निषेध, मांस निर्यात का विरोध, दहेज प्रथा का विरोध कर सदाचार का सम्मान करना है, ऐसा करने पर वे प्रतिभाएँ आगे आएंगी, जिनसे हमें धर्म की परम्परा साढ़े 18 हजार वर्ष तक अक्षुण्ण रखनी है। ब्र. रवीन्द्र जी ने इस मंच से कहा कि मांगीतुंगी की अखण्ड शिला पर 108 फुट ऊँची प्रतिमा का निर्माण हो रहा है। इस संस्था को जो भी काम सौंपा जाएगा, सदैव करती रहेगी। आज के अवसर पर माननीय महापौर जी, सतीश जी-निगम पार्षद, साहू रमेश जी आदि ने भी सभा को सम्बोधित किया।

इस अवसर पर दिल्ली महिला आयोग की चेयरमैन श्रीमती अंजली राय ने भी पधारकर माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया। इस राष्ट्रीय सम्मेलन में सर्वसम्मति से पारित कतिपय प्रस्तावों के साथ 2002 तक चलने वाले जन्मकल्याणक संबंधी अनेकों कार्यक्रमों के देशभर में व्यापक स्तर पर प्रचार-प्रसार हेतु "भगवान महावीर 2600वाँ जन्मोत्सव प्रचार समिति" बनाने की घोषणा हुई।

➢28 अक्टूबर समापन समारोह-एक झलक–

28 अक्टूबर को प्रातः 9.30 बजे **"विश्वशांति महावीर विधान"** के समापन समारोह की सभा हुई, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में प्रसिद्ध सांसद, विधिवेत्ता एवं न्यायविद् श्री एल.एम. सिंघवी एवं विशिष्ट अतिथि श्री सलेकचंद कागजी, प्रो. श्री रतनचंद जैन एवं श्री एल.एल. आच्छा जी ने पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया।

सभा का संचालन करते हुए संघस्थ पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर जी ने कहा कि महानुभावों! ज्ञानमती माताजी इसलिए महान नहीं हैं कि वे बड़े-बड़े कार्य करवाती हैं प्रत्युत् इनके जीवन से हमें सबसे बड़ी बात यह सीखनी है कि हमें अपने सिद्धान्त, अपने जीवन में चारित्रिक दृढ़ता आदि को ख्याति, लाभ, पूजा के प्रभाव में बहकर छोड़ना नहीं है। आज महावीर के शासनकाल की गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी का जीवन प्रत्येक व्यक्ति के लिए और खासतौर से साधु परम्परा के लिए एक आदर्श है। वर्तमान में जो समाज में यह बात कहते हैं कि आप स्थाई आयोजन रखिए, आप निर्माण करिए, वह आपको जीवन निर्माण की दिशा से दूर ले जा रहे हैं। आज पूजा-भक्ति ही माध्यम है पंचमकाल में कर्म निर्जरा करने के लिए, इसके अलावा मोक्षप्राप्ति का कोई उपाय नहीं है।

और शायद यही कारण रहा कि इन सभी बातों पर दृष्टिपात करते हुए स्वयं माननीय सिंघवी जी ने कहा कि यह एक कार्य का समापन है किन्तु एक अभियान का शुभारंभ है। इस अभियान में एक मर्यादा, एक भक्ति का स्वर, एक दृष्टि और एक सृष्टि हुई है और उसके लिए हम माताजी को हजार-हजार, लाख-लाख धन्यवाद दें, तो भी थोड़ा होगा। गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी का उपकार हम सब पर है, उन्होंने वैसे तो जीवन भर अपनी तपस्या, साधना, शिक्षा एवं सारस्वत उपक्रमों से हमें अनुगृहीत किया है किन्तु उस लम्बी श्रृंखला में आज एक बड़ा अवदान जुड़ गया है, वह है **'विश्वशांति महावीर विधान'** जो 26 मण्डल विधानों के राष्ट्रीय आयोजन के रूप में है यानि हर मण्डल सौ वर्ष का प्रतीक है, इस प्रकार 2600 वर्ष का यह भगवान महावीर का विधान एक उत्कृष्ट, उत्कर्ष का क्षण हम सबके लिए लाया है।

भगवान महावीर के इस 2600वें जन्मकल्याणक के मंच पर एक छवि कुण्डलपुर के राजकुमार भगवान महावीर की है तथा दूसरी छवि है तीर्थंकर भगवान महावीर की। आज हम इन छवियों में अहिंसा, अनेकांत की जीवनयात्रा

एवं अपरिग्रह के सिद्धान्त की उज्ज्वल छवि देखते हैं। हमको यह क्षण 2600 वर्ष बाद मिला, यह हमारे ऊपर पूज्य माताजी का ऋण है। यह एक तरह की गंगोत्री और यमुनोत्री हैं, जिनने मंत्रों के माध्यम से इस उपदेश को हम तक पहुँचाया है। ज्ञानमती माताजी ने चरैवेति-चरैवेति के मंत्र को चरितार्थ किया है इसलिए यह अभियान शुरू हुआ है। जैन महासभा दिल्ली के महासचिव प्रो. रतन जैन ने कहा कि "आज यदि साध्वी श्रेष्ठ, दीर्घतपस्विनी, ज्ञानमती माताजी का मूल्यांकन करना है, तो उस घटना के संदर्भ में करें कि आज हिन्दुस्तान का कोई विद्वान यह कहने का दुस्साहस नहीं कर सकता कि जैनधर्म की स्थापना भगवान महावीर ने की थी। आज अगर इतिहास में बीसवीं-इक्कीसवीं शताब्दी के अन्दर जैन संस्कृति में किसी एक व्यक्ति का इतना बड़ा उद्घोष है, योगदान है कि उन्होंने जैनधर्म को ऋषभदेव से जोड़ा है, तो वह कार्य केवल ज्ञानमती माताजी ने किया है। कार्यक्रमों की इस धूम में, 100 करोड़ रुपये की इस आंधी में, प्रधानमंत्री के बराबर अपनी कुर्सी ढूंढ़ने की लालसा में, आज जैन समाज को कोई चिंतनपूर्ण कार्यक्रम दे पा रहा है, तो वह ज्ञानमती माताजी हैं और यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि अगर सांस्कृतिक मंत्री जी को माताजी की शरण मिल जाए तो भगवान महावीर का जन्मकल्याणक, जो अपनी आभा नहीं बना पा रहा है, वह सारे विश्व में अपनी आभा बना लेगा। हमने भगवान महावीर को नहीं देखा, पर उनके शासन में ज्ञानमती माताजी को देख रहे हैं। यह हमसे भूल हो गई, भगवान महावीर के 2500वें निर्वाणोत्सव से सबक लेकर भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक का भार हमें ज्ञानमती माताजी को सौंपना चाहिए था, खैर! **जब जागो तभी सबेरा।** आज समाज की दशा और दिशा से हम भलीभांति परिचित हैं **'संघे शक्तिः कलियुगे'** जो समाज आज एक होकर चलेंगे, वही अपनी विजयपताका फहराएंगे और इस आंदोलन में कोई अपनी आहुति दे रहा है, तो वह ज्ञानमती माताजी जैसी तपस्वी संत हैं, मैं इस अभियान को अपनी श्रद्धा का अर्घ्य चढ़ाने आया हूँ।"

➢गणिनी माताजी को दी गईं विभिन्न उपाधियाँ–

गुरुभक्त्या भवेदत्र, महारण्ये महत्पुरम्।
तत्राभीष्टं फलं चैव, कल्पवल्ल्येव विन्दते।।

अर्थात् गुरुभक्ति से महावन में भी बड़ा भारी नगर हो सकता है और उसमें कल्पलता के समान अभीष्ट फल प्राप्त हो सकते हैं।

शायद यही कारण है कि श्रावक अनेक प्रकार से गुरु की सेवा करके अपना अहोभाग्य मानता है, फिर सन्त-साधु तो त्याग और वैराग्य की मूर्ति होते हैं, उनके लिए तो निन्दक या प्रशंसक दोनों समान हैं, कोई उनकी निन्दा करे या प्रशंसा, वे प्रत्येक के प्रति समता भाव रखते हैं। गुरुभक्ति कर पुण्यबंध का ऐसा ही उदाहरण प्रस्तुत करते हुए इस महायज्ञ के समापन अवसर पर अनेक प्रान्तों से पधारे प्रतिनिधियों ने पूज्य माताजी को उपाधियों से विभूषित कर अपना गौरव माना। यूँ तो माताजी सदैव कहती हैं कि मेरे गुरु द्वारा दी गई आर्यिका दीक्षा की उपाधि ही मेरे लिए सबसे महान है परन्तु पूज्य माताजी को समय-समय पर आचार्यों, समाजों एवं विश्वविद्यालय द्वारा अनेक उपाधियाँ प्राप्त हुईं हैं, उसी श्रृंखला में महाराष्ट्र प्रांत के प्रतिनिधियों ने उन्हें **"राष्ट्रगौरव"**, अवधप्रान्त ने **"धर्ममूर्ति"** एवं दिल्ली के प्रतिनिधिमण्डल ने **"विश्वविभूति"** की उपाधि से विभूषित कर अपने प्रांत का गौरव वृद्धिंगत किया।

➢अनेक लोगों ने कहा-माताजी! इसे तो 25 अप्रैल तक मनाना चाहिए–

जिन-जिन ने इस राष्ट्रीय आयोजन को किया, देखा या सुना, सभी ने मुक्तकण्ठ से इस समसामयिक एवं महत्वपूर्ण आयोजन की प्रशंसा की। अनेक लोगों ने तो भावविभोर होकर कहा कि यह कार्यक्रम समाप्त हो जायेगा, यह सोचकर ही अजीब सा लगता है। कुछ ने कहा-माताजी! इसे तो लगातार 25 अप्रैल तक यूँ ही चलाते रहना चाहिए और यद्यपि ऐसा कुछ संभव नहीं था, फिर भी समारोह की भव्यता, आनन्दानुभूति के कारण लोग अनायास ही यह कह उठते थे।

➢सभी को मिला पूज्य माताजी का आशीर्वाद–

इस राष्ट्रीय आयोजन में तन-मन-धन का योगदान प्रदान करने वाले महानुभावों को तो पूज्य माताजी का आशीर्वाद मिला ही, देश के राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री व शासकगण के लिए भी पूज्य माताजी ने इस मंच से अपना भरपूर मंगल आशीर्वाद प्रेषित किया।

➢साधु-साध्वी सदा धर्मप्रभावना की प्रेरणा ही प्रदान करते हैं–

आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने पंचमकाल के साधु-साध्वियों के लिए निम्न प्रकार का उपदेश करने की प्रेरणा दी है–

दंसणणाणुवदेसो, सिस्सग्गहणं च पोसणं तेसिं।
चरिया हि सरागाणं, जिणिंद पूजोवदेसो य।।247।।

अर्थात् आजकल के साधु-साध्वी दर्शन, ज्ञान, चारित्र का उपदेश दें,

शिष्यों का संग्रह-निग्रह तथा आगम के अनुकूल पोषण भी करें एवं जिनेन्द्र भगवान की महापूजा (पंचकल्याणक पूजा विधान) आदि धर्मप्रभावना का उपदेश देवें। प्रवचनसार में कथित इस गाथा का अभिप्राय यह है कि वीतरागता की प्रतिमूर्ति जैन साधु-साध्वी धर्म की प्रभावना के कार्यों में सदैव अग्रसर रहें। पूज्य माताजी कई बार कहा करती हैं कि अपने ध्यान-अध्ययन में से समय निकालकर जैसे पूर्वाचार्यों ने धर्मप्रभावना के अनेकानेक कार्य किए हैं, उसी प्रकार से आज के साधु-साध्वियों को भी जैनधर्म की प्रभावना के कार्यों में ही अपनी अनुमति देनी चाहिए क्योंकि शेष अस्पताल, विद्यालय, गोशाला आदि लौकिक कार्य सरकार, समाज एवं गृहस्थ के योग्य होते हैं।

➢श्री ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ में वेदी शुद्धिपूर्वक भगवन्तों की स्थापना–

भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष 2000 के अन्तर्गत पूज्य माताजी की प्रेरणा से अनेक स्थानों पर निर्मित हो रहे ''ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ'' में से कनॉट प्लेस-दिल्ली में नवनिर्मित प्रथम कीर्तिस्तंभ मेंवेदीशुद्धिपूर्वक 4 भगवन्तों की स्थापना की गई। यह कीर्तिस्तंभ दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर के अध्यक्ष कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र जी के सक्रिय सहयोग से स्व. श्री महावीर प्रसाद जैन, ठेकेदार परिवार की ओर से निर्मित हुआ। इसमें 1 नवम्बर को जिनप्रतिमा स्थापना की पावन बेला में साहू श्री रमेशचंद जैन एवं श्री चक्रेश जैन (प्राचीन अग्रवाल दि. जैन पंचायत के प्रमुख) सहित सैकड़ों की संख्या में लोगों ने पधारकर धार्मिक क्रियाकलापों में भाग लिया। इस अवसर पर श्री चक्रेश जी ने कहा कि जैसे जैनधर्म की कीर्ति को फैलाने में ये कीर्तिस्तंभ साधन हैं, उसी प्रकार आत्मा की प्रभावना में रत्नत्रय साधना का महत्व है। पूज्य माताजी ने इस निर्माण की प्रेरणा देकर दिल्ली में जैनधर्म की प्राचीनता का कीर्तिमान स्थापित कर दिया है।

➢महिलाओं के लिए माताजी का विशेष उद्बोधन–

1 नवम्बर 2001 को शरदपूर्णिमा के दिन अपने जन्मदिन की सभा में पूज्य माताजी ने महिलाओं के लिए विशेष सम्बोधन प्रदान करते हुए कहा कि जिस काया से मुझे भौतिक शरीर की प्राप्ति हुई, वह मात्र मेरी जन्मदात्री ही नहीं अपितु वह सुखद क्षण मुझे याद आ रहे हैं, जब सन् 1952 में आज के दिन बाराबंकी में आचार्य श्री देशभूषण जी के लिए कांपते हाथों से अश्रुपूरित नेत्रों से पेन्सिल द्वारा कोरे कागज पर लिखकर इन्होंने दिया था कि मेरी पुत्री सर्वथा योग्य है, वह जो व्रत नियम चाहती है, आप उसे प्रदान करें। अनन्तर वह क्षण भी

याद आए, जब सन् 1971 में उन्होंने आर्यिका दीक्षा धारण की। आज आप भी ऐसी माता बनने का संकल्प करें। जो महिलाएं गर्भ में आई बालिका की हत्याकर देती हैं, वह संकल्पपूर्वक हत्या का भाव भी लाने का पूर्णतः त्याग करें।

➢धार्मिक विविधता संरक्षण पर आयोजित विश्वसंसद में गूंजी भगवान महावीर की वाणी–

राजधानी दिल्ली के होटल-हिल्टन इंटरकांटिनेंटल में 15 से 17 नवम्बर 2001 तक ''धार्मिक विविधता संरक्षण पर आयोजित विश्व संसद ''(World Congress for Presentation for Religious Diversity) में पूज्य माताजी के मंगल संदेश के रूप में भगवान महावीर के सर्वोपयोगी सम-सामयिक सिद्धान्तों की अनुगूंज मुखरित हो उठी, जब 17 नवम्बर को माताजी के शिष्य मण्डल कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, ब्र. सारिका व स्वाति जैन ने इस आयोजन में दिगम्बर जैन समाज का प्रतिनिधित्व किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के निर्देशन में All India Movement For SEVA द्वारा यह विश्व संसद आयोजित की गई। पूर्व राष्ट्रपति श्री आर. वेंकटरामन, प्रख्यात विधिवेत्ता डॉ. एल.एम. सिंघवी, विहिप अध्यक्ष श्री अशोक सिंघल एवं अनेक विदेशी धार्मिक प्रतिनिधियों ने प्रधानमंत्री द्वारा उद्घाटित इस कार्यक्रम में भाग लिया।

➢दिल्ली में स्थाई निर्मित पावापुरी रचना के समक्ष 2600 निर्वाणलाडू चढ़ाए गए–

जब सारा देश भगवान महावीर का जन्मकल्याणक महोत्सव अपने-अपने स्तर पर मना रहा था, उस समय पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से उनके संघ सानिध्य में राजधानी दिल्ली के कनॉट प्लेस-राजा बाजार स्थित श्री अग्रवाल दिगम्बर जैन मंदिर के प्रांगण में पावापुरी सरोवर की स्थाई रचना बनाकर ''दीपावली'' के शुभ दिन कार्तिक कृष्णा अमावस्या, 15 नवम्बर को प्रातः 2600 निर्वाणलाडू चढ़ाने का भव्य आयोजन किया गया।

''विश्वशांति महावीर विधान'' के राष्ट्रीय आयोजन के प्रमुख इन्द्र श्री कमलचंद जैन-खारीबावली, दिल्ली का रजत प्रशस्ति पत्र से सम्मान करते हुए ''दानवीर समाजरत्न'' तथा संघपति लाला महावीर प्रसाद जी, श्री प्रेमचंद जैन-खारीबावली, दिल्ली व राजकुमार जैन-वीरा बिल्डर्स को भी ''दानवीर समाजरत्न'' की उपाधि प्रदान की गई। श्री आनन्द जैन-जैन मार्बल होम, मेरठ, श्री श्रीपाल जैन 'मोटर वाले-राजपुर रोड, को 'समाजरत्न' की उपाधि देते हुए सभी सौधर्म इन्द्र एवं विशेष दानदातारों तथा कार्यकर्ताओं का भी प्रशस्तिपत्र

द्वारा सम्मान किया गया।

➢पाठ परिवर्तन की घोषणा से हर्ष की लहर –

सन् 1993 से जैनधर्म की प्राचीन शाश्वत सत्ता के साथ इस युग के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव को मानवीय सभ्यता के आद्यप्रणेता के रूप में पुनर्प्रतिष्ठापित करने के संकल्प को पूर्ण करने में कटिबद्ध पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के अनवरत प्रयासों की सार्थकता भारत सरकार द्वारा एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित इतिहास की पाठ्य पुस्तकों में जैनधर्म संबंधी भ्रांतियों के निराकरण की सरकारी घोषणा के रूप में दृष्टिगत हुई। इस घोषणा से समस्त समाज में खुशी की लहर दौड़ गई।

➢इण्डिया गेट पर सर्वधर्म सम्मेलन –

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव दिल्ली प्रदेश समिति के तत्त्वावधान में भगवान महावीर के निर्वाणोत्सव के उपलक्ष्य में तथा अहिंसा के समर्थन में एक विशाल मौन पदयात्रा विजय चौक से इण्डिया गेट तक 18 नवम्बर को आयोजित की गई, जिसमें हजारों स्कूली बच्चों एवं सामाजिक गणमान्य लोगों ने अपने हाथों में लिए बैनरों से अहिंसा एवं भाईचारे का संदेश दिया। पदयात्रा के पश्चात् इण्डिया गेट पर आयोजित सर्वधर्मसभा में दिगम्बर जैन समाज की ओर से पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं आदेशानुसार मैंने अपना सानिध्य प्रदान किया। साथ ही श्वेताम्बर स्थानकवासी आदि सम्प्रदाय की ओर से प्रो. मुनि महेन्द्र कुमार जी, मुनि श्री रवीन्द्र कुमार जी एवं श्रमणी प्रतिभाप्रज्ञ ने जैनधर्म का, श्री ए.के. मर्चेन्ट ने बहाई धर्म का, महंत सेवादास ने सिख धर्म का, स्वामी अग्निवेश ने हिन्दू धर्म एवं दरगाह हजरत निजामुद्दीन के दीवान सैय्यद अली मूसानिजामी ने मुस्लिम धर्म का उद्बोधन प्रदान करते हुए विश्वशांति एवं सद्भावना का संदेश दिया।

उस समय मैंने अपने उद्बोधन में कहा कि विश्वभर में शांति, अहिंसा और अध्यात्म का निर्यात करने वाला भारत देश है और भारत का दिल है-दिल्ली तथा दिल्ली के दिल इण्डिया गेट पर भगवान महावीर के अहिंसा, मैत्री, अनेकांत इत्यादि सिद्धान्तों का उद्घोष सम्पूर्ण विश्व की आवाज बनेगा और इसी से धीरे-धीरे आतंकवाद, हिंसा, वैमनस्य, आपसी द्वेष इत्यादि भावनाएं समाप्त होंगी। आतंकवादियों को भी ऐसे संदेशों से सद्बुद्धि मिलेगी, अतः इस प्रकार के शांति समारोह भी आज की आवश्यकता हैं।

पुनः मैंने संस्कृत, हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में "विश्वशांति प्रार्थना" का

पाठ भी कराया।

➢जप-तप के रूप में साकार हुआ भगवान महावीर का दीक्षाकल्याणक महोत्सव –

10 दिसम्बर 2001 को राजधानी दिल्ली के तालकटोरा इंडोर स्टेडियम में जैन समाज के सभी सम्प्रदायों के 200 से भी अधिक साधु-साध्वियों के सानिध्य में 'जप-तप महाकुंभ' के रूप में भगवान महावीर का दीक्षाकल्याणक महोत्सव विलक्षण रूप में सम्पन्न हुआ।

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव समिति, दिल्ली द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम में जैनाचार्य डॉ. शिवमुनि जी महाराज एवं सभी सम्प्रदायों के विविध साधु-साध्वियों के मध्य पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी (ससंघ) ने अपना सानिध्य प्रदान किया एवं उपस्थित श्रद्धालुओं को सम्बोधित किया। पूज्य माताजी ने इस अवसर पर कहा कि यदि समस्त साधुवर्ग एकजुट होकर पूरे समाज का नेतृत्व करें, तो भगवान महावीर का यह 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव नई ऊँचाईयों को छू सकता है। भारत सरकार को इस महोत्सव के लिए माताजी ने मंगल आशीर्वाद प्रदान करते हुए अहिंसा एवं अनेकांत के सर्वोदयी सिद्धान्तों को विश्वव्यापी स्तर पर प्रचार करने की प्रेरणा दी।

सांसद श्री दिलीप गांधी, डॉ. कर्ण सिंह-सांसद एवं संस्कृति मंत्री श्री जगमोहन जी के निजी सचिव श्री अशोक भट्ट (आई.ए.एस.), दिल्ली भाजपा अध्यक्ष श्री मांगेराम गर्ग एवं प्रख्यात विधिवेत्ता डॉ. एल.एम. सिंघवी मुख्य अतिथि के रूप में इस कार्यक्रम में उपस्थित थे।

पुनः मैंने पूज्य माताजी की आज्ञानुसार लघु सामायिक एवं ध्यान का अभ्यास कराया। णमोकार मंत्र, मेरी भावना, महावीराष्टक, महावीर चालीसा, शांति पाठ, भक्तामर इत्यादि के सामूहिक पाठ से सारा स्टेडियम गूंज उठा। इस महोत्सव का झण्डारोहण संघपति लाला महावीर प्रसाद जैन (बंगाली स्वीट सेंटर, दिल्ली) द्वारा किया गया। स्वागताध्यक्ष श्री मोहनलाल सेठिया ने आगन्तुक अतिथियों का स्वागत किया। सभा का कुशल संचालन महोत्सव समिति के महासचिव प्रो. रतन जैन ने किया। अन्य प्रमुख व्यक्तित्व थे-कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन, श्री रिसबचंद जैन (अध्यक्ष महोत्सव समिति), श्री मांगीलाल सेठिया, श्री सुखराज सेठिया, श्री वी.सी. जैन भाभू, श्री के. एल. पटावरी, श्री दीपचंद जैन, श्री आर.डी. जैन, श्री नेमिचंद जैन इत्यादि। अंत में आचार्य

डॉ. शिवमुनि जी महाराज ने सभी को संकल्प ग्रहण कराते हुए अणुव्रती जीवन जीने के लिए प्रेरित किया। क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज ने समस्त साधुवर्ग को पूज्य माताजी द्वारा रचित सिद्धान्तचिंतामणि टीका सहित षट्खण्डागम ग्रंथ एवं अन्य साहित्य प्रदान किया।

➢अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद का रजत जयंती समारोह–

ग्रंथ पुराणों में वर्णन आता है कि भगवान ऋषभदेव के पुत्र चक्रवर्ती सम्राट् भरत ने पंचमकाल में होने वाले धर्म के उत्थान-ह्रास आदि को सूचित करने वाले 16 स्वप्न देखे थे, जिसमें एक स्वप्न था कि महारथ में गोवत्स जुते हुए हैं और उसका फल यह था कि धर्म की गाड़ी को युवा कंधे ही खींचेंगे और उन्हीं स्वप्नों का साकार स्वरूप आज देखने में आता है कि जिनधर्मरूपी गाड़ी में युवा वर्ग ही आचार्य, उपाध्याय, साधु, गणिनी, आर्यिका, क्षुल्लक, क्षुल्लिका, ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणी आदि रूपों में संवाहक बन रहे हैं तथा धर्म की गाड़ी को खींचकर धर्मरूपी खेती को वृद्धिंगत कर रहे हैं।

पूज्य माताजी के क्षुल्लिका दीक्षा गुरु आचार्य श्री देशभूषण महाराज की प्रेरणा से युवाओं की एक संस्था 'अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद' की स्थापना 1 जनवरी 1974 को हुई थी, जो वर्तमान में पूज्य माताजी की प्रेरणा प्राप्त कर धर्म की चहुँमुखी प्रगति कर रही है। भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत उस संस्था के 25 वर्ष पूर्ण होने पर पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं संघ सानिध्य में युवा परिषद का रजत जयंती समारोह एवं दिगम्बर जैन युवाओं का राष्ट्रीय सम्मेलन 6 जनवरी 2002 को प्रातः 10 बजे फिक्की ऑडिटोरियम में आयोजित किया गया, इस अवसर पर प्रख्यात विधिवेत्ता डॉ. एल.एम. सिंघवी आदि अनेक गणमान्य महानुभाव उपस्थित थे। समारोह की अध्यक्षता युवा परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी ने की। युवा परिषद की दिल्ली प्रदेश समिति की ओर से आयोजित इस समारोह में दिल्ली की विभिन्न कालोनियों के 26 युवाओं को (26 प्रकार के नियमों का पालन कर जैनत्व की शान कायम रखने वाले एवं जिनधर्म पताका को फहराने वाले) 'युवारत्न' की उपाधि से अलंकृत करते हुए सम्मानित किया गया, जिसमें प्रथम सम्मान प्राप्त किया ग्रीन पार्क निवासी श्री अरिहंत कुमार जैन ने। साथ ही सभी को माताजी एवं संघस्थ साधुओं का आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ। ''पूज्य माताजी ने इस समारोह जैसे विशाल कार्यक्रम को सम्पन्न करवाकर अंततः मन में कब से

चली आ रही भावना को मूर्तरूप देने का निर्णय किया और वह भावना थी– भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) का विकास। जिनेन्द्र भगवान के शासन में हम सबको जिनधर्म का महान पवित्र पथ प्राप्त हुआ है, उनकी जन्मभूमि का कण-कण हमारे लिए परम पवित्र एवं मूल्यवान है। पूज्य माताजी की अतीव इच्छा थी कि भगवान के 2600वें जन्मजयंती वर्ष की सार्थकता तभी है, जब भगवान महावीर की जन्मभूमि विश्वभर में महिमामण्डित हो जाए व समस्त समाज जागृत होकर महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की महानता एवं उपयोगिता को समझकर उसके विकास हेतु कटिबद्ध हो जाए। वस्तुतः महान पुरुषों की दृष्टि ही दूरदर्शितापूर्ण एवं सबल भविष्य की सम्पोषक होती है।''

➢मनोकामना सिद्धि महावीर व्रत ने चमत्कार दिखाया–

पूज्य माताजी ने स्वरचित ''विश्वशांति महावीर विधान के 2600 मंत्रों में से 108 मंत्र लेकर 'मनोकामना सिद्धि महावीर व्रत' की रचना की, जिसे मैंने पूज्य माताजी से नवम्बर 2001 में ग्रहण किया और दिसम्बर 2001 में उस व्रत को प्रारंभ किया, मेरे साथ-साथ संघ में सभी ने इस व्रत को ग्रहण किया। 10 फरवरी तक मेरे मात्र 4 ही व्रत हुए थे कि एक दिन राजा बाजार की धर्मशाला में प्रवास के मध्य मैंने संघ चैत्यालय में श्री जी का अभिषेक देखने के बाद पूज्य माताजी से निवेदन किया कि माताजी! यूँ तो सारे भारत में राष्ट्रीय स्तर पर भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष धूमधाम से विविध आयोजनों के माध्यम से मनाया जा रहा है और प्रांतीय, सामाजिक, प्रादेशिक स्तर पर भी लोग नाना आयोजन कर रहे हैं परन्तु जिन शासनपति भगवान महावीर के शासनकाल में हम और आप सभी लोग रह रहे हैं, उनकी जन्मभूमि की ओर किसी की दृष्टि नहीं है और आप उसे विश्व के मानसपटल पर लाना भी चाहती हैं, तो क्यों न आप भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की ओर मंगल विहार कर उसे उसका वास्तविक स्वरूप प्रदान करें!

उस समय पूज्य माताजी ने मेरी प्रार्थना को सुना और मनन भी किया। चूँकि माताजी इस जन्मोत्सव हेतु राजधानी दिल्ली में आयोजित होने वाले कार्यक्रम की वृहद् रूपरेखाएँ बना रही थीं, साथ ही शारीरिक स्वास्थ्य भी कमजोर था किन्तु न जाने उस दिन माताजी को क्या हुआ कि उन्होंने शारीरिक स्वास्थ्य एवं भक्तों के अतीव आग्रह को मद्देनजर करते हुए कुण्डलपुर की ओर मंगल विहार की घोषणा ही कर दी, फिर तो पूरे दिल्ली की जैन समाज

में हलचल मच गई कि एक बार पुनः माताजी हमें छोड़कर विहार की योजना बना रही हैं किन्तु पूज्य गणिनी माताजी के हृदय में तीर्थंकर भगवन्तों की कल्याणक भूमियों के विकास की भावना हर क्षण विद्यमान रही है और विशेषरूप से भगवान महावीर की जन्मभूमि के विषय में कुछ आधुनिक इतिहासकारों द्वारा उठाए गए विवाद से पूज्य माताजी बड़ी आश्चर्यचकित हुईं कि वर्तमान की अर्वाचीन शोधों के आधार पर प्राचीन कल्याणक भूमियों को परिवर्तन करने वाली प्रथा हमारी संस्कृति एवं मूल आचार पद्धति पर ही आघात करने लगी है। अतः उन्होंने मन ही मन कुण्डलपुर की ओर मंगल विहार का दृढ़ निश्चय कर लिया।

वस्तुतः मुझे तो यह उस व्रत का ही चमत्कार दृष्टिगत हुआ, जिसे लेते और करते समय मैंने प्रबल भावना संजोई थी कि कभी जन्मभूमि कुण्डलपुर के साक्षात् दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो और इस महोत्सव वर्ष में भगवान महावीर की जन्मभूमि विश्व के मानस पटल पर अंकित हो जावे। इसीलिए शायद भगवान महावीर की शासन देवी सिद्धायिनी माता ने ही पूज्य माताजी को अन्तर्प्रेरणा प्रदान कर उसे मूर्तरूप दे दिया। उनके इस निर्णय से मुझे सर्वाधिक प्रसन्नता तोहुई ही, महावीर व्रत के प्रति मेरी श्रद्धा और अधिक प्रगाढ़ हो गई पुनः पाँच हजार से भी अधिक नर-नारियों ने यह व्रत ग्रहण किया। मैंने आगे जाकर उन्हीं मंत्रों से "मनोकामना सिद्धि विधान" की रचना भी की है।

➢ N.C.E.R.T. **द्वारा विशेष वार्ता–**

11 जनवरी 2002 को संघस्थ ब्र. कु.सारिका एवं कु. स्वाति को माताजी की आज्ञा से N.C.E.R.T. भेजा गया, वहाँ उनने इतिहास विभाग में जाकर अतुल रावत आदि प्रमुख लोगों से बातचीत की, तब उन्होंने हमारा लिखा हुआ पाठ भिजवाने के लिए कहा, साथ ही यह भी आश्वासन दिया कि माताजी जो भी सुधार चाहती हैं, हम इतिहास में अवश्य परिवर्तित करेंगे पुनः दो-तीन दिनों के अन्तराल में 14 जनवरी को अतुल रावत जी (इतिहास संशोधन में नियुक्त प्रतिनिधि) स्वयं पूज्य माताजी के दर्शनार्थ पधारे और उनसे पाठ्यक्रमों में जैनधर्म विषयक भ्रान्त धारणाओं को दूर करने के संबंध में सन्तोषप्रद चर्चा हुई। मैंने उनको 5 पृष्ठीय लेख "जैनधर्म एवं भगवान महावीर" दिया, साथ ही पूर्व से की गई कोशिशों का एक मेमोरेन्डम और कुछ पाठ्य पुस्तकों के गलत पाठ व उनके नीचे संशोधित किए गए सही पाठ की कापी ये तीनों चीजें दीं, जिसे उन्होंने सरलतापूर्वक स्वीकार किया और कहा कि मैं पूरी कोशिश करके इस पाठ को दूँगा या फिर इसके आधार से दूसरा सही पाठ लिखाऊँगा।

➢ **स्कूलों में गूंज उठी भगवान महावीर की वाणी–**

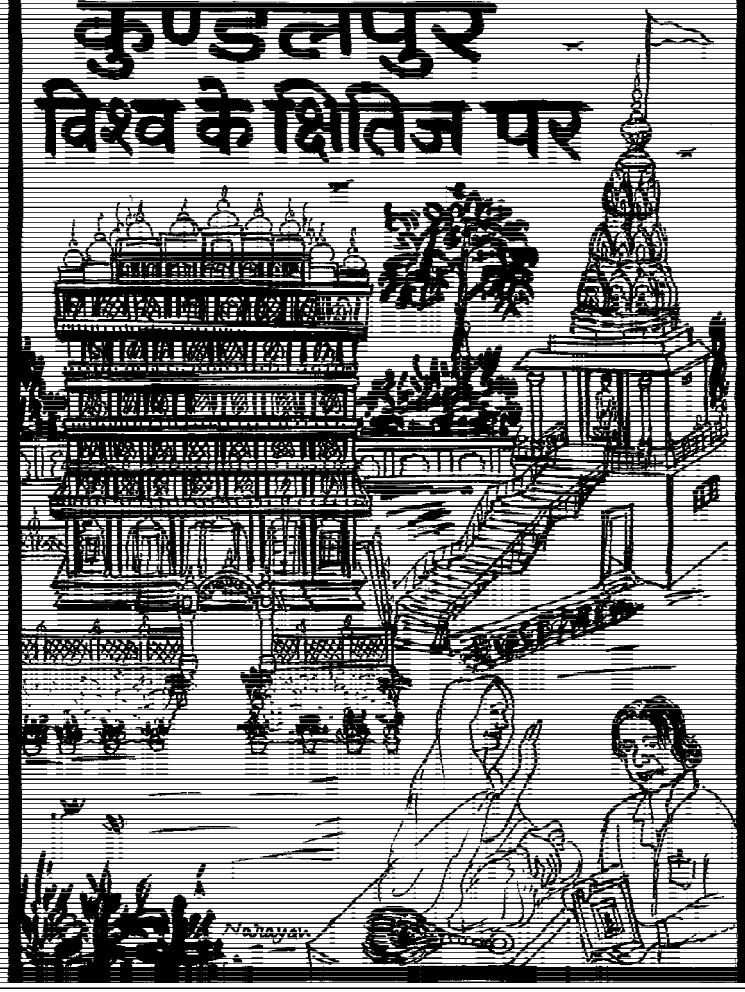
भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से राजधानी दिल्ली में एक अनूठा कार्यक्रम चला। वह था स्थानीय सरकारी विद्यालयों में 'भगवान महावीर प्रवचन श्रृंखला एवं प्रश्नमंच'। जिनके माध्यम से जैनेतर छात्र-छात्राओं एवं अध्यापकों को भगवान महावीर और जैनधर्म संबंधी जानकारी एवं मंगल संदेश प्राप्त हुए। भगवान महावीर संबंधी लघु साहित्य का प्रथमतः विद्यार्थियों को वितरण कर दिया गया, स्वाध्याय के माध्यम से कितने ही जैनेतर विद्यार्थी, जो साधारणतः जैनधर्म से अपरिचित थे, भगवान महावीर के जीवन के सूक्ष्म तथ्यों से परिचित हुए भी, तत्पश्चात् संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों के द्वारा विद्यालय में जाकर प्रवचन एवं प्रश्नमंच का आयोजन करके विजेता छात्र-छात्राओं को भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव प्रचार समिति के सौजन्य से पुरस्कृत किया गया, यह बड़े हर्ष का विषय रहा कि विद्यार्थी एवं अध्यापक बड़े उत्साहपूर्वक समस्त कार्यक्रम में भाग लेते थे। प्रो. शशि प्रभा जैन, लालबहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ-दिल्ली का सराहनीय सहयोग इस कार्यक्रम में प्राप्त हुआ। मात्र दिल्ली ही नहीं वरन् अन्य प्रदेशों– मध्यप्रदेश, राजस्थान इत्यादि में भी इसी प्रकार की संगोष्ठियाँ आयोजित करने हेतु साहित्य प्रदान किया गया। इन संगोष्ठियों के माध्यम से विविध धर्मों के विद्यार्थियों में मद्य-मांस आदि त्याग के प्रति विशेष अभिरुचि जागृत होती है। अधिकांशतः विद्यार्थी जीवनभर के लिए इनका त्याग कर देते हैं। सर्वोदय कन्या विद्यालय-मोतीबाग-1 में कक्षा-6 की मुस्लिम छात्रा कु. सभेनूर ने बहुत अच्छी तैयारी के साथ प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया और उसने आजीवन मद्य, मांस, मधु का त्याग कर दिया। इसी प्रकार ऐसे शैक्षणिक आयोजनों से विद्यार्थियों में चारित्र निर्माण के अनेकों उदाहरण दृष्टिगोचर होते रहते हैं।

अध्याय-7

भगवान महावीर जन्मभूमि

कुण्डलपुर

विश्व के क्षितिज पर



अध्याय-7

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर- विश्व के क्षितिज पर

वैदिक ग्रंथ मनुस्मृति के एक श्लोक से मैं इस ऐतिहासिक यात्रा का शुभारंभ करती हूँ–

यत्र योगेश्वरो कृष्णः, यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीविजयोभूतिर्ध्रुवानीतिर्मतिर्मम।।

अर्थात् धृतराष्ट्र के समीप बैठे एक संजय नामक दिव्यज्ञानी पुरुष ने कुरुक्षेत्र में चल रहे कौरव-पांडव के युद्ध को अपने दिव्यचक्षु से देखकर कहा कि–हे राजन्! जहाँ साक्षात् योगेश्वर नारायण श्री कृष्ण मौजूद हैं, जहाँ धनुर्विद्या में प्रवीण अर्जुन महारथी ने धनुष-बाण संभाल रखा है, वहाँ विजयश्री उन्हीं को प्राप्त होगी, ऐसी मेरी निश्चित मान्यता है।

प्रिय पाठकों! उपर्युक्त उदाहरण के अनुसार ही वर्तमान में पूरे जैन समाज की यह निश्चित धारणा बन गई है कि ''जिस कार्य को योगीश्वरी के रूप में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने हाथ में ले लिया है एवं मूर्तरूप देने में कर्मठ पार्थ जैसे कार्यकर्ता जुट गये, तो समझो वह कार्य निश्चितरूप से अपूर्व सफलता के साथ पूर्ण होना ही है।''

वह कार्य चाहे शिष्य निर्माण का रहा, साहित्य सृजन का रहा, जंबूद्वीप रचना निर्माण का रहा या अन्य तीर्थों के निर्माण, विकास एवं जीर्णोद्धार का रहा, सभी के द्वारा ज्ञानमती माताजी की पहचान एक फौलादी व्यक्तित्व के रूप में बन चुकी है।

इन अनेक विशेषताओं से समन्वित पूज्य माताजी ने यूँ तो अपने 53 वर्ष के संयमी जीवन में लगभग पूरे देश में भ्रमण करके अनेक तीर्थयात्राएँ सम्पन्न की हैं, तथापि भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर की यह यात्रा विशेषरूप से ऐतिहासिक यात्रा इसलिए बन गई कि इसमें मात्र तीर्थयात्रा का भाव नहीं वरन् इतिहास एवं संस्कृति के संरक्षण का मूल लक्ष्य समाविष्ट है। जैसे–आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने जिनधर्म की रक्षा हेतु संघ सहित गिरनार सिद्धक्षेत्र की वंदना की थी और अकलंक देव ने जिनधर्म की प्रभावना हेतु तारादेवी से शास्त्रार्थ किया था। इसी प्रकार प्राचीन परम्परा एवं आर्ष

ग्रंथानुसार भगवान महावीर जन्मभूमि के उपेक्षित स्वरूप को विकास का नया आयाम देने हेतु ही ज्ञानमती माताजी ने कुण्डलपुर यात्रा का संकल्प लिया। संभवतः दूरगामी भविष्य को देखते हुए ही वर्तमान के विद्वत् शिरोमणि प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन-फिरोजाबाद (उ.प्र.) प्रायः सभाओं में भी कहा करते हैं कि ''पूज्य ज्ञानमती माताजी ने अपने जीवन में जितने भी कार्य किये हैं, वे सभी तराजू के एक पलड़े पर रखे जायें और कुण्डलपुर विकास प्रेरणा का कार्य दूसरे पलड़े पर रखा जाये तो मेरी दृष्टि में दूसरा पलड़ा भारी रहेगा क्योंकि युग-युग तक उनकी यह देन जैनसमाज ही नहीं, विश्व के लिए अविस्मरणीय हो गई और प्राचीन वास्तविक जन्मभूमि की रक्षा का यह कार्य वास्तव में ऐतिहासिक है।''

नूतन इतिहास का निर्माण एवं प्राचीन इतिहास की रक्षा करने वाले विरले महापुरुषों में ज्ञानमती माताजी ने सचमुच इस युग में कीर्तिमान स्थापित किया है जो श्रद्धालुओं के लिए श्रद्धास्पद रहा एवं कतिपय असहिष्णु व्यक्तियों के लिए निंदास्पद होने से तीव्र कर्मबंध का कारण भी बना।

➢कुण्डलपुर के लिए विहार की बात सुनकर दिल्लीवासी अधीर हो उठे–

13 फरवरी 2002 का वह शुभ दिन, जहाँ कुण्डलपुर के विकास की नूतन कथा का प्रारंभीकरण था, वहीं दिल्लीवासियों के लिए आश्चर्यमिश्रित दुःख का कारण था। विहार की बात सुनते ही वे अधीर हो उठे। महिला संगठन की अध्यक्षा श्रीमती आशा जैन को सुनकर तो गहरा धक्का लगा कि कहाँ तो हम लोग मार्च में महिला संगठन का इतना भव्य कार्यक्रम माताजी की प्रेरणा एवं सानिध्य में आयोजित कर रहे थे और कहाँ माताजी ने हमें छोड़कर इतनी दूर जाने का निर्णय ले लिया। मॉडल टाउन की सुलोचना जी रोने लगीं और भी अनेकों भक्तों की आँखों से अश्रुधारा बह निकली, अनेक लोग कहने लगे–माताजी! आप हमें इस जन्मजयंती महोत्सव वर्ष में जो भी कार्य बताएंगी, हम करेंगे, पर आप हमसे दूर मत जाइए। परन्तु दृढ़निश्चयी माताजी के मुख से निकला प्रत्येक शब्द पत्थर की लकीर के समान अमिट होता है अतः उन्होंने सभी को समझा-बुझाकर शांत कर दिया और देखते ही देखते विहार की वह पावन बेला भी आ गई पुनः 20 फरवरी 2002 को पूज्य माताजी का राजाबाजार से मंगल विहार हो गया।

➢इण्डिया गेट से हुआ मंगल विहार–

वह ऐतिहासिक दिवस बड़ा शुभ था जब प्रातःकाल से ही अनेकों शुभ

समाचार मिल रहे थे। विहार से पूर्व हुई विशेष सभा में अनेकों गणमान्य महानुभाव उपस्थित थे, जिनमें श्री निर्मल जी सेठी, श्री चक्रेश जैन, प्रो. रतन जैन, श्री सरोज जैन-तह. फतेहपुर, श्री कैलाशचंद जैन-लखनऊ रहे और सभी लोग इण्डिया गेट तक झण्डा लेकर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक चले। कनॉट प्लेस से इण्डिया गेट तक पहुँची इस पदयात्रा में सभी के मुख पर प्रसन्नता थी कि भगवान महावीर की जन्मभूमि अब शीघ्र ही विश्व के मानस पटल पर छा जाएगी। पदविहार करने वाला प्रत्येक व्यक्ति भगवान महावीर एवं पूज्य माताजी के जयकारों से हर गली को अनुगुंजित कर रहा था। इण्डिया गेट पर पहुँचकर पूज्य माताजी ने देश के नाम अपना मंगल संदेश प्रसारित किया और फिर तो उस ऐतिहासिक स्थल से बढ़े माताजी के कदमों ने मानो कुण्डलपुर के इतिहास का प्रथम पृष्ठ ही लिख दिया।

➢संघपति की विनम्र प्रार्थना–

पूज्य माताजी के कुण्डलपुर विहार की बात जब संघपति महावीर प्रसाद जी-बंगाली स्वीट सेंटर, दिल्ली ने सुनी, तो वे तुरंत बोल पड़े–माताजी! आपके विहार की बात सुनकर मुझे हर्ष और विषाद दोनों हो रहे हैं। विषाद तो इसलिएकि आप हम भक्तों को छोड़कर इतनी दूर जा रही हैं और हर्ष इसलिए कि अब आपके करकमलों से एक और तीर्थ का उद्धार होने वाला है। उन्होंने आगे कहा–

माताजी! वैदिक महाभारत में यह वर्णन आता है कि जब कौरवों और पाण्डवों का युद्ध होने वाला था, तो श्रीकृष्ण ने दोनों पक्षों से एक-एक वर मांगने के लिए कहा था तो कौरवों ने अक्षौहिणी सेना मांगी थी जबकि पांडवों ने श्रीकृष्ण को ही मांग लिया था उसी प्रकार पूज्य माताजी! लोग भले ही सरकार द्वारा घोषित 100 करोड़ के अनुदान को पाने में लगे हुए हैं किंतु मैं तो समाज से आप जैसी तपस्वी साध्वी को पाने की इच्छा रखता हूँ, जिनके माध्यम से समय-समय पर हमें मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। पुनः उन्होंने वैदिक रामायण का भी एक उदाहरण प्रस्तुत किया कि जिस प्रकार चौदह वर्ष के वनवास के पश्चात् जब रामचन्द्र अयोध्या में वापस आए, तो राम के राज्याभिषेक की तैयारियाँ की जा रही थीं। राज्याभिषेक से पूर्व श्री रामचन्द्र ने माता कौशल्या से कहा–माते! आज बहुत ही प्रसन्नता का दिवस है, इस अवसर पर मेरी इच्छा है कि राजतिलक की खुशी में चारों पुत्रवधुओं को भी कुछ न कुछ भेंट दी जाए। माता कौशल्या द्वारा सभी से पूछने पर किसी ने कुछ और किसी ने कुछ मांगा परन्तु शत्रुघ्न की पत्नी श्रुतिकीर्ति खामोश रहीं। उनसे पूछा गया

कि आप भी कुछ मांगे, आप खामोश क्यों हैं? जब कई बार उनसे कहा गया तो वे बोलीं–पहले आप वचन दें कि मैं जो मांगूंगी, वह आप अवश्य देंगे। तब राम ने कहा–तुम अधिक से अधिक अयोध्या का राज्य मांगोगी, वह तो मैंने भरत-शत्रुघ्न को दिया हुआ ही है, अभी तो मैं उस सिंहासन पर बैठा भी नही हूँ। फिर भी मैं वचन देता हूँ कि तुम जो भी मांगोगी, मैं अवश्य दूँगा। इस प्रकार के वचनों को सुनकर श्रुतिकीर्ति आश्वस्त हो गईं और बोलीं–मुझे आप लोगों के वो वस्त्र चाहिए, जो आप लोगों ने वनवास में पहने थे, ताकि मैं भी आने वाली पीढ़ियों को बता सकूँ कि हमारे वंश में ऐसे आज्ञाकारी महापुरुष हुए हैं, जिन्होंने अपने सुखों की परवाह न करके अपने पिता के वचनों का पालन किया। उसी प्रकार माताजी! मुझे भी आपके कुण्डलपुर जाते समय आपकी एवं चंदनामती माताजी की वह पवित्र साड़ी चाहिए, जिसे पहनकर आप लोगों ने कुण्डलपुर के विषय में चिंतन किया है क्योंकि यह सब सिद्धायिनी देवी की प्रेरणा का फल है। आपकी ये पवित्र साड़ी मेरे परिवार की भावी पीढ़ी को भी आप जैसे महान गुरुओं की भक्ति करने की प्रेरणा प्रदान करती रहेगी।

इसके साथ ही उन्होंने एक पंक्ति भी गुनगुनाई–

''रहके साथ तुम्हारे मैंने मांग लिए कुण्डलपुर के भगवान''

➢2601/-की राशि कुण्डलपुर के लिए वरदान बन गई–

यूँ तो भारत जैसे धर्मपरायण देश में अनेक ऐसे धर्मपरायण श्रेष्ठी उपस्थित हैं, जो चाहें तो केवल अपने ही धन से एक-एक तीर्थ को विकसित कर सकते हैं परन्तु माताजी का सदैव यही कहना रहता है कि तीर्थ विकास में जन-जन की भावनाएँ जुड़नी चाहिए, जिससे प्रत्येक श्रावक को यह लगे कि यह तीर्थ मेरा है और मैंने भी इसमें अपनी कुछ अर्थांजलि समर्पित की है। फिर बिना सबके सहयोग के तीर्थविकास संभव नहीं है। अतः जन-जन की भावनाएँ उस तीर्थ के साथ जोड़ने के उद्देश्य से भगवान महावीर के 2600 वर्षों के प्रतीकरूप 2601/- की अनुदान राशि की घोषणा की गई। फिर तो देखते ही देखते 2601/- की राशि देने वालों की लाइन लग गई, जिसमें सर्वप्रथम राशि देने का सौभाग्य श्री महेन्द्र जैन, मुकेश जैन, जिनेन्द्र प्रसाद जैन-ठेकेदार परिवार ने प्राप्त किया। इस प्रकार उस 2601/-की राशि ने बूंद-बूंद से सागर भरने की सूक्ति को चरितार्थ करते हुए कुण्डलपुर तीर्थ को साकार रूप दे दिया।

➢एक श्राविका की दान भावना–

चूँकि अब पूरा वातावरण कुण्डलपुरमय हो रहा था अतः प्रत्येक दर्शनार्थी

को भगवान महावीर की जन्मभूमि के बारे में बताते हुए उन्हें उससे जुड़ने की प्रेरणा दी जा रही थी। इसी मध्य एक दिन वहाँ की योजना पर प्रकाश डाला जा रहा था, तभी दिल्ली में रहने वाली श्रीमती अंजू जैन ध.प. श्री विकास जैन (ब्र. रवीन्द्र जी की भतीजी) ने तीन चौबीसी मंदिर की एक प्रतिमा की स्वीकृति करते हुए कहा कि माताजी! मेरी ओर से भी कुण्डलपुर में एक प्रतिमा रहेगी। मैंने उससे कहा कि अंजू! अपने पति से एक बार पूछ लो, तब वह कहने लगी कि क्या हुआ अगर मैं एक गहने का सेट कम पहन लूँगी। अगर मेरे द्रव्य से ऐसे महान तीर्थ के विकास में कुछ योगदान लगता है और प्रतिमा विराजमान करने का मुझे पुण्य प्राप्त होता है, तो मुझे खुशी होगी। यह सुनकर मुझे बड़ी खुशी हुई और मन में आया कि ऐसी दान भावना प्रत्येक गृहिणी के लिए प्रेरणास्पद है।

➢मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पर 108 फुट विशालकाय मूर्ति निर्माण हेतु शिलापूजन–

3 मार्च 2002 को 99 करोड़ महामुनियों की निर्वाणभूमि महाराष्ट्र प्रांत के मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र के पर्वत की अखण्ड शिला में भगवान ऋषभदेव 108 फीट विशालकाय मूर्ति निर्माण हेतु शिलापूजन समारोह में भाग लेने हेतु 27 फरवरी को ब्र. रवीन्द्र जी पूज्य माताजी के शुभाशीर्वाद के साथ रवाना हुए, उस समय मैंने खूब मांगलिक मंत्र पढ़ते हुए यही भावना व्यक्त की कि युग का इतिहास बनाने वाली इस युवा शक्ति को भगवान बहुत शक्ति दें और ये खूब स्वस्थ व चिरायु रहें।

पुनः 1 मार्च को दिल्ली से लगभग 80 महानुभाव एवं संघस्थ ब्रह्मचारिणी कु. बीना, कु. इन्दु एवं कु. मंजू भी रवाना हुए। यहाँ एक घटना उल्लेखनीय है कि फरवरी में अहमदाबाद के गोधरा काण्ड से सभी जगह भय व्याप्त था अतः दिल्ली से मांगीतुंगी जाने वाले यात्रियों की एक रेलबोगी जो पहले से बुक हो चुकी थी, उसके व्यवस्थापक भी जिम्मेदारी से कुछ घबराने लगे, तो माताजी ने सबको निर्भय होकर जाने की प्रेरणा दी और रेलवे स्टेशन पर मंत्रित कलावा सभी यात्रियों के हाथ में बंधवा दिया, फलस्वरूप सभी की यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न हुई।

3 मार्च 2002 को इस विशालकाय मूर्ति का शिलापूजन समारोह संघपति लाला महावीर प्रसाद जैन-संघपति, बंगाली स्वीट सेंटर-दिल्ली (सपरिवार) द्वारा सानन्द सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर विशाल धर्मसभा में दूर-दूर से हजारों श्रद्धालु भक्त मांगीतुंगी पधारे। समारोह की अध्यक्षता माननीय

श्री वी.धनंजय कुमार जैन (केन्द्रीय टेक्सटाइल राज्यमंत्री-भारत सरकार) ने की तथा विशिष्ट अतिथि श्री अरुण भाई गुजराती-सभापति विधान सभा (महा. सरकार), श्री स्वरूप सिंह नाइक-वनमंत्री महाराष्ट्र राज्य, श्री प्रकाश कल्लपप्पा अवाड़े-वस्त्रोद्योग एवं आदिवासी राज्यमंत्री (महा.), श्री राजेन्द्र दर्डा-ऊर्जा राज्यमंत्री (भारत सरकार), श्री ए.टी.पवार -वन राज्य मंत्री (महाराष्ट्र राज्य), श्री चन्द्रकांत खैरे-सांसद, श्री शंकर राव अहिरे-विधायक,श्री राजेन्द्र जी पाटनी वाशिम-विधायक मुख्य रहे। आगत मंत्री महोदय ने एक स्वर से भव्य प्रतिमा के निर्माण में केन्द्र सरकार एवं महाराष्ट्र सरकार द्वारा अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करने का आश्वासन देते हुए इस भव्य प्रतिमा द्वारा सम्पूर्ण विश्व में शांति की कामना के साथ पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का वंदन करते हुए इस कार्य की प्रशंसा की। इस अवसर पर अनेक विशेष सहयोगी इंजीनियर, भूगर्भशास्त्री भी उपस्थित थे। सभा का मंगलाचरण संघस्थ बहनों कु. बीना व इन्दू ने किया तथा सभा का संचालन डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल महामंत्री – मूर्ति निर्माण कमेटी ने किया। कार्यक्रम में उपस्थित पूज्य आर्यिकारत्न श्री श्रेयांसमती माताजी का आशीर्वाद भी सभी को प्राप्त हुआ व अनेक भक्तों ने इस विशालमूर्ति निर्माण हेतु दानराशि घोषित की। लगभग 10 हजार की जनता को देखकर नेता भी चकित हो उठे तथा शिलापूजन में भाग लेने वाले सभी अतिथियों का भावभीना स्वागत किया गया।

➢किं न स्यात्साधुसंगमात्–

महापुराण ग्रंथ में 62वें सर्ग में लिखा है कि साधु समागम से सब कुछ संभव है, यही बात होडल की ओर विहार करते समय चरितार्थ हुई। बल्लभगढ़ से 3-4 पुरुष और 1 महिला रोज मेरे साथ पद विहार करने हेतु आते थे, एक दिन बातों-बातों में पता लगा कि उनमें से 2-3 पुरुषों को कोई न कोई व्यसन है पुनः जब मैंने उन्हें प्रेरणा प्रदान की, तो उन्होंने तुरंत ही मेरी बात मान ली और उनमें से एक ने तम्बाकू, एक ने गुटखा और एक ने शराब का हमेशा के लिए त्याग कर दिया।

➢अनेक भव्यात्माओं ने लिए ''मनोकामना सिद्धि महावीर व्रत''–

जिस मनोकामना सिद्धि महावीर व्रत ने मेरे मनोभावों को फलीभूत किया, उस महान व्रत को हजारों लोग ग्रहणकर अपनी मनोकामनाओं को सफलीभूत करें, ऐसी मेरी हार्दिक भावना थी, अतः माताजी की आज्ञा से मैंने स्थान-स्थान पर अनेकों श्रावक-श्राविकाओं को इस व्रत का महत्त्व बताया।

फिर तो अनेकों स्त्री-पुरुषों ने इस व्रत को ग्रहण किया, आगरा शहर में तो एक स्थान पर 150 लोगों ने ''महावीर व्रत'' को ग्रहण किया। इसी प्रकार अनेकों स्थानों पर हजारों लोगों ने इस व्रत को ग्रहण किया, जिसमें से कई भाई-बहनों के व्रत पूर्ण भी हो चुके हैं और कुछ लोग तो 2-3 बार इस व्रत को कर चुके हैं और इसके प्रत्यक्ष चमत्कार का वर्णन करते नहीं थकते हैं।

➢कुण्डलपुर जैन तीर्थ के मंत्री अजय जी के द्वारा तीर्थ विकास की विस्तृत चर्चा –

10 मार्च को हम लोग छटीकरा नामक छोटे से ग्राम के पंचायत भवन में ठहरे हुए थे, वहाँ पटना से कुण्डलपुर तीर्थ के मानद मंत्री अजय कुमार जैन एवं राजगृही के मैनेजर माताजी के दर्शनार्थ पधारे। उस समय अजय जी ने माताजी को बताया कि किस प्रकार वैशाली स्थापना के बाद कुण्डलपुर को उपेक्षित किया गया किन्तु फिर भी वैशाली का न जाने कैसा योग रहा कि अनेक प्रयत्नों के बावजूद भी उसका विकास नहीं हो पाया।

पुनः जब पूज्य माताजी से उनकी कुण्डलपुर विकास के संदर्भ में विस्तृत चर्चा हुई, तो सारी बात होने के बाद अजय जी मुझसे बोले कि माताजी! आज बड़ी माताजी से बात करके मेरा दिमाग एकदम ठीक हो गया और मेरा Brain Wash हो गया है।

➢सिद्धक्षेत्र चौरासी मथुरा में मंगल पदार्पण –

11 मार्च को प्रातः 9.30 बजे अंतिम अनुबद्ध केवली श्री जम्बूस्वामी की निर्वाणभूमि चौरासी मथुरा तीर्थ पर पहुँचकर मंदिर दर्शन कर मन आल्हादित हो उठा। यहाँ आकर पता लगा कि आज से 200 वर्ष पूर्व यहाँ खुदाई में जिस स्थान पर जम्बूस्वामी के पाषाण चरण मिले हैं, तब से उसी स्थान पर तीर्थ बनाया गया है, उससे पूर्व यह तीर्थ नहीं था, हाँ! गाँव में अवश्य मंदिर रहे होंगे। यहाँ तीर्थ पर लगे शिलालेख में लिखा है कि जम्बूस्वामी ने 84 वर्ष की आयु में 84 लाख योनियों से छूटकर यहाँ से मोक्ष प्राप्त किया था, इसलिए इस क्षेत्र का ''चौरासी मथुरा'' नाम पड़ा।

शाम 4 बजे पूज्य माताजी एवं हम सभी ने क्षेत्र परिसर का भ्रमण किया। 12 मार्च को मथुरा के जिनमंदिर में पूज्य माताजी ने जम्बूस्वामी के श्रीचरणों में केशलोंच किया। इस अवसर पर बल्लभगढ़, फरीदाबाद, पलवल, कामा, भरतपुर, कोसीकलां आदि स्थानों से बसों द्वारा काफी लोग इस केशलोंच समारोह को देखने हेतु पधारे। दिल्ली से संघपति लाला महावीर प्रसाद जी (सपत्नीक), प्रेमचंद जी, कमलचंद जी, अनिल जी, सत्येन्द्र जी, जिन्नो जी

आदि कई लोग पधारे तथा समारोह के बाद जब कुण्डलपुर के शिलान्यास संबंधी मीटिंग हुई, तो कमलचंद जी-खारीबावली ने प्रसन्नमना होकर दिल्ली से पूरी एक रेलबोगी निःशुल्क ले जाने एवं भोजन आदि संबंधी व्यवस्था अपनी ओर से करने की स्वीकृति प्रदान की।

मथुरा के 6 दिवसीय प्रवास में जहाँ हमने जिनमंदिरों के दर्शन के साथ-साथ कृष्ण जन्मभूमि, मथुरा संग्रहालय, कंकाली टीला आदि का अवलोकन किया, वहीं आचार्य श्री सुबलसागर महाराज की शिष्याओं – आर्यिका श्री अजितमती माताजी एवं सुमतिमती माताजी से मिलकर मन में बड़ी खुशी हुई। सरल स्वभावी माताद्वय पूज्य ज्ञानमती माताजी के दर्शन कर भावविभोर हो गईं और माताजी से दूर होते समय इनकी आँखों में अश्रु आ गए। वास्तव में साधु-साध्वियों का पारस्परिक मिलन भी बड़ा रोमांचक और वात्सल्यमयी रहता है।

➢ताज नगरी आगरा में संघ का मंगल पदार्पण एवं महती धर्मप्रभावना –

मुगल सम्राट् शाहजहाँ और उनकी बेगम मुमताज के युग की याद दिलाती ताज नगरी आगरा जहाँ पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र है, वहीं यह धर्मपरायण नगरी के रूप में भी जानी जाती है, जहाँ अनेकों जिनमंदिर जैनत्व की पताका को फहरा रहे हैं। 20 मार्च को संघ का मंगल पदार्पण प्रभावनापूर्वक आगरा शहर में हुआ। हरिपर्वत कालोनी के शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में दर्शन के पश्चात् परिसर में निर्मित विशाल हॉल में प्रवचन सभा हुई। आगरा की दिगम्बर जैन परिषद यहाँ की सबसे प्रमुख संस्था मानी जाती है।

प्रवचन सभा में क्षुल्लक मोतीसागर जी ने अपने ओजस्वी प्रवचन में आगरावासियों को कुण्डलपुर के विकास अभियान के साथ जोड़ने हेतु आह्वान किया तथा उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि यह कुण्डलपुर जन-जन के 2601 रु. के सहयोग से निर्मित किया जा रहा है और पूरे देश की जनता के साथ-साथ आगरावासियों के भी अधिक से अधिक नाम कुण्डलपुर की इस विकास योजना में आना चाहिए। उनके उद्बोधन के पश्चात् परिषद के महामंत्री तथा सभा के कुशल संचालक श्री जितेन्द्र जी ने पूरी आगरा समाज को सम्बोधित करते हुए कहा कि पूज्य माताजी द्वारा कुण्डलपुर विकास का यह अभियान हम सभी के लिए गौरव का विषय है। पुनः इसमें आगरा के 500 लोगों के नाम लिखवाने की उन्होंने घोषणा की। उनकी भावना के अनुसार आगरा से 300 से भी अधिक नाम हुए, जो कुण्डलपुर के शिलालेख पर अंकित

हो चुके हैं।

➢गांधी के दाण्डी मार्च का प्रतीक है यह कुण्डलपुर यात्रा–

आवश्यकता ही आविष्कार की जननी होती है। जैसे परतन्त्र भारत को आजाद कराने के लिए महात्मा गांधी ने मार्च 1930 में दांडी मार्च प्रारंभ किया था और उस यात्रा का महत्त्व 15 अगस्त 1947 को दिल्ली के लाल किले पर तिरंगा झण्डा फहराने के बाद देशवासियों को ज्ञात हुआ था, वैसे ही आज हमारी राष्ट्रगौरव पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की इण्डिया गेट दिल्ली से प्रारंभ हुई महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर-नालंदा (बिहार) तक की यह यात्रा जैन समाज के लिए दांडी मार्च से अधिक महत्त्वपूर्ण है। कुण्डलपुर का विकास होकर जिस दिन महावीर जन्मभूमि का वास्तविक रूप निखरकर आएगा, उस दिन माताजी की यात्रा सारे जैन समाज के लिए एक असली इतिहास का दिग्दर्शन कराएगी।

उक्त विचार कमलानगर-आगरा में पूज्य माताजी के पदार्पण अवसर पर प्रवचन सभा के कुशल युवा संचालक श्री मनोज कुमार जैन ने प्रकट करते हुए कहा कि हम सोच भी नहीं सकते थे कि पूज्य माताजी जैसी महान साध्वी के चरण कभी हमारे आगरा शहर में भी पड़ेंगे।'' वास्तव में भक्तिगंगा में सराबोर आगरा की जनता फरवरी 2003 में कुण्डलपुर में होने वाले पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव में जाने हेतु जहाँ अभी से संकल्पित हो रही थी, वहीं उसके विकास के लिए पूर्ण समर्पण भाव को भी दर्शा रही थी।

➢अन्य स्थानों पर भी लोगों का उत्साह विशेष था–

धूलियागंज-आगरा में प्रवचन सभा के बाद सन्तभवन का शिलान्यास होना था, जब मैंने इसका नाम **''महावीर जयंती भवन''** रखने की प्रेरणा प्रदान की, तो सामाजिक निर्णयानुसार स्वरूपचंद जी मार्शन्स ने खड़े होकर इस बात की घोषणा कर दी। यहाँ के मंदिर में बहुत ही सुन्दर वेदी में पीतल के कमलासन देखकर मन खुश हुआ। धूलियागंज में नशिया मंदिर होकर प्रातः वहाँ से प्रस्थान हुआ, पुनः वहाँ से 7 मंदिरों के दर्शन करके मोतीकटरा पहुँचे, यहाँ के जिनमंदिर में काफी प्राचीन-प्राचीन 700 जिनप्रतिमाएं हैं तथा दीवालों पर काँच के कई एक चित्र हैं। इसके साथ ही भक्तामर के 48, चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज आदि 10-15 आचार्यों एवं पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी आदि कुछ आर्यिकाओं के भी सुन्दर चित्र बने हैं। यहाँ से

विहार कर बेलनगंज में 3 दिवसीय प्रवास रहा।

➢पूज्य माताजी का 50वाँ क्षुल्लिका दीक्षा दिवस–

चैत्र वदी एकम् की वह पवित्र तिथि आगरा में आ गई, जब श्री महावीर जी अतिशय क्षेत्र पर भारत गौरव आचार्य श्री देशभूषण महाराज ने इस युग की प्रथम कुंवारी कन्या को क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान कर **''वीरमती''** नाम से सुशोभित किया था, आज वीरमती से ज्ञानमती तक के उन 50 वर्षों में उन महातपस्विनी माताजी ने जैन जगत को अनगिनत चेतन-अचेतन निधियाँ प्रदान कीं, जिनका उपकार यह जगती युगों-युगों तक नहीं चुका सकती, आगरा वालों का यह महान सौभाग्य ही था कि उन्हें इस तिथि को आत्मसात करने का सुनहरा मौका मिल गया था अतः प्रातः 8.30 बजे से 11.30 बजे तक धर्मशाला प्रांगण में सभा का आयोजन किया गया, जिसमें अनेक लोगों ने पूज्य माताजी के प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित की।

➢आर्यिका श्री सुभूषणमती माताजी ने भी समर्पित की विनयांजलि–

आगरा नगरी में पूज्य माताजी संघ एवं पूज्य मुनि स्व. श्री दयासागर महाराज की शिष्या पू. आर्यिका श्री सुभूषणमती माताजी संघ का पारस्परिक सौहार्दपूर्ण मिलन हुआ। पूज्य माताजी के प्रथम बार दर्शन कर गद्गदमना होकर उनके 50वें क्षुल्लिका दीक्षा दिवस पर अपनी विनयांजलि समर्पित करते हुए उन्होंने कहा कि आज हम लोगों की जितनी शारीरिक उम्र नहीं है, उससे भी बहुत अधिक वर्ष पुराना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का दीक्षित जीवन हो चुका है। इन्होंने चारित्र चक्रवर्ती प्रथम दिगम्बराचार्य श्री शांतिसागर महाराज से लेकर आज तक उस परम्परा के सात आचार्यों को देखा है, इनमें से अनेक आचार्यों को जैन शास्त्रों का गहन अध्ययन कराया है। इस अपूर्व ज्ञान की धनी पूज्य माताजी के तेजस्वी मुख पर इस उम्र में भी अतीव सरलता, वात्सल्य और निर्द्वन्दता झलक रही है। जीवन में पहली बार इनके दर्शन करके मैंने अपनी गुरु परम्परा की पवित्रता और महानता को स्वयं इनके मुख से सुनकर जो अनुभव प्राप्त किया है, उसे ही वृद्धिंगत करने की शक्ति मुझे प्राप्त हो, इसी आशीर्वाद की इच्छा से पूज्य माताजी के श्रीचरणों में मेरा त्रय प्रदक्षिणा पूर्वक कोटि-कोटि नमन।

पुनः महावीर जन्मभूमि के प्रकरण पर अपनी ओजस्वी वाणी में उन्होंने कहा कि जब बच्चा जन्म लेता है तो पहचान शक्ति आते ही उसे माँ जिस ओर उंगली दिखाकर कह देती है कि यह तुम्हारे पिता हैं'' उसी को पिता मानकर

बालक अपने भविष्य निर्माण का स्वप्न संजोता है न कि वह पड़ोसियों से पूछने जाता है कि मेरा पिता कौन है? ठीक उसी प्रकार से हमारे तीर्थंकरों की जन्मभूमियों का निर्णय केवल हमारी जिनवाणी माता के अनुसार होगा। सरकार, इतिहासकार या आधुनिक शोधकर्ताओं को उनका निर्णय करने का कोई अधिकार नहीं है।

➢''आधी रोटी खाएंगे, पर कुण्डलपुर को बनाएंगे''–

समाजसेवी श्रावक श्री शिखरचंद जैन-आगरा के द्वारा अपनी विनयांजलि समर्पित करते हुए कहे गए उक्त वाक्य ने आगरा समाज की भक्ति भावनाओं को आंदोलित कर दिया और उनके इस नारे के साथ अनेकानेक भक्तों ने ''महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर'' को सिर आँखों पर रखकर उसके विकास में भारी योगदान दिया।

परिषद के यशस्वी अध्यक्ष श्री मनोहरलाल जैन ने असीम उत्साह के साथ कुण्डलपुर में भगवान महावीर स्वामी के महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव में भारी जनसमूह के साथ भाग लेने का उद्घोष किया।

बेलनगंज से छीपीटोला और छीपीटोला से ताजगंज में पदार्पण हुआ, यहाँ का मंदिर 400 वर्ष से भी अधिक प्राचीन है और यहाँ भगवान पार्श्वनाथ की अत्यन्त सुन्दर वि.सं. 1497 की प्रतिमा विराजमान हैं। ताजगंज से ज्योतिनगर पुनः जयपुर हाउस होते हुए हरिपर्वत पहुँचे। इस प्रकार आगरा के 30 मंदिरों के दर्शन कर पूज्य माताजी एवं हम सभी का मन प्रसन्न हो उठा, वस्तुतः ये जिनमंदिर हमारी जिनसंस्कृति के गौरव हैं, उनकी शान हैं।

इस प्रकार आगरा की 26 कालोनियों की ओर से लोगों ने माताजी के श्रीचरणों में श्रीफल समर्पित कर वहाँ पधारने का अनुरोध किया। लगभग 19 दिवसीय आगरा प्रवास के मध्य संघ का आगरा की विभिन्न कालोनियों में भ्रमण हुआ।

➢हरिपर्वत-आगरा में ऋषभदेव जयंती–

चैत्र वदी नवमी, 6 अप्रैल को भगवान ऋषभदेव के जन्म-तपकल्याणक के शुभ अवसर पर हरिपर्वत में माताजी की प्रेरणा से ऋषभदेव जयंती धूमधाम से मनाई गई, जिसमें प्रातः पाण्डुकशिला पर भगवान ऋषभदेव का 108 कलशों से अभिषेक हुआ तत्पश्चात् सभागार के अन्दर अति सुन्दर संगीत ध्वनि के साथ ऋषभदेव विधान सम्पन्न हुआ।

विधान के मध्य पूरी आगरा की जैन समाज एवं दिगम्बर जैन परिषद-

आगरा के अध्यक्ष मनोहर लाल जैन, महामंत्री-श्री जितेन्द्र कुमार जैन आदि सभी ने पूज्य माताजी को श्रीफल चढ़ाकर पूज्य माताजी से अत्यधिक आग्रह किया कि आप महावीर जयंती तक आगरा में अवश्य रुकें, हम सभी आपको आश्वासन देते हैं कि कुण्डलपुर की पूरी जिम्मेदारी हम लोग संभालेंगे।

रात्रि में ''सती चंदना'' नामक नाटक का मंचन हुआ। 7 अप्रैल 2002 को सभागार में ऋषभदेव संगोष्ठी एवं महिला सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें जहाँ प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन-फिरोजाबाद का विद्वत्तापूर्ण ओजस्वी वक्तव्य हुआ, वहीं दिल्ली से पधारे संघपति लाला महावीर प्रसाद जी ने लगभग 40 मिनट भाषण करते हुए जनसमूह को गुरुभक्ति एवं माताजी के कार्यकलापों का वर्णन सुनाकर भक्ति में सराबोर कर दिया पुनः मैंने अपने प्रवचन में सभी धार्मिक एवं सरकारी प्रमाण प्रस्तुत करते हुए कुण्डलपुर की बात बताई।

➢आगरावासियों ने दी भावभीनी विदाई–

9 अप्रैल को प्रातः सरलाबाग से 7 बजे प्रस्थान करके कमलानगर में जिनमंदिर के दर्शन किए, संक्षिप्त प्रवचन सभा हुई पुनः अनेकों घरों के सामने आरती करते हुए बैण्ड बाजे के साथ भारी उत्साहमय वातावरण में आगरावासियों ने संघ को भावभीनी विदाई दी और पूज्य माताजी से पुनः-पुनः आगरा पधारने का नम्र निवेदन किया।

➢महिला संगठन, दिल्ली प्रदेश द्वारा 5वाँ वार्षिकोत्सव–

कवि अज्ञात ने नारियों के बारे में कहा है कि–

नारी संस्कृति की संवाहिका है।

इसी प्रकार महाकवि जयशंकर प्रसाद ने अपनी कामायिनी नामक कृति में यहाँ तक कह दिया कि–

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नभ पग तल में।
पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दरतम पल में।।

फिर जहाँ नारियों की मसीहा, कुमारिकाओं की पथप्रदर्शिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का वरदहस्त हो, उनकी मंगल प्रेरणा हो, तो नारियाँ देश का उज्ज्वल भविष्य बनकर देश की उन्नति में सहकारी बन जाएं, यह कोई अतिशयोक्ति की बात नहीं है। इसी का ज्वलंत उदाहरण है अखिल भारतीय दि. जैन महिला संगठन, जो पूज्य माताजी का वरदहस्त पाकर पुष्पित, पल्लवित व सुरभित हो चुका है।

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत पूज्य

माताजी की पावन प्रेरणा एवं आशीर्वाद से अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन-दिल्ली प्रदेश के द्वारा राष्ट्रीय महिला सम्मेलन, त्रिशला माता सम्मान समारोह एवं 5वाँ वार्षिकोत्सव 31 मार्च 2002 को फिक्की ऑडिटोरियम, नई दिल्ली में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर दिल्ली प्रदेश इकाई द्वारा धर्म, समाज एवं परिवार में जागृति व चेतना लाकर सात्त्विक व धर्मपरायण जीवन का निर्वहन करने वाली 26 महिलारत्न को ''माता त्रिशला पुरस्कार'' से सम्मानित किया गया। दिल्ली प्रदेश की 50 इकाइयों ने कार्यक्रम में अपनी गरिमापूर्ण उपस्थिति दर्ज कराई और तीन माह से पूरी कर्मठतापूर्वक कार्यक्रम को आयोजित करने हेतु तत्पर श्रीमती आशा जैन (अध्यक्ष दिल्ली प्रदेश) की समस्त समाज ने मुक्त कण्ठ से सराहना की। समारोह में **''त्रिशला ज्योति''** नामक स्मारिका का विमोचन भी हुआ। चूँकि पूज्य माताजी उस समय आगरा में विराजमान थीं अतः उनकी आज्ञा से संघस्थ ब्र. कु. सारिका एवं स्वाति ने इस समारोह में भाग लिया एवं पूज्य माताजी के मंगल संदेश एवं आशीर्वाद का वाचन कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी ने किया।

➢केन्द्रीय कार्यकारिणी द्वारा इंदौर में आयोजित की गई राष्ट्रीय संगोष्ठी–

अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन द्वारा देवी अहिल्या विश्वविद्यालय-इंदौर, दि.जैन महिला संगठन-इंदौर, दिगम्बर जैन समाज-इंदौर, गणिनी ज्ञानमती प्राकृत शोधपीठ-हस्तिनापुर एवं तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ के सहयोग से ''भगवान महावीर-जीवन एवं दर्शन'' शीर्षक पर द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी 24-25 फरवरी 2002 को इंदौर प्रीमियर को-ऑपरेटिव बैंक लिमिटेड महारानी रोड, इंदौर के भव्य सभागृह में आयोजित की गई। संगोष्ठी के उद्घाटन एवं समापन सत्र के अतिरिक्त सम्पन्न ''भ्रूणहत्या एवं उसके दुष्प्रभाव'' ''भगवान महावीर एवं उनकी जन्मभूमि कुण्डलपुर'' ''जैन इतिहास के उपेक्षित पहलू'' तथा ''जैनधर्म की वैज्ञानिकता'' शीर्षक पर चार सत्रों में 40 वक्ताओं ने अपने आलेखों का वाचन किया, जिसमें 88 विद्वान, नेतागण सम्मिलित हुए। श्रीमती सुमन जैन की अध्यक्षता एवं सूरजमल बोबरा के महामंत्रित्व में गठित आयोजन समिति ने सम्पूर्ण कार्यक्रम की प्रभावी संयोजना की। संगोष्ठी के संयोजक एवं प्रमुख परामर्शदाता गणिनी ज्ञानमती प्राकृत शोधपीठ-इंदौर के निदेशक डॉ. अनुपम जैन-इंदौर थे।

केन्द्रीय महिला एवं बालविकास राज्यमंत्री श्रीमती सुमित्रामहाजन के

मुख्य आतिथ्य तथा न्यायमूर्ति श्री एन.के. जैन, म.प्र. उच्च न्यायालय की अध्यक्षता में सम्पन्न उद्घाटन सत्र में विशेष अतिथि के रूप में पूर्व राजदूत डॉ. एन.पी.जैन उपस्थित थे।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के आशीर्वाद सहित वहाँ पहुँची संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों कु. आस्था एवं कु. चन्द्रिका ने महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में 24 मार्च को सम्पन्न होने वाले कीर्तिस्तंभ शिलान्यास समारोह की आमंत्रण पत्रिका का विमोचन मुख्य अतिथि के हाथों कराया। साथ ही अतिथियों को कुण्डलपुर के राजकुमार भगवान महावीर का चित्र भी समर्पित किया।

मंचासीन संगोष्ठी के संरक्षक श्री दिग्विजयसिंह जैन ने गणिनी ज्ञानमती प्राकृत शोधपीठ के इंदौर केन्द्र के विकास हेतु सुदामानगर में एक भूखण्ड के दान की घोषणा की।

➢भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के संदर्भ में विभिन्न संस्थाओं द्वारा पारित प्रस्ताव–

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद के अध्यक्ष प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन, फिरोजाबाद की अध्यक्षता में महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के संदर्भ में कंपिल जी में पारित प्रस्ताव

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद की कार्यकारिणी की यह बैठक वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि स्वीकार नहीं करती क्योंकि हमारे किसी भी आगम ग्रंथ में जन्मभूमि के रूप में वैशाली का उल्लेख नहीं है। आगम ग्रंथों में जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर, कुण्डपुर (विदेह) का उल्लेख है, किन्तु विदेह की सीमाओं का वर्णन दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों में नहीं मिलता। सदियों से कुण्डलपुर (नालंदा) को जन्मभूमि के रूप में मानने की श्रद्धा जन-जन में है। इसलिए भूगोल या जैनेतर ग्रंथों की मान्यता के अनुसार जन्मभूमि के संदर्भ में कोई निर्णय लेना उचित नहीं है।

परम्परागतरूप से मान्य कल्याणक क्षेत्रों को विवादास्पद नहीं बनाना चाहिए। समाज में जन्मभूमि प्रकरण को लेकर चल रहे विसंवाद को विराम देने के लिए यही उचित है कि सदियों से जन्मभूमि के रूप में लोग जिसे मानते रहे हैं, उसे हम आदर देते रहें।

दिनाँक-9 दिसम्बर 2002

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद के रजतजयंती समारोह में पारित प्रस्ताव

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर-बिहार वर्तमान में नालंदा जिले में स्थित है, जहाँ पर पिछले 2600 वर्ष से समस्त दिगम्बर जैन अनुयायी श्रद्धा से यात्रा करके पुण्य अर्जित करते आ रहे हैं तथा सम्पूर्ण दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों एवं पूजन आदि में कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि बताई है, कहीं पर भी वैशाली को जन्मभूमि के रूप में नहीं माना गया है। वैशाली तो राजा चेटक की राजधानी एवं माता त्रिशला की जन्मभूमि है। कोई भी तीर्थंकर ननिहाल में जन्म नहीं लेते हैं, माता के आंगन में ही पन्द्रह महिनों तक रत्नों की वर्षा होती है।

अभी पिछले लगभग 45 वर्ष पूर्व से कुछ आधुनिक इतिहासकारों की सोच के आधार पर कुछ लोग वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि बनाना चाहते हैं, इस संदर्भ में **''अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद''** यह प्रस्ताव पारित करती है कि इस वर्ष सरकार एवं समाज द्वारा भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर मनाया जा रहा है अतः कुण्डलपुर, जो पिछले 2600 साल से अब तक भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में आस्था का केन्द्र बना हुआ है, उसे केवल आधुनिक सोच के आधार पर विवाद में नहीं डाला जावे। समस्त दिगम्बर जैन समाज की मान्यता के अनुसार कुण्डलपुर को ही जन्मभूमि के रूप में सरकार एवं समाज के द्वारा विकसित किया जावे। वैशाली आदि अन्य स्थानों पर भगवान महावीर की स्मृति में स्मारक बनाए जावें, लेकिन 2600 साल की जन्मभूमि की धरोहर को न खो दिया जावे।

6 जनवरी 2002

प्रस्तावक – अनिल कुमार जैन, प्रीतविहार-दिल्ली (अध्यक्ष-दिल्ली प्रदेश)
अनुमोदक – उदयभान जैन, भरतपुर (राज.) (अध्यक्ष-राजस्थान)

अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन की केन्द्रीय कार्यकारिणी की दिनाँक 24 फरवरी 2002 को इंदौर में सम्पन्न बैठक में पारित प्रस्ताव

''प्राचीन जैन पुराणों, तिलोयपण्णत्ति, धवला आदि प्राचीन ग्रंथों के अनुसार भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की वंदना कर हम स्वयं को धन्य करते रहे हैं। कोई भी तीर्थयात्री जन्मभूमि की वंदना हेतु वैशाली नहीं

जाता रहा किन्तु विगत 3-4 दशकों से कतिपय शोधकर्ताओं ने भ्रान्तिवश महावीर की ननिहाल वैशाली को जन्मभूमि बताना शुरू कर दिया, यह समाज के लिए अत्यन्त घातक एवं षड्यंत्रकारी विचार है।

अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन की यह सभा समाज एवं सरकार से अनुरोध करती है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर को ही मान्यता प्रदान करने का कष्ट करें।''

प्रस्तावक – श्रीमती उषा पाटनी (मंत्री-दि. जैन महिला संगठन, इंदौर)
समर्थक – 1. श्रीमती निर्मल जैन, दिल्ली (राष्ट्रीय अध्यक्षा), 2. श्रीमती सुमन जैन इंदौर (महामंत्री), 3. श्रीमती आशा जैन, दिल्ली, 4. श्रीमती दर्शन जैन, दिल्ली, 5. श्रीमती कांति जैन, ग्वालियर, 6. श्रीमती रमा जैन, छतरपुर, 7. श्रीमती वंदना जैन, शाहजहांपुर, 8. श्रीमती मीना विनायका, इंदौर, 9. श्रीमती उषा पाटनी, इंदौर, 10. श्रीमती प्रेमलता वेद, इंदौर, 11. श्रीमती लीला जैन, इंदौर, 12. श्रीमती तारा जैन, इंदौर, 13. श्रीमती माला बुखारिया, इंदौर।

तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ की कार्यकारिणी की इंदौर में दिनाँक 24-2-2002 को सम्पन्न बैठक में पारित प्रस्ताव

समस्त दिगम्बर जैन प्राचीन ग्रंथों में वर्णित भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है। बिहार प्रांत के अन्तर्गत नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर ही सदियों से जन-जन की आथा का केन्द्र रहा है एवं सभी दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी परम्परागतरूप से इसी जन्मभूमि कुण्डलपुर की वंदना करते रहे हैं।

महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी सरकार से अनुरोध करती है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में जैन परम्परामान्य कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) को ही मान्यता प्रदान करते हुए इसके विकास में सहयोग प्रदान करें।

प्रस्ताव – डॉ. अभयप्रकाश जैन, ग्वालियर (प्रचार मंत्री)
समर्थक – सर्वानुमति

➢ **कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में कीर्तिस्तंभ शिलान्यास समारोह –**

कुण्डलपुर तीर्थ विकास की शृंखला में प्रथम कृति के रूप में प्राचीन मंदिर में भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ के शिलान्यास का सुयोग 24 मार्च 2002, रविवार, फाल्गुन शु. 10 को आया, जब दिल्ली से लाला कमलचंद जी (कीर्तिस्तंभ निर्माणकर्ता) ट्रेन की एक बोगी द्वारा अनेक श्रद्धालुभक्तों के साथ कुण्डलपुर की पावन धरा पर पहुँचे। संघ से ब्र.रवीन्द्र जी एवं ब्र. बहनों –

कु. आस्था एवं कु. सारिका जैन ने भी पूज्य माताजी की आज्ञानुसार वहाँ जाकर उसे सानन्द सम्पन्न करवाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

समाजरत्न श्री कमलचंद जैन-खारीबावली, दिल्ली ने अपने पांचों भाइयों एवं समस्त परिवार सहित कीर्तिस्तंभ का शिलान्यास किया।

इस अवसर पर अनेक स्थानों से लोग पधारे तथा बिहार प्रान्त के पूर्व शिक्षामंत्री ने भी पधारकर पूज्य माताजी को परोक्षरूप में नमन करते हुए अपार प्रसन्नता व्यक्त की।

➢श्री कमलचंद जैन की मनोभावना–

भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में ''भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ'' का शिलान्यास करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ, यह सब पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की ही कृपाप्रसाद का फल है। पूज्य माताजी के हम भक्तों पर अनन्त उपकार हैं जिन्हें कई जन्मों तक भी चुका पाना असंभव है।

मैं तो कई वर्षों से पूज्य माताजी के कार्यकलापों को देख रहा हूँ। जहाँ तक मैंने अपनी बुद्धि से इनकी अन्तर्भावनाओं को जाना, तो मैंने महसूस किया कि इनका केवल एक ही लक्ष्य है कि किस प्रकार मैं चौबीसों तीर्थंकरों की जन्मभूमियों का उद्धार कर सकूँ और इनकी सच्चे मन से भाई गई भावना का ही प्रतिफल है कि जो कुछ भी ये अपने मन में ठान लेती हैं, वह कार्य पूर्ण निर्विघ्नता के साथ सफल होता है। पूज्य माताजी जब भी किसी तीर्थ का विकास करने की बात सोचती हैं, तो हम जैसे लोगों से पूज्य माताजी जो भी आदेश देती हैं, हम उसे यथाशक्ति पूरा करने का प्रयास करते हैं और तीर्थंकरों के चरणकमल में अपनी कुछ अर्थांजलि समर्पित करके गौरव का अनुभव करते हैं।

➢सुहाग नगरी फिरोजाबाद में हुई ज्ञानामृत वर्षा–

आगरा शहर में भारी धर्मप्रभावना करने के पश्चात् एत्मादपुर, टूण्डला आदि होते हुए 15 अप्रैल 2002 को पूज्य माताजी एवं समस्त संघ का मंगल प्रवेश सुहाग नगरी के रूप में विख्यात फिरोजाबाद के छदामी लाल जैन ट्रस्ट के दिगम्बर जैन मंदिर में हुआ।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से यहाँ विराजमान भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा का 108 कलशों से मस्तकाभिषेक हुआ। फिरोजाबाद में 15 दिवसीय प्रवास के मध्य अनेकों जिनमंदिरों के दर्शन का सुयोग प्राप्त हुआ, जिसमें यहाँ के अतिशयकारी चन्द्रप्रभु जिनमंदिर में एक 84 वर्षीय प्रेमचंद जैन ने हमें

बताया कि माताजी! चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज ने कहा था कि यह चन्द्रप्रभु भगवान बनारस की शिवपिंडी से निकले हुए हैं अतः यह 1000 वर्ष प्राचीन प्रतिमा है, उनके दर्शन करके मन अति प्रसन्न हुआ।

➢सर्वोदय शासन में वर्गोदय पनप रहा है–

जिस महावीर जयंती की पावन घड़ियों में अनेक शहरों के लोग पूज्य माताजी का संघ सानिध्य पाने को लालायित थे, वह अवसर मिला फिरोजाबाद को। वहाँ महावीर जयंती समारोह के साथ ही अगले दिन ''रइधू पुरस्कार'' के द्वारा दक्षिण भारत से पधारे जीवनदादा पाटिल (सन्मति सेवा दल के अध्यक्ष) को सम्मानित किया गया। उस कार्यक्रम में भी पूज्य माताजी का सानिध्य रहा। उस मंच पर एक वर्ग विशेष से जुड़े श्रावक का कुछ आगमविरुद्ध अनुचित व्यवहार देखकर मंचासीन प्रबुद्ध लोगों के मन में बड़ी पीड़ा हुई।

उस समय पूज्य माताजी ने अपने प्रवचन में वर्तमान परिप्रेक्ष्य में साधुवर्ग में हो रहे बिखराव को देखते हुए अत्यन्त मार्मिक शब्द कहे, जिसे उद्धृत करना मैं आवश्यक समझती हूँ– भव्यात्माओं! आज महावीर स्वामी का सर्वोदय शासन वर्गोदय में परिवर्तित हो रहा है, विभिन्न साधुओं के विभिन्न वर्ग बन गए हैं, जो समाज के लिए खतरनाक हैं अतः सर्वोदय शासन में वर्गोदय को नहीं पनपने देना चाहिए।

➢पूज्य माताजी का 47वाँ आर्यिका दीक्षा दिवस–

महापुराण में आचार्य जिनसेन स्वामी कहते हैं–

पुण्ये प्रसेदुषि नृणां किमिवास्त्यलङ्घ्यम्?

अर्थात् पुण्य के प्रसाद से मनुष्यों को सब कुछ प्राप्त हो सकता है। शायद यही कारण था कि फिरोजाबाद की जनता को एक के बाद एक सुअवसर प्राप्त हो रहे थे, इसी क्रम में उन्हें पूज्य माताजी का 47वाँ आर्यिका दीक्षा जयंती महोत्सव मनाने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ।

वैशाख कृष्णा दूज की इस दीक्षा तिथि पर आयोजित 47वें आर्यिका दीक्षा दिवस समारोह में पूज्य माताजी को फिरोजाबाद दिगम्बर जैन समाज द्वारा ''युगनायिका'' की उपाधि से अलंकृत किया गया।

आयोजित विनयांजलि सभा में डॉ. विमला जैन, डॉ. रश्मि जैन, एडवोकेट अनूप चंद जैन, श्री भागचंद जैन, श्री कांतिचंद-फिरोजाबाद, पण्डित सुधर्मचंद शास्त्री-जबलपुर, श्री अनिल जैन (कमल मंदिर), लाला महावीर प्रसाद जैन संघपति-दिल्ली आदि महानुभावों ने अपनी विनम्र विनयांजलि पूज्य माताजी

के चरणों में अर्पित की। प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि मात्र सरकार से करोड़ों रुपया पाने के लालच में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर को उपेक्षित कर कतिपय नेताओं द्वारा पाश्चात्य एवं स्वदेशी विद्वानों– जैकोबी, योगेन्द्र मिश्र आदि के समर्थन से वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि सिद्ध किया जा रहा है, ऐसे समय में पूज्य माताजी ने समस्त समाज को जागृत करके महान उपकार किया है। **पूज्य माताजी का कुण्डलपुर की ओर विहार ही सबसे बड़ा प्रमाण है कि कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है, जो भी इस ऐतिहासिक तथ्य को बदलना चाहते हैं, उन्हें इतिहास कभी माफ नहीं करेगा।**

➢ओजस्वी एवं विद्वत्तापूर्ण वक्तव्यों ने कुण्डलपुर की सत्यता को उजागर किया–

महापुराण ग्रंथ में आचार्य जिनसेन स्वामी ने आठवें सर्ग में कहा है कि–

''तदेव ननु पाण्डित्यं यत्संसारात् समुद्धरेत्''

अर्थात् पाण्डित्य वही है, जो संसार से उद्धार कर दे। विद्वानों की उस श्रृंखला में अनेक ऐसे विद्वान हुए हैं, जिन्होंने निष्पक्ष रूप से सदैव धर्म का डंका बजाते हुए जिनधर्म की पताका को समुन्नत किया है और जिनवाणी माता की भक्ति तथा गुरुभक्ति का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए इस संसार में यश-कीर्ति प्राप्त करने के साथ अपनी आत्मा का भी कल्याण किया है, उसी श्रृंखला में वर्तमान समय में विद्वानों के शिरमौर पण्डितप्रवर प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी हैं, जिनकी ओजस्वी एवं विद्वत्तापूर्ण वाणी दिग्भ्रमित मानव को सद्राह दिखाने में और मन शुद्ध करने में सफल माध्यम बनती है। कम शब्दों में यथार्थ वाणी का प्रतिपादन करने वाले प्राचार्य जी ने समय-समय पर आकर पूज्य माताजी से विस्तृत एवं गहराई से चर्चा कर और मेरे द्वारा एकत्रित आगम प्रमाण देखकर जब भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की यथार्थता को जाना और उसे अपने अन्तर्हृदय में उतारा, तो उनके द्वारा समय-समय पर दिये गये वक्तव्यों ने जन-जन के अन्तस् को कुण्डलपुरमय करते हुए उनके रोम-रोम को झंकृत कर दिया और उन्होंने इस समसामयिक एवं आगमोक्त भगवान महावीर जन्मभूमि में सहभागी बनकर स्वयं भी महान पुण्य का संचय कर लिया।

उन्होंने कहा कि माताजी केवल तीर्थ विकास करने नहीं जा रही हैं, अपितु एक इतिहास का निर्माण करने जा रही हैं। उन्हें किसी के अवलम्बन की आवश्यकता नहीं है।

➢तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास जैन अस्मिता की रक्षा है–

आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी ने कहा है–

इक्षोर्विकाररसपृक्तगुणेन लोके, पिष्टोधिकं मधुरता-मुपयाति यद्वत्।।
तद्वच्च पुण्यपुरुषैरुषितानि नित्यं, स्थानानि तानि जगता-मिह पावनानि।।

अर्थात् जिस प्रकार शक्कर-चीनी के मिश्रण से आटा मीठा-सुस्वादु हो जाता है, उसी प्रकार पुण्यात्मा महापुरुष की चरण रज से यह धरती भी पवित्र तीर्थ का स्वरूप प्राप्त करती है। तीन लोक के अग्रभाग पर सिद्धशिला के ऊपर अनन्तानन्त सिद्ध परमात्मा विराजमान हैं, उन सभी सिद्धों को तथा सिद्धपद के प्राप्तिस्थल समस्त तीर्थों को मेरा बारम्बार नमस्कार है।

ऐसे तीर्थों को जैनाचार्यों ने तीन भेदों में विभक्त किया है– 1. तीर्थक्षेत्र 2. सिद्धक्षेत्र 3. अतिशय क्षेत्र। तीर्थंकर भगवन्त, सामान्य केवली तथा विशिष्ट आचार्य एवं मुनियों के गर्भ-जन्म-तप-ज्ञानकल्याणक अथवा उनके मंगल विहारों से पावन स्थल तीर्थक्षेत्र कहलाते हैं, जहाँ से भगवन्तों ने मोक्ष प्राप्त किया, उन्हें सिद्धक्षेत्र या निर्वाणक्षेत्र कहते हैं और विशेष इतिहास या चमत्कारों से संबंधित भूमियाँ अतिशय क्षेत्र के रूप में मानी जाती हैं।

इन पवित्र भूमियों की श्रृंखला में भारत की धरती पर अहिंसा के अवतार माने जाने वाले जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर की वह जन्मभूमि, जहाँ 2600 वर्ष पूर्व देवोपुनीत असंख्य वैभव था, रत्नों के भण्डार भरे थे एवं इन्द्रों से भी पूज्य महाराजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला के सुख की तुलना संसार का कोई प्राणी नहीं कर सकता था, वह कुण्डलपुर पिछली शताब्दियों के परतन्त्रकालीन युग में अत्यन्त अल्प सीमा में सिमट कर रह गया पुनः जैन समाज ने कुछ अतिशय-चमत्कारों की ओर अधिक आकर्षित हो जाने के कारण अपने शाश्वत एवं महत्वपूर्ण तीर्थों को उपेक्षित कर दिया। यही कारण रहा कि अयोध्या एवं सम्मेदशिखर जैसे अनादिकालीन तीर्थ तथा वर्तमानकालीन अन्य तीर्थंकरों की जन्मभूमियाँ कुण्डलपुर, सिंहपुरी, चन्द्रपुरी, काकन्दी, मिथिला, भद्दिलपुर आदि तीर्थ भी उपेक्षा के क्रम में आ गए और आज वे अपने सौभाग्य को पुनः प्राप्त करने के इंतजार में हैं किन्तु वास्तव में देखा जाए, तो तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास जैन अस्मिता की रक्षा है। यदि हम और आप सभी मिलकर प्राथमिक तौर पर इन तीर्थंकर जन्मभूमियों के जीर्णोद्धार एवं विकास में संलग्न हो जावें, तो वह दिन दूर नहीं, जब हम स्वयं अपनी आँखों से उनका वास्तविक विकसित रूप देख सकेंगे।

➢यादव जी को मिला आशीर्वाद–

आगरा, फिरोजाबाद के सुखद प्रवास के पश्चात् हम लोग शिकोहाबाद पहुँचे, जहाँ 4-4 जिनमंदिरों के दर्शन कर मन प्रसन्न हो उठा। प्रातःकालीन सभा में नगर के विधायक श्री हरिओम् यादव पधारे और अपने भाषण में पूज्य माताजी के प्रति सुन्दर उद्गार प्रस्तुत करते हुए कहने लगे कि माताजी! मैंने यहाँ के सभी कत्लखाने अपने कार्यकाल में बंद करवाए हैं और मैं पूर्णरूपेण शाकाहारी हूँ। तब माताजी बड़ी खुश हुईं और उन्हें खूब उन्नति का आशीर्वाद दिया।

➢शौरीपुर की चरण रज को छुआ–

जिनशासन के वर्तमानकालीन 24 तीर्थंकरों में 22वें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ के वैराग्य की गाथा एवं उनके तीन कल्याणक से पवित्र गिरनार सिद्धक्षेत्र आज प्रत्येक जनमानस की चर्चा के विषय हैं। उन नेमि तीर्थंकर के साथ वह राजुल सती भी धन्य हो गईं, जिन्होंने नेमिप्रभु के विवाह के वक्त वैरागी हो जाने पर स्वयं भी उनके पादमूल में आर्यिका दीक्षा लेकर अपना नाम अमर कर लिया और सिद्धपद की अनुगामिनी हो गई थीं। उन नेमि जिनेश्वर ने जिस पवित्र भू पर जन्म लिया, जहाँ अपनी शैशवावस्था, कुमारावस्था बिताई, उसके बारे में कतिपय लोग ही जानते हैं, जो जैन समाज के लिए चिन्तन का विषय है।

3 मई 2002 को उस पवित्र धरा की धूलि को मस्तक पर चढ़ाकर उन प्रभुवर को नमन करने का सौभाग्य पूज्य माताजी के कुण्डलपुर विहार के मध्य हम सभी को प्राप्त हुआ। यहाँ पास में बटेश्वर में रुकने की अच्छी व्यवस्था है, जिनमंदिर में नेमिनाथ भगवान की मनोज्ञ, प्राचीन प्रतिमा विराजमान है परन्तु उससे 2 किमी. दूर शौरीपुर, जो वास्तविक जन्मभूमि है, अत्यन्त उपेक्षित है और वहाँ लोग जाने से भी डरते हैं। जब पूज्य माताजी ने वहाँ जाने की बात कही, तो तीर्थ के पदाधिकारियों एवं शिरसागंज व आसपास से पधारे दर्शनार्थियों ने कहा कि–माताजी! आप कल ही शौरीपुर जाना और दर्शन करके वापस आकर यहीं ठहरना किन्तु माताजी ने कहा कि मैं एक दिन अपने असली तीर्थ पर अवश्य रुकूँगी। सो शाम को विहार कर रात्रि विश्राम वहीं किया। चूँकि 50 वर्षों में कोई साधु इस शौरीपुर तीर्थ पर नहीं रुका था और पूज्य माताजी संघ की छोटी-छोटी सुकुमार बालिकाओं को लेकर निर्भयमना इस तीर्थ पर रुकी थीं अतः अज्ञात भय के कारण यहाँ कमेटी के लोगों ने पुलिस चौकी से दो बंदूकधारी सिपाही बुलाकर पहरे पर तैनात कर दिए लेकिन पूज्य माताजी का यही कहना रहा कि भइया! अपन साधु हैं और साधु

को किसी उपसर्ग, भय अथवा मृत्यु का डर व चिंता नहीं रहती।

वैसे क्षेत्र सुंदर होने के साथ साफ-सुथरा है किन्तु बटेश्वर से शौरीपुर आने का रास्ता बड़ा सुनसान व निर्जन है। 4 मई को पूज्य माताजी ने प्रातः 5 बजे तीर्थ के मंदिर जी में जाकर सामायिक व ध्यान किया, दोनों मंदिर के दर्शन कर अभिषेक देखा तथा वरुआमठ के बड़े मंदिर वाले खड्गासन नेमिनाथ बाबा का 108 कलशों से अभिषेक कराया। यहाँ की प्रतिमा की प्रशस्ति में 50 वर्ष पूर्व के गणतंत्र शासन एवं राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद जी व प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का नाम भी अंकित है। प्रतिमा के आजू-बाजू में सुन्दर यक्ष-यक्षी हैं। आगरा से आए क्षेत्र के पदाधिकारी श्री स्वरूपचंद जैन मार्शन्स (अध्यक्ष), श्री मनोहरलाल जी, श्री निर्मल जैन आदि ने क्षेत्र की प्रगति के लिए पूज्य माताजी से काफी विस्तृत चर्चा की।

➢भयंकर लू के थपेड़े भी सहन किये–

जसवन्तनगर से इटावा की ओर जब संघ का प्रस्थान हुआ, तो भयंकर गर्मी पड़ रही थी। वहाँ उस समय 48 डिग्री तापमान चल रहा था। आगे-पीछे, ऊपर-नीचे चारों ओर से चल रहे भयंकर लू के थपेड़ों के कारण पदविहार करना अत्यन्त कठिन प्रतीत हो रहा था और साथ चलने वाले लोग बार-बार यही कह रहे थे कि माताजी! इतनी भयंकर गर्मी में आप किस प्रकार नंगे पैर चल रही हैं, हम तो पैरों में चप्पल-जूते पहने हैं, फिर भी हमारे लिए चलना मुश्किल है। सचमुच जैनी दीक्षा तलवार की धार पर चलने के समान है। माताजी! इतनी गर्मी में तो आप कहीं एक जगह विश्राम करें।

परन्तु साधु के लिए क्या गर्मी, क्या सर्दी? उन्होंने तो इन सभी परीषहों को सहन करने के लिए ही दीक्षा ली है अतः मन में भगवान महावीर की भक्ति को संजोए हम अपने पथ पर बढ़ते रहे। उस समय संघ की ब्रह्मचारिणी बहनों के भी स्वास्थ्य काफी गड़बड़ हुए। इटावा में भी प्रवेश के समय हवा बंद होने के कारण चलने में बहुत कठिनाई हुई और उसमें भी लगभग 2 किमी. का जुलूस था। 15 मई को इटावा में ही अक्षय तृतीया पर्व का विशेष कार्यक्रम रखा गया और पूरे नगरवासियों ने भगवान को इक्षुरस का आहार दिया पुनः सभी को प्रसाद वितरित किया गया। 17 मई को इटावा के छिपैटी मंदिर में वेदी प्रतिष्ठा का कार्यक्रम उत्साहपूर्वक सम्पन्न हुआ।

➢पूज्य माताजी का नागरिक अभिनंदन–

इटावा नगरी में 18 मई को खुशियों का माहौल था क्योंकि आज वहाँ के

नागरिक माताजी का अभिनंदन करना चाहते थे। प्रातःकालीन भव्य सभा का आयोजन उन्होंने मंदिर परिसर के ही भव्य प्रांगण में किया था। उसमें अनेक गणमान्य महानुभावों ने पूज्य माताजी के प्रति अपने सुन्दर विचार प्रस्तुत किए और जन्मभूमि कुण्डलपुर विकास की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। लेकिन भीषण गर्मी के कारण माताजी वहाँ इतनी अस्वस्थ हो गईं कि वे कमरे से बाहर पाण्डाल में भी न आ सकीं। पुनः पूरी सभा मेरे एवं क्षुल्लक मोतीसागर जी के सानिध्य में चली और सम्पूर्ण जैन समाज इटावा की ओर से पूज्य माताजी का अभिनंदन करके प्रशस्ति पत्र भेंट किया गया, उस समय भी माताजी ने यही वाक्य दोहराए कि भाई! मैंने जो कदम बढ़ाए हैं अथवा जो मैं तीर्थंकर जन्मभूमि का विकास करवा रही हूँ, वह अपनी प्रभावना अथवा अपने अभिनंदन के लिए नहीं, अपितु तीर्थ एवं तीर्थंकर भगवन्तों की प्रभावना हेतु निकली हूँ, मेरे लिए तो मेरा सब कुछ मेरी आर्यिका पदवी ही है। माताजी की एकदम निढाल अवस्था देखकर इटावा वाले माताजी को 2-4 दिन वहीं रोकने के लिए अत्यर्थ निवेदन कर रहे थे किन्तु माताजी अगले दिन प्रातः विहार करके जब आगे खुले स्कूल में आकर ठहरीं, तो उनका स्वास्थ्य कुछ ठीक हो गया। शहर के प्रदूषण एवं गर्मी से उन्हें गर्मी में प्रायः तकलीफ हो जाया करती है। इसीलिए देखा है कि गर्मी का विहार इनके लिए अति हानिकारक रहता है।

➢बदलते मौसम से बढ़ गई विहार की गति–

पिछले दिनों की पड़ी भयंकर गर्मी को देखकर एक बार तो यही लगा कि शायद विहार की गति मंद पड़ जाएगी और हम लोग नियत समय पर प्रयाग तीर्थ पर नहीं पहुँच सकते हैं परन्तु हमें निश्चित रूप से मौसम को धन्यवाद देना पड़ेगा कि 28 मई की रात्रि में 2 बजे अत्यधिक आंधी और बारिश के कारण सुबह मौसम बेहद सुहावना रहा और हम लोगों को जिस स्थान घाटमपुर में रुकना था, उसे छोड़कर आगे जाकर रुके और चूँकि वहाँ 2-3 जैन घर हैं अतः घाटमपुर के स्त्री-पुरुषों ने वहीं परासगांव के विद्यालय में आकर प्रवचन का लाभ लिया।

मौसम अच्छा हो जाने के कारण आगे विहार का कार्यक्रम कुछ द्रुतगति से बनने लगा और हमें ऐसा लगा कि हम जल्दी ही प्रयाग-इलाहाबाद पहुँच जायेंगे।

➢सैनी ग्राम में हुआ दो संघों का मिलन–

पदविहार करने वाले साधु का परस्पर मिलन बड़ी ही दुर्लभता से संभव

हो पाता है, क्योंकि दिगम्बर जैन साधु की आगमचर्या बड़ी ही दुरूह है और जब भी उनका परस्पर मिलन होता है, विशेष आल्हाद के साथ-साथ कुछ न कुछ अविस्मरणीय विशेष उपलब्धियाँ हो ही जाती हैं, यही बात सैनी ग्राम में हुई, जब परमपूज्य वात्सल्य रत्नाकर स्व. आचार्य श्री विमलसागर महाराज के शिष्य आचार्य श्री भरतसागर महाराज एवं पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के संघ का परस्पर मिलन 7 जून 2002 को सैनी के गुरुकुल में हुआ। चूँकि हमें पूर्व में सूचना प्राप्त हो गई थी अतः वहाँ 4 दिवसीय प्रवास रहा। आचार्य श्री से मिलने के लिए माताजी ने यहीं रुकने का निर्णय लिया। यहाँ गुरुकुल के व्यवस्थापक का व्यवहार बहुत ही अच्छा था, उन्होंने संघस्थ बहनों के एक बार कहने पर ही कई कमरे खाली करके अनजाने में ही वसतिका दान देकर महान पुण्य का संचय कर लिया।

उनके संघ में आचार्यश्री सहित 4 मुनि, 3 आर्यिकाएँ और दो क्षुल्लिका माताएँ, इस प्रकार 8 साधु थे। चूँकि आचार्य श्री भरतसागर महाराज की 7 माह से आवाज बंद हो गई थी अतः संघ में बड़ा मायूस वातावरण था, पूज्य माताजी ने प्रातः ही संघ के साथ 1 घंटा तक वार्ता की और आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी के आग्रह पर आचार्यश्री के स्वास्थ्य के लिए मंत्र भी दिया, जिसे सभी ने करने का संकल्प किया, और अब वर्तमान में यह जानकर बड़ी ही प्रसन्नता होती है कि आचार्यश्री की आवाज वापस आ गई है। 8 जून को प्रातः 5 बजे दोनों संघों का मंगल विहार अलग-अलग दिशा में हो गया, यह संघ का पारस्परिक मिलन बड़ा ही सुखद रहा।

➢44वें वर्ष की पूर्णता पर वात्सल्यपूर्ण आशीष मिला–

सन् 1958 की ज्येष्ठ वदी अमावस्या की तिथि में मुझे भी माता मोहिनी की पवित्र कुक्षि से 12वीं संतान के रूप में जन्म लेकर बीसवीं शताब्दी की महान साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की छोटी बहन होने का गौरव प्राप्त हुआ था पुनः 13 वर्ष की लघुवय में अजमेर नगरी में माताजी से ब्रह्मचर्य व्रत लेने के पश्चात् मुझे सदैव गुरू की छत्रछाया मिली, जिसने मेरे अंधियारे जीवन (अमावस्या के जन्म) को शरदपूर्णिमा की चांदनी से परिपूर्ण कर उसे आलोकित कर दिया और 13 अगस्त 1989 को मुझे नारी जीवन का सर्वोत्कृष्ट पद आर्यिका दीक्षा की प्राप्ति हुई, जिससे मुझे मुक्ति पथ का रास्ता सहज ही मिल गया तथा मेरे प्रत्येक जन्मदिवस व दीक्षादिवस पर माताजी जैसी वात्सल्यमयी देवीस्वरूपा माता का वात्सल्यपूर्ण आशीर्वाद मिला, उसी

क्रम में 10 जून 2002 ज्येष्ठ वदी अमावस्या को जब हम इलाहाबाद से 17 किमी. दूर सुलेमसराय नामक स्थान पर थे, तब मुझे मेरे कायिक जन्मदिवस की 45वीं वर्षगांठ पर माताजी का वात्सल्यपूर्ण एवं चारित्रवृद्धि का स्नेहिल आशीर्वाद प्राप्त हुआ जो कि संसार की सभी निधियों से बढ़कर था। वास्तव में गुरु की कृपादृष्टि मानव को संसार समुद्र से पार कराने में सहकारी कारण बनती है, जिसके बारे में आचार्यदेव ने कहा है–

गुरुभक्ति संजमेण य तरंति संसार सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठकम्मं जम्मं मरणं ण पावेंति।।

➢इलाहाबाद शहर में संघ का मंगल पदार्पण–

11 जून 2002 को पूज्य माताजी ने संघ सहित एक बार पुनः इलाहाबाद नगरी में मंगल प्रवेश किया था। यह सूक्ति लोक व्यवहार में बड़ी प्रसिद्ध है– **बिन मांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख।''** अथवा यो कहें कि कभी-कभी अनायास ही व्यक्ति को ऐसी अनमोल वस्तु मिल जाती है जिसकी उसने कल्पना भी न की हो और शायद यही इलाहाबादवासियों के साथ हो रहा था। क्योंकि एक बार पुनः पूज्य माताजी के दर्शनों का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हो रहा था। यहाँ बैण्ड-बाजे के साथ सारे समाज के लोग भव्य स्वागत हेतु उमड़ पड़े थे। एकदिवसीय प्रवास नई धर्मशाला में रहा। पिछले वर्ष इस नई धर्मशाला का उद्घाटन पूज्य माताजी के सानिध्य में विश्वशांति महावीर विधानपूर्वक हुआ था और उस समय मैंने वहाँ के कार्यकर्ताओं को प्रेरणा दी थी कि आप लोग इस भवन का नाम **''महावीर जयंती भवन''** रखें, सो वहाँ देखा कि भवन के आगे **''महावीर जयंती भवन''** का उद्घाटन पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में 6 अप्रैल 2001 को हुआ'' इस मैटर का शिलालेख लगा था। जिसे देखकर मन में खुशी हुई क्योंकि माताजी की इस भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महामहोत्सव के अन्तर्गत प्रत्येक जैन श्रावक के लिए यही प्रेरणा रही है कि आप सब अपने शहर में नूतन जिनमंदिर, धर्मशाला आदि के निर्माण कराते समय ''भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत'' अवश्य लिखें तथा धर्मशाला आदि का नामकरण भगवान महावीर के नाम पर करें।

➢कुण्डलपुर की यात्रा ने ऋषभदेव दीक्षास्थली के दर्शन कराये–

पदविहार करने वाले साधु के लिए एक बार किसी तीर्थ से निकलने के बाद वापस पुनः आना कोई निश्चित नहीं होता है, यह एक सुखद और

अनहोना संयोग ही था कि कुण्डलपुर की ओर हो रहे विहार के कारण एक बार पुनः हमें दीक्षास्थली तीर्थ के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हो गया और उस क्षण की स्मृति हो आई, जब इस तीर्थ को छोड़ते समय अत्यन्त विह्वलता के कारण मेरी आँखों में अश्रु आ गए थे, उस समय मैंने भगवान ऋषभदेव की चरण वंदना करते हुए यही भावना निवेदित की थी–

''यह प्रार्थना है मेरी, श्री ऋषभ प्रभु जी तुमसे।
इक बार फिर बुलाना अपनी तपस्थली पे।''

शायद मेरी उस सच्ची भावना को, उस प्रार्थना को पूर्ण होने में मात्र 1 वर्ष का ही समय लगा और एक वर्ष के बाद ही पुनः न सिर्फ दिल्ली से मंगल विहार के पश्चात् 113 दिनों में तीर्थ पर आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ अपितु सन् 2002 के चातुर्मास का योग भी यहीं आ गया। मन के उस आल्हाद को शब्दों के माध्यम से प्रकट करने में मैं असमर्थता महसूस कर रही हूँ।

➢माताजी के द्वारा प्रदत्त मंत्रों में अद्भुत शक्ति है–

14 जून की बात है, प्रातः 7 बजे माताजी दर्शन-वंदन करके अभिषेक देखकर त्यागी भवन में बैठी थीं, तभी लगभग 8 बजे ब्र. रवीन्द्र जी ने आकर बताया कि ब्र. प्रभा पाटनी का (मालवा से) फोन आया है कि आज प्रातः 3 बजे से आचार्यश्री भरतसागर महाराज पता नहीं कहाँ चले गए हैं अतः संघ में सभी लोग बहुत परेशान हैं, आप कृपया पूज्य माताजी से पूछकर बताएँ कि हम लोग क्या करें? महाराज जी कहाँ मिलेंगे? सुबह से हम सभी चारों ओर ढूंढते-ढूंढते परेशान हैं। रवीन्द्र जी के कहने पर माताजी ने मंत्र बताते हुए कहलाया कि आप लोग चिन्ता न करें, महाराज जी सुरक्षित हैं, थोड़ी देर में आ जाएंगे। उसके बाद भी लगातार कई फोन आ जाने से हम लोगों को भी थोड़ी चिंता हुई पुनः थोड़ी देर बाद फोन आया कि इधर स्याद्वादमती माताजी एवं संघ के साधुओं ने जाप्य शुरू की थी, उधर आधा किमी.दूर गांव में ही एक पुलिया के नीचे महाराज जी बैठे थे, वह अपने आप उठकर बाहर आ गए और हम लोग उन्हें संघ में ले आए हैं, अब हम आहार की व्यवस्था कर रहे हैं, यह सुनकर सभी को संतोष हुआ। उन दिनों आचार्यश्री अस्वस्थता के कारण मानसिक रूप से कुछ परेशान थे।

वस्तुतः दीर्घतपस्विनी माताजी के मंत्रों के ऐसे चमत्कार हमने एक नहीं अनेकों बार देखे हैं।

➢ग्रंथों का जन्मदाता है श्रुतपंचमी पर्व–

आज से लगभग 200 वर्ष पूर्व जब धरती पर अंगज्ञान लुप्तप्राय हो रहा

था, उस समय गिरनार पर्वत पर विराजमान धरसेनाचार्य ने श्रुत रक्षा की चिंता होने पर महिमा नामक नगरी में होने वाले विशाल साधु सम्मेलन से पत्र द्वारा दो योग्य महामुनियों को अपने पास बुलाकर उनकी परीक्षा लेकर अंगज्ञान प्रदान किया और परीक्षा में विजय प्राप्त करने के कारण उनका पुष्पदंत-भूतबलि नाम पड़ा। इन्हीं पुष्पदंत-भूतबलि आचार्य ने गुरु द्वारा प्रदत्त उस ज्ञान से षट्खण्डागम नामक महान सिद्धान्त ग्रंथ की रचना की और जिस दिन वह ग्रंथ अंकलेश्वर-गुजरात में पूर्ण हुआ, वह तिथि ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी थी, जो श्रुतज्ञान की रचना के पूर्ण होने पर श्रुतपंचमी कहलाई। ऐसे महान दिवस को प्रतिवर्ष माताजी के संघ सानिध्य में विशेष रूप से मनाया जाता है, हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी 15 जून 2002 को प्रयाग तीर्थ पर उसे प्रभावनापूर्वक मनाया गया।

श्रुतपंचमी पर्व का संघ में एक विशेष महत्त्व और भी है कि जन-जन में भाई जी के नाम से मशहूर एवं कर्मयोगी की उपाधि से अलंकृत, युवाओं के आदर्श, अपनी शांत एवं मधुर मुस्कान से सभी को जीतने वाले और अनेक संस्थाओं को सुचारू रूप से संचालित करने वाले संघस्थ ब्र.रवीन्द्र जी ने इसी श्रुतपंचमी पर्व के दिन सन् 1950 में माता मोहिनी से जन्म लेकर अपने अंदर उस श्रुतज्ञान को समाहित कर लिया और माताजी के सुयोग्य शिष्य के रूप में अपनी प्रतिभा का चहुँमुखी विकास कर जिनधर्म प्रभावना का महान कार्य किया है। आज के दिन उनके जन्मदिवस पर उन्हें पूज्य माताजी एवं संघस्थ सभी साधुओं का शुभाशीर्वाद प्राप्त हुआ और अनेक लोगों ने उनका स्वागत किया।

➢भव्य कैलाशपर्वत पर 72 प्रतिमाएँ विराजमान हुईं–

पूज्य माताजी की प्रेरणा से ''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली'' प्रयाग दिगम्बर जैन तीर्थ के नाम से एक ही वर्ष में प्रसिद्ध हो जाने वाले इस तीर्थ पर दीक्षाकल्याणक तपोवन में धातु के वटवृक्ष के नीचे महामुनि ऋषभदेव की पिच्छी-कमण्डलु सहित खड्गासन प्रतिमा, केवलज्ञान कल्याणक समवसरण, निर्वाणकल्याणक कैलाशपर्वत एवं भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ इत्यादि रचनाएँ इस प्राचीनतम तीर्थ ''प्रयाग'' में भगवान ऋषभदेव के स्वर्णिम इतिहास की गाथा प्रत्यक्ष उच्चारित कर रहे हैं।

24 जून 2002, ज्येष्ठ शु. पूर्णिमा को पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में भारतवर्ष में प्रथम बार निर्मित सुन्दर कैलाशपर्वत का उद्घाटन एवं लोकार्पण समारोह आयोजित किया गया। ऋषभदेव दीक्षास्थली तीर्थ पर 108 फुट

लम्बे, 72 फुट चौड़े एवं 51 फुट ऊँचे कैलाशपर्वत की अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक रचना का निर्माण मात्र एक वर्ष की अल्प अवधि में किया गया। पानी के झरनों, फव्वारों एवं प्राकृतिक सौन्दर्य से समन्वित इस कैलाशपर्वत पर 72 जिनमंदिर स्थापित किए गए, जो सम्राट भरत चक्रवर्ती द्वारा वास्तविक कैलाशपर्वत पर विराजमान 72 जिनचैत्यालयों की याद दिलाते हैं। भूत, भविष्यत् एवं वर्तमानकाल की तीन चौबीसी की 72 जिनप्रतिमाओं को कैलाशपर्वत पर निर्माण का सौजन्य प्रदान करने वाली स्व. श्रीमती सुलोचना जैन ध.प. श्री चेतनलाल जैन के सुपुत्र श्री सत्येन्द्र कुमार जैन, प्रीतविहार-दिल्ली ने अपने विशाल परिकर के साथ प्रातः 9.30 बजे पर्वत पर स्थापित जिनचैत्यालयों में तीर्थंकर भगवन्तों की प्रतिमाओं को विराजमान किया, साथ ही राजधानी दिल्ली, महाराष्ट्र, म.प्र., उ.प्र., अवध प्रान्त इत्यादि सभी अंचलों के श्रावकों ने भी प्रतिमाएं विराजमान करने का पुण्य प्राप्त किया। इसके साथ ही अनिल कुमार जैन, कमल मंदिर, प्रीतविहार-दिल्ली के सौजन्य से निर्मित 31 फुट ऊँचे ''भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ'' में भी 8 प्रतिमाएँ विराजमान की गईं। इस अवसर पर सतेन्द्र कुमार जी को 'दानवीर' की उपाधि से अलंकृत करते हुए रजत प्रशस्ति भेंट की गई।

➢श्री वीरेन्द्र हेगड़े ने तीर्थ को नमन कर जीवन धन्य किया–

जब से पूज्य माताजी का प्रयाग तीर्थ पर आगमन हुआ, तब से किसी न किसी स्थान से अनेक धर्मावलम्बियों के तीर्थ पर पधारने तथा अनेक स्थानों से लोगों का वहाँ आकर लघु एवं वृहत् विधानों को करने का क्रम जारी था। इसी क्रम में कर्नाटक के धर्मस्थल से श्री वीरेन्द्र जैन-हेगड़े अपनी धर्मपत्नी एवं माँ के साथ पधारे तथा तीर्थ और पूज्य माताजी के दर्शन करके अतीव प्रसन्न हुए। साथ ही उन्होंने पूज्य माताजी से विस्तृत चर्चा भी की। हेगड़े जी की माता भी यहाँ आकर बहुत प्रसन्न थीं। उन्होंने पूज्य माताजी द्वारा लिखित कन्नड़ की बारह भावना कण्ठस्थ कर रखी थी, उसे भी उन्होंने बड़ी भक्तिपूर्वक सुनाया और इस तीर्थ पर पूज्य माताजी कृत समसामयिक कार्यों की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

➢वर्षायोग स्थापना में कलश स्थापना की परम्परा कब से चली?–

इलाहाबाद-बनारस हाइवे पर स्थित इस प्रथम दिगम्बर जैन तीर्थ पर परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी एवं हम सभी को मंगल चातुर्मास स्थापित करने का सुयोग 23 जुलाई 2002 को प्राप्त हुआ।

पूज्य माताजी का वर्षायोग स्थापना के बारे में सदैव यही कहना रहा है

कि मुझे **''वर्षायोग स्थापना''** के दिन मंगल कलश स्थापना करना इष्ट नहीं है और मैं जानना चाहती हूँ कि यह परम्परा कब, कैसे एवं किसके द्वारा प्रारंभ की गई तथा अनेक साधुसंघ उसका अनुकरण क्यों करने लग गये?

उनका कहना है कि मैंने बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज, उनके प्रथम शिष्य एवं प्रथम पट्टाचार्य गुरुवर्य श्री वीरसागर जी महाराज, आचार्य श्री शिवसागर महाराज एवं आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज के संघ सानिध्य में वर्षायोग-चातुर्मास स्थापना देखी है एवं उनके साथ स्थापना की है। इनमें से किन्हीं भी आचार्यों ने एवं आचार्य देशभूषण जी आदि आचार्यों ने चातुर्मास स्थापना के समय मंगल कलश स्थापित नहीं कराया था। यह चिन्तनीय है कि यह परम्परा 15-20 वर्षों में कब और कैसे चली? माताजी तो यह सुनकर ही आश्चर्यचकित हो उठती हैं कि कोई साधु एक मंगल कलश स्थापना करते हैं तो कोई-कोई तीन, सात, नौ, इक्कीस तथा कोई साधु एक सौ आठ मंगल कलश भी स्थापित करने लगे हैं और उनकी ऊंची-ऊंची बोलियों से ही साधुओं की महानता को आंका जाने लगा है। सबसे अधिक आश्चर्य एक स्थान पर दिखा, जब एक गांव के मंदिर में एक कांचकेस में मंगल कलश रखा था। चातुर्मास के बाद साधु वहाँ से विहार कर चुके थे, फिर भी प्रतिदिन लोग भगवान के दर्शन के बाद उस कलश के आगे चावल चढ़ाकर घुटने टेककर पंचांग नमस्कार कर रहे थे। तब उन श्रावक से माताजी ने पूछा–ऐसा क्यों कर रहे हो? तब उसने कहा–मुझे गुरुदेव की आज्ञा है इत्यादि.....वर्तमान में पोस्टर एवं कुंकुम पत्रिका में भी ''चातुर्मास स्थापना समारोह'' या ''वर्षायोग स्थापना समारोह'' न छपाकर ''मंगल कलश स्थापना समारोह'' छपने लगा है। यह ''मंगल कलश स्थापना'' न तो कहीं आचारसार, मूलाचार, भगवती आराधना आदि मुनियों के आचार ग्रंथों में है और न कहीं उमास्वामी श्रावकाचार, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, वसुनंदि श्रावकाचार, सागार धर्मामृत आदि श्रावकाचार ग्रंथों में ही है।

➢मोक्ष सप्तमी के दिन कुण्डलपुर में नई जमीन की रजिस्ट्री हुई–

4 अगस्त 2002 को ब्र. रवीन्द्र जी पूज्य माताजी का मंगलमय आशीर्वाद लेकर कुण्डलपुर-नालंदा (बिहार) में भूमि क्रय हेतु कई पदाधिकारियों के साथ गए थे, 6 अगस्त को वहाँ से ब्र. रवीन्द्र जी का फोन आया कि वहाँ जमीन की रजिस्ट्री हेतु लिखा-पढ़ी शुरू हो गई है। यह सुनकर पूज्य माताजी एवं हम सभी को बड़ा आल्हाद हुआ कि आज श्रावण कृष्णा त्रयोदशी-मंगलवार के दिन

जमीन के कार्य का आरंभ हुआ है, उस समय माताजी के मुख से सहसा निकल पड़ा कि यहाँ सभी लोग खूब मंत्र जाप्य करो, निश्चित ही मंगलत्रयोदशी के दिन आरंभ हुआ कुण्डलपुर का निर्माण खूब विश्वव्यापी होगा। पुनः दुबारा जाने पर 14 अगस्त (श्रावण शु. सप्तमी) को जमीन की पूरी रजिस्ट्री हो गई, यह सुनकर प्रयाग में हम सभी खुशी से झूम उठे, पुनः माताजी ने वहाँ के कार्यकर्ताओं से कहा कि कल प्रातः भगवान के सामने 108 दीपक जलाकर भगवान की आरती करो और सबको खुशी से लड्डू बांटो।

वस्तुतः जिनके रग-रग में मात्र तीर्थंकर प्रभु की भक्ति ही समाई हो, उन मातुश्री को तीर्थंकर जन्मभूमि उद्धार के प्रारंभीकरण की मंगल सूचना कितना आल्हाद प्रदान करेगी, उसका वर्णन शायद लेखनी द्वारा शक्य नहीं है।

➢इलाहाबाद विश्वविद्यालय में ''धर्म एवं संस्कृति'' विषय पर संगोष्ठी–

3 सितम्बर 2002 को इलाहाबाद विश्वविद्यालय में मध्यान्ह 3 से 5 बजे तक पूज्य माताजी के मुख्य उद्बोधन के साथ 'धर्म एवं संस्कृति संगोष्ठी' का भव्य आयोजन सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पूज्य गणिनी माताजी ने अपने मंगल उद्बोधन में कहा कि धर्म शाश्वत है जबकि सम्प्रदाय समय-समय पर बनते-बिगड़ते रहते हैं। वस्तुतः अहिंसा, संयम और तप ही धर्म हैं, जिन्हें धारण कर हम भी तीर्थंकर बन सकते हैं। अहिंसा से ही विश्वशांति संभव हो सकती है। हिंसक वृत्ति से, आतंकवाद से विश्व में कभी भी शांति नहीं हो सकती। संस्कृति की परिभाषा करते हुए उन्होंने कहा कि संस्कृति संस्कार से निःसृत है, संस्कार ही व्यक्ति को आशावान व सृजनशील बनाता है। संस्कृति विकृत हो सकती है, पर धर्म नहीं। धर्म का मूल दया है, दया धर्म के निमित्त से ही आपसी प्रेम-सौहार्द वृद्धिंगत होता है। जीवन में यत्नपूर्वक आचरण करने से पापबंध नहीं होता है। पूज्य माताजी ने कहा कि विश्वविद्यालय सृजन के लिए हैं, संघर्ष के लिए नहीं। विश्वविद्यालय से विश्व को शांति का संदेश प्राप्त हो, आध्यात्मिकता एवं संस्कृति का ज्ञान प्राप्त हो, वही आज के युग की आवश्यकता है। सभी धर्मों का इतिहास काफी सोच-समझकर लेखकों को लिपिबद्ध करना चाहिए क्योंकि धर्म के संबंध में अनर्गल प्रलाप से धर्मावलम्बियों को ठेस पहुँचती है तथा उनके साथ अन्याय होता है। जैसे कि भगवान महावीर स्वामी जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर थे न कि संस्थापक, लेकिन कुछ इतिहासकारों ने उन्हें संस्थापक लिख दिया है।

पुनः मैंने अपने सम्बोधन में कहा कि जो उत्तम सुख में धरे, वह धर्म है तथा जो संस्कारों से संस्कारित करे, वह संस्कृति है। धर्म एक सुई की भांति है जो कपड़े की तरह लोगों को जोड़ती है, जबकि कैंची विघटन का कार्य करती है। सच्चा धर्म कभी आपस में वैरभाव की शिक्षा दे ही नहीं सकता-**'मजहब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना।'** धर्म की जड़ सदैव हरी है, संस्कृति उसका आधार है।

प्रो. ओमप्रकाश यादव (प्राचीन इतिहास विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष) ने कहा कि संस्थाओं के भाग्य जगते हैं तो संतों के चरण वहाँ पड़ते हैं, पूज्य माताजी के विश्वविद्यालय आगमन से इसका मंगल ही होगा। धर्म व्यक्ति को प्रेरणा प्रदान करता है, जीवन की गति निर्धारित करता है। ब्रह्माण्डीय व्यवस्था का नियम भी धर्म से अनुप्राणित है। संस्कृति प्रकृति का संशोधित स्वरूप है। यदि व्यक्ति के अंदर संस्कृति नहीं है, तो वह जानवर के समान है।

श्री श्रीराम यादव, प्रो. ए.आर.एन. श्रीवास्तव, डा. बी.डी.मिश्र इत्यादि वक्ताओं ने भी पूज्य माताजी के सारगर्भित, शिक्षाप्रद एवं प्रेरणादायक उद्बोधन की भावभीनी प्रशंसा करते हुये अपने विचार व्यक्त किये। इस अवसर पर प्रयाग तीर्थ के अध्यक्ष कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी की ओर से विश्वविद्यालय के लिए साहित्य रखने हेतु एक अलमारी तथा पूज्य माताजी द्वारा लिखित साहित्य भेंट किया गया। पूज्य माताजी ने विश्वविद्यालय, प्राध्यापकों, विद्यार्थियों एवं उपस्थित श्रोताओं को अपना मंगलमय आशीर्वाद प्रदान किया।

इस प्रभावक संगोष्ठी की विश्वविद्यालय में काफी प्रशंसा की गई। सुधी श्रोताओं का कहना था कि संत विनोबा भावे के पश्चात् आज किसी महान संत के चरण विश्वविद्यालय परिसर में पड़े हैं, यदि इस प्रकार के मंगल उद्बोधन छात्रों को समय-समय पर प्राप्त होते रहें, तो उन्हें शाश्वत नैतिक मूल्य प्राप्त हो सकते हैं, जिनकी आज सर्वाधिक आवश्यकता है।

➢विद्या मंदिरों में हुई धर्मामृत की वर्षा–

2 सितम्बर 2002 का दिवस जीरोरोड, इलाहाबाद स्थित विद्यामंदिरों में धर्मामृत की वर्षा को साकार रूप प्रदान करने वाला सिद्ध हुआ जबकि पूज्य माताजी एवं मेरे द्वारा प्रातःकाल से लेकर अपरान्ह तक क्रमशः इलाहाबाद इंटर कालेज, इलाहाबाद डिग्री कालेज एवं जैन विद्यालय-प्रयाग के हजारों विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं अन्य विद्यालय-परिवार को उनके विद्यालय परिसर में तीन धर्म सभाओं द्वारा नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ाया गया।

➢श्री अशोक सिंघल प्रयाग तीर्थ पर–

विहिप कार्याध्यक्ष श्री अशोक सिंघल 14 सितम्बर को पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का मंगल आशीर्वाद प्राप्त करने प्रयाग तीर्थ पधारे। कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी ने श्री सिंघल का हार्दिक स्वागत किया। श्री सिंघल जी ने अपने संक्षिप्त उद्बोधन में कहा कि इतने अल्पसमय में इस भव्यतीर्थ का निर्माण अपने आप में एक रिकार्ड है। उन्होंने मिलिट्री एरिया-इलाहाबाद में स्थित प्राचीन 'अक्षयवटवृक्ष' को जनसाधारण के दर्शनों हेतु उपलब्ध कराने के प्रयास करने का आश्वासन भी प्रदान किया।

ज्ञातव्य है कि 11 से 22 सितंबर तक प्रयाग में महाराष्ट्र प्रांतीय गणिनी ज्ञानमती भक्तमण्डल के (70 श्रद्धालु भक्त) द्वारा आयोजित इन्द्रध्वज विधान के मध्य सिंघल जी पधारे थे।

➢दीक्षास्थली तीर्थ पर इतिहासकारों का सम्मेलन–

पूज्य माताजी के मंगल सान्निध्य में 15 सितम्बर को तीर्थ पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के इतिहासकारों का एक लघु सम्मेलन सम्पन्न हुआ। डा. राधाकांत वर्मा, प्रो. ओम प्रकाश यादव, डा. ओ.पी. श्रीवास्तव, डा. धननारायण दुबे, डा. हर्ष कुमार, डा. सुषमा श्रीवास्तव, डा. नीरा वर्मा आदि इतिहासलेखकों ने इसमें भाग लिया। इतिहास की पुस्तकों में जैनधर्म से संबंधित भ्रांतियों के निराकरण हेतु पूज्य गणिनी माताजी एवं मेरे द्वारा सभी को महत्वपूर्ण तथ्यों से परिचित कराया गया तथा विशेष लेख इत्यादि सामग्री भी प्रदान की गयी। उस समय सभी ने इस बात का एक स्वर से समर्थन किया कि इतिहास लेखन में दिगम्बर एवं श्वेताम्बर दोनों परम्पराओं की मान्यताओं को सम्मिलित करके उसे एकांगी होने से बचाना चाहिए।

➢ऐसा पर्वत दुनिया में कहीं नहीं होगा –

दिल्ली से सम्मेदशिखर की यात्रा करते हुए कैलाशपर्वत की भव्य प्रतिकृति के निर्माता श्री चेतनलाल जी अपने चार साथियों के साथ एक दिन दीक्षास्थली पर पधारे। आते ही प्रसन्नतापूर्वक बोले कि माताजी! आप सबकी महान कृपा थी, जो हमारे परिवार की ओर से यहाँ पर ऐसा सुन्दर कैलाशपर्वत बन गया है, सचमुच ऐसा पर्वत दुनिया में कहीं नहीं होगा। मैं तो आज इस पर्वत के दर्शन करके धन्य हो गया।

➢स्वर्णिम शरदपूर्णिमा एवं कुण्डलपुर राष्ट्रीय महासम्मेलन–

प्रयाग तीर्थ की पावन वसुन्धरा पर पूज्य माताजी का 69वाँ जन्मदिवस

एवं 51वाँ त्यागदिवस-स्वर्णिम शरदपूर्णिमा 19 से 21 अक्टूबर 2002 तक विविध आयोजनों के साथ अत्यंत सफलता एवं स्वर्णिम आभा सहित सम्पन्न हुआ।

उसमें झण्डारोहण के पश्चात् प्रातः 10.30 बजे ''कुण्डलपुर राष्ट्रीय महासम्मेलन'' का उद्घाटन हुआ। माननीय मुख्य अतिथि न्यायमूर्ति श्री सुधीर नारायण जी अग्रवाल (न्यायाधीश-इलाहाबाद उच्च न्यायालय) द्वारा द्वीप प्रज्वलन कर इस त्रिदिवसीय कार्यक्रम का उद्घाटन हुआ, जिसके अन्तर्गत दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ, अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन, अखिल भारतीय दिगम्बर जैन युवा परिषद द्वारा आयोजित विभिन्न सत्रों में 'भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है' इस बात पर विशेषरूप से सभी का ध्यान केन्द्रित कराया गया।

➢कुण्डलपुर का पलड़ा हमेशा भारी रहेगा–

इस महासम्मेलन में प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी ने प्रभावशाली ढंग से अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि हर क्षेत्र का विकास होना चाहिए, वैशाली का भी और कुण्डलपुर का भी, पर वैशाली का विकास भगवान महावीर के स्मारक के रूप में हो और कुण्डलपुर का विकास जन्मभूमि के रूप में हो। अब तक वैशाली का विकास नहीं हो पाया उसका कारण यही था कि उसके आस-पास भगवान महावीर से संबंधित कोई क्षेत्र ही नहीं है जबकि कुण्डलपुर (नालंदा) के पास गुणावां, नवादा, सम्मेदशिखर इत्यादि सभी तीर्थक्षेत्र विद्यमान रहे हैं अतः सैकड़ों वर्षों से उसे ही जन्मभूमि के रूप में मान्यता प्राप्त है। 56 वर्ष से स्मारक के रूप में वैशाली के विकास की बात पर विश्वास करके इसका विरोध नहीं किया गया किन्तु यह तो समाज के साथ धोखे जैसी बात रही कि उसे जन्मभूमि के रूप में प्रचारित करने की प्रक्रिया प्रारंभ हो गई जबकि सत्यता तो ये है कि कम से कम वैशाली को जन्मभूमि का रूप देने से पूर्व साधु संगीति बुलाई जाती और उनसे इस विषय में शास्त्र सम्मत निर्णय लिया जाता। जनता की श्रद्धा तो कुण्डलपुर के प्रति ही रही है और रहेगी, उसको कोई बदल नहीं सकता। चिंता जमीन के टुकड़े की नहीं है वरन् महावीर के सिद्धान्तों को सुरक्षित रखने की है। हमें हर हाल में आगम की बात माननी है। जहाँ सदियों से भगवान महावीर का जन्मकल्याणक मनाया जा रहा है, वह तो पूजा प्रतिष्ठा के द्वारा जन्मभूमि बन ही गया है, सदियाँ बीत जाएंगी परन्तु श्रद्धा नहीं बदलेगी। कुण्डलपुर का सवाल अदम्य रूप से साहसी पूज्य ज्ञानमती माताजी के द्वारा पूरी शक्ति के साथ उठाया गया है, अब उसे कोई

नहीं रोक सकता। वास्तव में अगर माताजी के द्वारा विकसित सारे तीर्थों को तराजू के एक पलड़े में रखा जाए और कुण्डलपुर का कार्य एक पलड़े पर, तो कुण्डलपुर का पलड़ा भारी रहेगा क्योंकि यह कार्य इतिहास की सुरक्षा का है न कि केवल मंदिर निर्माण का है।

➢पंचामृत अभिषेक आगम कथित है–

वर्तमान में अनेक स्थानों पर श्री जिनेन्द्र भगवान का पंचामृत अभिषेक नहीं होता है जबकि प्राचीन आगम ग्रंथों में पूर्वाचार्यों द्वारा कथित वाणी के अनुसार पंचामृत अभिषेक करना चाहिए।

वर्तमान में आचार्य पूज्यपाद स्वामी रचित अभिषेक पाठ सर्वमान्य है जिसमें पूज्यपाद स्वामी ने पंचामृत के एक-एक श्लोक में बड़ा सुन्दर विवेचन किया है और उसका हिन्दी पद्यानुवाद पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने किया है, जो कि कई एक संघों में तथा कई एक श्रावकों द्वारा भक्तिपूर्वक किया जाता है।

आचार्य जटासिंहनन्दि कृत वरांग चरित्र में 23वें सर्ग के 77वें पद्य में लिखा है–

संस्थाप्य यत्नात्प्रतिमा जिनानां, नरामराणां सुखमभ्युपैति।
क्षीराभिषेक प्रमुखक्रियाभिः, राज्याभिषेकस्य भवेत्स भागी।।77।।

अर्थात् जो पुरुष दूध, दही, इक्षुरस आदि के द्वारा जिनेन्द्र देव का पंचामृत अभिषेक करते हैं, वे स्वयं राज्य अभिषेक आदि के अधिकारी होते हैं।

उमास्वामी श्रावकाचार में आचार्य उमास्वामी (द्वितीय शताब्दी) ने कहा है–

शुद्धतोयेक्षुसर्पिर्भिर्दुग्धदध्याम्रजैः रसैः।
सर्वौषधिभिरुच्चूर्णैर्भावात्संस्नापये जिनान्।।

अर्थात् शुद्धजल, इक्षुरस, घी, दूध, दही, आम्ररस और सर्वौषधि इत्यादिकों से जिन भगवान का अभिषेक करता हूँ। इसी प्रकार यशस्तिलक महाकाव्य, सकलकीर्ति आचार्य विरचित श्रीपाल चरित्र, आचार्य वसुनंदिकृत वसुनन्दि श्रावकाचार, देवसेनाचार्य रचित भावसंग्रह आदि महान ग्रंथों में पंचामृत अभिषेक पाठ का वर्णन है। जिसे विस्तारपूर्वक पढ़कर श्रावकों को उससे शिक्षा ग्रहण कर आगमपरम्परानुसार पंचामृत अभिषेक करना चाहिए।

यदि अपनी प्रांतीय परम्परानुसार कोई केवल जलाभिषेक ही करते हैं, तो भी पंचामृत अभिषेक करने वालों को गलत कभी नहीं मानना चाहिए। आज भी तमाम उत्तर भारत के तेरहपंथी लोग दक्षिण भारत में जाकर भगवान

बाहुबली का खूब पंचामृत अभिषेक करते हैं और स्त्रियाँ भी अभिषेक करके अपनी स्त्रीपर्याय को सार्थक करती हैं।

➢पं. श्री सुमेरचंद्र जैन दिवाकर का मरणोपरांत सम्मान–

जैन शासन के महान मनीषी विद्वान् पं. सुमेर चंद जी दिवाकर द्वारा सन् 1968 में लिखित ''महाश्रमण महावीर'' के पूज्य गणिनी माताजी की प्रेरणा से किये गये पुनर्प्रकाशन का विमोचन प्रा. नरेन्द्र प्रकाश जी द्वारा संपन्न किया गया। साथ ही पं. जी को दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा मरणोपरांत ''जिनशासन रत्न'' की उपाधि प्रदान की गयी। जिसे उनके परिवार के श्री अभिनंदन दिवाकर-सिवनी, श्री ऋषभ दिवाकर, श्री पवन दिवाकर (सुपुत्र-श्री श्रेयांस दिवाकर) आदि ने ग्रहण किया। इस अवसर पर श्री अभिनंदन जी ने कहा कि इस ग्रन्थ का प्रथम प्रकाशन आचार्य देशभूषण महाराज जी की कृपा प्रसाद से हुआ था और अब उन्हीं की शिष्या पूज्य गणिनीश्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से इसका द्वितीय बार प्रकाशन हुआ है। मेरे दादा पं. सुमेर चंद जी कहा करते थे कि कुण्डलपुर (नालंदा) के अतिरिक्त भगवान महावीर की कोई अन्य जन्मभूमि हो ही नहीं सकती। पूर्णतः आगम की वाणी पर लिखित यह महान पुस्तक पं. सुमेरचंद जी की विद्वत्ता का अनुपम उदाहरण है।

➢कुण्डलपुर राष्ट्रीय महासम्मेलन का समापन–

कुण्डलपुर राष्ट्रीय महासम्मेलन के विविध सत्रों से प्राप्त तथ्यों एवं विचार धाराओं को समन्वित करते हुए तीर्थ क्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष साहू रमेश चंद जैन-दिल्ली को भेजे जाने वाले एक पत्र का वाचन किया गया, जिस पर उपस्थित जनसमूह ने अपने हस्ताक्षरों के माध्यम से अपनी सम्मति प्रदान की।

➢भगवान ऋषभदेव समवसरण स्थापना–

भगवान ऋषभदेव के जिस समवसरण रथ ने पूरे देश में घूमकर अहिंसा धर्म का प्रचार किया, उसे 21 अक्टूबर 2002, शरदपूर्णिमा के दिन प्रयाग तीर्थ परिसर में नवनिर्मित समवसरण मंदिर में विराजमान किया गया। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश महोदय श्री श्यामल कुमार ने भगवान ऋषभदेव समवसरण स्थापना के शिलापट्ट का अनावरण किया और समवसरण के दर्शन कर अपने को सौभाग्यशाली माना।

इस अवसर पर पूज्य माताजी के 69वें जन्मदिवस एवं 51वें त्यागदिवस को 'स्वर्णिम शरदपूर्णिमा' के रूप में मनाने हेतु पूरे देश से हजारों श्रद्धालु भक्तों ने पधारकर तीर्थ एवं गुरु दर्शन का अपूर्व पुण्य प्राप्त किया।

➢29 मार्च 1911 को श्री हर्मन जैकोबी द्वारा श्वेताम्बर जैनमुनि श्री विजयधर्म जी महाराज को महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर-नालंदा विषयक यह पत्र सम्पूर्ण जैन समाज के लिए वास्तव में एक ऐतिहासिक दस्तावेज है–

Dear Sir,

I had much pleasure in the receiving your letter dated Feb. 27 Which Wishes for me. I also beg to acknoledge receipt of material, which contaions useful **information of Nalanda and Kundalpur being birthplace of lord Mahavira.** It becomes very useful to me, in many ways. You have urged me to rewrite my article on "Jainism" in the Encyclopedia of religion & ethics. **Regarding Kundalpur near Nalanada**, there are some references in Tiloipanntti, **I agree with them.**

I hope, however to induce Prof. W. Sohribring who is without doubt best Jain Scholan, Historian, well groomed in Siddhanta to undertake a similar work. I am sure that he will do important work. for Jain world.

Mr. K.P. Modi sent me some photographs of Kundalpur.

Hoping yor well.

I remain yours sincerely
(HERMANN JACOBI)

➢प्रयाग जैन समाज की ओर से विनम्र विनयांजलि रूप अभिनंदन पत्र–

प्रयाग तीर्थ पर 21 अक्टूबर 2002 को सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज-प्रयाग की ओर से विशिष्ट महानुभावों के द्वारा पूज्य माताजी के करकमलों में भक्तिपूर्वक विनयांजलि स्वरूप निम्न अभिनंदन पत्र समर्पित किया गया–

हमारे जीवन में महान पुण्य का उदय हुआ जबकि हम सब लोगों ने एक प्राचीनतम तीर्थ को तीर्थ स्वरूप में पुनः स्थापित होते हुए अपनी आँखों से देखा। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने एक कुशल शिल्पी की भाँति भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि-प्रयाग को अपने प्रज्ञाबल की छेनी से तराश कर 'तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली-प्रयाग तीर्थ' जैसी अनुपम भेंट पूरे विश्व को प्रदान कर दी और हम सब इस स्वर्णिम इतिहास के साक्षी बन गये।

प्रयाग की यह भूमि करोड़ों वर्ष उपरांत एक बार पुनः वैराग्य, संयम से

सिंचित होते हुए सदैव के लिए जैन तीर्थ के रूप में स्थापित हो गई, धन्य है उन गणिनी माताजी की अपूर्व दूरदर्शिता, उत्कृष्ट प्रतिभा एवं महान प्रज्ञा कि जिसने हम सब प्रयागवासियों सहित समस्त विश्व को एक विस्मृत इतिहास को इतने उत्कृष्ट रूप में स्मरण करने हेतु माध्यम प्रदान कर दिया। मात्र डेढ़ वर्ष के अल्प समय में निर्मित इस आकर्षक जैन तीर्थ ने देशभर में अपनी सुगंधि वितरित करके भक्तों को अपनी ओर कदम बढ़ाने के लिए विवश कर दिया है, हमारा पूरा इलाहाबाद नगर धन्य हो उठा है।

पूर्व में भी हम सब जैन समाज की महान साध्वी के रूप में पूज्य ज्ञानमती माताजी का नाम सदा से सुनते आये थे, उनके द्वारा लिखित साहित्य पढ़ते थे, उनके द्वारा लिखे सरस भक्ति विधानों को भक्तिभाव से किया करते थे, पर जब उनका साक्षात् सानिध्य मिला तो जैसे सहज, सरल वात्सल्य से युक्त मोक्ष का मार्ग दिखलाने वाली सच्ची माता ही हमें प्राप्त हो गयीं। ऐसी सरस्वती माता का यश युगों-युगों तक निश्चित ही चिरंजीव रहने वाला है।

आपके प्रभावी नायकत्व एवं अनुशासन की छाप हमने आपके संघ में देखी है। प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी, क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज एवं कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन का आपके दिशा-निर्देश के प्रति जो समर्पण, आपसी सामंजस्य एवं कर्मठ परिश्रम दृष्टिगत होता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। क्षुल्लिका श्रद्धामती माताजी एवं संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनें भी अहर्निश धर्मसाधना एवं गुरुसेवा में ही तत्पर दिखायी पड़ती हैं, यह सब आपके यशस्वी व्यक्तित्व का ही प्रतिबिम्ब है। आपके 69वें जन्मदिवस एवं 51वें संयम दिवस-स्वर्णिम शरद पूर्णिमा 21 अक्टूबर 2002 को इस मंगल अवसर पर हम अत्यंत विनीत भाव से आपके श्रीचरणों में अपनी कोटिशः विनयांजलि प्रस्तुत करते हुए आपके सुदीर्घ एवं स्वस्थ जीवन की कामना करते हैं।

➢न्यायाधीश सम्मेलन एक उपलब्धि–

प्रयाग तीर्थ पर चातुर्मास के मध्य यूँ तो अनेक प्रभावनात्मक कार्यक्रम सम्पन्न हुए, फिर भी पूज्य माताजी की प्रेरणा से उत्तरप्रदेश हाईकोर्ट के न्यायाधीशों को आमंत्रित करके 3 नवम्बर 2002 को अहिंसा एवं न्याय विषय पर एक **''न्यायाधीश सम्मेलन''** आयोजित हुआ, जिसमें न्यायमूर्ति श्री सुधीर नारायण अग्रवाल एवं न्यायमूर्ति श्री एम.सी. जैन की भूमिका विशेष सराहनीय रही। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों सहित प्रशासनिक विभाग, सरकारी स्वास्थ्य विभाग, शैक्षणिक क्षेत्र इत्यादि के विशिष्ट महानुभावों

ने इस सम्मेलन में भाग लिया।

सम्मेलन में न्यायमूर्ति श्री आर.के. शुक्ला,न्यायमूर्ति श्री सुधीर नारायण, न्यायमूर्ति श्री सखाराम सिंह, न्यायमूर्ति श्री एम.सी. जैन, न्यायमूर्ति श्री एस.के. अग्रवाल, न्यायमूर्ति श्री एस.पी. मेहरोत्रा ने 'अहिंसा एवं न्याय' विषय पर अपने सारगर्भित विचार प्रस्तुत किए। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास विभाग की प्रो. गीता देवी, डॉ. उर्मिला जैन (इला.), अधिवक्ता श्री राजीव गुप्ता आदि ने सभी को अपने विचारों से परिचित कराया। ब्र. रवीन्द्र जी ने अपने स्वागत भाषण में जैन साधु-साध्वी चर्या पर प्रकाश डालते हुए सभी पधारे अतिथियों के लिए आभार व्यक्त किया। पूज्य माताजी ने अपने विस्तृत उद्बोधन में प्रयाग की भूमि को प्रारंभ से ही न्याय की भूमि के रूप में बताते हुए भारतीय संस्कृति, जैनधर्म, अहिंसा आदि शाश्वत मूल्यों की उपादेयता, अल्पसंख्यक इत्यादि विषयों पर प्रभावी विचार व्यक्त किए। उच्च शिक्षा आयोग (इला.) के सचिव श्री विक्रमाजीत तिवारी, अपर नगर मजिस्ट्रेट श्री मुन्नीलाल पाण्डेय, हरीशचंद अनुसंधान संस्थान-झूसी के निदेशक प्रो. रवि एस. कुलकर्णी एवं वैज्ञानिक डॉ. भाई वी.एस. पासी, उपमुख्य चिकित्सा अधिकारी (इला.), डॉ. वी.डी.पाण्डेय, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के अधिवक्ताओं एवं अन्य विशिष्टगणों ने भी सम्मेलन में भाग लिया। सभी आगंतुक अतिथियों को तीर्थ का प्रतीक चिन्ह एवं साहित्य प्रदान कर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर दीक्षास्थली तीर्थ की ओर से इलाहाबाद उच्च न्यायालय के पुस्तकालय हेतु एक अलमारी सहित साहित्य प्रदान किया गया।

➢201 वन्दना कर हृदय प्रफुल्लित हो उठा–

तीर्थ पर मंगल पदार्पण से लेकर चातुर्मास एवं वहाँ प्रवास तक पूज्य माताजी एवं हम सभी को तीर्थ पर स्थित जिनमंदिरों के बार-बार दर्शन का सौभाग्य तो मिला ही, कैलाशपर्वत की वंदना का भी महान सुयोग प्राप्त हुआ। पूज्य माताजी ने कैलाशपर्वत की 148 वंदना पूर्ण कीं एवं मैंने 201 वंदना पूर्ण करके परम तृप्ति का अनुभव किया।

➢दीपावली पर जगमगा उठा तीर्थ–

4 नवम्बर 2002, कार्तिक कृष्णा अमावस्या, भगवान महावीर की निर्वाण बेला में दीक्षास्थली तीर्थ पर कैलाशपर्वत के सामने निर्मित पावापुरी की अत्यन्त आकर्षक रचना के समक्ष सैकड़ों लोगों द्वारा सामूहिक रूप से भगवान महावीर का निर्वाणलाडू चढ़ाया गया। कैलाशपर्वत पर विराजमान 72 प्रतिमाओं

में से भगवान महावीर की प्रतिमा के समक्ष भी निर्वाणलाडू चढ़ाया गया एवं विशालकाय भगवान ऋषभदेव का मस्तकाभिषेक भी सम्पन्न किया गया। ब्रह्म मुहूर्त में पूज्य माताजी एवं संघस्थ साधुओं द्वारा वर्षायोग निष्ठापना क्रिया के साथ चातुर्मास का समापन हुआ। रात्रि में असंख्य दीप जलने पर नूतन तीर्थ सचमुच जगमगा उठा।

➢कुण्डलपुर की ओर मंगल विहार–

सफलतापूर्वक एवं विशेष उल्लासपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुए तीर्थ के इस चातुर्मास के अनन्तर 10 नवम्बर 2002 को पुनः कुण्डलपुर तीर्थ की ओर मंगल विहार हुआ। यद्यपि तीर्थ से मंगल विहार होने के कारण मन में थोड़ा कष्ट तो हुआ, फिर भी यहाँ 5 माह का प्रवास मिल जाने से हृदय में तृप्ति और मानसिक शांति भी थी।

प्रातः 9 बजे से दीक्षाकल्याणक मंदिर एवं समवसरण मंदिर के कलशारोहण-ध्वजस्थापना की विधि सम्पन्न हुई तथा वटवृक्ष मंदिर के महामुनि ऋषभदेव का पंचामृत अभिषेक हुआ। मध्यान्ह में 2 बजे से मंगल विहार की प्रवचन सभा हुई तथा इलाहाबाद के अनेक महानुभावों का सम्मान हुआ। हाईकोर्ट के जस्टिस श्री एम.सी. जैन ने सभाध्यक्षता की तथा विहार में पूरे रास्ते पैदल चले। इस विहार की सभा में इलाहाबाद के ए.डी.एम.-श्री मुन्नीलाल पांडे आए और काफी दूर पैदल चले पुनः 2 किमी. दूर जब हम सरायइनायत पहुँचे तो वहाँ के थाने में वहाँ के आफीसर के कहने से माताजी अंदर तक गईं, वे माताजी को वहाँ ले गए, जहाँ उन्होंने 4-5 ट्रक गाय-भैसों को कत्लखाने जाने से रोका था। इस अहिंसक कार्य के लिए माताजी ने उन्हें खूब-खूब आशीर्वाद दिया।

➢एक श्रावक की गुरुभक्ति–

आचार्यों ने गुरुभक्ति के महत्त्व को बताते हुए कहा है–

नामापि यः स्मरति मोक्षपथस्य साधोराशु क्षयं व्रजति तद्दुरितं समस्तम्।
यो भक्त-भेषज-मठादिकृतोपकारः संसारमुत्तरति सोऽत्र नरो न चित्रम्।।

अर्थात् जो मोक्षमार्ग में स्थित साधु के केवल नाममात्र का भी स्मरण करता है, उसके समस्त पाप शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं, फिर जो मनुष्य दिगम्बर साधु का भोजन, औषधि, मठ-वसतिका आदि के द्वारा उपकार करते हैं, वे यदि संसार से पार हो जावें, तो भला इसमें आश्चर्य ही क्या है?

कुण्डलपुर की यात्रा के मध्य वाराणसी तीर्थ के यशस्वी अध्यक्ष श्री रिसबदास जी के एक मात्र सुपुत्र श्री दीपक जैन पूज्य माताजी के दर्शनार्थ

पधारे और माताजी की सौम्य छवि एवं वात्सल्यपूर्ण वाणी के प्रभाव से माताजी के अनन्य भक्त बन गए, फिर तो वे अनेक छोटे-बड़े स्थानों पर समय-समय पर माताजी के दर्शनार्थ आने लगे और विहार का वास्तविक आनन्द प्राप्त करते हुए संघ व्यवस्था में भी रुचि ली। भगवान पार्श्वनाथ जन्मभूमि भेलूपुर-वाराणसी में मंगल प्रवेश की सुन्दर रूपरेखा बनाकर पूरे मनोयोगपूर्वक उसे अच्छे ढंग से सम्पादित किया। वाराणसी प्रवेश के पूर्व 17 नवम्बर 2002 को वीरभानपुर में सेठ रिसबदास जी की बगीची पर संघ का एक दिवसीय प्रवास रहा।

वास्तव में गुरु के प्रति की गई निःस्वार्थ एवं अटूट भक्ति एक दिन जीव को संसार समुद्र से पार लगा देती है। दीपक कुमार जी के साथ उनकी धर्मपत्नी सौ. सुभाषिनी जैन भी अत्यन्त सेवाभावी एवं धर्मपरायण महिला हैं।

➢पार्श्वनाथ जन्मभूमि वाराणसी में अपूर्व उत्साह–

वाराणसी नगरी में 19 नवम्बर 2002 को बिल्कुल उत्सव जैसा माहौल था और हो भी क्यों नहीं, शायद ही उन्होंने कभी सोचा होगा कि इतनी महान साध्वी माता का हमारे बनारस में भी मंगल पदार्पण होगा अथवा यूँ समझिये कि आज तो कुंआ स्वयं प्यासे के पास चलकर आ गया था। कई दिनों से वहाँ की स्थानीय समाज के लोग उत्साहपूर्वक माताजी के स्वागत की तैयारियों में लगे हुए थे, प्रातःकालीन इस स्वागत जुलूस में हाथी, घोड़े एवं शहनाई, बैण्ड के साथ अपार जनसमूह उपस्थित था। 4-5 किमी. लम्बे इस जुलूस में 3-4 सरकारी नेता माताजी के दर्शनार्थ पधारे, कई न्यूज पेपर एवं टी.वी. चैनल की कई टीमें पूरे जुलूस-सभा आदि का कवरेज कर रही थीं, पूरे रास्ते में कई स्थानों पर मंगल आरती, पुष्पवृष्टि आदि हुई।

मध्यान्ह में 2.30 बजे से मंदिर के बाहर बने भव्य पाण्डाल में विशाल प्रवचन सभा हुई, जिसमें वाराणसी नगरी के सभी गणमान्य महानुभाव उपस्थित हुए, पूरा प्रांगण भरा रहा। इस अवसर पर इलाहाबाद से भी अनेक महानुभाव पूज्य माताजी के दर्शनार्थ पधारे, जिसका स्वागत वाराणसी जैन समाज द्वारा किया गया। रात तक चले इस कार्यक्रम को देखकर लोगों का यही कहना रहा कि माताजी! बनारस में पहली बार ऐसा उत्साह देखा जा रहा है।

➢भगवान सुपार्श्वनाथ जन्मभूमि की चरणरज मस्तक पर चढ़ाई–

20 नवम्बर को हम लोग वाराणसी में ही स्थित भदैनी मंदिर के दर्शनार्थ गए जो कि भगवान सुपार्श्वनाथ की जन्मभूमि है, गंगा के तट पर बसे इस रमणीक स्थल को भी जीर्णोद्धार की आवश्यकता है। पुनः स्याद्वाद महाविद्यालय

में भी मंदिर के दर्शन करके माताजी ने संक्षिप्त उद्बोधन दिया, जिसमें डॉ. फूलचंद जैन प्रेमी, डॉ. कमलेश जैन, पं. बाबूलाल जी फागुल्ल आदि विद्वान उपस्थित थे। वहाँ के प्राचार्य जी ने संस्कृत भाषा में पूज्य माताजी के प्रति आभार एवं सम्मान व्यक्त किया।

➢काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में गूंज उठा धर्म का शंखनाद –

21 नवम्बर को मध्यान्ह 1.30 बजे वाराणसी के काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के मालवीय भवन में गूंजे धर्म के शंखनाद से वहाँ के विद्वत्वर्ग पूज्य माताजी के चरणों में नतमस्तक हो गये। प्रवचन सभा में कार्यक्रम का शुभारंभ संघस्थ बहनों कु. चन्द्रिका एवं इन्दु के भजन से हुआ, पुनः वैदिक मंगलाचरण डॉ. नरेन्द्र तिवारी ने प्रस्तुत किया। संस्कृत विभाग की छात्राओं द्वारा कुलगीत की प्रस्तुति एवं माननीय कुलपति एवं मुख्य अतिथि प्रो. रेवा प्रसाद द्विवेदी जी के द्वारा महामात्र की प्रतिमा पर माल्यार्पण के पश्चात् प्रवचन श्रृँखला का शुभारंभ हुआ।

सर्वप्रथम प्रो. सुदर्शनलाल जैन ने पूज्य माताजी का परिचय देते हुए माताजी को फैजाबाद यूनिवर्सिटी से प्राप्त डी.लिट्. की मानद् उपाधि का विस्तृत वर्णन किया पुनः मैंने और संघस्थ पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर जी ने "धर्म और संस्कृति" विषय पर सभी को उद्बोधन दिया। मुख्य अतिथि प्रो. रेवा प्रसाद द्विवेदी ने धर्म और संस्कृति पर विशिष्ट व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए पूज्य माताजी एवं हम लोगों के संस्कृत उच्चारण की शुद्धता की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की। सारस्वत अतिथि सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने धर्म और संस्कृति को राष्ट्रीय महत्त्व प्रदान करते हुए वर्तमान समय में सन्तों की उपादेयता पर प्रकाश डाला। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने अणुव्रत के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि **हमारी उत्तम भारतीय संस्कृति में किसी की मृत्यु को मरा हुआ न कहकर देवलोक हो गया कहा जाता है। वास्तव में संस्कारों से संस्कारित जीवन ही संस्कृति है। काटना, तोड़ना हमारी संस्कृति नहीं है। जब हम संस्कार से पाषाण को भगवान बना सकते हैं तो आत्मा को संस्कारित कर भगवान नहीं बना सकते क्या? आत्मा की सत्ता शाश्वत है, उसकी शाश्वत दृष्टि हमारी संस्कृति है। जैनधर्म के सारे ग्रंथ संस्कृत और प्राकृत में हैं।**

पूज्य माताजी ने कुलपति महोदय को विश्वविद्यालय में प्राकृत विभाग की महत्ता बताते हुए प्रतिवर्ष विश्वविद्यालय में भगवान ऋषभदेव एवं भगवान पार्श्वनाथ पर संगोष्ठी हेतु प्रेरणा प्रदान की, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. रामचन्द्र राव ने अपने उद्बोधन में कहा कि धर्म सामान्यजनों के लिए समझना आसान नहीं है अतः सन्त-महात्माओं की आवश्यकता होती है। दिगम्बर जैन समाज काशी की ओर से श्री मुन्नीबाबू एवं संकल्प संस्था (वाराणसी) के पदाधिकारी श्री दीपक जैन एवं अन्य गणमान्य बंधुओं द्वारा दोनों कुलपति एवं प्रो. रेवा प्रसाद द्विवेदी को विशेष स्मृति चिन्ह भेंट किए गए। कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र जी (अध्यक्ष-जम्बूद्वीप, हस्तिनापुर) ने संस्थान की ओर से एक अलमारी एवं पूज्य माताजी द्वारा लिखित साहित्य विश्वविद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकालय हेतु प्रदान किया गया।

➢भगवान श्रेयांसनाथ जन्मभूमि कहलाई "श्रेयांसनाथ धर्मस्थल" –

वर्तमानकालीन चौबीसी के 11वें तीर्थंकर भगवान श्रेयांसनाथ के जन्म से पावन भूमि शास्त्र पुराणों में सिंहपुरी के नाम से वर्णित है, जिसे वर्तमान में सारनाथ के नाम से जाना जाता है और मुख्यरूप से यह बौद्धतीर्थ के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त है। उस पवित्र भूमि पर पूज्य माताजी के चरण पड़े 24 नवम्बर 2002 को, वहाँ के जिनमंदिर के दर्शन के पश्चात् जब हम दिगम्बर जैन धर्मशाला में पहुँचे, तो वहाँ के कार्यकर्ताओं ने भगवान श्रेयांसनाथ की बड़ी मूर्ति दिखाते हुए माताजी को बताया कि काफी दिनों से यह मूर्ति आई हुई रखी है और इसकी पंचकल्याणक का कोई योग नहीं आ रहा है। अगर आप चाहें, तो शीघ्र ही इसका पंचकल्याणक संभव हो सकेगा, उस समय माताजी ने उसे विचारणीय विषय के अन्तर्गत रख दिया, चूँकि अभी माताजी का लक्ष्य कुण्डलपुर तीर्थ का विकास था। उस समय माताजी ने उस तीर्थ को **"श्रेयांसनाथ धर्मस्थल"** के नाम से घोषित किया।

➢चन्द्रप्रभू की जन्मभूमि चन्द्रपुरी के दर्शन –

जिन अतिशयकारी चन्द्रप्रभु तीर्थंकर के अतिशय क्षेत्र तिजारा में चमत्कारों के कारण अतिशायी भीड़ रहती है और निरन्तर यात्रियों का तांता लगा रहता है, उन तीर्थंकर भगवान ने किस स्थल पर जन्म लिया तथा उस तीर्थ की वर्तमान में क्या स्थिति है, शायद किसी ने जानने की भी कोशिश नहीं की। शास्त्र-पुराणों में वर्णित उन अष्टम तीर्थंकर भगवान चन्द्रप्रभु की जन्मभूमि पर जब 27 अक्टूबर को पूज्य माताजी ने पदार्पण किया, तो उसकी वीरानियत देखकर उनके मन को अत्यधिक कष्ट हुआ। चन्द्रावती के नाम से मशहूर उस तीर्थ पर दो दिवसीय प्रवास के मध्य धर्मोपदेश के साथ-साथ दो दिवसीय **"पंचकल्याणक विधान"** आदि विविध धार्मिक कार्यक्रम हुए। वहाँ के कार्यकर्ताओं

को तीर्थ विकास की प्रेरणा देने के पश्चात् माताजी ने 28 नवम्बर को भगवान का विधिवत् पंचामृत अभिषेक देखा और भगवान चन्द्रप्रभु एवं उनके जन्म से पावन चन्द्रपुरी तीर्थ को बारम्बार नमन कर आगे की ओर विहार किया।

➢सेठ रिसबदास जी की प्रसन्नता देखते ही बनती थी–

1 दिसम्बर को हम लोग महाराजगंज नाम के छोटे से गाँव के स्कूल में रुके हुए थे, प्रातः 6.30 बजे बनारस से दीपक जी अपने माता-पिता और पुत्री को लेकर महाराजगंज आ गए और अपने पिताजी से यह कहकर नारियल चढ़वाया कि मुझे कुण्डलपुर में सौधर्म इन्द्र बनना है। सेठ रिसबदास जी बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक बोले कि माताजी! आपने तो मेरे बेटे-बहू को बिल्कुल ही बदल दिया है। चूँकि आज रिसबदास जी का जन्मदिवस था अतः उन्होंने माताजी को श्रीफल समर्पित कर उनका आशीर्वाद भी प्राप्त किया। माताजी ने इन्हें आशीर्वादस्वरूप अपने हाथ से फेरी हुई जपमाला प्रदान की।

जब माताजी ने वहाँ से प्रस्थान किया तो दीपक जी हर दिन की भाँति माताजी के साथ दौड़-दौड़कर चलते रहे, जिसे देखकर उनके पिता जी ने अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव किया। दीपक जी की पुत्री कु. स्तुति जैन मेरे साथ उस दिन 13 कि.मी.पूरा पैदल चली।

➢अध्यापकों के अनुनय विनय पर कॉलेज में भी एकदिवसीय प्रवास हुआ–

जब से माताजी ने प्रयाग से विहार किया था, तब से प्रत्येक स्थान पर वह एक-दो दिन से ज्यादा नहीं रुक रही थीं, हाँ! कभी विशेष कार्यक्रम हो तो भले ही लम्बा प्रवास हुआ और छोटे-छोटे गांवों में तो सुबह-शाम दोनों टाइम विहार होता आ रहा था। इसी प्रकार भांवरकोल से होती हुई जब माताजी कोटवां बाजार के श्री सिद्धेश्वर इंटर कालेज में सायंकाल पहुँचीं, तो यहाँ के कई अध्यापकों ने पूज्य माताजी से अत्यन्त विनम्रतापूर्वक आग्रह किया कि माताजी! आपको पहले यहाँ 4 दिसम्बर को आना था अतः हमने 2-3 दिन पूर्व से ही अपने कॉलेज के 600 विद्यार्थियों को आपके प्रवचन की सूचना कर दी थी किन्तु आपका आगमन एक दिन पूर्व ही हो गया और आप कल प्रातः ही विहार करना चाहती हैं, तो हमारा आपसे यही निवेदन है कि आप कल बच्चों को अपना मार्गदर्शन एवं प्रवचन करके ही जावें। जब उन्होंने ज्यादा आग्रह किया तो पूज्य माताजी ने निर्णय किया कि मैं यहाँ प्रातः प्रवचन करके आगे आ जाऊँगी और तुम लोग प्रातः जल्दी चले जाना। पूज्य माताजी की आज्ञानुसार हम आगे की ओर विहार कर गए और आगे पहुँचकर वहाँ के विद्यालय में

प्रवचन व प्रश्नमंच किया।

वैसे विहार के मध्य प्रायः सभी विद्यालयों में रोज प्रवचन करके प्रश्नमंच में बच्चों को पुरस्कृत किया गया है।

➢मंत्र जाप्य से प्रतिमा जी वापस मिल गईं–

आरा शहर से 20 किमी. दूर मसाढ़ नाम के गांव के स्कूल में हमारा प्रवास था, जहाँ आरा से लगभग 150 लोग माताजी के दर्शनार्थ पधारे थे, मध्यान्ह में शांतिविधान एवं माताजी का मंगल प्रवचन हुआ, उन्होंने बताया कि मसाढ़ में व्यक्तिगत ट्रस्ट वालों का भगवान पार्श्वनाथ जिनमंदिर है, जिसकी मुखिया शांतिदेवी जैन हैं, जो वहाँ उपस्थित थीं और आगन्तुक सभी के भोजन की व्यवस्था भी कर रही थीं। उस मंदिर से 8-9 वर्ष पूर्व संवत् 1876 में प्रतिष्ठित काले पाषाण की 2 फुट पद्मासन भगवान पार्श्वनाथ प्रतिमा चोरी चली गई थीं, तो उस समय कई लोग अयोध्या जाकर पूज्य माताजी से मंत्र लेकर आए थे और उस मंत्र जाप्य के प्रभाव से प्रतिमा जी वापस मिल गईं। इसीलिए माताजी के उसी मंदिर में आगमन पर सभी लोग विशेष प्रसन्न हुए।

➢धर्मनगरी आरा हो उठी कुण्डलपुरमय–

कुण्डलपुर (नालंदा) की ओर मंगल विहार करते हुए संघ का 10 दिसम्बर से 16 दिसम्बर 2002 तक आरा शहर में मंगल प्रवास विशेष धर्मप्रभावना सहित जन-जन को कुण्डलपुर के साथ एकाकार करते हुए पूर्ण हुआ। हरप्रसाद दास जैन विद्यालय, आरा के प्रांगण में षड्दिवसीय धर्मामृत की वर्षा आरावासियों को लम्बे समय तक स्मरण रहेगी। 10 दिसम्बर को प्रातःकाल भारी जनसमूह के मध्य गली-गली को गुंजायमान कर देने वाली भव्य स्वागत यात्रा निकली, सारी समाज में अत्यन्त उत्साह था, पूरे शहर में स्थान-स्थान पर अनेक तोरणद्वार, बैनर आदि लगाए गए था। मध्यान्ह 2 बजे 'धर्म की महासभा' नाम से विशाल प्रवचन सभा का आयोजन हुआ। प्रतिदिन प्रवचनों के माध्यम से जिनेन्द्रभक्ति, ध्यान, तीर्थदर्शन, तीर्थोद्धार इत्यादि विविध विषयों के ज्ञान ने जनसमूह को नवीन चेतना से समन्वित किया।

➢सरस्वती सम माता ज्ञानमती जी को दी ''वाग्देवी'' की उपाधि–

15 दिसम्बर 2002 को दिल्ली एवं अनेक स्थानों से पधारे प्रतिनिधियों के मध्य कुण्डलपुर विकास संबंधी एक महत्त्वपूर्ण बैठक कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई, जिसके मध्य कुण्डलपुर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में बनने वाले सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री दीपक जैन एवं उनकी धर्मपत्नी सहित

उनके माता-पिता तथा पुत्र-पुत्री का कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति की ओर से विशेष सम्मान किया गया। इसी बैठक के मध्य सम्पूर्ण आरा जैन समाज ने पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी को ''वाग्देवी'' की उपाधि प्रदान करते हुए अपने को सौभाग्यशाली माना।

➢नाम की अद्भुत साम्यता देखी–

13 दिसम्बर को 11 बजे आरा शहर के प्रमुख श्रेष्ठी श्री हरखेन कुमार जैन के सुपुत्र कृष्ण कुमार जैन आए और उन्होंने पूज्य माताजी से अपने ट्रस्ट द्वारा संचालित अनेक धार्मिक संस्थाओं के बारे में बताते हुए कहा कि मैंने अपनी माँ मोहिनी के नाम पर विद्यालय का निर्माण कार्य प्रारंभ किया है और उसमें आपका आशीर्वाद चाहता हूँ। माताजी ने दिन में 4 बजे मुझे और मोतीसागर जी को वहाँ भेजा, तो हमने देखा कि बहुत बड़ा विद्यालय लगभग बन चुका है और कृष्णकुमार जी की इच्छा है कि बड़ी माताजी के चरण भी यहाँ पड़ें, मैं उनके नाम का शिलालेख यहाँ लगाऊँ, उनका गोत्र भी गोयल है और माताजी का जन्म गोत्र भी गोयल है, माताजी की माँ का नाम भी मोहिनी देवी था और कृष्ण कुमार की माँ का नाम भी मोहिनी देवी था। पहले से ये ज्ञानस्थली नाम से एक शिक्षण संस्था चला रहे हैं अब नाम, गोत्र आदि सब एक जैसा होने से उन्हें बहुत आत्मीयता जुड़ गई है अतः उनके निवेदन पर माताजी ने 15 दिसम्बर को वहाँ पधारने की स्वीकृति प्रदान की, प्रातःकाल माताजी ''माता मोहिनी कन्या विद्यालय'' गईं, वहाँ यंत्र स्थापित किया और शिलालेख का अनावरण भी हुआ। अपने निवेदन को स्वीकृत हुआ देखकर श्रावकरत्न श्री कृष्ण कुमार जी फूले नहीं समाये। आगे भी उनके सुपुत्र कमल कुमार एवं सौ. अनुपमा पूज्य माताजी के अनन्य भक्त के रूप में कुण्डलपुर के साथ जिस आत्मीयता से जुड़े, वह वास्तव में सराहनीय है।

➢बाहुबली मस्तकाभिषेक देखकर मन फूला नहीं समाया–

आरा शहर से विहार करके सर्वप्रथम हमने पूज्य माताजी के साथ जैन सिद्धान्त भवन देखा, जहाँ डॉ. राजाराम जी से भेंट हुई एवं कुछ सामयिक चर्चाएं भी हुईं। पुनः जैन बाला विश्राम (चंदाबाई आश्रम) पहुँचे, जहाँ स्कूल की बालिकाएँ स्वागत के लिए खड़ी थीं। वहाँ भगवान बाहुबली का दर्शन एवं भव्य पंचामृत अभिषेक देखकर मन फूला नहीं समाया। बाला विश्राम के सामने सड़क पार करके दो जिनमंदिर हैं, उनके दर्शन किए तथा सहस्रकूट, पार्श्वनाथ आदि की बड़ी-बड़ी सुन्दर प्रतिमाओं के दर्शन किए और अभिषेक भी देखा।

मध्यान्ह में सैकड़ों छात्राओं के लिए मंगल उद्बोधन प्रदान करते हुए संघ ने पटना की ओर मंगल प्रस्थान किया।

➢पटना शहर में ज्ञानामृत की वर्षा–

13 दिसम्बर 2002 को आरा शहर में पटना के वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री रामगोपाल जी, अजय जी आदि अनेक गणमान्य महानुभावों ने पटना पदार्पण के लिए पूज्य माताजी को श्रीफल चढ़ाया, उनके आग्रह पर माताजी ने संघ सहित 19 दिसम्बर को पटना में मंगल प्रवेश किया। 4 दिवसीय इस प्रवास में संघ सानिध्य का लाभ पटनावासियों के लिए महान सौभाग्य का सूचक बनकर अवतरित हुआ, जब पूज्य माताजी के मुखारविंद से हुई ज्ञानामृत की वर्षा ने समस्त जैन समाज को सराबोर कर दिया। 19 व 20 दिसम्बर को दिगम्बर जैन मंदिर मीठापुर के प्रवास में प्रवचन सभाओं के अतिरिक्त ध्यान साधना का आयोजन हुआ तथा दिन में 1 बजे से मंदिर जी में 1008 अर्घ्य से समन्वित वीरगुणसंपद् विधान हुआ। उसी के मध्य हुए वक्तव्य से जनसमूह ने माताजी के मुखारविंद से कुण्डलपुर के महत्व को जाना। 21 व 22 दिसम्बर 2002 को जैनभवन, कांग्रेस मैदान-कदमकुंआ में संघ का प्रवास रहा, जहाँ 22 दिसम्बर को माताजी के पावन सानिध्य में दश दिवसीय शिक्षण शिविर का विधिवत् उद्घाटन भी सम्पन्न हुआ।

पूज्य माताजी ने जिस दिन से पटना में मंगल पदार्पण किया, तब से बिहार दिगम्बर जैन तीर्थ न्यास बोर्ड के अध्यक्ष श्री रामगोपाल जी पूरा दिन संघ की सेवा में लगे रहते थे जबकि यहाँ के लोगों ने बताया कि ये इस प्रकार कभी किसी साधु के साथ नहीं लगे हैं। वैसे पटना के लोगों में वैशाली के संस्कार कुछ ज्यादा थे किन्तु तीन दिनों के अन्तर्गत पूज्य माताजी एवं हम लोगों के प्रवचन से सभी को वास्तविकता समझ में आई और उनके हृदय में कुण्डलपुर के प्रति सहयोग की भावनाएँ भी वृद्धिंगत हुईं।

➢सिद्धक्षेत्र गुलजारबाग के दर्शन किए–

पटना से विहार कर 7 किमी. दूर सिद्धक्षेत्र गुलजारबाग में मंगल पदार्पण हुआ। सेठ सुदर्शन की निर्वाणभूमि के नाम से विख्यात यह स्थल कभी दिगम्बर जैन धर्मावलम्बियों का पूज्य पवित्र तीर्थ था परन्तु वर्तमान में कालदोषवश अथवा समाज की सुप्ततावश वह अपने लिए केवल दर्शन हेतु उपलब्ध रहता है। दिगम्बर जैन धर्मशाला में स्थित भगवान नेमिनाथ जिनमंदिर के दर्शन कर उपस्थित जनसमुदाय को पूज्य माताजी ने अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान

किया। मध्यान्ह 3 बजे हम लोग पुरानी पटना सिटी में गए, वहाँ 4 दिगम्बर जैन मंदिर हैं किन्तु जैन घर केवल 5-7 होने से उन मंदिरों की स्थिति नाजुक है। वहाँ के लोगों ने बताया कि पहले कभी यहाँ 500 जैन घर थे किन्तु धीरे-धीर लोगों के बाहर चले जाने से अब पटना सिटी में धर्मरुचि बहुत कम हो गई है।

यह सुनकर मन में बड़ा दुख हुआ कि जिनसंस्कृति की इन अमिट धरोहरों की दिगम्बर जैन समाज अगर देखरेख नहीं करेगा, तो एक न एक दिन फिर कोई अराजक तत्त्व इन पर अपना कब्जा जमा लेंगे, वस्तुतः अभी दिगम्बर जैन समाज के जागृत होने की अत्यधिक आवश्यकता है।

➢बना नंद्यावर्त महान हे माता तेरी कृपा से (स्वप्न में दिखा तीर्थ का साकाररूप)–

शास्त्र पुराणों में वर्णन आता है कि स्वस्थ अवस्था में देखा गया स्वप्न उचित फल को प्रदान करता है।'' फिर इस समय तो हम सभी के मन में उठते-बैठते कुण्डलपुर तीर्थ विकास की ही धुन रहती थी। 26 दिसम्बर की रात्रि, जब हम अपनी मंजिल से कुछ ही दूर पर थे, रात्रि में 3 बजे मैंने स्वप्न में देखा कि एक बहुत बड़े पाण्डाल में खूब पूजा-भक्ति हो रही है और उसी के मध्य वाद्य यंत्र बजाने की प्रतियोगिता चल रही है, तो सब लोग बांसुरी, ढपली, मंजीरा, बैण्ड आदि बजा रहे हैं, उसी में वाराणसी निवासी सेठ रिसबदास जी की पुत्रवधू (दीपक जी की धर्मपत्नी) श्रीमती सुभाषिनी ने अपनी बेटी स्तुति को एकभजन लिखकर भेजा, तो वह बजाती, गाती और नाचती हुई एकदम पीछे से आगे तक आ गई और माताजी की गोद में सिर रखकर भावविह्वल हो बोलने लगी।

कु. स्तुति ने जो गीत गाया, उसके पूरे शब्द तो मुझे याद नहीं हैं किन्तु भाव थे कि माता! हम लोगों ने तो आपके द्वारा ही धर्ममार्ग और ज्ञान प्राप्त किया है और आप अब हमें मत छोड़ना। उस भजन की एक कर्णप्रिय पंक्ति मुझे अवश्य याद रही–**बना नंद्यावर्त महान, हे माता! तेरी कृपा से।** मैंने तुरंत यह सपना माताजी से 3 बजे रात्रि में ही बताया, तो उसे सुनकर माताजी को बड़ी प्रसन्नता हुई।

ठीक इसी प्रकार का तीर्थ के साकाररूप को प्रदर्शित करता स्वप्न मैंने 28 दिसम्बर को रात्रि में देखा कि कुण्डलपुर में चलते-चलते मुझे ठोकर लगी और कंकर उठाते ही धरती से एक चांदी की प्रतिमा निकल पड़ी, पुनः 5-6 पीतल धातु की प्रतिमाएँ निकल पड़ीं और उन प्रतिमाओं को मैंने जल्दी से उठा लिया है। सुबह उठते ही मन में बड़ी प्रसन्नता हुई और मैंने पूज्य माताजी को बताया तो उन्होंने कहा कि ये स्वप्न तीर्थ के विकसित स्वरूप और

2600 वर्षों के पुनः जीवन्त होते इतिहास को सूचित कर रहे हैं।

➢अतिशयकारी है प्रयाग के भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा–

प्रयाग तीर्थ में मंगल चातुर्मास के अनन्तर 10 नवम्बर 2002 को जब माताजी ने कुण्डलपुर की ओर मंगल विहार किया, उस समय विहार करते समय अचानक कैलाशपर्वत पर विराजमान भगवान ऋषभदेव के चरणों में नमन करते हुए पूज्य माताजी के मुँह से निकल गया कि हे भगवन्! मैं और कुछ नहीं अपितु आपके पोते का ही उत्सव करने जा रही हूँ, अब मेरी पतवार आपके हाथ में है।'' दरअसल बात यह थी, उन दिनों रवीन्द्र जी चिंतित रहते थे कि माताजी ने फरवरी 2003 में कुण्डलपुर में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा और मस्तकाभिषेक महोत्सव घोषित कर दिया है किन्तु वहाँ अभी मैं कोई निर्माण ही प्रारंभ नहीं कर पाया हूँ, तो दो-तीन माह के अन्दर फरवरी में महोत्सव कैसे संभव हो पाएगा? उन्होंने पूज्य माताजी से बार-बार तारीख बढ़ाने का आग्रह किया किन्तु माताजी ने कहा कि जो तारीख घोषित हो गई है, उसे मत टालो। पुनः माताजी को भी किंचित् आकुलता हुई कि सब कुछ इतनी जल्दी कैसे हो पाएगा?

लेकिन शायद प्रयाग के भगवान ऋषभदेव का अतिशय ही था कि प्रयाग से निकलकर बनारस पहुँचते ही एकमात्र प्रेरणा पर कुण्डलपुर के महोत्सव में सौधर्म इन्द्र बनने हेतु श्री दीपक कुमार जैन (वाराणसी) तैयार हो गये और ज्यों-ज्यों संघ आगे बढ़ा,त्यों-त्यों बनारस, आरा-पटना सभी स्थान के लोग कुण्डलपुर के साथ जुड़ते चले गए। इस प्रकार भक्तों के विशाल समूह के साथ 29 दिसम्बर 2002 को पूज्य माताजी एवं हम सभी का संघ सहित मंगल पदार्पण भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में हो गया और प्रभु के दर्शन कर हम सभी ने अपने को धन्य माना।

➢एक ऐतिहासिक यात्रा की सुखद पूर्णता–

जिन शासनपति भगवान महावीर की छत्रछाया में हम और आप रहकर धर्म का निराबाध पालन करते हुए संसार भ्रमण को समाप्त करने हेतु अग्रसर हैं, उनकी जन्मभूमि की चरण रज मस्तक पर लगाना, साक्षात् रूप में वहाँ पहुँचना, एक स्वप्न की भाँति ही था किन्तु पूज्य माताजी जैसी दैवी शक्ति के लिए कोई भी कार्य असंभव नहीं है। तभी तो इतनी कठिन यात्रा सुखद पूर्णता के साथ सम्पन्न हो गई। पग-पग करके धर्म का अलख जगाते हुए, 1300 किमी. की दूरी तय करके हृदय में अपूर्व उल्लास एवं आनन्द के साथ

पूज्य माताजी एवं समस्त संघ के साथ जब हमने 29 दिसम्बर 2002 को भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में प्रवेश किया, तो 50 वर्षों के पश्चात् इस भूमि पर आयोजित जुलूस ने चारों दिशाओं को भगवान महावीर की जयकारों से गुंजायमान करते हुए 2600 वर्ष पूर्व के इतिहास को साकार करने का ऐतिहासिक प्रयास किया।

राजधानी दिल्ली, वाराणसी, आरा, पटना, कोडरमा, इलाहाबाद, महाराष्ट्र आदि विविध अंचलों से पधारे भक्तों के अतिरिक्त सैकड़ों स्थानीय ग्रामवासियों ने अपूर्व उत्साह के साथ शोभायात्रा एवं धर्मसभा में भाग लिया। नालंदा स्थित श्वेताम्बर जैन मंदिर से प्रारंभ होकर जुलूस मध्यान्ह लगभग 1.30 बजे कुण्डलपुर अवस्थित प्राचीन भगवान महावीर मंदिर में पहुँचा, वहाँ के पदाधिकारियों श्री अजय जी-आरा आदि ने संघ का स्वागत किया, मंदिर जी में प्रवेश कर भगवान महावीर का दर्शन करके पूज्य माताजी ने 20 फरवरी को राजधानी दिल्ली से प्रारंभ यात्रा की सकुशल सुखद पूर्णता पर विशेष आंतरिक आल्हाद एवं प्रसन्नता का अनुभव किया।

तत्पश्चात् पुराने मंदिर के समक्ष नवीन निर्माण के लिए क्रय की गई भूमि पर आयोजित धर्मसभा में स्थानीय प्रो. विजय कुमार शर्मा ने सभी कुण्डलपुरवासियों की ओर से जैन समाज को यह विश्वास दिलाया कि पूज्य माताजी द्वारा उठाये गए हर कदम को हम सिर-माथे पर लेंगे। पूर्व शिक्षा मंत्री (बिहार सरकार) श्री तरुण जी ने कहा कि पूज्य माताजी के आने से तो सारा विवाद ही समाप्त हो गया है क्योंकि माता ही संतान को वास्तविकता का बोध कराती है। बिहार तीर्थ क्षेत्र कमेटी के मंत्री श्री अजय कुमार जैन ने जन्मभूमि के रूप में पूज्य माताजी द्वारा कुण्डलपुर के विकास के संकल्प की पुरजोर प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि 50 वर्ष पूर्व वैशाली को जन्मभूमि के रूप में प्रचारित करना प्रारंभ किया गया, पर 95 प्रतिशत जनता की श्रद्धा कुण्डलपुर (नालंदा) के साथ ही जुड़ी रही और आज भी जुड़ी है। पूज्य माताजी के कुण्डलपुर मंगल प्रवेश की पावन बेला में भक्तों द्वारा खूब रत्नवृष्टि की गई एवं रात्रि में 108 दीपकों से भगवान महावीर की मंगल आरती सम्पन्न की गई।

वस्तुतः अत्यन्त शुभ एवं उल्लासपूर्ण वातावरण में भगवान महावीर जन्मभूमि का एक नूतन पृष्ठ प्रारंभ हुआ, जिसका भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल रहा।

➢कुण्डलपुर विकास के प्रारंभिक चरण–

कुण्डलपुर में संघ का मंगल पदार्पण होते ही उत्तरमुखी नूतन क्रीत भूमि

पर भगवान महावीर मंदिर का शिलान्यास पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में श्री दीपक जैन-वाराणसी (सपत्नीक) ने 29 दिसम्बर 2002 को किया। शिलान्यास करके ज्यों ही माताजी आगे बढ़ीं, तो सामने सुसज्जित हाथी दिखाई दिया, उसे सभी ने लड्डू एवं गुड़ खिलाकर भगवान महावीर की जयकारों से कुण्डलपुर को गुंजायमान कर दिया। पूज्य माताजी को इस दृश्य के शुभ शकुन ने कार्य की मंगलमयी पूर्णता हेतु आश्वस्त किया पुनः हम सभी लोग प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर परिसर के कमरों में आकर ठहरे और भक्तों की भीड़ ने अपने-अपने घर की ओर प्रस्थान कर दिया पुनः संघ की दिनचर्या 30 दिसम्बर से प्रारंभ हो गई। माताजी प्रतिदिन नवविकसित तीर्थ भूमि पर जाकर बाहर मैदान में ही संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों से पूजा, विधान और जाप्य आदि का अनुष्ठान कराने लगीं। नवविकसित तीर्थ पर निर्माणकार्य द्रुतगति से चल रहा था तथा भीषण सर्दी ने भी उसमें कोई व्यवधान नहीं पैदा होने दिया।

➢असली जन्मभूमि का चमत्कार–

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के आशीर्वादपूर्वक ईसवी सन् के नववर्ष 2003 का सुप्रभात हुआ, प्रातःकाल भगवान का पंचामृत अभिषेक हुआ और प्रतिदिन के क्रमानुसार प्रातः 6.30 से 7 बजे संघस्थ शिष्याओं को अध्ययन कराया, पुनः गुरुवंदना के पश्चात् जब माताजी की ब्र.रवीन्द्र जी के साथ नूतन तीर्थ नंद्यावर्त महल के मास्टर प्लान पर चर्चा हुई तो मात्र डेढ़-दो घंटे के अंदर ही पूरा मास्टर प्लान निर्णीत हो गया कि परिसर में तीन मंदिर उत्तरमुखी (महावीर मंदिर, ऋषभदेव मंदिर एवं नवग्रहशांति मंदिर) रहेंगे, पूर्वमुखी तीन मंजिला तीन चौबीसी मंदिर और उसके सामने नंद्यावर्त महल बनेगा। त्यागी भवन, धर्मशाला दक्षिण में मंदिर के पीछे एवं बाजू में रहेंगे।

➢अनेक शंकाओं का समाधान करने वाली सच्ची वीर जन्मभूमि है कुण्डलपुरी–

ईसवी सन् के नये वर्ष के शुभारंभ में सम्पूर्ण देशवासियों, देश के शासक-प्रशासक तथा भारत की सीमा पर तैनात वीर सुरक्षा सैनिकों के लिए नववर्ष का मंगलमयी आशीर्वाद प्रदान कर, भारत देश के गौरव को सदा वृद्धिंगत होने का शुभाशीर्वाद प्रदान करते हुए अपने उद्बोधन में पूज्य माताजी ने कहा कि जब से मैंने कुण्डलपुर में कदम रखा है, तब से मुझे अनेक प्रकार की सुखद अनुभूतियाँ हुई हैं तथा 2-3 दिन के प्रवास में ही मेरी अनेक समस्याओं का समाधान हुआ है और इन सब उपलब्धियों से मुझे यह पक्का

विश्वास हो गया है कि जहाँ 2600 वर्ष पूर्व भगवान महावीर ने जन्म लिया था, जहाँ उन वीर प्रभु को पालने में झूलते हुए देखने मात्र से संजय-विजय नामक चारण ऋद्धिधारी मुनियों की शंका का निवारण हो गया था, वह यही भगवान महावीर की सच्ची जन्मभूमि कुण्डलपुरी है। उस पवित्र स्थल की चरणरज प्राप्त कर वर्तमान युग के साधुओं की शंका का समाधान एवं भक्तों की मनोकामना की सिद्धि हो जाए, तो कोई अतिशयोक्ति वाली बात नहीं है।'' यदि आप लोग भी सच्ची भक्ति के साथ कुण्डलपुर के **'महावीर बाबा'** का दर्शन करेंगे, तो निश्चित रूप से मनोकामनाओं की सिद्धि होगी तथा समस्याओं का समाधान प्राप्त होगा।

➢घर-घर चर्चा कुण्डलपुर की–

पूज्य गणिनी माताजी के मुख में वास्तव में साक्षात् सरस्वती माता वास करती हैं और उनका उच्चरित प्रत्येक शब्द आगम का अटल वाक्य और अकाट्य सत्य है, उनकी उस सारभूत वाणी का ज्ञान जब जैन टी.वी. चैनल के माध्यम से 10 जनवरी 2003 से घर बैठे लोगों को प्रातः 7 बजे से सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, तो भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव के संदर्भ में जनता ने जैन आगम से संबंधित समस्त तथ्यों का विवेचन पूज्य माताजी के मुखारविंद से सुनकर भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के वास्तविक तथ्यों की जानकारी प्राप्त की, जिससे स्वतः ही घर-घर कुण्डलपुर की चर्चा फैल गई। वास्तव में आज के भौतिकवादी युग में मीडिया एवं टी.वी. चैनल प्रचार-प्रसार के सशक्त माध्यम हैं।

➢नंद्यावर्त महल तीर्थ पर भगवान ऋषभदेव की वेदी का शिलान्यास–

तीर्थ परिसर में द्रुतगति से निर्माणकार्य चल रहा था, उसी क्रम में नंद्यावर्त परिसर में भगवान महावीर मंदिर के दाहिने हाथ निर्मित होने वाले भगवान ऋषभदेव मंदिर की वेदी का शिलान्यास 5 जनवरी 2003 को प्रातः 9.30 बजे किया गया , जिसमें भगवान ऋषभदेव की सवा ग्यारह फुट पद्मासन प्रतिमा विराजमान होनी थीं और 31×48 फुट लम्बा-चौड़ा एवं 21 फुट ऊँचा मंदिर बनाने का निर्णय हुआ। यह प्रतिमा वाराणसी निवासी श्री रिसबदास दीपक कुमार जैन की ओर से विराजमान होने की स्वीकृति प्राप्त हुई।

➢जहरीले जीव किसी का कुछ न बिगाड़ सके–

नंद्यावर्त महल परिसर की जिस भूमि का क्रय किया गया था, वहाँ ऊबड़-खाबड़ जमीन के अतिरिक्त कंटीली झाड़ियाँ और जीव-जन्तु भरे पड़े थे।

धीरे-धीरे उस स्थल को सपाट एवं स्वच्छ कर निर्माण के योग्य बनाया जा रहा था किन्तु वहाँ के कर्मचारी और स्टॉफ के कार्यकर्ता आकर माताजी को बताते कि माताजी! यहाँ तो जरा सी मिट्टी फावड़े से हटाने में ही एक साथ कई-कई बिच्छू निकल आते हैं, हर दिन साँप भी निकलते हैं लेकिन आपके आशीर्वाद से हम निराबाध अपना कार्य कर रहे हैं परन्तु थोड़ा भय तो लगता ही है। एक दिन तो दो बड़े जीव-गोह निकल पड़े, जिसे स्टॉफ के ही सतवीर सिंह ने बांधकर हम लोगों को दिखाया। मैंने तो पहली बार ही इस जानवर को देखा था अतः उसे देखकर तो एकदम रोंगटे खड़े हो गए। उस समय सतवीर ने बताया कि माताजी! यह बड़ा जहरीला और तेज पकड़ वाला जानवर होता है, चोर लोग पूर्व में इसे किसी की मकान की छत पर डालकर उसमें रस्से बांधकर ऊपर चढ़ जाते थे, तो भी यह गिरने वाला जीव नहीं है अर्थात् अपने पंजों से यह उस स्थान को एकदम जकड़ लेता है।

इन सबको देखकर माताजी ने सरसों मंत्रित कर सभी दिशाओं में क्षेपण करवाईं, तब से इन जीवों की बहुलता समाप्तप्राय सी हो गई। हाँ! यदा-कदा कभी कोई जीव निकले भी, तो इतने दिन के प्रवास में कभी किसी का कोई अहित नहीं हुआ।

➢जोर-शोर से तैयारियाँ प्रारंभ हो गईं–

7 फरवरी से 12 फरवरी 2003, माघ शु. 6 से 10 तक होने वाले महोत्सव को सम्पन्न करने हेतु कई बैठकें सम्पन्न हुईं, जिनमें पटना, आरा, कोडरमा, गया, हजारीबाग तथा दिल्ली-मेरठ आदि के श्रावकों ने अपनी-अपनी विभागीय जिम्मेदारियाँ संभालीं और रवीन्द्र जी के साथ सभी ने कंधे से कंधा मिलाकर कार्य में सहयोग प्रदान किया।

कुण्डलपुर में नवविकसित हो रहे परिसर का नाम भगवान महावीर के जन्म से पावन महल के नाम पर ''नंद्यावर्त महल'' रखा गया। भगवान महावीर के जन्म महल के नाम से इंगित किए गए इस तीर्थ परिसर के अनेकों बोर्ड, बैनर, पोस्टर आदि देश के कोने-कोने में लगाए गए और पंचकल्याणक की व्यापक तैयारियाँ होने लगीं। 14 जनवरी 2003 को उस नंद्यावर्त महल परिसर में सर्वप्रथम जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से भगवान ऋषभदेव तीर्थंकर की सवा ग्यारह फुट लालवर्णी पद्मासन प्रतिमा का मंगल पदार्पण हुआ। उन्हें यथास्थान वेदी पर विराजमान करने हेतु भगवान महावीर मंदिर के दाईं ओर वेदी का निर्माण पहले शुरू कर दिया गया। इसी प्रकार मूल मंदिर के बाईं ओर नवग्रहशांति

जिनमंदिर का शिलान्यास 9 फरवरी 2003 को श्री ज्ञानचंद जैन-आरा ने किया। इस परिसर में इन तीन मंदिरों के अतिरिक्त त्रिकाल चौबीसी मंदिर (तीन मंजिला), नंद्यावर्त महल विशेष रूप से बनाने का निर्णय हुआ, किन्तु सर्वप्रथम फरवरी में होने वाले पंचकल्याणक में जिन-जिन प्रतिमाओं की प्राण-प्रतिष्ठा होनी थी, उनको विराजमान करने हेतु वेदी आदि के निर्माण प्राथमिक स्तर पर द्रुतगति से हुए पुनः कुछ अस्थाई कच्चे कमरे बनाकर भाई जी ने पूज्य माताजी एवं हम सभी को नंद्यावर्त परिसर में 30 जनवरी 2003 को प्रवेश कराया, इससे पूर्व 25 जनवरी को मैंने नंद्यावर्त स्थल-कुण्डलपुर में प्रथम बार अपने दीक्षित जीवन का 43वाँ केशलोंच किया। लगभग 1 माह से पूज्य माताजी एवं हम सभी प्राचीन मंदिर के कमरों में थे चूँकि पंचकल्याणक के दिनों में बार-बार वहाँ से नंद्यावर्त परिसर में आने लायक पूज्य माताजी का स्वास्थ्य नहीं था, इसलिए माताजी ने टीन के कमरों में रहना उचित समझा। इस मध्य कुण्डलपुर में दूर-दूर से भक्तों के समूह आए और सब तेज गति से कुण्डलपुर का विकास कार्य होते देखकर खूब प्रसन्न होते एवं प्रशंसा करते-करते सबके नेत्रों से हर्षाश्रु निकल पड़ते, वस्तुतः यह सब कलियुग में जिनेन्द्र भगवान का प्रभाव मानना चाहिए कि अच्छे कार्यों को देखकर असली भक्त गद्गद हुए बिना नहीं रहते।

➢कुण्डलपुर यात्रा ने लिया सार्थक रूप–

महोत्सव की तैयारी में कुण्डलपुर के अन्दर आयोजन समिति द्वारा आगन्तुक श्रद्धालुओं के लिए बसाई गई नगरी को देखकर लोग इसे देवोपुनीत अतिशय ही मान रहे थे क्योंकि लगभग 100 वर्षों में वहाँ ऐसा कोई अद्वितीय आयोजन हुआ ही नहीं था। श्रद्धालुओं के निरन्तर आगमन के साथ माताजी को बार-बार मूलनायक भगवान महावीर के आने और उन्हें यथास्थान वेदी पर विराजमान करने की चिंता थी, जिसका निवारण 7 फरवरी को गर्भकल्याणक के दिन ही हुआ। प्रतिमा तो 5 फरवरी, माघ शु. चतुर्दशी की रात्रि में जयपुर से कुण्डलपुर पहुँच गई, अगले दिन 6 फरवरी को क्रेन ने प्रतिमा की पेटी 25 फुट ऊँचे महावीर मंदिर के प्लेटफार्म पर पहुँचा दी किन्तु वेदी पर विराजमान करना क्रेन के लिए भी असंभव था अतः चैनपुली के द्वारा 7 फरवरी की मध्यान्ह 1 बजे से प्रतिमा विराजमान का उपक्रम प्रारंभ हुआ। पूज्य माताजी उस समय वहीं बैठकर मंत्र जाप्य करती रहीं पुनः मैंने, संघस्थ क्षु. मोतीसागर जी, रवीन्द्र जी आदि के साथ सेठ रिसबदास जी-वाराणसी आदि श्रावकों ने

शाम तक वहीं बैठकर मंत्र जाप्य किया और जब शाम 7 बजकर 50 मिनट पर भगवान महावीर यथास्थान विराजमान हो गए, तब भक्तगणों ने रत्नवृष्टि, जय-जयकारों के स्वरों से सम्पूर्ण परिसर को गुंजायमान कर दिया।

➢जम्बूद्वीप के सभी कार्यकर्ता आशीर्वाद के पात्र हैं–

भगवान महावीर की श्वेतवर्णी मनोज्ञ प्रतिमा को ऊँचाई पर विराजमान करने के इस जोखिम भरे कार्य को सम्पन्न करने में जहाँ कुछ आगन्तुक इंजीनियर भयभीत हो रहे थे, वहीं जंबूद्वीप-हस्तिनापुर के कुशल सुपरवाइजर शरीफ अहमद एवं जयपुर के मिस्त्री आत्माराम ने पूरी हिम्मत के साथ इस कार्य को सम्पन्न करके अपना कर्तव्य निभाया। पूज्य माताजी ने उन दोनों पुण्यात्माओं के लिए खूब मंगल आशीर्वाद प्रदान किया और भक्तों ने उन्हें पुरस्कार प्रदान किया।

वास्तव में जो पुण्यशाली जीव होते हैं, वे मात्र थोड़ा सा अवलम्बन पाकर भी अपने आगामी पुण्य का संचय करने में कभी पीछे नहीं रहते हैं, इसीलिए आचार्यों ने पुण्यात्मा जीव के बारे में बताते हुए कहा है कि–

जीवानां कृतपुण्यानां, माङ्गल्यं च दिने दिने।

अर्थात् पुण्यशाली जीवों का हमेशा कल्याण होता है।

शायद पुण्य के फलस्वरूप ही माताजी की प्रेरणा से सम्पन्न होने वाले सभी निर्माणकार्यों में शरीफ का हाथ अवश्य लगता है बल्कि यूँ कहें कि उसका हाथ लगे बिना माताजी को कोई कार्य पसंद ही नहीं आता है। पूज्य माताजी को इस बात का गौरव है कि जम्बूद्वीप में 25-30 वर्षों से कार्यरत शरीफ अहमद जाति से मुस्लिम होने पर भी पूर्णरूपेण शाकाहारी है और उसका पूरा परिवार भी पूर्ण शाकाहारी है। आज भी उसकी पूज्य माताजी के प्रति अगाढ़ भक्ति है, तभी वह परिवार का मोह छोड़कर जहाँ भी माताजी निर्माण कार्य करवाती हैं, महीनों रहकर निर्माण कराने का पुण्य अर्जित कर लेता है। उसके समान ही हस्तिनापुर-जम्बूद्वीप के सभी कर्मचारी जैन-अजैन आदि पूरे मनोयोग एवं अपनत्व भाव से कार्य करके पुण्य सम्पादन कर लेते हैं। पूज्य माताजी यह बात गौरव के साथ कहती हैं कि "मेरी चर्या में बाधा आए बिना तीर्थोद्धार एवं विकास के जो महान कार्य सम्पन्न हो रहे हैं, उसमें कर्णधार भक्तमंडली के साथ-साथ मेरे संघस्थ शिष्य-शिष्याओं का एवं जम्बूद्वीप की सशक्त टीम का बहुत बड़ा योगदान रहता है, तभी मैं बड़े कार्यों की प्रेरणा देकर एकदम निश्चिंत रहती हूँ और अपने लेखन में व्यस्त रहती हूँ। जिस दिन

मुझे ये संयोग नहीं प्राप्त होगें संभवतः मैं प्रभावना के कार्यों से विमुख होकर मात्र आत्मसाधना करूँगी क्योंकि आर्यिका चर्या में अपने संयम की साधना ही मेरा प्रमुख लक्ष्य है।

➢आन्तरिक वेदना से हुआ अद्‌भुत चमत्कार–

28 जनवरी 2003 को कुण्डलपुर के प्राचीन मंदिर में राजधानी दिल्ली से भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव की केन्द्रीय समिति के महामंत्री श्री डी.के. जैन (नोएडा) शिखर जी से पूज्य माताजी के दर्शनार्थ पधारे और यहाँ तीर्थ का प्रस्तावित स्वरूप देखकर बड़े खुश हुए। उस समय जब उनसे कुण्डलुपर तीर्थ विकास की विस्तृत चर्चा चलने लगी, तो उनसे पूज्य माताजी ने कहा कि यदि आप लोग सरकारी मीटिंग में से कुण्डलपुर का नाम न निकालते, तो यह विकास का अवसर न आता, उस समय उन्होंने जो एक तथाकथित विशिष्ट श्रावक की कूटनीति पूर्ण बातें बताईं, उनकी असलियत जानकर माताजी को बड़ा क्षोभ हुआ कि देखो! उस व्यक्ति ने तीर्थंकर प्रभु की जन्मभूमि को बदलने की कुटिल भावनाओं से कितना पापबंध कर लिया। पुनः माताजी ने 2 घंटे तक अयोध्या के भगवान ऋषभदेव का खूब ध्यान किया कि भगवन्! संसार में थोड़ी सी पदलिप्सा एवं स्वार्थसिद्धि के लिए लोग बड़ा से बड़ा पापबंध करने में भी नहीं डरते हैं। प्रभो! सभी प्राणियों को सद्‌बुद्धि प्राप्त हो.....इत्यादि।

उधर सायंकाल 7 बजे अयोध्या के मंत्री सरोज जैन का फोन ब्र.रवीन्द्र जी के पास आया और रवीन्द्र जी आकर हम लोगों को बताने लगे कि माताजी! अयोध्या के भगवान ऋषभदेव का आज दोपहर से स्वतः ही (अपने आप) खूब अभिषेक हो रहा है, वहाँ न तो छत गीली है और न छत पर पानी है, न ही बारिश हुई है और न आस-पास ही कुछ है, ऐसा चमत्कार आज तक कभी नहीं हुआ है। तब सुनकर मन में यही लगा कि पूज्य माताजी के ध्यान परमाणुओं ने वहाँ पहुँचकर इन्द्रों से अभिषेक करवाया है। अभिषेक की बात सुनकर माताजी को बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने कहलाया कि उस दृश्य का वीडियो-फोटो करवा लो। रात्रि 9 बजे तक लगातार यही समाचार मिलता रहा कि अभी अभिषेक चल रहा है और ऊपर से नीचे तक जलधारा बह रही है।

➢तपस्या के प्रभाव से होती है बड़े-बड़े कार्यों की पूर्णता–

नंद्यावर्त परिसर में यूं तो कार्य तेजी से चल रहा था लेकिन कभी-कभी बारिश हो जाने से कार्य में व्यवधान आने की संभावना प्रतीत होती थी।

1 फरवरी को प्रातः 5 बजे से बरसात प्रारंभ हो गई अतः मिस्त्री-मजदूरों के काम में थोड़ी बाधा आई किन्तु पूर्व निर्धारित कार्यक्रमानुसार 11 बजे से भगवान महावीर मंदिर का लिन्टर पड़ना शुरू हुआ, जो रात को 11 बजे तक चला। दिन भर पता लगता रहा कि बनारस, इलाहाबाद, लखनऊ, दिल्ली आदि सब जगह मूसलाधार बारिश हो रही है किन्तु यहाँ दिन भर थोड़ी हवा चलती रही और कुछ-कुछ धूप भी निकली अतः छत पड़ने में कोई बाधा नहीं आई। वस्तुतः यह सब पूज्य माताजी की तपस्या का प्रभाव ही है कि किसी न किसी तरह समय पर बड़े-बड़े कार्य पूर्ण हो ही जाते हैं।

➢सत्यमेव जयते–

यह अटल सत्य है कि अंततः **''सत्य की ही विजय होती है''** भ्रांत व्युत्पत्तियों के बादल भले ही कितने सघन क्यों न हों, सत्य का सूर्य चमचमाते हुए सारे अंधकार को नष्ट करता ही है। भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में मात्र डेढ़ माह के अल्प समय में हुए नवनिर्माण एवं उसके पश्चात् आयोजित राष्ट्रीय स्तर की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव की अत्यन्त शालीन, पूर्ण निर्विघ्न एवं उत्कृष्ट भावना ने इस सर्वकालिक सिद्धान्त को और भी दृढ़ता से सुस्थापित कर दिया है।

प्रतिष्ठा महोत्सव के छह दिनों (7 से 12 फरवरी 2003) के मध्य मानों कुण्डलपुर की धरती पर स्वर्ग ही उतर आया था। चारों ओर फैले जंगल के बीच मानों महामंगल ही घटित हो रहा था, ऐसा प्रतीत हो रहा था कि देवताओं ने आकर कुण्डलपुर महानगरी बसा दी है, जहाँ महान उत्सव, महान हर्ष का माहौल था। देश के विविध प्रान्तों से पधारे जैन श्रद्धालुओं एवं अजैन समाज की प्रतिदिन इतनी भीड़ रही कि 'नंद्यावर्त मंडप' में पैर रखने मात्र की जगह नहीं बची थी। सारे धार्मिक विधिविधान, रात्रिकालीन सांस्कृतिक कार्यक्रम इत्यादि सभी इतने सुव्यवस्थित एवं निर्विघ्न रूप से सम्पन्न हुए कि बार-बार ऐसा लगता था कि मानों स्वयं देवगण ही स्वर्ग से सारी व्यवस्था संचालित कर रहे हैं। प्रतिष्ठा के मध्य मौसम ने भी पूरा साथ दिया, ठंड की कठोरता में समुचित कमी आ जाने से यात्रियों को भी किसी कष्ट का आभास नहीं हो रहा था। चारों ओर खुशियों का ऐसा सैलाब उमड़ रहा था जिसको कहने में असमर्थता सी अनुभव हो रही है और मेरे शब्द भी कम पड़ रहे हैं। यह सब देखकर बिहार प्रांत के लोगों का कहना था कि मात्र कुण्डलपुर में ही नहीं अपितु पूरे बिहार प्रांत में इतना विशाल, इतना भव्य एवं इतना सफल-

सुव्यवस्थित कार्यक्रम हमारी कभी देखने में नहीं आया है। खैर! कठोर परिश्रम के पश्चात् ऐसी अभिव्यक्ति हृदय को शीतल तो लगती ही है। जनसाधारण के अतिरिक्त आगन्तुक प्रशासनिक अधिकारी एवं मंत्रीगण भी जहाँ कुण्डलपुर के इस वैभव से अभिभूत दिखाई पड़े, वहीं दिग्गज राजनेताओं ने भी कार्यक्रम में पधारकर जब भगवान महावीर जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की, तो हृदय को अपार प्रसन्नता हुई।

➢जाकी रहे भावना जैसी, प्रभु मूरत दीखे तिन तैसी–

प्रसंगोपात्त यहाँ मैं इस बात का उल्लेख करना भी आवश्यक समझती हूँ क्योंकि अच्छे कार्य करने वालों के पीछे सदैव से ही कुछ छिद्रान्वेषी तथ्यहीन कथन करते देखे जाते हैं।

प्राचीनकाल से मान्य भगवान महावीर जन्मभूमि के विकास का संकल्प माताजी के हृदय में इस जन्मोत्सव वर्ष में विशेषरूप से प्रभावी हो उठा, इसका कारण यही था कि भगवान के जन्ममहोत्सव का पूरा वर्ष मना लिया जाये और उस तीर्थंकर जन्म से परम पावन भूमि को उपेक्षित ही छोड़ दिया जाए! तो यह पूज्य माताजी को कथमपि स्वीकार नहीं था। सरकार से जन्मभूमि के नाम पर वैशाली और लिछवाड़ को उनकी कार्यसूची में नामांकित कराया गया तथा कुण्डलपुर का नाम नहीं लिया गया, तब माताजी ने स्वयं समाज के आधार से ही सम्पूर्ण समाज द्वारा मान्य जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) को उसका खोया वैभव लौटाने का पक्का मन बना लिया। उनका कहना रहा कि आखिर जैन समाज ने ही अपने समस्त तीर्थों को सदियों से बनाया है, सरकार के पैसों से तीर्थ नहीं बनते हैं। इसी बात को लक्ष्य करके माताजी की कुण्डलपुर के लिए यह ऐतिहासिक मंगल पदयात्रा प्रारंभ हुई और उसी के साथ प्रारंभ हो गया घटिया आरोपों का दौर भी। पत्र-पत्रिकाओं में छपाया गया कि धन इकट्ठा करने का एक नया प्रपंच है। समाज में भ्रम उत्पन्न करने का यह सूत्र है। खैर! प्राचीन मान्यताओं की पुनर्स्थापना के प्रयास में, जनसाधारण की सदा से चली आई श्रद्धा को दृढ़ आधार देने के प्रयास में, आगम की वाणी के रक्षा के प्रयास में यदि कुछ गिने-चुने लोगों का पेट दुःखता है, तो यही कहना पड़ेगा कि "जाकी रहे भावना जैसी, प्रभु मूरत दीखे तिन तैसी।" पूज्य माताजी के बारे में तो पूर्व में कही गई निम्न नीति वास्तव में सार्थक बैठती है–

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः,
प्रारभ्य विघ्नविहिता विरमन्ति मध्याः।

विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः,
प्रारभ्य चोत्तमजनाः न परित्यजन्ति।।

अर्थात् अधम प्रकृति के लोग विघ्नों के भय से निश्चित ही किसी कार्य को प्रारंभ ही नहीं करते। मध्यम कोटि के मनुष्य विघ्नों के आने पर प्रारंभ किए गए कार्य को बीच में ही छोड़ देते हैं, किन्तु उत्तम प्रकृति के मनुष्य बार-बार विघ्न आने पर भी प्रारंभ किए हुए कार्य को नहीं छोड़ते हैं अर्थात् उसे पूरा ही करते हैं।

धर्म और सिद्धान्त की रक्षा में चाहे कितनी विघ्न बाधाएँ उत्पन्न की जाएं, तो भी यदि माताजी ने आगम के परिप्रेक्ष्य में कोई निर्णय कर लिया है, तो वे अपना कदम किंचित् भी कंपायमान नहीं होने देती हैं, समस्त क्षुद्र विरोधों को गौण करके जिनधर्म, जिनायतन एवं जिनवाणी की सेवार्थ प्रतिक्षण अपने कार्य में लगे रहने का महामंत्र ही उन्होंने हम लोगों की रग-रग में फूंका है।

➢गांधी के दांडी मार्च की तरह हजारों कदम बढ़ चले–

इधर पूज्य माताजी के कुण्डलपुर की ओर बढ़ते कदमों के साथ समाज के कदम भी महात्मा गांधी के दांडी मार्च की भांति उस ओर जुड़ने लगे और उधर ब्र. रवीन्द्र जी एवं उनकी सक्रिय टीम ने माताजी के स्वप्न को साकार रूप देना प्रारंभ कर दिया परन्तु बरसात के कारण कुण्डलपुर की भूमि पर निर्माण कार्य में बाधा आने लगी, समय की अल्पता थी, फिर भी शुरू हुआ जन्मभूमि की पावन मिट्टी का चमत्कार। 16 दिसम्बर 2002 को मकराना (राज.) में 40 वर्षों बाद बेदाग श्वेत पाषाण की एक बड़ी शिला मिली। भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण अर्थात् 7 हाथ ऊँची (11 फुट) खड्गासन प्रतिमा बनाने के लिए यह शिला पर्याप्त थी, इस खबर से हम सभी को आंतरिक संतुष्टि एवं हर्ष हुआ। यद्यपि फरवरी की प्रतिष्ठा का समय निकट था, फिर भी जयपुर के प्रसिद्ध मूर्तिकार श्री सूरज नारायण नाठा, उनके पुत्र राजेश नाठा एवं सहयोगियों द्वारा मूर्ति निर्माण का कार्य रात-दिन लगकर प्रारंभ किया गया। इधर पूज्य माताजी एवं हम सभी संघ सहित कुण्डलपुर पहुँच गए और मात्र डेढ़ माह का अल्प समय था फिर भी जन्मभूमि की धरती का अतिशय, कि एक के बाद एक कार्य बनते चले गए। कड़ाके की ठण्ड के बावजूद कार्य पूरे जोर-शोर से प्रारंभ हो गया, प्रतिष्ठा हेतु आवास-पाण्डाल आदि सभी कार्य तीव्र गति से चलने लगे और धीरे-धीरे प्रतिष्ठा महोत्सव की घड़ियाँ समीप आ गईं। क्रमशः मूर्तियों का आना, एक-एक कर विराजमान होना, सब चमत्कार जैसा हो रहा

था, श्वेत पाषाण की बेदाग आकर्षक प्रतिमा तो इतनी मनोरम लग रही थी कि सभी नजरें एकटक उनको निहार रही थीं, तभी तो संघपति जी ने जल्दी से उसमें काला धागा बांध दिया था और उस समय का माहौल एकदम दिव्य प्रतीत हो रहा था।

➢निर्मल भावनाएँ अप्रत्यक्ष रूप से कार्यसिद्धि में सहायक हैं–

वास्तव में यह भगवान महावीर जन्मभूमि के पुण्य परमाणुओं, भगवान की अवगाहना प्रमाण दिव्य प्रतिमा एवं पूज्य माताजी की निर्दोष साधना तथा तपस्या का ही सुफल था। यदि किंचित् मात्र भी आगम की अवहेलना की गई होती, तो कार्यक्रम का नैसर्गिक सौन्दर्य, निर्विघ्न सफलता एवं निर्दोष गरिमा अवतरित ही नहीं हो सकती थी। सोचने का विषय उन लोगों के लिए है जो मिथ्या आरोपों के द्वारा कार्य में विघ्न डालना चाहते थे। पूज्य माताजी ने एक वर्ष पूर्ण होने के पूर्व ही अपने अखण्ड पुरुषार्थ के बल पर उपेक्षा के गर्त में विलीन होने जा रही प्राचीनकाल से मान्य एक तीर्थंकर जन्मभूमि को पुनः नवयौवन प्रदान कर दिया, वस्तुतः जब भावनाएं निर्मल होती हैं, तो शासन देव-देवी भी अप्रत्यक्ष रूप से कार्यसिद्धि में सहायक हुआ करते हैं, यह इस पंचमकाल में भी सत्य सिद्ध हुआ है।

➢शासन देवी-देवता पूज्य हैं–

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह बात अत्यन्त चिन्तनीय है कि चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों के यक्ष-यक्षिणी, शासन देव-देवी को मिथ्यादृष्टि कहकर कुछ लोगों के द्वारा उन्हें जिनमंदिरों से हटवाया जा रहा है। यक्ष-यक्षिणी यद्यपि चतुर्थ गुणस्थानवर्ती हैं, पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक उनकी पूजा कैसे करें, कैसे उनको मंत्रों से अर्घ्य चढ़ाएँ इत्यादि प्रश्न उठते हैं लेकिन पूज्य माताजी का सदैव यही कहना रहता है कि शास्त्रों में जो वर्णन है, उस पर अनेक प्रकार के तर्क नहीं उठाना चाहिए क्योंकि पूज्यपाद स्वामी एक महान आचार्य हुए हैं, हजारों वर्ष पूर्व उनके द्वारा रचित सर्वार्थसिद्धि, समाधिशतक, जैनेन्द्र व्याकरण आदि प्रसिद्ध ग्रंथ हैं, उसके अतिरिक्त उन दिगम्बर परम्परा के महान आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी का बनाया हुआ पंचामृत अभिषेक पाठ भी उपलब्ध होता है और दक्षिण के शिलालेखों में भी उनका खूब वर्णन आया है, उन्होंने पंचामृत अभिषेक पाठ में भगवान की पूजा विधि का वर्णन करते हुए एक जगह बताया है–

तत्र स्थाप्यास्तिथीशा गृहसुरपतयो यक्षयक्ष्यः क्रमेण।
द्वारेशा लोकपाला विधिवदिह मया मंत्रतो व्याह्वियन्ते।।

अर्थात् भगवान की पूजा करते हुए उसी में वहीं पर पन्द्रह तिथि देवता, नवग्रह, सुरपति आदि और यक्ष-यक्षिणी (जिसमें 24 यक्ष व 24 शासन देवी मानी हैं), पाँच क्षेत्रपाल, द्वारपाल, लोकपाल आदि की क्रम से मंत्रों से स्थापना की जानी चाहिए। उन्होंने उसमें दश दिक्पालों का मंत्र भी दिया है– ॐ ह्रीं क्रों प्रशस्तवर्णसर्वलक्षण सम्पूर्णस्वायुधवाहनवधूचिन्हसपरिवारा इन्द्राग्नियम-नैर्ऋतवरुणवायुकुबेरेशानधरणेन्द्रसोमनामदशलोकपालाः! आगच्छत आगच्छत संवौषट्, स्वस्थाने तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, अत्र मम सन्निहिता भवत-भवत वषट् इदं अर्घ्यं पाद्यं गृह्णीध्वं गृह्णीध्वं ॐ भूर्भुः स्वः स्वाहा स्वधा।

यह पूज्यपाद स्वामी का दिक्पाल के आह्वान का मंत्र है। अतः विचार करने का विषय है कि जब पूज्यपाद स्वामी जैसे महान आचार्य के द्वारा दिक्पाल, यक्ष-यक्षिणी आदि के आह्वान व अर्घ्य के मंत्र ग्रंथों में वर्णित हैं, तो इसे मिथ्यात्व कहना और इन देवी-देवताओं की मूर्तियों को मंदिर से हटाने का प्रयत्न करना आगम के विपरीत है। आज हम जितने भी प्राचीन मंदिर एवं मूर्तियाँ देखें, उन सबमें भगवान के आजू-बाजू में यक्ष-यक्षिणी की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं चूँकि यह शासन देव-देवी हमेशा धर्म की रक्षा करने वाले माने गए हैं। कोई इन्हें अरहंत या सिद्ध भगवान मानकर नहीं पूजते हैं, इन्हें शासन देव-देवी मानकर ही इनकी आराधना करते हैं और इनकी उपासना पद्धति में थोड़ा अन्तर है, वह सभी को ग्रंथों से समझना चाहिए।

वस्तुतः आगम की आज्ञा का उल्लंघन करने से, पूज्यपाद जैसे महान आचार्यों की अवहेलना करने से अवश्य मिथ्यात्व आ जाता है। अतः शासन देव-देवी की उपासना या भक्ति मिथ्यात्व नहीं है बल्कि किसी न किसी रूप में वर्तमान में प्रायः घर-घर में मिथ्यात्व डेरा डाले हुए है, वे पता नहीं किन-किन देवी-देवताओं की पूजा करते हैं, तो ऐसी स्थिति में यदि अपने गार्हस्थ्य जीवन में अनेक प्रकार के इच्छाओं की पूर्ति के लिए वे लोग शासन देव-देवी की भक्ति करते हैं तो वह मिथ्यात्व नहीं है, यह निश्चित है। जैन ग्रंथों– तिलोयपण्णत्ति, उमास्वामी श्रावकाचार, वसुनंदि श्रावकाचार आदि के आधार से या और भी अनेक श्रावकाचार ग्रंथों से, प्रतिष्ठातिलक ग्रंथ एवं पूज्यपाद आदि आचार्यों के अभिषेकपाठादि की व्यवस्थानुसार इसे मिथ्यात्व नहीं कहकर धर्म के मर्म को समझना चाहिए।

➢सच्ची जन्मभूमि में लहराया ध्वज विश्व को देगा सुख-शांति–

यहाँ आयोजित ऐतिहासिक भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का शुभारंभ

झण्डारोहण पूर्वक हुआ। पूज्य माताजी ने आगत अतिथियों एवं उपस्थित जनसमुदाय को अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान करते हुए इस सुअवसर पर कहा कि आज भगवान महावीर की सच्ची जन्मभूमि में लहराया धर्मध्वज सारे विश्व में लहराएगा और इस ध्वज की शीतल छाया में अगणित भव्यात्मा सुख और शांति का अनुभव करेंगे। यह सत्य है कि अब हर माह अनेकों स्थानों पर अनेक पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ होती हैं परन्तु कुण्डलपुर की यह पंचकल्याणक प्रतिष्ठा और महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव इसलिए महत्वपूर्ण है, इसलिए ऐतिहासिक है क्योंकि यह संस्कृति की सुरक्षा है, जन्मभूमि, धर्म और आर्ष परम्परा की सुरक्षा है। बात यह है कि दृढ़ संकल्पी साधुओं, आगम परम्परा की रक्षा करने वाले साधुओं, संस्कृति की सुरक्षा करने वाले साधुओं, तीर्थों की जन्मभूमि की रक्षा का संकल्प करने वाले साधुओं के किसी कदम से कदाचित् उनके भक्त उनसे विमुख हो सकते हैं, पर उस साधु के अंतरंग में दृढ़ विश्वास होता है कि शास्त्र जो कह रहा है, जिनवाणी जो कह रही है, उसी के अनुरूप मेरा आचरण है। **''आगम चक्खू साहू''** अर्थात् साधु के पास आगम चक्षु होता है। हम अपनी विचारधारा को अपने मन के अनुकूल नहीं करते हैं, हवा के अनुकूल नहीं करते हैं। वह साधु-साधु नहीं है, जो अपने मन, देश या पाश्चात्य संस्कृति अथवा समाज के अनुकूल चले। साधु तो आगम के अनुकूल चलते हैं, उन्हें न कोई देश, न कोई राष्ट्र, न कोई सरकार, न कोई समाज और न कोई भक्त चला सकता है, साधु तो मात्र आगम की आज्ञानुसार चला करते हैं। यह जैनेश्वरी दीक्षा, यह मयूर पंख की पिच्छी इसी बात को दृढ़ता से अनुमोदित करती है।

➢ऐतिहासिक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा–

भगवान महावीर की खड्गासन मनोज्ञ प्रतिमा के विराजमान होते ही 7 फरवरी से पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव प्रारंभ हो गया। यह प्रतिमा विराजमान करने का सौभाग्य पूज्य माताजी के संघपति लाला श्री महावीर प्रसाद जैन-साउथ एक्स. दिल्ली एवं उनके परिवार को प्राप्त हुआ। प्रतिष्ठा में भी उन्होंने एवं उनकी धर्मपत्नी सौ. कुसुमलता जैन ने भगवान के माता-पिता बनने का पुण्य प्राप्त किया। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी बनारस के श्री दीपक जैन एवं उनकी धर्मपत्नी सौ. सुभाषिनी जैन बने। धनकुबेर का प्रमुख पद आरा निवासी श्री कमल कुमार जैन एवं सौ. अनुपमा जैन को प्राप्त हुआ। इन इन्द्र परिवार के द्वारा किये गये गर्भकल्याणक महोत्सव के सुन्दर मंचन ने सभी को 2600 वर्ष

पूर्व के इतिहास को पुनर्स्मरण करने हेतु बाध्य कर दिया। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी एवं कुबेर आदि इन्द्र-इन्द्राणी द्वारा बीच-बीच में बोले गए अंग्रेजी संवाद भी विशेष आकर्षक रहे। 8 फरवरी को जन्मकल्याणक हुआ, जिसमें अंतरंग एवं बाह्य क्रियाओं के साथ-साथ जिनबालक को जन्माभिषेक के लिए सुमेरु पर्वत पर ले जाने का 'जन्मकल्याणक जुलूस' विशेष आकर्षण का केन्द्र रहा, जो कि नंद्यावर्त स्थल कुण्डलपुर से नालंदा खण्डहर तक गया। सैकड़ों वर्षों के इतिहास में कुण्डलपुर की गलियों में निकलने वाला यह ऐतिहासिक जुलूस था। धनकुबेर सभी स्थानीय निवासियों को रत्न वितरित करते जा रहे थे। देश के कोने-कोने से पधारे श्रद्धालुओं एवं स्थानीय समाज का उत्साह देखते ही बनता था। पूरे नालंदा व बड़गाँव निवासियों को लड्डू का प्रसाद दिया गया।

रात्रि में शास्त्र प्रवचन की सभा में मूर्धन्य विद्वान पं. शिवचरनलाल जैन-मैनपुरी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर, उनके सर्वोदयी सिद्धान्तों एवं ब्राह्मी माता के रूप में प्रतिष्ठित पूज्य माताजी के प्रति अपने सारगर्भित विचार प्रस्तुत किए। 12 फरवरी 2003 को भगवान के निर्वाणकल्याणक की क्रियापूर्वक निर्वाण लाडू समर्पण के पश्चात् पूर्णाहुति हवन सम्पन्न किया गया, साथ ही लगभग 100 प्रतिष्ठित जिनप्रतिमाओं (त्रिकाल चौबीसी की 72 सहित) को नवनिर्मित वेदी में विराजमान कर दिया गया। उस समय भक्तगणों ने अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ नृत्य करते हुए भगवान विराजमान करने का सौभाग्य प्राप्त किया। इसके साथ ही पूज्य माताजी की प्रेरणा से निर्मित **कुण्डलपुर के प्राचीन मंदिर प्रांगण में ''भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ''** में **श्री कमलचंद जैन-खारीबावली-दिल्ली** एवं परिवार द्वारा भगवान महावीर की **8 जिनप्रतिमाएँ** भी विराजमान की गईं।

➢कुण्डलपुर का विकास संस्कृति सुरक्षा के लिए बना नींव का पत्थर –

9 फरवरी को नवग्रह शांति मंदिर एवं रत्नत्रय निलय के शिलान्यास के बाद **''नंद्यावर्त मण्डप''** में आयोजित हुआ **''कुण्डलपुर राष्ट्रीय महासम्मेलन''**। जिसका संचालन किया अखिल भारतीय दि. जैन शास्त्री परिषद के अध्यक्ष-प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन-फिरोजाबाद ने। डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल (महा.) की अध्यक्षता, अ.भा.दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय महामंत्री-श्री माणिकचंद पाटनी के मुख्य आतिथ्य तथा पं. शिवचरनलाल जैन-मैनपुरी, डॉ. अनुपम जैन-इंदौर, श्री रमेश कासलीवाल-इंदौर, पं. लालचंद जैन 'राकेश', श्री उमेश जैन-फिरोजाबाद, पं. जयसेन जैन-इंदौर आदि विद्वानों सहित बिहार दि. जैन

तीर्थक्षेत्र कमेटी के मंत्री श्री अजय जैन (आरा) एवं बिहार दि. जैन तीर्थक्षेत्र न्यास बोर्ड के अध्यक्ष-श्री रामगोपाल जैन (पटना) एवं अन्य गणमान्य महानुभावों की उपस्थिति में **प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी** ने अपने प्रभावपूर्ण उद्बोधन में कहा कि यह इस जन्मभूमि की मिट्टी का चमत्कार है जो मात्र सवा महीने में ही हमें इतना विशाल निर्माणकार्य एवं वृहद् पंचकल्याणक देखने का अवसर प्राप्त हो रहा है। वस्तुतः कुण्डलपुर के अतिरिक्त भगवान महावीर की जन्मभूमि न कहीं और थी, न है और न कभी आगे हो सकती है। **डॉ. अनुपम जैन-इंदौर** ने भी अपने वक्तव्य में जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास की प्रारंभ से लेकर अब तक की सम्पूर्ण गतिविधियों का प्रभावक विवरण प्रस्तुत किया। स्थानीय **डॉ. रामदेव सिंह** ने अपने उद्बोधन में कहा कि पूज्य माताजी द्वारा इस क्षेत्र के विकास से हम क्षेत्रवासियों को जो खुशी हुई है, वह वर्णनातीत है। **श्री अजय कुमार जी-आरा** तो कहने लगे कि आज पूज्य माताजी के प्रयासों के कारण ही हम सबमें यह साहस आ गया है कि हम इस वैभवशाली कुण्डलपुर को पुनः भगवान महावीर की जन्मभूमि घोषित कर सके हैं। किन्हीं भी विद्वानों को अपनी सोच अथवा शोध के आधार पर कोई भी ऐसा वक्तव्य अथवा लेखन समाज के बीच में नहीं प्रस्तुत करना चाहिए, जिसके माध्यम से समाज में भ्रम उत्पन्न हो अथवा विवाद की स्थितियाँ आ जावें। मुख्य अतिथि **श्री माणिकचंद जी** ने कहा कि जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास पूज्य माताजी का समाज पर बहुत बड़ा उपकार है। साररूप में इस महासम्मेलन से यही तथ्य प्रकट में आया और विद्वानों द्वारा सारगर्भित उद्बोधनों में एक स्वर से यह घोषित किया गया कि जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास संस्कृति सुरक्षा के लिए नींव के पत्थर के रूप में सिद्ध होगा।

➢राजनेताओं का आगमन हुआ–

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के अन्तर्गत आयोजित कार्यक्रमों में जहाँ अनेक विधायक, सांसद, प्रशासनिक अधिकारी, विद्वानों, श्रेष्ठियों ने आकर इस पावन धरती की धूलि से मस्तक को पावन किया, वहीं समय-समय पर अनेक राजनेताओं का भी कुण्डलपुर की धरा पर आगमन हुआ, जिसमें 9 फरवरी को भगवान की राजसभा के मध्य भारत सरकार के **रक्षामंत्री माननीय श्री जार्ज फर्नांडीस** मुख्य अतिथि के रूप में पधारे। उस समय जब ब्र. रवीन्द्र जी एवं प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर पर प्रकाश डालते हुए ग्रामवासियों के जनकल्याण

हेतु सरकार द्वारा कुण्डलपुर तक सड़क को पक्का करने, स्कूल, अस्पताल इत्यादि बनवाने हेतु एवं क्षेत्र में शाकाहार को बढ़ावा देने की इच्छा व्यक्त की, तब माननीय रक्षामंत्री जी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के नवविकास एवं इस विशाल कार्यक्रम के आयोजन का सारा श्रेय पूज्य माताजी को देते हुए उनसे प्रार्थना की कि वह अपनी शक्ति को सम्पूर्ण बिहार प्रान्त की जनता को इंसानियत के पथ पर आरूढ़ काने हेतु भी अवश्य प्रदान करें। उन्होंने कहा कि आज देश की सीमाओं की सुरक्षा नीति, अपनी ओर से आक्रमण न करने की नीति इत्यादि सभी भगवान महावीर के सिद्धान्तों को ही प्रतिपादित कर रही हैं। ऐसे युगपुरुष की जन्मभूमि मेरे इस संसदीय क्षेत्र का महान गौरव है। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि ऐसी पावन भूमि का विकास करने का संकल्प हमारे देश की विभूतिस्वरूप महान जैन साध्वी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिया गया है। भारत की समाज पर यदि किसी का गहरा असर होता है, तो वे और कोई नहीं, ये आध्यात्मिक संत ही हैं, जिनकी वाणी जन-जन के लिए प्रामाणिक हो जाती है। भगवान महावीर के बाद ढाई हजार वर्षों के इतिहास में पहली बार विशाल ग्रंथ लेखन करने वाली महान विद्वान माताजी के दर्शन का सौभाग्य मुझे मेरे ही संसदीय क्षेत्र में प्राप्त हुआ है, जो मेरे लिए बहुत महत्वपूर्ण बात है। माताजी के आह्वान पर भगवान महावीर जन्मभूमि के विकास का जो महानतम कार्य सम्पन्न हो रहा है, वह मात्र जैन समाज के लिए ही नहीं, सम्पूर्ण नालंदा क्षेत्र एवं बिहार प्रान्त की कीर्ति को संसार में प्रसारित करने वाला है।

10 फरवरी को पधारे भारत सरकार के **रेलमंत्री श्री नितीश कुमार जी** ने कुण्डलपुर पदार्पण पर अपार प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि मेरे लिए इससे अधिक गौरव क्या हो सकता है कि हम सब लोग जो इस नालंदा की मिट्टी से वास्ता रखते हैं। आपने यहाँ इतना बड़ा आयोजन, इतने भव्य तीर्थ का निर्माण किया है कि देश-विदेश के लोग पुण्य कमाने हेतु यहाँ माथा टेकने आएंगे फिर उसमें सरकार भी ऐसा कर दे कि हमारा कुछ लगे भी न और जैन समाज भी प्रसन्न हो जाये। वास्तव में माताजी ने जिस चीज को प्रतिष्ठित करने की कोशिश की है, ऐसी प्रतिष्ठा कोई चाहे जितना भी खर्च कर ले, चाहे कितना भी परिश्रम कर ले, यह प्रतिष्ठा किसी को प्राप्त नहीं हो सकती।

जब मैं यहाँ आ रहा था तो "क्लीन स्लेट" वाली मेरी मानसिकता थी, इसलिए रास्ते में मैं क्षेत्र विधायक श्री श्रवण कुमार जी से इस विषय में पूछ

रहा था। फिर हमने आपस में विचार करके सोचा कि 2-3 साल पहले जो हमने दीपनगर को 'हाल्ट स्टेशन' की मान्यता दिलाई है, उसके साथ कुण्डलपुर को इस प्रकार जोड़ दिया जाये और उसको पूर्ण स्टेशन का दर्जा दिया जाये ताकि आप को आने में कोई असुविधा न हो, पावापुरी की भांति ही इस स्टेशन का विकास करने की हमारी पूरी कोशिश होगी।

➢भगवान महावीर ज्योति रथ का मंगल उद्घाटन–

आचार्य समन्तभद्राचार्य ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार नामक ग्रंथ में सम्यग्दर्शन के आठ अंगों का वर्णन करते हुए प्रभावना अंग का लक्षण बताया है-

अज्ञानतिमिरव्याप्ति-मपाकृत्य यथायथम्।
जिनशासनमाहात्म्य-प्रकाशः स्यात्प्रभावना।।

अर्थात् अज्ञानरूपी अंधकार के विस्तार को दूर कर अपनी शक्ति के अनुसार जिनशासन के माहात्म्य को प्रकट करना सम्यग्दर्शन का प्रभावना अंग है।

मोक्षमार्ग की गाड़ी के दो पहिये माने गए हैं–साधु और श्रावक। इन दोनों के परस्पर पूरक होने से ही संसार व मोक्षमार्ग की परम्परा निरन्तर प्रवाहमान है। आचार्यों द्वारा कहे गये समस्त आगमोक्त तथ्यों का परिपालन जहाँ पूर्णरूपेण साधुगण करते हैं, वहीं श्रावक भी एकदेश रूप, उसका परिपालन करते हैं। चूँकि यहाँ चर्चा प्रभावना अंग की हो रही है, उस क्रम में वर्तमान में साधु जिनशासन के माहात्म्य को प्रकट करने हेतु महती धर्मप्रभावना करते हुए आत्म व परकल्याण में सदैव तत्पर रहते हैं और श्रावक भी अपनी शक्ति के अनुसार अपनी अर्थांजलि, भावांजलि व पुष्पांजलि समर्पित कर जिनशासन के माहात्म्य को प्रकट कर महान पुण्य का संचय करते हैं और अपनी भवभ्रमण परम्परा को अल्प कर लेते हैं।

उसी प्रभावना अंग का परिपालन कर पूर्वाचार्यों द्वारा निर्दिष्ट आगम वाक्य को प्रमाण मानने वाली पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के द्वारा किए गए अद्वितीय कार्यों का सीमित शब्दों में वर्णन करना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है। उनके द्वारा किए गए धर्मप्रभावना के प्रत्येक कार्य प्रशंसनीय, वंदनीय एवं अनुकरणीय हैं। वर्तमान युग में जब भारत के अंदर भी पाश्चात्य संस्कृति की होड़वश आधुनिक शैली जैसे–पत्र-पत्रिकाएँ, मोबाइल, कम्प्यूटर, इण्टरनेट, फैक्स आदि के माध्यम से प्रचार-प्रसार का युग आ गया है, ऐसे समय में माताजी द्वारा जिनधर्म की प्रभावना, जिनधर्म की प्राचीनता

एवं तीर्थंकर भगवन्तों के सर्वोदयी सिद्धान्तों से जन-जन को परिचित करवाने में रथ भ्रमण का ऐसा माध्यम बनकर आया, जिसके द्वारा भारत की जनता ने न सिर्फ इन उद्देश्यों को जाना, समझा व हृदयंगम किया अपितु जिन जानकारियों व तीर्थ विकास को लेकर इन रथों का भ्रमण हुआ, उससे पूरे देश की भावनाएँ जुड़ीं और उन्होंने अपनी अर्थांजलि, भावांजलि के कुछ पत्र-पुष्प समर्पित कर प्राणप्रण से उसे अपना मानकर उसकी सुरक्षा व उत्तरोत्तर वृद्धि का संकल्प भी लिया जिसमें प्रथम रथ **''जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति रथ''** का भ्रमण (माननीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा प्रवर्तित) सम्पूर्ण भारत के कोने-कोने में हुआ, जिसके द्वारा भारत की जनता ने जैन भूगोल का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर जम्बूद्वीप के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त की और उससे एकत्रित राशि का प्रतिफल **'धरती का स्वर्ग'** कही जाने वाली जम्बूद्वीप रचना है, इसी श्रृंखला में द्वितीय रथ **''भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार''** रथ का भारत भ्रमण (तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा प्रवर्तित) जैनधर्म की प्राचीनता, अहिंसा-शाकाहार एवं भगवान ऋषभदेव के अहिंसामयी-सर्वोदयी सिद्धान्तों की अनुगूंज के उद्देश्य को लेकर निकला और उसका प्रतिफल **''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली-प्रयाग तीर्थ''** है पुनः तृतीय 'भगवान महावीर ज्योति रथ का प्रवर्तन' भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर से पूज्य माताजी की प्रेरणा से हुआ, जिसके भारत भ्रमण का उद्देश्य। भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का प्रचार-प्रसार।

11 फरवरी 2003 को बिहार के महामहिम राज्यपाल डॉ. विनोद चंद पाण्डेय जी के द्वारा भगवान महावीर ज्योतिरथ पर स्वस्तिक बनाकर एवं दीप प्रज्वलन करके रथ का उद्घाटन सम्पन्न हुआ, उस समय प्रसन्नमना राज्यपाल जी ने रथ का उद्घाटन कर स्वयं को अत्यन्त गौरवान्वित अनुभव किया पुनः महावीर जयंती के शुभ दिवस 15 अप्रैल 2003 को माताजी के शुभाशीर्वाद को प्राप्त कर उस रथ को भारत भ्रमण हेतु प्रवर्तित किया गया। देश के विभिन्न अंचलों में लगभग डेढ़ वर्ष तक भ्रमण कर जन-जन को भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की यथार्थता का परिज्ञान कराते हुए इस रथ ने तीर्थ विकास में कुछ आर्थिक योगदान भी समर्पित किया।

इससे पूर्व आयोजित रथ उद्घाटन की धर्मसभा में महामहिम जी ने माताजी द्वारा लिखित **'महावीर देशना ग्रंथ'** का विमोचन किया। प्रस्तुत ग्रंथ में दिगम्बर जैन मान्यतानुसार भगवान महावीर के सम्पूर्ण जीवन चरित्र की

व्याख्या के साथ-साथ उनकी देशना से प्राप्त सिद्धान्तों का विशद वर्णन है।

➢तीर्थंकर जन्मभूमि विकास महाधिवेशन–

10 फरवरी को पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के मध्य विशेष महाधिवेशन हुआ, जिसका विषय था–तीर्थंकर जन्मभूमि विकास महाधिवेशन। चन्द्रप्रभु भगवान की जन्मभूमि चन्द्रपुरी, भगवान पार्श्वनाथ-सुपार्श्वनाथ की जन्मभूमि वाराणसी, भगवान संभवनाथ की जन्मभूमि श्रावस्ती, भगवान नेमिनाथ की जन्मभूमि शौरीपुर, भगवान धर्मनाथ की जन्मभूमि रौनाही, 5 तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या, भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि राजगृही से पधारे पदाधिकारियों ने अपने-अपने क्षेत्र के विषय में विशेष जानकारी प्रदान करते हुए भविष्य में आवश्यक विकास योजनाओं से सभा को अवगत कराया। मैंने उन लोगों को सम्बोधित करते हुए यही प्रेरणा प्रदान की कि आज लोग अतिशय क्षेत्रों के पीछे तो भागते हैं परन्तु तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों के विकास के विषय में सोचने वाले बहुत ही कम व्यक्ति हैं। पूज्य माताजी का यह जैन समाज पर महान उपकार है कि उन्होंने हमें इस विषय में कदम उठाने के लिए प्रेरित किया है पुनः मैंने माताजी की प्रेरणानुसार जन्मभूमि विकास के निम्न बिंदु बताए–

1. प्रत्येक तीर्थंकर जन्मभूमि पर संबंधित तीर्थंकर भगवान की बड़ी प्रतिमा विराजमान की जाये।

2. प्रत्येक जन्मभूमि पर संबंधित तीर्थंकर भगवान के नाम के कीर्तिस्तंभ बनाए जाएं, जिसमें दिगम्बर जैनागम के अनुसार उनका जीवन चरित्र, सिद्धान्त आदि उत्कीर्ण हों।

3. जन्मकल्याणक के दिवस पर उन भगवान का मस्तकाभिषेक किया जाए।

4. निर्वाण तिथि में निर्वाणलाडू चढ़ाने का सामूहिक आयोजन सम्पन्न किया जाये।

➢महावीर जैन शब्दकोश एक विशेष उपहार बना–

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मोत्सव वर्ष के अन्तर्गत वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकता को देखते हुए मैं माताजी से एक जैनधर्म के हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोश के बारे में कहने लगीं तो माताजी ने कहा कि चंदनामती! अगर तुम्हें इतने दुरुह कार्य को करना ही है, तो तुम भगवान महावीर के नाम पर इस शब्दकोश को बनाओ। उसी के फलस्वरूप मैंने डॉ. अनुपम जैन (महामंत्री-विद्वत् महासंघ), जीवन प्रकाशन जैन-इंदौर एवं संघस्थ ब्र. कु. स्वाति जैन के

साथ परिश्रम करके तीन वर्षों में लगभग 15 हजार शब्दों का शब्दकोश तैयार किया, जिसे मैंने माताजी के निर्देशन से शास्त्रीय प्रामाणिकरूप में प्रस्तुत किया है। यह शब्दकोश वर्तमान एवं भावी पीढ़ी के लिए जैनधर्म के ज्ञान हेतु अत्यन्त उपयोगी है। 6 जनवरी 2005 को वाराणसी में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति ने उस शब्दकोश का विमोचन किया।

➢भगवान महावीर का महाकुम्भ मस्तकाभिषेक–

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के समापन अवसर पर हुआ उन श्वेतवर्णी, मनोहारी, अवगाहना प्रमाण शासनपति भगवान महावीर का 1008 महाकुंभों से मस्तकाभिषेक। जिस मनोहारी दृश्य की प्रतीक्षा प्रत्येक नेत्रों को आकुलित किए हुए थी, आखिरकार वह स्वर्णिम घड़ियाँ नजदीक आ ही गईं, जिसमें प्रथम कलश करने का सौभाग्य मूर्ति सौजन्यकर्ता श्री महावीर प्रसाद जी ने प्राप्त किया। अहोभाग्य था उन नर-नारियों का, जिन्होंने प्रभु के तन पर बहती पंचामृत की धाराओं को किया, देखा और जीवन को धन्य किया, जल, नारियल रस, इक्षुरस, अनार रस, मौसमी रस, सन्तरा रस, अंगूर रस, घृताभिषेक, दुग्धाभिषेक, दधि अभिषेक, सर्वौषधि, चतुष्कोण कलश, केशर, पुष्पवृष्टि, मंगल आरती सुगंधित जल एवं शांतिधारा के क्रमानुसार अभिषेक ने करने-कराने वालों को मंत्रमुग्ध कर दिया। उस समय जहाँ अनार रस की धारा से श्वेत प्रतिमा जामुनी होकर चमकने लगी, वहीं संतरा रस के अभिषेक ने प्रभु को पीतवर्णी कर दिया। सर्वौषधि से प्रभु लालवर्णी हो उठे तो केशर से केशरिया हुए प्रभु मन को लुभाने लगे और पुष्पवृष्टि होते ही तो नभमण्डल जयकारों से गुंजित हो उठा। भगवान महावीर के मस्तकाभिषेक के पश्चात् भगवान महावीर मंदिर के दाहिनी ओर विराजमान भगवान ऋषभदेव की 14 फुट उत्तुंग लालवर्णी पद्मासन प्रतिमा पर प्रथम कलश करने का सौभाग्य मूर्ति सौजन्यकर्ता श्री रिसभदास दीपक कुमार जैन-वाराणसी ने प्राप्त किया, साथ ही उन लालवर्णी प्रभुवर का दुग्धाभिषेक भी हुआ, जिससे कुछ क्षण को प्रतिमा श्वेतवर्णी हो उठी, पुनः शांतिधारा के पश्चात् अत्यन्त हर्षोल्लास के वातावरण में भगवान का मस्तकाभिषेक महोत्सव पूर्ण हुआ।

देश के सुदूरवर्ती प्रांतों से पधारे हजारों श्रद्धालुओं द्वारा पीले वस्त्रों में 1008 चमचमाते स्वर्ण, रजत आदि कलशों से भगवान के महाकुंभ मस्तकाभिषेक की छटा देखते ही बनी थी। इस महाकुंभ में सभी कलश करने वाले महानुभावों को वे कलश भेंट स्वरूप प्रदान किये गये। इस प्रकार जन्मभूमि-कुण्डलपुर को

चार चांद लगा देने वाला 21वीं सदी का यह ऐतिहासिक पंचकल्याणक इतिहास के रूप में सदैव के लिए स्थापित हो गया।

➢नालंदा म्यूजियम एवं खण्डहर भी बताते हैं जैन इतिहास–

कुण्डलपुर में अवस्थित नालंदा खण्डहर जहाँ पुरातात्त्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, वहीं उसका सूक्ष्मता से अवलोकन एवं वहाँ उपलब्ध प्राचीन खण्डहर, उत्कीर्ण जैनमूर्तियाँ, गाइड्स द्वारा बताई गई गौरवमयी कथाएँ इस बात की ओर इंगित करती हैं कि कभी यह खण्डहर ही नंद्यावर्त महल था, जो सात मंजिल का था और यहीं महावीर प्रभु जन्मे थे, कालदोष के कारण आज उसका यह रूप है, फिर भी इसमें जैनत्व ही दृष्टिगत होता है। 16 फरवरी 2003 को पूज्य माताजी एवं हम लोग नालंदा का खण्डहर देखने गये, साथ में और भी अनेक श्रेष्ठी महानुभाव थे, वहाँ म्यूजियम में उपस्थित पाण्डेय जी ने खूब रुचिपूर्वक हमें पूरा म्यूजियम दिखाया। वहाँ दो जैन मूर्तियाँ भी रखी हैं, जो भगवान ऋषभदेव एवं भगवान पार्श्वनाथ की हैं, उसके पश्चात् हमने नालंदा का खण्डहर भी देखा और उस विशाल महल के खण्डहरों को देखकर उन क्षणों का स्मरण किया, जब वीर प्रभु ने 2600 वर्ष पूर्व यहाँ जन्म लिया होगा और यह एक समृद्धिशाली नगरी एवं स्वर्णमयी महल रहा होगा।

➢शाश्वत तीर्थ सम्मेदशिखर यात्रा–

जैनधर्म में दो ही अनादिनिधन तीर्थ माने गये हैं–1. अयोध्या और 2. सम्मेदशिखर। इनमें शाश्वत जन्मभूमि का गौरव जहाँ अयोध्या नगरी को प्राप्त है, वहीं अनन्तानन्त तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि सम्मेदशिखर परम पावन, पूज्यनीय एवं वंदनीय है और जिसका कण-कण पवित्र है, उस पवित्र तीर्थ की वंदना करने वाला नियम से भव्य है और 49 भवों में मोक्ष को प्राप्त कर लेगा, ऐसा वर्णन है। कहा भी है–**''एक बार वंदे जो कोई, तांहि नरक पशुगति नहिं होई''।**

उस पवित्र तीर्थराज की वंदना पूज्य माताजी ने आर्यिका दीक्षा लेने के बाद सन् 1962-63 में की थी तथा स्वयं मैंने भी दीक्षा के पूर्व ही की थी, दीक्षा के पश्चात् मुझे उस तीर्थराज की वंदना का सौभाग्य अभी तक नहीं प्राप्त हो सका था, पुनः अब उस यात्रा का संयोग भगवान महावीर की कृपा से ही प्राप्त हो रहा था इसलिए इस यात्रा को लेकर मन में बड़ा आल्हाद था। पंचकल्याणक के पश्चात् 19 फरवरी 2003 को पूज्य माताजी ने संघ सहित सम्मेदशिखर के लिए कुण्डलपुर से मंगल विहार किया। उस मार्ग में भगवान मुनिसुव्रतनाथ की

जन्मभूमि एवं भगवान महावीर की प्रथम देशनास्थली राजगृही तीर्थ, भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी एवं गौतम गणधर स्वामी की निर्वाणभूमि गुणावां जी सिद्धक्षेत्र का दर्शन कर उन महापुरुषों की चरण रज से पावन धरा को नमन कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इसी विहार के मध्य माताजी ने राजगृही के जवाहर नवोदय विद्यालय में भगवान महावीर की पद्मासन प्रतिमा तथा जैन तीर्थ परिसर में भगवान मुनिसुव्रतनाथ की बड़ी प्रतिमा, पावापुरी सिद्धक्षेत्र पर भगवान महावीर की बड़ी प्रतिमा, गुणावां सिद्धक्षेत्र पर गौतम गणधर स्वामी की प्रतिमा आदि विराजमान करने की प्रेरणा देते हुए झुमरीतलैया (कोडरमा), सरिया आदि जैन समाज के नगरों में होते हुए 12 मार्च 2003 (फाल्गुन शु. नवमी) को शाश्वत तीर्थ सम्मेदशिखर में पदार्पण किया। पूज्य माताजी को 40 वर्षों बाद क्षेत्र पर अनेक संस्थाओं द्वारा अनेक निर्माण देखकर मन में असीम आल्हाद हुआ और इस अनादि तीर्थ के पुनः दर्शन होने पर हम सभी ने अपने भाग्य की सराहना की।

➢जीवन की अमिट देन बनी पर्वत वंदना–

13 मार्च 2003, फाल्गुन शु. 10 को पूज्य माताजी ने बीसपंथी कोठी में प्रातःकाल केशलोंच किया और पर्वत वंदना की तीव्र उत्कण्ठा में उसी उपवास के दिन मध्यान्ह में 2 बजे संघ सहित पहाड़ पर चली गईं। वहाँ चोपड़ा कुंड पर निर्मित जिनमंदिर एवं धर्मशाला में ठहरकर पर्वत की तीन वंदनाएं सम्पन्न कीं। 15 मार्च को हस्तिनापुर से रवीन्द्र जी, वाराणसी से दीपक जी एवं आरा से कमल कुमार जी आ गए पुनः वे लोग एवं अनेकों भक्तों ने 16 मार्च को माताजी के साथ सम्मेदशिखर की वंदना करके जीवन को धन्य माना। वंदना के मध्य प्रत्येक टोंक पर जल, दूध, चंदन से भगवान के चरणों का सभी श्रावकों ने अभिषेक किया, अर्घ्य चढ़ाया, रत्नवृष्टि की, चांदी की लौंग एवं चांदी के कमलपुष्प चढ़ाए तथा निर्वाणलाडू चढ़ाकर आरती करके अपनी भक्ति को प्रदर्शित किया। भगवान पार्श्वनाथ की टोंक पर पहुँचकर पूज्य माताजी ने पिण्डस्थ ध्यान में लीन होकर भगवान के मुक्तिगमन के क्षणों की पावन अनुभूति की, पश्चात् पार्श्वनाथ प्रभु के चरणों का अभिषेक, पूजन हुआ और निर्वाणलाडू चढ़वाने के बाद हम सभी लोग पहाड़ से नीचे धर्मशाला (बीसपंथी कोठी) में वापस आ गए। उसके बाद 21 मार्च को हम लोग दोबारा पहाड़ पर गए, वहाँ चोपड़ा कुण्ड की धर्मशाला में रहकर चार वंदना कीं, इस प्रकार कुल 7 वंदना करके हमारी सम्मेदशिखर यात्रा इस जीवन की अमिट देन बन गई।

चोपड़ा कुंड पर बने दिगम्बर जैन मंदिर को देखकर हम सभी का हृदय फूला नहीं समाया और पूज्य माताजी ने सभी कार्यकर्ताओं को लाखों-लाख आशीर्वाद प्रदान कर जिनधर्म की प्रभावना में सदैव लगे रहने की प्रेरणा दी।

पर्वत से शाम को वापस आकर हमने पूरे संघ के साथ पूज्य माताजी की सात प्रदक्षिणाएँ लगाईं, पाद प्रक्षाल, अर्घ्य समर्पण कर उनकी आरती उतरवाई पुनः मैंने कहा कि इनका महान उपकार हम लोगों पर है, जिनके निमित्त से सम्मेदशिखर की 7 वंदना हुईं अतः इनकी जितनी विनय आदि की जाए, उतनी ही कम है।

➢धर्म की महिमा से दुर्घटना टली–

धर्म की महिमा का वर्णन करते हुए आचार्य कहते हैं–

जैनधर्म प्रसादेन, किं शुभं यन्न जायते।

अर्थात् जैनधर्म के प्रसाद से ऐसा कौन सा शुभफल है, जो प्राप्त नहीं होता।

यह प्रसंग यहाँ पर लेखनीबद्ध करने का तात्पर्य वह घटना है जो हमारे संघ के साथ चल रहे एक नवयुवक विजय कुमार जैन-कानपुर के साथ घटी, जब हम सम्मेदशिखर यात्रा हेतु विहार कर रहे थे, तो विजय कुमार 27 फरवरी को सम्मेदशिखर तक रूट सर्वे करने गये और जब वह वहाँ से वापस आये, तो उन्होंने बताया कि माताजी! आज मैं आप लोगों के आशीर्वाद एवं धर्म की महिमा से ही बचा हूँ। मैं सर्वे कर रहा था, मेरी गाड़ी के आगे यात्रियों की 7 गाड़ियाँ थीं जो मधुबन मोड़ पर लुट गईं और मैं अपनी गाड़ी में बैठा जाप्य कर रहा था, तो ड्राइवर रास्ता भूलकर सम्मेदशिखर से 20-25 किमी. आगे चला गया और जब हम रात्रि 9.30 बजे लौटे, तो पता चला कि शाम को 8.40 बजे से 9.30 तक उन गाड़ियों को बदमाशों ने लूट लिया, मेरी गाड़ी आगे चली जाने के कारण मैं बच गया, यह सब धर्म की ही महिमा है।

➢श्रावक सम्मेलन एवं 51वाँ क्षुल्लिका दीक्षा समारोह–

होली के अवसर पर सम्मेदशिखर का जैनमेला प्राचीनकाल से प्रसिद्ध रहा है। देश के विभिन्न प्रान्तों के लोग वहाँ फाल्गुन मास की आष्टान्हिका में सिद्धचक्र, इन्द्रध्वज आदि विधान करने अथवा होली के रंगों से बचने के लिए बड़ी संख्या में लोग सम्मेदशिखर यात्रा हेतु जाते हैं और वहाँ भगवान पार्श्वनाथ के भक्तिरूपी रंग से परस्पर में केशरिया होली खेलते हैं। ऐसी होली के दिन चैत्र कृ. एकम् को ही 50 वर्ष पूर्व महावीर जी अतिशयक्षेत्र पर आचार्य श्री देशभूषण महाराज के करकमलों से बाल ब्र. मैना ने क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहणकर

''वीरमती'' नाम प्राप्त किया था। सम्मेदशिखर में चैत्र कृ. एकम् को माताजी ने अपने दीक्षित जीवन के 50 वर्ष पूर्ण किए थे। उस पावन अवसर पर वहाँ पधारे सभी भक्तों ने पूज्य माताजी के प्रति अपनी भक्ति भावनाएँ प्रस्तुत कीं।

इसी मेले के अवसर पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से वहाँ 19 मार्च को श्रावक महासम्मेलन का कार्यक्रम आयोजित किया गया, उसमें माताजी ने श्रावक के कर्त्तव्यों पर प्रकाश डालते हुए सम्मेदशिखर तीर्थरक्षा हेतु सभी को विशेष प्रेरणा प्रदान की तथा तीर्थरक्षा हेतु मुनि श्री आर्यनंदी महाराज के उपकारों का स्मरण करते हुए तीर्थक्षेत्र कमेटी को कहा कि सम्मेदशिखर में उनका एक स्मारक अवश्य बनाना चाहिए। पुनः अनेक वक्ताओं ने वर्तमान में चल रहे तीर्थ विकास के प्रति अपने श्रद्धाभाव व्यक्त करते हुए सभी को अष्टमूलगुण, पँच अणुव्रत आदि धारण करके गुरुभक्ति, तीर्थभक्ति के लिए प्रेरित किया।

➢ऋषभजयंती के दिन हुआ ऋषभदेव मंदिर का शिलान्यास–

पूज्य माताजी एवं हम सभी ने शिखरजी में नीचे सभी मंदिरों का दर्शन किया, तब मन में आए चिंतन के अनुसार उन्होंने आपस में विचार-विमर्श किया कि भगवान पार्श्वनाथ की इस धरती पर प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का अस्तित्व होना भी अति आवश्यक है, जिससे प्रत्येक यात्री जैनधर्म की प्राचीनता से परिचित हो सके पुनः पूज्य माताजी की प्रेरणानुसार वहाँ की बीसपंथी कोठी के पदाधिकारियों ने इस विषय में रुचि ली और चौबीस टोंक बाहुबली मंदिर में प्रवेश करते ही जो प्रांगण अभी खाली था, वहाँ 27 मार्च 2003 ऋषभदेव जन्मजयंती के दिन मंदिर का शिलान्यास डॉ. पन्नालाल जैन पापड़ीवाल-पैठण (महा.) (अध्यक्ष-महाराष्ट्र प्रांतीय तीर्थक्षेत्र कमेटी एवं महामंत्री-108 फुट मूर्ति निर्माण ट्रस्ट मांगीतुंगी) सपरिवार ने किया। डॉ. पापड़ीवाल परिवार के ही अर्थ सौजन्य से वहाँ मंदिर निर्माण एवं 9 फुट उत्तुंग पद्मासन मूर्ति स्थापित हुई, जिसकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा दिसम्बर 2005 मगशिर शु. 1 से सप्तमी तक में संघस्थ पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर जी के सानिध्य में सानन्द सम्पन्न हुई।

डॉ. पापड़ीवाल जी को शाश्वत तीर्थ पर जो यह पुण्य अवसर प्राप्त हुआ है, इस हेतु वे पूज्य माताजी एवं समस्त संघ के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। वास्तव में यह उनका जन्म-जन्मातर का पुण्य ही है, जो उन्हें शाश्वत तीर्थ पर जिनमंदिर बनाकर मूर्ति विराजमान करने का पुण्य प्राप्त हुआ। ऋषभजयंती

के दिन सम्मेदशिखर में प्रथम बार माताजी की प्रेरणा से भगवान ऋषभदेव की जन्मजयंती धूमधाम से मनाई गई तथा रथयात्रा के साथ-साथ 108 कलशों से भगवान का अभिषेक भी हुआ।

➢कुण्डलपुर में संघ का पुनरागमन–

सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र की अविस्मरणीय यात्रा के उपरांत पूज्य माताजी एवं हम सभी ने 29 मार्च को पुनः कुण्डलपुर की ओर मंगल विहार किया। 10 अप्रैल को 8.15 बजे नंद्यावर्त महल परिसर में संघ का मंगल पदार्पण हुआ।

दीपनगर रेलवे लाइन के पास से आते हुए देखा कि वहाँ ''दीपनगर कुण्डलपुर हाल्ट'' का बोर्ड लगा है, देखकर प्रसन्नता हुई कि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर पधारे रेलमंत्री नितीश कुमार जी के आदेशानुसार यह कार्य किया गया है। इस हाल्ट स्टेशन का कुछ विस्तारीकरण भी हुआ है

➢कुण्डलपुर में पुनः प्रारंभ हुआ महावीर जयंती मनाने का क्रम–

हम सभी की तीव्र भावना थी कि भगवान महावीर की जन्मभूमि पर उनकी जन्मजयंती खूब धूमधाम से मनाई जाए, अतः हम लोगों ने माताजी से बार-बार आग्रह किया कि आप शीघ्र ही कुण्डलपुर की ओर विहार करें, फलस्वरूप माताजी ने सम्मेदशिखर से विहार कर कुण्डलपुर पहुँचकर महावीर जयंती को व्यापक रूप प्रदान किया, निर्णीत विचारानुसार उसके पोस्टर भी समिति ने छपवाकर देश भर में भेज दिए थे, पुनः 15 अप्रैल, चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को कुण्डलपुर में भारी प्रभावनापूर्वक महावीर जयंती का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, जिसमें झुमरीतलैया, नवादा, इस्लामपुर, हरिद्वार, कलकत्ता, औरंगाबाद, लखनऊ आदि स्थानों से अनेकों महानुभाव पधारे और बहुत ही प्रभावनापूर्ण कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। धर्मसभा के पश्चात् रथयात्रा नालंदा तक गई, तो पूरे रास्ते नागरिकों को रत्न एवं लड्डू वितरित किए गए। सायं 4 बजे प्राचीन मंदिर में भगवान महावीर का 108 कलशों से अभिषेक हुआ, जिसमें पूज्य माताजी एवं समस्त संघ का सानिध्य रहा, पुनः नंद्यावर्त परिसर में पालना झुलाया गया।

➢तीर्थक्षेत्रों को बदलने का अधिकार किसी को नहीं है–

पूज्य माताजी की तीर्थरक्षा के प्रति समर्पित भावनाओं को देखकर वास्तव में ये पंक्तियाँ मुझे बड़ी ही सुन्दर लगती हैं–

दुर्गम पथ को सुगम बनाना ही सच्ची कर्मठता है।
जंगल में मंगल कर महल बनाना सच्ची गुरुता है।।

तीरथ को नवतीर्थ बनाना ही सच्ची सक्रियता है।
तीरथ का उद्धार न करना मानव की निष्क्रियता है।।

माताजी सदा यही कहती हैं कि तीर्थंकर भगवन्तों की कल्याणक भूमियाँ, जो कि इन्द्रों द्वारा भी पूज्य हैं, तथा जहाँ की पवित्र रज देवता भी अपने मस्तक पर धारण करते हैं, ऐसी महान भूमियों के विकास एवं संरक्षण का दायित्व यदि वर्तमान में तीर्थक्षेत्र कमेटी को सौंपा गया है, तो उसे समझना चाहिए कि तीर्थक्षेत्र किसी की बपौती नहीं हैं वरन् सम्पूर्ण जैनसमाज की धरोहर हैं, इसलिए किसी को भी तीर्थ बदलने का अधिकार नहीं है। किसी भी संस्था अथवा व्यक्ति विशेष को जनता के श्रद्धाभाव का उचित समादर करते हुए प्राचीनकाल से चले आ रहे तीर्थों के संरक्षण एवं विकास का ही दायित्व संभालना चाहिए।

➢मुनिसुव्रतनाथ जन्मभूमि में जन्मकल्याणक–

जिनशासन के 20वें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रतनाथ ने बिहार प्रांत के राजगृही तीर्थ पर जन्म लेकर उसे सनाथ किया था लेकिन वर्तमान में वह भगवान महावीर की प्रथम देशना स्थली के नाम से विख्यात है। शायद ही कोई जानता हो कि वह भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि भी है।

पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा प्राप्त कर जब वहाँ के कार्यकर्ताओं ने सैकड़ों वर्षों के इतिहास में प्रथम बार भगवान मुनिसुव्रतनाथ का जन्मकल्याणक महोत्सव 28 अप्रैल 2003, वैशाख बदी द्वादशी को ऐतिहासिक रूप में मनाया, तो दूर-दूर से पधारे महानुभावों, स्थानीय एवं आसपास के श्रद्धालुओं ने भी उसके बारे में जाना। इस अवसर पर राजगृही स्थित प्राचीन लाल मंदिर में भगवान मुनिसुव्रतनाथ का 108 कलशों से महाभिषेक सम्पन्न किया गया तथा पूज्य माताजी, मैंने एवं संघस्थ क्षुल्लक मोतीसागर जी ने तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों पर विस्तृत प्रकाश डाला। उसके पश्चात् कुण्डलपुर से उद्घाटित **''भगवान महावीर ज्योति''** का राजगृही में प्रवर्तन किया गया, जिसमें स्थानीय समाज सहित आगन्तुक यात्री महानुभावों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

➢भगवान महावीर वेदी की खनन विधि–

पावापुरी का वह मनोरम एवं पवित्र स्थल, जहाँ से शासनपति भगवान महावीर ने आज से 2531 वर्ष पूर्व निर्वाणधाम को प्राप्त किया, जहाँ प्रभु के मोक्षगमन के पश्चात् इन्द्र ने प्रभु के चरण स्थापित किए, जो जैनत्व की शान है

माताजी सदैव कहती हैं कि हमें अपने भगवन्तों की जन्मभूमियों एवं

निर्वाणभूमियों की सुरक्षा हेतु प्राणप्रण से संकल्पित रहना चाहिए। आज हमारी सुप्ततावश ही अनेक तीर्थ हमारे हाथों से निकल गए हैं, पंचमकाल के अन्त तक विद्यमान रहने वाले उस सच्चे दिगम्बर जैनधर्म के प्रति अपना सर्वस्व न्योछावर कर हमें समर्पित रहना है और उसके लिए हमें समय-समय पर जिनमंदिर-जिनप्रतिमा के निर्माण, जीर्णोद्धार व विकास में सतत संलग्न रहना चाहिए। माताजी की इन्हीं प्रेरणाओं को प्राप्तकर बिहार तीर्थ न्यास बोर्ड के पदाधिकारियों ने पावापुरी में भगवान महावीर का एक कमलाकार सुन्दर मंदिर का निर्माण करवाया, जिसे निर्मापित करने वाले महानुभाव श्री विजय कुमार जैन-दरियागंज, दिल्ली महान पुण्य के भागी और कोटि-कोटि आशीर्वाद के पात्र हैं। उस महावीर मंदिर एवं वेदी की खनन विधि एवं भूमि शोधन पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में 6 मई 2003, वैशाख शु. 5 को किया गया, पुनः 7 मई को उस पाण्डुक शिला परिसर में भगवान महावीर की वेदी का शिलान्यास कराया गया। श्री रामगोपाल जी एवं अजय जी ने वेदी का शिलान्यास कर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया और खूब प्रसन्नता का अनुभव किया पुनः माताजी व हम सभी ने कुण्डलपुर की ओर प्रस्थान किया।

➢कोलकाता का प्रतिनिधिमण्डल कुण्डलपुर में–

18 मई 2003, ज्येष्ठ कृ. 3 को हम लोग कुण्डलपुर में ही विराजमान थे, मध्यान्ह 3 बजे कलकत्ता दिगम्बर जैन समाज के प्रतिनिधिमण्डल के रूप में 4-5 महानुभाव डॉ. चिरंजीलाल बगड़ा, श्री भागचंद जैन, श्री पवन कुमार जैन, श्री कैलाशचंद जैन इत्यादि आए और पूज्य माताजी को श्रीफल चढ़ाकर कलकत्ता पधारने का खूब आग्रहपूर्ण निवेदन कर माताजी के विराट व्यक्तित्व के प्रति अपना भक्तिभाव प्रदर्शित करते हुए कहा कि माताजी! यदि चातुर्मास संभव न हो तो बाद में सही, किन्तु कलकत्ता आना अवश्य पड़ेगा। कुण्डलपुर का कार्य देखकर ये लोग अत्यन्त प्रभावित हुए और बोले कि आज समाज में चारों ओर आपकी ही कर्मठता का यशगान हो रहा है, हम जबसे कलकत्ता से चले हैं, तब से लेकर यहाँ तक सबके मुंह से माताजी की खूब प्रशंसा सुनते आए हैं। उस समय पूज्य माताजी ने भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास हेतु अपना संकल्प स्पष्ट करते हुए सभी को इस कार्य में समर्पण हेतु प्रेरित किया। कलकत्तावासियों के मस्तिष्क में सन् 1963 की वह स्मृतियाँ अंकित हैं, जब पूज्य माताजी ने अपने आर्यिका संघ सहित वहाँ चातुर्मास किया था। उन्हीं स्मृतियों को पुनर्जीवित करने हेतु प्रतिनिधिमण्डल के सभी

सदस्यों ने पूज्य माताजी से पुनः कोलकाता में आकर वहाँ की युवा शक्ति, नारी शक्ति एवं समाज की समग्र शक्ति को संगठित करके उन्हें पुनर्चेतना प्रदान करने हेतु हार्दिक प्रार्थना की थी।

➢राष्ट्रपति अब्दुल कलाम को भी आकर अच्छा लगा–

भारतवर्ष के प्रथम नागरिक-राष्ट्रपति डॉ. ए.पी. जे. अब्दुल कलाम का तीन दिवसीय बिहार यात्रा के मध्य भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी तीर्थ पर 30 मई 2003, ज्येष्ठ कृ. अमावस को आगमन हुआ। चूँकि कई दिनों से श्वेताम्बर जैन समाज के पदाधिकारी श्री सुनील कुमार जैन सुचंती का आग्रह था कि माताजी! आप उस कार्यक्रम में अपना सानिध्य अवश्य प्रदान कर हमें गौरवान्वित करें अतः उनके विशेष आग्रह पर माताजी ने उस कार्यक्रम में पधारने की स्वीकृति दे दी। मध्यान्ह 1 बजे दिगम्बर व श्वेताम्बर प्रतिनिधियों के साथ पावापुरी के प्रसिद्ध जलमंदिर अर्थात् भगवान महावीर की निर्वाणस्थली का दर्शन करके डॉ. कलाम 'गांव मंदिर के दर्शनार्थ पधारे और वहाँ के प्रवचन हाल में आयोजित सभा में सर्वप्रथम अत्यन्त विनम्र भाव से राष्ट्रपति जी ने पूज्य माताजी के चरणों में नारियल चढ़ाकर आशीर्वाद ग्रहण किया और बहुत प्रसन्न हुए। उस समय पूज्य माताजी ने राष्ट्रपति जी की शाकाहार रूप अहिंसात्मक प्रवृत्ति की हार्दिक प्रशंसा करते हुए आशीर्वाद प्रवचन में कहा कि–यह महान गौरव एवं आत्मसंतुष्टि का विषय है कि अहिंसा के अवतार भगवान महावीर के सिद्धान्तों को आत्मसात करते हुए भारतवर्ष के प्रथम नागरिक अर्थात् राष्ट्रपति के रूप में आप पूर्णतया शाकाहारी जीवन का परिपालन करने वाले हैं, जीवदया की इस भावना हेतु आपके लिए मेरा बहुत-बहुत हार्दिक आशीर्वाद है तथा यही मंगलकामना है कि भगवान महावीर के सर्वोदयी शासन की छत्रछाया सदैव आप पर बनी रहे एवं मातृभूमि की निश्छल भाव से सेवा करते हुए आपका यश दिग्दिगन्त व्यापी बने।

महामहिम राष्ट्रपति पूज्य माताजी के आशीर्वचन से अत्यन्त प्रभावित हुए एवं खड़े होकर पूज्य माताजी की ओर से विशेष रूप से अवलोकन करते हुए अपने अंग्रेजी उद्बोधन में कहा कि आज जब मैंने जलमंदिर के दर्शन किए, तो यह सोचकर कि कभी इसी भूमि पर स्वयं भगवान महावीर चले होंगे, मैं अत्यन्त रोमांचित हो गया। जिस प्रकार जैसे-जैसे सरोवर में पानी बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे उसमें खिले कमल और ऊपर उठते जाते हैं, उसी प्रकार हमें भी अपने विचारों को ऊर्ध्वगामी बनाना है, हम शांति को अपनी सांस के साथ

अंदर ले जाएं और समस्त हिंसा, अन्याय एवं बुराइयों के विचारों को बाहर आने वाली सांस के साथ बाहर निकाल दें। आप जैसे संत अपनी साधना से समस्त जनता को खुशी प्रदान करें, यही मेरी मंगल भावना है। पुनः मैंने राष्ट्रपति जी को भगवान महावीर के चित्र का प्रतीक चिन्ह प्रदान किया एवं संघस्थ ब्र. रवीन्द्र जी ने डॉ. कलाम को माताजी द्वारा लिखित साहित्य व चित्र भेंट किया।

➢राजगृही में भगवान मुनिसुव्रतनाथ जिनमंदिर का शिलान्यास–

1 जून 2003, ज्येष्ठ शु. एकम को पूज्य माताजी एवं संघ सानिध्य में राजगृही के लाल मंदिर परिसर में भगवान मुनिसुव्रतनाथ जिनमंदिर का शिलान्यास समस्त धार्मिक विधि-विधानपूर्वक किया गया, जिसमें अनेक महानुभावों ने इसे माताजी की तीर्थ के प्रति अटूट भक्ति मानते हुए इस कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

वस्तुतः पूज्य माताजी द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य ऐतिहासिक है क्योंकि वह सदैव तीर्थंकरों के सर्वोदयी सिद्धान्तों को प्रसारित करने में ही संलग्न हैं। उन तीर्थंकर भगवन्तों ने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप महान विज्ञान का उपदेश दिया है, उन्होंने बताया है कि भेद-विज्ञानरूपी मिसाइल से आत्मा पर लगी हुई समस्त कर्मकालिमा का विनाश करके शुक्लध्यान द्वारा आत्मा को पूर्ण विजयी बनाया जा सकता है, ऐसे तीर्थंकर भगवन्तों की वाणी का ज्ञान प्राप्त करने हेतु दिगम्बर आम्नाय के प्राचीन ग्रंथों के तथ्यों को प्रकाश में लाना चाहिए, जिससे समस्त भ्रांत धारणाएँ मिट सकें।

➢माताजी ने तीर्थ को बनाया नहीं, बचाया है–

पूज्य माताजी द्वारा किए गए इस कार्य की आज सर्वत्र प्रशंसा का होना इस बात का द्योतक है कि उन्होंने कुण्डलपुर नाम के किसी नए तीर्थ को बनाने का संकल्प नहीं लिया वरन् सदियों से बसी हुई जो भगवान महावीर जन्मभूमि थी, उसे भुलाने का जब प्रयास किया गया तब उन्होंने इसको पुनर्जीवन प्रदान करने की प्रेरणा मात्र देकर प्राचीन तीर्थ को नया रूप देकर उसे बचाया है। आज तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियाँ तो उपेक्षित पड़ी हैं और उनके नाम के अतिशयक्षेत्र हजारों-लाखों दीपकों से शोभायमान हो रहे हैं, यह किस प्रकार का न्याय है? यह सही है कि अतिशय क्षेत्र भी पूज्य हैं पर माताजी का कहना है कि जन्मभूमियों की इस उपेक्षा के प्रति समाज को अब जागृत होना चाहिए। प्राथमिकता के साथ सभी श्रावकों को तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास का

उद्यम करना चाहिए क्योंकि जन्म लिए बिना न अतिशय क्षेत्र बन सकते हैं और न निर्वाणभूमियाँ बन सकती हैं। तीर्थंकर जन्मभूमियाँ हमारी संस्कृति की उद्गम स्थलियाँ हैं, उनकी सुरक्षा अपनी संस्कृति की सुरक्षा है।

➢जम्बूद्वीप में ऋषभदेव पंचकल्याणक एवं बीस विद्यमान तीर्थंकर स्थापना–

पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से दिल्ली के श्रावकभक्त श्रीमती शकुन्तला जैन ध.प. श्री रघुनाथप्रसाद जैन-गुजरावाला टाउन, दिल्ली के सौजन्य से भगवान ऋषभदेव जिनमंदिर एवं टिकैतनगर (बाराबंकी) के श्रेष्ठी श्री प्रद्युम्न कुमार जी के द्वारा ''विद्यमान बीस तीर्थंकर जिनमंदिर'' का निर्माण किया गया, जिसकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा वैशाख शु. 11 से वैशाख शु. 15, 12 मई से 17 मई 2003 तक पूज्य माताजी के शुभाशीर्वाद से संघस्थ पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर जी के सानिध्य में हुई, साथ ही नूतन जिनमंदिरों पर कलशारोहण एवं ध्वजारोहण भी किया गया।

➢नवग्रहशांति मंदिर की प्रतिमाओं का पंचकल्याणक–

दिनाँक 5 जुलाई से 9 जुलाई 2003, (आषाढ़ शु. षष्ठी से दशमी) तक आरा निवासी श्री ज्ञानचंद जैन एवं उनकी धर्मपत्नी सौ. शशिलता जैन ने सम्पूर्ण समाज के साथ मिलकर कुण्डलपुर में नवग्रह की 9 तीर्थंकर प्रतिमाओं का लघु पंचकल्याणक प्रभावना के साथ सम्पन्न किया। 9 तीर्थंकर भगवन्तों से समन्वित सुन्दर कमल पर विराजमान मनोज्ञ मूर्तियाँ देखकर एक बार तो कदम ठिठक ही पड़ते हैं और वहाँ बैठकर स्वतः अपने ग्रहों की शांति हेतु उन प्रभुवर को भजने की इच्छा प्रकट हो उठती है। सर्वग्रह अरिष्ट निवारक यह नवग्रहशांति जिनमंदिर भारत का प्रथम एवं अनूठा जिनमंदिर है।

➢अष्टमी-चतुर्दशी को हरी का त्याग आगम आज्ञा नहीं–

21 जुलाई 2003 को श्रावण वदी अष्टमी थी, पूज्य माताजी आहारचर्या के पश्चात् जब आकर बैठीं, तो मैंने अचानक माताजी से प्रश्न किया कि माताजी! क्या आपने पचास वर्षों से ही अष्टमी-चतुर्दशी को अन्न का त्याग कर रखा है? तब उन्होंने बताया कि हाँ, एक बार मैं क्षुल्लिकावस्था में अष्टमी को आहार में हरी सब्जी और फल लेकर आई, तो किसी सुधारक श्रावक ने हरी खाने पर विरोधात्मक रूख दिखाया, तब मैंने आचार्य श्री देशभूषण महाराज से कहा, तो वे कहने लगे कि अन्य (सप्तमी, नवमी आदि तिथि) दिनों में हरी खाने से क्या अभक्ष्य का दोष है? यदि नहीं, तो पर्व में ऐसा क्यों करते हैं? यह सब सुधारकों की विचारधारा है, आगम आज्ञा नहीं है। अतः प्राचीन गुरु

परम्परा एवं शास्त्रीय विधि अनुसार अष्टमी-चतुर्दशी को अभक्ष्य पदार्थों का त्याग करके हरी सब्जियाँ खाने में कोई दोष नहीं है। देखो! आचार्य शांतिसागर जी महाराज की परम्परा के सभी साधु अष्टमी-चतुर्दशी आदि पर्वों में हरी सब्जी-फल लेते हैं और मैं भी तो लेता हूँ। यदि उसमें दोष मानें तो सप्तमी-नवमी आदि तिथियों में हरे फल-सब्जी नहीं लेना चाहिए।

➢तीर्थंकर जन्मभूमि विधान मेरे लिए तीर्थंकर भक्ति का अनुपम ध्येय बना–

पूज्य माताजी जहाँ सतत तीर्थंकरों की जन्मभूमियों के विकास में अग्रसर हैं, वहीं उनकी तीव्र इच्छा थी कि एक **''तीर्थंकर जन्मभूमि विधान''** की रचना भी होनी चाहिए, जिसके कार्यक्रम से भक्ति गंगा में अवगाहन करने वाले लोग सरल भाषा में तीर्थंकरों की प्रत्येक जन्मभूमियों एवं उनके इतिहास को समझ जावें, अतः माताजी ने मुझे इस विधान की रचना हेतु प्रेरणा प्रदान की। पूज्य माताजी की आज्ञानुसार मैंने प्रभु महावीर एवं पूज्य माताजी को नमन कर उस विधान रचना को प्रारंभ किया, फिर तो देखते ही देखते प्रभु एवं गुरुकृपा से वह विधान रचना मूर्त रूप ले उठी और वह जन्मभूमि विधान धर्मवत्सल श्रावकों के लिए तो आराधना का अनुपम माध्यम बना ही, मेरे लिए तीर्थंकर प्रभु की भक्ति का अनुपम ध्येय बन गया और मानसिक एकाग्रता के साथ-साथ मैंने अपूर्व प्रसन्नता का अनुभव भी किया।

➢कुण्डलपुर में सैकड़ों वर्षों के इतिहास में प्रथम चातुर्मास हुआ–

तीर्थ के उभरते स्वरूप को देखने की अभिलाषा एवं भगवान महावीर के कल्याणकों से पवित्र तीर्थ त्रिवेणी (कुण्डलपुर, राजगृही, पावापुरी) में भक्ति स्नान करने की भावना से पूज्य माताजी ने यह निर्णय लिया कि सन् 2003 का वर्षायोग मुझे यहीं कुण्डलपुर में भगवान महावीर की छत्रछाया में सम्पन्न करना है पुनः जब 12 जुलाई आषाढ़ शु. चतुर्दशी को चातुर्मास स्थापना की सभा हुई, तो बिहार प्रान्त के भक्तों ने बताया कि सौ वर्षों के इतिहास में कुण्डलपुर के अंदर किसी साधु का चातुर्मास होना अब तक नहीं सुना गया। अब पूज्य माताजी के चातुर्मास से यह तीर्थ देश-विदेश के यात्रियों का पर्यटन केन्द्र बन जायेगा। उनका यह मूल्यांकन वास्तव में खरा उतरा और दूर-दूर से यात्री कुण्डलपुर आकर चलते निर्माण कार्य को देखकर अत्यन्त प्रसन्न होकर अपने अपूर्व सहयोग की भावना व्यक्त करते थे। उसी के फलस्वरूप तीर्थ का स्वरूप अति शीघ्र साकार हुआ।

➢महाराष्ट्र के भक्तमण्डल का समर्पण भाव–

औरंगाबाद (महा.) के प्रमुख श्रेष्ठी स्व. श्री जम्मनलाल जैन कासलीवाल

ने वहाँ पूज्य माताजी के नाम से **''गणिनी ज्ञानमती भक्तमण्डल''** बना लिया, उसके समर्पित भक्तों ने कुण्डलपुर के पंचकल्याणक (फरवरी 2003) में समस्त आगन्तुकों एवं निकटवर्ती ग्रामवासियों के लिए अपनी ओर से प्रीतिभोज-भण्डारा का आयोजन तो किया ही था पुनः वर्षायोग स्थापना में भी उस भक्तमण्डल ने पधारकर प्रतिनिधित्व किया और चातुर्मास के मध्य दशलक्षण पर्व में कुण्डलपुर आकर उन लोगों ने 1 सितम्बर से 10 सितम्बर 2003 तक कल्पद्रुम मण्डल विधान का भक्ति आयोजन सम्पन्न किया। इसके पश्चात् अक्टूबर में पूज्य माताजी के जन्मदिवस एवं कुण्डलपुर महोत्सव में भी पंचदिवसीय भण्डारा उसी भक्तमण्डल द्वारा आयोजित किया गया। आर्थिक भारवहन के साथ इन सभी की गुरुभक्ति वास्तव में अनुकरणीय रही।

➢कुण्डलपुर महोत्सव में पर्यटन विभाग बिहार सरकार का संयुक्त तत्वावधान–

भगवान महावीर जन्मभूमि की प्रगति के बढ़ते चरण राज्य सरकार की दृष्टि का भी केन्द्र बने और पर्यटन विभाग के अधिकारी आए दिन कुण्डलपुर में आकर उसकी वास्तविकता से परिचित होने लगे। तब एक दिन पूज्य माताजी एवं हम लोगों ने अक्टूबर में **''कुण्डलपुर महोत्सव''** आयोजित करने की रूपरेखा बनाई। समिति के अल्प प्रयासों से पर्यटन विभाग का संयुक्त तत्वावधान उस महोत्सव में जुड़ा और 8 से 10 अक्टूबर 2003 (आसोज शु. तेरस से शरदपूर्णिमा) तक खूब धूमधाम से महोत्सव आयोजित हुआ। उसमें पूरे देश से एवं विशेषरूप से दिल्ली तथा बिहार प्रान्त से हजारों की संख्या में पधारे नर-नारियों ने कुण्डलपुर के निखरे स्वरूप को देखकर माताजी को कोटि-कोटि धन्यवाद दिया तो माताजी कहने लगीं कि यह सारा स्वरूप आप श्रावकों के श्रम का ही प्रतीक है, मेरा इसमें कुछ नहीं है। मुझे तो इस माध्यम से महावीर स्वामी की चरण रज प्राप्त हो गई है, यही मेरा धन्य भाग्य है।

➢भगवान ऋषभदेव नेशनल अवार्ड से श्री धनंजय जैन सम्मानित–

फरवरी 2003 में संस्थान और अनिल जैन-प्रीतविहार, दिल्ली (कमल मंदिर) के संयुक्त सौजन्य से घोषित किए गए भगवान ऋषभदेव नेशनल अवार्ड से श्री वी. धनंजय कुमार जैन को सम्मानित करने का अवसर इसी पावन धरा पर आया। 10 अक्टूबर 2003, आश्विन शुक्ला शरदपूर्णिमा को बिहार के महामहिम राज्यपाल श्री एम.रामा. जोइस ने महोत्सव में पधारकर विशाल जनसमूह की गरिमामयी उपस्थिति में भगवान ऋषभदेव के प्रचार-प्रसार में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान करने वाले पूज्य माताजी के अनन्य भक्त श्री

धनंजय जैन (सांसद एवं पूर्व केन्द्रीय मंत्री) को इस संस्थान एवं जैन समाज के सर्वोच्च पुरस्कार से पुरस्कृत कर भावभीना सम्मान किया, तो सभा तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठी, सभी ने पुरस्कार एवं धनंजय जी के व्यक्तित्व की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इस पुरस्कार में ढाई लाख रुपये की नगद राशि, प्रशस्तिपत्र, शॉल, फूलमाला से सम्मान किया गया।

➢तीर्थंकर जन्मभूमि विकास समिति की घोषणा–

कुण्डलपुर महोत्सव में ही 10 अक्टूबर शरदपूर्णिमा को पूज्य माताजी ने धनंजय जी एवं उपस्थित श्रद्धालुभक्तों, देश के शासक-प्रशासकगण को अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान करते हुए भारत की सम्पूर्ण जैन समाज को चौबीसों तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियों के जीर्णोद्धार एवं विकास करने को संस्कृति सुरक्षा बताते हुए प्रेरणा प्रदान की और एक विकास समिति की घोषणा कर दी, जो प्राथमिक स्तर पर कुण्डलपुर की देखरेख पुनः अन्य तीर्थों का सर्वे प्लान बनाते हुए तीर्थ विकास कार्य में संलग्न है। तीर्थ विकास की उस शृंखला में भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी की बारी आई, जिसका शिलान्यास मगशिर कृ. पंचमी, 20 नवम्बर 2005 में श्री राजकुमार जैन-वीरा बिल्डर्स, दिल्ली द्वारा किया गया और उसका निर्माण कार्य प्रारंभ हो चुका है, शीघ्र ही वह तीर्थ भी दुनिया की दृष्टि में छा जाने वाला है।

➢निर्वाणस्थली में निर्वाणकल्याणक–

भगवान महावीर के निर्वाणकल्याणक से पावन जल मंदिर पावापुरी कुण्डलपुर से मात्र 15 किमी. (कच्चे रास्ते से) की दूरी पर है। दीपावली की पावन बेला में पूज्य माताजी एवं हम सभी लोग एक दिन पूर्व ही पावापुरी स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में पहुँच गए और माताजी के संघ सानिध्य में प्रथम बार 23 से 25 अक्टूबर 2003 तक त्रिदिवसीय भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव भारी प्रभावनापूर्वक मनाया गया। कार्तिक वदी अमावस्या, 25 अक्टूबर को निर्वाणस्थल जलमंदिर में प्रातःकाल 4 बजे भारी भीड़ के मध्य भगवान महावीर के चरणों में सिद्धि, रत्न एवं स्वर्ण निर्वाणलाडू चढ़ाए गए। अपने 51 वर्ष के दीक्षित जीवन में प्रथम बार भगवान की निर्वाणबेला में जलमंदिर में निर्वाणलाडू कार्यक्रम में सानिध्य प्रदान करके पूज्य माताजी को जिस हार्दिक आनन्द की अनुभूति हुई, वह वचनातीत है। रिमझिम फुहारों के बीच सैकड़ों श्रद्धालुओं ने रजत निर्वाणलाडू, मुक्ता निर्वाणलाडू एवं भक्ति निर्वाणलाडू चढ़ाकर अपने जीवन को धन्य माना।

➢भव्य पंचकल्याणकों से जगमगा उठीं पंचकल्याणक भूमियाँ–

भारतवर्ष में उत्तरप्रदेश एवं बिहार प्रान्त को ही तीर्थंकर भगवन्तों की पंचकल्याणक भूमियों का गौरव प्राप्त है, पूज्य माताजी की प्रेरणा से यूँ तो अनेक पंचकल्याणक हुए हैं और हो रहे हैं परन्तु जहाँ स्वयं ही पंचकल्याणक मनाए गए हों, उस स्थल पर पंचकल्याणक का होना अभूतपूर्व होने के साथ-साथ ऐतिहासिक भी है। माताजी की पावन प्रेरणा से विकासोन्मुखी कुण्डलपुर के साथ-साथ भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी एवं भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि तथा भगवान महावीर प्रथम देशना भूमि राजगृही तीर्थ पर आयोजित हुए पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव से वह दोनों कल्याणक भूमियाँ जगमगा उठीं। सर्वप्रथम भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी सिद्धक्षेत्र के पाण्डुकशिला परिसर में श्री विजय कुमार जैन-दरियागंज एवं श्री सुभाषचंद जैन-ऋषभविहार, दिल्ली के सौजन्य से भगवान महावीर की सवा ग्यारह फुट खड्गासन प्रतिमा कमलाकार नूतन जिनमदिर में मगसिर सुदी पंचमी 28 नवम्बर से मगसिर सुदी दशमी, 3 दिसम्बर तक महती प्रभावनापूर्वक प्रतिष्ठित हुईं तथा राजगृही तीर्थ पर श्री अनिल कुमार जैन (कमल मंदिर)-प्रीतविहार, दिल्ली के सौजन्य से 3 दिसम्बर 2003 से 8 दिसम्बर 2003 (मगसिर सुदी दशमी से पूर्णिमा तक) श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनबिंब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव (लाल मंदिर के प्रांगण में) विशेष धर्मप्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ।

➢नवग्रहशांति जिनबिंब स्थापना एवं कलात्मक शिखरों पर कलशारोहण–

कुण्डलपुर में तीनों मंदिरों (भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर एवं नवग्रहशांति जिनमंदिर) के ऊपर दक्षिण भारतीय डिजाइन वाले कलात्मक शिखरों का निर्माण बिहार प्रान्त के लिए अत्यन्त आकर्षक सिद्ध हुआ। 11 फरवरी से 23 फरवरी 2004 फाल्गुन कृ. तेरस से फाल्गुन शु. तीज तक लघु पंचकल्याणक, वेदी प्रतिष्ठा एवं कलशारोहण समारोह आयोजित किया गया, जिसमें महावीर मंदिर के शिखर पर विराजमान होने वाली 4 प्रतिमाएं (भगवान महावीर की सवा फुट पद्मासन) तथा दीक्षा मुद्रा वाली (पिच्छी-कमण्डलु सहित) भगवान महावीर स्वामी की सवा पाँच फुट खड्गासन श्वेत प्रतिमा प्रतिष्ठित हुईं।

नवग्रहशांति जिनमंदिर में बिल्कुल नए ढंग से बनाए गए नौ कमलों पर नवग्रहशांति निवारक 9 तीर्थंकर भगवान (जिनकी प्रतिष्ठा जुलाई 2003 में हो

चुकी थी) श्री ज्ञानचंद जैन-आरा ने विराजमान किए पुनः शिखर में चारों दिशा में चार प्रतिमा श्री रिसबदास दीपक कुमार जैन-बनारस परिवार ने विराजमान कीं। इसके पश्चात् प्रवचन सभा का आयोजन हुआ, जिसमें नालंदा के डी.एम. श्री आनन्द किशोर जी एवं विधायक श्री श्रवण कुमार जी ने सभा को सम्बोधित किया और कलशारोहण करने वाले बनारस एवं आरा के परिवारों को कुण्डलपुर समिति की ओर से सम्मानित किया गया। पुनः शुभ मुहूर्त में प्रातः11 बजे भगवान महावीर के मूलमंदिर एवं ऋषभदेव मंदिर के शिखर पर श्री ऋषभदास दीपक कुमार जैन, बनारस वालों ने सपरिवार कलशारोहण एवं ध्वज स्थापना किया, इसी प्रकार नवग्रहशांति मंदिर के शिखर पर श्री ज्ञानचंद जैन-आरा परिवार ने कलशारोहण तथा ध्वज स्थापना करके सातिशय पुण्य सम्पादित किया। तीन मंदिरों पर एक साथ कलशारोहण होने का यह सुखद संयोग हम सभी के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण रहा।

➢भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव की प्रथम घोषणा–

उत्सव और महोत्सवों को मनाने की परम्परा भारत देश में प्राचीनकाल से रही है, उसी परम्परानुसार सन् 1974 में भगवान महावीर का 2500वाँ निर्वाण महोत्सव, सन् 2000 में भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव एवं सन् 2001 में भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव सरकार और समाज ने मिलकर राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मनाया है, इसी प्रकार अब तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के माध्यम से जैनधर्म का प्राचीन इतिहास दुनिया के कोने-कोने तक पहुँचाने हेतु पूज्य माताजी ने 5 दिसम्बर 2003 मगशिर शु. 12 को राजगृही में भगवान मुनिसुव्रतनाथ जिनबिंब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के मध्य **''भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव''** मनाने हेतु घोषणा की और उसे वाराणसी तीर्थ (भगवान पार्श्वनाथ जन्मभूमि) से उद्घाटित करने हेतु विचार-विमर्श प्रारंभ हो गया।

➢षट्खण्डागम ग्रंथ की टीका की पूर्णता पर हुई महापूजा–

भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक के पावन अवसर पर पौष कृ. 11, 19 दिसम्बर 2003 को वर्तमान जैन समाज में सर्वाधिक ग्रंथों की लेखिका पूज्य माताजी ने जैनधर्म के प्रथम सिद्धान्त ग्रंथ षट्खण्डागम की 12वीं पुस्तक की टीका पूरी करके चतुर्थ खण्ड का कार्य पूर्ण किया और 13वीं पुस्तक का लेखन प्रारंभ किया।

अतः जिस प्रकार षट्खण्डागम ग्रंथ की पूर्णता पर ग्रंथ के कर्ता श्री पुष्पदंत एवं भूतबलि आचार्यों की चतुर्विध संघ द्वारा भक्तिभावपूर्वक पूजन सम्पन्न की गई थी, उसी प्रकार प्रथमतः पूज्य माताजी द्वारा लिखित संस्कृत टीका के पृष्ठ का महाभिषेक करने के साथ-साथ सरस्वती विधान पूर्वक ग्रंथराज षट्खण्डागम की महापूजा सम्पन्न की गई पुनः मैंने संघस्थ ब्र. बहनों से पूज्य माताजी की महापूजा सम्पन्न कराई और भक्तों ने पूज्य माताजी के ऊपर चांदी के पुष्पों की वृष्टि कर अपने को धन्य माना। क्योंकि मेरे मन में बार-बार यही चिन्तन चल रहा था कि आचार्य पुष्पदंत एवं भूतबलि ने जब षट्खण्डागम ग्रंथ लिखकर पूर्ण किया था तो देवों ने तथा चतुर्विध संघ ने उनकी पूजा की थी अतः हम लोग भी माताजी द्वारा किये गए इतने महान कार्य पर माताजी की जितनी पूजा अर्चना कर लें, उतना कम है।

➢मैराथन धावकों ने प्राप्त किया अहिंसा एवं शाकाहार का संदेश–

ऋषभदेवपुरम् स्थित तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग तीर्थ पर भारत की पूर्व प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गांधी के जन्मदिवस, 19 नवम्बर 2003 को आयोजित ''इन्दिरा मैराथन दौड़'' के 15-20 वर्ष आयु वर्ग के रेस समापन पर तीर्थ सम्प्रेरिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के मंगल आशीर्वाद स्वरूप संघस्थ ब्र.कु. स्वाति द्वारा शाकाहार, सदाचार, अहिंसा जैसे सिद्धान्तों से समन्वित जीवन निर्माण की शिक्षा प्राप्त कर लगभग 1500 प्रतिभागियों ने विशेष लाभ प्राप्त किया। आनन्द भवन (इला.) से प्रारंभ 10 किमी. क्रास कन्ट्री रेस में 15-20 वर्ष आयु वर्ग रेस का समापन प्वाइन्ट ''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली-ऋषभदेवपुरम्'' को रखा गया था।

इसमें प्रथम छह प्रतियोगियों को विशेष पुरस्कार एवं नगद राशि प्रदान करने के साथ-साथ लकी ड्रा द्वारा 25 और प्रतियोगियों को सम्मानित किया गया।

➢पूर्व विदेश राज्यमंत्री ने किया मांसाहार का त्याग–

13 फरवरी 2004 की बात है, आहार के बाद मैं अपने कमरे में बैठी शब्दकोश की वाचना से उसमें उचित संशोधन आदि के बारे में चिंतन कर रही थी कि पूज्य माताजी के दर्शनार्थ पधारे श्री हरिकिशोर सिंह (पूर्व विदेश राज्यमंत्री) माताजी के दर्शन कर मेरे पास आकर बैठ गए, ये सज्जन बिहार में ही सीतामढ़ी के निवासी हैं अतः वर्तमान के चुनावों में खड़े होने हेतु पूज्य माताजी का आशीर्वाद लेने आए थे। अतः बातों-बातों में जब उनसे शाकाहार

संबंधी चर्चा की, तो उन्होंने अपने मन से एक वर्ष तक मांसाहार का त्याग कर दिया और पुनः माताजी के दर्शनार्थ आने की इच्छा व्यक्त की।

शायद इसीलिए आचार्यों ने सत्संगति की महत्ता बताते हुए कहा है कि–

महतां संश्रयान्नूनं, लभन्तेऽन्ये सुमान्यतां।।

अर्थात् महान् पुरुषों का आश्रय लेने पर सामान्य पुरुष भी मान्यता प्राप्त कर लेते हैं।

➢स्वप्न ने दिलाया अग्रिम आशीर्वाद–

आचार्य जिनसेनस्वामी ने महापुराण में स्वप्न के संबंध में लिखा है कि–

ते च स्वप्नाद्विधाऽऽम्नाताः स्वस्थास्वस्थात्मगोचराः।
समैस्तु धातुभिः स्वस्था विषमैरितरे मताः।।56-पर्व 41।।
तथ्याः स्युः स्वस्थ सन्दृष्टा मिथ्यास्वप्ना विपर्ययात्।
जगत्प्रतीतमेतद्धि विद्धि स्वप्नविमर्शनम्।।60।।

अर्थात् स्वप्न दो प्रकार के माने गये हैं। एक अपनी स्वस्थ अवस्था में दिखने वाले और दूसरे अस्वस्थ अवस्था में दिखने वाले। जो धातुओं की समानता रखते हुए दिखते हैं, वे स्वस्थ अवस्था के कहलाते हैं और जो धातुओं की विषमता-न्यूनाधिकता रहते हुए दिखते हैं, वे अस्वस्थ कहलाते हैं।

फरवरी 2004 में कुण्डलपुर प्रवास के मध्य मैं पूज्य माताजी द्वारा लिखे जा रहे महान षट्खण्डागम ग्रंथ की सिद्धान्तचिंतामणि संस्कृत टीका की द्वितीय पुस्तक का हिन्दी अनुवाद कर रही थी। 16 फरवरी फाल्गुन शु. 11 को मैंने प्रातः 7.35 बजे भगवान ऋषभदेव प्रतिमा के सानिध्य एवं पूज्य माताजी की छत्रछाया में बैठकर षट्खण्डागम द्वितीय पुस्तक की हिन्दी टीका पूर्ण की। यूँ तो 31 दिसम्बर 2003 को औपचारिक रूप से मैंने अंतिम पृष्ठ लिख दिया था किन्तु मध्य में 20-25 पृष्ठों का कार्य शेष था, जो 31 जनवरी 2004 को शुरू करके आज पूर्ण किया और पूज्य माताजी के करकमलों में पूरे हस्तलिखित पृष्ठ समर्पित करके असीम संतुष्टि का अनुभव किया। चूँकि इस समय हर समय शुभोपयोग ही चल रहा था पुनः सुबह ही मुझे 4 बजे स्वप्न हुआ कि एक हाथी (फूलमाला पहने हुए) ने आकर मुझे नमस्कार किया, इससे पूर्व भी मैंने 4 फरवरी की रात्रि में यही स्वप्न देखा था कि फूलों से सजा हुआ एक हाथी घुटने टेकर मुझे नमस्कार कर रहा है। प्रातःकाल जब मैंने माताजी को वह स्वप्न बताया तो माताजी बहुत ही प्रसन्न हुईं और अग्रिम उन्नति का खूब आशीर्वाद देते हुए उन्होंने कहा कि चंदनामती! तुम जल्दी-जल्दी मेरी सब पुस्तकों की हिन्दी कर

दो, मुझे तुम्हारे अनुवाद से बहुत संतोष मिलता है। उस समय मुझे यही लगा कि इसी प्रकार गुरु कृपा से मिलने वाली शक्ति से मैं आगे भविष्य में भी बहुत कुछ कार्य कर सकूँगी।

➢अनुपम छटा बिखेरता नंद्यावर्त महल दर्शनीय एवं वंदनीय हो गया–

सन् 2004 के द्वितीय चातुर्मास के मध्य भगवान महावीर के जन्म से पावन नंद्यावर्त महल की भव्य प्रतिकृति ने जब अपना साकार स्वरूप प्राप्त किया और उसके अन्दर 2600 वर्ष पूर्व का इतिहास चित्रमय प्राचीन कलाकृतियों के साथ दर्शाया गया, तो उसकी छटा देखते ही बनती थी, जहाँ पर्यटकों का आकर्षण पूर्व में नालंदा के खण्डहर थे, आज यह भव्य प्रतिकृति हो गई और सम्पूर्ण बिहार क्या पूरे देश में इसकी चर्चा फैल गई, दूर-दूर से आने वाला यात्री इसे देखकर आल्हादित हो उठता और माताजी के समयोचित कार्य की प्रशंसा करते नहीं थकता था। भीतर में तीन मंजिल परन्तु बाहर से सात मंजिल का रूप दर्शाते इस महल को दर्शनीय होने के साथ-साथ वंदनीय होने का सौभाग्य तब प्राप्त हुआ, जब इसमें ऊपर की मंजिल पर भगवान शांतिनाथ जिनालय की स्थापना की गई और उसका पंचकल्याणक इसी प्रवास के मध्य पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में 28 जून से 2 जुलाई 2004, आषाढ़ शु. 10 से पूर्णिमा तक विशेष भक्तिभावपूर्वक सम्पन्न हुआ। भगवान शांतिनाथ, चन्द्रप्रभु एवं भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमाओं की यह लघु पंचकल्याणक प्रतिष्ठा युवारत्न प्रतिष्ठाचार्य पं. अकलंक जैन के प्रतिष्ठाचार्यत्व में सम्पन्न हुई। इस पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में श्री कमल कुमार जैन-आरा ने सौधर्म इन्द्र बनने एवं सेठ श्री रिसबदास जी-वाराणसी ने सपत्नीक भगवान के माता-पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त किया। इसी प्रतिष्ठा में संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन-दिल्ली के सौजन्य से राजगृही में निर्मित होने वाले मानस्तंभ की 4 प्रतिमाओं एवं गुणावां जी में विराजमान होने वाली गौतम गणधर की खड्गासन प्रतिमा तथा राजस्थान के लावा मंदिर व गोम्मटगिरि-इंदौर में विराजमान होने वाली ह्रीँ मंत्र की 24-24 प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी सम्पन्न हुई।

2 जुलाई 2004 को तीर्थ परिसर में नवनिर्मित त्रिकाल चौबीसी मंदिर की दो मंजिलों में क्रमशः भूतकाल एवं वर्तमानकाल की चौबीसी प्रतिमाओं को वेदी में विराजमान किया गया तथा नंद्यावर्त तीर्थ के मेनगेट सर्वार्थसिद्धि द्वार एवं कल्पवृक्ष कार्यालय का शिलान्यास भी हुआ।

➢क्षुल्लिका श्रद्धामती जी का समाधिमरण–

आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने रत्नकरण्डश्रावकाचार ग्रंथ में सल्लेखना की विधि बताते हुए कहा है–

जीवन भर जो तप, व्रत और चारित्र आदि का पालन किया जाता है, उनको यदि अगले भव में अपने साथ ले जाना है, तो मरण के काल में अवश्य ही सल्लेखना करनी चाहिए। जैसे किसी देश में कमाए धन की यदि कोई मनुष्य वहाँ से प्रस्थान करते समय याद न करे और किसी दूसरे को सौंपा जावे तो उसका वह धन प्रायः व्यर्थ ही जाता है, इसी प्रकार परलोक यात्रा के समय अर्थात् मरण के अंत में यदि सल्लेखना न की जावे और परिणाम भ्रष्ट हो जावें तो दुर्गति हो जाती है। इसलिए मरण के समय में सल्लेखना करना एक शिक्षाव्रत माना गया है। वास्तव में सल्लेखना का महत्व अचिन्त्य है।

ऐसी ही एक सल्लेखना हमारे संघ की वयोवृद्ध क्षुल्लिका श्रद्धामती जी की हुई। भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में नंद्यावर्त महल परिसर में 22 सितम्बर 2004 को दशलक्षण महापर्व के मध्य भाद्रपद शु. नवमी को उन्होंने पूज्य माताजी का सम्बोधन प्राप्त करते-करते एवं णमोकार मंत्र सुनते-सुनते इस नश्वर शरीर का त्यागकर देवपद प्राप्त कर लिया, वह 85 वर्ष की थीं। वे सन् 1985 से हमारे संघ में थीं और सन् 1989 में पूज्य माताजी से क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण कर 15 वर्षों से क्षुल्लिका के व्रतों का दृढ़तापूर्वक पालन कर रही थीं। वस्तुतः जीवन के अंत समय में समाधिपूर्वक मरण करना महान पुण्य के उदय से ही संभव होता है।

➢तीर्थ त्रिवेणी का अपूर्व संगम–

पूज्य माताजी के साथ-साथ हम सबको भी एक साथ तीन-तीन तीर्थों के दर्शन का सुयोग प्राप्त हुआ अतः सबके हृदय में बड़ा आल्हाद रहा। कुण्डलपुर प्रवास करते हुए प्रतिमाह एक बार राजगृही और एक बार पावापुरी जाकर पर्वत वंदना, जल मंदिर में ध्यान आदि करना वास्तव में जन्म-जन्म में संचित पुण्य का फल प्रतीत होता था।

➢कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन–

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का एवं वहाँ की प्राचीन सांस्कृतिक नगरी की ऐतिहासिकता, भगवान के राजवंश की महत्ता, तीर्थंकर पद की सार्थकता आदि से जन-जन को परिचित कराने हेतु कुण्डलपुर समिति ने पूज्य माताजी की प्रेरणा से एक अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन की योजना बनाई। उसके

प्रधान सम्पादक कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी, प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी जैन-फिरोजाबाद तथा सम्पादक मण्डल के सभी सम्पादकों के कुशल सम्पादन में तथा संघस्थ ब्र. बहनों की कार्यकुशलता, मेरे व संघस्थ क्षु. मोतीसागर जी के अथक परिश्रम तथा पूज्य माताजी के शुभाशीर्वाद से भगवान महावीर जन्मभूमि की गरिमा के अनुरूप सुन्दर ग्रंथ का प्रकाशन हुआ। दानवीर समाजरत्न श्री कमलचंद जी-खारीबावली-दिल्ली परिवार के अर्थ सौजन्य से प्रकाशित हुए इस ग्रंथ का विमोचन 'जन्मभूमि कुण्डलपुर' की पावन धरा पर 'कुण्डलपुर महोत्सव-2004' के मध्य हुआ।

➢सिद्धायिनी माता बोल उठीं यह ही है सच्ची जन्मभूमि–

17 अक्टूबर को एक सुखद स्वप्न ने गिरनार तीर्थ पर आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा घटित उस घटना की याद दिला दी, जब पाषाण की अम्बिका देवी बोल पड़ी थीं, कि **सत्य पंथ निर्ग्रंथ दिगम्बर**..... ऐसा ही एक स्वप्न में मैंने देखा कि एक मंदिर में सिद्धायिनी माता विराजमान हैं, मैं उनके समीप में बैठी हूँ, पीछे पूज्य माताजी खड़ी हैं और बहुत सारी भीड़ है। मैं कह रही हूँ कि किस प्रकार इस सच्ची जन्मभूमि को विश्वव्यापी स्वरूप प्राप्त हो, तभी पाषाण की सिद्धायिनी माता 3 बार बोल पड़ीं कि **सच्ची जन्मभूमि यह ही है**, पुनः माताजी ने कहा–**जयतु सिद्धायिनी माता**, तब पुनः सिद्धायिनी माता ने वही शब्द 3 बार बोला और उनके ऐसा बोलते ही अपार जनसमूह के जय-जयकारों से आकाशमण्डल गुंजायमान हो रहा है। यह स्वप्न देखकर जब मेरी आंख खुली, तो सचमुच में नेत्रों से हर्ष के अश्रु बह रहे थे। उस समय 3.15 बजा था, पुनः 5 बजे जब मैंने माताजी को इस स्वप्न के बारे में बताया तो वे बोलीं कि चंदनामती! वीर प्रभु की जन्मभूमि यही थी, यही है और यही रहेगी। देखना, मात्र कुछ ही समय में यह जन्मभूमि विश्व के मानस पटल पर छा जायेगी और वास्तव में पूज्य माताजी के वचन सत्य निकले।

➢मेरे ज्ञानार्जन का अपूर्व केन्द्र बनी कुण्डलपुर तीर्थ यात्रा–

इस कुण्डलपुर यात्रा का मेरे लिए जो सर्वाधिक विशिष्ट पहलू रहा, वह रहा ज्ञानार्जन का अमूल्य उपहार, जो इस वास्तविक जन्मभूमि को जन्मभूमि सिद्ध करने हेतु मुझे विशेषरूप से प्राप्त हुआ। वर्षों पहले से पूज्य माताजी के मुख से इन तीर्थों के बारे में सुनती थी और मैंने स्वयं भी दीक्षा लेने से पूर्व इस स्थान की वंदना की थी। पुनः जब वैशाली को भगवान महावीर जन्मभूमि मानने वाली विचारधारा विशेषरूप से समक्ष आई, तब तो चिंतन के माध्यम से

वास्तविक शोध को उजागर करने का मानस और भी दृढ़ होता गया । विहार के मध्य भी जहाँ कहीं भी पुस्तकालय उपलब्ध होता, वहाँ ही विविध ग्रंथों से साक्ष्य एकत्रित करने की भावना बनी रहती। मन में बार-बार यही विचार आता कि शोध तो वही सार्थक है, जिसके माध्यम से प्राचीन दिगम्बर जैनागम एवं जैनाचार्यों के कथन को ही परिपुष्टता प्राप्त हो, वही बुद्धि सार्थक है, जो अपनी प्राचीन संस्कृति के प्रति कटिबद्ध रहे। इन्हीं भावनाओं से ओत-प्रोत होकर जन्मभूमि कुण्डलपुर से संबंधित ज्ञानार्जन एवं आगमिक शोध में मुझे जो हार्दिक आनन्द प्राप्त हुआ वह वचनातीत है। कुण्डलपुर की धरती पर बैठकर भी अध्ययन-स्वाध्याय का विशेष ही अवसर रहा क्योंकि यहीं पर ही मैंने **''भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश''** को पूज्य माताजी की छत्रछाया में बैठकर गहन मनन-चिंतन के बाद निर्णयात्मक स्वरूप प्रदान किया, इसी प्रकार कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ हेतु गुरु आज्ञापूर्वक इसे सर्वांगीण बनाने का प्रयास भी ज्ञानार्जन की दिशा में सार्थक कदम ही सिद्ध हुआ।

वास्तविकता तो यही है कि ज्ञान की प्राप्ति में जो आनन्द आत्मा से उद्भूत होता है, वह अनुपम एवं अतुलनीय है, जितनी संतुष्टि सम्यग्ज्ञान के माध्यम से प्राप्त होती है, वह संसार की किसी भी अन्य सामग्री से नहीं प्राप्त हो सकती। इस कुण्डलपुर विकास ने मुझे स्वाध्याय एवं अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग का जो अवसर प्रदान किया है, वह ही मेरे लिए अनुपम निधि है।

➢मत जाओ माँ इस नगरी से, यह धरा तुम्हारे बिन सूनी–

भगवान महावीर जन्मभूमि के मात्र 22 माह के अल्प समय में नंद्यावर्त महल तीर्थ के रूप में ऐतिहासिक नवविकास सम्पन्न करवाकर जब 14 नवम्बर 2004, कार्तिक शु. दूज को अपरान्ह 3 बजे पूज्य माताजी एवं हम लोगों ने कुण्डलपुर से हस्तिनापुर की ओर मंगल विहार किया, तो बिहारवासी एकदम अधीर हो उठे, बार-बार पूज्य माताजी से अनुनय-विनय करके वे सब कहने लगे कि माताजी! अभी तो इस तीर्थ ने अपने विकसित स्वरूप को प्राप्त ही किया है, अभी तो यह 22 माह का बालक है, जिसे आपको और परिपक्व करना है, आपने अभी यहाँ का आनंद ही क्या लिया, मात्र यहाँ की धूल-मिट्टी ही मिली है आपको, अब जब इस विकसित तीर्थ पर कुछ क्षण रहने का समय है, तब आप विहार कर रही हैं, माताजी! कृपया इस तीर्थ और हम बिहारवासियों को छोड़कर मत जाइए, इतना कहते-कहते बेचारे दुखी होकर रोने लगे और जब भी माताजी की मौनपूर्वक मुस्कान देखी तो बेचारे पुनः-पुनः पधारने का

निवेदन करने लगे। उस समय माताजी ने उन सबको यही सम्बोधन प्रदान किया कि देखो! साधु के लिए क्या जंगल, क्या महल! हमने कोई अपने लिए तीर्थ नहीं बनाया प्रत्युत् भारत की समस्त जैन जनता के लिए बनाया है और जिनसंस्कृति की सुरक्षा मात्र की है, बस आप सब प्राणप्रण से सदा इस तीर्थ की सुरक्षा करते रहें, यही मेरे प्रति आपका सच्चा समादर होगा। हालांकि तीर्थ को छोड़ते हुए एक बार पूज्य माताजी एवं हम सभी की आँखों में अश्रु आ गए कि अब ना जाने कब इस पवित्र माटी को छूने और वीरप्रभु को नमन करने का सौभाग्य प्राप्त हो, किन्तु सन्त तो नदियों की बहती धारा के समान होते हैं, जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण कर सदैव निज-परकल्याण में ही तत्पर रहते हैं।

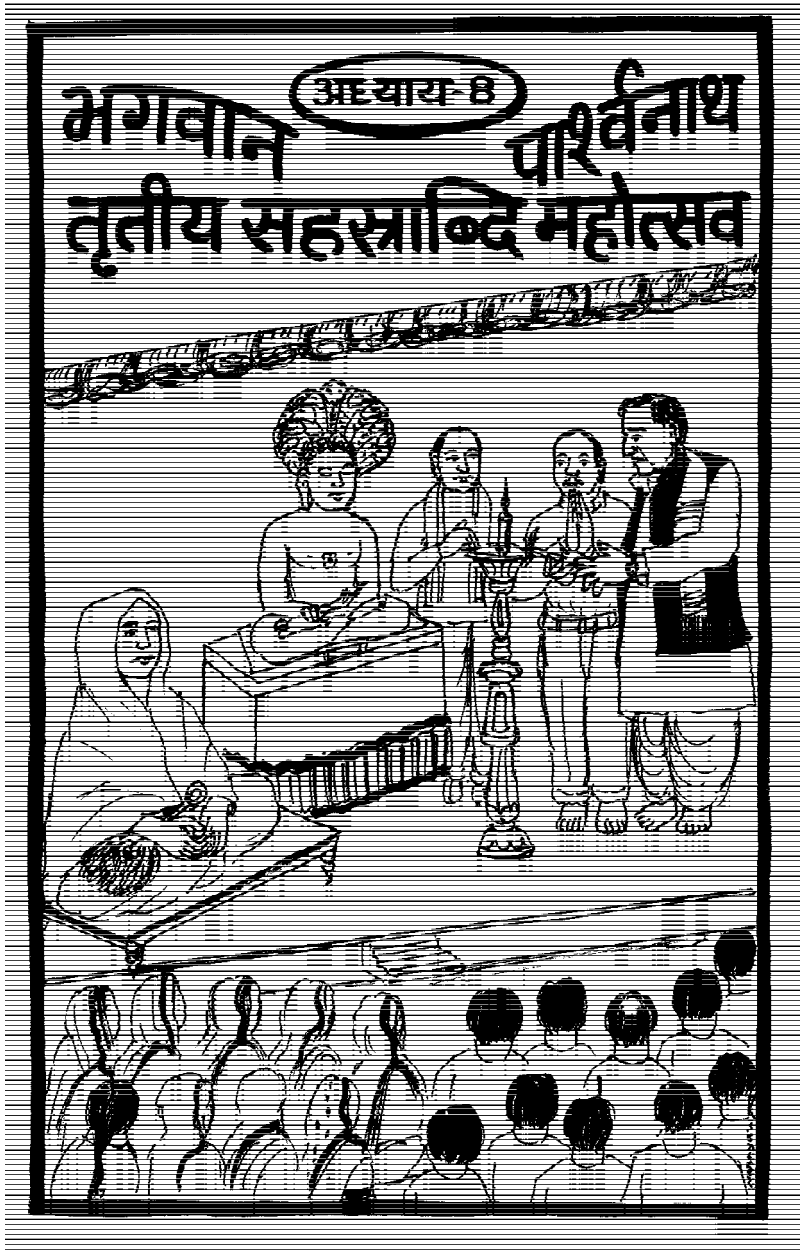
नियमसार की स्याद्वादचन्द्रिका टीका साहित्य जगत के मस्तक का टीका है–

पूज्य गणिनी आर्यिका माता ज्ञानमती जी ही एक ऐसी साध्वी मणि हैं, जिन्होंने नियमसार की संस्कृत टीका लिखकर नारी जगत् को ही नहीं सम्पूर्ण जैन समाज को एक महान उच्चासन पर बैठा दिया है। यदि उस स्याद्वादचन्द्रिका टीका को वर्तमान साहित्यजगत् के मस्तक का टीका कहा जाये तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। संस्कृत ग्रंथों की टीकाएँ तो बहुत हैं किन्तु वे सब पुरुष विद्वानों द्वारा की हुई टीकाएँ हैं। किसी आर्यिका माता के द्वारा की गई यह पहली ही टीका है, जो शब्द, अर्थ और अभिप्रायों से सम्पन्न है। ज्ञानमती माताजी ने जो भी कार्य किये हैं, वे सभी महान और अभूतपूर्व हैं।

स्व. डॉ. लाल बहादुर शास्त्री
(अध्यक्ष-अ.भा.दि. जैन शास्त्री परिषद)
अप्रैल सन् 1985

अध्याय-8

भगवान पार्श्वनाथ
तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव



अध्याय-8

भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव

काफी दिनों से पूज्य माताजी के मन में 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव को राष्ट्रीय स्तर पर मनाने हेतु भावना चल रही थी, उन्होंने इस महोत्सव के उद्घाटन हेतु पार्श्वनाथ जन्मभूमि वाराणसी में भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक दिवस (पौष कृ. 11) की तिथि भी पहले से ही निश्चित कर दी थी अतः अब कुण्डलपुर से मंगल विहार करते समय यद्यपि प्रमुख लक्ष्य वाराणसी पहुँचने का था, फिर भी कुण्डलपुर के निकटवर्ती तीर्थ– राजगृही, पावापुरी, गुणावां में भी प्रारंभ किए गए निर्माण की पूर्णता पर वहाँ भी भगवान विराजमान आदि कार्यों को सम्पन्न कराने का संयोग भी प्राप्त हो गया।

14 नवम्बर 2004 को कुण्डलपुर से मंगल विहार के पश्चात् 15 नवम्बर को पूज्य माताजी ने राजगृही में भगवान मुनिसुव्रतनाथ के नवीन मंदिर पर कलशारोहण सम्पन्न करवाया तथा संघस्थ बहनों ने 1008 मंत्रों से भगवान के श्रीचरणों में गुलाब के पुष्प समर्पित किए पुनः विपुलाचल पर्वत की तलहटी में भगवान महावीर एवं उनके शिष्य गौतम गणधर की प्राचीन घटनाओं की स्मृति दिलाते हुए पूज्य माताजी की प्रेरणा से संघपति लाला महावीर प्रसाद जी द्वारा नवनिर्मित मानस्तंभ की वेदी शुद्धि की गई तथा 17 नवम्बर, कार्तिक शु. षष्ठी को प्रातःकाल मानस्तंभ में भगवान महावीर की चार प्रतिष्ठित प्रतिमाएँ विराजमान की गईं। इससे पूर्व 16 नवम्बर को मध्यान्ह में राजगृही में संचालित जवाहर नवोदय विद्यालय में पूज्य माताजी की ही प्रेरणा से श्री मनोज कुमार जैन-मेरठ के सौजन्य से विराजित भगवान महावीर की अत्यन्त मनोहारी, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह आदि का संदेश देने वाली पद्मासन लाल प्रतिमा का अनावरण ब्र.रवीन्द्र जी द्वारा संघ सानिध्य में किया गया।

पुनः तीर्थ को चमन करने की इस श्रृंखला में 19 नवम्बर 2004, कार्तिक शु. अष्टमी को गौतम गणधर की निर्वाणभूमि गुणावां जी सिद्धक्षेत्र पर नवनिर्मित मंदिर में संघपति लाला श्रीमहावीर प्रसाद जी के सौजन्य से श्वेत पाषाण की साढ़े 5 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा विराजमान की गई और मंदिर पर कलशारोहण भी हुआ। कलशारोहण के पश्चात् गुणावां जी मंदिर में मूलवेदी के बाहर हॉल

की नवीन वेदियों में माता पद्मावती देवी एवं धरणेन्द्र देव की मूर्ति विराजमान की गई। मध्यान्ह में गौतम स्वामी की 1008 पुष्पों से आराधना की गई पुनः बिहार तीर्थ न्यास बोर्ड के अध्यक्ष श्री रामगोपाल जी एवं मंत्री-श्री अजय जी ने संघ का स्वागत सम्मान किया। संघस्थ पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर जी की अचानक आई अस्वस्थता के कारण गुणावां जी सिद्धक्षेत्र पर हुए 15 दिवसीय प्रवास के मध्य अनेकों विधान-अनुष्ठान भी सम्पन्न हुए। इससे पूर्व देखे गये राजगृही तीर्थ पर दो दिवसीय प्रवास के मध्य राजा श्रेणिक का खजाना, पहाड़ की गुफा में उत्कीर्ण अनेक जैन मूर्तियाँ, सदैव चिरस्मरणीय रहेंगे जो जैनत्व की गौरवगाथा का सुन्दर वर्णन करते हैं कि कभी यहाँ जैनधर्म ही विद्यमान रहा होगा। इसी प्रकार गुणावां जी के प्रवास के मध्य श्री गौतम गणधर स्वामी के श्रीचरणों में एवं निर्वाणस्थली जलमंदिर में किया गया ध्यान भी सदैव चिरस्मरणीय रहेगा।

➢मुनि श्री प्रमाणसागर महाराज से भेंट–

22 दिसम्बर 2004, मगशिर शु. 11 को मुगलसराय में प्रवास के मध्य सम्मेदशिखर की ओर विहार कर रहे आचार्य श्री विद्यासागर महाराज के शिष्य मुनि श्री प्रमाणसागर जी महाराज से मिलन हुआ और उनके साथ ही मंदिर में मंगल प्रवचन हुए। उस समय उन्होंने माताजी से अनेक प्रकार की चर्चाएँ की और महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास पर अतीव प्रसन्नता व्यक्त की।

मुगलसराय वालों का अतीव आग्रह था कि माताजी! यहाँ मंदिर बनकर पूर्णरूपेण तैयार हो गया है अतः उसमें वेदी शुद्धि करवाकर आप वहाँ भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा अपने करकमलों से विराजमान करवा दीजिए चूँकि उस समय माताजी को निर्धारित कार्यक्रमानुसार बनारस पहुँचना आवश्यक था अतः माताजी ने उन्हें शीघ्र ही पण्डित जी द्वारा वेदी शुद्धि का आश्वासन प्रदान किया पुनः पूज्य माताजी के आशीर्वाद से पौष शु. दशमी, 15 जनवरी 2005 पौष शु. षष्ठी को नवनिर्मित वेदी में 108 फणों से युक्त भगवान पार्श्वनाथ की अत्यन्त मनोहारी कृष्णवर्णी पद्मासन प्रतिमा विराजमान की गईं।

➢तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव का भव्य उद्घाटन वाराणसी में–

भगवान पार्श्वनाथ एवं सुपार्श्वनाथ के जन्म से पावन है वाराणसी नगरी। जहाँ 22 दिसम्बर 2004 को मुगलसराय से चलकर दिन में 4 बजे पूज्य माताजी का संघ सहित मैदागिन धर्मशाला में मंगल पदार्पण हुआ लेकिन आज

इस नगरी में पदार्पण का उद्देश्य था **''भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव का भव्य उद्घाटन''**, 6 जनवरी 2005 को भव्यता के साथ विशाल जनसमूह के बीच सानंद सम्पन्न होने वाले इस महोत्सव की पूर्व बेला में 23 दिसम्बर को माताजी संघ के भेलूपुर मंदिर में मंगल पदार्पण अवसर पर मूलवेदी में विराजमान भगवान पार्श्वनाथ का भारी भीड़ के मध्य पंचामृत अभिषेक सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् प्रारंभ हुई कार्यक्रमों की श्रृंखला, जिसमें सर्वप्रथम कुबेर द्वारा पन्द्रह माह तक हुई रत्नवृष्टि के प्रतीक में 15 दिनों तक प्रतिदिन रत्नवृष्टि कर सभी में रत्न वितरित किए गए।

6 जनवरी 2005, पौष कृ. एकादशी को भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक दिवस के अवसर पर श्री धन्नालाल मोहनलाल अजित कुमार जैन अजमेरा परिवार-धूलियान (प. बंगाल) द्वारा माताजी के संघ सानिध्य में किए गए झण्डारोहण पूर्वक कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। जन्मभूमि वाराणसी में निकाली गई भव्य ऐतिहासिक शोभायात्रा वास्तव में अभूतपूर्व थी।

➢भगवान पार्श्वनाथ के 9 मंजिले धातु के महल का अनावरण–

भव्य शोभायात्रा के पश्चात् आयोजित धर्मसभा में मुख्य अतिथि के रूप में **उ.प्र. सरकार के लोकनिर्माण मंत्री–श्री शिवपाल सिंह यादव**, समारोह अध्यक्ष के रूप में **उत्तरप्रदेश विधानसभा के अध्यक्ष-श्री माताप्रसाद पाण्डेय** तथा अनेक अन्य मंत्री व विशिष्ट गणमान्य महानुभाव पधारे। दीप प्रज्वलन एवं मंगलाचरण के पश्चात् मंगलकलश की स्थापना हुई पुनः **''भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश'' का विमोचन सारस्वत अतिथि श्री पी.रामचन्द्र राव (कुलपति-बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय) द्वारा हुआ पुनः मुख्य अतिथि द्वारा भगवान पार्श्वनाथ के 9 मंजिले धातु के महल का अनावरण हुआ।** साथ ही मेरे द्वारा लिखित भजनों की ऑडियो कैसेट का विमोचन विधानसभा अध्यक्ष जी द्वारा कराया गया।

पूज्य माताजी ने अपने मंगल प्रवचन में सभी को शुभाशीष देते हुए यही प्रेरणा दी कि इस वर्ष सम्मेदशिखर में राष्ट्रीय स्तर पर भगवान पार्श्वनाथ का निर्वाण महोत्सव मनाया जाये। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के नवनिर्वाचित अध्यक्ष-श्री एन.के. सेठी ने दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्रों को जैन संस्कृति का प्रतीक बताते हुए उनके संरक्षण एवं संवर्धन हेतु जैन समाज के हित में अनेक महत्वपूर्ण मुद्दे पर अपने विचार प्रकट किए। साथ ही यह भी कहा कि गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का प्रत्येक समारोह पूर्ण भव्यता

के साथ ही मनाया जाता है और यदि मैं आज के इस भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव में नहीं आता, तो मेरी हानि होती। सायंकाल प्रसिद्ध संगीतकार श्री रवीन्द्र जैन-मुम्बई द्वारा भव्य सांस्कृतिक संध्या के आयोजन से पूरा पाण्डाल पार्श्वनाथमय हो गया। महोत्सव के द्वितीय दिवस 7 जनवरी को भेलूपुर दि. जैन मंदिर में भगवान पार्श्वनाथ की मनोज्ञ प्रतिमा का 1008 कलशों से मस्तकाभिषेक किया गया, साथ ही मानस्तंभ में विराजमान भगवन्तों की प्रतिमाओं का भी भक्तों द्वारा अभिषेक किया गया। मध्यान्ह में तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ का अधिवेशन हुआ, जिसमें बनारस हिन्दी विश्वविद्यालय एवं सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय आदि कई जगह से पधारे 25 विद्वानों एवं विद्वत् महासंघ के 25 विद्वानों का भावभीना स्वागत किया गया।

समारोह के तृतीय दिवस 8 जनवरी को 108 इन्द्र-इन्द्राणियों के साथ भगवान पार्श्वनाथ मण्डल विधान के आयोजनपूर्वक कार्यक्रम का समापन हुआ और सायंकाल तीनों दिन भगवान पार्श्वनाथ की 1008 दीपकों से मंगल आरती की गई।

➢बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में आध्यात्मिक प्रवचन–

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने 9 जनवरी 2005 को एशिया के प्रथम पंक्ति के विश्वविद्यालयों में से मुख्य विश्वप्रसिद्ध बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के मालवीय भवन में विश्वविद्यालय परिवार एवं जैन समाज के सैकड़ों प्रबुद्धजनों को आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी रचित समयसार एवं जैनधर्म के मूलभूत सिद्धान्तों का जो अध्यात्म-पीयूष पिलाया, वह सभी के मन-मस्तिष्क पर अमिट छाप छोड़ गया। पूज्य माताजी के मुखारविंद से प्रवाहित होती हुई धर्मामृत की अविरलधारा अपने आप में अत्यन्त अनुपम थी एवं सभी के ऊपर उसका विलक्षण प्रभाव दृष्टव्य हुआ। मालवीय भवन में रविवासरीय गीता प्रवचन के अंतर्गत पूज्य माताजी ने समयसार की दृष्टि से अत्यन्त मार्मिक आध्यात्मिक प्रवचन प्रस्तुत किया।

पूज्य गणिनी माताजी ने अपने प्रभावशाली उद्बोधन में कहा कि हमारी और आपकी आत्मा सर्वज्ञ एवं सर्वदर्शी है परन्तु कर्मरूपी रज से आच्छादित होने के कारण यह सब कुछ जानने में समर्थ नहीं हो पा रही है। जिस प्रकार बादलों से ढककर सूर्य का अस्तित्व धूमिल हो जाता है, उसी प्रकार कर्मरूपी बादल आत्मा के सर्वज्ञ स्वरूप को धूमिल कर देते हैं। सारी उपासना का एकमात्र सार यही है कि हम अपने उस सर्वज्ञ-सर्वदर्शी स्वरूप को उपलब्ध कर लें। जिन महान आत्माओं ने अपने समस्त कर्ममल को विनष्ट कर दिया, वे ही

चिच्चैतन्यमयी सिद्ध-आत्मा के रूप में सदैव के लिए सिद्धशिला पर जाकर विराजमान हो गये। हम जैसे समस्त संसारी प्राणियों का भी एकमात्र वही शाश्वत लक्ष्य होना चाहिए।

सभी महान आचार्यों ने जो 'सारों में भी सार' बताया है, वह है ध्यान अर्थात् योग अर्थात् समाधि क्योंकि ध्यान के बल पर ही हम अपने ज्ञान को परिपूर्ण केवलज्ञान बना सकते हैं। समयसार में आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा है कि आत्मा एक है, शाश्वत है एवं ज्ञान-दर्शन लक्षण वाला है। ज्ञान-दर्शन जिसमें घटित होता है वही जीव कहलाता है और जिसमें घटित नहीं होता है, उसे अजीव कहते हैं। समय का अर्थ है आत्मा और आत्मा का सार है- पूर्ण ज्ञान की अवस्था।

देह अर्थात् शरीर को अपना मानना अथवा 'शरीर ही मैं हूँ' ऐसा मानना अथवा शरीर के जन्म और मरण के साथ अपना जन्म और मरण मानना, यही संसार के मूल कारण हैं। अर्थात् **शरीर को आत्मा मान लेना ही सांसारिक परिभ्रमण का आधारभूत कारण है,** जिसे बहिरात्मपने की संज्ञा भी दी जाती है। यदि हम अपनी आत्म शक्ति को अनुभव कर लें तो बाह्य संसार की कोई भी शक्ति हमें प्रभावित नहीं कर सकती। साधुगण शरीर से मोह छोड़ने के लिए कठोर साधना करते हैं ताकि वे चैतन्य धातु से निर्मित अशरीरी बन जावें। जीव अर्थात् आत्मा में वर्ण, गंध, रस, रूप, संस्थान, संहनन इत्यादि कुछ भी नहीं है, वास्तव में ये सभी पुद्गल शरीर के ही गुण विशेष हैं। आत्मा शक्तिरूप में सदाशिव हैएवं कर्ममल से अस्पृष्ट होने पर इसका यह स्वरूप प्रकट हो जाता है।

संसार में मोह एवं अज्ञान ही सबसे बड़ा अंधकार है, जिसके वशीभूत होकर जीव वस्तु-स्वरूप को न समझते हुए चतुर्गति परिभ्रमण किया करता है।

धर्म, सम्प्रदाय, वर्ग, जाति इत्यादि सब भिन्न-भिन्न अवयव हैं। इनमें से धर्म का स्थान सबसे ऊँचा हैं। धर्म और सम्प्रदाय कभी एक नहीं हो सकते हैं। धर्म सदैव सम्प्रदायातीत है। **वास्तव में जो उत्तम सुख में धरे, वही धर्म है।** धर्म शाश्वत है जबकि सम्प्रदाय क्षणिक हैं। धर्म अभेद को उत्पन्न करके सबको जोड़ता है जबकि सम्प्रदाय आपस में बांटने का कार्य करता है अतः जीवन के शाश्वत सिद्धान्तों को समझते हुए सम्प्रदाय से ऊपर उठकर धर्म को ग्रहण करना चाहिए।

जैन शासन को 'शम-दम' शासन कहा गया है क्योंकि क्रोध, मान, माया, लोभरूपी कषायों से स्वयं को क्रमशः पृथक् कर देने (शम) एवं इन्द्रियों के निरोध (दम) का उपदेश तीर्थंकर भगवन्तों ने विशेषरूप से दिया है।

क्रोधरूपी कषाय को क्षमारूपी जल से शांत करने हेतु संसार में सबसे बड़ा उदाहरण है भगवान पार्श्वनाथ का, जो 2880 वर्ष पूर्व इसी वाराणसी नगर में जन्मे थे। दशभवों तक कमठ के जीव ने भगवान पार्श्वनाथ के जीव पर हर संभव उपसर्ग किया परन्तु क्षमा एवं सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति भगवान पार्श्वनाथ के जीव ने सदैव ही इसे अपने कर्मों का ही प्रतिफल जानते हुए पूर्ण शांति को धारण किए रखा और इस प्रकार एक हाथ से ताली बजने एवं एकतरफा वैर का यह उदाहरण दृष्टव्य हुआ। वस्तुतः सच्चे तापसी अपनी तपस्या द्वारा कषायरूपी परम शत्रुओं को ही तपाकर वास्तविक अर्थ की सिद्धि किया करते हैं। कषाय और तपस्या का पूर्णतः अन्तर्विरोध रहता है।

पूज्य माताजी ने आगे कहा कि **शीलहरण संसार में सबसे बड़ा पाप है।** सीता के मन में रावण के प्रति अणुमात्र भी राग नहीं था, एकमात्र रावण के मन में ही सीता के प्रति रागयुक्त आसक्ति थी। यद्यपि सीता की इच्छा के विरुद्ध रावण ने उनका शीलहरण नहीं किया तथापि गलत भावना मात्र से ही आज तक संसार में रावण का पुतला जलाया जाता है एवं कोई भी अपने बालक का नाम रावण नहीं रखता। एकदेश ब्रह्मचर्यव्रत अर्थात् शीलव्रत अर्थात् अपने पति/पत्नी में पूर्ण संतोष रखना अथवा पूर्ण ब्रह्मचर्यव्रत भारतीय संस्कृति का ठोस आधार है।

स्वप्न में भी बदला लेने की भावना नहीं रखना जैन चर्या का मूलभूत सिद्धान्त है। आत्मा के कल्याण के अभिलाषी पुरुष किसी अन्य द्वारा उपसर्ग किए जाने पर यही विचार करते हैं कि यह मेरा परम उपकारी है जो कि मुझे मेरे कटु कर्म से मुक्ति दिलाने में निमित्त बन रहा है। मेरे अपने कर्मफल के अतिरिक्त किसी में भी मेरा घात करने की क्षमता नहीं है। आत्मकल्याणरूपी धर्म की रक्षा करते हुए भले ही शरीर छूट जाए परन्तु वैर भाव करना उचित नहीं है। यदि बदला लेने की भावना हृदय में है तो इसका अर्थ है कि साधक की दृष्टि अभी समीचीन नहीं हो पाई है। क्रूरता, क्रोध, दोष, विकृतियाँ इत्यादि आत्मा की सच्ची विभूति नहीं हैं, इनके माध्यम से तो हम अपना ही घात करते हैं। **अंगारा पहले फेंकने वाले के हाथ को जलाता है,** पुनः ही दूसरे का घात कर सकता है अथवा नहीं भी। यदि सामने वाले का पुण्य क्षीण होगा तो ही उसकी हानि होगी अथवा नहीं परन्तु अंगारा फेंकने वाला तो निश्चितरूप से जल ही जायेगा।

निश्चित हमको करना है कि हमें क्या बनना है- भगवान पार्श्वनाथ

अथवा कमठ। भगवान पार्श्वनाथ जिन्होंने क्षमा एवं सहनशीलता का आश्रय लेकर स्वयं को तीर्थंकर बना लिया अथवा कमठ जिसने हर भव में वैर, बदला लेने की भावना, हिंसा आदि के आश्रय से स्वयं को नरक एवं पशुगति के अपार दुःखों में डाला। हमारे एक हाथ में चिंतामणि रत्न हैं और दूसरे हाथ में खली का टुकड़ा है, अब हमारे ऊपर निर्भर है कि हम किसे अपनाते हैं। मनुष्य पर्याय और शाश्वत धर्म की धारा चिंतामणि रत्न है जबकि विषयासक्ति, क्रोध-मान-माया-लोभ इत्यादि कषाय खली के टुकड़े हैं। यदि इस कलिकाल में भी हमको धर्मरूपी रत्न की प्राप्ति हो गई है तो हमारे लिए यह काल भी अत्यन्त उत्तम है। **हमें इस उत्तमता पर महान गौरव होना चाहिए कि हमको मनुष्य भव एवं धर्म के रूप में महान निधि अथवा सबकुछ मिल गया है।**

जो आत्मा जन्म और मरण के चक्र में उलझा हुआ है, वह अहिंसारूपी परम धर्म को अपनाकर भगवान-आत्मा बन सकता है। जब पाषाण में संस्कारों को आरोपित करके उसे भगवान की प्रतिमा के रूप में पूज्य बना दिया जाता है, तब तो चैतन्य आत्मा पर संस्कार डालते रहने से वह भगवान-आत्मा क्यों नहीं बन जायेगा।

विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों का आह्वान करते हुए पूज्य माताजी ने कहा कि इस विश्वप्रसिद्ध काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थीगण यहाँ से इस प्रकार के संस्कार लेकर समाज में आगे आएं कि जिससे भारतीय संस्कृति का गौरव सम्पूर्ण विश्व को आश्चर्यचकित कर सके, यही मेरी मंगल भावना है।

उपस्थित जनसमूह ने मंत्रमुग्ध होकर पूज्य माताजी की अमृतमयी वाणी का पान किया। यह कार्यक्रम विश्वविद्यालय की गीता समिति के द्वारा आयोजित किया गया था, जिसका संचालन मालवीय भवन के निदेशक प्रो. कृष्णकांत शर्मा ने किया। पूज्य माताजी के प्रवचन के पश्चात् प्रो. शर्मा ने प्रवचन के सार को अत्यन्त प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया, जिसकी सभी ने सराहना की। उन्होंने पूज्य माताजी से निवेदन किया कि माताजी जब भी काशी पधारें तो इस विश्वविद्यालय में अपने पवित्र चरण रखकर एवं मंगल आशीर्वाद प्रदान करके सदैव हमें कृतार्थ करें। कार्यक्रम के अंत में कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन ने गीता समिति हेतु भगवान पार्श्वनाथ प्रतीक चिन्ह एवं साहित्य प्रदान किया। कार्यक्रम संयोजन में सहयोग हेतु डॉ. कमलेश कुमार जैन-वाराणसी को विशेष धन्यवाद ज्ञापित किया गया। इस अवसर पर इंजीनियरिंग रेलवे बोर्ड सदस्य एवं पदेन सचिव-भारत सरकार श्री सूर्यपाल सिंह जैन ने भी

पधारकर पूज्य माताजी से मंगल आशीर्वाद प्राप्त किया।

➢सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय (वाराणसी) में युवावर्ग के लिए विशेष आह्वान –

वाराणसी के प्रसिद्ध सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय में आयोजित राष्ट्रीय युवा महोत्सव 2004-2005 के अंतर्गत 15 जनवरी 2005 को राष्ट्रीय सेवा योजना सभागार में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणास्पद मंगलमयी वाणी का सैकड़ों युवाओं ने लाभ प्राप्त किया। विश्वविद्यालय परिवार के डॉ. फूलचंद जैन प्रेमी के संयोजन में आयोजित इस धर्मसभा में प्रो. राधेश्यामधर द्विवेदी, डॉ. रमेश द्विवेदी, डॉ. राघवेन्द्र दूबे, डॉ. रमेश प्रसाद इत्यादि द्वारा पूज्य माताजी एवं संघ का भावभीना स्वागत किया गया। डॉ.फूलचंद जी ने अपने वक्तव्य में कहा कि आज जैन समाज की सबसे बड़ी साध्वी पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी हमारे विश्वविद्यालय में पधारी हैं, यह समस्त विश्वविद्यालय परिवार के लिए अत्यन्त गौरव एवं हर्ष की बात है क्योंकि ऐसे ज्ञानवान संतों का समागम बड़ी कठिनता से प्राप्त होता है।

पूज्य माताजी के मंगल प्रवचन से पूर्व मैंने अपने वक्तव्य में सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि संसार में किन्हीं को दो रात्रियों के मध्य एक दिन दिखाई पड़ता है तो किन्हीं को दो दिनों के मध्य एक रात्रि दिखाई पड़ती है। यह अपनी-अपनी दृष्टि की बात है कि हम आशा अथवा निराशा किसका चयन करते हैं। भारत की धरती सदैव से ऋषि-मुनियों की धरती रही है जहाँ 20वीं सदी में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने प्रथम बाल ब्रह्मचारिणी का पद धारण करके सैकड़ों कुमारी कन्याओं के लिए त्याग का मार्ग प्रशस्त किया, 2600 वर्षों के इतिहास में प्रथम बार किसी नारी शक्ति ने 200 से भी अधिक ग्रंथों का सृजन किया एवं जन-जन को तीर्थंकर भगवन्तों के सर्वोदयी सिद्धान्तों से परिचित कराने हेतु अपने एक-एक क्षण का उपयोग किया। ऐसी महान साध्वी के चरण सानिध्य में हर युवा को सदाचार, शाकाहार एवं संयम के नियमों को ग्रहण करके विश्वविद्यालय के नाम को रोशन करना चाहिए। कहा भी गया है 'जैसा खावे अन्न, वैसा होवे मन; जैसा पिये पानी वैसी होवे वाणी', इसलिए अण्डा, माँस, मछली इत्यादि मांसाहार का त्याग करके सभी युवाओं को शाकाहार का व्रत पालन करना चाहिए क्योंकि उससे ही सदाचार रूप नैतिकता की प्राप्ति संभव है। युवा चाहें तो अपनी शक्ति को संहार के स्थान पर सृजन में लगाकर परिवार, देश एवं राष्ट्र की परिस्थितियों को

परिवर्तित कर सकते हैं।

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने प्रभावक वक्तव्य में कहा कि आज हमको जो सर्वश्रेष्ठ मनुष्य पर्याय मिली है उसके माध्यम से हम स्वयं को भगवान बनाने का पुरुषार्थ कर सकते हैं। जो इन्द्रियों एवं कर्म- शत्रुओं को जीत लेते हैं, वे 'जिन' कहलाते हैं और उनके मार्ग का अनुसरण करने वाले 'जैन' कहलाते हैं। यह जैनधर्म न कोई सम्प्रदाय है, न कोई वर्ग है और न किसी अन्य धर्म की शाखा है वरन् यह तो इन सबसे ऊपर उठकर अद्वैत सार्वभौम धर्म है जो प्राणियों को उत्तम सुख में पहुँचाता है। धर्म का विरोधी अधर्म है और संस्कारों के बल पर ही व्यक्ति धर्म अथवा अधर्म में प्रवेश करता है। संस्कार, संगति, भवितव्य (होनहार) इन तीनों के द्वारा ही व्यक्ति के मानस का निर्माण होता है। प्राचीन काल से ही तीर्थंकर भगवन्तों जैसे महापुरुषों ने अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं परिग्रह प्रमाण ऐसे 5 सूत्रों का उपदेश दिया है। **अहिंसा** का अर्थ है सब जीवों को अपने समान जानकर किसी जीव की संकल्पपूर्वक हिंसा न करना। **सत्य** वचन बोलने से जहाँ व्यक्ति विश्वासपात्र एवं आदर्श बनता है वहीं उसकी वाणी से पूरे विश्व का भी कल्याण संभव हो सकता है। विश्वासघात करके किसी के धन इत्यादि का हरण कर लेना मानों उसके प्राणों का ही हरण करना है अतः इस चोरी के दुर्गुण से बचते हुए **अचौर्य** व्रत का पालन करना चाहिए। तीनों लोकों में पूज्य **ब्रह्मचर्य अथवा शील व्रत** है जिसके माध्यम से सेठ सुदर्शन के लिए बनाई गई शूली सिंहासन में परिवर्तित हो गई, सीता की अग्नि परीक्षा में अग्नि जल में परिवर्तित हो गईऔर द्रौपदी का चीर बढ़ गया इत्यादि। भावों के पतित होने के कारण आज तक रावण का पुतला जलाया जाता है और कोई भी माता-पिता अपने बालक-बालिका का नाम रावण अथवा सूर्पणखा नहीं रखते हैं। वास्तव में शक्ति, ओज एवं तेज ब्रह्मचर्य के ही अंदर है अतः विद्यार्थी जीवन में परिपूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए विवाह के बाद स्वदार संतोषरूपी शीलव्रत का पालन करना चाहिए।

सारे संसार को विजित करने वाले कामरूपी शत्रु को जीतने में जिनेन्द्र प्रभु ही सक्षम होते हैं क्योंकि उन्होंने साक्षात् मोह को ही जीत लिया है। जो मोह को जीत लेता है उसके द्वारा मोह के किंकर काम, क्रोध इत्यादि तो स्वयं ही विजित हो जाते हैं। स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु एवं कर्ण ये 5 इन्द्रियाँ 5 रत्न हैं परन्तु यदि इनका सदुपयोग न किया जाये तो ये ऐसे बेलगाम घोड़े हैं जो कहीं पर भी ले जाकर पटक सकते हैं, इसलिए इनका सदुपयोग करके

इन्हें रत्न-सदृश बनाना चाहिए।

कुसंस्कारों से प्रभावित होकर आत्मा दुर्गति में चली जाती है जबकि महापुरुषों के चारित्र को पढ़कर और सुनकर आत्मा उच्च बन जाती है। जिस प्रकार अग्नि की एक चिंगारी मात्र से फूस का बहुत बड़ा ढेर भी जलकर राख हो जाता है, उसी प्रकार आत्मा में किया गया एक क्षण का अनुराग भी असंख्य पापकर्मों को खण्ड-खण्ड कर डालता है अतः सत्संगति के माध्यम से अपनी आत्मा को संस्कारित कर अपने कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर लेना चाहिए।

पूज्य माताजी ने आगे कहा कि पाँचवां सूत्र है **परिग्रह प्रमाण** है, जिसके अनुसार अपनी आवश्यकता के अनुरूप धन इत्यादि का संग्रह करने से सामाजिक संतुलन की स्थापना हो सकती है।

पूज्य माताजी ने युवावर्ग को आह्वान करते हुए कहा कि आप अपने ओज एवं शक्ति का सदुपयोग करो। गुटखा, पान मसाला जैसी छोटी-छोटी चीजों के प्रति आप न मात्र अपने धन का अपव्यय करते हैं परन्तु अपने स्वास्थ्य से भी खिलवाड़ करते हैं क्योंकि ये चीजें कैंसर जैसे रोग तक को भी उत्पन्न करने वाली हैं। आपको ऐसी चीजों का प्रयोग करना है जिसमें स्वाद के साथ-साथ स्वास्थ्य भी निहित हो।पूज्य माताजी ने आगे कहा कि आप अपनी इन्द्रियों पर संयम रखने का प्रयास करें एवं अपने समय, शक्ति तथा धन तीनों का सदुपयोग करें। देश का युवा वर्ग भविष्य की बागडोर को संभालने वाला अथवा भविष्य का निर्माता है, संस्कृति एवं राष्ट्र का संरक्षक है और उसके कंधों पर बहुत बड़ी जिम्मेदारियाँ हैं। युवा वर्ग को ही आशा भरी दृष्टि से देखा जाता है क्योंकि जब युवाओं का जीवन समुन्नत होगा तो ही राष्ट्र समुन्नत होगा और यह तभी हो सकता है जब आप सब लोग संस्कारवान बनें और उसके लिए आपको सत्संगति के साथ-साथ सत्साहित्य का अध्ययन करना होगा। आप सभी लोग इस विश्वविद्यालय में पढ़ते हुए अपनी शाश्वत संस्कृति को स्वयं में जीवन्त रखकर विश्वविद्यालय का नाम गौरवान्वित करें, यही आप सबके लिए मंगल आशीर्वाद है।

पूज्य माताजी ने पुनः कहा कि जिस प्रकार 1 अंक के आगे जितने-जितने शून्य रखें जाते हैं, उतनी ही संख्या बढ़ती जाती है परन्तु यदि शून्यों के पहले से 1 का अंक हटा दिया जाये तो चाहे कितने भी शून्य रख लें, उनका कोई भी महत्व नहीं है। इसी प्रकार यदि एक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन होता है तो सभी अन्य गुण भी शोभायमान होते हैं और ब्रह्मचर्य के अभाव में अन्य सारे गुण भी अवगुण की ही श्रेणी में आ जाते हैं।

➢सारनाथ में फहराया जिनधर्म का ध्वज–

जैनधर्म के 11वें तीर्थंकर भगवान श्रेयांसनाथ की जन्मभूमि सिंहपुरी (सारनाथ) में पूज्य माताजी एवं समस्त संघ के सानिध्य में 16 जनवरी से 20 जनवरी 2005 पौष कृ. 7 से पौष शु. 11 तक श्री दिगम्बर जैन समाज काशी द्वारा श्री 1008 भगवान श्रेयांसनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव भव्य आयोजन के रूप में निर्विघ्नतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

चिरप्रतीक्षित इस प्रतिष्ठा महोत्सव के आयोजन में वाराणसी जैन समाज का उत्साह विशेषरूप से दृष्टव्य रहा। बौद्ध तीर्थ के रूप में विश्वभर में प्रसिद्ध सारनाथ में जैनधर्म की कीर्तिपताका फहराने का यह अद्भुत अवसर था। पूज्य माताजी के शुभाशीर्वाद एवं कुशल दिशा-निर्देशन के मध्य सम्पन्न इस प्रतिष्ठा में सभी लोगों ने विशेष हार्दिक आल्हाद का अनुभव तो किया ही, साथ ही करोड़ों वर्ष पूर्व तीर्थंकर भगवान श्रेयांसनाथ ने गर्भ,जन्म, तप एवं ज्ञानकल्याणक के माध्यम से जिस भूमि को परम पवित्र किया था, उसे तीर्थंकर जन्मभूमि के विकास की शृंखला में एक नवीन आयाम प्राप्त हुआ।

महोत्सव के समापन में 11 फुट उत्तुंग श्यामवर्णी भगवान श्रेयांसनाथ की प्रतिमा का पंचामृत एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक सानन्द सम्पन्न हुआ।

➢माताजी के पदार्पण से पुनः महक उठा प्रयाग तीर्थ–

चूंकि वाराणसी में पूज्य माताजी की जन्मभूमि टिकैतनगर के अनेक गणमान्य महानुभाव आकर पूज्य माताजी के श्रीचरणों में वहाँ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करवाने हेतु श्रीफल चढ़ाकर निवेदन करने आए थे, इससे पूर्व भी वे कई बार माताजी के पास आकर इस हेतु आग्रह कर चुके थे अतः माताजी ने उन्हें पूर्ण स्वीकृति प्रदान कर दी। फिर तो सभी के चेहरे खिल उठे और सभी ने जोर-शोर से तैयारियाँ करनी प्रारंभ कर दीं। वाराणसी से टिकैतनगर की ओर मंगल विहार के मध्य संघ का मंगल पदार्पण 24 जनवरी 2005, पौष शु. चतुर्दशी को तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली प्रयाग तीर्थ पर हुआ। अपने उद्भव की प्रेरणास्रोत को पाकर दीक्षास्थली तीर्थ का हर कण पुनः आल्हादित हो उठा। 26 जनवरी 2005 को इलाहाबाद जैन समाज की भारी उपस्थिति के बीच कैलाशपर्वत पर विराजमान भगवान ऋषभदेव का मस्तकाभिषेक सम्पन्न किया गया तथा सामूहिक पूजन करके निर्वाणलाडू चढ़ाया गया। न्यायमूर्ति श्री सुधीर नारायण जी एवं न्यायमूर्ति श्री एम.सी.जैन ने कार्यक्रम में भाग लेकर निर्वाणलाडू चढाया।

➢टिकैतनगर में संघ का मंगल प्रवेश–

4 फरवरी 2005, माघ कृ. दशमी को पूज्य माताजी ने जब अपनी जन्मभूमि में 11 वर्षों के पश्चात् पुनः संघ सहित मंगल प्रवेश किया, तो अपने ग्राम की विश्वप्रसिद्ध निधि का पुनः दर्शन प्राप्त करके टिकैतनगर का बच्चा-बच्चा अत्यन्त उत्साहित एवं आनन्दित हो उठा। बैण्ड-बाजे सहित विशाल जुलूस के साथ संघ को नगर में मंगल प्रवेश कराया गया। भरतसेना टिकैतनगर के नवयुवकों ने **''जैनं जयतु शासनं-वंदे ज्ञानमती मातरम्''** इत्यादि गगनभेदी नारों से समस्त नगर को गुंजायमान कर दिया। क्रमबद्ध कतार में चलते नेमी पब्लिक स्कूल के बालकों द्वारा हाथों में ली गई संदेश युक्त तख्तियाँ एवं नवयुवकों के हाथ में फहराते केशरिया ध्वज समस्त नगरवासियों को चहुँओर जिनधर्म की विजयपताका फहराते हुए माताजी के मंगल आगमन का संदेश प्रदान कर रही थीं। स्थान-स्थान पर जैन-जैनेतर बंधुओं ने पूज्य माताजी के चरणों का प्रक्षालन करके आरती उतारी तथा बारम्बार पुष्पवृष्टि करते हुए संघ को शहर के चारों फाटक तक घुमाया। उस समय सभी का उत्साह एवं हर्ष देखते ही बनता था। सभी जैन बंधुओं ने अपने प्रतिष्ठान बंद रखकर जुलूस तथा सम्पूर्ण प्रतिष्ठा महोत्सव में भाग लिया जो कि प्रत्येक जैन समाज के लिए अनुकरणीय है। प्राचीन जिनमंदिर में विराजमान अतिशयकारी मूलनायक भगवान पार्श्वनाथ एवं अन्य जिनबिंबों तथा समस्त चैत्यालयों के 11 वर्षों के पश्चात् दर्शन किये।

वस्तुतः 20वीं सदी में त्याग तपस्या की शाश्वत संस्कृति को जीवन्त रखने वाली अपने गर्भ से प्रसूत निधि को पाकर आज टिकैतनगर का चप्पा-चप्पा हार्दिक आल्हाद में सराबोर हो उठा।

➢टिकैतनगर में हुआ अद्भुत चमत्कार–

पूज्य ज्ञानमती माताजी की जन्मभूमि टिकैतनगर में एक अतिप्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर है, जहाँ पूरी जैन समाज दर्शन-पूजन के लिए एकत्रित होती है। वहाँ समाज की भावनानुसार दूसरा मंदिर बनाने का निर्णय हुआ अतः पुराने मंदिर के बगल में ही पुराने स्कूल का भवन तोड़कर विशाल जिनमंदिर का निर्माण सन् 2003-2004 में हो गया। इस मंदिर के अंदर बीचों बीच की तीन वेदियों में मूलनायक भगवान महावीर स्वामी की अवगाहना प्रमाण खड्गासन प्रतिमा, सहस्रकूट चैत्यालय एवं ह्रीँ प्रतिमा के साथ चारों ओर 4-4 फिट खड्गासन चौबीस तीर्थंकर भगवंतों की प्रतिमाएँ विराजमान

करने हेतु वहाँ के अनेक श्रद्धालु भक्तों ने अपने द्रव्य का सदुपयोग किया।

टिकैतनगर समाज ने एक स्वर से यह निर्णय लिया कि इस मंदिर का पंचकल्याणक महोत्सव हम लोगों को पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के संघ सानिध्य में ही करना है और प्रतिष्ठा महोत्सव का सम्पूर्ण कार्य कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी के कुशल नेतृत्व में होगा। इस बात की स्वीकृति लेने हेतु समाज के अध्यक्ष प्रद्युम्न कुमार जैन सर्राफ (छोटी सा.) एवं महामंत्री ऋषभ कुमार सहित अनेक कार्यकर्ताओं ने सन् 2002-03-04 में (प्रयाग, कुण्डलपुर, बनारस आदि स्थानों पर) आकर पूज्य माताजी के पास श्रीफल चढ़ाकर निवेदन किया। माताजी ने भी कुण्डलपुर (बिहार) से दिल्ली-हस्तिनापुर वापसी के मार्ग में अयोध्या और टिकैतनगर का भी कार्यक्रम सोचकर उन लोगों को 99 प्रतिशत स्वीकृति दे दी।

➢मध्य में आ गया एक विघ्न–

जैन मोहल्ले के ठीक मध्य में निर्मित हो रहे इस मंदिर का प्राथमिक निर्माण लगभग पूर्ण हो गया था। अकस्मात् एक मुनि जी एवं एक वास्तुशास्त्री ने वहाँ के कुछ लोगों को यह कहकर गुमराह कर दिया कि यह मंदिर गलत बना है और तुम लोगों के लिए हानिकारक है। फिर क्या था? वे लोग आकुलित हो उठे और कहने लगे कि हम इस मंदिर में भगवान विराजमान नहीं होने देंगे। सन् 2004 में आकस्मिक इस विघ्न के उपस्थित हो जाने पर बने-बनाये मंदिर की फिनिशिंग का कार्य रुक गया और अनेक लोग कुण्डलपुर चातुर्मास के मध्य पूज्य माताजी से अत्यंत आग्रहपूर्वक कहने लगे कि माताजी! आप किसी तरह से सबका समाधान करके हमारी प्रतिष्ठा करवा दीजिए। हमारी सभी चौबीसों प्रतिमाएँ, सहस्रकूट आदि (मूलनायक महावीर स्वामी को छोड़कर) सब वर्षों पूर्व आ गये हैं, अब आप ही कोई उपाय कीजिए।

पूज्य माताजी ने उन लोगों का अपनत्व एवं अधिकारपूर्ण निवेदन देखकर टिकैतनगर जैन समाज के नाम से वहाँ यह पत्र लिखवा दिया कि फरवरी 2005 में (8 से 14 फरवरी, माघ कृ. चतुर्दशी से माघ शु. षष्ठी तक) प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा होगी पुनः वे भगवान स्वयं विराजमान होने के लिए अपने स्थान का निर्णय कर लेंगे, आप लोग उसकी चिंता छोड़ दें। इसके बाद माताजी ने बनारस से टिकैतनगर के लिए यह सोचकर विहार कर दिया कि जब प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हो जाएंगी, तो उन्हें जहाँ विराजमान होना होगा, अपने आप स्थान निश्चित हो जाएगा।

हम लोग रास्ते में ही थे, टिकैतनगर के श्रावक-श्राविका साथ में चल रहे थे, तभी एक सज्जन के मोबाइल पर फोन आया कि टिकैतनगर के नये मंदिर की चौबीसों वेदियाँ तेजी से तोड़ी जा रही हैं। यह समाचार जानकर माताजी को एकदम से बड़ा सदमा सा लगा किन्तु वे तुरंत कहने लगीं कि "देखो! कर्म की विचित्रता! किसी ने वेदियाँ बनाकर पुण्य का अर्जन किया और कोई अब उन्हें तुड़वाकर तीव्र पाप का बंध कर रहे हैं। वैसे वह मंदिर वास्तुशास्त्रियों के निर्देशानुसार बिल्कुल सही बना है उससे किसी की भी हानि नहीं हो सकती है। शायद वहाँ के लोग किसी के द्वारा गुमराह किये गये हैं, इसीलिए उन्हें वहम हो रहा है। खैर! ज्ञात हुआ कि दो-तीन दिन में सब वेदियाँ टूट गई हैं और कुछ लोग यह कह रहे हैं कि देखते हैं अब इस मंदिर में भगवान कैसे विराजमान कर लेंगे.....इत्यादि।

समाज के वरिष्ठ कार्यकर्ताओं की भावना एवं आग्रहानुसार भाई रवीन्द्र जी जनवरी 2005 को वहाँ पहुँच गए और अपनी कार्यकुशलता एवं संगठन क्षमता के आधार पर उन्होंने सम्पूर्ण समाज के बच्चे-बच्चे को अपने साथ यह कहकर जोड़ लिया कि समाज जहाँ चाहेगा, भगवान वहीं विराजमान किए जायेंगे, माताजी तो केवल मूर्तियों की प्रतिष्ठा करवाने आ रही हैं। वे मूर्तियाँ तब तक अपने पुराने मंदिर के हॉल में विराजमान हो जाएंगी, पुनः आगे मिल-बैठकर सब समाज के लोग मंदिर का निर्णय कर लेंगे। टिकैतनगर के लोग एकमत से राजी होकर मार्ग में पूज्य माताजी के दर्शनार्थ आये, तब एक सज्जन के मुँह से निकला कि "माताजी! जैसे विशल्या ज्यों-ज्यों लक्ष्मण के पास-पास पहुँचने लगी थी, त्यों-त्यों लक्ष्मण के शरीर में प्रविष्ट अमोघ शक्ति का असर घटने लगा था और बिल्कुल पास में जाकर लक्ष्मण का स्पर्श करते ही तो वह दैवी शक्ति एकदम निकलकर भाग गई और लक्ष्मण पूर्ण स्वस्थ होकर उठ बैठे थे। उसी प्रकार आपके टिकैतनगर के पास आते ही धीरे-धीरे सारे विघ्न समाप्त होकर समाज में एकता का रूपक बन रहा है और लगता है कि वहाँ आपके साक्षात् पहुँचते ही सम्पूर्ण समस्याएं अपने आप सुलझ जाएंगी। बस आपके पहुँचने भर की देर है, हम लोगों को विश्वास है कि हमारे टिकैतनगर में कुछ न कुछ चमत्कार अवश्य प्रगट होगा। दूसरे ने कहा कि–आखिर तो टिकैतनगर आपकी भी तो जन्मभूमि है, वह धरती अपनी कुलदेवी स्वरूपा आपके बिना कुछ निर्णय भी कैसे कर सकती है?

कुल मिलाकर उधर रवीन्द्र जी के नेतृत्व में पंचकल्याणक का कार्यालय

चलने लगा। सभी युवक, वृद्ध, महिलाएं, बालक-बालिकाएं आदि खूब उत्साहपूर्वक कार्य में लग गये। पोस्टर, निमंत्रण कार्ड आदि छपकर पूरे प्रांत में ही नहीं, देशभर में पहुँच गये और इधर जब माताजी संघ सहित 4 फरवरी 2005 को टिकैतनगर पहुँचीं, तो वहाँ ग्राम पंचायत एवं जैन समाज के द्वारा बड़ा भारी स्वागत हुआ। संघ के ठहरने की व्यवस्था यद्यपि कैलाशचंद सर्राफ के खाली मकान में की गई थी किन्तु माताजी ने वहाँ संघस्थ सभी को ठहराकर स्वयं उस दिन नये मंदिर के एक मात्र अपूर्ण कमरे में ठहर गईं। मैं तो उनके साथ थी ही, सर्दी और शौच आदि की अव्यवस्था तो थी किन्तु माताजी ने वहीं रहकर अगले दिन 5 फरवरी को सबेरे से अभिषेक, शांतिधारा, पूजा-पाठ आदि कराना शुरू कर दिया। हम लोग उस दिन कैलाश जी के मकान में थे।

अपने नियत मुहूर्त के अनुसार 6 फरवरी, माघ कृ. 12 को झण्डरोहण-अंकुरारोपण हो गया। 7 फरवरी को जयपुर से मूलनायक भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा भी आ गईं। पुनः नये मंदिर के हॉल में अगले दिन 8 फरवरी को प्रतिष्ठाचार्य नरेश शास्त्री ने यागमण्डल विधान कराया। नवग्रह होम, पूजन के साथ विधान का समापन करके कुछ लोग पाण्डाल में भेरीताड़न विधि कर रहे थे और कुछ समाज के लोग भगवान के माता-पिता, प्रतिष्ठा के इन्द्र-इन्द्राणियों के जुलूस में व्यस्त थे।

दिन के लगभग 4 बजे थे कि कुछ बच्चे दौड़े-दौड़े हमारे पास आए और कहने लगे कि नये मंदिर में मूर्तियाँ ले जाई जा रही हैं। माताजी! अब ये सब मूर्तियाँ नये मंदिर में विराजमान होकर ही पंचकल्याणक प्रतिष्ठा होगी। हम लोग ज्यादा कुछ मामला समझ नहीं पाए, फिर विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ कि चौक बाजार में कुछ लोगों की आपस में कहा-सुनी हो गई और तब कुछ लोगों में भी जोश आ गया कि देखते हैं कौन रोकता है मूर्तियों को विराजमान होने से! फिर तो आनन-फानन में लोग स्वयं मिलकर 1 घंटे के अंदर सारी मूर्तियाँ नये मंदिर में ले आए। हम लोग जब सायं 5 बजे अपनी वसतिका से मंदिर में पहुँचे, तो वहाँ की खुशियों का जलवा देखने लायक था। सभी आपस में एक-दूसरे के गले से लिपटे जा रहे थे, नाच रहे थे, उछल-उछल कर खूब जय-जयकार कर रहे थे। और तो और! वहाँ संघ के पहुँचते ही महावीर नामक एक युवक ने पूज्य माताजी को ही गोद में उठाकर (मस्तक पर धारण कर) जोर-जोर से उनकी जय बोलने लगे। सभी चमत्कार-चमत्कार कहकर फूले नहीं समा रहे थे, हर्ष के आंसुओं से सबके तन-मन भीगे पड़े थे। अरे! मुझे तो इस

समय लिखते हुए भी वे रोमांचक क्षण याद आ रहे हैं और सारा शरीर रोमांचित हो रहा है, क्योंकि टिकैतनगर में ऐसे अतिशयकारी क्षण इससे पहले कभी नहीं प्रस्तुत हुए थे। उस दिन वहाँ, होली, दीवाली, रक्षाबंधन आदि सारे उत्सवों के दृश्य मानों एक साथ उपस्थित हो गये थे। आबाल-वृद्ध सभी जहाँ इसे ज्ञानमती माताजी की तपस्या का चमत्कार कह-कहकर चिल्ला रहे थे, वहीं माताजी ने सबको अपने उद्बोधन में भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण प्रतिमा के चमत्काररूप में इन घड़ियों को प्रस्तुत किया। जो भी हो, सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति का चमत्कार अवर्णनीय तो है ही।

सबसे बड़ा चमत्कार तो यह देखने में आया कि 3-4 वर्ष के बच्चे भी पूरी रात सड़क से लेकर मंदिर तक ईंटें ला-लाकर देते रहे, मिस्त्री के साथ तमाम लोग सीमेंट, मसाला बनाकर खुद भी वेदियों की चिनाई करने लगे और रात भर सभी ने पुरुषार्थ करके चेन पुली से प्रातः ठीक 4.30 बजे सवा ग्यारह फुट उत्तुंग भगवान महावीर स्वामी की पीतवर्णी प्रतिमा मूलवेदी बनाकर उस पर विराजमान कर दी। इस प्रकार सबेरे तक सभी 25 प्रतिमाएँ यथास्थान वेदी बनाकर विराजमान हो गईं और महावीर स्वामी के एक ओर सहस्रकूट चैत्यालय जुड़ने लगा तथा दूसरी ओर वेदी में चौबीस तीर्थंकर से समन्वित ''ह्रीँ'' मंत्र की प्रतिमा (पूर्व में प्रतिष्ठित की हुई) विराजमान हो गईं। प्रातः से टिकैतनगर समाज की पूरी जनता मंदिर का यह चमत्कारिक दृश्य देखकर मानो निहाल हुई जा रही थी, क्योंकि सभी के घर से इसमें कुछ न कुछ अर्थांजलि समर्पित कीगई थी और 30 वर्षों के बाद नगर में हो रही इस पंचकल्याणक का इंतजार लोग वर्षों से कर रहे थे। वह समय अब साक्षात् आ जाने पर हर बच्चे, बूढ़े, युवक, महिला के अन्दर न जाने कहाँ से अपूर्व शक्ति प्रगट हो गई थी कि वे वेदी बनाना, ईंट ढोना, सामान लाना, प्रतिमा चढ़ाना, पांडाल बनाना, सफाई करना आदि सभी कार्यों को किसी मजदूर की सहायता न लेकर स्वयं ही कर लेना चाहते थे।

इस उत्साह से भरे वातावरण में 7 फरवरी से 14 फरवरी 2005 तक चमत्कारिक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा तो सम्पन्न हुई ही, पुनः शीघ्र ही मंदिर के ऊपर दक्षिण भारत की कला वाले शिखर का निर्माण भी हो गया और अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक महोत्सव सम्पन्न होने के पश्चात् हस्तिनापुर की ओर विहार करते समय पूज्य माताजी पुनः जन्मभूमि के भक्तों का आग्रह मानकर टिकैतनगर पधारीं और 13 अप्रैल को मंदिर के शिखर पर कलशारोहण एवं ध्वजस्थापन करवा दिया।

प्रसन्नता की बात यह है कि **उस मंदिर के पंचकल्याणक के बाद वहाँ सभी परिवार में खूब शांति है और सभी श्रद्धा-भक्ति के साथ जिनेन्द्र भक्ति में संलग्न हैं।** जिनेन्द्र भगवान की कृपा से टिकैतनगर के सभी जैन परिवार समृद्ध हैं एवं निरंतर धर्म और धन में वृद्धि करते हुए पूज्य माताजी एवं समस्त गुरुओं के प्रति समर्पित रहते हैं, यही उनके उज्ज्वल भविष्य का प्रतीक है। वहाँ जैन समाज के साथ-साथ ''भरतसेना'' नामक एक संगठन के युवा कार्यकर्ता अपने कार्यकलापों से टिकैतनगर का नाम गौरवान्वित कर रहे हैं। अपनी यात्रा के मध्य इस प्रसंग को लिखने तक मुझे ज्ञात हुआ कि उस नूतन ''चमत्कारिक भगवान महावीर जिनमंदिर'' में पूरा संगमरमर पत्थर लगकर कार्य सम्पन्न हो चुका है और भक्तों द्वारा वहाँ प्रतिदिन खूब पूजा-भक्ति का वातावरण बना रहता है।

➢रामायण के प्रमुख पात्र (राम) अरुणगोविल ने लिया माताजी का आशीर्वाद–

इस पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में प्रतिदिन रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम हुए, जिसमें 14 फरवरी को विशेष आकर्षक कार्यक्रम राजेन्द्र जैन-मुम्बई द्वारा सुन्दर भजन संध्या प्रस्तुत की गई, जिसके मध्य टी.वी. कलाकार रामायण सीरियल के प्रमुख पात्र भगवान राम बने श्री अरुण गोविल द्वारा रामायण के कतिपय संवाद एवं भजन प्रस्तुत किए गए, सभी ने करतल ध्वनि के साथ इस संध्या का भरपूर आनन्द लिया। श्री अरुण गोविल जी ने पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त कर एवं उनकी जन्मभूमि के दर्शन कर अपने को धन्य माना।

➢मुख्यमंत्री ने ''भगवान पार्श्वनाथ वर्ष'' का दीप प्रज्वलित किया–

12 फरवरी 2005, माघ शु. चतुर्थी को मध्यान्हकालीन सभा में उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री मुलायम सिंह यादव एवं अनेक नेतागण पधारे, जिसमें माननीय मुख्यमंत्री महोदय ने पूज्य माताजी द्वारा ''भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव'' को पूरे देश में एक वर्ष तक मनाने हेतु घोषित किये गये **''पार्श्वनाथ वर्ष''** का उद्घाटन पार्श्वनाथ प्रतिमा के समक्ष दीप प्रज्वलित करके किया।

➢राजधानी लखनऊ में विश्वशांति महावीर विधान का विशाल आयोजन–

टिकैतनगर में भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के आयोजन के पश्चात् माताजी भिटरिया, बाराबंकी आदि स्थानों पर होते हुए उत्तरप्रदेश की राजधानी नवाबों की नगरी लखनऊ में पधारीं, जहाँ उनके ससंघ सानिध्य में चौक (लखनऊ) स्थित श्री 1008 भगवान नेमिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में 24 फरवरी से 3 मार्च 2005, माघ शु. पूर्णिमा से फाल्गुन कृ. सप्तमी तक

भारी धर्मप्रभावनापूर्वक श्री कैलाशचंद जैन सर्राफ-लखनऊ सपरिवार द्वारा विश्वशांति महावीर विधान सम्पन्न हुआ। विधान के मध्य 27 फरवरी को ''अयोध्या महाकुंभ मस्तकाभिषेक अधिवेशन'' ब्र. रवीन्द्र जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ, पुनः 1 मार्च को माताजी संघसहित ऐशबाग स्थित श्री दिगम्बर जैन धर्मसंरक्षिणी महासभा के केन्द्रीय कार्यालय में पधारीं, जहाँ महासभा के अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार जी सेठी ने पूज्य माताजी का भावभीना स्वागत किया, तत्पश्चात् श्री 1008 चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर-चारबाग में भारी भीड़ ने पूज्य माताजी के मंगल प्रवचनों का लाभ प्राप्त किया। 2 मार्च को संघ ने श्री 1008 भगवान आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर-अहियागंज का दर्शन किया तथा यहाँ भी विशाल धर्मसभा आयोजित की गई।

3 मार्च को चौक मंदिर में पूर्णाहुति हवन के पश्चात् विशाल रथयात्रा निकाली गई, जिसमें श्री विजेन्द्र सिंह (आई.जी लखनऊ) एवं वरिष्ठ पत्रकार श्री के.सी. जैन-मुख्य अतिथि के रूप में पधारे। 4 मार्च को माताजी श्री 1008 भगवान पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर सहादतगंज-लखनऊ में दर्शनार्थ पधारीं जहाँ श्रद्धालु भक्तों ने उनके सानिध्य में **''भगवान ऋषभदेव विधान''** सम्पन्न करके जिनभक्ति का विशेष लाभ प्राप्त किया। सायंकाल डालीगंज स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में विशाल जुलूस के साथ संघ का मंगल प्रवेश हुआ। सम्पूर्ण जुलूस में भक्तों द्वारा की गई भारी पुष्पवृष्टि के माध्यम से लोगों का उत्साह देखते ही बनता था। 15 मार्च को श्री प्रद्युम्न कुमार जैन ''छोटी सा.''-टिकैतनगर, उनके पुत्र अमरचंद जैन एवं समस्त परिवार द्वारा डालीगंज मंदिर में चांदी के 108 कमल चढ़ाकर **''भगवान पार्श्वनाथ विधान''** सम्पन्न किया गया। 6 मार्च से 10 मार्च तक इन्दिरानगर दिगम्बर जैन मंदिर में संघ सानिध्य में विश्वशांति महावीर विधान अत्यन्त प्रसन्नता एवं उत्साह के माहौल में हुआ। पं. नरेश कुमार जैन शास्त्री ने सभी विधि-विधान सम्पन्न कराए। 10 मार्च को सायंकाल गोमतीनगर दिगम्बर जैन मंदिर में संघ का मंगल प्रवेश हुआ, जहाँ भारी भीड़ ने पूज्य माताजी के दर्शन एवं प्रवचनों का लाभ प्राप्त करते हुए स्वयं को धन्य माना। पुनः 11 मार्च को पूज्य माताजी का प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या हेतु मंगल विहार हो गया।

➢अयोध्या में हुआ पूज्य माताजी का अभूतपूर्व स्वागत–

11 वर्ष बाद अयोध्या पधारने पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ससंघ का अयोध्यावासियों एवं वहाँ के संत-महंतों द्वारा हार्दिक स्वागत एवं

सम्मान किया गया।

17 मार्च 2005, फाल्गुन शु. सप्तमी को अयोध्या प्रवेश के समय अयोध्या की सीमा में पहुँचते ही गुरुकुल महाविद्यालय, रानोपाली-अयोध्या में प्राचार्य श्री योगेन्द्र नाथ त्रिपाठी एवं सैकड़ों बटुक (ब्रह्मचारी बालक) वेदपाठी विद्यार्थियों ने वैदिक मंत्रोच्चार के बीच पूज्य माताजी पर पुष्पवृष्टि करते हुए स्वागत किया।

तत्पश्चात् नगरपालिका अध्यक्ष-सरदार महेन्द्र सिंह एवं अयोध्या व्यापार मंडल के अध्यक्ष श्री सुफलचंद मौर्य ने लगभग 100 व्यापारियों के साथ टेढ़ी बाजार में संघ का स्वागत किया। पुनः बिड़ला मंदिर-अयोध्या के समक्ष हनुमानगढ़ी (अयोध्या) के सरपंच श्री अवधेश दास जी महाराज ने पुष्पवृष्टि करके पूज्य माताजी का सम्मान किया।

दंतधावन कुण्ड पर समाजवादी संत सभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष-महंत श्री भवनाथदास जी महाराज ने दर्जनों साधुओं के साथ पुष्पवृष्टि करके स्वागत की श्रृंखला को आगे बढ़ाया।

तत्पश्चात् रायगंज स्थित श्री दिगम्बर जैन मंदिर (बड़ी मूर्ति) पहुँचने पर संघ का समिति के पदाधिकारियों द्वारा भावभीना स्वागत किया गया। पुष्पवृष्टि, चरण प्रक्षालन, मंगल आरती के साथ भगवान ऋषभदेव एवं पूज्य माताजी की जयकारों से सारा परिसर गुंजायमान हो गया। मंदिर में पहुँचकर भगवान ऋषभदेव की बड़ी मूर्ति के चरणाभिषेक के पश्चात् भगवान चन्द्रप्रभ का निर्वाणलाडू चढ़ाया गया एवं रत्नवृष्टि की गई। इस अवसर पर सैकड़ों श्रद्धालु उपस्थित थे।

22 मार्च, फाल्गुन शु. 12 को श्री रामजन्मभूमि निर्माण कार्यशाला (प्रभारी-श्री अन्नु भाई सोमपुरा), कारसेवकपुरम् (प्रभारी-श्री प्रकाश अवस्थी), मणीरामदास जी की छावनी (वाल्मीकि भवन)-वासुदेव घाट (श्री कृपालु रामदास जी महाराज 'पंजाबी बाबा'), श्री हनुमान बाग (श्री विदुर कुमार शास्त्री) इत्यादि स्थानों पर पूज्य माताजी का स्वागत किया गया।

24 मार्च को महर्षि वेदविज्ञान विद्यापीठ (अयोध्या) में विद्यार्थियों हेतु मंगल प्रवचन करने पधारीं। पूज्य ज्ञानमती माताजी एवं संघस्थ साधुओं का वहाँ के आचार्यवर्ग एवं वेदपाठी विद्यार्थियों द्वारा वैदिक मंत्रोच्चारपूर्वक पुष्पवृष्टि करते हुए भावभीना सम्मान किया गया।

25 मार्च को तुलसी स्मारक भवन (अयोध्या) के प्रमुख अधिकारी, दिगम्बर अखाड़ा-अयोध्या (पूर्व महंत-स्व. श्री परमहंस रामचन्द्र दास जी महाराज)

के वर्तमान महंत श्री सुरेशदास जी महाराज, जगद्गुरु रामानंदाचार्य, स्वामी श्री हर्याचार्य जी महाराज एवं पीठाधीश्वर महंत श्री कौशलकिशोर दास जी महाराज (बड़ा भक्तमाल) ने अपने-अपने यहाँ पूज्य माताजी (ससंघ) का स्वागत किया। सभी ने पूज्य माताजी को अपना साहित्य भी प्रदान किया।

27 मार्च को सुग्रीव किला में जगत्गुरु रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरुषोत्तमाचार्य जी महाराज के नेतृत्व में वहाँ के विद्यार्थियों ने वैदिक ऋचाएँ पढ़ते हुए पुष्पवृष्टि करके संघ का भावभीना स्वागत किया।

28 मार्च को प्रातःकाल रामजन्मभूमि के परिदर्शन के पश्चात् सी.आर.पी.एफ. (महिला विंग)-कटरा, काकभुशुण्ड मंदिर, रत्नसिंहासन (महंत अरुणदास एवं देवकीनंदन दास), कनकभवन, बड़ा स्थान (दशरथ राजगद्दी) इत्यादि स्थानों पर संघ का सम्मान किया गया।

इसी दिन सायंकाल हनुमानगढ़ी में गद्दीनशीन श्री रमेशदास जी महाराज एवं अखाड़ा परिषद के अध्यक्ष महंत श्री ज्ञानदास जी महाराज की उपस्थिति में पूज्य माताजी का स्वागत किया गया। इस अवसर पर श्री ज्ञानदास जी महाराज ने कहा कि विश्व के लिए भगवान ऋषभदेव का जितना बड़ा योगदान है, उतना किसी अन्य का नहीं है।

31 मार्च को सायंकाल अयोध्या नरेश श्री विमलेन्द्र मोहन प्रताप मिश्र (पप्पू भैय्या) ने अपने विशाल राजमहल में अपने परिवार के साथ पूज्य माताजी एवं संघ का भावभीना स्वागत किया। चरण प्रक्षालन एवं आरती के पश्चात् संघस्थ साधुओं के प्रवचनों का लाभ सभी को प्राप्त हुआ।

➢अयोध्या के महामस्तकाभिषेक ने 11 वर्ष पूर्व की याद दिला दी–

सन् 1993 में जब पूज्य माताजी का अयोध्या में 50 वर्षों में प्रथम चातुर्मास हुआ था, उस समय फरवरी 1994 में हुए अद्वितीय उत्तरभारत के प्रथम महामस्तकाभिषेक ने पूरे देशवासियों को भक्ति के रंग में रंग दिया था, उस समय पूज्य माताजी ने वहाँ के पदाधिकारियों को प्रति पाँच वर्षों में महामस्तकाभिषेक करने की प्रेरणा प्रदान की थी परन्तु पता नहीं क्या योग रहा कि एक नहीं कई-कई बार मस्तकाभिषेक के आयोजन की चर्चा होने के बाद वह मूर्त रूप में परिणत नहीं हो सका, शायद उन आदिप्रभू को अपनी ब्राह्मी सदृश पुत्री का ही इंतजार था, तभी तो पूज्य माताजी पुनः अयोध्या में महामस्तकाभिषेक कराने के लक्ष्य से ही अवध प्रांत में पधारीं और देखते ही देखते एक बार फिर पूरे अवध क्या पूरे देश में एक शंखनाद हो उठा– चलो

अयोध्या! प्रभु ऋषभदेव का महामस्तकाभिषेक करने और पुनः देश का श्रद्धालु वर्ग रंग गया भक्ति के रंग में, खेलने लगा केशरिया होली, उड़ चली सर्वत्र प्रभु नाम व जन्मभूमि की सुगंधि। सचमुच अयोध्या के द्वितीय मस्तकाभिषेक ने 11 वर्ष पूर्व की याद दिला दी।

➢आस्था चैनल पर देखा करोड़ों भक्तों ने मस्तकाभिषेक–

इस द्वितीय महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव के त्रिदिवसीय आयोजन में जहाँ देश के विविध अंचलों से अयोध्या पधारे हजारों श्रद्धालुओं ने भक्तिभावपूर्वक भाग लेकर महान पुण्योपार्जन किया, वहीं चैत्र कृ. नवमी भगवान ऋषभदेव जयन्ती, 3 अप्रैल 2005 को हुए भगवान ऋषभदेव के महाकुंभ मस्तकाभिषेक का सम्पूर्ण देश एवं विदेशों में आस्था चैनल के माध्मय से सीधा प्रसारण देखकर भगवान की अभिषेक धाराओं में भीगा जनसमूह अत्यन्त प्रफुल्लित हो उठा। मस्तकाभिषेक के मध्य फोन पर देश-विदेश से प्राप्त हजारों संदेशों के माध्यम से लोगों की अपार खुशी एवं पूज्य माताजी के चरणों में ज्ञापित विनम्र कृतज्ञता का माहौल ही कुछ अलग था। देश के सुदूरवर्ती प्रान्तों के अतिरिक्त अमेरिका, कनाडा, नेपाल, सिंगापुर, केन्या, मॉरिशस इत्यादि अनेक स्थानों से भी बधाई के संदेश प्राप्त होते रहे।

1 से 3 अप्रैल 2005 तक आयोजित इस त्रिदिवसीय **'भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव'** का शुभारंभ 1 अप्रैल को श्री धन्नालाल मोहनलाल अजित कुमार जैन अजमेरा (धूलियान-पं. बंगाल) के द्वारा झण्डारोहणपूर्वक हुआ पुनः मंदिर परिसर में निर्मित विशाल पाण्डाल में समय-समय पर भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि सम्मेलनों की श्रृंखला में तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ का राष्ट्रीय अधिवेशन, अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन का राष्ट्रीय अधिवेशन, अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद का राष्ट्रीय अधिवेशन, भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी की आमसभा, दक्षिण भारत जैन सभा का राष्ट्रीय सम्मेलन आदि प्रमुख रहे। जिसमें मुख्य रूप से पधारे विविध विद्वानों एवं अनेक गणमान्य विशिष्ट महानुभावों (तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष आदि) ने अपने वक्तव्यों के माध्यम से मुख्यरूप से तीर्थंकर भगवन्तों के गर्भ, जन्म, तप, केवलज्ञान एवं निर्वाण से पावन तीर्थभूमियों– गिरनार, सम्मेदशिखर, कुण्डलपुर आदि की सुरक्षा की भावना व्यक्त करते हुए प्राणप्रण से उसके प्रति समर्पित होने की बात की गई। इस महोत्सव के मध्य ही आचार्य श्री कुन्दकुन्ददेव द्वारा रचित नियमसार ग्रंथ पर पूज्य ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित स्याद्वाद

चन्द्रिका टीका ग्रंथ पर पं. शिवचरनलाल जैन-मैनपुरी द्वारा लिखित शोध ग्रंथ "नियमसार स्याद्वादचन्द्रिका एक अनुशीलन" का विमोचन भी हुआ। इस महामहोत्सव के मध्य विराजित सैकड़ों विद्वानों, अनेक गणमान्य महानुभावों, विभिन्न तीर्थक्षेत्रों के पदाधिकारियों के अतिरिक्त समय-समय पर पधारे अतिथिगणों में श्री शीतल सिंह (संपादक-जनमोर्चा अखबार) फैजाबाद, माननीय श्री राजेन्द्र प्रताप सिंह (जिलाध्यक्ष-कांग्रेस प्रदेश) महासचिव श्री वीरु सिंह तिवारी, केन्द्रीय गृहराज्यमंत्री श्री श्रीप्रकाश जायसवाल, उत्तरप्रदेश समाजकल्याण मंत्री श्री अवधेश प्रसाद जी, श्री नेमिचंद जैन (पूर्व विधायक-म.प्र.), पूर्व सांसद श्री कल्लप्पा अवाड़े (अध्यक्ष-दक्षिण भारत जैन सभा), पूर्व विधायक श्री कपूरचंद घुवारा (द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्र अध्यक्ष), श्री मुन्ना सिंह चौहान (सिंचाई मंत्री-उ.प्र.),श्री अशोक सिंघल (अंतर्राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष-विश्व हिन्दू परिषद), श्री नरेश कुमार सेठी (अध्यक्ष-भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी) ने कार्यक्रम की गरिमा में चार चांद लगाए तथा पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त कर नूतन दिशा की प्राप्ति की।

➢जैन रामायण का विमोचन हुआ–

श्रीमती त्रिशला जैन (ज्ञानमती माताजी की सबसे छोटी बहन) ध.प. श्री चन्द्रप्रकाश जैन-लखनऊ द्वारा सरस काव्यों में लिखित "जैन रामायण" नामक सुन्दर पुस्तक का विमोचन अयोध्या में 12 फरवरी 2005 को केन्द्रीय गृह राज्यमंत्र माननीय श्री श्रीप्रकाश जायसवाल के करकमलों से एवं समाज कल्याण मंत्री-उत्तरप्रदेश सरकार माननीय श्री अवधेश प्रसाद के सहयोग से सानंद सम्पन्न हुआ।

ज्ञातव्य है कि त्रिशला ने 9-10 वर्ष की छोटी सी उम्र में पूज्य माताजी के पास अष्टसहस्री, राजवार्तिक आदि विषयों का अध्ययन करके शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की एवं अपनी तीक्ष्ण बुद्धि के कारण गृहस्थावस्था में रहकर भी अनेक साहित्यिक लेखन किया करती हैं। उसी लेखन श्रृँखला में "जैन रामायण" एक लोकप्रिय काव्यकथा सभी के लिए पठनीय पुस्तक है।

➢विभिन्न ज्ञान के केन्द्रों में हुई ज्ञानामृत वर्षा–

पूज्य माताजी के इस अयोध्या प्रवास के मध्य जहाँ समय-समय पर भक्ति के विविध आयोजन सम्पन्न हुए, टोंकों की अनेक वंदनाएं हुईं, पूज्य माताजी का 53वाँ क्षुल्लिका दीक्षा दिवस मनाया गया, वहीं कामताप्रसाद सुन्दरलाल साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महाराजा पब्लिक स्कूल, महर्षि वेद विद्यापीठ एवं डॉ. राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय-फैजाबाद में हुए पूज्य माताजी के मंगल प्रवचनों से अयोध्या के प्रबुद्ध वर्ग को अपूर्व लाभ

मिला। संघस्थ ब्र.रवीन्द्र जी द्वारा विश्वविद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकालय एवं "ऋषभदेव जैन पीठ" हेतु पूज्य माताजी द्वारा लिखित साहित्य प्रदान किया गया।

इसके साथ ही अयोध्या नरेश श्री विमलेन्द्र मोहन प्रताप मिश्र एवं परिवार द्वारा स्थापित महाराजा पब्लिक स्कूल में माताजी की पावन प्रेरणा से ऋषभदेव पुस्तकालय का उद्घाटन माताजी के ही संघ सानिध्य में हुआ। पूज्य माताजी से मिलकर राजा साहब अत्यधिक प्रसन्न हुए और कई दिशा-निर्देश प्राप्त किए। पुस्तकालय के उद्घाटन अवसर पर माताजी ने उन्हें **"अयोध्या गौरव"** की उपाधि से विभूषित किया ।

➢"भारत भूषण" की उपाधि से अलंकृत–

बीसवीं सदी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी माता ज्ञानमती जी को टिकैतनगर की जिस भूमि ने अपने गर्भ से प्रसूत किया है, विशल्या सदृश उन माता के प्रति बच्चे-बच्चे के लिए यह महानतम गौरव की बात है। वह निधि आज उन टिकैतनगर वासियों के मान को उच्चतम सीमा तक वृद्धिंगत करते हुए राष्ट्र क्या पूरे विश्वकी गौरव हैं, इस खुशी में टिकैतनगर का चप्पा-चप्पा फूला नहीं समाया और नागरिक अभिनंदन के अवसर पर उन्हें **"भारतभूषण"** की उपाधि से अलंकृत कर स्वयं को गौरवान्वित अनुभूत किया। वास्तव में ऐसी महान निधि की जन्मदात्री टिकैतनगर की धरती सदैव-सदैव के लिए कृतकृत्य हो गई है।

➢एक मुस्लिम भाई ने बताया–

माताजी के टिकैतनगर से विहार के पश्चात् वहाँ के युवा कार्यकर्ता आकर संघ के साथ पैदल चलते थे। इसी मध्य एक दिन एक बच्चे ने बताया कि माताजी! 8 दिन पूर्व मेरी दुकान पर एक मुसलमान ग्राहक आया और पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का पोस्टर देखकर कहने लगा कि भैय्या! मैंने इन ज्ञानमती माताजी का बड़ा प्रभाव देखा है। मैं मुरादाबाद 1 लाख रुपये लेकर चांदी के बर्तन खरीदने गया था। एक जैन की दुकान पर मैंने सवा लाख रुपये के बर्तन खरीद लिए, फिर मैंने उनसे कहा कि 25 हजार रुपये मेरे पास नहीं हैं अतः तुम बर्तन वापस ले लो, तब उस जैन ने यह जानकर कि मैं टिकैतनगर से आया हूँ, बोले– अरे भैय्या! तुम सभी बर्तन ले जाओ, तुम ज्ञानमती माताजी के गाँव से आए हो, वहाँ का कोई व्यक्ति झूठ नहीं बोल सकता है। तब मुझे लगा कि इनकी ज्ञानमती माताजी के साथ-साथ उनके नगरवासियों के प्रति भी कितनी श्रद्धा और विश्वास है।

➢महमूदाबाद में मना 50वाँ आर्यिका दीक्षा दिवस-

अवध प्रांत का गौरवपूर्ण ऐतिहासिक नगर महमूदाबाद उस मकान की नींव अथवा वृक्ष के मूल की भांति है, जहाँ जन्मी मोहिनी कन्या ने टिकैतनगर के श्रेष्ठी

छोटेलाल जी की धर्मपत्नी बनकर संस्कारों का जो उपवन सजाया, उसमें सुरभित एक पुष्प से ही सारा संसार महक उठा। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की गृहस्थावस्था की माता मोहिनी देवी, जो बाद में आर्यिका रत्नमती माताजी बनीं, उनकी जन्मभूमि होने से यह माताजी की ननिहाल है और ननिहाल वालों का यूँ ही अपने नाती-नातिन, भानजे-भानजी के प्रति विशेष वात्सल्य रहता है फिर ऐसी जगन्माता की वह ननिहाल हो, जो विश्व में धर्म का डंका बजा रही हैं तथा जिनका गौरव अपनी चरम सीमा पर हो! उन बीसवीं शताब्दी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का 50वाँ आर्यिका दीक्षा समारोह मनाने का सौभाग्य महमूदाबाद नगरी को प्राप्त होना ही उनके लिए भारी गौरव की बात थी। पास के ही नगर तहसील फतेहपुर में महावीर जयंती महोत्सव करने के पश्चात् माताजी महमूदाबाद पधारीं और वैशाख कृष्णा द्वितीया, 26 अप्रैल 2005 को सर्वप्रथम प्रातःकाल भगवान पार्श्वनाथ गर्भकल्याणक के उपलक्ष्य में पार्श्वनाथ की रथयात्रा निकाली गई एवं मध्यान्ह 2 बजे से विशाल धर्मसभा आयोजित की गई, जिसमें उ.प्र. सरकार के परिवहन मंत्री श्री नरेश अग्रवाल मुख्य अतिथि एवं जिला पंचायत अध्यक्ष-श्री महेन्द्र सिंह वर्मा, विधायक श्री नरेन्द्र सिंह वर्मा विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे। समारोह में अनेक गणमान्य महानुभावों ने पूज्य माताजी के प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित की एवं पूज्य माताजी को पिच्छी-कमण्डलु, शास्त्र आदि समर्पित कर अपना अहोभाग्य माना।

➢अहिच्छत्र में भगवान पार्श्वनाथ मस्तकाभिषेक महोत्सव–

पूज्य माताजी एवं हम सभी लोग महमूदाबाद से सीतापुर, शाहजहांपुर, बरेली आदि स्थानों पर होते हुए 10 मई 2005, वैशाख शु. 2 को भगवान पार्श्वनाथ की केवलज्ञान एवं उपसर्ग विजय भूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर पहुँचे।

इसी अहिच्छत्र तीर्थ पर सन् 1993 में अयोध्या की ओर मंगल विहार करते समय जब माताजी का मंगल पदार्पण हुआ था, उस समय उन्होंने वहाँ के कार्यकर्ताओं को तीस चौबीसी मंदिर निर्माण की प्रेरणा प्रदान की थी और आज जब 15 वर्षों बाद अहिच्छत्र तीर्थ पर आना हुआ, तो सभी जिनमंदिरों के दर्शन के साथ-साथ नवनिर्मित 11 शिखर वाले तीस चौबीसी मंदिर के दर्शन कर मन आल्हादित हो उठा। चूंकि माताजी की प्रेरणा से सम्पूर्ण भारतवर्ष में **"भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव"** विविध आयोजनों के माध्यम से मनाया जा रहा था अतः वहाँ भी तिखाल वाले बाबा मूलनायक भगवान पार्श्वनाथ महामस्तकाभिषेक महोत्सव एवं भगवान पार्श्वनाथ

रथयात्रा का विशाल आयोजन 15 मई 2005 को हजारों श्रद्धालुओं की भारी भीड़ के मध्य हर्षोल्लासपूर्ण और भक्तिमय वातावरण में सम्पन्न हुआ। यहाँ तिखाल वाले बाबा की मूर्ति अति प्राचीन है। कहा जाता है कि भगवान पार्श्वनाथ के ऊपर उपसर्ग के पश्चात् देवों द्वारा विराजमान की गई यह प्रतिमा है। इसमें वेदी के नीचे एक बिल बना हुआ है तथा एक कटोरे में प्रतिदिन दूध रखा जाता है, वहाँ के मैनेजर आनंद जैन ने बताया कि इस बिल में एक सर्प रहता है, जो अक्सर आकर बिना किसी को नुकसान पहुँचाए वहाँ दूध पीकर चला जाता है।

तीस चौबीसी मंदिर में विराजमान भगवान पार्श्वनाथ की अवगाहना प्रमाण प्रतिमा के महामस्तकाभिषेक के समय माताजी ने सभी पदाधिकारियों को अहिच्छत्र में प्रतिवर्ष ऐसा ही विशाल मस्तकाभिषेक करने की प्रेरणा प्रदान की। सायंकाल मंदिर जी में विराजमान भगवान पार्श्वनाथ की प्राचीन प्रतिमा की 1008 दीपकों से महाआरती हुई।

अहिच्छत्र प्रवास के मध्य पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं सानिध्य में 10 मई से क्रमशः **''भगवान पार्श्वनाथ समवसरण विधान'' ,''अहिच्छत्र पार्श्वनाथ विधान'', ''जम्बूद्वीप विधान'', ''तीस चौबीसी विधान'', ''कलिकुण्ड पार्श्वनाथ विधान''** इत्यादि सम्पन्न किए गए तथा माता पद्मावती की 1008 मंत्रों से महाआराधना सम्पन्न की गई।

➢जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में हुआ मंगल पदार्पण–

अहिच्छत्र तीर्थ से मंगल विहार कर पूज्य माताजी का संघ सहित शाहबाद, धरमपुरकलाँ, जलालपुर, अमरोहा, मुरादाबाद, धनौरामण्डी आदि स्थानों पर होते हुए 25 मई 2005, ज्येष्ठ कृ. दूज को 5 वर्षों के बाद जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में मंगल पदार्पण हुआ।

➢एक बार फिर से आई अस्वस्थता की विषम परिस्थिति–

मार्ग में अत्यधिक गर्मी के कारण मुरादाबाद के बाद 20 मई 2005, वैशाख शु. 11 की रात्रि से पूज्य माताजी को ज्वर आना प्रारंभ हो गया था। 21 तारीख को हम लोग धनौरामण्डी पहुँचे, यहाँ इसीलिए तीन दिन रुके कि हो सकता है, माताजी का बुखार उतर जाये और उनको कुछ आराम मिल जाये लेकिन बुखार था कि उतरने की बजाय बढ़ता ही चला जा रहा था। मेरठ से हकीम सैफुद्दीन एवं वैद्य महावीर प्रसाद जैन को बुलाया गया। उन लोगों ने माताजी को देखकर यह निर्णय दिया कि अत्यधिक गर्मी होने के कारण शरीर में पानी की कमी हो गई है, उसी इन्फेक्शन से बुखार आ गया है, जब

तक इन्फेक्शन दूर नहीं होगा, तब तक बुखार नहीं जायेगा लेकिन दृढ़संकल्पी माताजी ने कोई भी दवा लेने से इंकार कर दिया। उस समय दिल्ली से लाला महावीर प्रसाद जी संघपति और कमलचंद जी खारीबावली वाले आए हुए थे और वहीं ठहरे हुए थे। माताजी सबके समझाने के बाद भी विहार करना चाहती थीं।

24 मई, ज्येष्ठ कृ. एकम् की रात 12 बजे तक तेज बुखार रहा किन्तु 25 मई को प्रातः 4.30 बजे माताजी ने कहा कि मुझे आज यहाँ से विहार करना है और संयोग से तब तक बुखार उतर भी गया और माताजी ने धनौरामण्डी से हस्तिनापुर की ओर मंगल विहार कर दिया। अगले दिन माताजी को पुनः बुखार चढ़ गया, ऐसी विषम परिस्थिति में पूज्य माताजी को विहार कराना किसी को भी इष्ट नहीं था, तुरंत ही भाई जी ने कई स्थानों पर पूज्य माताजी के बुखार की सूचना दे दी और लोगों के आने का क्रम प्रारंभ हो गया, लोगों ने बहुत ही आग्रह कर माताजी को रोकना चाहा, पर दृढ़ इच्छाशक्ति की धनी माताजी ने कहा कि मैं हस्तिनापुर की ओर विहार अवश्य करूँगी, संयोगवश माताजी ने जम्बूद्वीप के पदाधिकारियों द्वारा 25 मई के मंगल प्रवेश का पोस्टर भी देख लिया था अतः अत्यन्त अशक्तता होते हुए भी छोटे रास्ते दर्वड़पुर (गंगा पुल पार करके) से निश्चित तारीख में भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ एवं अरहनाथ की जन्मभूमि हस्तिनापुर में मंगल प्रवेश किया, यहाँ आने के बाद भी माताजी को बुखार आता रहा किन्तु इस पवित्र धरा पर पहुँचकर उन्होंने महान आत्मिक शांति का अनुभव किया, जब किसी भी प्रकार बुखार नहीं उतरा, तो एक बार पुनः जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में हकीम सैफुद्दीन एवं वैद्य आदि ने निर्णय दिया कि माताजी को टाइफाइड (मियादी) बुखार है, तब सबको गहन चिन्ता हो उठी और लोगों को जिस प्रकार से भी खबर मिली, दूर-दूर से लोग वैद्य, हकीमों को लेकर आने लगे, इसी बीच डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल-पैठण इंदौर से प्लेन द्वारा एक वैद्य जी को लेकर आ गए लेकिन माताजी ने पुनः दृढ़तापूर्वक किसी भी वैद्य, हकीम की दवाई लेने से मना कर दिया और पुराने हकीम सैफुद्दीन की सलाह के अनुसार चिरायता भिगोकर उसका पानी प्रतिदिन पूज्य माताजी को आहार में सबसे पहले दिया जाने लगा, इससे 2-4 दिनों में बुखार तो उतर गया परन्तु शारीरिक अस्वस्थता से अशक्तता अत्यधिक रही। आहार में मात्र पानी, दूध, लौकी की सब्जी का पानी, कासनी के बीज की ठण्डाई ही जरा-जरा सी जा पाती थी जबकि लोगों का यही कहना था कि माताजी के पेट में कुछ ठोस पदार्थ (मूंग की दाल, खिचड़ी आदि) जाना चाहिए

किन्तु दिगम्बर जैन साधुचर्या तो आत्मबल के आधार पर ही चलती है।

➢4 जून की चिंताजनक रात्रि–

4 जून 2005, ज्येष्ठ कृ. त्रयोदशी की शाम को प्रतिक्रमण तक पूज्य माताजी पूरी तरह से सावधानीपूर्वक बातचीत कर रही थीं पुनः प्रतिक्रमण के पश्चात् हम लोगों द्वारा वंदामि करने पर न माताजी कुछ बोलीं और न ही पिच्छी उठाई, केवल एक करवट से अचेत सदृश लेटी रहीं, जिससे रात्रि में सभी को बड़ी घबराहट रही, जिन-जिन को जिस-जिस प्रकार यह समाचार मिला, वे सभी भक्त जिस अवस्था में बैठे थे, उस अवस्था में हस्तिनापुर के लिए रवाना हो गए, जो साधन मिला उसमें चाहे जैसी परेशानियाँ आईं, सबको झेलते हुए आने वाले यात्रियों का तांता सा लग गया। उस समय माताजी के कमरे में ब्र. रवीन्द्र जी, संघपति महावीर प्रसाद जी, उनकी धर्मपत्नी कुसुमलता जी, अनिल जी, राकेश जी, मनोज, सुनील सर्राफ-मेरठ आदि भक्तिमान श्रावक रातभर माताजी को पाठ सुनाते रहे, इधर मैंने त्यागी भवन के बाहर एकत्रित जनसमुदाय को अनुशासित कर उसे सम्बोधित किया कि देखो! इनकी 53 वर्ष की तपस्या में आकुलता पैदा नहीं करना है, उसमें बाधक न बनकर सब लोग दूर से मौनपूर्वक दर्शन करो.....इत्यादि। साथ ही टिकैतनगर आदि स्थानों से आए हुए सभी पारिवारिकजनों को भी माताजी के कमरे में जाने से सख्तीपूर्वक इसलिए मना किया कि इनके मोहपूर्ण व्यवहार से माताजी को कोई व्यवधान न हो, जिसे सभी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

चूँकि कई रात्रि से मैं सोई नहीं थी और उस रात्रि तो नींद आने का प्रश्न ही नहीं था, अतः मैं भी माताजी के पास बैठी पाठ पढ़ रही थी, उस समय सभी ने विशेष आग्रह पर मुझे रात्रि 1.30 बजे थोड़ी देर विश्राम करने और स्वयं वहाँ उपस्थित रहने का आश्वासन दिया, उस समय मैं संघ के चैत्यालय वाले कमरे में आकर कुछ देर के लिए लेट गई, प्रातः 3.30 बजे की बात है, मुझे दो बार तेज-तेज आवाज सुनाई दी–चन्दनामती, चन्दनामती! उठो! न जाने कहाँ से यह आवाज आई थी। मैं तुरंत उठकर माताजी के पास गई, उन्हें गणधरवलय मंत्र, सुप्रभात स्तोत्र सुनाकर उठाना चाहा, तो भी वे पाषाणवत् रहीं, पुनः मैंने थोड़ा जोर से कहा माताजी! उठिये! प्रतिक्रमण सुनाऊँ, प्रतिक्रमण का समय हो गया है, आप 11 घण्टे से लघुशंका भी नहीं गई हैं, उठिये! तब उन्होंने थोड़ी आंख खोली और मेरे सहारे से उठीं, लघुशंका गईं। मैं जल्दी से चौकी पर बैठाकर उन्हें छोटे कमरे से हॉल में ले आई, तभी यह खबर फैलते

देर नहीं लगी और सबके चेहरे पर छाई खुशियों का वर्णन करना वास्तव में संभव नहीं है। इस दौरान भारत के कोने-कोने में श्रद्धालुभक्तों ने माताजी के स्वास्थ्य लाभ के लिए मंत्र, विधान-अनुष्ठान एवं मनौतियाँ तक मांग रखी थी, शायद उन सबकी सच्ची भावना और माताजी के आयुकर्म ने एक बार पुनः हमारी निधि हमें लौटा दी।

➢सचमुच में चमत्कारी हैं कल्पवृक्ष महावीर स्वामी–

4 जून की ही रात्रि में जब माताजी की तबियत ज्यादा गड़बड़ हुई, तो मैं कुछ भक्त श्रावकों के साथ कल्पवृक्ष भगवान महावीर के कमलमंदिर में गई और भगवान के दर्शन करते हुए स्वतः मेरे मुख से निकल पड़ा– हे महावीर स्वामी! पूज्य माताजी का कुछ बाल बांका नहीं होना चाहिए, माताजी बड़ी उत्कण्ठा से हस्तिनापुर तीर्थ के दर्शन करने आई हैं। कुण्डलपुर की यह ऐतिहासिक यात्रा हम सबके लिए वरदान बने। भगवन्! माताजी आपकी जन्मभूमि का खूब चमत्कार फैलाकर आई हैं, सो अब इनकी स्वस्थता का चमत्कार भी आपकी कृपाप्रसाद से होना ही चाहिए..... इत्यादि।

उस समय मेरी बाईं आँख फड़क उठी और मुझे लगा कि जब भक्तिपूर्वक निकले पौद्गलिक शब्द जाकर सिद्धशिला तक का स्पर्श करके आ कर मनोकामना सिद्ध कर देते हैं, तब मेरी भी यह भावना निश्चित सफल होगी और वास्तव में चमत्कार ही हो गया। ज्येष्ठ कृ. 14, 5 जून को माताजी ने त्यागी भवन से ही न सिर्फ भगवान शांतिनाथ के जन्मकल्याणक का सुमेरु पर अभिषेक देखा, उनके सानिध्य में शांतिनाथ का निर्वाणलाडू चढ़ाया गया, बल्कि आगन्तुक भक्तों को मुस्कुराकर आशीर्वाद भी दिया। उस समय माताजी ने बताया कि मैं रात में अन्तरंग से पूर्णरूपेण सचेत अवस्था में थी, मात्र अत्यधिक कमजोरी के कारण हिला-डुला भी नहीं जा रहा था, मैंने रात्रि में भक्तामर, अध्यात्मपीयूष आदि सारे पाठ जिस-जिसने सुनाए हैं, सब सुने हैं और चूँकि कमजोरी अधिक थी, इसलिए मन ही मन नियम सल्लेखना ले ली थी कि उठकर आहार करने लायक स्थिति रही तो ठीक है अन्यथा समाधि ले लूँगी। वे बहुत धीरे से मुझसे बोलीं कि देखो चंदनामती! आज भगवान शांतिनाथ के जन्मदिन मुझे भी नया जीवन मिला है और मेरी दो घाटी पार हुई हैं। पहली धनौरा मण्डी की (वहाँ भी चक्कर आने से स्थिति गंभीर हो गई थी) और दूसरी आज रात्रि की, अब मैं बिल्कुल ठीक हूँ, यह सब सुनकर सभी लोगों में हर्ष की लहर दौड़ गई।

उन्होंने बताया कि मैं तो उस समय चिंतन कर रही थी कि–

अहमिक्को खलु सुद्धो, दंसणणाणमइओ सदारूवी।
णवि अत्थि मज्झ किंचिवि, अण्णं परमाणुमित्तं पि।।

अर्थात् मैं अकेला हूँ, निश्चयनय से शुद्ध हूँ, दर्शन ज्ञानमयी हूँ और सदा अमूर्तिक हूँ, अन्य परमाणुमात्र भी मेरा नहीं है, इसी प्रकार पूज्यपाद स्वामी के श्लोक भी स्मृतिपथ पर आते रहे कि–

न मे मृत्युः कुतो भीतिः, न मे व्याधिः कुतो व्यथा।
नाहं बालो न वृद्धोऽहं, न युवैतानि पुद्गले।।

माताजी सदा यही कहती हैं कि **''परमानन्द संयुक्तं निर्विकारं निरामयं''** आदि पंक्तियाँ भी असाता को झेलने में शक्ति प्रदान करती हैं। उस समय अनेक लोगों के मुख से यह निकला कि माताजी इतने महान कार्यों को करवाकर आई हैं, इसलिए माताजी को भीषण नजर लग गई है। खैर! साधु को क्या नजर लगना! यह सब तो साता-असाता कर्मों का ही प्रतिफल होता है।

➢अवर्णनीय है माताजी की ऐतिहासिक यात्रा–

पुरातन कवियों के द्वारा वर्णित गुरुओं की महिमा आज भी प्रत्यक्ष देखी जाती है कि जंगल में भी गुरुजनों के विराजने से स्वर्ग जैसा वातावरण निर्मित हो जाता है और अनजान रास्ते में भी स्वयमेव चिरपरिचित पगडंडी बन जाती है।

इनके विषय में लोगों की आम धारणा बन चुकी है कि ज्ञानमती माताजी जिस कार्य में हाथ लगा देती हैं, वह अवश्यमेव परिपूर्ण हो जाता है तथा उनके छूने से मिट्टी भी सोना बन जाती है। यह सब उनकी दीर्घकालीन तपस्या, आगमनिष्ठा एवं दृढ़ संकल्पशक्ति का ही प्रतिफल है।

अगर पूज्य माताजी की ऐतिहासिक यात्राओं और उनके कार्यकलापों को विस्तार पूर्वक लिखा जाये, तो कई एक ग्रंथ बनकर तैयार हो जायें परन्तु ऐसी देवीस्वरूपा, प्राचीन साध्वी, महानतम गुणों की खान माताजी के बारे में कुछ शब्दों में लिखना एक बालक के द्वारा अथाह समुद्र का माप बताने जैसा बाल प्रयास ही समझना चाहिए। हाँ! इतना अवश्य कहूँगी कि पूज्य माताजी का हर कदम किसी न किसी नए लक्ष्य को लेकर आगे बढ़ता है, उनके ये कदम हमेशा-हमेशा इसी तरह आगे बढ़ते रहें, यही वीर प्रभू से मंगल कामना है।

➢हस्तिनापुर में 6 वर्षों बाद हुए चातुर्मास में महती धर्मप्रभावना–

आषाढ़ शु. चतुर्दशी, 20 जुलाई 2005 को 6 वर्षों के अनन्तर पूज्य माताजी को संघ सहित पाकर हस्तिनापुर की धरा मुखरित हो उठी और उस

तीर्थ पर हुए मंगल चातुर्मास के मध्य अनेकानेक कार्यक्रम आयोजित हुए जिसमें मोक्षसप्तमी पर्व, अनेकानेक लघु विधान, सिद्धचक्र आदि वृहत् विधान, श्री सम्मेदशिखर जी विकास समिति की साधारण बैठक, फूलबाग मेरठ के जैन मिलन का अधिवेशन, दशलक्षण पर्व में महाराष्ट्र भक्तमण्डल द्वारा त्रैलोक्य महामण्डल विधान, रेवाड़ी से पधारे शिविरार्थियों के लिए शिक्षण शिविर, पन्नालाल सेठी परिवार द्वारा इन्द्रध्वज विधान आदि आयोजनों से विशेष धर्मप्रभावना हुई और विशेष प्रभावनापूर्ण आयोजन जम्बूद्वीप महामहोत्सव-2005 हुआ।

➢सम्पूर्ण देश में चढ़ाया गया भगवान पार्श्वनाथ का निर्वाणलाडू–

23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के निर्वाणकल्याणक दिवस, श्रावण शुक्ला सप्तमी, 12 अगस्त 2005 को देशभर में भारी उत्साह के साथ निर्वाणलाडू चढ़ाया गया। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की मंगल प्रेरणा से 'भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव समिति' द्वारा देशभर में मोक्षसप्तमी पर्व पर सम्मेदशिखर जाकर निर्वाणलाडू चढ़ाने अथवा अपने स्थानीय मंदिर/धर्मशाला/पाण्डाल इत्यादि में सम्मेदशिखर की कृत्रिम रचना का निर्माण कराकर उसके समक्ष सामूहिक निर्वाणलाडू चढ़ाने संबंधी पोस्टर भेजा गया था।

यह अत्यंत हर्ष का विषय रहा कि पिछले वर्षों की अपेक्षा इस वर्ष लगभग दुगुने श्रद्धालुभक्तों ने सम्मेदशिखर पहुँचकर निर्वाणलाडू चढ़ाया। जानकार सूत्रों के अनुसार 12 अगस्त को लगभग 20000 (बीस हजार) पार्श्वभक्त सम्मेदशिखर में उपस्थित थे। राजधानी दिल्ली के अजमल खाँ पार्क (करोलबाग) में पूज्य आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज (णमोकार मंत्र वाले) के मंगल सानिध्य में भव्य सम्मेदशिखर रचना का निर्माण करके उसमें भगवान पार्श्वनाथ की 23 प्रतिमाएँ विराजमान की गईं और 23-23 किलो के 23 निर्वाणलाडू चढ़ाये गये। लाल मंदिर, बाहुबली एन्क्लेव, धर्मपुरा पंचायती मंदिर एवं दिल्ली भर की कॉलोनियों से जैनसमाजों एवं अ.भा.दि. जैन महिला संगठन की विभिन्न इकाइयों की ओर से निर्वाणलाडू चढ़ाये जाने के समाचार प्राप्त हुए।

भगवान पार्श्वनाथ जन्मभूमि-वाराणसी के प्रमुख भेलूपुर मंदिर में सम्मेदशिखर की अत्यंत भव्य रचना बनाकर भक्तिभाव से निर्वाणलाडू चढ़ाये गये। अन्य प्रांतों से भी भव्य आयोजनों के समाचार प्रप्त हुए।

यद्यपि भगवान पार्श्वनाथ के निर्वाणदिवस पर निर्वाणलाडू चढ़ाने की परम्परा पूर्व से भी रही है, तथापि इस वर्ष व्यापक प्रचार-प्रसार एवं प्रेरणा के आधार पर इस परम्परा में विशेष वृद्धि हार्दिक प्रसन्नता का कारण रही।

➢अनेक उपलब्धियों से समन्वित रहा जम्बूद्वीप महामहोत्सव-2005–

प्रति पाँच वर्षों में आयोजित होने वाले जम्बूद्वीप महामहोत्सव की भांति ही सन् 2005 में आयोजित होने वाला जम्बूद्वीप महामहोत्सव 13 से 17 अक्टूबर 2005, आसोज शु. 11 से पूर्णिमा तक राष्ट्रीय स्तर पर अनेक उपलब्धियों एवं आशातीत सफलता के साथ मनाया गया। लम्बे समय से प्रतीक्षारत इस महोत्सव में विविध आयोजनों के माध्यम से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से करोड़ों भक्तों ने आध्यात्मिक गंगा में स्नान कर अपने को सौभाग्यशाली माना तथा असीम आनन्द और पुण्य की प्राप्ति की।

इस महोत्सव में लगातार पाँच दिनों तक महत्वपूर्ण शोधात्मक आलेखों के वाचन के साथ **गणिनी ज्ञानमती संस्कृत एवं अध्यात्म साहित्य संगोष्ठी** का भव्य आयोजन हुआ, जिसमें जैन समाज के अनेक मूर्धन्य विद्वानों ने भाग लेकर पूज्य माताजी द्वारा रचित विभिन्न ग्रंथों पर अपने शोधात्मक आलेख प्रस्तुत किए। अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद, अ.भा. दि. जैन विद्वत् परिषद, तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ जैसी सर्वोच्च विद्वत् संस्थाओं का प्रतिनिधित्व प्राप्त होने से संगोष्ठी की उपादेयता कहीं अधिक वृद्धिंगत हो गई तथा विद्वानों द्वारा अनेक प्रश्नों के किए जाने पर आगमसम्मत अनेक महत्वपूर्ण जानकारियाँ व मार्गदर्शन पूज्य माताजी द्वारा सभी को प्राप्त हुआ।

आसोज शु. 14, 16 अक्टूबर (रविवार) को जम्बूद्वीप महामहोत्सव के मुख्य कार्यक्रम के रूप में यहाँ निर्मित 101 फुट ऊँचे सुमेरु पर्वत की पाण्डुक शिला पर भगवान शांतिनाथ के मस्तकाभिषेक का कार्यक्रम प्रातः 8 बजे से प्रारंभ हुआ तथा 17 अक्टूबर को शरदपूर्णिमा के पावन अवसर पर गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का 72वाँ जन्मजयंती समारोह भव्य स्तर पर मनाया गया और इन दोनों कार्यक्रमों को आस्था चैनल के माध्यम से दुनिया भर में करोड़ों लोगों ने देखा और उसकी सुरभि इतनी फैली कि आजतक उसकी खूब सराहना हो रही है। उस दिवस पर लोगों द्वारा मोबाइल, एस.एम.एस. के माध्यम से बधाईयाँ एवं शुभकामना संदेश देने वालों का तांता लग गया। दिनाँक 16 अक्टूबर को महामस्तकाभिषेक महोत्सव का सीधा प्रसारण जब दुनिया के करोड़ों लोगों ने देखा। सैकड़ों भक्तों ने फोन के माध्यम से अपने कलश बुक करवाए और भगवान के महामस्तकाभिषेक में अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिभागी बनकर अपार हर्ष का अनुभव किया।

वस्तुतः तीर्थदर्शन एवं गुरुदर्शन बड़े ही सौभाग्य से प्राप्त होते हैं अतः

आस्था चैनल के माध्यम से जब जन-जन ने जम्बूद्वीप जैसे महान तीर्थ एवं महान साध्वी पूज्य माताजी के दर्शन किए, तो वे एक बार इस धरती के स्वर्ग पर आने एवं माताजी की चरणवन्दना करने हेतु लालायित हो उठे, आज भी ऐसे कितने लोग आते हैं जो बताते हैं कि माताजी! हम आस्था चैनल पर आपका कार्यक्रम देखकर प्रथम बार साक्षात् आपके दर्शन करने आए हैं।

➢तेरहद्वीप रचना का शिलान्यास–

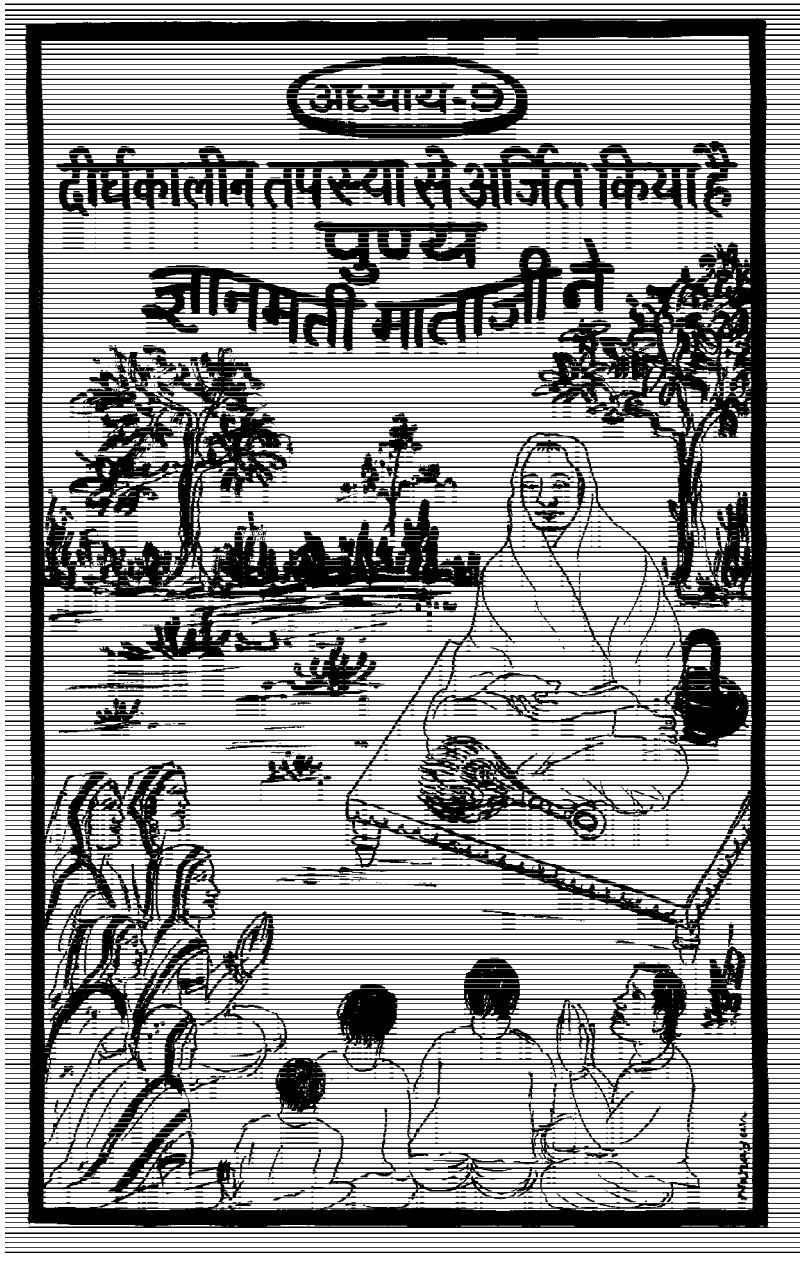
महोत्सव की अन्य उपलब्धियों में अगली कड़ी के रूप में रहा तेरहद्वीप मंदिर में मध्यलोक के तेरह द्वीपों की अकृत्रिम रचना का शिलान्यास। सन् 1965 में पूज्य माताजी के ध्यान में प्रकट हुई तेरहद्वीप की अकृत्रिम रचना अब शीघ्र ही जम्बूद्वीप स्थल पर निर्मित हो रही है। इस रचना का शिलान्यास शरदपूर्णिमा के ही दिन 17 अक्टूबर 2005 को श्री दीपक जैन-वाराणसी एवं डॉ. प्रमोद कुमार जैन-आगरा के द्वारा हुआ। यह रचना भी अपने आप में विश्व की अनोखी रचना होगी।

➢महोत्सव में हुईं आगामी कार्यक्रमों की घोषणाएँ–

गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी अपनी प्रकृति के अनुसार किसी एक महोत्सव, आयोजन या प्रोजेक्ट के समापन से पूर्व ही आगामी कार्य को सुनिश्चित करके समाज में घोषणा कर देती हैं, इसी बात को दरशाते हुए उन्होंने महोत्सव के समापन पर आगामी वर्ष 2006 को भगवान पार्श्वनाथ निर्वाणभूमि **''सम्मेदशिखर वर्ष''** के रूप में मनाने की प्रेरणा समाज को प्रदान की।

➢तीरथ विकास क्रम जारी है, अब काकन्दी की बारी है–

पुनः एक ऐतिहासिक कार्य पूज्य माताजी की प्रेरणा से हुआ। वह है, तीर्थ विकास के क्रम में नवमें तीर्थंकर भगवान पुष्पदंत की उपेक्षित एवं विस्मृत जन्मभूमि काकन्दी (गोरखपुर-उ.प्र. के निकट अवस्थित) का विकास कार्य। 27 नवम्बर को इस तीर्थ पर पूज्य माताजी के अनन्य भक्त श्री राजकुमार जैन 'वीरा बिल्डर्स'-दिल्ली द्वारा वहाँ एक नये मंदिर का शिलान्यास सम्पन्न हुआ, जो संभवतः वर्ष 2006 के अंदर ही विकसित होकर विश्वपटल पर छा जायेगा और जन-जन को भगवान पुष्पदंतनाथ की गौरव गाथा से परिचित करवाएगा।


अध्याय-१
दीर्घकालीन तपस्या से अर्जित किया है
पुण्य
ज्ञानमती माताजी ने

अध्याय-9

दीर्घकालीन तपस्या से अर्जित किया है पुण्य ज्ञानमती माताजी ने

जब किसी जिनप्रतिमा का दर्शन किया जाता है, तो उसकी प्राचीनता ज्ञात होने पर दर्शन करने वाले श्रद्धालु भक्त की भक्ति कुछ विशेष ही हो जाती है, यह सर्वमान्य तथ्य है। वास्तविकता यह है कि जिनप्रतिमा जितनी प्राचीन होती है, उसकी भक्तिभावपूर्वक दर्शन-वंदना करने से उतना ही अधिक फल प्राप्त होता है। वर्तमान काल में यही सत्य हमारे सामने साकाररूप ले रहा है पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के रूप में। 18 वर्ष की अल्प आयु में घर का त्याग कर युग की प्रथम बालब्रह्मचारिणी के रूप में त्यागमार्ग में कदम बढ़ाने वाली इस लौह-बाला ने त्यागमयी जीवन के जो 54 वर्ष पूर्ण किए हैं, उनसे एक विशेष प्रकार का अतिशय उनमें उत्पन्न हो गया है। पूज्य माताजी के अनेक कार्यकलापों को देखकर लोग अक्सर कहा करते हैं कि माताजी तो महान पुण्यशालिनी हैं और उस पुण्य के बल पर ही उनके द्वारा इतने बड़े-बड़े कार्य सम्पन्न हो रहे हैं, परन्तु वास्तव में पुण्य कहीं बाजार में नहीं मिलता है और न ही किसी दुकान से खरीदा जा सकता है। पूज्य माताजी ने भी यह अपार पुण्य किसी से उधार नहीं लिया है वरन् इन 54 वर्षों में एक-एक क्षण करके घट में बूँद-बूँद की भाँति उसे अर्जित किया है।

अखण्ड असिधारा व्रत की स्वर्णिम धारा (54 वर्ष), महाव्रतों को पालन करने की सूक्ष्म चर्या, मोक्षमार्ग के प्रणेता भगवान जिनेन्द्र के प्रति उनके कण-कण में व्याप्त अनुपमेय अपार भक्ति, प्रतिक्षण स्व एवं पर के कल्याण हेतु अटूट परिश्रम के महायज्ञ में समर्पण उनके इस महान पुण्यरूपी प्रासाद के सुदृढ़ स्तम्भ बने हैं।

किन्हीं नीतिकार का कथन पूर्ण सत्य है–

पुण्यस्य फलमिच्छंति, पुण्यं नेच्छन्ति मानवाः।
न पापफलमिच्छंति, पापं कुर्वन्ति यत्नतः।।

अर्थात् लोग पुण्य से प्रसूत सुखरूप फल की इच्छा करते हैं, परन्तु पुण्य करना नहीं चाहते हैं। वे पापरूप फल को नहीं चाहते हैं परन्तु पाप के संचय में

सदैव प्रयत्नशील रहते हैं।

देखा जाये तो संसार में यही स्थिति बनी हुई है, लोग समस्त सुख-सम्पत्ति-वैभव की आधारभूत पुण्य क्रियाओं से तो अछूते बने रहते हैं और अपने जीवन में सदैव ऊँचाईयों की अभिलाषा से त्रस्त रहा करते हैं। ऐसे लोगों के लिए पूज्य माताजी का जीवन विशेषरूप से प्रेरणास्पद है।

पूज्य माताजी जिस तीर्थ को छूती हैं, वह आकाश की ऊँचाईयों को छूने लगता है, जिस मिट्टी को छूती हैं, वह सोना बन जाती है, जिस जंगल में पहुँच जाती हैं, वहाँ स्वर्ग बन जाता है, जिस ग्राम की धरती पर चरण रखती हैं, वह मंदिर बन जाता है, जिस व्यक्ति पर उनकी दृष्टि पड़ जाती है, वह अपने जीवन में इंसान से भगवान बनने की ओर अग्रसर हो जाता है और जिस बिन्दु का वह स्पर्श करती हैं, वह सिंधु बनने के लिए चयनित हो जाता है।

यही कारण है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) में मात्र 22 माह में हुए विशाल निर्माणकार्य को देखकर लोगों के मुख से सहसा निकलता है कि बीसों वर्ष का कार्य मानो स्वयं देवों ने आकर इतने अल्प समय में साकार कर दिया है। वस्तुतः देवोपुनीत इस कार्य को देखकर लोग आश्चर्य से दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं। पूज्य माताजी के साथ जुड़ने वाले भक्तों का समर्पण भी इसीलिए रहता है क्योंकि वह मात्र मंदिर या तीर्थ नहीं बनाती हैं वरन् जैन शासन की प्राचीन संस्कृति एवं अतिप्राचीन इतिहास की सुरक्षा में आचार्य कुन्दकुन्द एवं अकलंक देव जैसे उदाहरण प्रस्तुत कर देती हैं। साररूप में यदि कहा जाये तो उनके द्वारा विशाल साहित्य सृजन, हस्तिनापुर-अयोध्या-मांगीतुंगी-अहिच्छत्र-प्रयाग-कुण्डलपुर जैसे अनेकानेक तीर्थों का जीर्णोद्धार एवं विकास, जैनधर्म की प्राचीनता को जन-जन तक पहुँचाने के लिए किए गए महान प्रभावनात्मक कार्य, जिनेन्द्र भगवान, जिनशासन एवं जिनवाणी के प्रति उनकी अटूट भक्ति एवं समर्पण के ही प्रतीक हैं। प्रारंभ से ही जिनशासन को अपना सर्वस्व मानने वाली पूज्य माताजी ने अपना हर कदम आगमानुकूल एवं अपने मोक्षमार्ग को प्रशस्त करने के लिए बढ़ाया है। प्रतिदिन उनके मुख से यही निकला करता है कि हे भगवन्! यदि मेरे द्वारा किंचित् भी आपके प्रति भक्ति एवं गुणानुरागरूप क्रियाएँ सम्पन्न हो रही हैं, तो उनके पीछे मेरा एकमात्र यही स्वार्थ निहित है कि आने वाले कुछ ही भवों में मैं इस प्रकार की उच्चतम साधना एवं ध्यानाग्नि का प्रश्रय ले सकूँ कि मेरे समस्त कर्म मलों की शृँखला चूर-चूर होकर मेरी शुद्ध चेतनस्वरूप आत्मा को मोक्ष की प्राप्ति हो सके।

तीर्थंकर भगवन्तों एवं आगम में वर्णित मोक्षपथ की वर्तमानकालीन साधना के प्रति उनकी अतिशय भक्ति का ही यह परिणाम है कि तीर्थंकर भगवन्तों के पंचकल्याणकों की भूमियों विशेषरूप से संस्कृति की उद्गमस्थली– जन्मभूमियों के संरक्षण एवं विकास के प्रति उनके हृदय में विशेष संकल्प बना हुआ है। पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि शाश्वत तीर्थ अयोध्या, तीन तीर्थंकरों की जन्मभूमि हस्तिनापुर, भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि राजगृही एवं भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में जो विकास पूज्य माताजी की प्रेरणा से सम्पन्न हुआ है, वह भला किसकी नजरों से छिपा है! उनकी कर्मठता एवं संकल्पशक्ति के विषय में समाज को पूर्ण विश्वास है कि जिस कार्य को माताजी हाथ में लेंगी, वह निश्चित रूप से बहुत ही सुन्दर एवं व्यवस्थित रूप में अल्प समय में ही पूर्ण हो जायेगा, इसीलिए पूज्य माताजी के आह्वान पर समाज भी हृदय से उस उद्देश्यात्मक कार्य के प्रति समर्पित हो जाता है। ठीक ही है कि जो वास्तव में कार्य करके दिखाते हैं, उनके प्रति श्रद्धा का भाव सहज ही उमड़ता है।

➢तपस्विनी की पिच्छिका से घाव ठीक हुआ–

जून सन् 1992 में सरधना से एक महिला हस्तिनापुर पधारीं, उन्होंने यहाँ आकर दर्शन करते ही गद्गद स्वर में कहना शुरू किया कि माताजी की पिच्छी में तो जादू भरा है, असाध्यरोग भी इनकी पिच्छिका स्पर्श से ठीक हो जाते हैं।

अनेक स्थानों से पधारे तीर्थयात्री एवं भक्तगण उत्सुकतावश जिज्ञासापूर्ण दृष्टि से उनकी ओर देखने लगे कि ये माताजी की पिच्छिका का कौन सा अतिशय बताने जा रही हैं। वे महिला आगे कहने लगीं–

''मेरे ससुर बाबूराम जी शुगर के मरीज हैं। उनके पैर में तीन वर्ष से एक बड़ा घाव था। न जाने कितनी दवाईयाँ करने पर भी यह घाव भर नहीं रहा था जिससे वे बड़े परेशान रहते थे। घर में ही चौबिस घंटे लेटे-लेटे दुखी थे। एक दिन उनका कुछ पुण्योदय हुआ। पूज्य माताजी आहारचर्या के बाद वापस आ रही थीं, तभी मालियान मोहल्ले में स्थित हमारे घर के सामने से निकलीं। पिताजी ने उन्हें नमोऽस्तु किया और हमने माताजी से उनकी तकलीफ बताई, तब पूज्य माताजी ने मंत्र पढ़कर उनके मस्तक पर पिच्छी लगाई तथा उनसे णमोकार मंत्र की माला फेरने को कहा।

आश्चर्य क्या, महान अतिशय ही नजर तब आया, जब 2-3 माह के

अंदर ही बिना किसी दवाई के घाव बिल्कुल सूख गया और अब पिता जी स्वस्थ हैं, प्रतिदिन माताजी को याद कर परोक्ष में ही उनकी भक्तिपूर्वक वंदना करते हैं।

➢गुरदे के रोगी ठीक हुये–

इसी प्रकार एक दिन मेरठ-सदर निवासी जीवन बीमा निगम के एजेंट श्री विजय कुमार जैन सपत्नीक हस्तिनापुर पधारे, साथ में उनकी सुपुत्री कु. प्रियांगना थी। वे बड़ी श्रद्धापूर्वक दर्शन करके माताजी से कहने लगे कि क्या आपने मुझे पहचाना नहीं? पूज्य माताजी द्वारा उन्हें पहचानने के लिए मस्तिष्क पर जोर डालने पर वे महानुभाव स्वयं अपना परिचय बताने लगे।

मैं सन् 1987 में अपनी बेटी को आपसे आशीर्वाद दिलवाने लाया था। 12 वर्ष से इसे गुर्दे की बीमारी थी। डाक्टर ने 15 अगस्त सन् 1975 को पूरा चेकअप करके घोषित किया कि इसे गुर्दे की बीमारी है, उसके बाद हमने किसी डाक्टर का कोई इलाज बाकी नहीं छोड़ा किन्तु सन् 1987 में इसके दोनों गुर्दे बिल्कुल खराब हो गए। मैं बहुत परेशान था तभी एक दिन अमरचन्द जी होमब्रेड वालों की प्रेरणा से मैं लड़की को लेकर उन्हीं के साथ आपके पास आया।

आपने छोटा सा मंत्र पढ़कर इसे प्रतिदिन पानी देने को कहा और अपनी पिच्छी से आशीर्वाद दिया, तब से मेरी लड़की बिल्कुल स्वस्थ है पुनः चेकअप कराने पर अब इसके कोई बीमारी नहीं निकली।

उन्होंने कहा– मेरी और मेरे परिवार की आपके प्रति अगाध श्रद्धा है, हम लोग तो प्रायः आपके दर्शनार्थ आते ही रहते हैं।

माताजी मुस्कराईं और उन लोगों को एवं कु. प्रियांगना को खूब-खूब आशीर्वाद दिया तथा अपनी पहचानने में स्मरण शक्ति कमजोर कहकर खेद व्यक्त किया। वैसे उन्हें शास्त्रीय बातें तो 50 वर्ष की भी याद हैं। जो कभी किसी ग्रंथ में पढ़ी थीं, दीर्घकाल के बाद भी ज्यों की त्यों बता देती हैं। पूज्य माताजी कभी-कभी मित भाषा में कहा करती हैं कि **''जिससे मेरा आत्महित होता है मैं उसी को याद रखती हूँ, शेष सब कुछ मुझे अनावश्यक प्रतीत होता है इसीलिए मेरा मस्तिष्क उन्हें याद नहीं रखता है।''**

➢आशीर्वादवश काल से बाल-बाल बचे–

6 जुलाई 1992 को मेरठ से प्रेमचंद जैन तेल वाले सपत्नीक हस्तिनापुर पधारे, उनके साथ उनके भतीजे सुभाष जैन भी सपत्नीक तथा और भी कुछ महिलाएँ थीं। ये लोग पूज्य माताजी के सानिध्य में शांतिविधान करने आये थे। थोड़ी देर बातचीत के दौरान बताने लगे कि माताजी! आपके आशीर्वाद से

सुभाष एवं उसकी बहू मृत्यु के मुँह से बच गए।

कैसे क्या हुआ? इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने बताया कि अभी पिछले सप्ताह ही दो बार की गंभीर चोटों के बाद कुछ स्वस्थ होकर यह आपके दर्शनार्थ आया था। आपने इसे गले में पहनने के लिए यंत्र दिया और अपने सामने ही चांदी की डिब्बी में वह यंत्र बनवाकर पहनवाया था पुनः ये लोग आपका आशीर्वाद लेकर मेरठ के लिए वापस चले, तो रास्ते में एक बस से इनकी गाड़ी में तेज टक्कर लगी। बस, पता नहीं यंत्र और पुण्य सामने आ गया और ये लोग बच गए जबकि उस गंभीर एक्सीडेंट में इन लोगों को अपने बचने की कोई उम्मीद नहीं थी। किसी तरह घर तक पहुँचकर ये हम लोगों से चिपककर खूब रोए और अपने गले का यंत्र दिखाकर बार-बार यही कहने लगे कि आज तो हमें माताजी के इसी आशीर्वाद ने बचाया है वर्ना हम घर तक वापस नहीं आ सकते थे। इस तेज टक्कर के बाद भी किसी को खरोंच तक न आई, मात्र गाड़ी कुछ खराब होकर रह गई।

पूज्य माताजी कहने लगीं – इसमें हमारा कुछ भी नहीं है, जिनधर्म और उसमें वर्णित मंत्रों में आज भी महान शक्ति है। जो हृदय से इसे धारण करता है, उसके अकाल मृत्यु जैसे महासंकट भी टल जाते हैं। तुम्हारा आयुकर्म शेष था अतः बच गए, अब धर्म में अडिग श्रद्धा रखना.....इत्यादि।

➢लकवा ठीक हुआ –

18 जनवरी 2006 को श्रद्धालुभक्तों की शृँखला में एक श्रावक श्री श्रेयांसकुमार जैन जम्बूतवी से माताजी के दर्शनार्थ पधारे और वे अपनी पहचान के लिए बताने लगे कि 10-11 वर्ष पूर्व मुझे भयंकर लकवा आ गया था। उस समय माताजी ने मुझे एक बड़ा मंत्र देकर कहा था कि इसकी जाप करके मंत्रित जल पिओ। उससे मेरा लकवा बिल्कुल ठीक हो गया। आज मैं एकदम स्वस्थ हूँ और कई बार माताजी के दर्शन भी कर चुका हूँ किन्तु इस बार कई वर्ष बाद दर्शन करके आज अपने को बड़ा सौभाग्यशाली मानता हूँ। पूज्य माताजी ने उन्हें आगे भी धर्मवृद्धि का खूब आशीर्वाद प्रदान किया।

इस प्रकार इनके जीवन की ऐसी सैकड़ों घटनाएँ हैं जो जैन दीक्षा की कठोर तपस्या एवं अखण्ड ब्रह्मचर्य का प्रभाव बतलाती हैं। कई महिलाओं ने तो पूज्य माताजी के शारीरिक स्पर्श मालिश करके अपने अनेक शारीरिक रोगों को नष्ट कर इन्हें अतिशयकारी **''विशल्या''** की संज्ञा प्रदान की है।

➢कुल परम्परा एवं गुरु परम्परा की सात पीढ़ियाँ देखी हैं इन्होंने –

यद्यपि साधु बनने के बाद गृहस्थ जीवन के सारे सम्बन्ध समाप्त हो जाते हैं, फिर भी जैसे भगवान महावीर के मोक्ष जाने के बाद भी उनके परिचय के साथ नाथवंश, काश्यपगोत्र, क्षत्रिय वर्ण, माता-पिता, दादी-बाबा आदि के नाम, जन्मभूमि-निर्वाणभूमि के नाम आदि का भी प्रसंगोपात्त वर्णन किया जाता है, उसी प्रकार साधु-साध्वियों के भी जाति और कुल का संबंध अवश्य ज्ञातव्य होता है।

पूज्य ज्ञानमती माताजी बताती हैं कि जब आचार्यश्री वीरसागर महाराज ने मुझे आर्यिका दीक्षा देने के पूर्व मुझसे पूछा कि तुम्हारा गोत्र क्या है? उस समय तक मुझे अपने गोत्र के बारे में कुछ पता नहीं था अतः गुरुदेव ने ब्रह्मचारी सूरजमल जी से टिकैतनगर पत्र लिखवाकर पुछवाया था। उसके बाद ही मुझे ज्ञात हुआ कि मेरा गोत्र गोयल है। देश-कुल-जाति की पूर्ण शुद्धि ज्ञात करके ही आचार्यश्री शांतिसागर महाराज की परम्परा में दीक्षा प्रदान की जाती है, यही कारण है कि आज भी सम्पूर्ण साधु संस्था के मध्य इस परम्परा के साधु-साध्वियों का अपना एक विशिष्ट गौरवपूर्ण स्थान है।

कुल परम्परा के बारे में पूछने पर एक दिन माताजी मुस्कराकर कहने लगीं कि देखो चन्दनामती! मैं तुम्हें इस कुल की सात पीढ़ियों के बारे में बताती हूँ – 1. नौबतराय जैन (पड़बाबा) 2. धन्य कुमार जैन (बाबा) 3. छोटेलाल जैन (पिता) 4. कैलाशचंद जैन (भाई) 5. जम्बू कुमार जैन (भतीजा) 6. अध्यात्म जैन (पौत्र) 7. सम्यक् जैन (प्रपौत्र)। वे बोलीं – इनमें से मैंने बाबा श्री धन्यकुमार जी की तो बचपन में सेवा भी की है और आज कैलाश के पौत्र अध्यात्म एवं प्रपौत्र सम्यक् के धार्मिक संस्कार देखकर भी मुझे खुशी होती है कि इस कुल परम्परा में सदैव साधु बनने की एवं सद्गृहस्थ के कर्तव्य निर्वाह की परम्परा चलती रहे, यही मानवजीवन का सार है।

इसी प्रकार अपनी गुरु परम्परा के प्रति भी उन्हें महान् गौरव है कि मैंने अपने जीवन में 3 बार चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर महाराज-दक्षिण (बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य) के दर्शन किए हैं, उनसे मंगल उद्बोधन और चारित्रवृद्धि की अमूल्य प्रेरणाएँ प्राप्त की हैं, उनकी अंतिम सल्लेखना देखने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ एवं उनकी आज्ञानुसार ही उनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्यश्री वीरसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा ग्रहण की है। तब से लेकर आज तक सैकड़ों नये साधु-साध्वियों की चर्या देखने के साथ ही उन्होंने गुरु परम्परा की सात पीढ़ियों को देखा और बनाने का गौरव भी प्राप्त किया है।

उनके नाम इस प्रकार हैं– 1. आचार्यश्री शांतिसागर महाराज 2. आचार्य श्री वीरसागर महाराज (प्रथम पट्टाचार्य) 3. आचार्य श्री शिवसागर महाराज (द्वितीय पट्टाचार्य) 4. आचार्य श्री धर्मसागर महाराज (तृतीय पट्टाचार्य) 5. आचार्य श्री अजितसागर महाराज (चतुर्थ पट्टाचार्य) 6. आचार्य श्री श्रेयांससागर महाराज (पंचम पट्टाचार्य प्रथम) तथा आचार्य श्री वर्धमानसागर महाराज (पंचम पट्टाचार्य द्वितीय) 7. आचार्यश्री अभिनंदन सागर महाराज (षष्ठम पट्टाचार्य के रूप में वर्तमान पट्टाचार्य का दायित्व निर्वाह कर रहे हैं)।

इन आचार्यों में से स्व. श्री अजितसागर महाराज, स्व. श्री श्रेयांससागर महाराज, आचार्यश्री अभिनंदनसागर महाराज एवं आचार्यश्री वर्धमानसागर महाराज को अनेक उच्चकोटि के ग्रंथों का अध्ययन भी कराया है। इन सभी संघ व्यवस्थाओं की जानकारी के बाद पूज्य मातुश्री का कहना है कि इस परम्परा के सभी आचार्य, मुनि एवं आर्यिका संघों में आज तक भी प्राचीन आर्ष परम्परानुसार आहार शुद्धि, वस्त्र शुद्धि, वर्ण शुद्धि आदि की व्यवस्था एकदम सुव्यवस्थित रूप से चल रही है, यह सब चारित्रचक्रवर्ती गुरुवर्य के दीर्घदर्शी शुभाशीर्वाद का प्रतिफल तथा पट्टाचार्यों-संघनायकों एवं गणिनी माताओं की कट्टरता का प्रतिफल ही समझना चाहिए।

➢समयानुसार प्रायश्चित्त में सदैव सावधान रहती हैं–

मैंने जब से (सन् 1971 से) संघ में प्रवेश किया है, तब से सदैव पूज्य माताजी के मुँह से यही सुनती आई हूँ कि दीक्षा धारण करने के बाद साधु की प्रथम दृष्टि 'आत्महित' की ओर ही होनी चाहिए। इसीलिए आचार्यों ने स्वाध्याय, प्रतिक्रमण, सामायिक आदि क्रियाओं के द्वारा उन्हें सदैव आत्मकल्याण में ही लगे रहने की प्रेरणा प्रदान की है। वे जहाँ अपनी इन क्रियाओं में पूर्ण सजग रहती हैं, वहीं हम लोगों को भी प्रमादी न बनने देने के लिए समय पर समस्त क्रिया करने हेतु सम्बोधन प्रदान किया करती हैं एवं थोड़ी सी भी असावधानी होने पर यथायोग्य प्रायश्चित्त देती हैं। प्रतिक्रमणों से संबंधित (दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक एवं सांवत्सरिक) प्रायश्चित्तों की परम्परा तो प्रायः समस्त साधु संघों में पुरातन परम्परा से चली आ रही है किन्तु मैंने दीक्षा लेने के बाद हमेशा देखा है कि संघ का जितने किलोमीटर का विहार होता है अर्थात् हम लोग जितने किलोमीटर रोज चलते हैं, विहार पूरा होने पर सम्पूर्ण किलोमीटर की गिनती करके पूज्य माताजी स्वयं उसका रस परित्याग, मंत्रजाप्य, उपवास आदिरूप प्रायश्चित्त ग्रहण करती हैं और हम लोगों को भी प्रायश्चित्त

प्रदान करती हैं, इसे "मार्गशुद्धि" प्रायश्चित्त कहा गया है। यदि कभी हम लोगों में उपवास की शक्ति नहीं होती है, तो एक उपवास के स्थान पर स्वासोच्छ्वासपूर्वक णमोकार महामंत्र की मालाएं जपने को बताती हैं। कहते हैं कि एक माला को 300 श्वासोच्छ्वासपूर्वक जपने से एक उपवास का फल प्राप्त होता है इसीलिए प्रायश्चित्त में एक उपवास के स्थान पर एक माला फेरने का विधान भी रहता है।

इसी प्रकार यदि गर्मी में कभी पंखा आदि के नीचे बैठने वगैरह के प्रसंग आ जाते हैं, तो समय-समय पर उनका भी प्रायश्चित्त देकर कल्याणालोचना, सर्वदोषप्रायश्चित्त विधि आदि का पाठ करने को कहती हैं। इतना ही नहीं, उनके साथ-साथ मुझे भी कई बार (अयोध्या आदि के रास्ते में) चारित्रशुद्धि व्रत के मंत्रों की जाप्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनकी अपनी चर्या के प्रति ऐसी सावधानी एवं शोधनविधि देखकर हम लोगों को भी निर्दोष चर्या पालन करने की प्रबल प्रेरणा मिलती है।

➢तीर्थोद्धारिका के रूप में निखरकर आया है व्यक्तित्व जिनका–

जिन भूमियों पर तीर्थंकर भगवन्तों के गर्भ, जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान एवं मोक्षकल्याणक सम्पन्न हुए हैं, वे जिनसंस्कृति की धरोहरस्वरूप महान पवित्र भूमियाँ हैं, क्योंकि आज भी वहाँ की मिट्टी में वे पुण्य परमाणु उपस्थित हैं जो हम सबके द्वारा अर्चना-वंदना करने से हमारे लिए महान पुण्योपार्जन का कारण बन जाते हैं। ऐसे स्थलों पर किये गये धार्मिक अनुष्ठान अनन्तगुणा फल देने वाले होते हैं, इसमें कुछ भी संशय नहीं समझना चाहिए।

विशेष रूप से तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियाँ तो हमारी शाश्वत संस्कृति की उद्गमस्थली हैं क्योंकि वहाँ जन्म लेकर ही उन भगवन्तों ने असंख्य जीवों के कल्याणार्थ धर्मपथ का प्रवर्तन किया है। जन्म लेने के पश्चात् ही मोक्ष जाना संभव है, अतः जन्मभूमियों की महत्ता विशेष ही है। सौधर्म इन्द्र भी अपने परिकर के साथ मात्र भगवान का निर्वाणकल्याणक मनाने ही नहीं आते वरन् भगवान के गर्भ एवं जन्म के समय से ही वे महान उत्सव मनाया करते हैं। भगवान के गर्भ में आने के 6 माह पूर्व ही माता के आँगन में रत्नों की वृष्टि प्रारंभ हो जाती है और भगवान के जन्म लेने तक 15 माह यह रत्नों की वर्षा निरन्तर होती ही रहती है। भगवान की जन्मनगरी एवं जन्ममहल को स्वयं इन्द्र अतिशयरूप से सुसज्जित कराते हैं अतः जिनधर्मियों के लिए ये जन्मभूमियाँ महान् पूज्य एवं विशेष श्रद्धा का केन्द्र सिद्ध होती हैं। इस प्रकार की मंगल भावनाओं को हर क्षण अपने हृदय में भाते हुए अन्य सभी को भी इसी प्रकार का

उपदेश देने वाली जैन समाज की वरिष्ठतम साध्वी **राष्ट्रगौरव पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी** प्राण-प्रण से तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों एवं अन्य कल्याणकभूमियों के विकास हेतु स्वयं भी कटिबद्ध हैं एवं सम्पूर्ण समाज को भी इसी प्रकार प्रेरणा प्रदान करती हैं।

पूज्य माताजी का कहना रहता है कि जब अपने रहने का मकान पुराना हो जाता है, तब लोग अत्यन्त प्रयासपूर्वक उसमें नवनिर्माण करके नवीनता लाते हैं एवं उसको चिरस्थाई करने का प्रयत्न करते हैं, पुनः जिन तीर्थंकर भगवान के शासन में हमें रत्नत्रय निधि की प्राप्ति हुई है, उनकी जन्मभूमि के जीर्णोद्धार एवं विकास के प्रति तो हमारा विशेष ही दायित्व है।

इसके अतिरिक्त जब घर में किसी बुजुर्ग सदस्य को कोई बीमारी हो जाती है अथवा उनका कोई अंग निष्क्रिय हो जाता है तो किसी भी प्रकार से साधन बनाकर उनका इलाज किया जाता है अथवा उनका निष्क्रिय अंग भी प्रत्यारोपित करवाकर उन्हें नवजीवन देने का प्रयास किया जाता है, न कि उनकी उपेक्षा की जाती है।

इसी प्रकार तीर्थंकर भगवन्तों के कल्याणकों से संबंधित भूमियों के संरक्षण, संवर्धन, जीर्णोद्धार एवं नवविकास के प्रति भी हमारा पूर्ण दायित्व है, यदि हम इन तीर्थों की उपेक्षा करते हैं तो आने वाली पीढ़ियों के प्रति यह हमारी अकर्मण्यता होगी, जिसके लिए हमें कभी भी क्षमा नहीं किया जायेगा। हमारे पूर्वजों ने हमारे लिए तीर्थों की धरोहर प्रदान की है, तो हमें भी अपने आगे तक की पीढ़ी को ये तीर्थ सौंपना है।

इन्हीं सब भावनाओं को अपने हृदय में संजोकर पूज्य माताजी ने भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ एवं अरहनाथ की जन्मभूमि-हस्तिनापुर को जम्बूद्वीप के निर्माण द्वारा सुन्दर रूप प्रदान किया है। भगवान ऋषभदेव सहित पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या को नया स्वरूप देकर सजाया है, भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि-राजगृही में भगवान की विशाल खड्गासन प्रतिमा विराजमान कराकर लोगों को इस स्थान को तीर्थंकर जन्मभूमि होने की बात पुनः बताई है क्योंकि यहाँ आने वाले अधिकांशतः जैन यात्री भगवान महावीर की प्रथम देशनास्थली के रूप में ही यहाँ के दर्शन करके तृप्त हो जाते थे।

जहाँ तक तीर्थंकर भगवन्तों की अन्य कल्याणक भूमियों की बात है, भगवान पार्श्वनाथ की केवलज्ञान कल्याणक भूमि-अहिच्छत्र में 11 शिखरों से युक्त विशाल तीस चौबीसी मंदिर का निर्माण, भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं

केवलज्ञान कल्याणक भूमि-प्रयाग (इलाहाबाद) में तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली का भव्य निर्माण, भगवान पद्मप्रभ की जन्मभूमि कौशाम्बी के प्रभासगिरि तीर्थ (दीक्षा एवं ज्ञानकल्याणक भूमि) पर भगवान की विशालकाय प्रतिमा की स्थापना एवं अन्य कितनी ही निर्माण एवं विकास प्रेरणाएं पूज्य माताजी के तीर्थोद्धारिका स्वरूप का दिग्दर्शन कराने में पूर्ण समर्थ हैं।

ऐसी तीर्थोद्धारिका माताजी के व्यक्तित्व को सकल रूप में जानने की जिज्ञासा होना स्वाभाविक ही है, परन्तु कितना भी प्रयास करके शब्दों के माध्यम से उनके व्यक्तित्व एवं गुणों का परिपूर्ण व्याख्यान करना किसी के लिए भी संभव नहीं है।

➢आचार्य कुन्दकुन्द के समान भक्तियों के प्रति अनुराग–

दिगम्बर मुनि-आर्यिकाओं द्वारा नित्य-नैमित्तिक क्रियाओं में पढ़ी जाने वाली आचार्यश्री कुन्दकुन्द स्वामी की (प्राकृत में) और आचार्यश्री पूज्यपादस्वामी की (संस्कृत में) सिद्ध, श्रुत, चारित्र आदि दश भक्तियाँ काफी प्रचलित हैं। उन्हें ठीक से समझने-समझाने की दृष्टि से पूज्य माताजी ने हिन्दी में भी इन भक्तियों का पद्यानुवाद करके साधु समाज पर बड़ा उपकार किया है।

इसके अतिरिक्त उन्होंने चिन्तन किया कि जैसे अनादिनिधन नंदीश्वर पर्व (आष्टान्हिक) में "नंदीश्वर पर्व क्रिया" साधुओं द्वारा की जाती है और उसमें नंदीश्वर भक्ति के माध्यम से पूरे मध्यलोक के चैत्यालयों की वंदना का पुण्य प्राप्त होता है, उसी प्रकार सोलहकारण, दशलक्षण आदि अनादि पर्वों में भक्तिपाठ की परम्परा होनी चाहिए किन्तु वे भक्तियाँ कहीं पृथक्रूप में थीं नहीं अतः माताजी ने स्वयं संस्कृत में लगभग 20 वर्ष पूर्व सोलहकारण भक्ति, दशलक्षण भक्ति, पंचमेरु भक्ति, सुदर्शनमेरु भक्ति और जम्बूद्वीप भक्ति बनाकर प्राकृत में उनकी अंचलिका लिखी हैं, जो "मुनिचर्या" एवं "जिनस्तोत्र संग्रह" ग्रंथ में प्रकाशित हैं। इन भक्तियों का पाठ वे प्रत्येक सोलहकारण एवं दशलक्षण पर्व में सामूहिक रूप में करती हैं। इसलिए हम लोगों को कण्ठस्थ भी हो गई हैं। ऐसी भक्तियों के प्रति अनुराग संभवतः सब संघों में देखने को नहीं मिल सकता है, जैसा कि पर्वों के साथ प्रत्येक भगवान के सभी कल्याणकों की क्रिया, तीर्थक्षेत्र-सिद्धक्षेत्रों की वंदना क्रिया, अभिषेक वंदना क्रिया तथा गुरुओं की वंदना क्रिया आदि करने में स्वयं की सजगता के साथ हम लोगों को भी सदैव इन्हें करने की प्रेरणा देते हुए कहा करती हैं कि पंचमकाल में हम लोगों के लिए ये शुभ क्रियाएँ ही कर्म निर्जरा कराने में सक्षम हैं अतः इनमें कभी प्रमाद नहीं करना चाहिए।

जिन प्रतिमाओं का अभिषेक देखने में इन्हें अत्यधिक आल्हाद और उत्साह रहता है। 72 वर्ष की उम्र में भी एक युवाशक्ति के समान रोज जम्बूद्वीप के चैत्यालयों का, अन्य मंदिरों की प्रतिमाओं का बड़े-बड़े घड़ों से जलाभिषेक, दुग्धाभिषेक देखने में इनकी तीव्र रुचि देखकर ऐसा प्रतीत होने लगता है कि आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज के संस्कार ही इनमें अवतरित हो गये हैं।

इसी प्रकार से 1008 सहस्रनाम मंत्रों के द्वारा इन्होंने पचासों बार अनेक भक्तों से कमल पुष्पों और गुलाब पुष्पों को चढ़ाकर पूजा कराई है और आज भी भक्त, समय तथा पुष्पों के उपलब्ध होते ही इनकी भावना बलवती होकर प्रभुचरणों में समर्पित हो जाती है। यही कारण है कि ऐसी पूजा इनके सानिध्य में करने वाले श्रद्धालुभक्त भी भाव-विभोर होकर बार-बार उस भक्ति आयोजन के लिए उपयुक्त क्षणों का इंतजार किया करते हैं।

पूज्यश्री की यह भक्ति निश्चितरूप से दर्शनविशुद्धि भावना का द्योतक है, जो आत्मा को शीघ्र परमपूज्य बनाने में माध्यम बन रही है।

➢पावापुरी सिद्धक्षेत्र के प्रति अगाढ़ भक्ति–

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के जीर्णोद्धार-विकास लक्ष्य से जहाँ पूज्य माताजी को सन् 2003-2004 में वहाँ प्रवास का अवसर प्राप्त हुआ, वहीं निकटवर्ती निर्वाणभूमि पावापुरी के दर्शन करके उन्हें असीम आल्हाद होता था। वे 22 माह के कुण्डलपुर प्रवास के मध्य 22 बार पावापुर गईं और प्रतिमाह वहाँ जलमंदिर में जाकर घंटों पिण्डस्थ ध्यान करके भगवान महावीर के मोक्षगमन के क्षणों का अनुभव करतीं। कई बार भगवान के चरणों में केशर, दूध से अभिषेक कराकर 1008 कमल पुष्प, 1008 रत्न, बादाम, लौंग आदि चढ़वाकर संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों से वृहत् पूजा-आराधना करवातीं और हर बार निर्वाणलाडू अवश्य चढ़वाकर दीपावली पर्व जैसे सुख का स्मरण करतीं।

नवम्बर 2004 में वहाँ से अंतिम बार विहार करते हुए माताजी एकदम भावविह्वल होकर भगवान महावीर के चरण पकड़कर कहने लगीं कि प्रभो! मुझे जीवन में पहली आर आपकी सिद्धभूमि के अति निकट दो चातुर्मास करने का अवसर मिला, इसीलिए अनेकों बार पावापुरी के दर्शन हो सके हैं। अब मुझे ये चरण जीवन में शायद कभी नहीं प्राप्त होंगे.....। पुनः बार-बार उन प्रभु वीर के चरणों की रज मस्तक पर लगाकर अपनी प्रगाढ़ भक्ति का परिचय प्रदान किया। आज भी वे पावापुर का नाम लेते ही जलमंदिर में स्थित चरणों के ध्यान में लीन हो जाती हैं और प्रायः पावापुरी सिद्धक्षेत्र की वंदना क्रिया में

अनेक भक्तियों का पाठ आदि करती हैं।

➢जिनेन्द्र भक्ति से बढ़कर पंचमकाल में कुछ नहीं है–

पूज्य माताजी के व्यक्तित्व का सौन्दर्य उनकी अगाध जिनभक्ति की भावना में निहित है। उनका कहना है कि वर्तमान पंचमकाल में हमारे लिए यदि कोई चिन्तामणि रत्न है तो वह है जिनेन्द्र भगवान की भक्ति क्योंकि उसके माध्यम से ही इहलोक संबंधी समस्त अनुकूलताओं की प्राप्ति होने के साथ-साथ क्रम से स्वर्ग एवं मोक्ष की भी सिद्धि हो जाती है। वास्तव में देखा जाये तो पूज्य माताजी के द्वारा किए गए कार्यों की गौरवशाली सफलता उनकी जिनेन्द्रभक्ति का ही सुन्दर प्रतिफल है। आत्मकल्याण एवं जिनधर्म प्रभावना हेतु जीवन के हर क्षण को प्रयोग करने की वह अद्भुत क्षमता रखती हैं। अनुशासन उन्हें अतिशय प्रिय है। कर्मठता, एकाग्रता, विचारशीलता, दूरदर्शिता जैसे गुण एक साथ आकर उनमें एकत्रित हो गये हैं और इसीलिए जीवन भर कदम-कदम पर संघर्षों का सामना करते हुए भी आगम का पक्ष लेकर उन्होंने सदैव सुन्दर सफलता प्राप्त की है। अग्रिम भवों में कठोर तप कर अपने समस्त कर्मों को क्षय कर देने की एकमात्र अभिलाषा उनके हृदय में हर क्षण विद्यमान रहती है।

➢मंत्रों में हानि-वृद्धि करना घातक है! (एक सच्ची घटना)–

एक बार राजस्थान के एक नगर में (सन् 1988 में) श्री कल्पद्रुम महामण्डल विधान का विशाल आयोजन हुआ। विधान करने वाले प्रमुख यजमान ने लाखों रुपये खर्च करके उत्साहपूर्वक यह अनुष्ठान एक मुनिसंघ के सानिध्य में करने का संकल्प लिया था। संघ के नायक आचार्यश्री की आज्ञा से उन्होंने 4-5 प्रतिष्ठाचार्यों को आमंत्रित किया पुनः शुभ लग्न में झण्डारोहणपूर्वक उस महायज्ञ का शुभारंभ हुआ।

किन्तु यह क्या? पहले दिन से ही विघ्नों की बौछार शुरू हो गई। जाने क्या हुआ कि संघ के साधु-साध्वियों ने झण्डारोहण में सानिध्य देने को ही मना कर दिया। किसी तरह मनुहार करने पर कुछ साधु गए और उन्मनस्क से बैठे रहे। इसी प्रकार विधानाचार्यगण भी अलग-अलग अपनी नुक्कड़ सभाएँ लगाए एक-दूसरे के विपक्ष में बातें करते रहें।

किसी तरह से विधान शुरू हुआ। परदेश से विधान के निमित्त पधारे मुख्य यजमान सेठ की अच्छी आफत थी। वे बेचारे जितना सामंजस्य बैठाने की कोशिश करते उनके ऊपर उतना ही अधिक संकट आता जाता था। पैसा तो पानी की तरह से बह ही रहा था क्योंकि पराए गाँव में इज्जत का प्रश्न था।

नगर का कोई व्यक्ति बिना नगद नारायण लिए एक काम करने को भी तैयार नहीं था। रोज गाँव भर का प्रीतिभोज होता और सायंकालीन अल्पाहार भोजन से कई गुना महँगा पड़ता था। किन्तु सेठ बेचारे की गर्दन चूँकि अब ऊखल में पड़ ही गई थी, तो मूसल की चोट से डर कर कहाँ जाते? उनकी सेठानी वहाँ के सारे नजारों से परेशान थीं। किन्तु उनका कुछ भी बोलना वहाँ उसी प्रकार था जैसे नक्कारखाने में तूती की आवाज।

प्रतिष्ठाचार्यों का अन्तर्युद्ध इस कदर बढ़ गया कि एक पंडित जी को रातोंरात कुछ समझदार लोगों ने भगाया अन्यथा शायद वहाँ कबड्डी का मैदान बन जाता। उसके बाद कुछ शांति के लक्षण दिखे। मुख्य यजमान तथा समस्त इन्द्र-इन्द्राणियों से विधान की जाप्य संख्या बढ़ाने को कहा गया किन्तु अब सेठ जी की जान पर ही आ पड़ी। नगर के कुछ लोग उनके विराध में हो गए और चारों ओर सेठ की बुराइयाँ करने लगे।

जो भी हो, शांति-अशांति के मिले-जुले माहौल में विधान पूर्ण हुआ। इसी मध्य बाहर से पहुँची एक विज्ञ बहन ने विधान की जाप्य का कार्ड देखा, तो उसमें मूल मंत्र ही बदल दिया गया था। उन्होंने यजमान सेठ को इस बारे में संकेत दिया, तो वे बोले कि यहाँ इतने ज्ञानी साधु और पंडितों के समक्ष मैं क्या कर सकता हूँ?

जैसे-तैसे डरते-डरते उन्होंने किसी से बात भी की तो उत्तर मिला कि तुम नहीं जानते हो, 'नमः' के योग में तो चतुर्थी विभक्ति का ही प्रयोग होता है तथा इस मंत्र में 'ह्रीं' नहीं है अतः ह्रीं शब्द बढ़ाया गया है।

मूल मंत्र तो यह था– **''ॐ अर्हत्सिद्धसयोगकेवली स्वाहा।''**

उसमें परिवर्तन परिवर्द्धन करके उसे वहाँ यूँ छपाया गया था–

''ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धसयोगकेवलिभ्यो स्वाहा।''

मूल मंत्र में यह पाठ बढ़ाने और सुधारने का दुःसाहस किस विज्ञ ने किया था यह तो भगवान जाने?

कुछ दिनों बाद सेठानी पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के दर्शनार्थ हस्तिनापुर पहुँचती हैं और अश्रुपूरित आँखों से माताजी से पूछने लगती हैं-हे माता! मेरे विधान में इतने उपद्रव, संकट क्यों आए, जबकि हमने दिल खोलकर खर्च किया तथा पूर्ण मनोयोग से अनुष्ठान किया था?

पूज्य माताजी ने एक बार करुणाभरी दृष्टि से उनकी ओर देखा, आशीर्वाद दिया पुनः कहने लगीं–पुत्री! इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। गलत मंत्र का

जाप करने के कारण यह सब अनर्थ हुआ है। कल्पद्रुम विधान का यह 13 अक्षरी मंत्र महान आचार्य द्वारा बनाया हुआ मंत्र है, इसमें हानि, वृद्धि कथमपि नहीं करना चाहिए। उन्होंने कहा कि अभी कुछ दिन पूर्व ही मेरे पास भी कल्पद्रुम विधान हो चुका है, उसे करने वाले सभी यजमान खूब अच्छी सफलता प्राप्त कर रहे हैं।

➢तीर्थक्षेत्र कमेटी के लिए माताजी की विशेष प्रेरणा–

यूँ तो समाज में सैकड़ों-हजारों संस्थाएँ अपने-अपने स्तर से धर्मप्रभावना, साहित्यप्रकाशन, शोधकार्य, तीर्थ निर्माण आदि के कार्य कर रही हैं किन्तु पूज्य माताजी का कहना है कि ''भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी' एक अत्यंत महत्वपूर्ण संस्था है। भारतवर्ष के समस्त दिगम्बर जैन तीर्थों का संरक्षण करना इस कमेटी का प्रमुख दायित्व है, इस दायित्व के निर्वाह में यदि कहीं कोई शिथिलता आती है तो उनकी हानि का दुष्परिणाम पूरे समाज को भुगतना पड़ता है। इसलिए इस कमेटी के प्रमुख पदाधिकारी अत्यन्त उदार एवं व्यापक दृष्टिकोण वाले होना चाहिए।

यदि कदाचित् किसी तीर्थ के बारे में सन्देह या विवाद की स्थिति समाज में उत्पन्न हो जाती है, तो ऐसी परिस्थिति में तीर्थक्षेत्र कमेटी को सम्पूर्ण साधु समूह और समाज की मीटिंग किये बिना कभी एकांगी निर्णय लेकर किसी तीर्थ को हटाने या नये तीर्थ की स्थापना करने का अधिकार कदापि नहीं है। प्रत्युत् विवाद की स्थिति में दोनों तीर्थों को भले ही स्वीकार किया जा सकता है, इसी से सामाजिक शांति एवं संगठन बना रह सकता है।

समय-समय पर इस प्रकार की सृजनात्मक प्रेरणा पूज्य माताजी ने स्व. साहू शांतिप्रसाद जैन, स्व. साहू श्री श्रेयांस कुमार जैन, स्व. साहू श्री अशोक कुमार जैन एवं स्व. साहू श्री रमेशचंद जैन (तत्कालीन अध्यक्ष) को भिजवाई हैं तथा तीर्थक्षेत्र कमेटी के वर्तमान अध्यक्ष श्री नरेश कुमार जैन सेठी को भी यही प्रेरणा प्रदान करते हुए उन्होंने सदैव उत्साहित किया है। इस विषय में माताजी का व्यापक दृष्टिकोण इसलिए रहता है कि अन्य संस्थाएँ यदि कभी निष्क्रिय हो जाती हैं या कुछ गलती भी कर बैठती हैं अथवा एकांगी कार्यकलापों से अपना स्थान बना लेती हैं, तो भी सामाजिकरूप से उतना नुकसान नहीं होता है, किन्तु ''तीर्थक्षेत्र कमेटी'' की निष्क्रियता, एकांगीपना या किंचित् मात्र गलती भी भावी पीढ़ी के लिए अभिशाप बन सकती है, जिसके नतीजे पूर्व में देखे भी जा चुके हैं। क्योंकि भारत में जितने भी दिगम्बर जैन तीर्थ हैं, वे

केवल जैन समाज के लिए ही नहीं, सारे विश्व के लिए अमूल्य धरोहर हैं, निधि हैं और सर्वस्व हैं तथा जैनधर्म के तो आधार और प्राण हैं।

➢विद्वानों के लिए आगमनिष्ठ प्रेरणा–

पूज्य माताजी अपने 54 वर्षीय संयमी जीवन में अनेक बड़े-बड़े विद्वानों के शास्त्रीय ज्ञान एवं उनकी विविध मान्यताओं से भली भांति परिचित हैं इसीलिए वर्तमान के प्रोफेसर विद्वानों के भिन्न-भिन्न तर्कपरक दृष्टिकोण देखकर वे प्रायः कहने लगती हैं कि प्राचीन विद्वान् जैसे पं. इन्द्रलाल जी शास्त्री, पं. सुमेरचंद्र दिवाकर, पं. खूबचंद शास्त्री, पं. मक्खनलाल शास्त्री, पं. लालाराम जी शास्त्री, पं. पन्नालाल जी सोनी आदि तो हम लोगों के साथ बैठकर आर्ष ग्रन्थों के प्रमाणानुरूप ही किसी विषय का निर्णय किया करते थे किन्तु अब तो कुछ नये विद्वान प्रान्तीय परम्परा और निजी मान्यता के अनुसार समाज के साथ-साथ साधुओं को भी चलाना चाहते हैं। वास्तव में देखा जाये तो विद्वान् चूँकि सरस्वती पुत्र कहे जाते हैं, इसलिए उनका कर्तव्य यही है कि प्राचीन आर्षग्रंथ, सर्वतोमुखीदृष्टि एवं प्राचीन गुरुपरम्परा को ध्यान में रखकर ही सभी विषयों का निर्णय करें।

अपने सानिध्य में होने वाले शिविर, सेमिनारों में पधारने वाले विद्वानों को पूज्य माताजी यही प्रेरणा प्रदान करती हैं। उनका कहना है कि विद्वान् लोग समाज के दिशा निर्देशक होते हैं, इसलिए उन्हें सर्वप्रथम स्वयं में सदाचारी, अणुव्रती और निष्पक्ष वक्ता के रूप में जिनवाणी के चारों अनुयोगों के अनुसार वस्तुतत्व का व्याख्यान करना चाहिए। विवाद की स्थिति उत्पन्न होने पर भी आगम और वर्तमान प्रान्तीय परम्परा दोनों का कथन करना ही उनके लिए शोभास्पद है।

इसी प्रकार ज्ञानमती माताजी कहती हैं कि वर्तमान की तेरह और बीसपंथ दोनों परम्परा में विभक्त साधु-साध्वियों को भी समाज में सामंजस्य की स्थिति बनाये रखने हेतु किसी एक विषय में खींचतान नहीं करना चाहिए तथा अपनी मान्यता को आगम के अनुकूल ही बनाना चाहिए।

➢एक अन्तर्वेदना का स्पष्टीकरण–

इधर 10-15 वर्षों से समाज में एक विवाद उत्पन्न हुआ है कि अंकलीकर परम्परा के कतिपय साधु-साध्वी चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज को आचार्य आदिसागर मुनिराज का शिष्य कहकर आदिसागर जी को बीसवीं सदी का प्रथम आचार्य प्रचारित करते हैं, जिसे देख-सुनकर माताजी को अत्यन्त खेद होता है क्योंकि उन्होंने संघ में आचार्यश्री महावीरकीर्ति महाराज

आदि के मुख से ऐसी बातें कभी सुनी नहीं। चूँकि यह निर्विवादित सत्य है कि शांतिसागर महाराज ने मुनिश्री देवेन्द्रकीर्ति जी से क्षुल्लक एवं मुनिदीक्षा लेकर बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की है। इस विषय में अनेक मुनि, आर्यिका, विद्वानों द्वारा समय-समय पर विभिन्न पुस्तकें एवं लेख आदि प्रकाशित हुए हैं। ऐसे वातावरण में साधु संघों के पारस्परिक मनोमालिन्य को देखकर पूज्य ज्ञानमती माताजी का यही कहना रहता है कि अंकलीकर परम्परा के सभी साधु-साध्वी स्वतंत्ररूप से आचार्य आदिसागर जी, आचार्य महावीर कीर्ति जी आदि का प्रचार-प्रसार करें, उस परम्परा का संरक्षण-संवर्धन करें, हमें कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु आचार्य शांतिसागर महाराज को आदिसागर जी का शिष्य या गुरु आदि कुछ न लिखकर उनके अस्तित्व को स्वतंत्र रहने दें और अंकलीकर परम्परा में उनका फोटो या नाम न जोड़ें।

उनका मानना है कि जैसे हम यदि आप के पिता को अपने पिता का पुत्र कहें तो आपको कैसा लगेगा? असत्य लगेगा न, क्योंकि हमारे पिता और आप के पिता दोनों का अस्तित्व अलग-अलग है, दोनों अपनी-अपनी कुल परम्परा की यथायोग्य अभिवृद्धि कर रहे हैं। उसी प्रकार चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज और आचार्यश्री आदिसागर महाराज (अंकलीकर) दोनों की सत्ता-परम्परा अलग-अलग ही मानना चाहिए। न तो आदिसागर जी शांतिसागर जी के गुरु थे और न शांतिसागर जी महाराज आदिसागर जी के गुरु थे, किसी को किसी का गुरु या शिष्य कहकर मात्र अविनय और अवर्णवाद का दोष ही लगता है न कि पुण्य का संपादन होता है।

इसी प्रकार सभी साधु-संघों के लिए माताजी सदैव यही कहा करती हैं कि हुण्डावसर्पिणी काल के दोषवश ही वर्तमान युग में अनादि चतुर्विध संघ परम्परा में कुछ मतभेद, पंथभेद आदि उत्पन्न हो गये हैं। फिर भी यदि संघ के नायक उदारतापूर्वक अपने-अपने संघों का संचालन करते हुए अपनी गुरु परम्परा की प्रसिद्धि एवं शिष्य परम्परा की अभिवृद्धि के साथ जिनधर्म की प्रभावना करें किन्तु दूसरे की गुरु परम्परा आदि पर कोई कुठाराघात न करें, इससे संघ समन्वय के साथ सामाजिक वातावरण बहुत ही सुखद, सुन्दर एवं प्रेरणादायी बनेगा अर्थात् सत्य को सत्यरूप में ही उजागर करके सभी को मात्र जिनशासन की प्रभावना का ही लक्ष्य रखना चाहिए तभी मतभेदों में मनभेद को स्थान नहीं मिल पाता है और "कलौ संघे शक्तिः" का संदेश भी समाज में प्रसारित होता है।

➢पुण्य से ईर्ष्या न करके आदर्श को ग्रहण करें–

जो अपने जीवन में ऐसे महान पुरुषार्थ एवं उससे उपार्जित पुण्य से अस्पर्शित रहते हैं, ऐसे कुछ दिग्भ्रमित लोग कभी-कभी इन ऊँचाइयों को नहीं समझ पाते हैं और दीर्घकालीन तपस्या से प्राप्त पुण्य के प्रताप से पूज्य माताजी द्वारा सम्पन्न कराये जा रहे चमत्कारिक निर्माण एवं प्रभावनात्मक कार्यकलापों को देख-सुनकर जहाँ यद्वा-तद्वा प्रलाप करने लगते हैं, वहीं असंख्य लोग प्रशंसा और साधुवाद देते हुए भावविह्वल होते देखे जाते हैं, यह सब उनके अपने-अपने पाप-पुण्य कर्म का ही उदय मानना पड़ेगा क्योंकि महान कार्यों में लगे हुए संत हमारे ईर्ष्या-द्वेष के नहीं वरन् साधुवाद के ही पात्र होते हैं। जहाँ उनकी अनुमोदना बिना कुछ किए भी हमारे पुण्य को सहस्रगुणा वर्धित कर देती है, वहीं व्यर्थ प्रलाप एवं ईर्ष्या प्राणी की अवनति को भी आश्वस्त कर सकती है। दुराग्रहों को छोड़कर अपने मानस को इस प्रकार सुव्यवस्थित करना चाहिए कि यदि हम स्वयं बहुत अधिक करने में समर्थ नहीं हैं, तो समाज को अपनी कर्मठता के माध्यम से महान धरोहर प्रदान करने वाले महान व्यक्तित्वों की अनुमोदना करें और यदि इतना भी न हो सके, तो कम से कम व्यर्थ निंदा के कंटकों को विकीर्ण करने का दुष्प्रयास तो न करें। प्रारंभ से ही गुणीजनों के गुणों को ग्रहण करने का जो भाव हमारी शाश्वत संस्कृति द्वारा हममें आरोपित किया जाता है, उसको अपनाते हुए पुण्य से ईर्ष्या नहीं वरन् आदर्श को ग्रहण करने का प्रयास करना चाहिए। विश्व में प्राचीनतम होते हुए भी जैनधर्म का प्रकाश मात्र जुगनू की भाँति ही देखने में आता है अतः इस महान धर्म की छत्रछाया में मोक्षमार्ग को प्राप्त करने वाले हम सभी का कृतज्ञता रूप में यही कर्तव्य है कि हमें अपनी शक्ति के अनुसार जितनी हो सके, उतनी सच्ची रचनात्मक धर्मप्रभावना करनी चाहिए और कार्य में संलग्न महापुरुषों के प्रति सदैव आदरभाव रखना चाहिए। पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने सुदीर्घतपस्वी जीवन में इसी सूत्र का परिपालन करते हुए सदैव सृजन में अपनी शक्ति लगाई है एवं परनिन्दा इत्यादि में अपने क्षण कभी भी विनष्ट नहीं किये हैं। हमारा महानतम सौभाग्य है कि ऐसी महान आत्मा का साक्षात् सानिध्य हमें इस कलिकाल में भी प्राप्त हो रहा है। पूज्य माताजी के चरण- कमलों में बारम्बार अभिवंदन करते हुए जिनेन्द्र प्रभु से यही हार्दिक प्रार्थना है कि यह पुण्यधारा निरन्तर यूँ ही हम सबको सराबोर करती रहे।

➢जन्मदात्री आर्यिका रत्नमती जी की विनम्रता–

सांसारिक दृष्टि से यद्यपि कोई भी संतान माता-पिता के ऋण को कभी चुका नहीं सकती है किन्तु ज्ञानमती माताजी और उनकी जन्मदात्री आर्यिका श्री रत्नमती माताजी का जीवन पारस्परिक उपकारों का जीता-जागता उदाहरण रहा है। मैंने उनके लिए एक जगह स्वयं लिखा है–

संतान मात की गोदी में, पलकर शैशव को प्राप्त करे।
विधि का विधान देखो यह भी, माता खुद उन्हें प्रणाम करे।।
इन अजब निराली बातों का, साक्षात् दर्श करना है यदि
तो रत्नमती जी की विनम्रता, देखो ज्ञानमती के प्रति।।

अर्थात् सन् 1952 में अपनी पुत्री मैना को दीक्षा की अनुमति देने के बाद माँ मोहिनी जी ने 18 वर्ष तक अपने गृहस्थोचित कर्तव्यों का निर्वाह करने के पश्चात् उन्हीं पुत्री से जगन्माता बन चुकीं ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा प्राप्त कर सन् 1971 में पूज्य आचार्यश्री धर्मसागर महाराज से दीक्षा लेकर ''आर्यिका रत्नमती'' नाम प्राप्त किया था पुनः सन् 1972 से वे पूज्य माताजी की छत्रछाया में ही रहकर पूर्ण निर्दोष आर्यिका चर्या का पालन करती थीं। उन्होंने हमेशा ज्ञानमती माताजी को अपने गुरुरूप में ही देखा और कभी उनका नाम न लेकर केवल ''माताजी'' कहकर ही सम्बोधित करती थीं, उनसे विनयपूर्वक प्रायश्चित्त ग्रहण करती थीं और अन्त समय में भी स्वयं क्षपक बनकर माताजी से निर्यापकाचार्य के रूप में दिशा-निर्देश प्राप्त कर 15 जनवरी 1985 को नारी जीवन के चरमलक्ष्य (समाधि) की सिद्धि कर ली।

आर्यिका श्री रत्नमती माताजी की यह विनम्रता, उनकी उदारता एवं गुणग्राहकता का ज्वलन्त उदाहरण है। मैंने अपने जन्म से लेकर उनके समाधिपर्यन्त 27 वर्षों तक उनके पास रहकर उनसे माँ की ममता और गुरु की समता दोनों का रसास्वादन प्राप्त किया है अतः अपने जीवन को सौभाग्यशाली मानती हूँ। भगवान जिनेन्द्र से प्रार्थना है कि पूज्य रत्नमती माताजी के समान ही मुझे भी विनम्रता, समर्पण एवं निस्पृहता का गुण प्राप्त होवे, ताकि दीक्षित जीवन के एक-एक पल को सफलता की सीढ़ियाँ प्राप्त हो सकें।

➢आर्यिका श्री अभयमती जी की चारित्रिक दृढ़ता–

पूज्य ज्ञानमती माताजी के गृहत्याग (सन् 1952 में) के पश्चात् उस घर में त्याग और वैराग्य का माहौल पनपने लगा था, जिसका प्रभाव उनकी छोटी बहन कु. मनोवती पर भी पड़ा और उन्होंने सन् 1962 में किसी प्रकार घर

छोड़कर ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लिया पुनः माताजी के संघ को सम्मेदशिखर की यात्रा कराई, वहीं पर सप्तम प्रतिमा के व्रत लेकर त्यागमार्ग प्रारंभ किया। सन् 1964 में हैदराबाद (आंध्रप्रदेश) के चातुर्मास में श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन माताजी ने इन्हें क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान कर "अभयमती" नाम दिया पुनः सन् 1969 में फाल्गुन शुक्ला अष्टमी के दिन श्रीमहावीर जी शांतिवीरनगर तीर्थ पर आचार्य श्री धर्मसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा ग्रहण की।

आर्यिका दीक्षा के बाद सन् 1971 में संघ से निकलकर बुन्देलखण्ड के तीर्थों की यात्रा करते हुए 15 वर्षों तक खूब धर्मप्रभावना की, जगह-जगह अनेक महिला मण्डल खोले, रात्रि पाठशालाएँ खुलवाईं एवं साहित्य सृजन के साथ-साथ स्वस्थ्य अत्यन्त कमजोर होते हुए भी अपनी आर्यिकाचर्या को निभाने में जिस दृढ़ता का परिचय प्रदान किया है, वह इनके आत्मबल का ही द्योतक है। सन् 1986 में ये पुनः हस्तिनापुर में पूज्य माताजी के दर्शनार्थ पधारीं, तब से पश्चिमी उत्तरप्रदेश में भ्रमण कर-करके धर्मप्रभावना भी करती हैं और माताजी के पास भी अनेक चातुर्मास करके गुरु वैयावृत्ति का लाभ प्राप्त करती हैं। इनके पास क्षुल्लिका शांतिमती शिष्या 25 वर्षों से लगातार रहकर धर्मध्यान एवं गुरुभक्ति कर रही हैं।

➢पाप को बढ़ावा न दें–

लोक में कहावत है कि अन्याय को करना जितना पाप है, अन्याय को सहन करना भी उससे ज्यादा पाप है। अर्थात् पाप क्रियाओं को करने, अनुमोदना देने एवं उन्हें बढ़ावा देने वालों को पापानुबंधी पाप का ही संचय होता है। वर्तमान में हमारी भारतीय संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति तेजी से हावी हो रही है। टेलीविजन के सैकड़ों चैनल, फिल्म जगत के बढ़ते प्रचार, पत्र-पत्रिकाओं एवं दैनिक अखबारों में छप रहे अश्लील चित्र भावी पीढ़ी की बुद्धि कुत्सित कर रहे हैं।

इसी श्रृँखला में एक अन्य विषय भी तेजी से उभरकर समाज के बीच में आया है–निःसंतान और पुत्रविहीन दम्पत्तियों द्वारा सन्तान को गोद लेने की परम्परा। यूँ तो प्राचीनकाल से भी आवश्यकतानुसार परिवारों में पुत्र या पुत्री सन्तान को गोद लेकर अपनी कुल की रक्षा एवं वृद्धि करने की परम्परा रही है चूँकि वे सन्तानें प्रायः अपने कुल और जाति से संबंधित ही हुआ करती थीं अतः पारिवारिक शुद्धि एवं अधिकारों के साथ-साथ मोक्षमार्ग का अधिकार भी उन्हें सहज में प्राप्त हो जाता था किन्तु आजकल लोग किसी भी अनाथालय से या पालना में से अज्ञात माँ-बाप के बच्चों को गोद लेकर उसे बड़े प्यार से पालते

हैं, ऐसे लोग न तो बच्चे की जाति के बारे में पता करते हैं और न ही उन्हें अपने कुल की पवित्रता का लक्ष्य रहता है। 3-4 वर्ष पूर्व एक घटना सुनने में आई कि सड़क के किनारे कपड़े में लिपटा हुआ एक शिशु पड़ा था, उसे एक दम्पत्ति ने उठाकर पालन-पोषण किया पुनः सार्वजनिक घोषणा हुई कि ऐसे बच्चों को पालने वाली यशोदा माताएँ सामने आएँ.....आदि।

आए दिन इस प्रकार की घटनाएँ सुनकर और पालने या अस्पताल से गुमनाम माँ के बच्चों को गोद लेने की बात जानकर पूज्य माताजी हार्दिक कष्ट का अनुभव करती हैं। वे सदैव यही कहती हैं कि "अपने परिवार और जाति के बच्चों को ही गोद लेने से जाति एवं कुल परम्परा की शुद्धि रहती है तथा शुद्ध परिवारों में ही तीर्थंकर आदि महापुरुषों के जन्म होते हैं।" दूसरी बात यह है कि सामान्यरूप से जन्मे बच्चों को भला कौन सी माँ अनाथालय या पालने में डाल सकती है? ऐसे बच्चे या तो किसी कुंआरी लड़की द्वारा पैदा किए होते हैं अथवा अवैध संबंधों से जन्मे बच्चे सड़क से पालने तक पहुँचा दिये जाते हैं। इस स्थिति में आप सभी के लिए चिन्तन का विषय यह है कि जहाँ ऐसे अनाथ बच्चों को गोद लेकर कुल परम्परा की पवित्रता पर प्रश्नचिन्ह लगता है,वहीं पापाचार (व्यभिचार) पूर्वक सन्तान को उत्पन्न करने वाली युवा पीढ़ी को पाप का बढ़ावा भी मिलता है। उन बच्चों का पालन करने वाली माताओं को यशोदा की उपमा कभी नहीं दी जा सकती है। आप जरा सोचें तो सही कि नारायण श्री कृष्ण को किन परिस्थितियों में यशोदा की गोद में छोड़ा गया था? क्या वे अवैध संबंधों के प्रतिफल में जन्मे थे? क्या देवकी ने उन्हें पैदा करके सड़क किनारे या अनाथालय में पहुँचाया था?..... इत्यादि अनेक प्रश्न यशोदा के गोदीपुत्र श्रीकृष्ण के प्रति उपस्थित हो जाते हैं। जबकि अन्यायी कंस का वध करने वाले कृष्ण का जन्म 7 माह में ही हो जाने पर, कहीं यह पापी कंस द्वारा मार न दिया जाए, इस भय से उन्हें अलका सेठानी (लोक व्यवहार में यशोदा नाम से प्रसिद्ध) के पास पहुँचाकर सुरक्षित मात्र रखा गया था। आगे चलकर वह सारा इतिहास जगजाहिर हो गया था, जबकि वर्तमान में अनाथालयों से गोद लिए गए बच्चों के माता-पिता के नाम आदि का कोई अता-पता भी नहीं रहता है। यह परम्परा सर्वथा निंद्य है अतः सदाचारी परिवारों को, नई विचारधारा वाले दम्पत्तियों को अपनी खानदान शुद्धि का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

➢सुधी लेखकों के लिए एक विचारणीय विषय–

जैसा कि सम्पूर्ण जैन समाज को विदित है कि पूज्य ज्ञानमती माताजी ने

जब से (सन् 1976 से) इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र आदि महापूजा विधानों की रचना करके जिनेन्द्र भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया है, तब से पूरे देश में बहुत बड़े-बड़े भक्ति के महाकुंभ आयोजित होते रहते हैं। दिगम्बर जैन आगम के चरणानुयोग से संबंधित ग्रंथों में पाँच प्रकार की पूजाओं का वर्णन आया है – नित्यमह, आष्टान्हिक, इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम और सर्वतोभद्र। इनमें से नित्यमह (रोज करने वाली) और आष्टान्हिक पूजा (सिद्धचक्र विधान के रूप में) की परम्परा तो समाज में प्राचीनकाल से होती रही है एवं इन्द्रध्वज नामक संस्कृत का हस्तलिखित विधान भी कहीं-कहीं ग्रंथालयों में उपलब्ध होने से यदा-कदा विशेष प्रसंगों पर करने की परम्परा सुनी है। इसमें मध्यलोक के तेरहद्वीप संबंधी 458 अकृत्रिम चैत्यालयों की पूजा का वर्णन है। इसी को आधार बनाकर पूज्य माताजी ने 50 पूजाओं में रचकर इन्द्रध्वज विधान एक मौलिक कृति के रूप में प्रथम बार सन् 1976 में प्रस्तुत किया, उसके कुछ वर्षों पश्चात् ही अन्य लेखकों ने भी उसी विधान का कुछ मैटर तोड़-मरोड़ कर अपने-अपने नामों से प्रकाशित कर लिया, जिन्हें देखकर किंचित् आश्चर्य हुआ था कि लोग किस प्रकार दूसरे कीकृति का उपयोग अपने नाम से करने में संकोच नहीं करते हैं।

किन्तु अत्यंत दुखद आश्चर्य तो 3-4 वर्षों से कल्पद्रुम और सर्वतोभद्र विधान की डुप्लीकेट रचनाओं को देखकर हुआ है। जिनके बारे में लेखक-लेखिकाओं को यह भी पता नहीं था कि इन पूजा-विधानों की विषयवस्तु क्या होनी चाहिए। इनकी वास्तविकता यह है कि ग्रंथों में कल्पद्रुम और सर्वतोभद्र पूजन के नाम पढ़कर जब सन् 1985-86 में पूज्य माताजी के मन में इन पूजा-विधानों को लिखने की इच्छा प्रगट हुई, तो लगभग 6 माह तक उन्होंने इनमें प्रस्तुत करने योग्य विषय-वस्तु का खूब मनोयोगपूर्वक चिन्तन किया, डायरी में दो-तीन प्रकार से संकेत लिख-लिखकर अन्ततोगत्वा निर्णय लिया कि कल्पद्रुम विधान में चौबीसों तीर्थंकर भगवन्तों के समवसरण की प्रमुखता से 24 पूजाओं में 2424 अर्घ्य देना है एवं सर्वतोभद्र विधान में 101 पूजाओं में 2000 अर्घ्यों के माध्यम से तीन लोक के समस्त चैत्य-चैत्यालयों का वर्णन समाविष्ट किया। ये दोनों विधान पूज्य माताजी की बहुत प्रभावक मौलिक काव्य कृति के रूप में क्रमशः सन् 1986-1987 में हम लोगों के समक्ष आये हैं और सम्पूर्ण समाज में देखते ही देखते इनका खूब चमत्कार फैला, पंचकल्याणकों से भी अधिक बड़े-बड़े स्तर पर पूरे देश में इनके आयोजन सम्पन्न हुए हैं तथा सन् 1997 में राजधानी दिल्ली के रिंग रोड पर सम्पन्न हुए एक साथ चौबीस

समवसरणों की रचना करके चौबीस कल्पद्रुम विधान तो अमिट इतिहास के रूप में ही प्रसिद्ध हुआ है।

इन सर्वांगीण विषय समन्वित विधानों को देखकर जिन लेखक-लेखिकाओं ने उनमें किंचित् मात्र परिवर्तन करके नये कल्पद्रुम और सर्वतोभद्र विधान गढ़ लिए हैं, उनको अवश्य ही इस विषय पर गहराई से चिन्तन करना चाहिए कि किसी की कृति में परिवर्तन करके अपने नाम से छापने पर निन्हव दोष के साथ-साथ नैतिक अपराध भी है। इस प्रकार की नकल की गई कृतियों में न तो वास्तविक अतिशय आता है और न ही वे कृतियाँ श्रद्धालुओं की सच्ची श्रद्धा का केन्द्र बन पाती हैं। यदि प्रतिभासम्पन्न लेखकों के मन में ऐसी कुछ नई रचना करने की बात आती है, तो कम से कम आधार ली गई कृति के रचनाकार यदि जीवित हैं, तो उनसे पूछकर मंत्रादि ग्रहण करने की आज्ञा अवश्य लेनी चाहिए तथा जिस प्रकार पूज्य ज्ञानमती माताजी ने इन्द्रध्वज विधान की काव्य प्रशस्ति में अत्यन्त उदारतापूर्वक पद्य देकर स्पष्ट कर दिया है कि–

''श्री विश्वभूषण योगी विरचित, संस्कृत विधान को मान्य किया।
उसको आधार बना करके, मैंने मौलिक कृति काव्य किया।।''

अर्थात् इसी प्रकार से अपनी प्रेरणास्रोत कृति का नाम लिखने में संकोच नहीं होना चाहिए, लेखक की ईमानदारी के साथ-साथ यह उनका नैतिक कर्तव्य भी है।

हम लोगों के समक्ष जब ऐसी कृतियाँ कुछ लोग आलोचना के साथ लाकर प्रस्तुत करते हैं, तो किंचित् खेद के साथ यही मुँह से निकलता है कि भैय्या! आज कलियुग है। किसी अच्छे माल को बाजार में ज्यादा बिकते देखकर जैसे कुछ लोग वैसा ही डुप्लीकेट माल बनाकर बेचने लगते हैं, वैसे ही अब साहित्य की डुप्लीकेसी हो रही है। मैं सोचती हूँ कि इन लेखक-लेखिकाओं ने पूज्य माताजी से जरा भी विमर्श किया होता, तो वे उन्हें अन्य और अच्छे-अच्छे विधान या ग्रंथ लिखने की प्रेरणा देकर योग्य दिशा-निर्देश भी प्रदान करतीं। जैसे – उन्होंने अपनी शिष्या आर्यिका जिनमती जी को प्रमेयकमल मार्तण्ड पढ़ाकर उन्हीं को उसका हिन्दी अनुवाद करने की प्रेरणा दी, आर्यिका आदिमती जी को गोम्मटसार कर्मकाण्ड के हिन्दी अनुवाद की प्रेरणा दी, आर्यिका विशुद्धमती जी को त्रिलोकसार के अनुवाद की प्रेरणा दी, आर्यिका अभयमती जी से धर्मचक्र विधान बनवाया और मुझे भी तीर्थंकर जन्मभूमि विधान, षट्खण्डागम के अनुवाद की प्रेरणा भी उन्होंने ही प्रदान की है। उन्हें तो

बड़ा अच्छा लगता है कि कम से कम वर्तमान के कुछ युवा साधु-साध्वियों में कुछ करने की क्षमता तो प्रगट हुई है। तो उसका सदुपयोग करते हुए कभी अपने से बड़ों के कार्यकलापों में पंथवाद आदि का हठाग्रह करके प्रतियोगी भाव नहीं पनपने देना चाहिए।

यह तो मैंने मात्र दो पूजा-विधानों के बारे में बताया कि माताजी की पूर्ण मौलिक वास्तविक कृतियों को तोड़-मरोड़ कर नये रूप में कुछ लोगों ने अपने नाम से प्रस्तुत किया है, इसी प्रकार कुछ छोटे विधान, पूजा आदि को अन्य लेखकों ने भी बदल-बदल कर छपाये हैं, जो समय-समय पर देखा गया है। इसके अतिरिक्त एक पुस्तक के सम्पादक ने ज्ञानमती माताजी द्वारा सन् 1965 में रचित कन्नड़ भाषा की बारह भावना में सबसे अन्त की उनके नाम वाली पंक्ति को निकालकर उसे छपा दिया है, जबकि पूरे दक्षिण भारत में आबाल-वृद्ध उस बारहभावना को रोज पढ़कर ज्ञानमती अम्मा को बड़ी श्रद्धापूर्वक नमन करते हैं।

ऐसे ही मेरे द्वारा सन् 1976 में (ब्र. माधुरी की अवस्था में) रचित ज्ञानमती माताजी की पूजन को एक ब्रह्मचारिणी बहन ने पूरी ज्यों की त्यों (केवल माता-पिता के नाम बदलकर एवं मेरे नाम की जगह अपना नाम देकर) एक स्व. आर्यिका सुज्ञानमती की पूजा के नाम से छाप लिया है। मेरे द्वारा शक्तिपूर्वक उन्हें कहे जाने पर उन्होंने अपनी गलती भी स्वीकार की। मेरी भक्तामर विधान पूजन की जयमाला में एक पण्डित नामधारी नेमीचंद नामक लड़के ने मेरा नाम हटाकर वहाँ अपना नाम देकर पूरी ज्यों की त्यों भक्तामर पूजन प्रकाशित कर लिया। ये सब अशोभनीय क्रियाएँ एक अच्छे विद्वान, लेखक के लिए कदापि उचित नहीं हैं, अतः इस विषय पर उन्हें गहराई से चिन्तन करके अपनी प्रौढ़ता का परिचय प्रदान करना चाहिए।

➢गणिनी माता ज्ञानमती, इतिहास बनीं धरती का,
दीक्षा स्वर्ण महोत्सव उनका करेगी अब धरती माँ–

अब मैं पाठकों की दृष्टि आकृष्ट करना चाहती हूँ माताजी की दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव पर। बंधुओं! जब सारी दुनिया अपने सांसारिक जीवन के 50 वर्ष पूर्ण होने पर बड़ी धूमधाम से गोल्डन जुबली के रूप में उत्सव मनाती है, जहाँ राग की ही प्रधानता होती है तथा आगामी भवों के लिए राग का ही बंध होता है, वहाँ भला त्याग-संयम के इतने दीर्घकालीन जीवन की कल्पना भी कौन कर सकता है? किन्तु यही परम सत्य आज के कलियुग में भी विद्यमान है और वह पाया जाता है भगवान महावीर के शासनानुवर्ती दिगम्बर

जैन साधु-साध्वियों की कठोर तपस्या में।

इसी शृंखला में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने बीसवीं शताब्दी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी आर्यिका बनकर अपने दीक्षाकाल के 50 वर्ष पूर्ण किए हैं, यह इक्कीसवीं सदी की जैनसमाज के लिए अत्यधिक गौरवपूर्ण विषय है। जहाँ हमने अपने नेत्रों से अब तक इतने वरिष्ठ दीक्षित संतों को नहीं देखा है, वहीं भावी पीढ़ी के लिए एक साध्वी की आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती (14 अप्रैल से 16 अप्रैल तक) मनाने का अभूतपूर्व अवसर निश्चितरूप से ऐतिहासिक स्थाई स्तंभ का कार्य है। वास्तव में ऐसे ऐतिहासिक व्यक्तित्व के लिए कुछ भी कहना गंगा का जल गंगा को ही अर्पित करने के सदृश है अतः उन संस्कृतिसंरक्षिका, तीर्थोद्धारिका माताजी के श्रीचरणों में बारम्बार नमन करते हुए उनके स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन की मंगल कामना करती हूँ–

त्याग तपस्या की मूरत तुम, ज्ञान-ध्यान की प्रतिमा हो।
कलियुग की सुकुमार तपस्वी, नारी की गुण गरिमा हो।।
ब्राह्मी माँ के पद चिन्हों पर, चलकर लुटा रहीं चन्दन।
गणिनी माता ज्ञानमती जी, स्वीकारो मेरा वंदन।।

➢क्या आप जानते हैं?–

1. सुमेरु पर्वत तीनों लोकों में सबसे ऊँचा और पवित्र पर्वत है।

2. 40 करोड़ मील ऊँचे इसी सुमेरु पर्वत की पाण्डुक शिला पर तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है।

3. हस्तिनापुर तीर्थ पर जम्बूद्वीप रचना के मध्य यह सुमेरुपर्वत 101 फुट ऊँचा बना है, जिसमें 136 सीढ़ियाँ चढ़कर 16 चैत्यालयों के दर्शन होते हैं।

4. जम्बूद्वीप जैन भूगोल को दर्शाने वाली ब्रह्माण्ड की वह रचना है जिसके एक छोटे से भाग आर्यखण्ड में आज का पूरा विश्व विद्यमान है।

5. सम्पूर्ण भारत एवं विश्व में मंदिर के साथ समवसरण, नन्दीश्वर द्वीप, कैलाशपर्वत आदि रचनाएं तो अनेकों हैं किन्तु "जम्बूद्वीप रचना" मात्र एक हस्तिनापुर में ही है, इसीलिए उसका दर्शन करने देश-विदेश के पर्यटक हस्तिनापुर जाते हैं।

6. हस्तिनापुर तीर्थ यद्यपि भगवान शांति, कुंथु, अरहनाथ के जन्म से पावन, महाभारत के कथानक से प्रसिद्ध ऐतिहासिक तीर्थ तो प्राचीन काल से है, फिर भी गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से दर्शनीय स्थल जम्बूद्वीप के निर्माण के पश्चात् यात्रियों के साथ-साथ उत्तरप्रदेश पर्यटन विभाग के द्वारा

''धरती का स्वर्ग'' माना गया है।

7. जम्बूद्वीप स्थल पर श्वेत कमल मंदिर में अवगाहना प्रमाण भगवान महावीर की प्रतिमा विराजमान है जो बड़ी चमत्कारिक है। उन कल्पवृक्ष भगवान महावीर के समक्ष कुछ भी भावना भाने से मनवाञ्छित फल की प्राप्ति होती है।

8. जम्बूद्वीप स्थल पर बिल्कुल नये ढंग का एक ध्यान मंदिर है जहाँ भक्तगण ''ह्रीँ'' मंत्र की प्रतिमा के समक्ष मौनपूर्वक कुछ देर बैठकर आत्मशांति का अनुभव करते हैं।

9. पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी बीसवीं शताब्दी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी आर्यिका हैं, जिन्होंने 18 वर्ष की उम्र में सन् 1952 में गृहत्याग कर साध्वी परम्परा में ब्राह्मी एवं चन्दनबाला के समान दीक्षाधारण कर कुमारी कन्याओं के त्यागमार्ग का शुभारंभ किया।

11. श्री ज्ञानमती माताजी ने जैन न्याय के सर्वोच्च एवं क्लिष्टतम ग्रंथ ''अष्टसहस्री'' का हिन्दी अनुवाद करके न्याय दर्शन के उद्भट विद्वानों को भी आश्चर्यचकित कर दिया है।

12. श्री ज्ञानमती माताजी ने ''कातंत्ररूपमाला'' नामक संस्कृत व्याकरण ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद करके दिगम्बर जैन चतुर्विध संघ परम्परा को संस्कृत भाषा के अध्ययन का अपूर्व अवसर प्रदान किया है।

13. पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी ने नियमसार ग्रंथ की संस्कृत एवं हिन्दी भाषा में सरल टीका लिखकर जहाँ आचार्य अकलंकदेव, वीरसेन स्वामी एवं जयसेनाचार्य आदि का स्मरण कराया है, वहीं अध्यात्म प्रेमियों के लिए रत्नत्रय धारण करने हेतु सच्चे ज्ञान का मार्ग भी प्रशस्त किया है।

14. पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी ने इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीन लोक मण्डल विधान आदि अनेक पूजा-विधानों की रचना करके पंचमकाल में भक्तों के लिए कर्म निर्जरा का प्रबल माध्यम प्रस्तुत कर दिया है।

15. श्री ज्ञानमती माताजी ने जैनधर्म के प्राचीनतम सिद्धान्त ग्रंथ ''षट्खण्डागम'' के सूत्रों पर ''सिद्धान्तचिंतामणि'' नामक सरल संस्कृत टीका लिखकर साधु जगत में कीर्तिमान् स्थापित किया है।

16. पूज्य माताजी ने 200 से अधिक ग्रंथ लिखकर प्रथम लेखिका साध्वी के रूप में नारी जाति का इतिहास परिवर्तित कर दिया है।

17. श्री ज्ञानमती माताजी के प्रचुर साहित्यिक अवदान से प्रभावित होकर अवध

विश्वविद्यालय फैजाबाद ने डी.लिट् की मानद उपाधि से उन्हें अलंकृत किया है।

18. तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों को विकसित करने के क्रम में हस्तिनापुर के पश्चात् प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव एवं अन्य 4 तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या को विकसित कर उसे 'ऋषभ जन्मभूमि' के रूप में विश्व के मानस पटल पर पूज्य माताजी ने ही अंकित किया है।

19. भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में मात्र 22 माह के अल्प समय में अत्यन्त भव्य 'नंद्यावर्त महल तीर्थ' का निर्माण कराने वाली पूज्य ज्ञानमती माताजी ही हैं।

20. 'तीर्थंकर जन्मभूमि विकास समिति' का गठन कराकर चौबीसों तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियों के विकास की प्रेरणा पूज्य ज्ञानमती माताजी ने ही प्रदान की है।

21. भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि-प्रयाग (इलाहाबाद) में 'तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षास्थली' का भव्य निर्माण कराकर पूज्य ज्ञानमती माताजी ने ही प्रयाग तीर्थ को विश्व के समक्ष जैन तीर्थ के रूप में स्थापित किया है।

22. सम्पूर्ण देश में जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति, भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार एवं भगवान महावीर ज्योति रथों के प्रवर्तन द्वारा 3-3 बार जैनधर्म का डंका बजाने वाली पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ही हैं।

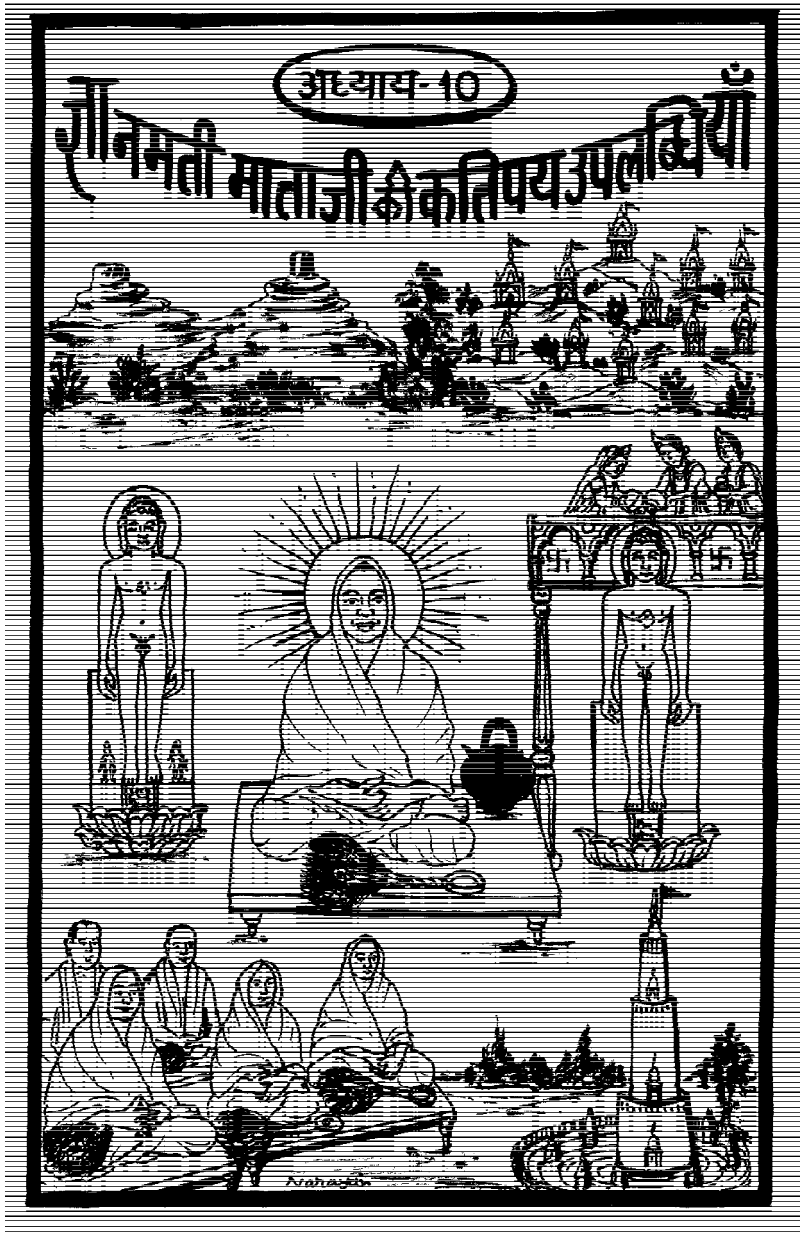
23. 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की जन्मभूमि-वाराणसी से उद्घाटित 'भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव वर्ष' पूज्य ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से ही सारे देश में सफलतापूर्वक मनाया गया है।

24. पूज्य माताजी की अपार प्रतिभा शक्ति की स्तुति करते हुए समाज ने समय-समय पर उन्हें न्याय प्रभाकर, चारित्रचन्द्रिका, युगप्रवर्तिका, गणिनीप्रमुख, राष्ट्रगौरव, वाग्देवी, तीर्थोद्धारिका इत्यादि कितनी ही उपाधियों से सम्मानित करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया है।



अध्याय-10

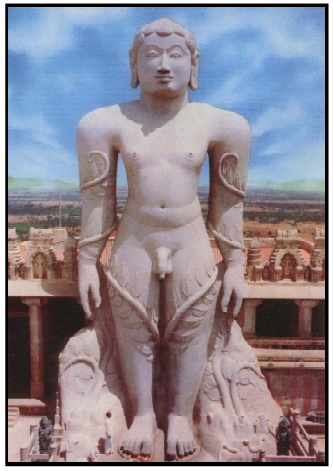
श्री निर्मला माताजी की कतिपय उपलब्धियाँ



अध्याय-10

ज्ञानमती माताजी की कतिपय उपलब्धियाँ

➢गोम्मटेश्वर के चरणों में ध्यान से प्रगट हुई जम्बूद्वीप रचना–



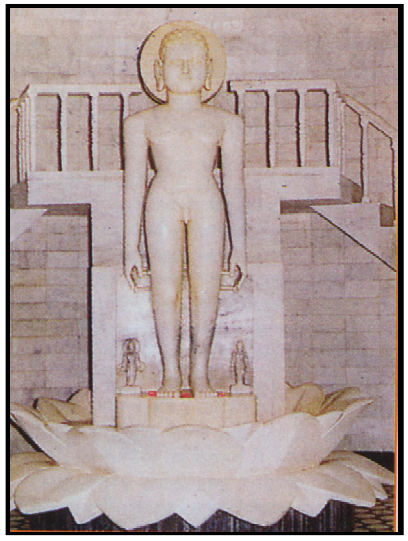
सन् 1965 की घटना है पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने आर्यिका संघ सहित श्रवणबेलगोला में चातुर्मास किया। उस समय 15 दिनों तक पर्वत पर ही रहकर उन्होंने भगवान बाहुबली के श्रीचरणों में पिण्डस्थ ध्यान किया।

एकाग्रतापूर्वक किये गये ध्यान का प्रतिफल यह निकला कि एक दिन ध्यान में माताजी को मध्यलोक की तेरह द्वीप रचना के अकृत्रिम चैत्यालयों के दर्शन हुए और एक दिव्य प्रकाश उन्हें दृष्टिगत हुआ। हर्षातिरेक से उन चैत्यालयों का बार-बार स्मरण करते हुए पर्वत से नीचे आकर उन्होंने तिलोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार ग्रंथ निकालकर मध्यलोक के अकृत्रिम चैत्यालयों की गणना देखी और उसमें वैसा ही वर्णन देखकर बहुत खुश हुईं, पुनः माताजी ने अपनी शिष्याओं को सारा वृत्तान्त बताकर उन्हें अपने उपदेश द्वारा मध्यलोक के चैत्यालयों के दर्शन करवाए।

पुनः जब जनसाधारण के समक्ष माताजी ने इसका वर्णन किया तब लोगों ने इसे पृथ्वी पर साकार करने की प्रार्थना की और सोलापुर, सिद्धवरकूट, महावीरजी, दिल्ली आदि कई स्थानों पर इस रचना को साकार रूप देने की लोगों ने बहुत कोशिश की परन्तु ध्यान का साकार रूप जम्बूद्वीप रचना उसी हस्तिनापुर तीर्थ पर सन् 1974 में साकार रूप लेने को उद्यत हो उठी, जहाँ करोड़ों वर्ष पूर्व राजा श्रेयांस ने स्वप्न में सुमेरु पर्वत को देखा था और उसके प्रतिफल में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव को प्रथम आहार देने का (इक्षुरस का) पुण्य प्राप्त किया था। आज देश-विदेश से हजारों-लाखों पर्यटक आकर इस वंदनीय एवं दर्शनीय स्थल जम्बूद्वीप का आनन्द लेते हैं।

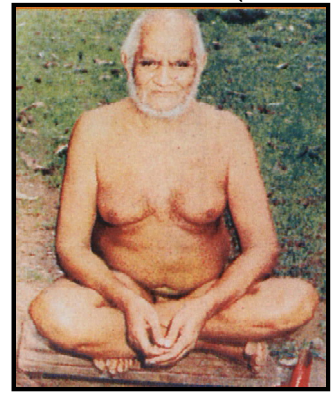


➢सुदर्शन मेरु के शिलान्यास से प्रारंभ हुआ हस्तिनापुर का उद्धार–



ईसवी सन् 1972 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का विहार राजस्थान से राजधानी दिल्ली की ओर हुआ और पहाड़ी धीरज के उस प्रथम चातुर्मास के मध्य ''दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान'' की स्थापना की गई। पुनः सन् 1974 में चातुर्मास से पूर्व माताजी अपने संघ सहित दिल्ली से हस्तिनापुर पधारीं, तब यह तीर्थ उन्हें पसंद आया। यहीं पर संघस्थ ब्र. मोतीचंद जी एवं सहयोगी महानुभावों के सहयोग से एक छोटी सी भूमि का चयन किया गया और माताजी ने वहाँ सुमेरु पर्वत का शिलान्यास कराया। पुनः दिल्ली पहुँचकर मंगल चातुर्मास के अनन्तर दिसम्बर सन् 1974 में माताजी ने अपने आर्यिका संघ सहित हस्तिनापुर में पुनः पदार्पण किया। पूज्य आचार्यश्री धर्मसागर महाराज भी अपने चतुर्विध संघ सहित हस्तिनापुर पधारे, जहाँ उनके संघस्थ मुनिराज श्री वृषभसागर महाराज ने विधिवत् सल्लेखनापूर्वक समाधिमरण का सौभाग्य प्राप्त किया।

इस प्रकार सन् 1974 से देखते-देखते ही हस्तिनापुर तीर्थ की काया पलट होने लगी। क्षेत्र पर जहाँ एक 250 वर्ष पुराने मंदिर के अतिरिक्त कुछ नहीं था, वहीं माताजी के पधारने के बाद अनेक जिनमंदिरों के मनोहारी दृश्य उपस्थित हो गये तथा नशिया मार्ग पर क्रय की गई भूमि जहाँ जम्बूद्वीप रचना बननी थी, उस घने जंगल जैसे स्थान पर छोटा सा 12×12 फुट का कमरा बनाकर भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण 7 हाथ खड्गासन प्रतिमा विराजमान की गई, जिसकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा फरवरी सन् 1975 में पूज्य आचार्य श्री धर्मसागर महाराज एवं श्री ज्ञानमती माताजी के संघ सानिध्य में सम्पन्न हुई।



पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के शब्दों में-ये कल्पवृक्ष महावीर स्वामी हैं, इन्हीं प्रभु की कृपा प्रसाद से ही जंगल में मंगल होकर द्रुतगति से सम्पूर्ण रचना मूर्तरूप ले सकी है। छोटे कमरे से बड़े मंदिर रूप में परिवर्तित श्वेत ''कमल मंदिर'' आज प्रत्येक पर्यटक का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करता है।

➢करोड़ों वर्ष पूर्व स्वप्न में देखा हुआ सुमेरुपर्वत साकार हुआ हस्तिनापुर में–

कौन जानता था कि जिस हस्तिनापुर नगरी में करोड़ों वर्ष पूर्व राजा श्रेयांस ने स्वप्न में सुमेरु पर्वत देखकर उसके फलस्वरूप भगवान ऋषभदेव को प्रथम पारणा के रूप में इक्षुरस का आहार दिया था, उसी हस्तिनापुरी में करोड़ों वर्ष पश्चात् साक्षात् सुमेरु पर्वत का निर्माण होगा? किन्तु उस स्वप्न को साकार किया पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने सन् 1974 में संघ सहित पधारकर –

जम्बूद्वीप रचना के प्रथम चरण के रूप में बीचों-बीच में सुदर्शन मेरु पर्वत का निर्माण पूर्ण होकर गुलाबी संगमरमर पत्थर लगने तक इसमें लगभग 4 वर्ष लग गये।

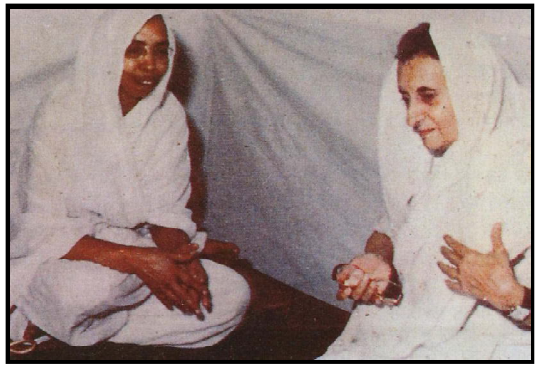
आखिरकार 29 अप्रैल से 3 अप्रैल 1979 की वह शुभ घड़ी आ ही गई जब 101 फुट ऊँचे सुमेरुपर्वत निर्माण की पूर्णता पर ''श्री सुदर्शन मेरु जिनबिंब पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव'' का भव्य आयोजन संस्थान के द्वारा किया गया। ऐसा अपूर्व आयोजन एवं गजरथ महोत्सव उत्तर प्रांत में प्रथम बार हुआ था। इस सुअवसर पर पूज्य माताजी ससंघ दिल्ली से विहार कर जम्बूद्वीप स्थल पर पधारीं और उसी जंगल जैसे स्थान पर ही महावीर मंदिर के पास बनीं फूस की झोपड़ी में ठहरीं। इस प्रथम प्रतिष्ठा महोत्सव में आचार्यकल्प श्री श्रुतसागर जी महाराज संघ सहित पधारे। उत्तरप्रदेश शासन के विद्युत मंत्री श्री रेवती रमण जी ने इस सुमेरु पर्वत का उद्घाटन कर स्वयं को गौरवान्वित किया था। पूज्य आर्यिका श्री रत्नमती माताजी (ज्ञानमती माताजी की जन्मदात्री माँ) अतीव प्रसन्नता के साथ इस सुमेरु पर्वत का दर्शन करके अकृत्रिम चैत्यालयों की वंदना जैसी अनुभूति किया करती थीं। इसी प्रतिष्ठामहोत्सव के मंगल अवसर पर जैन-जैनेतर सभी के आकर्षण के लिए सुन्दर-सुन्दर झाँकियाँ बनवाईगई थीं, जो आज भी ''ज्ञानमती कला मंदिरम्'' के नाम से आगन्तुक यात्रियों को हस्तिनापुर का इतिहास बताती हैं। उसी समय ''आचार्य श्री वीरसागर संस्कृत विद्यापीठ'' की स्थापना भी की गई थी। उस विद्यापीठ में शिक्षा प्राप्त कर अनेक विद्यार्थी मुनि, भट्टारक, ब्रह्मचारी, प्रतिष्ठाचार्य आदि रूप में देश भर के अन्दर व्यापक धर्मप्रभावना कर रहे हैं। इस प्रकार जम्बूद्वीप स्थल पर यह प्रथम पंचकल्याणक स्वयं में अभूतपूर्व था जिसमें सुमेरु पर्वत में 16 जिनप्रतिमाएं विराजमान की गईं। इस पर्वत के दर्शन हेतु लोग 136 सीढ़ियाँ चढ़ते हैं और खूब प्रसन्न होकर सातिशय पुण्य का संचय करते हैं।





➢जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति रथ का प्रवर्तन –

सन् 1972 में ही जब जम्बूद्वीप का सामान्य मॉडल बन रहा था उस समय से पूज्य माताजी के मन में यह भावना थी कि इस मॉडल को आकर्षक बनाकर सारे भारत में



घुमाकर सबको जैन भूगोल का दिग्दर्शन कराने वाली जम्बूद्वीप रचना से परिचित कराया जाये। अतः उसकी रूपरेखा बनाकर पूज्य माताजी के ही संघ सानिध्य में 4 जून 1982 को दिल्ली के ऐतिहासिक लाल किला मैदान से भारत की प्रथम महिला प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति रथ का प्रवर्तन कराया गया। उस समय इन्दिरा जी पूज्य माताजी के पास आकर उनका स्नेहिल आशीर्वाद प्राप्त कर अति प्रसन्न हुईं और अनेक प्रकार के धार्मिक-राजनीतिक विषयों की चर्चा करके उन्हें जो सन्तुष्टि प्राप्त हुई वह वास्तव में अनिर्वचनीय थी। उन्होंने ज्योतिरथ पर स्वस्तिक बनाकर प्रवर्तन प्रारंभ करके अपने वक्तव्य में रथभ्रमण की उपयोगिता को बताते हुए सभी देशवासियों को इससे व्यसनमुक्ति की शिक्षा लेने हेतु प्रेरणा प्रदान की।

जैनागम में वर्णित भूगोल एवं खगोल के विषय के अध्ययन, अनुसंधान की प्रक्रिया को गतिशील बनाने के उद्देश्य से प्रवर्तित जम्बूद्वीप के इस रथ ने दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, आसाम, बंगाल, बिहार, उड़ीसा, उत्तरप्रदेश आदि सम्पूर्ण भारत के कोने-कोने में जाकर विशेष प्रभावनापूर्वक सभी में ज्ञान की ज्योति जलाई पुनः इसी जम्बूद्वीप प्रतिष्ठापना महोत्सव के मध्य 28 अप्रैल 1985 को अपने 1045 दिन के भ्रमण के पश्चात् 'ज्ञानज्योति रथ' का हस्तिनापुर में मंगल पदार्पण हुआ।



➢जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति सेमिनार का उद्घाटन किया श्री राजीव गाँधी ने–



जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति रथ प्रवर्तन के पश्चात् पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का ससंघ चातुर्मास चूँकि दिल्ली में हुआ था इसलिए शरदपूर्णिमा के शुभ अवसर पर दिल्ली में ''जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति सेमिनार'' का एक शैक्षणिक कार्यक्रम राजधानी में आयोजित किया गया, जिसका उद्घाटन दिल्ली के फिक्की ऑडिटोरियम में विशाल समारोह के साथ सम्पन्न हुआ।

31 अक्टूबर 1982 को सांसद श्री राजीव गांधी ने पधारकर सेमिनार का उद्घाटनकिया तथा पूज्य माताजी से राजसत्ता के उच्चतम पद को प्राप्त करने हेतु आशीर्वाद ग्रहण किया। पुनः अपनी माँ इन्दिरागांधी के पश्चात् भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री के रूप में प्रसिद्ध हुए हैं।

जैन भूगोल का ज्ञान कराने वाली यह संगोष्ठी सफलतापूर्वक सम्पन्न हुई, जिसमें मेरठ विश्वविद्यालय के कुलपति सहित देशभर के उच्चकोटि के अनेक विद्वान् (डॉ. पन्नालाल साहित्याचार्य, डॉ. लालबहादुर शास्त्री आदि) पधारे और अनेक गहन विषयों का ज्ञान पूज्य माताजी से प्राप्त किया।

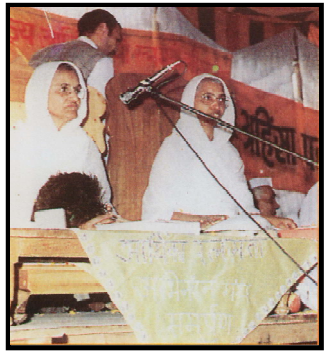


➢आर्यिका श्री रत्नमती माताजी को अभिनंदन ग्रंथ समर्पण–

जैन समाज के अनेक मूर्धन्य विद्वानों ने एक ऐतिहासिक निर्णय लेकर वास्तवमें अपनी सूझबूझ का परिचय दिया सन् 1983 में, जब जम्बूद्वीप की प्रेरणास्रोत पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की जन्मदात्री माँ पूज्य आर्यिका श्री रत्नमती माताजी के करकमलोंमें नवम्बर 1983 में एक अभिनंदन ग्रंथ भेंट कर देश को उनके त्यागमयी विराट व्यक्तित्व से परिचित कराया। वैसे तो प्रत्येक महापुरुष को जन्म देने वाले माता-पिता का नाम इतिहास के पन्नों पर लिखने योग्य रहता है किन्तु जिस माँ ने ज्ञानमती माताजी जैसी दिव्य विभूति के साथ-साथ 13 संतानों को जन्म देकर गृहस्थधर्म के कर्तव्य निर्वाह के पश्चात् स्वयं भी नारी जीवन की सारभूत आर्यिका दीक्षा को धारण किया, वे तो हम सबके लिए युग-युगों तक परम पूज्य ही बन गईं।

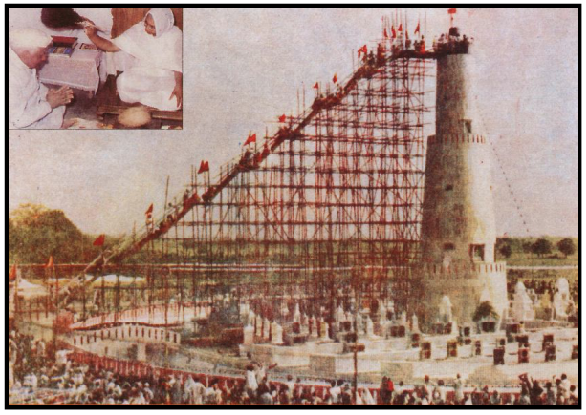
सन् 1914 में अवधप्रान्त के महमूदाबाद कस्बे में जन्मी कन्या मोहिनी ने सन् 1932 में दाम्पत्य जीवन में प्रवेश कर 38 वर्षों तक गृहस्थ धर्म का पालन कर अपनी ही पुत्री मैना अर्थात् आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1971 में अजमेर (राज.) में परम पूज्य आचार्य श्री धर्मसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा धारण कर 'रत्नमती' नाम प्राप्त किया था। अत्यंत निस्पृह एवं वैरागी व्यक्तित्व की धनी आर्यिका रत्नमती माताजी ने 13 वर्ष तक अपनी निर्दोष आर्यिका चर्या का पालन करते हुए जम्बूद्वीप रचना निर्माण को मूल से चूल तक बनते हुए देखा और वे सुमेरु पर्वत का ध्यान करके परम प्रसन्न होती थीं।

हस्तिनापुर के जंगल में भीषण सर्दी-गर्मी को सहन करके भी वे सदैव यही इच्छाप्रगट करती थीं कि भगवान शांतिनाथ की इस पावन जन्मभूमि पर ही मेरी समाधि का संयोग प्राप्त हो। उनकी भावना सफल हुई और पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी के चरण सानिध्य में तत्त्व ज्ञानभेद विज्ञान का सम्बोधन प्राप्त करती हुई उस महान आत्मा ने 15 जनवरी 1985 को अपने जीवन मंदिर पर स्वर्ण कलश के रूप में उत्तम समाधिमरण को प्राप्त कर परम लक्ष्य की सिद्धि कर ली। जिसने उन रत्नमती माताजी के दर्शन प्रत्यक्ष में किये हैं उन्हें अवश्य उनकी महानता का ज्ञान है। उनकी मन्द मुस्कानयुक्त आकर्षक मुद्रा, विरागी छवि, ख्याति-लाभ-पूजा की भावनाओं से दूर-दूर तक भीअपरिचित रहने वाली उस माता का मौन व्यक्तित्व जम्बूद्वीप के कण-कण में विद्यमान है तथा यही संदेश प्रदान कर रहा है– ''सत् नारी का बलिदान सदा, इस युग में याद किया जाता''।





➢अकृत्रिम रचना का रूप दिखाती जम्बूद्वीप रचना धरती पर साकार हुई (जम्बूद्वीप जिनबिंब प्रतिष्ठापना महोत्सव-सन् 1985)–



31 जनवरी 1980 को जम्बूद्वीप रचना के द्वितीय चरण का शिलान्यास विशाल समारोहपूर्वक किया गया। इस अवसर पर साहू श्री श्रेयांसप्रसाद जी एवं साहू श्री अशोक जी एवं श्रीमती इन्दू जैन ने पधारकर हर्ष का अनुभव किया। उस समय पूज्य माताजी राजधानी दिल्ली में विराजमान थीं। 9 अप्रैल 1981 को माताजी का संघ सहित मंगल पदार्पण हस्तिनापुर में हुआ और 10 मई 1981 को 101 फुट ऊँचे सुमेरु पर्वत का द्वितीय प्रतिष्ठापना दिवस मनाया गया।

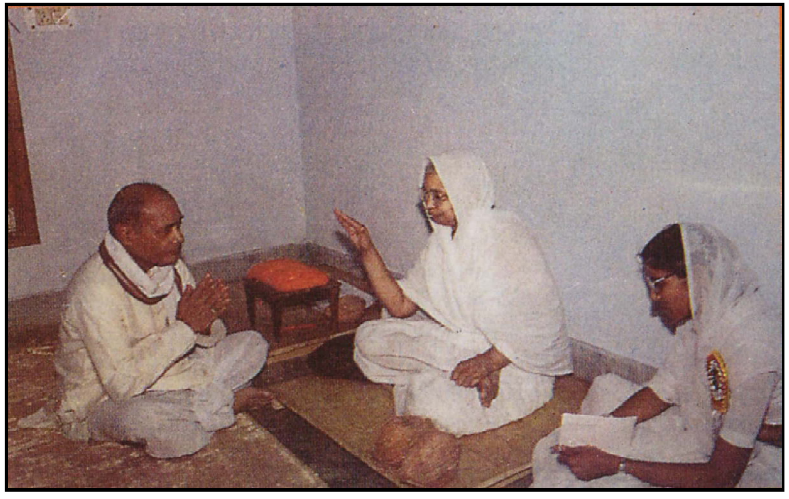
इसके पश्चात् पूज्य माताजी की सतत प्रेरणा से जैन भूगोल का दिग्दर्शन कराने वाली यह रचना धीरे-धीरे साकार रूप लेने लगी अन्ततः वह शुभ दिवस भी आ गया जब 28 अप्रैल से 2 मई 1985, वैशाख शुक्ला 8 से 12 तक ''जम्बूद्वीप जिनबिंब प्रतिष्ठापना महोत्सव'' का राष्ट्रीय स्तर पर आयोजन किया गया, उस समय सम्पूर्ण भारतवर्ष में इसका व्यापक प्रचार-प्रसार किया गया था अतः पूरे देश से लगभग एक लाख नर-नारी इस प्रतिष्ठा महोत्सव में पधारे थे। इसी प्रतिष्ठा महोत्सव के मध्य त्रिदिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार का भी आयोजन रखा गया। उस समय इस 101 फुट उत्तुंग, सुमेरु पर्वत के चारों ओर हेलिकॉप्टर द्वारा पुष्पवृष्टि भी हुई। इस प्रतिष्ठा महोत्सव में जहाँ आचार्य श्री धर्मसागर महाराज के संघस्थ साधुओं व अनेक भट्टारकों ने अपना सानिध्य प्रदान किया, वहीं जम्बूद्वीप का उद्घाटन करने उ.प्र. के मुख्यमंत्री श्री नारायणदत्त तिवारी एवं समय-समय पर उ.प्र. के आबकारी मंत्री श्री वासुदेव सिंह, राज्यसभा सांसद श्री जे.के. जैन, केन्द्रीय रक्षामंत्री श्री पी.वी. नरसिम्हा राव आदि नेतागण, अनेक कुलाधिपति, प्रोफेसर एवं कई प्रशासनिक अधिकारियों ने महोत्सव को सक्रियतापूर्वक सम्पन्न करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभूत किया था।

➢ज्ञानज्योति की अखण्ड स्थापना पी.वी. नरसिम्हाराव ने की हस्तिनापुर में–

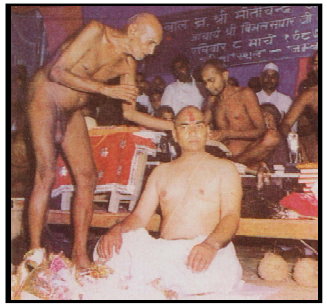


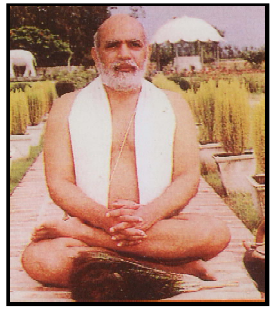
राजधानी दिल्ली से प्रवर्तित जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति रथ का 1045 दिन तक भारत भ्रमण के पश्चात् जब 28 अप्रैल 1985 को हस्तिनापुर में आगमन के साथ प्रवर्तन का समापन हुआ तो पूज्य ज्ञानमती माताजी के संघ सानिध्य में विशाल शोभायात्रा निकाली गई।

जम्बूद्वीप जिनबिंब प्रतिष्ठापना महोत्सव के साथ-साथ ज्योति यात्रा समापन के इस अवसर पर केन्द्रीय रक्षामंत्री श्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने हस्तिनापुर पधारकर जम्बूद्वीप रचना के ठीक सामने निर्मित किये गये एक कमलाकार भवन में ज्ञानज्योति की अखण्ड स्थापना करके पूज्य माताजी का मंगल आशीर्वाद प्राप्त किया। इस ज्ञान ज्योति के माध्यम से हस्तिनापुर में आने वाले सभी तीर्थयात्रियों को अपने शहर में किये गये ज्योतिरथ के स्वागत की स्मृतियाँ ताजी हो जाती हैं और वे ज्योति भवन में विराजमान सरस्वती माता के दर्शन कर सम्यग्ज्ञान का लाभ प्राप्त करते हैं।



➢संस्थान के मंत्री मोतीचंद जी बने मोतीसागर (सन् 1987)–





सन् 1967 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का ससंघ चातुर्मास सनावद (मध्यप्रदेश) में हुआ। उस समय वहाँ एक श्रावक मोतीचंद जैन सर्राफ के बारे में ज्ञात हुआ कि ये बालब्रह्मचारी हैं। माताजी ने उनकी धार्मिक और सामाजिक कार्यक्षमता देखकर उन्हें संघ में रहने की प्रेरणा प्रदान की। तदनुसार उनकी प्रबल प्रेरणा के आधार पर ब्रह्मचारी मोतीचंद जी संघ में रहकर प्रमुखरूप से जम्बूद्वीप की निर्माण योजना को मूर्तरूप प्रदान करने लगे पुनः हस्तिनापुर मेंजम्बूद्वीप रचना निर्माण पूर्ण हो जाने के बाद उन्होंने पूज्य माताजी के समक्ष अपनी दीक्षा का भाव प्रकटकिया।

मोतीचंद जी की इच्छानुसार पूज्य माताजी ने संघस्थ ब्र. रवीन्द्र जी को परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर महाराज को हस्तिनापुर पधारने का निवेदन करने भेजा और पुण्ययोग से आचार्यश्री ने ससंघ हस्तिनापुर पधारकर 8 मार्च 1987, फाल्गुन शु. नवमी को भगवान नेमिनाथ-पार्श्वनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के मध्य व्यापक समारोहपूर्वक क्षुल्लक दीक्षा प्रदान कर मोतीचंद जी को "क्षुल्लक मोतीसागर" बनाया। दीक्षा के समय केन्द्रीय रेलमंत्री श्री माधवराव सिंधिया ने पधारकर आपको अभिनंदन पत्र भेंट किया तथा पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेकर उन्होंने अपने जीवन को धन्य माना।

ज्ञातव्य है कि मोतीसागर महाराज का जन्म सन् 1940 में सनावद के श्रेष्ठी श्री अमोलकचंद जैन की धर्मपत्नी श्रीमती रूपाबाई की कुक्षि से आश्विन कृ. चतुर्दशी को हुआ। सन् 1958 में ब्रह्मचर्यव्रत लेने के बाद सन् 1967 से माताजी के संघ में प्रवेश कर गुरु आज्ञा को अपने जीवन में प्राथमिकता देते हुए भावी पीढ़ी के लिए आपने समर्पण का अपूर्व आदर्श प्रस्तुत किया है। 2 अगस्त 1987 को श्रावण शु. सप्तमी के दिन पूज्य माताजी ने आपको जम्बूद्वीप धर्मपीठ के "पीठाधीश" पद पर अभिषिक्त किया। तब से लेकर आज तक मोतीसागर महाराज अपने पद के योग्य संयम का पालन करते हुए संस्थान के समस्त क्रियाकलापों में दिशानिर्देश प्रदान करते हैं।



➢इसी तीर्थ ने माधुरी को बनाया चन्दनामती (सन् 1989)–



18 मई 1958, ज्येष्ठ कृ. अमावस को जन्म लेकर पूर्व जन्मों के पुण्य, माँ से जन्मघूंटी के रूप में प्राप्त धार्मिक संस्कार एवं सन् 1969 में पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी के मिले अल्प समय वाले सानिध्य ने मुझे भी इस कठोर त्याग पथ पर चलने हेतु प्रेरित किया, जिसके फलस्वरूप सन् 1971 में अजमेर (राज.) में भादों शु. दशमी (सुगंध दशमी) के दिन मैंने पूज्य माताजी से आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण कर गुरुमुख से धार्मिक अध्ययन प्रारंभ कर दिया। 13 वर्ष की लघु उम्र में मुझे अधिक तो कुछ ज्ञात नहीं था, किन्तु विवाह बंधन में न बंध कर गुरुचरणों में ही मैंने ब्रह्मचर्य व्रत का के फलस्वरूप धीरे-धीरे दो व्रतों को लेकर मेरे 18 वर्ष ज्ञानमती माताजी एवं आर्यिका श्री रत्नमती ज्ञानार्जन, वैयावृत्ति, संघ एवं त्रिलोक शोध संस्थान हुए।



जीवन समर्पित कर देना अभिप्राय समझा था, उसी प्रतिमा, सात प्रतिमा आदि पूज्य गणिनीप्रमुख श्री अपनी जन्मदात्री माँ पूज्य माताजी की छत्रछाया में व्यवस्था, धर्मप्रभावना के कार्यकलापों में व्यतीत



पुनः 13 अगस्त 1989, श्रावण शु. एकादशी के दिन हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने मुझे आर्यिका दीक्षा प्रदान कर "चंदनामती" बनाया। नारी जीवन के उत्कृष्ट त्याग को धारण करने के पश्चात् मानो नया जीवन ही प्राप्त हुआ हो, इसीलिए लगभग 16 हजार किमी. की पदयात्रा करके अनेक तीर्थों के दर्शन एवं उनके जीर्णोद्धार विकास में अपने समय का सदुपयोग करके परम प्रसन्नता का अनुभव होता है।

सन् 1974 से प्रारंभ हुए जम्बूद्वीप रचना निर्माण आदि को मैंने स्वयं अपने चर्मचक्षुओं से प्रतिपल देखा है और संस्थान के द्वारा संपादित होने वाले सभी कार्यों में अपने पद के योग्य यथाशक्ति योगदान करके अपने जीवन को धन्य माना है। भविष्य में भी इसी प्रकार रत्नत्रय की साधना करते हुए दीक्षित जीवन के चरमलक्ष्य रूप बोधि समाधि की प्राप्ति हो, यही भगवान शांतिनाथ के श्रीचरणों में प्रार्थना है।

➢जम्बूद्वीप महामहोत्सव-1990 (प्रथम महोत्सव)–



प्रत्येक कार्य के पीछे कारण तो छिपा ही होता है। अपने बोए गए बीज को उद्यान के रूप में फलित देखकर माली की प्रसन्नता का कुछ पार नहीं होता। उसी प्रकार से जम्बूद्वीप रचना जैसे धर्म उद्यान का बीजारोपण गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की सम्प्रेरणा सेसन् 1974 में हुआ जो सन् 1985 में फलित होकर सामने आया। अब उसे निरन्तर वृद्धिंगत करने हेतु पूज्य माताजी ने प्रति पाँच वर्ष में ''जम्बूद्वीप महामहोत्सव'' मनाने की प्रेरणा प्रदान की।

पिछले 15 वर्ष की इस कालावधि में यह शून्य अटवी नागरिक सुविधाओं से परिपूर्ण एवं जीवन्त हो उठी। उत्तरप्रदेश सरकार की ओर से जहाँ तीर्थक्षेत्र एवं जंगल में बनी नशिया तक पक्की सड़क बनाई गई, वहीं यातायात साधनों की सुविधा में दिल्ली, मेरठ आदि स्थानों से रोडवेज बसें जम्बूद्वीप तक आने लगीं। यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं अद्वितीय जम्बूद्वीप रचना के बारे में उत्तरप्रदेश के पर्यटन विभाग ने ''धरती का स्वर्ग'' कहते हुए इसे एक अनुपम कृति की संज्ञा प्रदान की है। वर्तमान में हस्तिनापुर की पहचान जम्बूद्वीप से हो रही है। 3 मई से 7 मई 1990 तक आयोजित इस प्रथम पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव में भारतवर्ष के कोने-कोने से प्रत्येक प्रांत के प्रतिनिधियों ने पधारकर जहाँ कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई वहीं राजकीय नेताओं में उ.प्र. के महामहिम राज्यपाल श्री वी. सत्यनारायण रेड्डी व भारत सरकार के केन्द्रीय उद्योग मंत्री श्री अजीत सिंह ने पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया। उस समय श्री अजीत सिंह जी ने अष्टमूलगुण प्रदर्शनी का उद्घाटन करके शाकाहार एवं अहिंसा का अपने जीवन में तथा जनता में उद्घोष भी किया था।

7 मई 1990 का दिन इतिहास के स्वर्ण दिवस के रूप में अंकित हो गया जब प्रातः 8 बजे से सुमेरु पर्वत की पांडुकशिला पर 1008 कलशों से प्रथम महामस्तकाभिषेक हुआ।

➢युगप्रवर्तिका का अभिवंदन (सन् 1992)–

सन् 1992 में हस्तिनापुर में चातुर्मास के मध्य शरदपूर्णिमा के दिन भारत की सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज एवं मनीषी विद्वानों ने मिलकर एक विशेष आयोजन करके माननीय श्री उत्तम भाई हरजी पटेल (केन्द्रीय मंत्री-भारत सरकार) द्वारा पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के करकमलों में वृहत्काय अभिवंदन ग्रंथ समर्पित कर उनके अनन्य उपकारों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित की तथा उसी समय इन्हें ''युगप्रवर्तिका'' की उपाधि से अलंकृत कर संसार को इनके दीक्षा से लेकर साहित्य सृजन तक के प्रथम कृतित्व से परिचित कराया। इसी शुभ अवसर पर अन्तर्राज्यीय चारित्र निर्माण संगोष्ठी का भी आयोजन किया गया।

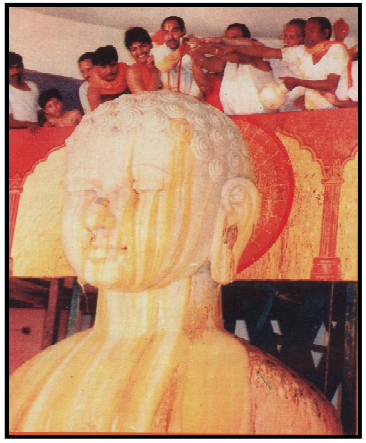
यद्यपि इस प्रकार के पर्वत से भी ऊँचे, सागर से भी गहरे और नदियों से लम्बे आदर्शों वाले महान व्यक्तियों का व्यक्तित्व शब्दों और ग्रंथों की सीमा में बांधना एक बालक द्वारा समुद्र की विशालता को मापने जैसा हास्यास्पद प्रयास ही कहा जायेगा, किन्तु समय-समय पर इसी प्रकार के कर्तव्यनिर्वाह को युग की उपलब्धि के रूप में स्वीकार किया जाता रहा है अतः इस अभिवंदन ग्रंथ समर्पण को भी दिगम्बर जैन समाज के द्वारा गुरु के प्रति प्रदर्शित उपचार विनय ही मानना चाहिए।

सरस्वती माता की सेवा के रूप में समाज को विपुल साहित्य का भण्डार प्रदान करने वाली तथा विलुप्त हो रही सांस्कृतिक धरोहरों को विश्व के समक्ष तीर्थोद्धार के रूप में प्रस्तुत करने वाली ज्ञानमती माताजी को अवध विश्वविद्यालय-फैजाबाद ने 5 फरवरी 1995 को डी.लिट्. की मानद् उपाधि देकर अपने विश्वविद्यालय को गौरवान्वित किया। इनके साक्षात् दर्शन करके जहाँ मानव इनकी महानता से परिचित होते हैं, वहीं इनकेसाहित्य का स्वाध्याय करने वाले इनके द्वारा रचित पूजा-विधानों को करने वाले, इनकी प्रेरणा से विकसित तीर्थों का दर्शन करने वाले वास्तव में अपने को कृतकृत्य और धन्य मानते हैं। ऐसी महान विभूति के चरणों में कोटि-कोटि नमन।





➢जम्बूद्वीप के ध्यान का प्रतिफल शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास–



23 अक्टूबर 1992 धनतेरस की प्रातःकालीन मंगल बेला में हस्तिनापुर तीर्थ के जम्बूद्वीप स्थल पर 'रत्नत्रय निलय' में सामायिक के अन्तर्गत ध्यान करती हुईं पूज्य माताजी को अयोध्या के भगवान ऋषभदेव का दर्शन एवं महामस्तकाभिषेक की अन्तर्प्रेरणा जागृत हुई। प्रातःकाल जब उन्होंने यह बात हम लोगों को बताई तब सभी ने माताजी के नाजुक स्वास्थ्य की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया उसके बाद 6 दिसम्बर 1992 की घटना के कारण अयोध्या विवाद पर भी अनेक लोगों ने चिन्ता व्यक्त की किन्तु दृढ़संकल्प की धनी माताजी ने भगवान की भक्ति में अचिन्त्य शक्ति मान कर 11 फरवरी 1993 (फाल्गुन कृ. 5) को अयोध्या के लिए विहार करने की तिथि निश्चित कर दी।

यह खबर सुन अवध प्रान्त में खुशियों की लहर दौड़ गई, माताजी की पूर्ण स्वीकृति मिलते ही प्रद्युम्न कुमार जी (छोटी शाह जैन) टिकैतनगर, संघपति बन गए। अन्ततोगत्वा पश्चिमी उत्तरप्रदेश के भक्तों द्वारा विहार के लिए मना करने के बाद भी दृढ़संकल्पी माताजी मंगल विहार कर अनेक नगरों में अहिंसा व विश्वशांति का उपदेश देते हुए 16 जून 1993 को भगवान आदिनाथ के श्रीचरणों में पहुँच गईं और वहाँ की जीर्ण-शीर्ण स्थिति देखकर अयोध्या तीर्थक्षेत्र कमेटी व अवध की जनता के अतीव आग्रह से 1993 का चातुर्मास वहीं हुआ फिर तो बीसवीं सदी के इस प्रथम चातुर्मास से परम पिता के चरणों में प्रथम दर्शन की भेंट स्वरूप माताजी ने तीन चौबीसी एवं समवसरणमंदिर प्रदान किया और उसमें विराजमान होने वाली जिनप्रतिमाओं की 19 फरवरी से 23 फरवरी 1994 तक आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अनंतर 24 फरवरी 1994 को प्रथम बार ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक का आयोजन हुआ फिर तो मात्र रामजन्मभूमि और बाबरी मस्जिद के विवाद से विख्यात यह तीर्थ 'ऋषभ जन्मभूमि' के नाम से भी विश्व के मानसपटल पर आ गया। तीर्थक्षेत्र के जीर्णोद्धार के साथ मार्ग में अनेक तीर्थ भी उनका सानिध्य पाकर पुनः चमक उठे। पुनः सन् 1994 में माताजी का 41 वर्षों के पश्चात् ऐतिहासिक चातुर्मास उनकी जन्मभूमि टिकैतनगर में हुआ। 27 माह के विहार के मध्य उ.प्र. के मुख्यमंत्री श्री मुलायम सिंह यादव आदि अनेक राजनेताओं व प्रशासनिक अधिकारियों ने भी अयोध्या में आकर माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया एवं शासन की ओर से अनेक भेंट अयोध्यावासियों को प्रदान की।



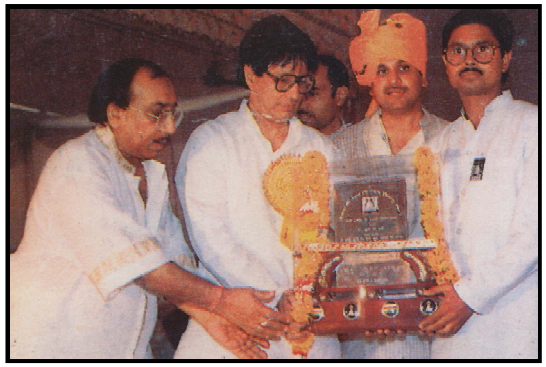
➢जम्बूद्वीप महामहोत्सव-1995 (द्वितीय महोत्सव)–



किसी भी कृति का निर्माण करना जितना महत्त्वपूर्ण होता है उससे कहीं अधिक महत्त्व उस कृति का समुचित रूप से संरक्षण एवं संवर्धन करता होता है। जम्बूद्वीप की शास्त्रोक्त रचना जहाँ बालसूर्य की तरह से हस्तिनापुर के क्षितिज पर उदित हुई वहीं दश वर्षों में युवा दिनकर की भाँति सारे विश्व में अपना आलोक फैलाकर उसने अपूर्व ख्याति प्राप्त कर ली। सन् 1990 के पश्चात् अक्टूबर 1995 में आयोजित द्वितीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव मणिकांचन संयोग की भाँति इसलिए और अधिक महिमामंडित हो गया क्योंकि रचना एवं महोत्सव की सम्प्रेरिका गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का जन्म व वैराग्यजयंती मनाने का सुअवसर भी हस्तिनापुर को प्राप्त हुआ था।

4 अक्टूबर से 8 अक्टूबर 1995 तक आयोजित इस द्वितीय और अद्वितीय महामहोत्सव में जहाँ 101 फुट उत्तुंग सुमेरु पर्वत की पांडुकशिला पर 1008 कलशों से महाभिषेक हुआ वहीं दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान एवं चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित ''गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती साहित्य संगोष्ठी'' में भारत के कोने-कोने से लगभग सौ विद्वानों ने पधारकर माताजी द्वारा रचित कतिपय साहित्य रचनाओं पर अपने शोधपूर्ण आलेख प्रस्तुत किए तथा माताजी से अनेक शास्त्रीय-सैद्धान्तिक-तथ्यात्मक विषयों पर दिशानिर्देश प्राप्त किया। इसी अवसर पर अनेक संस्थाओं के अधिवेशन आदि के साथ-साथ पूज्य माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप स्थल पर णमोकार मंत्र की जमापूंजी बनाने वाले 'णमोकार महामंत्र बैंक' की स्थापना 8 अक्टूबर 1995, शरदपूर्णिमा के दिन हुई जिसका उद्घाटन केन्द्रीय खाद्यमंत्री श्री अजीत सिंह ने किया। उसी समय से देशभर की जैन समाज के आबाल-वृद्ध अपनी शक्ति अनुसार सवा लाख, इक्यावन हजार या पचीस हजार मंत्र लिखकर इस बैंक में जमा करते हैं जिसके फलस्वरूप प्रतिवर्ष शरदपूर्णिमा के दिन मंत्र लेखकों को हीरक पदक, स्वर्ण पदक, रजत पदक आदि से सम्मानित किया जाता है। आज करोड़ों मंत्र इस बैंक में जमा हैं।

➢संस्थान द्वारा प्रवर्तित गणिनी ज्ञानमती पुरस्कार–

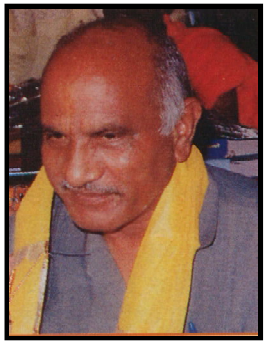




8 अक्टूबर सन् 1995 को शरदपूर्णिमा के दिन पूज्य ज्ञानमती माताजी की जन्मजयंती के शुभ अवसर पर मेरी लघु प्रेरणा के आधार पर श्री अनिल कुमार जैन-कमल मंदिर, प्रीतविहार-दिल्ली के अर्थ सौजन्य से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान ने गणिनी ज्ञानमती पुरस्कार प्रारंभ किया। संस्थान की अकादमिक गतिविधियों में अनन्य सहयोगी के रूप में कार्य करने वाले डॉ. अनुपम जैन-इंदौर को इस प्रथम पुरस्कार से 8 अक्टूबर को ही सम्मानित किया गया।

ज्ञातव्य है कि इस पुरस्कार में एक लाख रुपये की नगद राशि, रजत प्रशस्ति पत्र, श्रीफल प्रदान कर संस्थान के इस सर्वोच्च पुरस्कार द्वारा किसी विशिष्ट मनीषी कार्यकर्ता को सम्मानित किया जाता है।

अक्टूबर सन् 2001 में ''पण्डितप्रवर श्री शिवचरणलाल जैन-मैनपुरी'' (अध्यक्ष-तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ) को इस पुरस्कार से अलंकृत किया गया और अब17 अक्टूबर 2005, शरदपूर्णिमा को डॉ. शेखरचंद जैन-अहमदाबाद (अध्यक्ष-तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ) को इस पुरस्कार से सम्मानित किया जा रहा है।



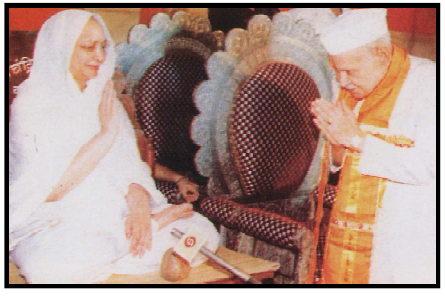
संस्थान के द्वारा इसी प्रकार से प्रतिवर्ष जम्बूद्वीप पुरस्कार (25000/-रु.), कुण्डलपुर पुरस्कार (25000/-रु.), नंद्यावर्त पुरस्कार (25000/-रु.), आर्यिका रत्नमती पुरस्कार (11000/-रु.), छोटेलाल जैन स्मृति पुरस्कार (11000/-रु.) आदि अन्य पुरस्कार भी प्रदान किये जाते हैं।

➢राजधानी दिल्ली के अन्दर 24 कल्पद्रुम विधान का विहंगम आयोजन–



दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा पूज्य माताजी की प्रेरणा से भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत विश्व में प्रथम बार राजधानी दिल्ली में विश्व शांति एवं पर्यावरण की शुद्धि हेतु 24 तीर्थंकरों के समवसरण के प्रतीक में 24 कल्पद्रुम महामण्डल विधान का विराट आयोजन 4 अक्टूबर से 13 अक्टूबर 1997 तक आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न हुआ।

'न भूतो न भविष्यति' की सूक्ति को चरितार्थ करने वाले इस महायज्ञ में जहाँ तीन हजार लोगों ने विधान में भाग लेकर भक्ति सरिता में स्नान के साथ सातिशय पुण्य का बंध किया वहीं प्रतिदिन समवसरण के दर्शन करने हेतु लाखों यात्रियों का तांता लगा रहा और वास्तविक समवसरण की भांति अतिशयकारी इस विधान में प्रत्येक आगन्तुक भक्त को किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं हुआ। चक्रवर्तियों के द्वारा किये जाने वाले इस विधान में किमिच्छक दान के प्रतीक रूप आहार, औषधि, ज्ञान और अभय इन चारों दानों का प्रतिदिन वितरण किया गया। जहाँ इस भव्य समारोह का उद्घाटन भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा ने किया वहीं अन्य राजनेताओं में दिल्ली प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री साहिब सिंह वर्मा, म.प्र. के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह आदि ने पधारकर भक्ति के अपूर्व दृश्य को देखकर अपने को सौभाग्यशाली माना। भक्ति के इस विहंगम दृश्य को देखकर जैन समाज के हर्ष नेता साहू अशोक कुमार जैन ने अपने को धन्य मानते हुए अपने भाषण में पूज्य माताजी से सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर ऐसा महान कार्यक्रम आयोजित कराने हेतु निवेदन किया। 12 अक्टूबर को समस्त दि. जैन समाज की ओर से पूर्व न्यायाधीश श्री मिलापचंद जैन ने पूज्य माताजी को 'गणिनीप्रमुख' की उपाधि से अलंकृत कर स्वयं को गौरवान्वित किया। समय-समय पर आयोजित अनेक प्रतियोगिताओं एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों के साथ विशेष आकर्षण के रूप में 13 अक्टूबर को समापन अवसर पर आयोजित विशाल रथयात्रा थी जिसमें 24 रथ, 24 बग्घियाँ, 24 बैण्ड-बाजे, घोड़े, हाथी, शहनाई, भजन मंडली आदि प्रमुख रहे, जो ऐतिहासिक दृष्टि से अपनी अविस्मरणीय छाप छोड़ गए।



➢भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार (सन् 1998)–

कृतयुग के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का अस्तित्व जन-जन तक पहुँचाने हेतु पूज्य माताजी के मन में कई वर्षों से लगन लगी थी और कुछ न कुछ प्रभावनात्मक कार्य करने की इच्छा होती थी उसी के फलस्वरूप माताजी ने दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के कार्यकर्ताओं को ''भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार'' के नाम से पूरे भारत में एक रथ घुमाने की प्रेरणा दी। उस रथ के साथ-साथ जन्मकल्याणक के प्रतीक में एक विशाल ऐरावत हाथी का दूसरा रथ भी बनाया गया। इन दोनों रथों का उद्घाटन 22 मार्च 1998 ऋषभदेव जन्मजयंती के दिन (जन्मजयंती वर्ष के समापन अवसर पर) लाल किला मैदान दिल्ली से केन्द्रीय वित्तराज्यमंत्री श्री वी. धनंजय कुमार जैन की अध्यक्षता में विशाल समारोहपूर्वक हुआ पुनः 9 अप्रैल 1998 को भगवान महावीर जयंती के पावन दिवस तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने भारत भ्रमण हेतु स्वस्तिक बनाकर इन रथों का प्रवर्तन किया।

निरन्तर चार वर्षों तक दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, म.प्र., महाराष्ट्र, गुजरात, आसाम, बंगाल-बिहार आदि भारत के सभी प्रदेशों एवं नगरों में इस समवसरण श्रीविहार के द्वारा जैनधर्म की प्राचीनता, भगवान ऋषभदेव के सिद्धान्तों का एवं व्यसनमुक्ति, सदाचार, अहिंसा-शाकाहार का जो व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ है वह अविस्मरणीय है। 21 अक्टूबर सन् 2002 एवं वह समवसरण प्रयाग-इलाहाबाद में नवनिर्मित ''तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली'' तीर्थ पर समवसरण मंदिर में स्थाईरूप से स्थापित किया गया है।

इस प्रभावनामयी प्रेरणा के आधार पर आज जगह-जगह भगवान ऋषभदेव की जन्मजयंती, निर्वाण महोत्सव, अक्षयतृतीया आदि पर्व मनाने की परम्परा प्रारंभ हो गई है जो कि भावी पीढ़ी के लिए प्रेरणास्पद है।



➢भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन (सन् 1998)–



संस्थान अपने नाम के अनुसार समय-समय पर शोध कार्यों को सम्पन्न कराता है और समय-समय पर अनेक संगोष्ठियाँ होती रहती हैं। इसी संस्थान के अन्तर्गत संचालित आचार्य वीरसागर संस्कृत विद्यापीठ से पढ़कर अनेक विद्यार्थी मुनि, ब्रह्मचारी, भट्टारक व प्रतिष्ठाचार्य आदि हुए हैं जो नाम के साथ-साथ अपने कार्यकलापों से सर्वत्र यशसुरभि को फैला रहे हैं। सम्मेलन, संगोष्ठी की श्रृंखला में पूज्य माताजी की प्रेरणा से उनके ही संघ सानिध्य में दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान एवं चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ के संयुक्त तत्त्वावधान में 4 से 6 अक्टूबर 1998 के मध्य त्रिदिवसीय 'भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन' सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन के 6 सत्रों में 20 कुलपति, कई पूर्व कुलपति तथा 111 प्रोफेसर विद्वान् सम्मिलित हुए। सम्मेलन के मध्य विभिन्न विश्वविद्यालयों के माननीय कुलपतियों को तथा जैन विद्या के सर्वोच्च मनीषियों को एक साथ बैठकर भगवान ऋषभदेव की शिक्षाओं के संदर्भ में विचार-विमर्श करने का अवसर प्राप्त हुआ। सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में सांसद श्री राजेश पायलट (पूर्व केन्द्रीय मंत्री-भारत सरकार) एवं अध्यक्ष के रूप में सांसद श्री धनंजय जैन (पूर्व केन्द्रीय मंत्री-भारत सरकार) ने पधारकर कार्यक्रम में चार चाँद लगाए। सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य जैनधर्म की शाश्वत सत्ता का प्रकटीकरण, इतिहास के वस्तुनिष्ठ सत्यों की पुनर्स्थापना एवं उनका पुनर्लेखन, भगवान ऋषभदेव एवं उनकी परम्परा में अन्य 23 तीर्थंकरों द्वारा मानवीय कल्याण हेतु दिये गये सर्वोदयी सिद्धान्त, अहिंसा, जीवदया, साम्प्रदायिक सद्भाव, विश्वशांति, पर्यावरण एवं प्राकृतिक संरक्षण सुनिश्चित करना था।

सम्मेलन में अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गए और कुलपतियों द्वारा समवेत स्वर में जारी किए गए 'जम्बूद्वीप घोषणा पत्र 1998' के रूप में उनकी अनुशंसाएं यह प्रकट कर रही थीं कि इससे श्रमण परम्परा के वस्तुनिष्ठ सत्यों के उद्भासन में अमूल्य योगदान मिलेगा। जम्बूद्वीप के सुरम्य वातावरण ने सभी आगन्तुकों को बहुत ही मंत्रमुग्ध किया।

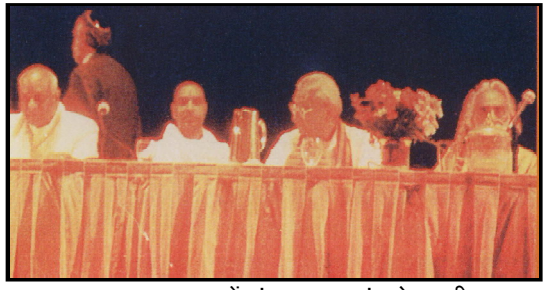
➢भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव (सन् 2000)–

जैनधर्म की सार्वभौमिकता एवं प्रासंगिकता पर वर्तमान इतिहास में लगे प्रश्नचिन्ह का समुचित समाधान करता हुआ ''भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव'' उद्घाटनान्तत्कालीन प्रधानमंत्री माननीय श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा 4 फरवरी से 10 फरवरी 2000तक दिल्ली के लाल किला मैदान में सम्पन्न हुआ जो नूतन इतिहास के निर्माण की कहानी केसारंभ कर गया।

सन् 1974 में केन्द्र सरकार व सम्पूर्ण जैन समाज द्वारा गौरवपूर्वक मनाए गए 'भगवान महावीर 2500वाँ निर्वाण महोत्सव' से धर्म की व्यापक प्रभावना व उपलब्धियाँ तो हुईं किन्तु कुछ लेखकों ने जैनधर्म को 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर द्वारा संस्थापित धर्म बता दिया जो जनमानस को दिग्भ्रमित करता रहा और जैन समाज इस दिशा में न जाने क्यों निष्क्रिय रहा। 23 अक्टूबर 1992, धनतेरस का दिन इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ ही था जब माताजी को जम्बूद्वीप के ध्यान में ऋषभ जन्मभूमि अयोध्या के उद्धार का चिन्तन आया, बस उसी दिन से उन्होंने दुनिया में जैनधर्म के प्रति व्याप्त भ्रान्त धारणाओं का निराकरण करने का बीड़ा उठा लिया। सर्वप्रथम ऋषभदेव जन्मजयंती मनाने की प्रेरणा पुनश्च 24 कल्पद्रुम मण्डल विधान, भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ का भारत भ्रमण हेतु प्रवर्तन, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन आदि कार्यकलापों ने समाज के साथ ही शिक्षाजगत में भी विशेष स्थान स्थापित किया। इसी लक्ष्य को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने कुलपति सम्मेलन की उद्घाटन सभा में इस कार्यक्रम की घोषणा करते हुए ऋषभदेव के उपकारों से उच्च शिक्षाविदों को परिचित कराया। फलस्वरूप महती प्रभावना के साथ सम्पन्न इन कार्यक्रमों से लोगों ने ऋषभदेव जन्मजयंती, निर्वाणोत्सव आदि कार्यक्रम आयोजित करने प्रारंभ कर दिये, इस निर्वाणोत्सव की धूम भारत के अलावा विदेशों में भी मची और सर्वत्र इसे मनाया गया। इसी निर्वाणोत्सव वर्ष के अन्तर्गत 11 जून 2000 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में 'जैनधर्म की प्राचीनता विषय पर आयोजित इतिहासकार सम्मेलन में NCERT के डायरेक्टर व प्रतिनिधि सहित इतिहासज्ञों व विद्वानों के भाग लेने व संसद में उठे प्रश्न के आधार पर अब कतिपय पुस्तकों में संशोधन तो हुआ है जो जैन समाज के लिए गौरव की बात है परन्तु यह कार्य अभी अंश मात्र ही हुआ है अभी इस दिशा में बहुत कुछ करना बाकी है जिसके लिए जैन समाज को प्रयासरत रहना होगा।



➢न्यूयार्क के विश्वशांति शिखर सम्मेलन में संस्थान ने प्रतिनिधित्व किया (सन् 2000)–





अगस्त सन् 2000 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपनी स्थापना की आधी सदी के इतिहास में प्रथम बार विश्वशांति के उपायों पर विचार करने के लिए ''विश्वशांति शिखर सम्मेलन'' का आयोजन किया।

इस चार दिवसीय (28 से 31 अगस्त 2000 तक) सम्मेलन में अनेक देशों से 75 धर्मों के लगभग 1500 धर्मगुरुओं ने भाग लिया। उन सभी ने विश्व की 83 प्रतिशत आबादी का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने अनुभूत विचार प्रस्तुत किये तथा सभी ने मिलकर समवेत स्वर में विश्वशांति के लिए विभिन्न देशों के प्रति पारस्परिक सौहाद्र, प्रेम और अहिंसा अपनाने की नीति पर जोर दिया।

श्री बावा जैन के प्रयासों से आयोजित इस सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्राप्त निमंत्रण के आधार पर दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की ओर से भारत की जैन समाज का प्रतिनिधित्व करने हेतु पूज्य माताजी ने कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी को वहाँ भेजा जिससे वहाँ सर्वोदयी जैनधर्म की बात सभी धर्माचार्यों ने सुनी और ''भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाणमहोत्सव'' वर्ष के अन्तर्गत हुई यह विदेश यात्रा सदैव के लिए अविस्मरणीय हो गई। इसके साथ ही दशलक्षण पर्व में भी वहाँ रवीन्द्र जी ने श्री महेन्द्र पांड्या (अध्यक्ष-जैना....) के आग्रह पर जैन सेन्टर ऑफ अमेरिका में दश दिनों तक दशधर्म का प्रभावी प्रवचन किया एवं अन्य कई स्थानों पर भी जाकर जैनधर्म के सर्वोदयी सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार किया।

इसी प्रकार अक्टूबर सन् 2000 में संस्थान के अप्रतिम सहयोग से प्रीतविहार-दिल्ली जैन समाज के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत राजधानी में विशाल कैलाशपर्वत बनाकर एक सप्ताह तक ''कैलाश मानसरोवर यात्रा'' आयोजित की गई, जिसमें बुल्गारिया के राजदूत सहित देश-विदेश के हजारों-लाखों श्रद्धालुओं ने पर्वतीय यात्रा करके पुण्यलाभ प्राप्त किया।



➢जम्बूद्वीप महामहोत्सव-2000 (तृतीय महोत्सव)–

जिस प्रकार भूगर्भ से भूगर्भशास्त्री ही खनिज पदार्थों को निकाल सकता है उसीप्रकार अलौकिक ज्ञान प्रतिभा की धनी ज्ञानमती माताजी ने इस जम्बूद्वीप को इतिहास के पन्नों से निकालकर पृथ्वी पर साकार रूप प्रदान किया है। इस विश्वप्रसिद्ध रचना निर्माण के सन् 1985 की पूर्णता के पश्चात् प्रति पाँच वर्षों में राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित महामहोत्सवों में जम्बूद्वीप का पंचवर्षीय तृतीय महामहोत्सव 16 अप्रैल चैत्र शु. तेरस (महावीर जयंती) से 23 अप्रैल 2000 वैशाख कृ. एकम् तक आयोजित हुआ।

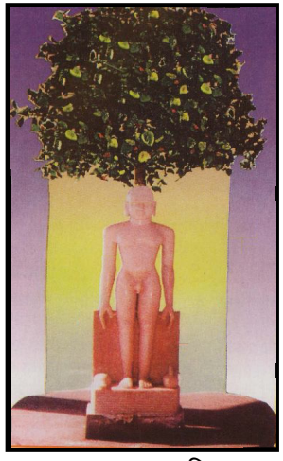
इस शुभ अवसर पर 7 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा 19 से 23 अप्रैल तक सम्पन्न हुई तथा 23 अप्रैल रविवार को 101 फुट ऊँचे सुमेरुपर्वत की पांडुकशिला पर श्री जी का 1008 कलशों से महाभिषेक किया गया। इस महाभिषेक में भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ प्रवर्तन में बोली लेने वाले हरियाणा, राज., म.प्र. और गुजरात के प्रत्येक नगर के 6 महानुभावों को कलश करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसी महामहोत्सव के अन्तर्गत जम्बूद्वीप परिसर में निर्माणाधीन सहस्रकूट मंदिर का शिलान्यास भी पूज्य माताजी के पावन सानिध्य में किया गया तथा तीन मूर्ति मंदिर के शिखर पर कलशारोहण भी सम्पन्न हुआ। प्रतिष्ठा महोत्सव में 21 अप्रैल को भगवान के दीक्षाकल्याणक के सुअवसर पर केन्द्रीय वित्तराज्यमंत्री श्री वी.धनंजय कुमार जैन ने मुख्य अतिथि के रूप में पधारकर 'ऋषभदेव निर्वाण महोत्सव' में घोषित स्थान-स्थान पर बनाये जाने वाले कीर्तिस्तंभों में से एक कीर्तिस्तंभ का शिलान्यास किया तथा इससे पूर्व 16 अप्रैल को महावीर जयंती के सुअवसर पर बुल्गारिया के राजदूत श्री एडविन सुगारेव ने पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया।





➢करोड़ों वर्ष पुराना प्रयाग तीर्थ साकार होकर जनता के समक्ष आया (सन् 2001)–

जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने युग की आदि में जिस पावन भूमि पर जैनेश्वरी दीक्षा लेकर मुनि परम्परा को प्रारंभ किया, जहाँ केवलज्ञान होकर प्रथम बार भगवान का समवसरण रचा, ऐसी पावन वसुंधरा प्रयाग तीर्थ को आज लोग इलाहाबाद के नाम से जानते हैं।



पूज्य ज्ञानमती माताजी ने उस वास्तविक प्रयाग तीर्थ को साकार करने का संकल्प ले लिया, यही कारण था कि जब महाकुंभ नगरी के रूप में विख्यात उस नगरी में देश के करोड़ों हिन्दू सन् 2001 में इक्कीसवीं सदी का प्रथम महाकुंभ मना रहे थे उस समय पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा एक भूमि का क्रय कर "तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग तीर्थ" का भव्य निर्माण भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष के समापन अवसर पर किया गया। संस्थान द्वारा संचालित इस तीर्थ में दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक के प्रतीक में भव्य रचनाओं के निर्माण के साथ बीचोंबीच में 50 फुट ऊँचे कैलाशपर्वत पर विराजमान 14 फुट विशालकाय भगवान ऋषभदेव की लालवर्णी पद्मासन प्रतिमा दूर से ही तीर्थ का दिग्दर्शन कराती है। मात्र कुछ ही वर्षों में विश्व के क्षितिज पर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ के रूप में विख्यात इलाहाबाद-बनारस हाइवे रोड पर स्थित यह तीर्थ वर्तमान में जनमानस की श्रद्धा का केन्द्र बन चुका है।



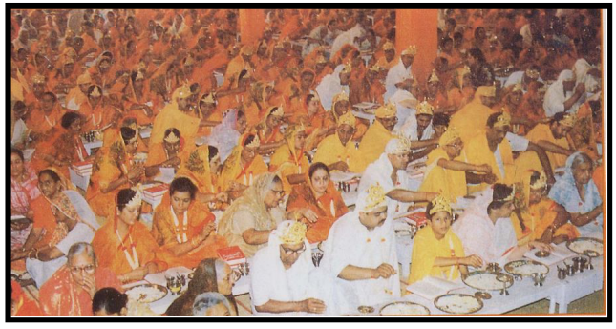
➢विश्वशांति महावीर विधान के 26 मण्डल एक साथ बने–



भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव के राष्ट्रीय उद्घाटन (6 अप्रैल 2001 को) पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी दिल्ली में उपस्थित नहीं थीं अतः उनके पश्चात् जैन समाज के अतिविशिष्ट कार्यकर्ताओं के विशेष अनुरोध पर माताजी संघ सहित प्रयाग-इलाहाबाद से भीषण गर्मी में विहार करके दिल्ली पहुँची। पुनः दिल्ली में चातुर्मास के मध्य दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अध्यक्ष कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी ने संस्थान के कार्यकर्त्ताओं एवं सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज-दिल्ली का सहयोग लेकर अक्टूबर 2001 में जन्मकल्याणक वर्ष का सबसे बड़ा समारोह "विश्वशांति महावीर विधान" के नाम से आयोजित किया।

दिल्ली के फिरोजशाह कोटला मैदान में 8 दिन तक इस भक्ति महोत्सव में सुमेरुपर्वत के आकार वाले 26 मण्डल विधान एक साथ बने और सभी के सामने अलग-अलग प्रदेश एवं नगरों के 108-108 इन्द्र-इन्द्राणियों ने बैठकर पूजन करते हुए जब मण्डल पर रंग-बिरेंगे 2600-2600 रत्न चढ़ाए तब कल्पवृक्षों के समान उनकी जगमगाहट वास्तव में रत्न चढ़ाकर दर्शन का नियम निभाने वाली कन्या मनोवती का इतिहास स्मरण करा रही थी।

महोत्सव को देखने एवं उसमें भाग लेने के साथ सम्पूर्ण जैन समाज के भक्तों ने विश्वशांति मंत्र (ॐ ह्रीं विश्वशांतिकराय श्री महावीरजिनेन्द्राय नमः) की करोड़ों जाप्य की, जिसके फलस्वरूप देश के ऊपर असमय में आये संकट के बादल स्वयमेव छंट गये और संसद भवन पर हुआ आतंकवादियों का हमला नाकामयाब रहा। इस चमत्कारिक भक्ति आयोजन का मनोहारी दृश्य भगवान महावीर 2600 वें जन्मकल्याणक महोत्सव की अमिट छाप बन गई।



➢जम्बूद्वीप की निर्मात्री से आशीर्वाद लिया राष्ट्रपति ने–



30 मई 2003 का वह दिन सचमुच राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के लिए बड़ा पुण्यमयी रहा, जब उन्होंने बिहार प्रांत की अपनी यात्रा में भगवान महावीर वेफ कल्याणक तीर्थों के दर्शन कर अपने जीवन को धन्य किया।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ससंघ उस समय पावापुरी सिद्धक्षेत्र पर विराजमान थीं। राष्ट्रपति जी ने पावापुरी जलमंदिर के दर्शन करके पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया और बेहद प्रसन्नता के साथ अपने वक्तव्य में उन दुर्लभ क्षणों एवं तीर्थ के प्रति श्रद्धा व्यक्त की।

पूज्य माताजी ने उनके शाकाहारी होने हेतु विशेष प्रसन्नता प्रगट कर अपने आशीर्वादात्मक प्रवचन में देश के सर्वोच्च नेता को देश की शांति और सुरक्षा हेतु खुले दिल से आशीर्वाद प्रदान किया।

इसी प्रकार समय-समय पर पूज्य माताजी से केन्द्रीय एवं प्रादेशिक राजनेताओं में राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, राज्यपाल, मुख्यमंत्री आदि ने हस्तिनापुर, दिल्ली, गुजरात,महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश आदि स्थानों पर पधारकर आशीर्वाद प्राप्त किया है। अपनी उदार भावनाओं के कारण माताजी समय-समय पर दिगम्बर-श्वेताम्बर साधु-साध्वियों के साथ ही अन्य धर्म के साधु-संतों से भी भारतीय संस्कृति के संरक्षण एवं शाकाहार-सदाचार के प्रचार-प्रसार हेतु विचारों का आदान-प्रदान करने में सदैव अग्रसर रहती हैं।

पावापुरी सिद्धक्षेत्र पर पूज्य माताजी के सानिध्य में भगवान महावीर की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं नवनिर्मित मानस्तंभ में वेदी प्रतिष्ठापूर्वक भगवान विराजमान हुए तथा जनकल्याण हेतु नेत्र चिकित्सा शिविर का आयोजन भी सानंद सम्पन्न हुआ।

➢कुण्डलपुर के कलात्मक शिखर वाले जिनमंदिर–



''नंद्यावर्त महल'' के नाम से निर्मित कुण्डलपुर के तीर्थ परिसर में 108 फुट ऊँचा कलात्मक शिखर का भगवान महावीर मंदिर है तथा उसके आजू-बाजू में भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवगृहशांति मंदिर बने हैं। महल के ठीक सामने तीन मंजिल ऊँजा विशाल त्रिकाल चौबीसी मंदिर है। इनके अतिरिक्त वहाँ के सुंदर सर्वार्थसिद्धि द्वार में प्रवेश करते ही दाईं ओर कल्पवृक्ष कार्यालय है और अन्दर जाकर आधुनिक सुविधायुक्त ''गणिनी ज्ञानमती निलय'' नाम से दो मंजिली धर्मशाला के 35 फ्लैट्स हैं। सुंदर भोजनशाला, पानी की टंकी, बिजली आदि सभी सुविधाओं से सम्पन्न भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ सभी भक्तों को अपनी ओर आकर्षित करता है।

पूज्य माताजी के संघ सहित वहाँ दो चातुर्मास (सन् 2003-2004 में) सम्पन्न हुए। इस मध्य पर्यटन विभाग एवं जन्मभूमि समिति द्वारा 'कुण्डलपुर महोत्सव' आयोजित हुए, जिसमें प्रदेश के राज्यपाल सहित कई राजनेता पधारे। सन् 2004 के महोत्सव में दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा सन् 2000 में घोषित ''भगवान ऋषभदेव नेशनल एवार्ड'' से श्री वी.धनंजय कुमार जैन (पूर्व केन्द्रीय मंत्री) को सम्मानित किया गया।

पूज्य माताजी के कुण्डलपुर में 22 माह के प्रवास के मध्य भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के जीर्णोद्धार-विकास के साथ-साथ राजगृही में भगवान मुनिसुव्रतनाथ की साढ़े 12 फुट प्रतिमा विराजमान कर मंदिर का निर्माण हुआ, विपुलाचल पर्वत पर ह्रीं की प्रतिमा एवं प्रदर्शनी बनवाई, पर्वत के नीचे उत्तुंग मानस्तंभ का निर्माण कराया, जवाहर नवोदय विद्यालय प्रांगण में भगवान महावीर की पद्मासन प्रतिमा विराजमान हुई। पावापुरी में पाण्डुकशिला परिसर में भगवान महावीर मंदिर निर्माण कर साढ़े 12 फुट प्रतिमा विराजमान कराया, गुणावां में गौतम गणधर स्वामी की प्रतिमा-मंदिर एवं सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर भगवान ऋषभदेव की सवा 9 फुट पद्मासन प्रतिमा एवं मंदिर बनवाकर बिहार एवं झारखंड प्रदेश में नई क्रांति उत्पन्न कर दी।

➢2600 वर्ष प्राचीन इतिहास की याद दिलाता नंद्यावर्त महल (सन् 2003-04)–

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अन्तर्गत जहाँ भारत सरकार एवं सम्पूर्ण जैन समाज विविध कार्यक्रमों के माध्यम से 'भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव' मना रहा था, वहीं दूरदर्शी एवं जैनधर्म की शाश्वत सत्ता को सिद्ध करने में सतत संलग्न पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने वर्षों से जन-मानस के हृदय-पटल से धूमिल और उपेक्षित शासनपति भगवान महावीर की जन्मभूमि के विकास का शंखनाद किया और 26 फरवरी 2002 को दिल्ली से चलकर 1300 किमी. की यात्रा करते हुए 29 दिसम्बर 2002 को कुण्डलपुर तीर्थ पर मंगल प्रवेश किया, फिर तो देखते ही देखते वह वीरान भूमि चमन हो उठी। इसी बीच प्रयाग तीर्थ पर सन् 2002 का चातुर्मास हुआ।

माताजी की सतत प्रेरणा से जहाँ प्राचीन मंदिर में 36 फुट ऊँचे भव्य कीर्तिस्तंभ का निर्माण हुआ। वहीं प्राचीन मंदिर के निकट नवीन निर्माण हेतु दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर द्वारा लगभग 2 एकड़ भूमि का क्रय कर उस पर निर्माण कार्य प्रारंभ किया गया फिर तो जंगल में मंगल की तरह भगवान महावीर जन्मभूमि के नवीन स्वर्णिम पृष्ठ का प्रारंभीकरण हो उठा। 2600 वर्ष पूर्व जिस नंद्यावर्त महल में रत्नों से जटित पलंग पर रानी त्रिशला ने सोलह स्वप्न देखे थे, जहाँ धनकुबेर ने लगातार 15 माह तक रत्नों की वृष्टि की थी, जहाँ प्रभु ने जन्म लिया था, जहाँ वे देवबालकों के संग खेले थे और जहाँ संजय-विजय मुनि की शंका का समाधान हुआ था, उस इन्द्रों द्वारा सजाए गए सात मंजिले नंद्यावर्त महल की भव्य प्रतिकृति का निर्माण उस तीर्थ पर 2600 वर्ष पूर्व के इतिहास का दिग्दर्शन करा रहा है जिसके अन्दर भगावन महावीर के जीवन से संबंधित प्राचीन कलाकृतियाँ व सम्पूर्ण इतिहास समाविष्ट है। महल के सबसे ऊपरी मंजिल में श्री शांतिनाथ जिनालय है।



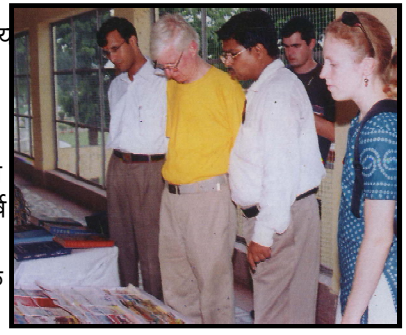
➢जम्बूद्वीप का सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक वैभव–



दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर अपनी स्थापना के समय से ही शोध और अनुसंधान की गतिविधियों में संलग्न रहा है। जैन आगमों में उपलब्ध विवेचनों के आधार पर विश्वप्रसिद्ध जम्बूद्वीप रचना के निर्माण एवं 250 से अधिक सिद्धान्त, भूगोल, खगोल, व्याकरण, गणित, उपन्यास, कथा, नाटक, बालोपयोगी आदि पुस्तकों के लाखों की संख्या में प्रकाशन के साथ ही यह संस्थान विशाल विद्वत् शिक्षण/प्रशिक्षण शिविरों, सेमिनारों, संगोष्ठियों, सम्मेलनों का आयोजन करता रहा है। मेरठ विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधानों में आयोजित होने वाले इन सम्मेलनों की अकादमिक जगत में भूरि-भूरि प्रशंसा रही है। सम्प्रति शोध गतिविधियों को अधिक समन्वित स्वरूप प्रदान किये जाने हेतु अक्टूबर 1998 में आगत शताधिक विद्वानों के अनुरोध पर संस्थान के अन्तर्गत 'गणिनी ज्ञानमती प्राकृत शोधपीठ' की स्थापना का निर्णय लिया गया।

शोधपीठ का शुभारंभ 'ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन' के मध्य 4 अक्टूबर 1998 को गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के 65वें जन्मदिवस के पुनीत अवसर पर किया गया। शोधपीठ के निदेशक के रूप में विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन के पूर्व कुलपति प्रो. आर.आर. नांदगांवकर को एवं निदेशक मंडल में प्रो. सुरेशचन्द्र अग्रवाल, कुलपति-चौधरी चरण सिंह वि.वि., मेरठ तथा डॉ. अनुपम जैन, इंदौर को मनोनीत किया गया। इस शोधपीठ का निदेशक कार्यालय इंदौर में डॉ. अनुपम जैन द्वारा संचालित किया जा रहा है जिसमें शोधार्थी जैनधर्म विषयक शोध करके जैनधर्म के प्रचार-प्रसार में संलग्न हैं।

हस्तिनापुर में लगभग 35 एकड़ विस्तृत जम्बूद्वीप परिसर में जम्बूद्वीप नामक जैन भूगोल की रचना के साथ-साथ अनेकों जिनमंदिर जहाँ जैनधर्म की कीर्तिपताका को फहरा रहे हैं, वहीं आधुनिक सुविधा सम्पन्न 200 फ्लैट्स, विशाल राजा श्रेयांस भोजनालय, कई सुंदर कोठियां, पानी की बड़ी टंकी, बिजली की सुविधा हेतु जनरेटर आदि सभी कुछ उपलब्धियाँ आने वाले यात्रियों को हर्ष का आनंद लेने हेतु प्रेरणा प्रदान करती हैं। इसके साथ यहाँ शैक्षणिक गतिविधियाँ संचालित करने हेतु जम्बूद्वीप पुस्तकालय (लगभग 15 हजार ग्रंथों के संग्रह वाला), वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला, सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका आदि माध्यम हैं। जनसामान्य के लिए णमोकार महामंत्र बैंक हैं जिसमें लोग करोड़ों मंत्र लिखकर अपनी धार्मिक जमा पूँजी बनाते हैं और संस्था द्वारा प्रतिवर्ष सम्मान प्राप्त करते हैं। बच्चों के लिए झूला, झांकी, नाव, हंसी के गोलगप्पे आदि अनेक मनोरंजन के साधन हैं।



➢भारत का अद्वितीय 'ॐ' मंदिर है जम्बूद्वीप स्थल पर–

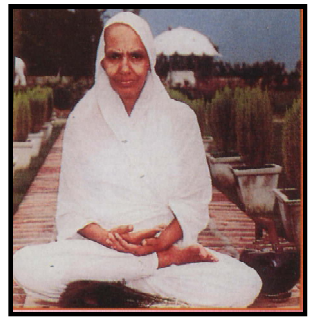
हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से जहाँ अनेक ऐतिहासिक मंदिरों की रचना हुई है वहीं एक अलौकिक 'ॐ' मंदिर का निर्माण हुआ है।



फरवरी सन् 1998 में भारत में प्रथम बार निर्मित इस मंदिर में 5 फुट के लाल ग्रेनाइट पत्थर में बने 'ॐ' मंत्र के अंदर पंचपरमेष्ठी भगवान विराजमान हैं, जहाँ अनेक श्रद्धालु भक्त दर्शन पाकर पंचपरमेष्ठी को नमन करते हुए ॐकार का ध्यान करते हैं और पंचपरमेष्ठी विधान के द्वारा अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय एवं साधु को वंदन कर अपनी कर्म निर्जरा के साथ सातिशय पुण्य का बंध करते हैं।

यह ''ॐ'' मंत्र एक परम शक्तिशाली बीजाक्षर महामंत्र है, पंचपरमेष्ठियों की अनन्त शक्ति इस मंत्र में समाविष्ट है इसीलिए इसे णमोकार मंत्र का सबसे लघुरूप एकाक्षरी मंत्र के रूप में स्वीकार किया गया है। जैनशासन के अनुसार ॐ की रचना इस प्रकार हुई है-''णमो अरिहंताणं' का 'अ' 'णमो सिद्धाणं' पद में सिद्ध भगवान के अशरीरी होने से 'अ' लिया गया अतः अ+अ=आ बना। पुनः ''णमो आइरियाणं'' का ''आ' अतः अ+आ=आ हुआ। ''णमो उवज्झायाणं'' का 'उ' तथा 'णमो लोए सव्वसाहूणं' का अर्थ समस्त दिगम्बर मुनिराज है अतः मुनि का ''म्'' लिया गया। इस प्रकार आ+उ+म्=ओम् बना है, इसे दीर्घ ऊकार पर बिंदुसहित अर्धचन्द्राकार के रूप में (ॐ) सभी मंत्रों का आद्य पद माना गया है। जम्बूद्वीप स्थल पर इसी प्रकार भगवान वासुपूज्य मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर आदि आगन्तुक भक्तों को भक्ति का स्वर्णिम अवसर प्रदान कर रहे हैं।

अनेकानेक सुन्दर मंदिरों से समन्वित इस जम्बूद्वीप स्थल पर समय-समय पर मुनि-आर्यिकाओं के संघ भी पधारकर प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। इसी शृंखला में चारित्रश्रमणी पूज्य आर्यिका श्री अभयमती माताजी के भी कई चातुर्मास यहाँ सम्पन्न हुए हैं।इनकी प्रेरणा से यहाँ के वासुपूज्य मंदिर में भगवान वासुपूज्य की प्रतिमा सन् 1995 में विराजमान हुई हैं। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की लघु बहिन आर्यिका श्री अभयमती माताजी का जन्म 1942 में हुआ। सन् 1964 में इन्होंने माताजी से क्षुल्लिका दीक्षा एवं सन् 1969 में आचार्यश्री धर्मसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा धारण कर राजस्थान, बुंदेलखण्ड में विहार किया पुनः उत्तरप्रदेश में आने के बाद वे कभी-कभी जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में भी पधारकर अपनी रत्नत्रयसाधना, लेखन आदि करके आगन्तुक भक्तों को भी धर्मलाभ प्रदान करती रहती हैं।



➢संस्थान की एक अद्वितीय साहित्यिक रचना 'भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश–



पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने साहित्य लेखन की शृँखला में न्यायदर्शन के सर्वोच्च ग्रंथ ''अष्टसहस्री'' का हिन्दी अनुवाद करके विद्वज्जगत को एक उपहार प्रदान किया, नियमसार ग्रंथ की संस्कृत टीका लिखकर श्री जयसेनाचार्य के समान अध्यात्मप्रेमियों को अनेकान्तिकदृष्टि प्रदान की बड़े-बड़े पूजा-विधान लिखकर श्रद्धालुभक्तों को जिनेन्द्रभक्ति के द्वारा कर्म निर्जरा का अवसर दिया, अनेक प्रकार के छोटे-बड़े साहित्य को रचकर आबालवृद्ध को सरल शिक्षा प्रदान की एवं षट्खण्डागम सूत्र ग्रंथ पर हजारों पृष्ठों की सरल संस्कृत टीका लिखकर सिद्धांत ग्रंथों के स्वाध्यायी जनों का मार्ग प्रशस्त किया है।

त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत सन् 1972 में स्थापित वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला ने ''अष्टसहस्री'' से प्रारंभ करके सैकड़ों ग्रंथ जहाँ लाखों की संख्या में प्रकाशित किया है, वहीं सन् 2005 में आधुनिक विद्वानों की आवश्यकतापूर्ति हेतु लगभग 15 हजार शब्दों के संग्रह वाला एक ''भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश'' प्रकाशित कर नया कीर्तिमान स्थापित किया है। तीन वर्ष के अथक परिश्रमपूर्वक तैयार किया गया यह शब्दकोश हिन्दी जैन ग्रंथों का अंग्रेजी में अनुवाद करने वाले विद्वानों के लिए विशेष उपयोगी है। शिक्षाजगत की मूर्धन्य हस्तियों द्वारा इसका अत्यधिक मूल्याकंन किया जा रहा है। विश्व प्रसिद्ध आक्सफोर्ड डिक्शनरी के समान उपयोगी यह जैन डिक्शनरी जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में उपलब्ध है।



➢समस्त योजनाओं को जीवन्त रूप प्रदान करने वाले कर्मयोगी भाई जी–



प्रत्येक संस्था की सक्रिय भूमिका के पीछे किसी न किसी सक्रिय कर्मठ व्यक्ति का हाथ अवश्य होता है। इसी बात के साक्षी हैं दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अध्यक्ष कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन।

कौन जानता है कि जिस दो वर्ष के भाई बालक रवीन्द्र को अपनी धोती पकड़कर अंगूठा चूसते सोते हुए छोड़कर सन् 1952 में घर से निकली मैना जीजी ज्ञानमती माताजी बनने हेतु निकल पड़ी थीं, वही भाई आगे चलकर उनके ज्ञानामृत को स्वयं पीते हुए पूरे देश को उसका स्वाद चखाएगा। किन्तु होनहार को कौन टाल सकता है, सन् 1950 में श्रुतपंचमी के पवित्र दिन जन्में रवीन्द्र कुमार अपने पिता छोटेलाल जी एवं माता मोहिनी की नवमीं सन्तान एवं 4 पुत्रों में सबसे छोटे पुत्र हैं। गांव की प्राथमिक-माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर लखनऊ विश्वविद्यालय से निकले इस प्रथम श्रेणी के स्नातक ने जब 18 वर्ष की अल्प वय में अपनी बहन पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी के दर्शन कर उनसे जीवन निर्माण हेतु त्यागमयी प्रेरणा प्राप्त की, तब शास्त्री परीक्षा का कोर्स पढ़ते हुए आखिर सन् 1972 में वे आजन्म ब्रह्मचारी बन ही गये। उसके बाद तो सारा जीवन धर्मग्रंथ के, स्वाध्याय, अध्ययन के साथ-साथ जनकल्याण और धर्मप्रभावना के लिए समर्पित हो गया।

वर्तमान में ''भाई जी'' के नाम से प्रसिद्ध हंसमुख प्रकृति एवं कर्मठ व्यक्तित्व के धनी रवीन्द्र जी विद्वत्समाज द्वारा प्रदत्त अपनी कर्मयोगी उपाधि को पूर्णरूपेण चरितार्थ कर रहे हैं। हस्तिनापुर के विस्तृत कार्यकलापों के साथ-साथ अन्य अनेक संस्थाओं के प्रति सक्रिय मनोयोग तथा पूज्य माताजी द्वारा निर्देशित प्रत्येक निर्माण, धर्मप्रभावना, सम्मेलन आदि बड़े-बड़े समारोह आयोजित करने में सिद्धहस्त भाई जी का टीमवर्क वास्तव में प्रेरणास्पद होता है। इनके साथ कार्य करने वाले सभी कार्यकर्ता जहाँ कर्म खर्च में ज्यादा कार्य करने की बात सीखते हैं वहीं सभी को संतुष्ट रखने की भी इनमें अपूर्व कला देखकर बड़े खुश होते हैं, यही कारण है कि बड़े-बड़े तीर्थनिर्माण एवं राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय महोत्सव आशातीत सफलता के साथ निर्विघ्न सम्पन्न होते हैं। इसी प्रकार भाई जी सदैव पूज्य माताजी की भावनाओं को साकार करने में अपनी सक्रिय भूमिका निभाते रहें, यही जिनेन्द्रदेव से प्रार्थना है।



➢तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास में त्रिलोक शोध संस्थान की सक्रिय भूमिका–

वर्तमानकालीन 24 तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियाँ हैं-1. अयोध्या 2. श्रावस्ती 3. कौशाम्बी 4. बनारस 5. चन्द्रपुरी 6. काकन्दी 7. भद्दिलपुर 8. सिंहपुरी 9. चम्पापुरी 10. कम्पिला जी 11. रत्नपुरी 12. हस्तिनापुर 13. मिथिलापुरी 14. राजगृही 15. शौरीपुर 16. कुण्डलपुर। इन सभी में से लगभग 8-10 जन्मभूमि तीर्थों का जीर्णोद्धार एवं विकास तो पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के सक्रिय सहयोग द्वारा सम्पन्न हुआ है किन्तु अभी कौशाम्बी, काकन्दी, भद्दिलपुर आदि तीर्थों को अविलम्ब विकसित करने की आवश्यकता है।

पूज्य माताजी का समस्त दिगम्बर जैन समाज को आह्वान है कि आप सभी लोग मिलकर 24 तीर्थंकरों के महान सर्वोदयी आदर्श एवं उनकी जन्मभूमियों के सुसज्जित स्वरूप को विश्व के समक्ष लावें क्योंकि ये तीर्थ भारतीय संस्कृति की उद्गम स्थली हैं। यद्यपि आज का मानव अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति करने हेतु अतिशय-चमत्कारों की ओर भाग रहा है किन्तु आप चिन्तन कीजिए कि भगवान महावीर ने यदि कुण्डलपुर में जन्म न लिया होता तो उनके नाम का ''महावीर जी'' अतिशय क्षेत्र कैसे बन पाता, भगवान पदमप्रभु एवं चन्द्रप्रभु के अतिशय क्षेत्र, पदमपुरा और तिजारा में सैकड़ों दीपक जलाते समय क्या कभी चिन्तन किया गया है कि इनकी जन्मभूमि कौशाम्बी एवं चन्द्रपुरी में एक दीपक भी जलता है या नहीं? आदि।



अतः सर्वप्रथम तो आप सभी भगवन्तों की जन्मभूमियों के नाम याद करें पुनः उनकी यात्रा, वंदना का कार्यक्रम अवश्य सुनियोजित करें, उसके पश्चात् वहाँ की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से संपर्क करें। पूज्य माताजी की प्रेरणा से हस्तिनापुर का यह संस्थान ''तीर्थंकर जन्मभूमि विकास समिति'' के माध्यम से इन तीर्थों के विकास का कार्य कर रहा है।

➢जम्बूद्वीप की पावन प्रेरिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का सर्वोदयी व्यक्तित्व शब्दों में नहीं बांधा जा सकता है–



22 अक्टूबर सन् 1934 को शरदपूर्णिमा के दिन टिकैतनगर (बाराबंकी-उ.प्र.) में श्रेष्ठी श्री छोटेलाल जैन की धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनी देवी की कुक्षि से प्रथम संतान के रूप में जन्मी कन्या ने वास्तव में युग का इतिहास बदलकर 20वीं-21वीं सदी में अपने ऐतिहासिक कार्यकलापों द्वारा नया कीर्तिमान स्थापित किया है।

आपने सन् 1952 में अपनी जन्मतिथि शरदपूर्णिमा के ही दिन पूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज से सप्तम प्रतिमारूप आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण कर गृहत्याग किया। सन् 1953 में चैत्र कृ. एकम को उनसे क्षुल्लिका दीक्षा लेकर वीरमती नाम पाया पुनः बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज के दर्शन करके उनकी प्रेरणा से उनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर महाराज के करकमलों द्वारा सन् 1956 में वैशाख कृ. द्वितीया को माधोराजपुरा (राज.) में आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर अपने ''ज्ञानमती'' नाम को पूर्णरूपेण सार्थक किया।

इस युग की प्रथम बालब्रह्मचारिणी आर्यिका के रूप में प्रख्यात ज्ञानमती माताजी ने अनेक मुनि-आर्यिकाओं को क्लिष्ट ग्रंथों का अध्ययन कराकर त्याग-ज्ञान की ऊँचाईयों को प्राप्त कराया, अपनी लेखनी से विपुल साहित्य की रचना कर कुन्दकुन्द आदि आचार्य एवं ब्राह्मी-सुंदरी, सुलोचना जैसी आर्यिका का स्मरण कराया, अनेक तीर्थों के उद्धार एवं विकास की प्रेरणा देकर स्वामी अकलंक देव, आचार्य समंतभद्र का उदाहरण प्रस्तुत किया तथा संस्थाओं के प्रति निस्पृह भाव अपनाकर आचार्य श्री शांतिसागर-वीरसागर महाराज का त्यागमयी आदर्श प्रस्तुत किया है। इनकी अतिनिकटता में रहकर चर्या देखने वाले भक्त ही इनकी वास्तविक निस्पृहता का अनुमान लगा सकते हैं। 53 वर्ष की अखण्ड तपस्या एवं सतत ज्ञानाराधना में लीन पूज्य गणिनीप्रमुख, युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका, आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के श्रीचरणों में शत-शत नमन करते हुए उनके दीर्घ एवं परम स्वस्थ जीवन की मंगल कामना करती हूँ।